ॐ

चिदानन्दम्

सद्गुरुभगवान् श्री स्वामी शिवानन्द जी महाराज के अभिन्नरूप श्री स्वामी चिदानन्द जी महाराज की 'प्रथम पुण्यतिथि आराधना' पर प्रकाशित 'चिदानन्दम्' स्मृतिग्रन्थ

प्रकाशक

द डिवाइन लाइफ सोसायटी

पत्रालय: शिवानन्दनगर - २४९ १९२

जिला: टिहरी गढ़वाल (हिमालय), उत्तराखण्ड, भारत

२००९

प्रथम संस्करण-२००९ (२,००० प्रतियाँ)
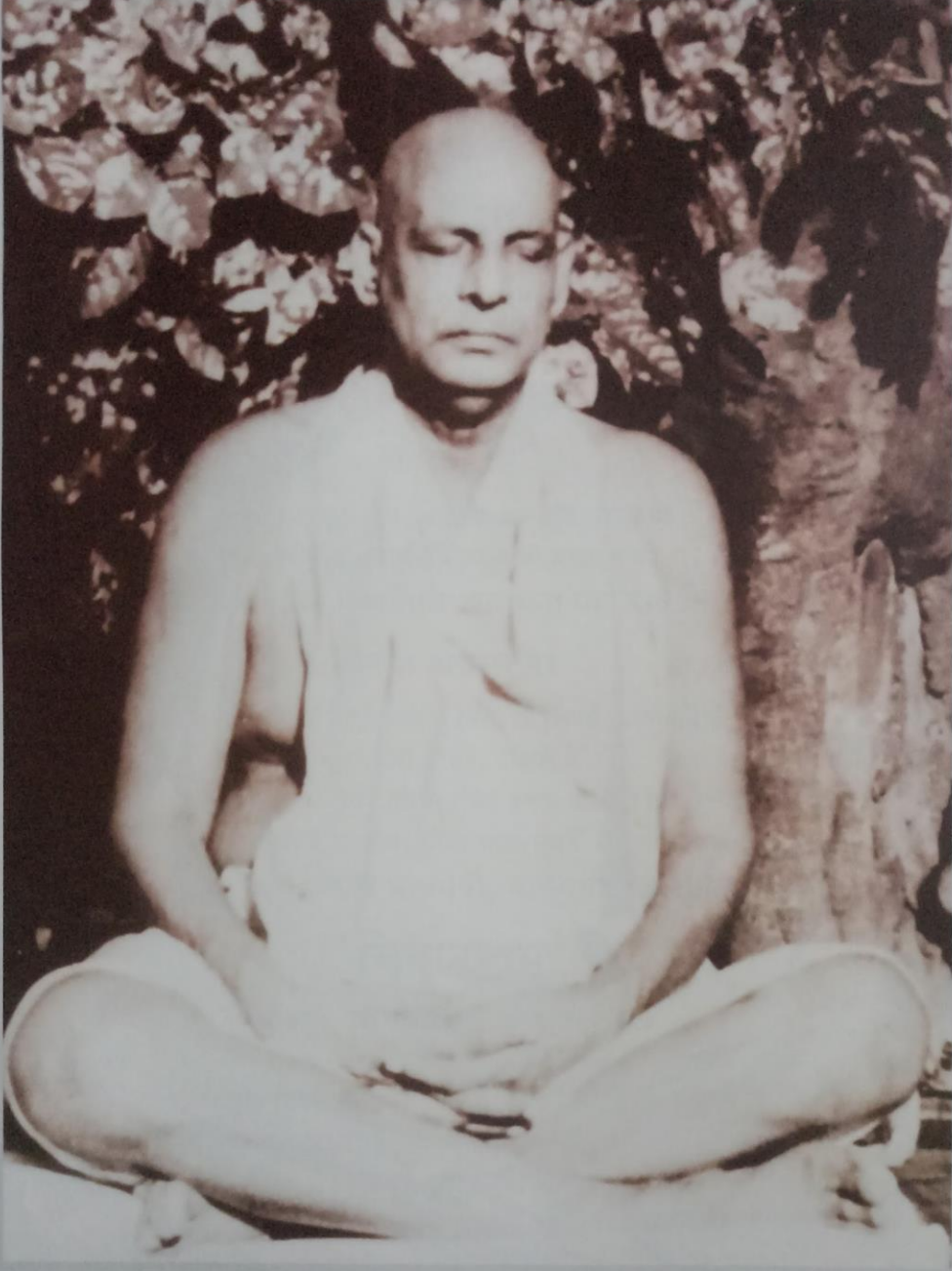
परम पावन श्री स्वामी शिवानन्द जी महाराज

परम पावन श्री स्वामी चिदानन्द जी महाराज

ॐ
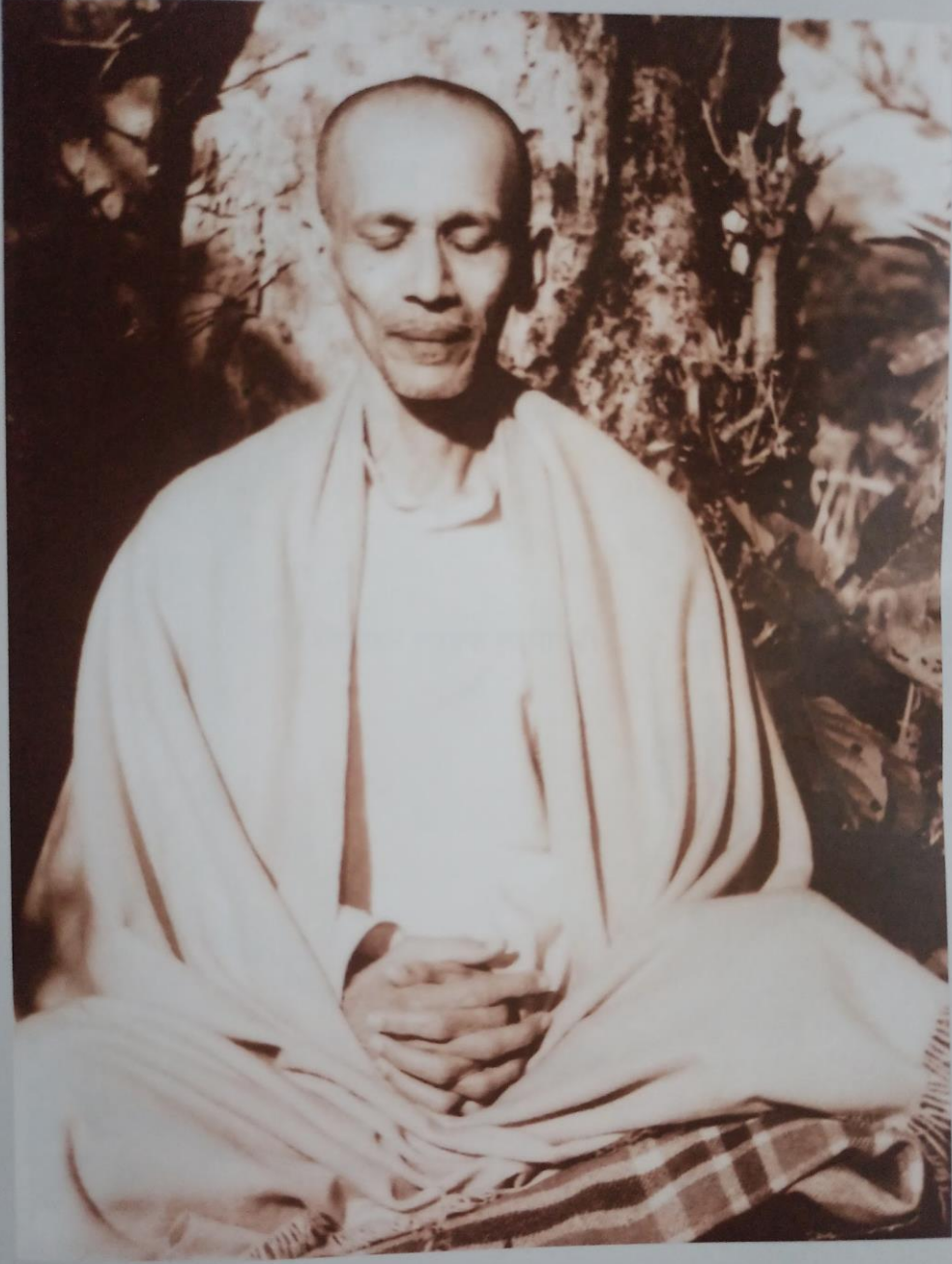
श्रीः गुरवे नमः

समर्पण

सादर सप्रेम समर्पित है- विश्ववंद्य, परम महनीय, प्रणमनीय, वन्दनीय, नमनीय, अर्चनीय **सद्गुरु भगवान् श्री स्वामी शिवानन्द जी महाराज को**- अनन्य गुरु-भक्ति, गुरु-सेवा के परम आदर्श परम प्रिय दिव्यजीवनस्वरूप, अनुपम समर्पित शिष्य

भगवत्पुरुष

सर्वोत्तम, महानतम, श्रेष्ठतम, अन्यतम, दिव्यतम ब्रह्मलीन श्री स्वामी चिदानन्द जी महाराज की **प्रथम पावन पुण्यतिथि आराधना महोत्सव के**

पुनीत अवसर पर

सन्त-महात्माओं तथा अखिल विश्व के शिष्यों, अनुयायियों, श्रद्धालुओं, भक्तों, प्रेमियों के दिव्य गुरु-प्रेम-वारि सुसंचित हृदय-वाटिका के विविध भव्य, रमणीय, सौम्य भाव-सुमनों से सुवासित सुग्रंथित यह प्रत्यक्ष भावमयी, वाङ्मयी मंजुलमाला

'चिदानन्दम्'

स्वीकारो, स्वीकारो, करुणावरुणालय गुरुदेव करो कृतार्थ, अर्पित है

अन्तर्राष्ट्रीय दिव्य जीवन संघ एवं सर्व भक्त-प्रेमियों की ओर से भावविह्वल-भावभीने हृदयों से, प्रेमपूरित सजल नेत्रों से, श्रद्धायुक्त समर्पित करों से।

ॐ

वचनामृत

मैं सद्गुरु भगवान् को प्रणिपात करता हूँ,
जो सच्चिदानन्द हैं, जो ब्रह्मानन्द प्रदान करते हैं,
जो द्वन्द्वातीत हैं, जो गगन के सदृश विशाल हैं,
जो 'तत्त्वमसि' के उच्चारण से लभ्य हैं,
जो एक, नित्य और अपरिवर्तनीय हैं,
जो मन की सभी अवस्थाओं के साक्षी हैं,

जो भावों से परे हैं, और जो प्रकृति के
तीनों गुणों से रहित हैं।

ॐ

त्वमादिदेवः पुरुषः पुराण-
स्त्वमस्य विश्वस्य परं निधानम् ।
वेत्तासि वेद्यं च परं च धाम
त्वया ततं विश्वमनन्तरूप ।।

हे सच्चिदानन्दघन ब्रह्म! आप आदि देव
और सनातन पुरुष हैं, आप इस जगत् के परम आश्रय और जानने वाले तथा जानने योग्य और परम धाम हैं। हे अनन्तरूप! आपसे यह सब जगत् व्याप्त अर्थात् परिपूर्ण है। (गीता : ११-३८)

ॐ

गुरु की कृपा प्राप्त करने के लिए आपको समर्पण के माध्यम से पात्रता अर्जित करनी होगी। समर्पण तथा गुरु-कृपा परस्पर सम्बन्धित हैं। समर्पण गुरु-कृपा को अपनी ओर आकर्षित करता है। गुरु-कृपा समर्पण को पूर्ण बनाती है।

-स्वामी शिवानन्द

चिदानन्द हूँ

ॐ

"ॐ मेरा असली नाम है। ॐ में से आया हूँ। ॐ में ही रहता हूँ। ॐ में ही समा जाना है।" इस ब्रह्म-तत्त्व के केवल वक्ता ही नहीं प्रत्युत 'ॐ ब्रह्म सच्चिदानन्दघन परमात्म-तत्त्व' की सार-सार दार्शनिकता को अध्यात्म-सौन्दर्यमय परमोत्कृष्ट जीवन में वास्तविक रूप में चरितार्थ कर सर्वोत्कृष्ट आदर्श प्रस्तुत करने वाले हैं-ख्याति प्राप्त अन्तर्राष्ट्रीय दिव्य जीवन संघ के आद्य संस्थापक-संचालक **गुरुभगवान् स्वामी शिवानन्द जी महाराज के प्रतिरूप-स्वामी चिदानन्द जी महाराज।**

अनादि अनन्त सत्य सनातन वैदिक धर्म-अध्यात्म एवं गौरवमयी वैदिक संस्कृति के दृढ़ात्मक पोषक हैं आप; किन्तु साथ ही साथ विश्व के समग्र धर्मों, धर्माध्यक्षों, पूजास्थलों के प्रति उल्लेखनीय समादरणीय भाव है आपका। द्रष्टव्य है आपका यह 'वसुधैव कुटुम्बकम्' स्वरूप । वर्गजातिसम्प्रदाय - निरपेक्ष मानव जाति के उद्धारक, प्राणिमात्र के हितैषी हैं आप। यह है आपका वर्णनातीत करुणावरुणालयस्वरूप- 'सर्वभूत हिते रताः।' चर-अचर में प्रभु-दर्शन करने वाले 'गीता' के 'वासुदेवः सर्वमिति' (सब-कुछ वासुदेव है) तथा गीता-वर्णित प्रकाशपुंजरूप सभी सद्गुणों के

साक्षात् स्वरूप हैं आप। परम पावनी गंगा-यमुना-सरस्वती त्रिवेणी रूप-परम लक्ष्यप्राप्त्यर्थ अध्यात्म-पथ साधनों यथा : दिव्य जीवन, योग-वेदान्त व कर्मप्रेमाभक्तियोगादि समस्तयोगसमन्वय के-तरण-तारण विलक्षण संगम हैं आप। भगवन्नाममहिमा के व अन्य अनेक मनोहारी शिक्षाप्रद, बोधप्रद व प्रेरक भवतारक स्वरूपों के प्रभावी साधन-दर्शन हैं इसमें। सर्वोपरि प्रात स्मरणीय गुरुभगवान् के अपार - अगाध अनुग्रह, मंगल आशीषों-उपहारों के परम धनी स्वरूप हैं आप तथा गुरु-शिष्य अलौकिक सम्बन्ध व शिष्य-गुरु अनन्य सम्बन्ध के अनुकरणीय परन्तु अनिर्वचनीय, अद्वितीय, दर्शनीय एकमेव स्वरूप ही हैं आप । हरिः ॐ तत्सत्!

स्वामी विमलानन्द
दि. जी. सं.

प्राक्कथन

परम पूज्य श्री स्वामी चिदानन्द जी महाराज की प्रथम पुण्यतिथि आराधना स्मरणोत्सव मनाने के उपलक्ष्य में प्रकाशित किये जाने वाले इस स्मृति-ग्रन्थ के सम्बन्ध में इन शब्दों को लिखते हुए मुझे अत्यन्त हर्ष अनुभव हो रहा है।

परम वन्दनीय श्री स्वामी चिदानन्द जी महाराज, परम श्रद्धेय सद्गुरुदेव श्री स्वामी शिवानन्द जी महाराज के प्रथम और प्रमुख सर्वश्रेष्ठ शिष्यों में से थे। सुसम्मानित दिव्य जीवन संघ के संस्थापक परमाध्यक्ष की महासमाधि के उपरान्त, प्रेमास्पद श्री स्वामी चिदानन्द जी महाराज इसके प्रथम परमाध्यक्ष बने और १९६३ से २००८ तक के लगभग ४५ वर्ष तक परमाध्यक्ष पद को सुशोभित करते हुए कार्यरत रहे।

स्वामी चिदानन्द जी महाराज १९४३ की बुद्ध पूर्णिमा के दिन सद्गुरुदेव के श्रीचरणों की शरण ग्रहण करने से ले कर अपने जीवन के अन्तिम क्षण (२००८) तक श्री गुरुदेव के मिशन के प्रति समर्पित भाव से सेवारत रहे।

१८ अगस्त २००९ को जो उनका प्रथम पुण्यतिथि आराधना स्मरणोत्सव मनाया गया है, उसी के उपलक्ष्य में हम इस 'चिदानन्दम्' स्मृति-ग्रन्थ का उन्मोचन कर रहे हैं। 'चिदानन्दम्' में परम श्रद्धास्पद गुरुदेव श्री स्वामी शिवानन्द जी महाराज के अपने आदर्श प्रिय शिष्य चिदानन्द जी के विषय में दिव्य भाव-विचार एवं परम गुरुभक्त श्री स्वामी जी महाराज के अपने परम आराध्य श्री गुरुदेव विषयक प्रेरक लेख तथा स्वयं श्री स्वामी चिदानन्द जी के श्रीमुख-नि सृत उपदेशामृतमय प्रवचनों के लेख हैं। इसके साथ ही सन्त-महात्माओं के हृदयोद्‌गार एवं स्वामी जी के अन्तरंग गुरुबन्धुओं, शिष्यों और गहन श्रद्धालु भक्तों के हार्दिक भाव-विचार संग्रहीत हैं।

इस समस्त विषय-सामग्री को श्रद्धेय स्वामी जी के अन्तरंग शिष्यों, भक्तों एवं साधकों-जो आश्रम- अन्तःवासी हैं-के द्वारा संशोधित, परिमार्जित और परिवर्धित किया गया है। उनके अथक

परिश्रम से ही यह 'चिदानन्दम्' स्मृति-ग्रन्थ रूप में आपके सामने प्रस्तुत है। मुझे आशा ही नहीं पूर्ण विश्वास है कि अध्यात्म-प्रेमी एवं पाठक वृन्द इससे लाभान्वित होंगे।

इस विशिष्ट कार्य-पूर्ति के लिए सर्वश्री स्वामी पद्मनाभानन्द जी महाराज, आचार्य कुकरेती जी महाराज (दर्शन महाविद्यालय), स्वामी विज्ञानानन्द जी महाराज, स्वामी ब्रह्मनिष्ठानन्द माता जी, स्वामी भक्तिप्रियानन्द माता जी, श्रीमती सुधा भारद्वाज माता जी, स्वामी श्रीप्रियानन्द माता जी, स्वामी राधिकाश्रितानन्द माता जी और स्वामी युगलप्रियानन्द माता जी, लायब्रेरी स्टाफ़ एवं प्रेस स्टाफ आदि **सभी सहयोगियों की भक्तिभावपूर्ण सेवा अत्यन्त सराहनीय है।**

भगवान् एवं गुरुदेव इन सब पर परम प्रेम, श्रद्धा-भक्ति और अहेतुकी कृपा का वर्षण करते रहें; यही मेरी हार्दिक मंगल कामना है!

शिवानन्द आश्रम,
पत्रालय: शिवानन्द नगर
१८ अगस्त, २००९

ॐ, प्रेम सहित
Swami Vimalands
(स्वामी विमलानन्द)
परमाध्यक्ष, दिव्य जीवन संघ

प्रकाशकीय वक्तव्य

अन्तर्राष्ट्रीय दिव्य जीवन संघ के परमाध्यक्ष परम पावन श्री स्वामी विमलानन्द जी महाराज ने हमारे **सर्वस्व** पूर्व परमाध्यक्ष परम पावन, **मानवीय और भगवदीय स्वरूप** के अद्‌भुत संगम, दिव्यता एवं गुरु-कृपा-धनी श्री गुरुभगवान् स्वामी शिवानन्द जी के **स्वस्वरूप भगवत्पुरुष** ब्रह्मलीन

श्री स्वामी चिदानन्द जी महाराज के अनिच्छुक होने पर भी-श्री गुरुदेव के परम प्रिय सम्माननीय आदर्श शिष्य विषयक अन्तः आदेश-निर्देश को शिरोधार्य किया तथा श्रद्धालु भक्तजनों के बारम्बार प्रेममय अनुरोध करने पर उनके हृदयस्थ भावनाओं को मूर्त रूप देने का सनिश्चय किया; परिणामतः जिसका साकार पुस्तकाकार रूप प्रस्तुत है आपके सम्मुख '**चिदानन्दम्**' ।

श्री गुरुदेव के परम श्रद्धालु योग्यतम शिष्य-भक्त एवं गुणग्राही वर्तमान परमाध्यक्ष श्री स्वामी विमलानन्द जी महाराज पचास वर्ष पर्यन्त परम पावन श्री स्वामी चिदानन्द जी महाराज के अन्त-बाह्य, दिव्य स्वरूप के दिव्य सान्निध्य में सतत रहे। अतः वह श्री स्वामी जी महाराज के व्यक्तिगत व आध्यात्मिक जीवन की विशेषताओं से पूर्णतया परिचित हैं। ब्रह्मलीन श्री स्वामी जी महाराज अपने जीवन काल में एक विनीत सेवक एवं आज्ञाकारी शिष्य के रूप में दिव्य जीवन यापन कर श्री गुरुदेव स्वामी शिवानन्द जी को ही सर्वप्रकारेण महिमान्वित- गौरवान्वित कर दिव्यानन्दानुभूति में लीन रहे। **वीतरागी** श्री स्वामी जी महाराज मान-सम्मान, पद-प्रतिष्ठा व प्रशंसा-प्रसिद्धि से कोसों दूर रहे अर्थात् निःस्पृह रहे। न तो उनको इसकी अपेक्षा थी या है न ही आकाक्षा; किन्तु '**मैं तो हूँ भक्तन को दास**, **भक्त मेरे शिरोमणि**' की भावोक्ति को **भावग्राही** श्री स्वामी जी महाराज ने '**चिदानन्दम्**' रूप में चरितार्थ कर दिखाया है। **धन्य धन्य हैं भक्तवत्सल श्री स्वामी चिदानन्द जी महाराज।**

'चिदानन्दम्' में वर्णित विषय-सामग्री चार प्रकाशों में प्रकाशित है। प्रथम प्रकाश में **सर्वगुण सम्पन्न**, **विनम्रता के अवतार** श्री स्वामी चिदानन्द जी महाराज के **मंगलमय जन्मोत्सवों** पर श्री गुरुदेव श्रीमुख निःसृत सत्यनिष्ठ, समर्पित शिष्य के प्रति प्रभावशाली आदर्श भावाभिव्यक्तियों तथा अन्य सन्त-महात्माओं एवं भक्तजनों द्वारा वर्णित सर्वत्यागी-वैरागी यतिश्रेष्ठ विलक्षण **युवा** स्वामी जी महाराज विषयक प्रेरणाप्रद, बोधप्रद, शिक्षाप्रद भाषणों एवं लेखों का प्रस्तुतीकरण है जिनमें अद्‌भुत युवा स्वामी जी के '**अमानित्व**' रूप का, अनन्य गुरु-भक्ति का प्रकाशन है, जो सर्ववर्ग-जन आत्मोद्बोधक है। विशेषकर युवावर्ग को यह **सद्बोधन** प्रदान करने वाला **सद्बोधक प्रकाश** है।

द्वितीय प्रकाश **जितेन्द्रिय** श्री स्वामी जी के **चुम्बकीय दिव्य व्यक्तित्व** तथा **महिमामय दिव्य कृतित्व** के दिग्बोधन से दीप्तिमान् है। सर्वप्रिय, सर्वमित्र एवं सर्वहितैषी श्री स्वामी जी के युवावस्था से अन्तिम क्षण तक के तप, त्याग, उत्कट वैराग्य, निष्काम कर्म, प्रभुभक्ति, नामस्मरण, जप, कीर्तन, निस्वार्थ सेवा, प्रेम, दान, पवित्रता, ध्यान, धैर्य, शान्ति, परहित, समत्वयोग एवं वेदान्त की नियमित व्यावहारिक तथा **प्रखर आध्यात्मिक विद्वत्ता की दीप्ति से देदीप्यमान** है यह। सर्वप्रकार से सर्ववर्ग-जन को आत्म-प्रकाश प्रदायक है यह दीप्तिमान् **दिग्बोधक प्रकाश**।

तृतीय प्रकाश है, '**चिदानन्द हूँ**' के प्रति अर्पित भाव-श्रद्धांजलियों की ज्योति से ज्योतित। सबके जीवनप्राणधन श्री स्वामी जी महाराज के महाप्रयाण के उपरान्त पावन 'षोडशी महोत्सव' की पुनीत बेला पर पूज्य महामण्डलेश्वरों, सन्त-महात्माओं तथा भक्तजनों द्वारा उनके अकथनीय 'सच्चिदानन्द' स्वरूप के कथन के सत्प्रयास की ज्योति से ज्योतित है यह **सर्वजन प्रबोधक ज्योति-प्रकाश** ।

चतुर्थ प्रकाश आलोकित है **सन्तत्व-ज्योतिपुंज** श्री स्वामी जी महाराज के ज्योतिर्मय सर्वरूपों से यथा-ज्ञान-ज्योतिपुज से, दैवी सम्पद् स्वरूप से, 'स्थितप्रज्ञ' की प्रज्ञता से, साधन चतुष्टय-सम्पन्नता से, 'सर्वभूत हिते रताः', 'वसुधैव कुटुम्बकम्', 'योग कर्मसु कौशलम्' के साक्षात् स्वरूप से, सत्य-अहिंसा-ब्रह्मचर्य, शान्ति, करुणा-दया, अनासक्ति, तितिक्षा, धीरता, सात्त्विकता, मृदुलता, मधुरता तथा दिव्य प्रेम आदि अनेकानेक सद्‌गुणों के अलंकरण से, सदाचार चूड़ामणि से। इन सबका चित्रण किया है पूज्य सन्त-महात्माओं ने अपने अनुभवों एव अनुभूतियों में तथा शिष्य-भक्तजनों ने अपने संस्मरणों में। इन श्रद्धालुओं के दिव्य श्री स्वामी जी के दिव्य गुणों विषयक

भावोद्‌गारों रूपी मणियों के प्रकाश से आलोकित है सर्वजन का उद्बोधन करने वाला यह **उद्बोधक आलोक प्रकाश।**

साराशतः 'चिदानन्दम्' है एक अनमोल सन्दर्शिका, जो सत्दर्शन कराती है कि वह है **मानवीय भगवदीय स्वरूप एक साथ-भागवती चेतना में संस्थित भागवत पुरुष**, असाधारण शिष्य, मानवता के सेवक, सन्तप्रेमी, सर्वधर्म सद्भावना के प्रतीक आध्यात्मिक सम्पदा के वितरक तथा महान् सद्बोधक, उत्साही दिग्बोधक, प्रेरक प्रबोधक और हैं प्रभावी उदार उद्बोधक। अर्वाचीन एवं आगामी पीढ़ियों के मानवमात्र के लिए नित्य उपादेयी है यह चिदानन्दम्-सन्दर्शिका । दुर्लभ मानव जीवन के परम लक्ष्य 'भगवत्साक्षात्कार' प्राप्त्यर्थ श्रेय मार्ग की ओर ले जाने वाली है यह चिदानन्दम्-सन्दर्शिका। यह ले चलती है हमें सत्य सनातन वैदिक संस्कृति तथा अनादि अनन्त सनातन वैदिक धर्म-अध्यात्म-प्रकाश की ओर, जो सर्व ग्राह्य है। और है यह करुणासिन्धौ गुरुदेव श्री स्वामी शिवानन्द जी महाराज की अहेतुकी कृपा का प्रत्यक्ष प्रमाण।

चिदानन्दम् से गौरवान्वित हैं वर्तमान परमाध्यक्ष परम पावन श्री स्वामी विमलानन्द जी महाराज एवं अन्तर्राष्ट्रीय दिव्य जीवन संघ।

हरिः ॐ तत्सत् ।

-द डिवाइन लाइफ सोसायटी

चिदानन्दम्-चारु चरितामृत का जो सश्रद्धा करें पान,
उनके लिये है यह एक अद्वितीय दिव्यौषध महान्
पा लेंगे परम लक्ष्य भगवत्साक्षात्कार श्रद्धालु अध्यात्म पथ-पथिक।
चिदानन्दम् है अनमोल संजीवनी सर्व आधि-व्याधियों की,
मिलेगा इससे सबको अभयदान और भूलेंगे सब अपान।

-सं. च.

चिदानन्दम्

(चिदानन्दमय हैं जो)

जब आप स्वामी चिदानन्द जी के प्रवचन ध्यानपूर्वक सुनेंगे, तो आप पायेंगे कि उनमें समस्त उपनिषदों का ज्ञान प्रकट कर दिया गया है, भले ही उन्होंने उपनिषदों का अध्ययन नहीं किया है और न ही उन्हें पढ़ने की इच्छा रखते हैं। उपनिषद् तो उनके हृदय से प्रकट होते हैं। वह ब्रह्मसूत्रों और गीता का साकार रूप हैं। हाल ही में मैंने देखा है कि जब भी कभी वह भक्ति और निष्काम्य कर्म योग पर प्रवचन करते हैं तो परिसमाप्ति वह हमेशा वेदान्त पर ही करते हैं। इससे यह सिद्ध होता है कि यदि आप अपनी साधना के प्रति सच्चे हैं और भगवान् के प्रति आपकी निष्ठा गहन और दृढ़ है तो वेदान्त अथवा ब्रह्मसूत्रों का ज्ञान अपने आप ही प्रकट होने लगता है।

चिदानन्द जी अपने पूर्व-जन्म में ही एक महान् योगी और सन्त थे; यह उनका अन्तिम जन्म है... चिदानन्द जी को संस्था के सभी सामान्य कार्य से मुक्त कर देना चाहिए, किन्तु मैं चाहता हूँ कि वह महासचिव के उच्च पद पर बने रहें। ऐसे महान् सन्त को अपना महासचिव रखना संस्था के लिए गौरव की बात है....**यह इस (शिवानन्द आश्रम) मिशन के कोहनूर है।** चिदानन्द जी के प्रवचन उनके सन्त-हृदय के भावोद्रेक हैं, अन्तर्ज्ञान की अभिव्यक्तियाँ हैं। व्यावहारिक वेदान्ती होने के नाते उनकी वाणी में अमित शक्ति है... उनके भाषण स्वर्णाक्षरों में मुद्रित किये जाने चाहिए...

'**चिदानन्द, चिदानन्द, चिदानन्द हूँ।**'

Swami Sivananda
(स्वामी शिवानन्द)

२४ जून, १९५४

प्रिय बन्धुओ,
प्रेमपूर्ण प्रणाम!

जीवन में आपका सबसे आवश्यक और महत्त्वपूर्ण कर्तव्य है भगवद्-प्राप्ति के लिए प्रयास करना।

केवल भगवान् की ही सत्ता है। इस जीवन में शेष सब-कुछ बदलती हुई परछाईं मात्र है। भौतिक जीवन दुःखों और कष्टों से भरा हुआ है। ईश्वर 'परिपूर्ण आनन्द' हैं।

उन्हें पाने की आकांक्षा करें। अन्य सब इच्छाएँ त्याग दें। अपने मन और इन्द्रियों को नियन्त्रित करें। शुद्ध बनें। गुरु की सेवा करें। आपको भगवद्-प्राप्ति होगी।

स्वामी चिदानन्द

जन्म-तिथि आठ श्री गुरुदेव की : जीवन-नौका साधक की

(८ दिसम्बर, १९५१ में परम पावन श्री स्वामी चिदानन्द जी का प्रवचन)

श्रद्धेय अमर आत्मन् !

आज का दिवस वह आनन्दपूर्ण दिन है, जिसे हम प्रत्येक मास अपने प्रिय गुरुदेव श्री स्वामी शिवानन्द जी महाराज के सम्मान में मनाते हैं अपने उन्हीं गुरुदेव के सम्मान में जो हमें अत्यधिक प्रिय हैं, जो सबके जीवन के जीवन है। जिन्होंने हमें जन्म-मरण वाले, दुःख और कष्ट से भरे इस जीवन तथा मोक्ष, पूर्णता और परम आनन्द के शाश्वत जीवन के बीच के अन्तर को समझाया है और अब हम इस दुःख से पूर्ण-बन्धनमय जीवन से परे दिन-प्रतिदिन उज्वल जीवन की ओर, परम आनन्द और शाश्वत सुख से परिपूर्ण जीवन की ओर बढ़ने लगे हैं। गुरुदेव के बिना

ऐसा परमसुखमय जीवन हमारे लिए एक दूर का सपना ही होता जिसे प्राप्त करने की हम कभी कल्पना भी न करते और इस प्रकार हमारा इस अमूल्य मानव-देह को धारण करना व्यर्थ ही हो गया होता।

जन्म दिनांक

अपने गुरुदेव के सम्मान में हम विशेष रूप से ८ सितम्बर के पावन दिवस को और सामान्य रूप से प्रत्येक मास की ८ तारीख को उस दिव्यात्मा के इस धरा पर आगमन के पुनीत अवसर के उपलक्ष्य में इसलिए मनाते हैं कि हम उनके चरणकमलों में अपनी निष्ठा को पुनः पुनः सुदृढ़ करने के प्रत्येक सुअवसर का पूर्ण लाभ उठा सकें और साथ ही अपने हृदय में सच्चे शिष्यत्व को और सच्चे प्रेम की सही भावना को, पुनःपुनः प्रज्वलित कर सकें, क्योंकि यदि हम अपने आध्यात्मिक जीवन को सफल बनाना चाहते हैं तो ऐसी भावना को अपने भीतर पूर्ण रूप से सदैव प्रदीप्त रखना अत्यन्त आवश्यक है। इस आन्तरिक ज्वाला को विकसित करने के लिए, पुनः अनुप्राणित करने के लिए उनके चरणारविन्द में भक्ति की इस ज्वाला की वृद्धि के लिए हमें समय-समय पर ऐसा करना ही चाहिए, क्योंकि अपनी साधना को सफलतापूर्वक कर सकने में यह गुरु-भक्ति ही केवल एक आश्वासन-एक गारंटी है। महान् वेदान्ती श्रीमद्शंकराचार्य जी के अनुसार धरा पर परमात्मा स्वरूप अपने गुरु के चरणकमलों में भक्ति नहीं है तो सब व्यर्थ है।

गुरु-भक्ति

अद्वैत सिद्धान्त के प्रणेता महान् आचार्य शंकर जिन्हें निज आत्म-स्वरूप परमात्मा के अतिरिक्त अन्य कोई सत्ता मान्य नहीं थी, उन्होंने इस प्रकार अपने विचार अभिव्यक्ति करते हुए गुरु के चरणकमलों में इस प्रकार की भक्ति का होना तब तक अति आवश्यक माना है, जब तक व्यक्ति द्वैत भाव का अतिक्रमण करके उसके पार नहीं पहुँच जाता। **निस्सन्देह सत्य तो एकमेव अद्वितीय का भाव ही है**, किन्तु द्वैतानुभूति के विस्तृत दीर्घ पथ को लाँघ कर ही अन्तत अद्वैत चेतना के चरम शिखर तक पहुँचा जाता है और पूर्णता प्राप्ति तक की इस प्रक्रिया में **श्री गुरु के चरणारविन्द के प्रति भक्ति ही एक सर्वोपरि आधार है और यह श्रेष्ठतम साधनाओं में से एक है।** बल्कि सच कहें तो समस्त साधनाओं में से यह सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण मुख्य आधार है जिसके अभाव में साधना साधना न रह कर नीरस संघर्ष, एक दुष्कर प्रक्रिया बन कर रह जाती है और इसके होने से सम्पूर्ण साधना एक आनन्द दायक, प्रेरणास्पद सोपान बन जाती है, आध्यात्मिक अनुभूतियों के शिखर की ओर ले जाने वाली एक प्रेरक द्रुत गामी तात्कालिक उड़ान बन जाती है प्रत्युत हम कह सकते हैं कि यह एक ऐसी महान् शक्ति है जो हमारी साधना का आधार है और हमारी आध्यात्मिक आकांक्षाओं की पोषक है। जिस लक्ष्य की प्राप्ति हमारी अभिलाषा है, उसको अति शीघ्र फलित करने वाली यही शक्ति है।

इस गुरु-भक्ति में स्वयं को स्थिर करने के लिए, साधक को समय-समय पर भिन्न-भिन्न साधन अपनाने चाहिए और इस प्रकार के सामयिक उत्सवों द्वारा, स्वयं को गुरु-भक्तिभाव से पूरित

करने का प्रयास करते रहना चाहिए जिससे कि आध्यात्मिक प्रकाश उसके हृदय में और तत्पश्चात् समस्त मानव जाति में भी हो सके।

इस कार्यक्रम के पीछे यही आध्यात्मिक उद्देश्य निहित है। इसका लक्ष्य गुरुदेव को प्रसन्न करना नहीं, प्रत्युत यह हमारे लिए है, हम अपने आध्यात्मिक स्वार्थ के लिए यह जन्म तारीख मनाते हैं। हम इसलिए यह करते हैं कि इससे हमारा लाभ हो; इसलिए कि ऐसा करने से, उनके समक्ष नतमस्तक होने से हम अपनी ओर उस प्रकाश-पुंज को प्रवाहित कर सकें जो करुणा- सिन्धु, प्रेम के सागर हमारे प्रिय गुरुदेव के पास अथाह है और उस कृपा की हमें अत्यन्त आवश्यकता है। गुरुदेव की ओर से प्रवाहित होने वाले कृपा के प्रवाह को निर्बाध रूप से प्रवाहित होने देने के लिए ही हम ऐसे शुभ दिनों को मनाते हैं।

'गुरु के नित्य स्मरण से अहं का विनाश करें"

हम सभी को प्रयास करना चाहिए कि हम जहाँ-कहीं भी हों-वहाँ ही, केवल ८ तारीख को ही नहीं, प्रत्युत नित्य ही अपने गुरु का स्मरण करें, नित्य ही हम अपने भीतर ऐसे ही विशेष उत्साह को जाग्रत करते रहें, ऐसे ही विशेष भाव को, शिष्यत्व की ऐसी ही विशिष्ट भावना को जाग्रत करें जिससे कि आये दिन अपने भीतर हम इस ज्वाला को प्रज्वलित रख सकें और अपनी साधना को द्रुत गति से आगे बढ़ा सकें। मानव मात्र के भीतर जो अहंकार भाव छिपा हुआ है, यह एक ऐसा असुर है जो हमारे शाश्वत सुख की ओर के अभियान में एक अवरोध है। यह एक ऐसी बाधा है जो हमें ब्रह्मानन्द की प्राप्ति नहीं होने देती। अतः जो अपने इस अहंकार भाव का शीघ्र अन्त करना चाहते हैं, उन सबके लिए साधना का रहस्य यही नित्य स्मरण ही है।

ॐ

शिवानन्द का दरबार है, शोभा अपार है।
निश्चय वाले सेवकों का हो गया बेड़ा पार है।।

विषय-सूची

एक सरल प्रार्थना

-असीसी सन्त फ्रान्सिस-

हे प्रभु! बनाओ मुझे अपनी दिव्य शान्ति का सोपान,
जहाँ घृणा है, वहाँ प्रेम ले आऊँ,
जहाँ हिंसा है, वहाँ मैं क्षमा ले आऊँ;

जहाँ शंका है, वहाँ मैं श्रद्धा-विश्वास ले आऊँ,
जहाँ निराशा है, वहाँ मैं नवीन आशा ले आऊँ;

जहाँ मनमुटाव है, वहाँ मैं सामरस्य ले आऊँ,
जहाँ संघर्ष है, वहाँ मैं एकता ले आऊँ;

जहाँ अन्धकार है, वहाँ मैं प्रकाश ले आऊँ,
जहाँ दुःख है, वहाँ मैं सुख ले आऊँ।

हे प्रभु! बनाओ मुझे अपनी दिव्य शान्ति का सोपान ।
मैं यह नहीं चाहूँ कि मैं दूसरों से सान्त्वना पाऊँ,
बल्कि मैं दूसरों को सान्त्वना देता रहूँ;

मैं यह नहीं चाहूँ कि लोग मुझे समझें,
बल्कि मैं दूसरों को समझने की कोशिश करता रहूँ,

मैं यह नहीं चाहूँ कि लोग मुझे प्यार करें,
बल्कि मैं सबको प्यार करता रहूँ।

क्योंकि जो देता है वही पाता है।
दूसरों को क्षमा करने में ही,
हमें प्रभु से क्षमा-प्राप्ति है;
क्योंकि यह छोटा अहंकार मिटने से ही
मानव को अमर जीवन की प्राप्ति है।

(अनुवादक : स्वामी चिदानन्द)

प्रथम प्रकाश

ॐ

"महाजनो येन गतः स पन्थाः"

महात्माओं का महान् जीवन,

करता है प्रेरित हमको
बनायें अपने जीवन को,
हम उन-जैसा महान् ।।
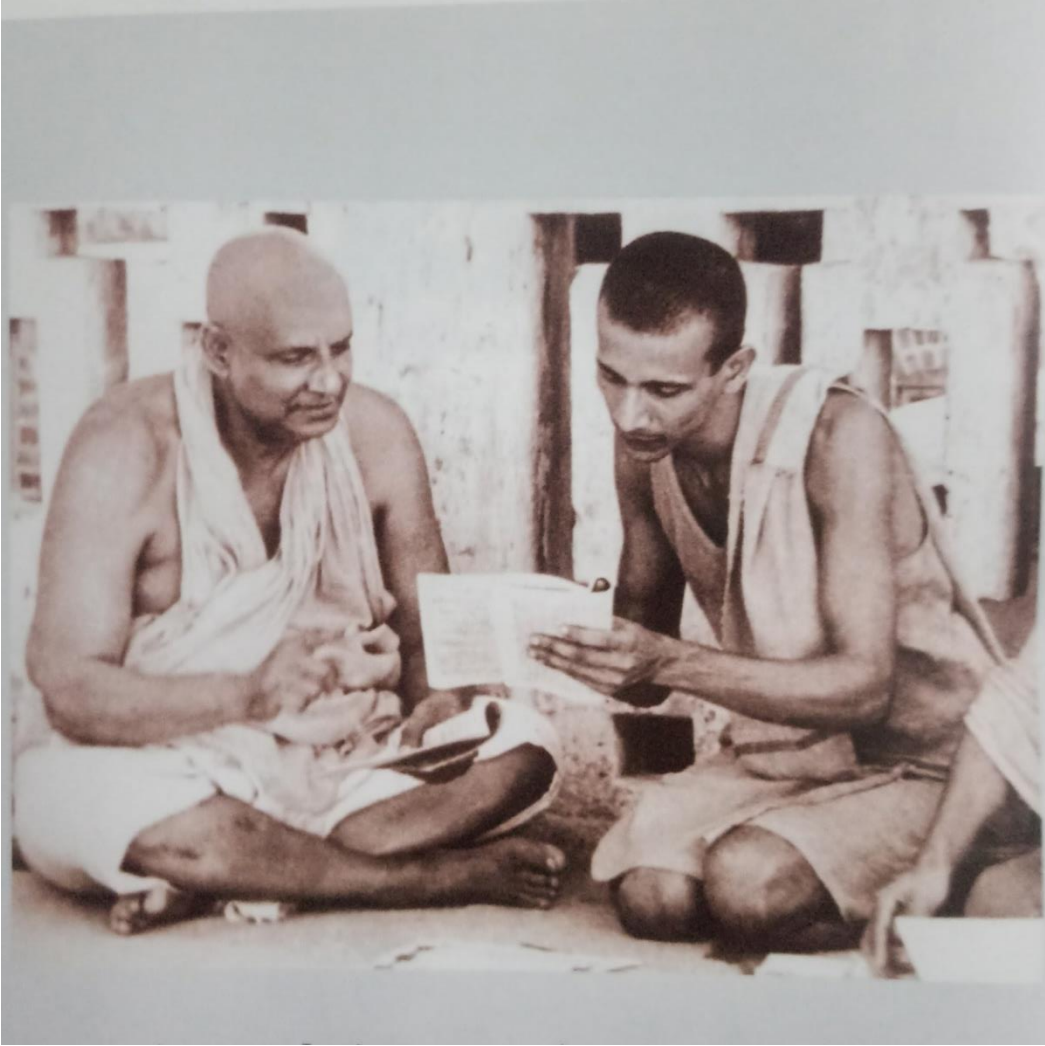
संत-महात्माओं की मंगल कामनाएँ एवं भक्तों की सद्भावनाएँ

ॐ

प्रियतम गुरु भगवान् श्री स्वामी शिवानन्द जी महाराज के प्रियतम शिष्य
भगवत्पुरुष श्री स्वामी चिदानन्द जी महाराज के ३६ वें जन्मोत्सव, ६० वें जन्मोत्सव
(हीरक जयन्ती-षष्ट्यब्दिपूर्ति महोत्सव),
७५ वें जन्मोत्सव (अमृत महोत्सव) के शुभावसर
पर संत-महात्माओं की मंगल कामनाओं एवं
भक्तों की सद्भावनाओं युक्त कुछेक
भाषणों एवं लेखों की

यथातथ्य प्रस्तुति

स्वामी चिदानन्द के जीवन से 'आपको क्या सीखना चाहिए!'

- श्री स्वामी शिवानन्द जी महाराज -

(सन् १९५४ में श्री स्वामी चिदानन्द जी के ३९ वें जन्म-दिवस पर दिया गया प्रवचन)

स्वामी चिदानन्द जी का जन्म-दिन मनाना वास्तव में भगवान् की पूजा करना है। इस जगत् में एक ब्रह्म के अतिरिक्त अन्य कुछ है ही नहीं। आप मूर्ति की पूजा करते हैं। मूर्ति तो विराट्र का एक अत्यन्त लघु अंश है, किन्तु इस पर भी भगवान् प्रसन्न हो जाते हैं, भले ही आपने विराट् के एक लघुतम अंश को ही स्पर्श किया होता है। वह अपने भक्त को आशीर्वाद देते हैं जिससे भक्त हृदय की पवित्रता प्राप्त कर लेता है, जो कि परमात्मानुभूति के लिए अत्यन्त अनिवार्य है।

महापुरुषों के जन्म-दिन मनाते समय आप उनके कार्यों के बारे में, उनके विचारों के और उनके निर्देशनों के बारे में सुनते हैं और उन्होंने कैसा जीवन जिया यह सुनते हैं। उनके महिमामयी उदाहरण से आप बहुत से सद्गुण अपने में उतारने का प्रयास करते हैं। उन सद्गुणों का आप अपने दैनिक जीवन में अभ्यास करने का प्रयत्न करते हैं।

आपने स्वामी चिदानन्द जी के बारे में आज इतना कुछ सुना है। यह सब सुनने के बाद जिसने भी यह दृढ़ निश्चय कर लिया कि, "मैं स्वामी चिदानन्द जी जैसा बनूँगा," केवल उसी को यह सब सुनने का लाभ प्राप्त होगा।

किन्तु माया बहुत शक्तिशाली है। आप सोचेंगे कि आप सब तो अब समुन्नत हो गये हैं; किन्तु जैसे ही आप प्रातः सो कर उठेंगे, आपका मन अपने उन्हीं पुराने खाँचों में बहने लगेगा। जो निरन्तर सत्संग करता है और वैराग्य की पुस्तकें पढ़ता है-"संन्यास की आवश्यकता" (नसैसटी फॉर संन्यास), "सन्त-जीवन" और "प्रबोधक कथाएँ" (इलियूमिनेटिंग स्टोरीज़) पुस्तकें पढ़ता है-वह गतिशील रहेगा; और केवल वही सदाचारी शुद्ध जीवन जी सकेगा। प्रवचन आप सबने सुन लिए हैं। **रामनाम की महिमा को सभी जानते हैं, किन्तु आप इसको अभ्यास में नहीं लाते।** आपको भगवन्नाम में विश्वास ही नहीं है; आपको केवल धन-सम्पत्ति में विश्वास है। इस प्रकार जन्म-दिवस मनाये जाने पर आपको सन्त के विचारों और उनके कार्यों पर सतत चिन्तन करने का अवसर मिलता है। तब फिर आपको उसी लक्ष्य तक पहुँचने की प्रेरणा और प्रोत्साहन मिलता है जिस पर कि वह पहुँच गये हैं।

समय-समय पर जन्म-दिवस मनाये जाने अति आवश्यक हैं। उदात्त और पावन विचारों का मन पर निरन्तर प्रहार किया जाता रहना आवश्यक है। नहीं तो आपका मन अपने वही पुराने खाँचों में बहने लग जायेगा। **दैनिक जप के द्वारा आपको इसे अपने नियन्त्रण में लाना होगा। नियमबद्धता अत्यन्त आवश्यक वस्तु है। आत्म- साक्षात्कार प्राप्त सन्तों की पुस्तकों को बार-बार पढ़ें।** विवेक-चूड़ामणि, आत्म-बोध और तत्त्व-बोध पढ़ें। **जीवन एक संग्राम है; किन्तु यदि आपका भगवान् में विश्वास है, तो यह जीवन एक महान् प्रेमगीत है। बार-बार सन्तों के सान्निध्य में - जायें।** आध्यात्मिक दैनन्दिनी (डायरी) रखें। निरीक्षण - करें कि आपने कितनी

आत्मोन्नति की है, कितने सद्गुणों - का विकास किया है, कितने दोष या अवगुण अपने आप में से दूर किये हैं, क्या आप निःस्वार्थी बन गये हैं, - क्या आप निःस्वार्थ सेवा कर रहे हैं? यह सब बातें आवश्यक हैं।

किन्तु जीवन की यह आवश्यक बातें आप हमेशा ने ही भूल जाते हैं। अपने भोजन की छोटी से छोटी वस्तु भी आप नहीं भूलते; किन्तु भगवान् को आप भूल जाते हैं। टनों सिद्धान्तों से एक आउंस अभ्यास कहीं अच्छा है। अभ्यास करें! केवल तभी तो आपको पता चलेगा कि यह कितना कठिन है। एक किंचित् सा कठोर शब्द आपको विचलित कर देता है। यह पिछले कुसंस्कारों की प्रबल शक्ति के कारण है। यहाँ आपका काम गंगा के जल को पुनः उसके उद्गम स्थल तक वापिस ले जाने के समान है। यह उतना ही कठिन है। फिर भी भगवान् की कृपा से, अपने दृढ़ निश्चय से आप विजयी होंगे।

शरीर और भोजन के बारे में अधिक ध्यान न दें। यह सब अज्ञान की उपज हैं। आत्म-ज्ञान के द्वारा इस अज्ञान को दूर कर दें, साधन चतुष्टय सम्पदा विकसित करें और जीवन के लक्ष्य को प्राप्त करें। **भगवन्नाम लें, जप करें, कीर्तन करें। निःस्वार्थ सेवा करें। ज्ञान अपने आप आ जायेगा। भक्ति के फलस्वरूप ज्ञान का उदय होगा।**

भगवान् का सतत स्मरण, यह सबसे अधिक आवश्यक है। मन अगर इधर-उधर भागता है तो उसे भागता रहने दें। **भगवन्नाम की आध्यात्मिक शक्ति मन की इस बाहर भागने वाली वृत्ति को नियन्त्रित कर देगी और इसे अन्दर की ओर मोड़ देगी।**

सद्गुणों को विकसित करें। सभी सद्गुणों में से करुणा और विनम्रता अधिक आवश्यक हैं, जो कि एक सन्त में होने ही चाहिए। आपका हृदय अतीत के पापकर्मों से कठोर हो चुका है, इसी लिए अनुचित कार्य कर बैठता है। इसे दया के अभ्यास द्वारा नवनीत के समान कोमल बनाना पड़ेगा। कोई व्यक्ति चाहे घण्टों प्रवचन करने की योग्यता रखता हो, किन्तु यदि उसमें दया भाव नहीं है तो उसे त्याग दें। यह बनावटी विनम्रता नहीं चाहिए! हो सकता है कि आप किसी दूसरे व्यक्ति के सामने विनीत बन कर दिखा रहे हों और उसके जाते ही उसकी पीठ पीछे उसकी आलोचना करने, उसे बुरा-भला कहने लग जायें। यह विनम्रता नहीं है। विनम्रता आपका स्वभाव ही बन जाना चाहिए। आपके आचरण से आपके कार्यों से वह अपने आप दूसरों को दिखायी देनी चाहिए। **विनम्रता आपका स्वभाव ही हो जाये। गीता में दैवी गुणों में अमानित्वम् को सर्वोत्तम स्थान दिया गया है।**

अपने सामने सदैव किसी सन्त को आदर्श रूप में रखें। वैराग्य भाव विकसित करें। वैराग्य की तुलना में संसार की सम्पूर्ण सम्पदा तुच्छ है। वैराग्य से व्यक्ति सबसे अधिक धनवान् बन जाता है; उसे कभी न समाप्त होने वाली आध्यात्मिक सम्पत्ति प्राप्त हो जाती है। **इस संसार में केवल विवेक सम्पन्न व्यक्ति ही धनी व्यक्ति है। जो जप करता है वह संसार में धनवान् व्यक्ति है। भगवान् की सम्पूर्ण सम्पदा उसकी सम्पत्ति है।**

आपको धैर्य, सहनशीलता और क्षमाशीलता की साकार प्रतिमा बन जाना चाहिए। भले ही लोग आपको गालियाँ दें, आप सदैव हिमालय की भाँति खड़े रहें। आपको किसी भी बात से

प्रभावित या विचलित हुए बिना सदैव मन को शान्त रखना चाहिए। आप कितने दुर्बल मन वाले हो गये हैं! सदैव मन को सन्तुलित रखें। यह आध्यात्मिक शक्ति है; यही बुद्धिमत्ता है।

आप बहुत कुछ सुन चुके हैं। अब इसका अभ्यास करने का प्रयत्न करें। अपने अन्तर्मन का निरीक्षण करें और देखें आपने स्वयं में सुधार लाने के लिए अब तक क्या किया है। अब तक आपने कौन सी साधना का अभ्यास किया है? भले बनो और भला करो।

जप के अभ्यास से अपनी इच्छा-शक्ति को विकसित करें। इसे कभी न भूलें। समाधि अपने आप ही लगनी शुरू हो जायेगी? भगवान् ने आपको अच्छी बुद्धि दी है। इसका सही उपयोग करें और विवेक से काम लें।

स्वामी चिदानन्द जी में दया, सहानुभूति और विनम्रता भरपूर मात्रा में है। अपने पिछले जन्म में भी - वह संन्यासी ही थे; उनका जैसा व्यवहार है, उससे हम यह समझ सकते हैं। **यह गत संस्कारों की अर्जित की हुई सम्पत्ति है जिसने इनको इस छोटी आयु से ही यह पथ अपनाने की योग्यता प्रदान की है।** आप में यदि यह नहीं है तो उपवास द्वारा, प्रार्थना द्वारा और सेवा द्वारा इसे अर्जित करना चाहिए, जिससे कि अगले जन्म में आप सन्त बन कर जन्म लें। तब आप अच्छे गुरु बनेंगे, आप शीघ्र उन्नत होंगे। अभी भी कुछ नहीं बिगड़ा है, आज ही संकल्प करें। सद्गुणों का विकास करें।

लोगों ने स्वामी चिदानन्द जी के बारे में वर्णन किया है। **वह चिकित्सकों के भी चिकित्सक हैं। वह कुष्ठ रोगियों के डाक्टर हैं। वह करुणा से भरपूर हैं। आपको भी अपने में दया भाव लाना चाहिए।** यदि कोई व्यक्ति सड़क पर गिरा पड़ा हो तो आप उसके निकट नहीं जाते; आप कह देते हैं कि, "यह उसका प्रारब्ध है।" भले ही आपको बहुत भूख सता रही हो तो भी अपने दूध का प्याला उसे दे देना चाहिए; इस प्रकार आप विशाल-हृदयी बनेंगे। एकात्म भाव इसी प्रकार विकसित होगा। **निष्काम सेवा के द्वारा मानव को मानव से अलग करने वाली सब दीवारें तोड़ फेंकिए।** एम. ए., पी-एच. डी. कर लेने से ही आप वैश्व चेतना को प्राप्त नहीं कर सकते। आपके पास जो कुछ है, उसे दूसरों से बाँटें। दें! दें! दें! देने से आप समस्त संसार के साथ हृदय से जुड़ जायेंगे। यही भरपूरता का रहस्य है। संग्रह वृत्ति न अपनाएँ! भगवान् अपने सभी बालकों का ध्यान रखते हैं। अपना सब-कुछ दान कर दें! सारा संसार दुःख-कष्टों से घिरा पड़ा है। उनके कष्ट दूर करें; आपकी आध्यात्मिक उन्नति होगी। ये सभी सन्त-भगवान् बुद्ध, भगवान् यीशु आदि सब की सेवा कर के ही देव मानव और सन्त बनें हैं। वैदिक ग्रन्थों को रट लेने से काम नहीं चलेगा। ये पण्डित लोग-यदि इन्हें जनता के मध्य सम्मानजनक गद्दी न मिले तो इनका मन विचलित हो जायेगा। यह सन्त होने का चिह्न नहीं है। बार-बार ऐसे विचारों की चोट मन पर लगाते रहें, **"मैं प्राणी मात्र का आत्मा हूँ।" करुणा, दया, सेवा, विनम्रता तथा अन्य दैवी गुणों की साधना करें। तब हमारे चिदानन्द जी की भाँति चमकेंगे। यही मेरी गहन हार्दिक प्रार्थना है!**

ॐ

सर्वशक्तिमान् प्रभु तथा गुरुदेव से मेरी यही विनय है कि मैं एक सच्चा भक्त तथा योग्य शिष्य बन सकूँ। मैं प्रार्थना करता हूँ कि उनकी कृपा तथा आशीर्वाद मुझे धर्म तथा सदाचार का

मार्गगामी होने में दृढ़ रहने की शक्ति दें। मैं एक साधक हूँ जो कि दिव्य जीवन यापन तथा उसमें विकास के लिए प्रयत्नशील है, जिसका उपदेश हमारे गुरुदेव शिवानन्द जी ने अपने शिष्यों को दिया है। आप सभी जो मेरे शुभ-चिन्तक हैं, उनसे मैं सविनय कहता हूँ कि आप मेरे लिए प्रार्थना करें, आशीर्वाद दें तथा शुभ-कामना करें कि **मैं गुरुदेव की शिक्षा के अनुरूप दिव्य जीवन यापन कर कर सकूँ । आपकी प्रार्थना मेरे लिए सर्वोत्तम 'जन्मदिवसोपहार' होगी।**

-स्वामी चिदानन्द

हमारे आदर्श-गुरुदेव की जय !

-श्री स्वामी चिदानन्द जी महाराज -

(का अपने ३९ वें जन्म-दिवस पर दिया गया प्रवचन)

यह जन्म-दिन मनाया गया इसकी मुझे प्रसन्नता है। पहले तो मैंने श्री स्वामी जी से प्रार्थना की थी, कि मुझे इसके लिए क्षमा कर दिया जाये, किन्तु इस उत्सव के मनाये जाने के कारण हमने अभी-अभी यह समस्त धर्म-ग्रन्थों का सार तत्त्व सुना; उनके श्रीमुख से सभी युगों और समस्त वर्गों के सन्तों के ज्ञानोपदेशों का सत्त्व निःसृत होता, हमने श्रवण किया। हमें उपनिषदों का ज्ञान सरल भाषा में सुनने को मिला। हम कुरान, बाइबिल, गीता, पुराण, सभी धर्म ग्रन्थों के अत्यन्त सरल, प्रभावशाली, रोमहर्षक, उत्साहवर्धक और प्रेरणास्पद जीवन्त शब्द, प्रत्यक्ष गुरुदेव के श्रीमुख से सुन रहे थे। इस एक ही बात के लिए, जन्म-दिन का मनाया जाना सार्थक हो गया। मैं कितना प्रसन्न हूँ, यह वर्णन नहीं किया जा सकता। **न जाने पिछले कितने जन्मों के पुण्य-कर्मों के परिणाम-स्वरूप हम इस पावन स्थली पर बैठे हुए हैं और जिस अनन्त आध्यात्मिकता, असीम दिव्यता की जीवन्त ज्वाला की गुरुदेव प्रतिमूर्ति हैं, उस अग्नि को आज वाणी के रूप में हम यहाँ श्रवण कर रहे हैं। अभी जो कुछ भी आपने सुना, उसका वर्णन नहीं किया जा सकता। उन्होंने हममें दिव्य प्रकाश भर दिया है। प्रत्येक शब्द जीवन्त-आध्यात्मिकता की धधकती अग्नि है।** किन्तु गुरुदेव ने कहा, कल प्रातः हम सो कर उठेंगे, तो वही, वैसे ही पुराने व्यक्ति होंगे। इसके विपरीत निश्चित रूप से सुरक्षित रहने के लिए भगवान् ने स्वामी वेंकटेशानन्द जी को भेजा हुआ है। प्रत्येक शब्द अब लिपिबद्ध हो गया है और यह मुद्रित भी हो जायेगा।

मेरी आप सबसे प्रार्थना है कि गुरुदेव के इस प्रवचन की मुद्रित प्रतिलिपि अपने पास सुरक्षित रखें। प्रतिदिन प्रातः उठते ही, तथा रात को सोने से पहले इसे एक बार पढ़ें। हमारे सम्पूर्ण जीवन के लिए एक आदर्श उदाहरण के रूप में और हमें, जीव से असीम सच्चिदानन्द आत्मा में परिणित करने के लिए; हमें उच्चतम दिव्यता तक समुन्नत करने के लिए यह एक प्रवचन ही पर्याप्त है।

श्री स्वामी कृष्णानन्द जी के जन्म-दिवस का उत्सव मनाने के एकदम साथ ही, इतनी शीघ्र अपना जन्म-दिवस न मनाने के लिए मैंने श्री गुरुदेव से प्रार्थना की थी कि इसे छोड़ दिया जाये। कुछ दिनों बाद उन्होंने कहा, "भले ही तुम्हारी इच्छा हो या न हो, मैं तो यह मनाने जा रहा हूँ।" तब उन्होंने मुझे एक अद्‌भुत नुस्खा दिया। यह मेरे लिए एक परीक्षा थी, जिसमें गुरुदेव की कृपा से मैं सफल हुआ। "तुम चिन्ता क्यों करते हो?" उन्होंने कहा, "उन्हें जन्म-दिन मनाने दो। तुम समझो कि यह किसी और का जन्म-दिवस है। महसूस करो : मैं अकर्ता, अभोक्ता हूँ। साक्षी बन जाओ।" यह आध्यात्मिक वटी उन्होंने मुझे दी। यही भाव था, जो मैंने आज प्रातः से बनाये रखा है। परन्तु अभी-अभी तो मुझे पूरा निश्चय हो गया है कि यह किसी और का ही जन्म-दिवस है। जिस चिदानन्द नाम के व्यक्ति का आप सबने इतना अद्‌भुत विवरण दिया है कि मैं सोच रहा हूँ कि मैं भी उससे मिलूँ।

आप सबने निःस्वार्थ सेवा की भावना की प्रशंसा की है। जब हमारे सामने गुरुदेव का उदाहरण प्रत्यक्ष रूप में है, तब फिर हम ऐसी सेवा क्यों नहीं कर सकते? स्वामी जी के कागजों में मुझे एक छोटी दैनन्दिनी मिली थी जिसे वे स्वर्गाश्रम में लिखा करते थे। यह लाइट फाउन्टेन (आलोक-पुंज) पुस्तक में मुद्रित है। इसमें आपको ऐसे निर्देश मिलेंगे, "स्वच्छता कर्मचारियों की सेवा करो। दुर्जनों की सेवा करो। जिस क्षेत्र में आप अपमानित किये गये हो, वहीं जाओ।" यह सब उन्होंने अपने लिए अनुशासन का एक अंग बनाया। जब यह उज्ज्वल प्रकाश हमारे सम्मुख है तब क्या यह सम्भव है कि इसका अनुकरण करने के अतिरिक्त हम कुछ और करें?

आप एक बात के लिए मेरी प्रशंसा कर सकते हैं, कि मैं गुरुदेव की आज्ञा पालन करने का प्रयत्न कर रहा हूँ। किन्तु शिष्य के नाते यह तो मेरा कर्तव्य है।

समस्त श्रेष्ठता भगवान् में है! सर्वोच्च प्रशंसनीय परमात्मा हैं। हम अपने स्वभाव में भलाई अभिव्यक्त करके, अपने विचारों से, वाणी से, भावनाओं और संवेदनाओं से अच्छाई अभिव्यक्त करके भगवान् का गुणगान कर सकते हैं। यदि हम स्वामी जी को देखें तो हम समझ सकते हैं कि वे अपने जीवन में और अपने जीवन के द्वारा किस परिपूर्णता से और किस भव्यता से परमात्मा की महिमा को अभिव्यक्त कर रहे हैं। मैं तो, जो स्वामी जी कहते हैं, उन आदेशों का पालन करने का विनम्र प्रयास मात्र कर रहा हूँ।

आप एक मूर्ति की प्रशंसा कर रहे हैं, प्रशंसनीय तो मूर्तिकार है। यह मूर्तिकार की ही विद्वत्ता और प्रतिभा है जो मूर्ति में से झलकती है। आप मूर्तिकार को पूरी तरह विस्मृत करके मूर्ति के बारे में ही इतना कुछ कहे जा रहे हैं। वह मूर्तिकार तो श्री स्वामी शिवानन्द जी महाराज हैं। स्वामी चिदानन्द के दिव्य-निर्माता श्री स्वामी शिवानन्द जी हैं। यह सारी महिमा उन्हीं चरण-कमलों की है।

इसलिए हम सबको अपने हृदय-मन्दिर के सिंहासन पर सदैव अपने आदर्श, श्री गुरुदेव को प्रतिष्ठित करके रखना चाहिए। आइए, हम सदैव अपने मन-मन्दिरों में, एक महान् आदर्श, एक दिव्य उदाहरण अपने सम्मुख विद्यमान एक जीवन्त दिव्यता, श्री गुरुदेव की आराधना करें।

ध्यानमूलं गुरोर्मूर्तिः, पूजामूलं गुरोः पदम् ।
मन्त्रमूलं गुरोर्वाक्यं मोक्षमूलं गुरोः कृपा ।।

उनके कथन हमारे लिए सिद्धान्त होने चाहिए। आइए हम अपने सम्पूर्ण जीवन को, उस दिव्य मूर्ति, जो श्री गुरुदेव के रूप में हमारे समक्ष विद्यमान है, की एक जीवन्त, व्यावहारिक और सक्रिय उपासना बना लें; इस प्रकार करने से हम अपने जीवन के लक्ष्य-गुरुदेव के वास्तविक स्वरूप से साक्षात्कार-को इसी जन्म में प्राप्त कर सकेंगे। इस दिव्यता के चरणों के हम सौभाग्यशाली, अवर्णनीय-सौभाग्यशाली शिष्य यदि ऐसा कर सकें, तो हमारे जीवन निश्चित रूप से धन्य हो जायेंगे।

समस्त प्रशंसा, सारी महिमा प्रभु की है! सम्पूर्ण प्रशंसा सारी महिमा गुरुदेव भगवान् की है। इन दोनों में परस्पर कोई अन्तर नहीं है। दोनों एक ही हैं। भगवान् निराकार, निर्गुण, अव्यक्त हैं, गुरुदेव साकार, सगुण, व्यक्त हैं। हमारी उनके दिव्य चरण युगल में विनम्र प्रार्थना है कि वह हमें आशीर्वाद दें कि इसी जीवन में हम अपने जीवन के आदर्श, जो कि वह ही हैं, को प्राप्त करने में प्रयत्नशील रहें।

सौभाग्य से श्री स्वामी शिवानन्द जी जैसे महान् व्यक्तित्व का मुझे सान्निध्य प्राप्त हुआ है, वह एक विकसित पुष्प है जिसके अंकुरण और विकास को जानने के लिए हमें उनके प्रारम्भिक जीवन को देखना होगा, जो उन्होंने मलेशिया के चिकित्सालय में एक परिश्रमी चिकित्सक के रूप में व्यतीत किया। वह दशक इनके मूक विकास का काल था जो इन्होंने यत्नपूर्वक मानवता के संकट-निवारण में लगाया।

-स्वामी चिदानन्द

प्रिय शिष्य बनने का रहस्य

-श्री स्वामी परमानन्द जी महाराज -

श्री गुरु महाराज के काम करने के ढंग की वास्तविक सुन्दरता इस तथ्य में निहित है कि सैकड़ों जिज्ञासु आश्रम में आ कर कितनी भी अवधि तक ठहर सकते हैं और किसी भी विभाग में बिना किसी बाधा या भिज्ञता के कार्य कर सकते हैं। सभी विभाग एक-दूसरे से सम्बन्धित हैं, फिर भी लोग अपनी क्षमता के अनुसार बिना किसी के सम्पर्क में आये स्वतन्त्रतापूर्वक कार्य कर सकते हैं तथा आश्रम की शान्ति को सुन्दरता से बनाये हुए आश्रम के दैनिक कार्यक्रमों में अपनी रुचि की

या सामूहिक साधना का विकास कर सकते हैं। क्या विलक्षण व्यक्तित्व है? श्री गुरुदेव लोगों की मानसिक स्थिति एवं मनोनुकूलता की परख करने में समर्थ हैं। उन्हें उचित कार्य सौंप कर सभी विभागों का निरीक्षण करते हैं। इस प्रकार उन्होंने अध्यात्म-पथ पर अग्रसर होने के लिए कार्य करने वाले तथा अल्प समय में स्वयं के विकास करने वाले भक्त-सदस्यों के 'दिव्य मिशन' को एक शक्तिशाली संघ बनाया।

यहाँ दूसरों से स्वतन्त्रतापूर्वक घुलने-मिलने की तनिक भी सम्भावना नहीं है। यही प्रमुख कारण है कि जिससे आश्रमवासी एक-दूसरे के गुणों से परिचित नहीं हो पाते। वे सभी अपने-अपने कार्य-क्षेत्र के सेवा-कार्य में गुरु महाराज के निर्देशानुसार अत्यन्त व्यस्त रहते हैं; इसीलिए आश्रम के लगभग दो सौ कार्यकर्ता और अनेक दर्शनार्थी स्वामी चिदानन्द जी को अच्छी तरह नहीं जानते। बहुतों को तो उनसे मिलने का अवसर कई सप्ताह और महीनों तक नहीं मिलता। किन्तु मैं यह जानने के लिए अत्यन्त उत्सुक था कि स्वामी चिदानन्द श्री स्वामी शिवानन्द जी के सर्वाधिक प्रिय शिष्य कैसे बने और अत्यन्त महत्त्वपूर्ण स्थानों, जैसे 'दिव्य जीवन संघ' के 'महासचिव' और 'अरण्य विश्वविद्यालय' के उपकुलपति के लिए चुने गये !

गुरु अपने उपदेश और सुझाव सभी को समान भाव से देते हैं, सभी के स्वास्थ्य एवं आध्यात्मिक उन्नति का बड़ा ध्यान रखते हैं, सभी से प्रेम करते हैं और सभी को उनकी प्रतीति या विश्वास के आध्यात्मिक साधना-क्षेत्र में आगे बढ़ने के लिए प्रोत्साहित करते हैं। वे उनकी कमियों और दोषों का निराकरण करने के लिए, आध्यात्मिक विकास के लिए उन्हें अच्छा से अच्छा अवसर देते हैं। यह मैं दावे के साथ कह सकता हूँ कि गुरुदेव ने स्वामी चिदानन्द जी को कोई विशिष्ट जादुई मन्त्र या गुप्त दीक्षा नहीं दी है, जिससे कि वह हजारों शिष्यों, ब्रह्मचारियों एवं संन्यासियों के मध्य अपने को अग्रणी बनाने में समर्थ हो गये।

ऐसे लोग भी हैं जो तेजस्वी भाषण तो देते हैं, किन्तु निःस्वार्थ सेवा करने और किसी मृतप्राय व्यक्ति को चुल्लू-भर पानी देने में उनकी जान निकलती है। ऐसे लोग भूल कर भी गुरु महाराज के हित या दिव्य जीवन की उन्नति के सम्बन्ध में नहीं सोचते । श्री स्वामी शिवानन्द जी महान् उद्यमी सन्त हैं। वह कहते हैं कि ऐसे लोग लोक-उत्थान या लोगों के अध्यात्मीकरण के सन्दर्भ में प्रथम आक्रमणकर्ता की तरह हैं। वह सोचते हैं कि जिज्ञासुओं को सभी क्षेत्रों में प्रवीण बनना चाहिए। इसी को हम गुरुदेव का 'समत्वयोग' कह सकते हैं। **गुरु महाराज के निकट सम्पर्क में आने वाले हजारों में से केवल स्वामी चिदानन्द जी ही ऐसे हैं जिन्होंने सभी क्षेत्रों में शुद्ध हृदय से सेवा करके गुरु महाराज को सम्पूर्ण सन्तोष प्रदान किया। इसीलिए श्री स्वामी चिदानन्द जी आश्रम के केन्द्र-बिन्दु बन सके।**

मैंने उन्हें बिल्लियों, कुत्तों और बन्दरों को खाना खिलाते एवं उनकी सेवा करते देखा है। इधर आश्रम अर्थ-संकट में है, उधर वह बीमार कुत्तों को महँगे 'इंजेक्शन' लगवाने के लिए पर्याप्त धन व्यय करते हैं। इधर सैकड़ों पत्र उत्तर की प्रतीक्षा कर रहे हैं, उधर वह स्थानीय बालक-बालिकाओं को उपदेश देने तथा मिठाइयाँ, बिस्कुट और फल बाँट कर उनका मनोरंजन करने में लगे हुए हैं। यहाँ तक कि कभी-कभी वह अपने व्यक्तिगत कार्य से निपटने में चूक जाते हैं, किन्तु बीमार व्यक्तियों को सान्त्वना देने अथवा दीन-हीनों की सेवा करने अथवा सुन्दर पुष्पों की सुन्दरता देखने में घंटों व्यतीत कर देते हैं। व्याकुल कर देने वाले दैनिक कार्यों के बीच में भी वह किसी भी विषय पर नितान्त ग्राह्य और प्रभावशाली ढंग से किसी भी भाषा में तेजस्वी भाषण दे

सकते हैं, सुमधुर कीर्तन कर सकते हैं। यहाँ तक कि नास्तिक को आस्तिक बना सकते हैं और उसे तब तक नहीं छोड़ेंगे, जब तक सन्देह मिट नहीं जाते, समस्याएँ सुलझ नहीं जातीं।

उनके कमरे में मैंने श्री स्वामी शिवानन्द जी के चित्र के निकट भगवान् ईसामसीह, भगवान् बुद्ध, शंकर तथा अन्यों के चित्र देखे हैं। सूक्ष्म निरीक्षण से यह तथ्य दैवी ढंग से प्रकट होता है कि गुरु के चरण-कमलों में उनकी अगाध भक्ति है। गुरु का शब्द उनके लिए 'विधान' है। छोटी-से-छोटी वस्तु के लिए वह गुरु-आज्ञा की अपेक्षा रखते हैं। यह स्वाभाविक भी है। कुछ आश्रमवासी अपने को गहरी साधना में डुबा देना चाहते हैं, कुछ सिद्धियाँ (भौतिक या आधिभौतिक शक्तियाँ) प्राप्त करने के लिए एकान्तवास करना चाहते हैं, या फिर प्रेस (मुद्रणालय) एवं मंच के माध्यम से नाम व कीर्ति के इच्छुक होते हैं कुछ ओजस्वी भाषण देने के लिए शास्त्रों का अध्ययन करना चाहते हैं या फिर 'संघ' के सचिव बन कर सभ विभागों पर अधिकार जमाना चाहते हैं। कुछ ऐसे भी है
जो नया आश्रम खोलने के लिए गुप्त रूप से आवश्यक वस्तुएँ एकत्रित करते हैं। जिज्ञासुओं की व्यक्तिगत आकांक्षाएँ निस्सन्देह भक्तों को गुरु की शिक्षा और अधिक से अधिक आध्यात्मिक लाभ से वंचित कर देती है।

लेकिन श्री स्वामी चिदानन्द जी में मैंने ऐसी कोई चाह कहीं नहीं देखी। उनके पास ऐसी कोई भी योजना या परियोजना नहीं है। वह गुरु के मार्ग पर चुपचाप चलने वाले का-सा जीवन व्यतीत करते हैं। अन्य महत्त्वपूर्ण बात जो मैंने उनमें पायी, वह यह कि वह गुरुदेव के आदेश का अक्षरशः पालन करते हैं, जब कि हममें से बहुत से आश्रमवासी वही कार्य करना स्वीकार करते हैं जो हमारी रुचि के अनुकूल होता है।

प्रायः सभी विभागों के सचिव आदेश और अनुशासन का पालन करते हैं और सामान्य से सामान्य कार्य को सन्तोषजनक ढंग से सम्पन्न करते हैं। इतना होने पर भी कभी-कभी संस्थापक या अध्यक्ष को अप्रसन्न करने का अवसर आ ही जाता है- 'दिव्य जीवन संघ' में तो ऐसे अवसरों की पर्याप्त सम्भावना है। किन्तु स्वामी चिदानन्द जी सदा ही पूर्णतः गुरु-कृपा पर निर्भर करते हैं, गुरु-आज्ञा का अक्षरशः पालन करते हैं और सभी कार्यों में उनके संकेत की प्रतीक्षा करते हैं। यही भावना बिना तनिक-सी अरुचि के उन्हें 'दिव्य जीवन संघ' में कार्य करने में सहायता प्रदान करती है, जिससे गुरु महाराज तथा सभी आश्रमवासियों तथा दर्शनार्थियों को पूर्ण सन्तोष प्राप्त होता है। इसलिए वह गुरुदेव के परम प्रिय शिष्य हैं। **मेरा यह अनुभव है कि मैं यदि स्वामी चिदानन्द जी की कार्य-शक्ति तथा गुरु-चरणों में भक्ति का सहस्रांश भी गुरुदेव के निकट सम्पर्क में रह कर प्राप्त कर लेता तो निस्सन्देह 'त्रोटकाचार्य' की उपाधि से विभूषित हो जाता।**

दिव्य जीवन संघ, शिवानन्द आश्रम
शिवानन्दनगर (ऋषिकेश)

प्राची का प्रकाश

-श्री स्वामी कृष्णानन्द जी महाराज -

शाश्वत काल से अंशुमान अपने तेज-पुंज के साथ प्राची दिशा से उदित हो कर अपनी चुम्बकीय शक्ति के साथ समस्त भूमण्डल को अपनी प्राणभूत शक्ति से प्रभावित करते आ रहे हैं। इसी से प्राची दिशा पावन मानी जाती है। इसी प्राची दिशा के महान् देश-भारतवर्ष के सन्त-मण्डल के आकाश में, दिव्य जीवन संघ के परमाध्यक्ष पूज्य श्री स्वामी चिदानन्द जी महाराज एक तेज-पुंज सूर्य की भाँति देदीप्यमान होते हुए शीतल किरणें बिखेर रहे हैं।

स्वामी चिदानन्द जी महाराज प्रत्येक समय में न केवल मेरे सच्चे दार्शनिक मित्र और पथ-प्रदर्शक रहे हैं, प्रत्युत मेरे गुरु भी हैं। पूज्य श्री स्वामी शिवानन्द जी के पश्चात् मैं उन्हीं को ही सादर नमन करता हूँ। अपने इस लौकिक प्रवास में जीवन के समस्त ज्ञान के एक-एक कण का भी यदि मैं भागी हूँ जिससे प्रत्यक्ष रूप से मेरे जीवन की बहुमुखी प्रतिक्रियाओं के समन्वय का आनन्द प्राप्त हुआ है, तो इसका श्रेय दो अविस्मरणीय स्रोतों को है-गुरुदेव स्वामी शिवानन्द जी महाराज और पूजनीय स्वामी चिदानन्द जी महाराज। जीवन-दर्शन का यह अलौकिक पक्ष मुझे शिवानन्द जी महाराज से प्राप्त हुआ, तो इसके आन्तरिक पक्षों को मन में प्रवेश कराने का श्रेय स्वामी चिदानन्द जी महाराज के आत्म-समर्पित जीवन को प्राप्त है।

सुविदित ही है कि श्री स्वामी चिदानन्द जी महाराज के भीतर आध्यात्मिकता के बीज बाल्यकाल से ही अंकुरित हो कर शीघ्रता से पनपने लगे। उनके ज्वलन्त बौद्धिक शिक्षण का संयोग सारांश में और स्पष्ट रूप से वह मानवीय दृष्टिकोण था जो ईसाई धर्म के आदर्शों का अत्यन्त रूढ़िवादी परम्पराओं के साथ सुन्दर सम्मिश्रण उस ब्राह्मण परिवार में देखा जा सकता था जिसमें दृढ़ ईश्वर-निष्ठा के साथ ही पदार्थों के प्रति जीवन्त और प्रेरणाप्रद गमन की क्षमता थी। उनके जन्म, पारिवारिक जीवन और शिक्षण की यह विरल और सुन्दर भूमिका उनके अस्तित्व की गहराइयों से ईश्वर-भक्ति की निहित शक्ति को उनके चेतना-पटल पर लाने के लिए पर्याप्त थी।

किन्तु १९४३ में गुरुदेव श्री स्वामी शिवानन्द जी महाराज के श्रीचरणों में उनका शिष्यत्व उनके उदात्त जीवन में एक विशेष महत्त्व रखता है; क्योंकि यहीं से उन्होंने सिद्धान्त रूप से भारतीय आध्यात्मिक संस्कृति के विस्तार एवं प्रचार-प्रसार हेतु कार्य प्रारम्भ किया और वे विश्वविख्यात शक्तिशाली अग्रणी पथ-प्रदर्शक बने।

आश्रम के बाहर जन-गण के हृदयों में स्वामी जी के गुणों के प्रति सम्मान और विश्वास था; अतः उन्हें 'मुनिकीरेती' स्थान का प्रथम तो उपाध्यक्ष और तत्पश्चात् नगर कमेटी के अध्यक्ष पद से विभूषित किया गया। इसी क्षेत्र के अधिकारियों द्वारा वे 'कुष्ठ कल्याण केन्द्र' के भी अध्यक्ष पद पर आसीन हुए।

उनके प्रवचन उनकी अन्तरात्मा की अभिव्यक्ति थे। सामान्य व्यवसायी व्यक्ति के प्रवचन में जो शब्दावली की कृत्रिम शोभा झलकती है, वह उनके प्रवचन में न थी। वे एक स्पष्टवक्ता थे। उनके व्यक्तित्व में हृदयंगम शक्ति थी, ओज था जो उनके मन, वचन, कर्म के अनुरूप थे। अकादमी में वे गुरुदेव के बाद प्रथम महत्त्वपूर्ण कार्यकर्ता माने जाते। 'राजयोग' के निपुण प्रवक्ता तो वे थे ही, गुरुदेव ने उन्हें उपकुलपति की उपाधि से भी सुशोभित किया। उनकी महान् कृति 'Light Fountain' ('आलोक-पुंज') को विस्मृत नहीं किया जा सकता जिसका लेखन सुन्दर प्रवाहयुक्त शैली में आंग्ल भाषा में उन्होंने अपने आश्रम के प्रारम्भिक दिनों में अत्यन्त गोपनीयता से किया था। इसमें स्वयं गुरुदेव के मुखारविन्द से मुखरित गुरुदेव के जीवन-वृत्त का लावण्यमय विवरण है।

१९४८ में स्वामी चिदानन्द जी ने दिव्य जीवन संघ के महासचिव (General Secretary) पद को सँभाला। आश्रम के सभी अन्तःवासियों के लिए यह एक हर्ष का विषय था। संन्यासी, साधक, ब्रह्मचारी, सेवक सभी प्रसन्न थे; क्योंकि अब उनके पास एक नेता, मित्र, दार्शनिक और पथ-प्रदर्शक के रूप में एक सच्चे युधिष्ठिर थे। स्वयं गुरुदेव भी आह्लादित थे; क्योंकि आश्रम की कार्यकारिणी अब सर्वोच्च, आदरणीय, आध्यात्मिक प्रवक्ता के हाथों में आ गयी थी।

१९५९ के नवम्बर मास से मार्च १९६२ पर्यन्त की अमेरिका यात्रा के लिए गुरुदेव ने श्री स्वामी चिदानन्द जी महाराज को 'दिव्य जीवन संघ' के प्रतिनिधि के रूप में भेजा। स्वामी जी उन अलौकिक विभूतियों में एक विरल अपवाद हैं जिन्होंने पश्चिम देशवासियों के हृदयों को छू लिया; किन्तु स्वयं बाह्याभ्यन्तर रूप से पश्चिमी सभ्यता से अछूते रहे। रूढ़िवादी ब्राह्मण की परम्परानुसार सरल स्वल्पाहार ग्रहण करके तथा गेरुआ वस्त्र धारण करके उन्होंने एक भारतीय संन्यासी की परम्परा को बहुत अच्छी तरह से निभाया। पश्चिमी सभ्यता के सहस्रों लुभावने दृश्यों के मध्य, सुख-सुविधाओं और इन्द्रियोत्तेजक वातावरण के गहन कुहरे में रह कर भी उन्होंने भारतीय आध्यात्मिक आदर्शों का त्याग नहीं किया। हाथ में ज्ञान की मशाल ले कर स्वामी जी जहाँ भी वे गये, उन्होंने दिव्य जीवन, आध्यात्मिकता, भारतीय संस्कृति और धरती पर रहते हुए दैवी जीवन यापन करने का सन्देश घर-घर, नगर-नगर, शहर, संस्थान, विद्यालय और विश्वविद्यालयों में दिया। निश्चितरूपेण पश्चिमी सभ्यता को इसकी विशेष आवश्यकता है; क्योंकि आधुनिकता की चकाचौंध में जीने वाले बीसवीं शताब्दी के वे लोग इसी ज्ञान के द्वारा तमसू से ज्योति की ओर बढ़ सकते हैं।

इसके उपरान्त वे ध्यान और तपस्या के लिए एकान्तवास को चले गये। इसका प्रयोजन उन्होंने स्वयं यह बताया कि दीर्घ काल तक विदेशी वातावरण में समय बिताने के पश्चात् वे आत्म-शुद्धि करना चाहते थे, यद्यपि विदेशी संस्कृति से अप्रभावित, अछूते और अक्षत रह कर उन्होंने अपने देश को गौरवान्वित किया था। इस स्वैच्छिक तपश्चर्या और कठोर मौन-व्रत के पश्चात् स्वामी जी भारतवर्ष की पावन धरा पर आदर्श संन्यासियों के मध्य नव-पल्लवित पौधे की भाँति दीप्तिमत् स्वरूप के समक्ष आये। दिव्य ज्योति श्री स्वामी शिवानन्द जी महाराज के महासमाधि में विलीन होने से पूर्व ही वे आश्रम लौट आये। कहना न होगा-गुरुदेव को कितनी प्रसन्नता हुई होगी कि उनका प्रिय आध्यात्मिक पुत्र उनकी स्मरणीय महासमाधि के समय उनके समीप था; क्योंकि उनके कन्धों पर आश्रम का भविष्य निर्भर था। अन्तिम समय में वे ही गुरुदेव के निकट प्रणव का उच्चारण करते हुए विद्यमान थे। गुरुदेव के 'अज्ञात' में विलीन होने पर वे ही सभी शोकग्रस्त साधकों को सान्त्वना देने वाले थे। १४ जुलाई १९६३ को गुरुदेव के महाप्रयाण के पश्चात् आश्रम में आयी रिक्तता

(शून्यता) की स्थिति को स्वामी जी ने अपने आन्तरिक प्रभाव और शक्ति से १८ अगस्त १९६३ तक सँभाला जिस दिन वे दिव्य जीवन संघ के बोर्ड ऑफ ट्रस्टीज़ द्वारा आश्रम के अध्यक्ष निर्वाचित हुए।

संघ के परमाध्यक्ष पद पर आसीन होने के बाद स्वामी जी ने समर्पण, सेवा और आदर्श आध्यात्मिक भाव में लीन हो कर, न केवल दिव्य जीवन संघ के विशाल संस्थान में, प्रत्युत विश्व-भर के साधकों के हृदय में, जो उन्हें अपना प्रिय अभिभावक, शुभ-चिन्तक, सलाहकार अथवा मार्गदर्शक मानते थे, त्यागभाव जाग्रत किया। 'त्याग' की ध्वजा को ऊँचा फहराने में उन्होंने सक्षम परिश्रम किया। आश्रम में उनका जीवन दो स्वरूपों में अभिव्यक्त था। प्रथम तो गुरुदेव श्री स्वामी शिवानन्द जी महाराज की कठोर (उग्र) आध्यात्मिक तपश्चर्या का जीवन और द्वितीय एक आधुनिक शिक्षित मनुष्य जिसमें जीवन का सुन्दर मानवीय दृष्टिकोण विचार और कर्म का महत्त्वपूर्ण सन्तुलन बनाये झलकता था। यह कलात्मक सम्मिश्रण एक अद्वितीय चरित्र को जन्म देने वाला था जिसने स्वामी जी को न केवल छोटे-बड़े किसी भी स्तर के व्यक्ति के साथ तद्रूप बनाया, प्रत्युत आध्यात्मिक जगत् में प्रत्येक प्रकार के धर्म, जाति, समुदाय, शिष्यों के मध्य उन्हें अनन्य धर्मात्मा बना दिया। स्वामी जी ने 'सेवा' भाव को जो स्थान दिया, वह केवल मनुष्य-जाति तक ही सीमित न था, वह तो प्राणिमात्र के लिए था। इसी कारण सामान्य जीवन के क्षेत्र में कार्य करने वालों और ग्रामीण धर्म-प्रचारकों की अपेक्षा वे कहीं अधिक पूज्य थे। उनके लिए सेवा ही धर्म है, जब कि उन मनुष्यों के अनुसार सेवा और धर्म विपरीत-विरुद्ध गुणों से युक्त माने जाते हैं जो धर्म को एक प्रकार का बहिफ़ेन (कड़वा विष) अथवा चित्त की भ्रान्ति समझते हैं। एक ओर जहाँ एक पण्डित समाज-सेवा की अवज्ञा करता है, तो दूसरी ओर एक कट्टर समाज-सेवी धार्मिक व्यग्रता को हीन दृष्टि से देखता है। जीवन के प्रति दोनों ही प्रकार के त्रुटिपूर्ण उपगमनों ने मानवता को संकीर्ण बना कर अस्त-व्यस्त कर दिया है और इतिहास के क्रम में विपत्तिजनक स्थिति उत्पन्न कर दी है। स्वामी चिदानन्द जी गुरुदेव के एक ज्ञानवृद्ध शिष्य के रूप में सफल हुए। अपने दोनों हाथों में धर्म और सेवा की पताका उठा कर उन्होंने तद्रूप हो कर इन दो मानवीय आदर्शों को आत्म-साक्षात्कार में सहायक एकल ज्योति-स्वरूप मानने का उपदेश दिया। यह एक सफल और उद्देश्यपूर्ण जीवन का एक ज्वलन्त दृष्टान्त है। यह कहना अतिशयोक्ति न होगी कि स्वामी जी इस ज्वलन्त दृष्टान्त के अनुरूप अभी तक जिये और आज भी इसी के अनुरूप जी रहे हैं।

दरिद्रता, रोग और अज्ञान मनुष्य की सबसे बड़ी व्याधियाँ हैं। इनका शमन करने के लिए अपने शरीर, मन और आत्मा को ही समर्पित कर देने के अतिरिक्त मानवता की और क्या सेवा हो सकती है। दूर से भी उन्हें कहीं ऐसा अवसर प्राप्त हो, स्वामी जी सदा तत्परता से उसे निभाते रहे हैं। हृदय को द्रवित कर देने वाली ऐसी सेवा की घटनाओं का पुनर्लेखन तो यहाँ उचित न होगा जिनसे प्रायः सभी परिचित हैं और जिनके विषय में बहुत-कुछ पहले ही लिखा जा चुका है, पुनरपि कुछ प्रमाणिक सत्यों का विवेचन यहाँ अनिवार्य है इस अमानवीय पुरुष के मानवीय कृत्यों का।

आश्रम के दो अन्य सहयोगियों के साथ स्वामी जी टैक्सी में जा रहे थे। रास्ते में उन्होंने एक व्यक्ति को बुरी तरह घायल अवस्था में सड़क पर पड़े देखा। टैक्सी चालक उसे अनदेखा करके आगे बढ़ गया। किन्तु स्वामी जी ने इस दृश्य को शीघ्रतापूर्वक देखा और टैक्सी वाले को रुकने को कहा। नीचे उतर कर उन्होंने पूछताछ की। पता चला कि दुर्घटना का शिकार हो कर वह व्यक्ति असहाय अवस्था में ऐसे पड़ा था। स्वामी जी उसे उठा कर शीघ्र ही निकटतम

अस्पताल पहुँचाने के लिए टैक्सी में रखने को तैयार थे। किन्तु टैक्सी चालक इस बात के लिए सहमत न था। उसे भय था, कहीं पुलिस उसे ही अपराधी न समझ बैठे कि उसी की गाड़ी से दुर्घटना हुई हो। चालक उग्र-स्वभाव था। किसी भी मूल्य पर वह उस व्यक्ति को अस्पताल तक ले जाने के लिए सहमत न हुआ। स्वामी जी क्या करते? उन्होंने टैक्सी चालक को उसका किराया दिया और उसे जाने को कह दिया। स्वयं वे अपने सहयोगियों के साथ उस व्यक्ति को उठा कर निकटतम अस्पताल तक पहुँचाने के लिए पैदल जाने को तैयार हुए, दूरी कितनी भी रही हो ! अधिक क्या कहें! टैक्सी चालक का हृदय द्रवित हो उठा और वह अपनी गाड़ी में उस दुर्घटनाग्रस्त व्यक्ति को ले जाने के लिए तैयार हो गया। यदि मानवता पाशविक वृत्तियों से ऊपर है, तो दिव्यता मानवता से बढ़ कर है।

एक कर्तव्यपरायण धार्मिक जीवन के लिए मूल धर्म संहिताओं में प्रतिपादित व्रत, अनुष्ठान, पतंजलि योग के यम-नियम अथवा बौद्ध धर्म के पंचशील विशेषकर अहिंसा की प्रवृत्ति, व्यवहार में यथार्थ सत्य, ब्रह्मचर्य अथवा मन और इन्द्रियों का पूर्णतः वशीकरण स्वामी जी के लिए कोई अनुकरणीय धर्म, सिद्धान्त, आदर्श अथवा किसी रूप में अनिर्वचनीय सत्य न कर उनके जीवन के अभिन्न अंग थे जिसमें वे विचरण करते और जिसमें वे उन्हीं गुणों के मूर्त रूप में सबके समक्ष दिखायी देते। यदि हम यह सोचें कि कोई संन्यासी घृणा-भाव रख सकता है, तो उनमें था; लेकिन केवल दो बातों के लिए-अनैतिक जीवन और मिथ्या भाषण। शैशव काल से ही उन्हें नैतिक जीवन से लगाव था, प्यार था। उनमें सदाचार और साधुता के विस्फुलिंग तो सदा उनके शान्त भाव को प्रतिभासित करते रहते।

स्वामी जी के हृदय की यह एक अनूठी विशेषता है कि यह अपने से बाहर जाने को सर्वदा तत्पर रहता है। वे स्वयं को भूल कर सदा दूसरों की आवश्यकताओं, इच्छाओं, आकांक्षाओं को पूर्ण करने के लिए उद्यत रहते हैं। अतः कहा नहीं जा सकता कि १९६३ में दिव्य जीवन संघ के परमाध्यक्ष पद पर आसीन होने के उपरान्त सात वर्षों में शारीरिक विश्राम हेतु कदाचित् ही समय निकाल पाये होंगे। यह बताना भी अप्रासंगिक न होगा कि वे उन विरल स्थितप्रज्ञ आत्माओं में से एक हैं जो मन को विचलित एवं भ्रान्त कर देने वाले इस संसार की अनेक रंग-ध्वनियों और गतियों से अप्रभावित और अछूते रह कर सर्वत्र उपदेश करते हुए विचरण करते रहे होंगे। वे निर्भीक हो कर भ्रमण करते और निराशा के सागर में डूबे विशाल समुदाय के मानस में आशा की किरण, विवेक और विश्वास जाग्रत करने के लिए अश्रान्त रूप से सतत कार्य करते रहे। स्वामी जी लोगों के सामाजिक तनाव और व्यक्तिगत समस्याओं का समाधान करते। सर्वोपरि, उन्हें आध्यात्मिक सुख प्रदान करने तथा उस ज्ञान-शक्ति का आशीर्वाद देने के लिए वे कार्यरत रहते जिससे वे लोग जीवन-पथ में उच्चतम लक्ष्य-आत्म-साक्षात्कार की अनुभूति के लिए योग्य बन सकें।

किसी विशिष्ट व्यक्ति की षष्ट्यब्दिपूर्ति का उत्सव मनाना भारतीय परम्परा को अलंकृत करता है। आज स्वामी चिदानन्द जी महाराज के इस महोत्सव में हमें यह सौभाग्य प्राप्त हुआ है कि हम भारत की उस महान् संस्कृति को कृतज्ञता की श्रद्धांजलि अर्पित कर सकें जिसका महान् तेज यहाँ के महान् सन्तों और तपस्वियों की नाड़ियों में आज भी प्रवाहित हो रहा है। इसी आध्यात्मिक पीढ़ी का एक अनुपम दृष्टान्त हैं-स्वामी चिदानन्द जी महाराज। सर्वतः अपनी व्यक्तिगत उपलब्धियों के साथ आत्म-समर्पण की कला सीखने के लिए यह एक महत्त्वपूर्ण अवसर है।

दिव्य जीवन संघ, शिवानन्द आश्रम
शिवानन्दनगर (ऋषिकेश)

१९५० में स्वामी जी ने गुरुदेव के साथ सम्पूर्ण भारत की दीर्घ यात्रा की। गुरुदेव की इस यात्रा में स्वामी जी महाराज का महान् योगदान था। वे रास्ते भर सुन्दर मार्मिक प्रवचन देते रहे जो गुरुदेव द्वारा दिये गये प्रवचनों के परिशिष्ट रूप में थे। स्वामी जी न केवल ओजस्वी वाणी में प्रवचन ही करते, प्रत्युत योगासनों का प्रदर्शन भी करते। यद्यपि अपनी शिथिल पाचन प्रणाली और दुर्बल शरीर के कारण स्वामी जी को अनेक कठिनाइयों का सामना करना पडा, तथापि उन्होंने इन कठिनाइयों की ओर ध्यान नहीं दिया। गुरुदेव की महानता और महिमा की वेदी पर यह एक सेवा, तपश्चर्या और भक्तिभाव की सुन्दर भेंट थी। इस यात्रा के माध्यम से प्रथम बार 'दिव्य जीवन संघ' और 'शिवानन्द आश्रम' जन-जन की दृष्टि में आये। देश के महान् सामाजिक और राजनैतिक नेताओं तथा सरकारी उच्चाधिकारियों को इसकी जानकारी मिली। आत्म-साक्षात्कार के पथ पर अग्रसर होने के इच्छुक एवं आध्यात्मिक पिपासुओं को मार्ग मिला।

दिव्य जीवन ज्योति की जय हो!

- श्री स्वामी वेंकटेशानन्द जी महाराज -

कृपया अपने पावन चरणों में हमारे विनम्र हार्दिक प्रणाम स्वीकार करें!

आपके अत्यन्त प्रभावशाली व्यक्तित्व के वैभव के समक्ष, आपकी चकाचौंध कर देने वाली अध्यात्मिक अपस्थिति में, हम प्रशंसा में मौन खड़े हुए हैं। **आप कृपापूर्वक अपनी आन्तरिक दिव्यता की वेदी की ओर हमें भी ले चलें।**

आपके परम प्रकाशमान आध्यात्मिक व्यक्तित्व की दीप्ति के सामने हम अपनी आँखें ढके हुए हैं ताकि हम अपनी आँखों और अपने उत्कंठित हृदय में आपके मानवीय व्यक्तित्व का पान कर सकें; किन्तु यहाँ, यद्यपि हम देख रहे हैं, परन्तु आपमें से विविध प्रकार की चकाचौंध कर देने वाली इतनी किरणें प्रकट हो रही हैं, कि हम पुनः अपनी आँखें आपके उज्वल चरणों में झुका देते हैं और प्रार्थना करते हैं, **"हमें अपने वास्तविक स्वरूप की वेदी की ओर ले चलें-विस्मयाकुल श्रद्धा से हम आपके समक्ष मूक खड़े हुए हैं।"**

क्योंकि, ऐसे परिपूर्ण व्यक्ति के पावन जन्म-दिवस पर हम क्या कर सकते हैं? हम बड़े से बड़ा सम्मान भी आपको समर्पित करें, प्रशंसा के सर्वोत्तम चयनित शब्द भी अपनी विनम्र पूजा के रूप में आपके पावन चरणों में समर्पित करें, तो वह सब भी केवल आपकी महानता को कम करने वाला ही होगा। आपके उदात्त आदर्श का अनुकरण करना तथा आपके महिमान्वित जीवन से शिक्षा ग्रहण करना असम्भव कार्य ही प्रतीत होता है; क्योंकि हमें तो लगता है **आपकी अनेकों विशिष्टताओं में से किसी एक को प्राप्त करने के लिए भी हमें घोर परिश्रम से युक्त अनेकों जन्म लग जायेंगे।**

विश्व के इतिहास में ऐसे अत्यन्त गिने चुने ही व्यक्ति होंगे जिनमें बहुमुखी सर्वश्रेष्ठता प्रकटित होने के लिए गौरवान्वित हुआ जा सके। अवतारों में केवल पूर्णावतार भगवान श्री कृष्ण के खान पार में ग्रह माना जाता है कि उन्होंने स्वयं में यह बहुमुखी-परिपूर्णता प्रकट की। हमारे आज के समय में ऐसे दो व्यक्तियों की विद्यमानता का सौभाग्य हमें प्राप्त है- गुरुदेव श्री स्वामी शिवानन्द जी महाराज और श्री महात्मा गान्धी जिनके आदर्श में आपने स्वयं को ढाला है। इसके साथ-साथ आपमें भगवान् बुद्ध की अपूर्व करुणा और भगवान् ईसा के अनवरत सुधारात्मक उत्साह का विलक्षण सम्मिश्रण है, वस्तुतः इन दोनों का ही प्रतिबिम्ब हम आपमें देखते हैं।

आपके जीवन में संन्यास महिमान्वित हुआ है। आपकी त्याग भावना के स्वरूप का कठोपनिषद् में नचिकेता के शब्दों में अत्यन्त सुन्दर ढंग से वर्णन मिलता है। इस प्रकार का महान् त्याग हमें वारू में यह स्मरण कराता है कि सच्चे त्यागी साधक की दो त्रिलोकी की सम्पदा का महत्त्व एक तृण के तुल्य हीं है। इसके साथ ही हमने देखा है धन के प्रति आपन में घृणा भी नहीं है। दिव्य जीवन संघ के महासचिव रूप में, धन के प्रति आपका भाव, संसार के समस्त लोगों के लिए एक सीख है कि **धन का उपयोग जीवन के लक्ष्य की पूर्ति का एक साधन मान कर करना चाहिए, इसे अपने आप में एक लक्ष्य मान कर नहीं**; और यह भी कि स्वयं को भगवान् की सम्पत्ति का न्यासी (ट्रस्टी) मान कर, **उस सम्पत्ति का उपयोग उनकी सन्तानों की भलाई के लिए करना चाहिए।**

आपके महान् त्याग के प्रथम उदाहरण के रूप में, **आप ने सम्पूर्ण मानव-जाति को उस सर्वव्यापक परमात्मा के ही रूप में देखते हुए गले लगाया है। आपमें इस परिपूर्णता की अनुभूति का होना आपके दिव्य व्यक्तित्व की समग्र परिपूर्णता से स्पष्ट रूप में अभिव्यक्त**

होता है। क्योंकि आपमें एक सुयोग्य प्रशासक, बुद्धि सम्पन्न निर्देशक, विनम्र सेवक, उत्साही साधक, आदर्श सन्त, सशक्त लेखक, प्रेरक वक्ता, अद्वितीय हास्य-रसज्ञ, सर्वप्रिय मित्र, और इन सबसे शिरोमणि एक आत्म-साक्षात्कार प्राप्त जीवन्मुक्त सन्त होने का सम्मिश्रित रूप मिलता है। और वास्तव में ऐसा इसलिए हो पाया है, क्योंकि आपने अपने जीवन में उन स्वर्णिम शब्दों को प्रचुर मात्रा में सिद्ध करके दिखा दिया है जो कि आप बारम्बार हमारे कर्ण-कुहरों में गुँजाते रहते हैं-"**जीवन दिव्य होना चाहिए, साधना हमारा जीवन-श्वास बन जानी चाहिए।**" आप दिव्य पैदा हुए हैं, अतः आपके व्यक्तित्व का कोई भी अंग दिव्यता विहीन नहीं है, और आपका कोई भी कार्य ऐसा नहीं है जो सर्वोच्च, उदात्त और पावन न हो।

आपकी उदात्त-पावनता के सम्बन्ध में हम क्या कहें? जो भी शब्द हम चुनेंगे वह आपसे ही लिये हुए हैं; क्योंकि हमारे सम्पूर्ण ज्ञान का कोष आपका ही उपहार है। **महान् है वह धरा जिसने आप सरीखे महापुरुष को जन्म दिया है। धन्य है वह लोग जिन्छ जरा सी भी के लिए आपका सत्संग मिलने का सौभाग्य प्राप्त हुआ है। धन्य है वह युग जिसमें अवतरित होने के लिए आपने उसे चुना है।** हमें तो इस बात की अत्यधिक प्रसन्नता है कि भगवान् ने हमें यह मनुष्य जन्म दिया और वह भी विशेष रूप से इस कलियुग में दिया, क्योंकि तभी तो हम आपके और परम पूज्य गुरुदेव के पावन चरणों में रहने का सौभाग्य पा सके! हम स्वयं को सौभाग्यशाली समझते हैं कि गुरुदेव की सम्मोहक वाणी और उनकी आकर्षक आध्यात्मिक शक्ति ने हमें अपने चरणों में खींच लिया और हमारे मन में ईश्वराकांक्षा की चिनगारी जलायी; और आपके सतत प्रेमपूर्ण प्रबोधनों ने उस स्फुलिंग को जीवित ही नहीं रखा है बल्कि उसे हवा दे कर ज्वाला बना दिया है। **हम आपके आध्यात्मिक बालक हैं। क्योंकि हम आपमें और गुरुदेव में किसी भी प्रकार का कोई अन्तर नहीं देखते हैं (यहाँ तक कि दोनों के नामों में भी इतना सादृश्य है)। और हमने स्वयं को पूर्णतया आपकी दिव्य सुरक्षा में सौंप दिया है।**

क्योंकि गुरुदेव के 'दिव्य जीवन मिशन' के लिए आप (जैसा कि आपने स्वयं को ठीक ही कहा) एक ऐसा प्रिज्म हैं जो स्वयं में से विविध रंगों का अत्यन्त सुन्दर दिव्य प्रकाश प्रकट करता है। **हे गुरुदेव की दिव्य सन्तान, आप गुरुदेव की प्रतिकृति ही हैं। साधुओं और संन्यासियों के लिए आप एक सुयोग्य मार्गदर्शक हैं। समस्त मानवता के लिए आप अद्वितीय हितैषी हैं। हम योग-वेदान्त फारेस्ट युनिवर्सिटी के विद्यार्थियों के लिए आप असत्य से सत्य की ओर, अन्धकार से प्रकाश की ओर तथा देर मृत्यु से अमरत्व की ओर ले जाने वाला उज्वल प्रकाशस्तम्भ हैं!**

इस अपरिमित आनन्द के शुभ अवसर पर हम आपमें प्रकटित उस सर्वशक्तिमान् परमात्मा से प्रार्थना करते हैं कि वह आपको उत्तम स्वास्थ्य और मानवता की सर्वोच्च सेवा (जिसके लिए आप अवतरित हुए हैं) में रत दीर्घ जीवन प्रदान करे।

आपकी पावन चरण धूलि में हम पुनः वन्दना करते हैं।

अपने दैनिक जीवन में ईश्वर की इच्छा को पूर्ण करना, यही धर्म का सार है।

-स्वामी चिदानन्द

सत्य एवं सन्त का मार्ग

श्री स्वामी माधवानन्द जी महाराज

जीवन दिव्य आराधना की एक प्रक्रिया है। बहुत से लोगों का सम्बन्ध जीवन के बाहरी उपकरणों के साथ ही होता है और उन्हीं उपकरणों को वे अन्तिम लक्ष्य समझते हैं। यद्यपि प्रत्येक व्यक्ति का लक्ष्य अलग-अलग होता है, किन्तु होता है वह बाहरी उपकरण का ही। इन बाहरी उपकरणों के साथ उनका सम्बन्ध एक अनवरत प्रक्रिया है, जो कभी न तो समाप्त होती है और न विराम ही लेती है।

लोगों ने धर्म के मूलभूत तत्त्व को भुला दिया है। वे बाहरी और अनावश्यक उपकरणों के लिए लड़ बैठते हैं। लोक-जीवन में एक धर्मोपदेशक को दूसरे की निन्दा करते हुए प्रायः देखा जाता है। एक विशिष्ट विचार-धारा के धर्मोपदेशक दूसरी विचारधारा विशेष के धर्मोपदेशक के दोषों की घोषणा खुले आम करते कहीं भी मिल जायेंगे। यहाँ तक कि तथाकथित पढ़े-लिखे लोग भी इस लज्जास्पद कार्य से विलग नहीं हैं। बड़े खेद का विषय है कि यह सब धर्म के नाम पर किया जाता है।

अगर हम इस स्थिति का कारण खोजने जायें तो मूल में तीन बातें स्पष्ट दीख पड़ती हैं- आन्तरिक अपवित्रता, मन की अस्थिरता तथा अज्ञानावरण। इन तीनों में से आन्तरिक अपवित्रता को 'कर्मयोग' के माध्यम से दूर किया जा सकता है। भगवान् ने 'भगवद्गीता' में भी यही उपदेश किया है। मन की अस्थिरता को उपासना, आराधना तथा ईश्वर के प्रति आत्म-समर्पण के द्वारा दूर किया जा सकता है। अज्ञान के आवरण को ज्ञानयोग' के माध्यम तथा विवेक और वैराग्य के अभ्यास से हटाया जा सकता है।

सन्तों का जीवन अत्यन्त विलक्षण होता है। व्यक्ति जो वस्तु वर्षों के परिश्रम से, वर्षों के स्वाध्याय तथा लम्बी तपस्या के पश्चात् कठिनाई से प्राप्त करता है, उसे सन्तों के जीवन का निष्ठा तथा लगन से अनुसरण करके अति शीघ्र पा सकता है। **सन्तों का जीवन वाजाल नहीं है, वह तो स्वयं की आहुति है। उनकी करनी तथा कथनी में अन्तर नहीं आता।** वे प्रत्येक गुण को जीवन में ढाल लेते हैं। गुण स्वतः सहज रूप से उनके स्वभाव में समाहित होते हैं, जैसे दुग्ध में मक्खन।

सन्त का ज्ञान अनुभवात्मक होता है, जब कि पण्डित का ज्ञान काल्पनिक तथा सीमित। उदाहरणार्थ सन्त का सम्बन्ध कूप के जल से है और पण्डित का ज्ञान हौज के जल के समान है। कूप के जल का सम्बन्ध स्रोत से होता है, अतः वह न तो कभी रिक्त होता है और न कभी गन्दा एवं पुराना। यह तो नित नवीन, स्वच्छ होता जाता है। किन्तु दूसरी ओर हौज का जल अल्प समय में ही दुर्गन्धित हो जाता है, उस पर काई जम जाती है तथा वह समाप्त भी हो जाता है।

अतः व्यक्ति के जीवन की समस्याएँ अथवा समस्याओं के मूल कारण, जिनका उल्लेख ऊपर किया जा चुका है, सन्तों के जीवन से शिक्षा ले कर उनका निराकरण किया जा सकता है। **श्री स्वामी चिदानन्द जी जैसे सन्त अपने दैनिक जीवन से प्रेरणा दे कर साधकों का मार्गदर्शन करते हैं, जिससे वह आध्यात्मिक पथ पर अग्रसर हो कर इस जीवन का अपना लक्ष्य प्राप्त करते हैं। सन्त ही धरती पर चलते-फिरते साक्षात् ईश्वर का रूप है।**

श्री स्वामी चिदानन्द जी की 'हीरक जयन्ती' पर हमारी यही कामना है कि वे दीर्घ काल तक स्वस्थ रह कर मानव मात्र की आन्तरिक अनवरत पिपासा को शान्त करते रहें।

दिव्य जीवन संघ, शिवानन्द आश्रम
शिवानन्दनगर (ऋषिकेश)

श्री १०८ स्वामी चिदानन्द जी महाराज मेरा अनुभव

-श्री स्वामी हरिशरणानन्द जी महाराज, बरसाना -

श्री स्वामी चिदानन्द जी से मेरा गत इकत्तीस वर्षों से परिचय है। स्वामी जी १९४३ में गुरुदेव श्री स्वामी शिवानन्द जी के आश्रम में आये थे। बारह वर्ष तो श्री स्वामी जी के बिलकुल साथ, पड़ोस में, बीस फुट की दूरी पर रहने का सौभाग्य मिला था। १९४५ से १९५७ तक का

जो 'योग साधना कुटीर' का छह कुटियों का 'ब्लाक' है तथा जो 'शिवानन्द आश्रम' की कुटियाओं में सर्वप्रथम बना था, उसमें एक और दो नम्बर वाले कमरे में श्री चिदानन्द स्वामी जी रहते थे। नम्बर तीन में श्री स्वामी कृष्णानन्द जी, नम्बर चार में श्री स्वामी हरिओमानन्द जी और नम्बर पाँच में श्री स्वामी शाश्वतानन्द जी रहते थे।

जीवन के वे बारह वर्ष बड़े सुन्दर दिन थे। वैसे दिन न कभी गुजरे और न गुजरेंगे। वैसे तो स्वामी जी सभी से प्रेम करते थे, सभी की सेवा करते थे, **परन्तु मुझसे आयु में छोटे होने के कारण कुछ विशेष प्रेम करते थे। मेरी आयु में भी एक विचित्र विशेषता यह है कि मैं श्री गुरुदेव से साढ़े चौदह वर्ष छोटा हूँ और श्री स्वामी जी से साढ़े चौदह वर्ष बड़ा हूँ। दोनों विभूतियों के मध्य में मेरी आयु है।** मेरा जन्म ५ मार्च, १९०२ का है।

श्री स्वामी जी के जीवन पर हजारों तो लेख आयेंगे जो एक से एक सुन्दर और बढ़िया होंगे, किन्तु मैं तो केवल अपने हृदय, वाणी और लेखनी को पवित्र करने के लिए थोड़े से टूटे-फूटे शब्दों में अपना अनुभव लिख रहा हूँ। मेरा लिखना ऐसा ही है जैसे मक्खी आकाश का पता लगाने के लिए उड़े।

श्री स्वामी जी का स्वभाव जन्म से ही उदार, सेवाभावी, परोपकारी तथा स्नेहपूर्ण है। यही कारण था कि यहाँ आश्रम में भी आ कर उन्होंने कोढ़ियों और बीमारों की सेवा करने के निमित्त सर्वप्रथम अस्पताल का काम सँभाला और वह श्री गुरुदेव के मन में उत्तर गये। फिर तो अपनी दक्षता से और गुरुदेव की कृपा से थोड़ा-थोड़ा आश्रम के अन्य विभागों में सेवा करते-करते आज सर्वेसर्वा सेवक और स्वामी बन गये। **श्री हनुमान् जी ने अपनी सेवा के बल पर सबको अपने अधीन और ऋणी बना लिया था। श्री राम, भरत जी, लक्ष्मण जी, श्री सीता जी आदि सभी उनका उपकार मानते थे। स्वामी चिदानन्द जी भी वैसे ही थे।**

वैसे तो हजारों लेखों में स्वामी जी के कार्यों की दक्षता, सफलता, विद्वत्ता, सेवा आदि के लेख आयेंगे, किन्तु फिर भी दो-चार वे बातें मैं लिखना चाहता हूँ, जिन्हें शायद कोई न जानता हो, लिख न सके। यह तो सभी जानते हैं कि **स्वामी जी ने किस तरह प्रेम और सेवा-भाव से सब आश्रमवासियों, अतिथियों तथा नौकरों आदि से ले कर बन्दरों, कुत्तों, कौवों, तोतों आदि तक की सेवा की। इतना ही नहीं, वरन् श्री स्वामी जी ने कुत्तों, बन्दरों और पक्षियों का अन्तिम संस्कार भी मनुष्यों की तरह 'नाम-संकीर्तन' के साथ विधिवत् किया।**

ऋषिकेश के कोड़ियों की सेवा तो खूब तन-मन-धन से की है, अब भी कर रहे हैं। परन्तु बाहर से भी एक कोढ़ी को ला कर आश्रम में कई महीने (म्यूजियम) के पास ही तम्बू में रखा। अपने हाथ से स्नान कराना, खिलाना-पिलाना तथा सब प्रकार की सेवा करना, कपड़े धोना, हजामत बनाना आदि भी आप स्वयं करते थे, क्योंकि नाई ने अस्वीकार कर दिया था। अच्छा हो जाने पर भी उसे जाने नहीं देते थे। परन्तु १ सितम्बर ५० को श्री गुरुदेव के 'अखिल भारत यात्रा' में जाते समय श्री स्वामी चिदानन्द जी को उनके साथ जाना था। इसलिए उसे बड़े आदर से सब नये कपड़े, बिस्तर आदि दे कर, जहाँ तक उसने कहा, वहाँ तक का किराया दे कर, एक व्यक्ति को साथ भेज कर विदा किया था।

दो अक्तूबर को महात्मा गान्धी के जन्म-दिन पर **हरिजनों की जैसी पूजा वह करते थे, शायद ही कोई करता होगा।** मुझे तो आशा नहीं कि और कोई ऐसा कर सके। उन्हें तिलक लगाना, हार पहनाना, उनके पैर धोना, आसन पर बिठा कर उन्हें भोजन कराना, उनके साथ प्रसाद लेना, फिर पैर छू कर, दक्षिणा दे कर आदर से भेजना और एक दो नहीं-सारे आश्रम के, मुनिकीरेती तथा ऋषिकेश तक के सब हरिजन स्त्री-बच्चों समेत आते थे।

श्री स्वामी जी के आने के थोड़े समय के बाद उनकी कार्य-दक्षता, विद्वत्ता आदि के भाव को देख कर गुरुदेव भगवान् ने अपने मुख-कमल से यह बात कही थी-'**यह मेरा सौभाग्य है कि रामकृष्ण मिशन वालों की कृपा से मुझे श्रीधर स्वामी जैसा हीरा रत्न प्राप्त हुआ।**' बात ऐसी थी कि श्रीधर राव बी. ए. पास करके मद्रास से जब आये, तो पहले रामकृष्ण मिशन में सेवा करने के भाव से गये। उन्होंने कुछ शर्त और प्रतिबन्ध लगाने चाहे। इन्होंने स्वीकार नहीं किया और यह उसे छोड़ कर यहाँ आ गये। इसी बात को ले कर गुरुदेव ने उक्त उद्‌गार प्रकट किये थे। ये उनके हृदय के सच्चे उद्गार थे।

महापुरुषों के गुण कहने और लिखने में नहीं आ सकते। वे अपार होते हैं। अनन्त का अन्त कैसे पाया जा सकता है? किसी ने आकाश का अन्त भी पाया है?

एक कथा आती है। एक बार सभी नभचरों ने एक सभा की। उस सभा में उन्होंने प्रस्ताव रखा कि हमें आकाश के अन्त का पता लगाना है। इस पर गरुड़, बाज, शिकरी, गीध आदि पक्षियों ने अभिमान पूर्वक कहा कि हम इसका पता लगायेंगे और वे वहाँ से उड़ चले। इसके पश्चात् मक्खी, मच्छरों ने सूचना दी कि हम आकाश का पार नहीं पा सके। वह अपार है, अनन्त है। उनकी यह सूचना लिख ली गयी। फिर गरुड़ आदि दूसरे पक्षी भी आये कोई छह महीने में, कोई एक वर्ष में और कोई वर्षों पश्चात्। उन सबने यही सूचना दी कि आकाश का कोई अन्त नहीं है, हम उसका पार न पा सके। वह अपार है। इस पर न्यायाधीशों ने कहा कि यह सूचना तो हमें मक्खी और मच्छरों ने पाँच मिनट में ही दे दी थी, फिर तुम लोगों ने इतने दिनों के बाद कौन-सी विशेष बात का पता लगाया? वृथा ही इतना श्रम और समय गँवाया। बेचारे बहुत लज्जित हुए।

यही हाल हम लोगों का भी है। वृथा ही महापुरुषों और सन्तों के गुणों, कर्मों और स्वभाव आदि को जानने में समय और शक्ति लगाते हैं। '**हरि अनन्त, हरि कथा अनन्ता!**' -ऐसे ही भक्त, महापुरुष और सन्तों के गुण भी अनन्त होते हैं। क्योंकि :

'भक्ति, भक्त, भगवन्त, गुरु चतुर्नाम वपु एक।
इनके पद वन्दन किये नाशें विघ्न अनेक ।'

इनमें से किसी का भी पार नहीं पाया जा सकता। इसलिए इसमें समय और शक्ति नष्ट न करके उसी समय और शक्ति को उनकी आज्ञा पालन करने में लगायें और इनके बताये मार्ग पर चल कर अपना कल्याण करें।

अन्त में भगवान् से प्रार्थना करता हूँ कि भगवान् इन्हें पूरे सौ वर्ष जीवित रखें, ताकि यह गुरुदेव तथा उनके विचारों का प्रचार इसी प्रकार देश-विदेश में करते रहें।

माँ राधे राधे राधे, जय राधे राधे राधे। जय जय राधे गोविन्द, जय जय राधे गोविन्द।
ॐ श्रीः
ब्रज चौरासी कोस में, चार गाँव निज धाम। वृन्दावन और मधुपुरी बरसाना नन्दगाँव ।।

दिव्य जीवन संघ के समर्थ सेनानी-स्वामी चिदानन्द

-श्री स्वामी आत्मानन्द जी महाराज, ऋषिकेश-

महामहिम, धर्मधुरन्धर, यतिराज श्री स्वामी शिवानन्द जी महाराज की प्रायः समस्त आध्यात्मिक-सम्पत्ति-सम्पन्न हो कर स्वामी चिदानन्द जी आज संघ के प्रत्येक सदस्य एवं उसके शुभ-चिन्तक की दृष्टि और वाणी के प्रिय विषय हो रहे हैं।

गुरुदेव के निकट सम्पर्क में आने का सौभाग्य तो मुझ जैसे साधारण शिष्य को भी मिला है, किन्तु गुरुदेव का उपदेश, आदेश, शिक्षा-दीक्षा, सेवा-शुश्रूषा, तत्परता से आज्ञा-पालन आदि का अवसर प्राप्त करने का सौभाग्य विरलों को ही मिला। उन्हीं विरलों में श्री स्वामी चिदानन्द जी प्रमुख हैं। **गुरुदेव के आदर्शों पर चल कर उन्होंने गुरुदेव के सन्देश को, भारतीय संस्कृति को विश्व के कोने-कोने में फैला दिया। 'गुरु-कृपा' स्वामी चिदानन्द जी में मुखरित हो उठी है।**

सिद्धान्तों तथा आदर्शों को ले कर संसार में न जाने कितने विवाद और संघर्ष हुए हैं, किन्तु उन सिद्धान्तों तथा आदर्शों को अपने व्यावहारिक जीवन में आत्मसात् करने वाले कुछ सन्त ही होते हैं। स्वामी चिदानन्द जी में अनेक गुणों का समन्वय है। नीरस तथा शुष्क प्रवचनों से संसार ऊब चुका है। **स्वामी चिदानन्द जी ने अपने चारु चरित्र से सहृदयता, करुणा, दया, क्षमा, सेवा तथा प्रेम प्रवाहित कर ऊसर धरती को उर्वरा कर दिया। उनके मधुर कीर्तन से, उनकी करुण पुकार से मानव का शुष्क हृदय भी आप्लावित हो उठता है।**

असहायों को सहायता देना-निर्धन को धन, भूखों को भोजन तथा निर्वस्त्र को वस्त्र देना तथा सभी में 'नारायण' का भाव रखना, रोगियों की सेवा, विशेष रूप से कुष्ठ रोगियों की तथा हरिजनों के चरण धोना, उन्हें स्वयं भोजन कराना- ये सभी बातें आज के युग के लिए बड़ी विचित्र ही नहीं वरन् असम्भव-सी प्रतीत होती हैं। किन्तु स्वामी चिदानन्द जी के लिए ये साधारण बातें हैं, क्योंकि यह उनका स्वभाव बन गया है। 'गुरु कृपा' तथा कठोर साधना से उनका व्यक्तित्व खरा स्वर्ण बन कर निखर आया है।

परम पिता परमेश्वर एवं पूज्य गुरुदेव से हमारी यही प्रार्थना है तथा हम सबकी मंगल कामना है कि वे हमारे गुरुभाई स्वामी चिदानन्द जी को दीर्घायु प्रदान करें तथा सदा स्वस्थ रखें, ताकि आने वाले अनेकानेक वर्षों तक वह इस धरती पर आध्यात्मिकता का अलख जगाते रहें।

ॐ

यदि आपका भाव ईश्वर-पूजन का है और आपका काम उसके नाम के साथ जुड़ा है, तो आपका प्रत्येक काम भजन बन जायेगा। स्थान : घर हो, खेत हो चाहे जंगल हो, वह प्रभु का मन्दिर बन जायेगा। आप जहाँ भी चलेंगे, वह ईश्वर की ही प्रदक्षिणा होगी।

-स्वामी चिदानन्द

गीता के कर्मयोग का एक आदर्श

-श्री स्वामी ज्योतिर्मयानन्द जी महाराज, अमरीका -

यह हमारे लिए सचुमच ही विशेष महत्व का विषय है कि हम स्वामी चिदानन्द जी जैसे महात्मा का 'जन्म-दिवसोत्सव' मनाने के लिए एकत्रित हुए हैं। किसी महात्मा की वास्तविक प्रशंसा जिन बातों में निहित है, मैं उन्हीं की ओर संकेत करना चाहूँगा। प्रायः हमारा ध्यान व्यक्ति विशेष के कार्यों का किसी गहराई में उत्तर कर जान लेने का होता है; किन्तु यहीं हम भूल करते हैं। इससे आन्तरिक जीवन उपेक्षित रह जाता है। जिस प्रकार समुद्र में बहते हुए 'हिम-खण्ड' के प्रायः नौ-दस भाग पानी की सतह में छिपे रहते हैं, उसी प्रकार मनुष्य की दशा है। यदि आप किसी महात्मा का मूल्यांकन करना चाहते हैं, तब उनके आन्तरिक जीवन, आन्तरिक संघर्ष, आन्तरिक गहराई और आन्तरिक गम्भीरता का गहन अध्ययन तथा विश्लेषण करना होगा।

मेरे लिए स्वामी चिदानन्द जी का सौम्य मुख, गम्भीर वार्तालाप, शान्त और निश्छल भावभंगिमा आदि उनकी सुविकसित महान् आत्मा के ग्राह्य एवं सुनिश्चित संकेत हैं। उन का मन सदैव शान्त और स्थिर रहता है, यद्यपि शरीर गतिशीलता के नियम के अनुसार हिलता-डुलता रहता है। वह कर्मयोग की पूर्णता के शिखर पर पहुँच चुके हैं। वह गीता की सारभूत शिक्षा के उत्तम आदर्श हैं, जो कि इस प्रकार है:

कर्मण्यकर्म यः पश्येदकर्मणि च कर्म यः।
स बुद्धिमान्मनुष्येषु स युक्तः कृत्स्नकर्मकृत् ।।

(गीता : ४-१८)

'जो पुरुष कर्म करते हुए अपने मन को शान्त रखता है, उसमें अकर्म की भावना रखता है तथा जो पुरुष अकर्म में भी कर्म को अर्थात् त्यागरूप क्रिया को देखता है, वह पुरुष मनुष्यों में बुद्धिमान् है और वह योगी सम्पूर्ण कर्मों का कर्ता है।'

धैर्य और शान्त-चित्त से कर्म करते रहना-यही शिक्षा का सार है। चिदानन्द जी को देखिए; आप क्या अनुभव करते हैं? समस्त शरीर में गहरी कर्मशीलता और साथ-साथ मुख पर गहरे नीले आकाश की-सी गम्भीरता और निर्मलता। निःसन्देह स्वामी चिदानन्द जी हमारे गुरुदेव के सर्वोत्तम शिष्य हैं। उन्होंने अपने 'समत्वयोग' के सिद्धान्त को स्वयं अपने जीवन में उतारा है। वह एक आदर्श भक्त हैं। वह मातृ-शक्ति के उपासक हैं। माँ के हाथ तो सर्वव्यापक हैं, किन्तु चिदानन्द जी जैसे समुज्ज्वल पुत्र ही माँ की गोद में शान्तिपूर्वक विश्राम कर सकते हैं, उनके वास्तविक स्नेह का अनुभव कर सकते हैं। वह अपने हृदय में माँ की शाश्वत उपस्थिति का अनुभव करते हैं और उनका जीवन निरन्तर प्रसन्नता का 'नित्य पर्व' है। गुरुकृपा से उनका रोम-रोम सदैव हर्षित रहता है। यही उनके शीघ्र विकास का कारण है।

ज्ञानयोग को मानने वाले ऊपर कही गयी बातों को छोटा समझते हैं। हम लोग जो हैं, उनमें से कितनों ने उन्नति की है? **युवा स्वामी (श्री स्वामी चिदानन्द जी) की गतिविधियाँ उनके ज्ञान प्राप्ति की उच्चतम अवस्था की सूचक हैं।** मिश्री की वास्तविक प्रशंसा चखने के बाद ही होती है। इसी तरह उनके चरण-चिह्नों का अनुकरण करके, उनके सद्‌गुणों को आत्मसात् करके ही हम उनके माहात्म्य को जान सकते हैं। हम सबको उनका अनुकरण करने का प्रयत्न करना चाहिए। हमारी यही शुभेच्छा है कि वह हमारे बीच बने रहें। 'आनन्दधाम' तक हमारा मार्गदर्शन करने तथा हम पर कृपा बनाये रखने के लिए ईश्वर उन्हें दीर्घायु प्रदान करें।

करुणा और त्याग के अवतार

-श्री स्वामी वेंकटेशानन्द जी महाराज -

पूज्य गुरुदेव श्री स्वामी शिवानन्द जी के ही समान स्वामी चिदानन्द जी भी रोगियों और दीन दुःखियों की सेवा करने का, कभी भी समाप्त न होने वाला उत्साह ले कर जन्मे थे। कुष्ठ रोगियों की सेवा करना तो उनका लक्ष्य ही बन गया था। अपने घर के विशाल घास के मैदानों में वे इन लोगों के लिए कुटियाएँ बना लेते और उनकी इस प्रकार देखभाल करते मानो वह भगवान् की साकार प्रतिमाएँ हों। ऐसी सेवा के द्वारा उनका हृदय इस प्रकार शुद्ध हो गया कि उसके प्रभाव से वे गुरुदेव श्री स्वामी शिवानन्द जी महाराज के चरणों में खिंचे चले आये और १९४३ में शिवानन्द आश्रम से जुड़ गये। आश्रम में आने के बाद भी उन्होंने रोगियों और पीड़ितों की सेवा जारी रखी। वह आश्रम के 'उपगुरु,' संन्यासियों के लिए अनुकरणीय आदर्श, योग-वेदान्त फारेस्ट एकाडेमी के प्राध्यापक, दिव्य जीवन संघ-जिसकी स्थापना गुरुदेव ने १९३६ में की थी-के वह प्राण और आत्मा रहे।

गुरुदेव उनकी दिव्य अनुकम्पा की प्रशंसा करते थे। गुरुदेव ने कहा कि स्वामी चिदानन्द के करुणाशील हृदय में से गीता और उपनिषदों का ज्ञान प्रवाहित होता है। गुरुदेव अपने समस्त

शिष्यों से बढ़ कर इनकी प्रशंसा करते थे। **गुरुदेव ने स्वामी चिदानन्द में अपने ही प्रतिबिम्ब को पहचान लिया था।** आश्रम का कोई भी कार्यक्रम या समारोह स्वामी चिदानन्द के प्रवचन के बिना पूर्ण नहीं माना जाता था। मैं उन प्रवचनों को लिपिबद्ध किया करता था और वह 'योग' (अँगरेजी में) नामक बहुमूल्य ग्रन्थ में प्रकाशित किये गये थे, यह ग्रन्थ आध्यात्मिक जिज्ञासुओं के लिए एक अनमोल निधि है। १९४९ से आज तक उन्होंने आश्रम के, संघ के, और वहाँ के निवासियों के तथा समस्त विश्व के अन्य असंख्य लोगों के भविष्य को निर्देशित किया है और कर रहे हैं। १९४८ से १९६३ में गुरुदेव के बाद उनका स्थान ग्रहण करने तक वह दिव्य जीवन संघ के महासचिव रहे हैं।

परम पूज्य श्री स्वामी चिदानन्द जी महाराज में प्राप्त होने वाले असंख्य दैवी गुणों में से सम्भवतया **सबसे विलक्षण है त्याग की प्रज्वलित अग्नि और उतनी ही ज्वलन्त करुणा की भावना।** यह त्याग की भावना तो अपना घर-द्वार-परिवार त्याग कर आ जाने के बाद भी समाप्त या किंचित् भी कम नहीं हुई, यह त्याग-वैराग्य का भाव उनके लिए सहज-स्वाभाविक, नित्य प्रति के जीवन का एक अंग है। अतः वे पूर्ण रूप से मुक्त, अनासक्त तथा अलिप्त हैं। वे अनेकों बार सारे विश्व का भ्रमण कर चुके हैं; सहस्रों लाखों लोगों द्वारा सम्पूर्ण विश्व भर में पूजे जाते हैं, तथापि वे एक महात्यागी, पूर्णतया मुक्त की भाँति प्रतिभासित होते हैं।

त्याग की इस ज्वलन्त अग्नि के ही कारण उनमें दया और करुणाशीलता की ऐसी गरिमा है जो प्रत्येक दर्शन करने वाले को उनके दर्शन करते ही अनुभव होती है, और उनसे जो दिव्य प्रकाश विकिरणित होता है, वह विश्व के लाखों लोगों के पथ को आलोकित करता है। यह प्रकाश इतना शक्तिशाली और जीवन-परिवर्तनकारी है कि उसके द्वारा प्रकाशित होने वाले व्यक्ति अलग ही पहचाने जाते हैं उनमें भी त्याग की भावना प्रज्वलित हो गयी है और उनके हृदयों में भी करुणा घर कर चुकी है।

वास्तव में वे मानवता के एक ऐसे महान् हितैषी हैं जो अपने सम्पर्क में आने वाले प्रत्येक व्यक्ति का जीवन बदल कर रख देते हैं। ..

****

राजयोगी श्री स्वामी चिदानन्द

- श्री स्वामी भीमानन्द जी महाराज -

श्री स्वामी चिदानन्द जी महाराज जी के सामीप्य में जो व्यक्ति एक बार भी आने का सौभाग्य प्राप्त करता है, वह उस यतिवर्य के महत् चरित्र के दर्शन से प्रभावित हुए बिना नहीं रह सकता। प्राणिमात्र की यह स्वाभाविक प्रवृत्ति होती है कि जिस किसी में वह विचित्रता का दर्शन करता है, विशिष्ट गुणों को पाता है तो उससे प्रभावित हुए बिना नहीं रह सकता। उससे कुछ न कुछ गुण ग्रहण करने की इच्छा रखता है। यही दशा हमें उनकी दृष्टिगोचर होती है, जो एक बार भी श्री स्वामी चिदानन्द के सन्निकट आते हैं, **उनकी अद्भुत प्रतिभा, अनुपम विद्वत्ता एवं सरल स्वभाव को देख कर दर्शक विचित्रता का अनुभव करने लगता है कि इस महापण्डित ने**

समग्र गुणों से सुसम्पन्न होते हुए भी संसार से संन्यास क्यों लिया? संसार में रहते तो किसी न किसी महत्त्वपूर्ण पद पर कार्य करते। किसी विद्यालय के उच्च अध्यापक बन कर छात्रों की विद्याप्राप्ति-रूपी क्षुधा निवृत्त करते। अथवा किसी देश का राजदूतत्व स्वीकार कर देश का प्रतिनिधित्व करते। किसी राजनैतिक अथवा व्यापारिक पद पर कार्य कर सकते थे तो फिर संन्यास क्यों लिया? सांसारिक मायामोह के जाल में फंसे हुए जनों को क्या पता कि समग्र सुखोपभोग के साधनों के त्याग का ही नाम संन्यास है।

श्रीधर ने श्री स्वामी शिवानन्द सरस्वती महाराज में शास्त्रानुसार संन्यास दीक्षा ली। दोनों को अत्यन्त हार्दिक आनन्द हुआ। गुरु को प्राप्त कर शिष्य को तो होना ही था, वरंच प्रखरमति शिष्य को प्राप्त कर गुरु को भी आनन्द हुआ। शिष्य गुरु के पवित्र पादपद्मों में रह कर सेवारत रहा। योग-वेदान्त के अध्ययन के साथ-साथ शिवानन्दाश्रम का प्रधान पद स्वीकार कर प्रधान सचिव का कार्य करना आरम्भ कर दिया। 'योग-वेदान्त आरण्य विश्वविद्यालय' की स्थापना होने के पश्चात् उपकुलपति का पदभार भी सँभालना पड़ा। इस पद के साथ ही साथ राजयोगी होने के कारण राजयोग का अध्यापन भी स्वीकृत किया। राजयोग की व्याख्या करने में अपनी अनुपम प्रतिभा का परिचय देते हैं।

अधुना इस योगिवर्य की जन्म तिथि का महोत्सव आनन्द-कुटीर, शिवानन्दनगर में सम्पन्न हो रहा है। परमात्मा से हमारी यही प्रार्थना है कि राजयोगी स्वामी चिदानन्द शतायु हो कर समाज की सेवा में तत्पर रहें।

ध्यात्वा ध्यात्वा गुरोर्वाक्यं
मुक्तिदं चैव शाश्वतम् ।
शिवानन्दं च तच्छिष्यं
चिदानन्दं नमाम्यहम् ।।

सब शक्तियों की मूल शक्ति ब्रह्मचर्य में है। शक्तियों का संरक्षण होना चाहिए। संयमी पुरुष के अन्दर पूर्ण ब्रह्मचर्य निहित रहता है। ब्रह्मचारी कुछ भी कर सकता है।

-स्वामी चिदानन्द

पुष्पांजलि

- श्री स्वामी हृदयानन्द माता जी -

भारत माता के दुर्लभ पुष्प, हमारे श्रद्धेय श्री स्वामी चिदानन्द जी महाराज, अपने गुरुदेव श्री स्वामी शिवानन्द जी महाराज के चरणचिह्नों पर चलते हुए, समस्त भारत तथा विश्व के अन्य अनेकों देशों में अपने ज्ञान की सुगन्ध फैला रहे हैं। वे निर्धनों और धनवानों, अनपढ़ों और पढ़े लिखों तथा पूर्व और पश्चिम के सभी वर्गों के लोगों की आध्यात्मिक आवश्यकताओं की निरन्तर पूर्ति कर रहे हैं। समस्त संसार को एक बड़े आश्रम की भाँति मानते हुए वह विश्व के चारों कोनों में दिव्य प्रेम और आध्यात्मिक आनन्द तथा अपनी शिक्षाओं का कोष वितरित करते हुए निरन्तर घूम रहे हैं।

वह असंख्य लोगों के प्रेम पात्र बन गये हैं, क्योंकि उनमें आध्यात्मिक प्रेम-पिपासुओं की प्यास बुझाने की तथा आध्यात्मिक क्षुधातुरों की क्षुधा शान्त करने की सामर्थ्य है।

दयालु, विनम्र और प्रेम पूर्ण होने के कारण उनके हृदय में समाज द्वारा तिरस्कृत और निष्कासित माने जाने वाले लोगों के लिए भी भरपूर स्थान है।

कुष्ठ रोगियों की दयनीय अवस्था ने स्वामी जी के हृदय को छू लिया और वे इनके कष्टों को दूर करने तथा इनकी स्थिति को सुधारने के हर सम्भव प्रयास में जुट गये और अभी भी जुटे हुए हैं।

मेरी भगवान् से हार्दिक प्रार्थना है कि वह स्वामी जी को उत्तम स्वास्थ्य, दीर्घायु और शक्ति प्रदान करें जिससे कि मानवता के प्रति की जाने वाली अपनी इस सेवा को जारी रख सकें। स्वामी जी को मेरा प्रेमपूर्ण विनम्र प्रणाम !

अद्वितीय सन्त स्वामी चिदानन्द

जब स्वामी रंगनाथानन्द जी जैसे व्यक्ति की ओर से किसी के विषय में राय दी जाती है, तो वह असाधारण महत्त्वपूर्ण मानी जाती है। एक बार स्वामी रंगनाथानन्द जी शिवानन्द आश्रम, ऋषिकेश में संन्यासी-समुदाय के एक सम्मेलन के अध्यक्ष पद पर आसीन थे जहाँ स्वामी चिदानन्द जी द्वितीय अध्यक्ष के पद पर थे।

वहाँ उन्होंने स्वामी चिदानन्द जी के बारे में उल्लेख करते हुए कहा, "**हम सब यहाँ संन्यासी हैं, किन्तु हममें से एक सन्त हैं यहाँ।**" जब मैंने स्वामी चिदानन्द जी के एक शिष्य को यह बताया, तो यह बात स्वामी चिदानन्द जी के शिष्यों के बीच तुरन्त फैल गयी, "**स यत्प्रमाणं कुरुते लोकस्तदनुवर्तते** (गीताः ३-२१)।" महापुरुषों के उदाहरण का सामान्य जन अनुकरण करते हैं। **स्वामी चिदानन्द जी से जो परिचित हैं, वे उनके सन्तत्व को और रोगियों के प्रति उनकी सेवा को जानते हैं। किन्तु इस भाव की जो उपयुक्त अभिव्यक्ति स्वामी रंगनाथानन्द जी ने दी, यह उनकी विशिष्टता थी।**

वास्तविक संस्कृति के प्रतीक

-श्री स्वामी सच्चिदानन्द जी महाराज, न्यू यार्क-

१० जुलाई, १९४९ को परम पूज्य श्री स्वामी शिवानन्द जी महाराज ने एक ऐसे व्यक्ति को पावन संन्यास परम्परा में दीक्षित किया, जिसने उनका आध्यात्मिक पुत्र बन कर उनके कार्य को भारत भर में और फिर भारत से शेष समस्त आधुनिक विश्व भर में प्राचीन देवदूतों की भाँति सक्रियता से प्रसारित करना था। अपने इन शब्दों द्वारा मैं आज इस मुक्त भव्य आत्मा को अपने श्रद्धा-सुमन समर्पित कर रहा हूँ।

आत्मा, मैंने इसलिए कहा है, क्योंकि स्वामी चिदानन्द जी महाराज उस एक व्यक्ति श्रीधर राव, जो दक्षिण भारत में २४ सितम्बर, १९१६ को पैदा हुआ था, के रूप में इस संसार में कार्य नहीं कर रहे हैं। **अपनी आत्मा की प्रेरणा से और अपने आदर्श के अनुसार, वह मन द्वारा कल्पना किये जा सकने वाले समस्त भेद-भावों से, तथा शरीर द्वारा सम्भावित समस्त परिसीमाओं से ऊपर उठ चुके हैं। एक गुरुभाई होने के नाते, मेरा हृदय द्रवित हो उठता है, और सच कहूँ तो मैं स्वयं को गौरवान्वित अनुभव करता हूँ, कि जब भी कभी हम मिले हैं-मैंने सदा ही इनकी प्रिय छवि को प्रकाश से परिपूर्ण पाया है,** भौतिक सीमाओं से ऊपर सदैव सेवारत, प्रेमपूर्ण, हर जगह बिना किसी भेदभाव के प्रकाश की वृष्टि करते हुए भारतीय आदर्श की साकार प्रतिमा!

अपने जीवन्त अनुभव के द्वारा उन्होंने महिमामयी ईसाई सत्यों का हमारे प्राचीन भारतीय वैदिक साहित्य में वर्णित सत्यों से मिलान करते हुए बता दिया कि सब एक हैं। **इस जीवन्त समन्वय का उदाहरण यह है कि जब वह भारतीय संन्यास परम्परा के प्रतीक गेरुवे परिधान में विदेश यात्रा पर आते हैं, तो उनकी विनम्रता और प्राणी मात्र के प्रति प्रेम भाव के कारण अनेकों हृदय प्रभावित हो जाते हैं-मानो आधुनिक असीसी के सन्त फ्रांसिस ही हों।**

परम पावन श्री स्वामी शिवानन्द जी के उत्तराधिकारी के रूप में तथा भारत के आदर्श पुत्र के तौर पर स्वामी चिदानन्द जी, प्रत्येक सम्पर्क में आने वाले की दृष्टि में त्याग और वास्तविक भारतीय संस्कृति के सर्वोच्च प्रतीक बन कर खड़े हुए दिखायी देते हैं, क्योंकि वास्तव में वह विश्व की एक ही भाषा-हृदय की भाषा बोलते हैं, एक ही भगवान् सर्वव्यापक, सर्वशक्तिमान् परमात्मा की पूजा करते हैं, एक ही नियम-सत्य के नियम का अनुसरण करते हैं, एक ही धर्म-प्रेम के धर्म की उपासना करते हैं। सबके मूल स्रोत, परम पिता परमात्मा से प्रार्थना है कि वे उन्हें निरन्तर दिव्य जीवन और शक्ति प्रदान करते रहें जिससे कि सम्पूर्ण जगत् में समस्त मानवता इस प्रेरणास्पद और महिमामयी प्राची से उदित होने वाले सूर्य से लाभान्वित होती रहे!

सद्‌गुरुदेव सद्‌गुरुदेव सद्‌गुरुदेव पाहिमाम्।
शिवानन्द शिवानन्द शिवानन्द रक्षमाम् ।।

देदीप्यमान सितारा

-श्री स्वामी प्रणवानन्द जी महाराज, मलेशिया -

लोयला कॉलेज में श्रीधर का जीवन एक प्रतिभाशाली रूढ़िवादिता का था। उनका ईसाई कॉलेज में शिक्षाग्रहण किये जाने का अपना महत्त्व था। ईसामसीह के आदर्शों और शिक्षाओं का तथा अन्य महान् ईसाई सन्तों और धर्मप्रेरकों का श्रीधर के हृदय में इस हद तक प्रभाव पड़ा कि वह उनका हिन्दू धर्म की सर्वोत्तम और उदात्त संस्कृति के साथ अत्यन्त सौंदर्यपूर्वक समन्वय कर सके। उनकी अन्तर्जात विशाल दृष्टि ने उन्हें यह सामर्थ्य दी थी कि वह श्री कृष्ण में यीशु को देख सकें न कि श्री कृष्ण के स्थान पर यीशु को देखें।

गुरुदेव श्री स्वामी शिवानन्द जी महाराज ने उन्हें मानवता की आध्यात्मिक उन्नति के क्षेत्र में की गयी असाधारण सेवाओं के लिए तथा सत्य, प्रेम और पवित्रता के प्रति उनकी दृढ़ निष्ठा के लिए 'अध्यात्म-ज्ञान-ज्योति" की उपाधि से अलंकृत किया था। अन्य अवसरों पर उनके सम्बन्ध में चर्चा करते हुए गुरुदेव ने कहा था, "वह मिशन का कोहनूर हैं," "चिदानन्द जी के प्रवचन उनके सन्त हृदय से प्रस्फुटित उद्‌गार हैं, उनके सहजानुभूत ज्ञान का प्रकटीकरण हैं।" "उनके प्रवचनों को स्वर्णाक्षरों में लिखा जाना चाहिए।" एक बार आश्रमवासियों को सम्बोधित करते हुए गुरुदेव ने कहा, **"आप सबको चिदानन्द जी के साथ अपने गुरु समान व्यवहार करना चाहिए। मैं भी उनका अपने गुरु जैसा सम्मान करता हूँ। मैंने उनसे असंख्य बातें सीखी हैं। मैं उनसे प्रेम करता हूँ; उनकी पूजा करता हूँ; उनका ज्ञान विषद है; उनका विवेक अपौरुषेय और स्वानुभूत है। उनका सुन्दर स्वभाव अतुलनीय है। आप सबको उनसे सीखना चाहिए। तभी आप उन्नत और विकसित होंगे।"** स्वामी चिदानन्द जी के सम्बन्ध में गुरुदेव के मन में इतने उच्च और प्रशंसात्मक भाव थे।

स्वामी चिदानन्द जी जन्म से ही सन्त, योगी और दार्शनिक हैं। वह गुरुदेव की सर्वोत्तम प्रतिकृति हैं। वह सेवा, प्रेम और त्याग की साकार मूर्ति हैं; एक भक्त, ज्ञानी, निष्काम कर्मयोगी और राजयोगी हैं, योग का समन्वय करने में दक्ष, भाषाविद्, अच्छे वक्ता और सशक्त लेखक हैं। उनके कीर्तन और भजन आत्मोत्थापक हैं। वे हास्य-विनोद के सूक्ष्म ज्ञाता हैं। अपनी स्नेहमयी कोमल देह में भगवान् बुद्ध की छवि समेटे हुए हैं। स्वामी जी आज

केवल दिव्य जीवन संघ के अन्तर्राष्ट्रीय परमाध्यक्ष ही नहीं, वह भारत के वर्तमान विद्यमान सन्तों में अग्रगण्य सन्तों में से आध्यात्मिक आकाश के देदीप्यमान सितारा हैं।

"मानवता कोई दूर की वस्तु नहीं है, वह तुम्हारे सामने है, तुम्हारे निकट है और है तुम्हारे चारों ओर। अपने पड़ोसी से मानवता का पाठ प्रारम्भ करो।"

- स्वामी चिदानन्द

श्री रामकृष्ण परमहंस ने स्वामी विवेकानन्द के रूप में एक महान् शिष्य को जन्म दिया, महात्मा गान्धी ने अपने सदृश्य विनोबा भावे को बनाया और गुरु भगवान् श्री स्वामी शिवानन्द जी महाराज ने (श्रीधर राव में से) स्वामी चिदानन्द के रूप में एक महान् सन्त को जन्म दिया, जो कि आज दिव्य जीवन संघ के अनमोल हीरे के रूप में माने और पूजे जाते हैं।

अपने गुरु स्वामी शिवानन्द जी की ही भाँति स्वामी चिदानन्द की वाणी सब ओर गूँज रही है। उनके मुख से ज्ञान के मुक्ताओं की वृष्टि होती है। उनके श्रीमुख से गुरु भगवान् की प्रेरणाप्रद वाणी ही प्रवाहित होती है, "**केवल एक ही जाति है-मानवता की जाति**; **केवल एक ही धर्म है-प्रेम का धर्म**; **केवल एक ही आदेश है**-सत्य पालन का आदेश; एक ही नियम है-कार्य-कारण का नियम; केवल एक ही भगवान् है-सर्वशक्तिमान्, सर्वव्यापक और सर्वज्ञ परमात्मा; केवल एक ही भाषा है-हृदय की भाषा या मौन की भाषा।" दिव्य जीवन के इस सन्देश ने मानवता को झकझोर दिया है। **लोग स्वामी चिदानन्द में शिवानन्द भगवान् के दर्शन करते हैं।** सेवा, भक्ति, दान, पवित्रता, ध्यान और साक्षात्कार- शिवानन्द के यह सिद्धान्त स्वामी चिदानन्द के दैनिक जीवन में प्रकट रूप में दिखायी देते हैं। स्वामी चिदानन्द के जीवन का यह प्रकाश उनकी विवेक-बुद्धि का ही प्रकाश नहीं है, यह एक गहनतर मूल स्रोत से उदित हो कर उनके मस्तिष्क में से नहीं, हृदय में से प्रकट होता है। उनके व्यक्तित्व के आकर्षण का रहस्य, उनके स्वभाव की अतीव सरलता में; मनुष्य, भगवान् और अपने गुरु के प्रति दृढ़ विश्वास में, तथा सेवा और त्याग की गहन भावना में निहित है।

जो शरीर मन और आत्मा से रोग-ग्रस्त हैं, सदा उन्हीं की सेवा में रत, स्वयं को पूर्णतया खो कर कार्य के प्रति समर्पित, और विश्व-प्रेम से छलकते हुए हृदय सहित, स्वामी जी का जीवन वास्तव में हर तरह से दिव्य जीवन है। आरम्भिक बचपन से ले कर अब साठ वर्ष की परिपक्व आयु तक का उनका समस्त जीवन ज्ञान और योग से परिपूर्ण - जिज्ञासु साधकों के लिए; गीतामय जीवन रहा है।

सन्त चिदानन्द के पावन स्पर्श ने अनेकों टूटे-हृदयों के घावों को भरा है, असंख्य पीड़ित आत्माओं को प्रसन्नता प्रदान की है। बुद्ध और महावीर की भाँति, कबीर और नानक की तरह, भारत के सभी साधु-सन्तों की तरह स्वामी जी महाराज सम्पूर्ण सृष्टि-मनुष्य और पशु-पक्षी, पेड़-पौधों, नदियों, आकाश, जड़-चेतन मात्र सभी से एकात्म भाव अनुभव करते हैं। उनके प्रेम में सजीव-निर्जीव, सभी समाये हुए हैं। पड़ोस में रहने वाले कुष्ठ रोगियों की स्वयं देखभाल करने में

उन्हें आनन्द आता है। **कुष्ठ रोगियों की निर्भीक और अथक सेवा से उनकी ख्याति सारे विश्व में फैल गयी है और उनको असीसी के सन्त फ्रांसिस की भाँति पूजा जाता है।**

करोड़ों वर्षों में कभी मानवता के उपवन में ऐसा-स्वामी जी महाराज जैसा फूल खिलता है! ऐसा फूल जिसकी सुगन्ध सारे विश्व के एक सिरे से दूसरे सिरे तक फैल जाती है। ...

*****

प्राणिमात्र के मित्र

- श्री स्वामी अर्पणानन्द जी महाराज -

रोगियों की सेवा करने की उन्हें सदा तीव्र लगन रही है। उनकी यह रुचि केवल मानवता के प्रति ही सीमित नहीं रही। यदि उन्होंने ट्रक के नीचे कुत्ते को कुचला जाता देख लिया, तो उसे निकटतम पशु-चिकित्सालय में भेजने के उपरान्त ही आराम करेंगे। प्रायः वह पक्षियों और बन्दरों के मरहम-पट्टी करते हुए दिखायी देंगे। पशु-पक्षियों के प्रेमवश वह अक्सर अपने कुटीर में से गायों, कुत्तों और बन्दरों केजो आश्रम को अपना घर समझ कर रहते हैं-न मारने के लिए परिपत्र भेजा करते हैं। पुष्पार्चना करते समय उनकी पैनी दृष्टि प्रायः फूलों में छिपे कीट-पतंगे को देख लेती है और वह उन्हें अत्यन्त ध्यानपूर्वक तथा कोमलता से उठा कर निकट के पेड़-पौधों पर रख देते हैं। सुन्दर गुलाब के फूलों को वह अत्यन्त कोमलता से स्पर्श करते हुए उठाते हैं। **संक्षेप में, स्वामी जी दैनिक जीवन में वेदान्त-साधना करते हैं।** रोगियों के प्रति उनका अतीव प्रेम, जिसमें कि उनकी वास्तविक शक्ति निहित है, आज जब कि आश्रम के प्रमुखपद पर होने के नाते उन पर अन्य असंख्य कार्यभार भी हैं-अभी भी उसी प्रकार बना हुआ है। समयाभाव में जकड़े हुए अपने कार्यक्रमों में वह अब भी रोगियों को देख कर आने के लिए किसी न किसी प्रकार समय निकाल ही लेते हैं। सबसे बढ़ कर, जहाँ उनकी अत्यधिक आवश्यकता होती है वहाँ वह दौड़ कर पहुँचने में कभी पीछे नहीं हटते।

बौद्धिक क्षेत्र में भी स्वामी जी अग्रगण्य हैं। योग पर उनके सार-गर्भित प्रवचन अपना उदाहरण स्वयं ही हैं, और विविध विषयों पर उनकी अनेकों रचनाएँ हमें सदैव निर्देशित करती रहेंगी। 'दिव्य जीवन' पत्रिका में विशेष अवसरों पर समय-समय पर आने वाले इनके सन्देश तथा मासिक पत्र, योग-पथ पर पर्याप्त प्रकाश डालने वाले हैं।

सभी मंच उनके हैं। जैन हों या बौद्ध, सिक्ख हों या मुस्लिम, निरंकारी हों या राधास्वामी, ब्रह्मकुमारियाँ हों या आर्य समाजी, ईसाई हों या रोटेरियन-सभी उन्हें अपने मंच पर लाने का लालायित हैं। **इटली के मान्यवर पोप हों अथवा श्रद्धेय शंकराचार्य चतुष्टय, या रुड़की के पीर-सभी इनकी प्रशंसा करते हैं और सभी ने इनके आध्यात्मिक पक्ष की प्रस्तुति की भूरि-भूरि प्रशंसा की है।**

श्री स्वामी शिवानन्द जी के विषय में पूर्ण ज्ञान से रहित दीन स्वामी चिदानन्द-रूपी प्रिज़्म (संक्षेत्र जिससे सूर्य की सप्तरंगी किरणें वक्रित हो प्रतिबिम्बित होती हैं) द्वारा उनके जीवन्त प्रकाशमय जीवन की कुछेक किरणें प्रतिबिम्बित करने का एक विनम्र प्रयास 'आलोक-पुंज' में किया है। सम्भव है इनसे किसी का पथ प्रकाशमय हो जाये, उसका हृदय ज्योतित हो जाये जिससे कि उच्चतर जीवन-पथ पर वह सशक्त हो कर अग्रसर हो

योग-वेदान्त के निष्ठावान् समर्थक

- श्री कवि-योगी शुद्धानन्द भारतियार जी महाराज -

विशाल-हृदयी शिवानन्द ने अपने अन्तिम दिनों में मेरी रचनाओं में श्रेष्ठतम कृति 'भारत शक्ति महाकाव्यम्' की सुरीली प्रस्तुति को सुना। उन्होंने कहा, "आपको इसका अँगरेजी में अनुवाद करना चाहिए।" "हाँ, मैं इसका अँगरेजी रूपान्तर तैयार कर रहा हूँ।" फिर मैंने उनसे प्रश्न किया-"स्वामी जी कृपया मुझे बतलाइए, कि अपनी पुस्तकों और इन भवनों के अतिरिक्त आप मानवता को क्या शाश्वत धरोहर अपनी वसीयत में प्रदान करेंगे? क्या यह दिव्य जीवन संघ है? अथवा आपके द्वारा प्रशिक्षित किये गये संन्यासियों का यह पावन समूह है?" स्वामी जी कुछ क्षणों के लिए गम्भीर हो गये... स्वामी जी ने गहन विचार के उपरान्त अपना हृदय खोला, "निश्चित रूप से चिदानन्द-यह है जो मैं अपने पीछे सजीव धरोहर छोड़ कर जाऊँगा, मेरे बाद दिव्य जीवन के मिशन को चलाए रखने के लिए।" "वह शीघ्र ही आ रहा है," गुरुदेव ने कहा। वह आ ही गये; किन्तु उनकी वैराग्य की भावना और ईश्वर-प्रेम उन्हें ऐसे किसी भी उत्तरदायित्व को लेने से रोक रहा था जो उन्हें सांसारिक व्यस्तताओं में बाँध देने वाला हो।

उनका संकल्प केदारनाथ जा कर कठोर तपस्या करने का था। गुरुदेव से उन्होंने कहा, "मैं जा रहा हूँ।" गुरुदेव ने गहराई से उनकी आँखों में देखा और गम्भीरता पूर्वक बोले, "चिदानन्द, देखो, यह तुम ही हो जिसके लिए मैंने शिवानन्दनगर बसाया है, और तुम्हीं अब कह रहे हो कि तुम यह सब कुछ छोड़ कर चले जाओगे?" इन स्तम्भित कर देने वाले शब्दों ने इस निष्ठावान् शिष्य के मन को बदल दिया, "आप ही की इच्छा पूर्ण हो," उन्होंने कहा और अपने गुरु के पास ही रुक गये और गुरुदेव की आत्मा उनमें प्रविष्ट हो गयी और उनके दिव्य जीवन के प्रति समर्पित जीवन को एक के बाद एक विजय की ओर ले जाती चली गयी। गुरुदेव की महासमाधि के बाद चिदानन्द जी सर्वसम्मति से दिव्य जीवन संघ के परम अध्यक्ष चुन लिये गये।

यह निष्ठावान् समर्थक अपने गुरुदेव के कार्य को पूर्ण सफलता सहित एक से दूसरे देश तक, एक सम्मेलन से दूसरे सम्मेलन तक ले कर गया। योग-वेदान्त के सन्देश को उन्होंने प्रत्येक घर तक, प्रत्येक आत्मा तक पहुँचा दिया। उन्होंने दिव्य जीवन संघ को समृद्धिशाली करके वैश्व-मान्यता दिलायी। गुरुदेव शिवानन्द का सन्देश और उनकी भविष्यवाणी महात्मा चिदानन्द ने प्रचुर मात्रा में पूर्ण की। विश्व यदि आज हिन्दू सनातन धर्म के विषय में कुछ जानता है तो इसका श्रेय

दिव्य जीवन संघ को जाता है। इस प्रकार आज शिवानन्द हर जगह विद्यमान हैं, और चिदानन्द दिव्य जीवन के विलक्षण समर्थक तथा पथ-प्रदर्शक के रूप में सर्वत्र पूजित हैं।

चिदानन्द जी के अत्यन्त सुचारु रूप से संचालित सम्मेलन इतने लाभप्रद सिद्ध हुए हैं कि उनके आध्यात्मिक प्राण संचालन ने। एक वैश्व रूपान्तरण ला दिया है। हम उनको जन-जागरण के मसीहा के रूप में पूजने को उद्यत हो जाते हैं। **उनके हृदय के सौंदर्य से उनका मुखमण्डल आलोकित है, उनका हृदय उनकी आत्मा के प्रेम और प्रकाश से प्रकाशमान है। उनकी मुस्कान मीलों तक शान्ति और आनन्द बिखेरती जाती है।**

चिदानन्द जी उद्घोषित करते हैं, "दिव्य अमर आत्मन्! आप दिव्य हैं। अपने भीतर की दिव्यता का साक्षात्कार करना और अपनी दिव्यता को प्रतिदिन के जीवन में अभिव्यक्त करना आपका कर्तव्य है।" **चिदानन्द जी साधुता के मूर्तिमान् आदर्श हैं, पावन, दिव्य वैश्व आत्मा हैं, व्यावहारिक अनुकरणीय आदर्श हैं, तथा योग-वेदान्त के सर्वोच्च उदाहरण हैं।**

सरलता की साक्षात् मूर्ति

-श्री स्वामी विद्यानन्द गिरि जी महाराज-

मनसि वचसि काये, पुण्य पीयूषः पूर्णाः,
त्रिभुवनमुपकार श्रेणिभिः पूरयन्तः ।
परगुणपरमाणून् पर्वतीकृत्यनित्यं,
निज हृदिविकसन्तः, सन्त सन्तः कि अन्तः ।।

-भर्तृहरि

'जिनके मन, वाणी और शरीर में अमृत-तुल्य पुण्य भरे हुए हैं, जो एक के बाद दूसरे और दूसरे के बाद तीसरे-ऐसी अनेक उपकार-श्रेणियों से तीनों लोकों को तृप्त करते रहते हैं; जो दूसरों के परमाणु के समान थोड़े से गुणों को सुमेरु पर्वत के तुल्य मानते हैं और ऐसा करके सदा अपने हृदय में प्रसन्न रहते हैं- ऐसे सन्त संसार में आखिर कितने हैं!' अर्थात् ऐसे गुण वाले सन्त बहुत ही थोड़े हुआ करते हैं। **भर्तृहरि की सन्तों के विषय में इस सूक्ति का संस्मरण श्री १०८ स्वामी चिदानन्द जी महाराज को देखने के बाद बरबस हो आता है।**

सरलता की साक्षात् मूर्ति, साधना के जीवन्त विग्रह एवं अपने मन, वाणी, शरीर से सभी प्राणियों की सेवा में निरत, आपको देख कर, मन में अपार हर्ष होता है। ऐसे सन्त जब तक इस धरा-धाम पर विद्यमान रहेंगे, निःसन्देह भारत का सिर ऊँचा रहेगा और भारतवर्ष गौरवपूर्ण माना जायेगा।

कृष्णयजुर्वेदीय 'कठश्रुति' का नाचिकेता उपाख्यान नेत्रों के सम्मुख नाचने लगता है, जब हम आपको देखते हैं। वहाँ पर 'कठश्रुति' ने कहा है-

'त्रिणाचिकेतखिभिरेत्य सन्धिं, त्रिकर्मकृत्तरति जन्ममृत्यू ।'

-कठोपनिषद् : १-१७

'नाचकेति अग्नि का तीन बार चयन करने वाला व्यक्ति, माता-पिता एवं आचार्य-इन तीनों से अनुशिष्ट पुरुष, जन्म और मृत्यु को पार कर जाता है।' इस श्रुति में कहे गये उपदेश आपके जीवन में अक्षरशः घटते हैं।

उच्च कुल एवं समृद्ध परिवार में जन्म ले कर ऊँची शिक्षा प्राप्त की और पुनः उन सारे भोग-साधनों को ठुकरा कर हिमालय की उपत्यिका में रहने वाले महान् तपस्वी, श्रोत्रिय, ब्रह्मनिष्ठ आचार्य के चरणों में स्वयं को न्यौछावर कर दिया। आपके गुरुदेव श्री स्वामी शिवानन्द जी महाराज सदा आपके विषय में कहा करते थे- **'स्वामी चिदानन्द का यह अन्तिम जन्म है...।'** इससे यह सिद्ध होता है कि आप पूर्व जन्म के कोई साधन-सम्पन्न योग-भ्रष्ट पुरुष हैं, जो साधन की यत्किंचित् त्रुटियों को पूर्ण कर स्वयं अपने आप 'जीवन्मुक्ति' का आनन्द ले रहे हैं और विश्व के अनेक भूले-भटके प्राणियों का मार्ग-दर्शन कर रहे हैं।

ऐसे महापुरुष की **'शतं जीवेत्'** इस श्रुति-वाक्य से हम उनकी 'षष्ट्यब्दपूर्ति' महोत्सव पर शुभ कामना करते हैं। आशुतोष भगवान् शंकर उन्हें पूर्ण आयुष्य प्रदान करें जिससे लोक का अनेकधा मंगलमय कार्य होता रहे।

महामण्डलेश्वर, कैलासपीठाधीश्वर
ऋषिकेश (हिमालय)

****

'सबहि मान प्रद आप अमानी'

-श्री स्वामी वेदव्यासानन्द जी महाराज-

स्वामी चिदानन्द जी महाराज यथा नाम तथा गुण हैं। चित्+आनन्द-चिदानन्द! चिदानन्द, अव्यय, अनादि, चेतन, निर्विकार, अजर, अमर परमात्मा का नाम है। **परमात्मा का सम्पूर्ण नाम सच्चिदानन्द है। सत् कहते हैं, जो तीनों काल में रहे, कभी नष्ट न हो। चित् कहते हैं जो चेतन हो, जड़ न हो और आनन्द कहते हैं, आनन्द-स्वरूप हो; जिसमें आनन्द ही आनन्द भरा हो। परमात्मा का यही स्वरूप है और यही स्वरूप है हमारे स्वामी चिदानन्द जी का। उनमें तीनों गुण हैं-सत्, चित् और आनन्द।** मैंने देखा कि स्वामी चिदानन्द जी सदा प्रसन्न रहते हैं। कभी किसी ने उन्हें दुःखी या शोक-ग्रस्त नहीं देखा। ब्रह्मज्ञानी के जो लक्षण 'श्रीमद्भगवद्गीता' (१५-५, १४-२५, १३-७) में लिखे हैं, वे सब स्वामी चिदानन्द जी में पाये जाते हैं।

स्वामी चिदानन्द जी महाराज को मैं लगभग २५ वर्ष से जानता हूँ। वह विनम्रता, सज्जनता, सहनशीलता तथा सरलता की मूर्ति हैं। अँगरेजी भाषा के धुरन्धर विद्वान् होते हुए भी वह अनेक पाश्चात्य एवं भारतीय भाषाओं के ज्ञाता हैं। राष्ट्र भाषा हिन्दी, देववाणी संस्कृत का ज्ञान भी उन्हें पर्याप्त मात्रा में हैं। सबसे बड़ा गुण जो मैंने उनमें देखा, **वह है निरभिमानता। अहंकार और अभिमान उन्हें छू तक नहीं गया। त्यागी, तपस्वी, विद्वान् और संन्यासी हो कर उन्हें मैंने कभी झाड़ लगाते देखा, कभी सन्तों के जूठे बर्तन उठाते, कभी अपने से ज्ञान और तपस्या में न्यून महात्माओं को भी साष्टांग प्रणाम करते देखा।** गत वर्ष जब मैं दिसम्बर मास में, लगभग सात मास पूर्व, विदेश में भ्रमण कर रहा था, जहाँ श्री स्वामी चिदानन्द जी भी उसी घर के उसी कमरे में एक बार ठहर चुके थे, **मुझे बताया गया कि स्वामी चिदानन्द जी उस घर में जितने दिन ठहरे, वह सभी कार्य अपने हाथ से करना पसन्द करते थे।** यहाँ तक कि उस कमरे की तथा अपने वस्त्रों की सफाई तक वह अपने हाथ से करने लग जाते थे। भारत से बीसों सन्त अमरीका आये, पर लोगों की श्रद्धा चिदानन्द जी के बराबर किसी में नहीं हुई। इसी प्रकार अमरीका के अन्य शहरों में भी मैंने स्वामी चिदानन्द जी की प्रशंसा में अनेक प्रकार की अनेक कथाएँ अनेक भक्तों से सुनीं।

डॉ. मिश्रा (अमरीका वाले) तथा **भारत के मुनि सुशील कुमार जी, दोनों ने ही मुझे अमरीका में बताया कि उन्होंने जीवन में स्वामी चिदानन्द जी जैसा सरल और निष्कपट सन्त दूसरा नहीं देखा।**

यमुनानगर में पंजाब प्रान्त का प्रान्तीय गीता सम्मेलन हो रहा था। कोई दस-बारह वर्ष पुरानी बात है। पंजाब के तत्कालीन मुख्यमन्त्री श्री रामकिशन तथा गृहमन्त्री सरदार दरबारासिंह दोनों मंच पर विराजमान थे। देश के अनेक प्रसिद्ध सन्त इस सम्मेलन में पधारे हुए थे। स्वामी चिदानन्द जी इस सम्मेलन में एक दिन के लिए अध्यक्ष चुने गये। मैं इस सम्मेलन का संयोजक था। जैसे ही मैंने 'लाउड स्पीकर' पर स्वामी चिदानन्द जी के नाम की, **उस दिन की अध्यक्षता के हेतु घोषणा की कि स्वामी चिदानन्द जी पीछे से आ कर मंच पर चढ़े और सब सन्तों को प्रणाम करने लगे। मैं एक लम्बी माला ले कर उन्हें पहनाने के लिए खड़ा था, किन्तु मुझ से**

छीन कर वह उन्होंने मुझे ही पहना दी। अपार जन-समूह उनके सहज भाव को देख कर पाँच मिनट तक तालियाँ बजाता रहा।

सन् १९६२ के इसी प्रकार के **अमृतसर के 'अखिल भारतीय गीता सम्मेलन' में स्वामी चिदानन्द जी ने केवल भगवन्नाम कीर्तन करके अपने अध्यक्षीय भाषण का लगभग आधा समय समाप्त कर दिया। इस कीर्तन को उन्होंने अपनी परा वाणी से भगवत् भक्ति में भाव-विभोर हो कर इस प्रकार गा-गा कर सुनाया कि आधे से अधिक जनता की आँखों से अश्रुपात होने लगा। इतना ही नहीं मंच पर बैठे एक सौ से अधिक प्रसिद्ध सन्त तथा महोपदेशक सभी भाव-विभोर हो गये।**

दो वर्ष पूर्व 'डिवाइन लाइफ सोसायटी' का 'उत्कल प्रान्तीय सम्मेलन' राउरकेला में मनाया गया था। एक दिन प्रातःकाल के सत्र में मेरा भाषण होना था। मेरे भाषण के पश्चात् अध्यक्षीय भाषण स्वामी चिदानन्द जी महाराज का होने वाला था। स्वामी चिदानन्द जी ने अपना भाषण जैसे ही प्रारम्भ किया, मैंने उन्हें अपने 'गीता आश्रम' से प्रकाशित अपनी दो पुस्तकें भेंट की। बस, अब क्या था, स्वामी चिदानन्द जी ने अपना पर्याप्त समय इन दोनों पुस्तकों और मेरी प्रशंसा में ही लगा दिया। परमहंसता का इससे उत्तम उदाहरण और कहाँ मिलेगा?

'सबहि मान प्रद आप अमानी' रामायण की यह चौपाई स्वामी जी पर पूर्ण घटित होती है। भारत में सच पूछो तो कोई भी ऐसा बड़ा सम्मेलन तब तक सफल होते नहीं दीखता, जब तक उसमें चिदानन्द जी न बुलाए जायें। स्वामी चिदानन्द जी कभी हजारों दीन-दुःखियों को भोजन कराते, कभी उनका पूजन करते, कभी कीर्तन करते-करते भाव-विह्वल हो कर भगवद्भक्ति में अश्रुपात करते और कभी रेलवे स्टेशनों और हवाई अड्डों पर अपना सामान उठाते, कभी सन्तों की आरती करते हुए, कभी उन्हें अपने हाथ से भोजन परोसते हुए, कभी ध्यानयोग में और कभी निष्काम कर्मयोग में अनेक प्रकार की लीलाएँ करते हुए देखे जा सकते हैं।

दुबले-पतले शरीर के इस सन्त ने भारत और विश्व-भर में जो सन्त-स्वभाव से ख्याति अर्जित की है, वैसी ख्याति वर्तमान काल में किसी सन्त को प्राप्त नहीं है। परमात्मा करे ऐसी विभूतियाँ भारत में बार-बार स्थान-स्थान पर प्रकट हों, जिससे आदर्श सन्तों के आदर्श चरित्रों के उत्तम प्रभाव की छाप विश्व भर के मानवों के हृदय-पटल पर अमिट रूप से स्थापित हो कर संसार की नास्तिकता मिटाने में सहायक बने और स्वामी चिदानन्द जी महाराज के लिए भगवान् से मेरी हार्दिक प्रार्थना है कि कम से कम सौ वर्ष की आयु पर्यन्त वह पूर्ण निरोग रह कर अध्यात्म जगत् में, इसी प्रकार संसार के कोने-कोने में जनता की सेवा करते हुए अध्यात्मवाद की प्रतिष्ठा बढ़ाएँ। सदा मेरी मंगल कामनाएँ!

महामण्डलेश्वर, संस्थापक, गीता आश्रम
स्वर्गाश्रम (हिमालय)

इहलौकिक अस्तित्व के अन्ध-सागर में जब जीवन की जीर्ण-शीर्ण नौका शक्तिशाली माया-द्वन्द्व तथा वासनाओं के प्रबल झंझावात के थपेड़ों से डाँवाडोल हो जाती है, तब संसार-सागर के तूफानों में भटके हुए एकाकी यात्री के लिए दिव्य महान् आत्माओं के देदीप्यमान जीवन-चरित्र प्रकाश स्तम्भ की जाज्वल्यमान किरणों के समान

विनम्रता के साक्षात् अवतार

- श्री स्वामी अखण्डानन्द जी महाराज -

श्री स्वामी चिदानन्द जी महाराज की 'हीरक जयन्ती' के शुभ अवसर पर हार्दिक शुभ-कामनाएँ।

श्री स्वामी चिदानन्द जी साक्षात् विनम्रता की मूर्ति हैं। यदि कोई व्यक्ति विनम्रता को मनुष्य के रूप में देखना तथा विनम्र बनने का पाठ सीखना चाहता है तो उसे स्वामी चिदानन्द जी के पास जाना चाहिए। इस युग में ऐसा असाधारण विनयशील सन्त मिलना दुर्लभ है।

स्वामी अखण्डानन्द आश्रम
मोती झील, वृन्दावन (मथुरा)

****

ईश्वरानुग्रह प्राप्त स्वामी चिदानन्द

- श्री स्वामी विशुद्धानन्द जी महाराज-

श्री स्वामी चिदानन्द जी से मेरा परिचय तब हुआ था, जब वह नये-नये संन्यासाश्रम में दीक्षित हुए थे। उन में त्याग तथा वैराग्य की भावना पहले से ही प्रबल थी। 'दिव्य जीवन संघ' के सिद्धान्तों पर उनका प्रवचन भी मार्मिक हुआ करता था जिसे श्रवण करने वाले पर्याप्त प्रभावित हुआ करते थे।

कालान्तर में श्री १००८ स्वामी शिवानन्द जी के ब्रह्मलीन होने के पश्चात् श्री स्वामी चिदानन्द जी को सर्वसम्मति से 'दिव्य जीवन संघ' का परमाध्यक्ष बनाया गया। इसमें सन्देह नहीं कि श्री

स्वामी चिदानन्द जी के त्याग, वैराग्य और विद्वत्ता को देखते हुए वह इस पद के सर्वथा उपयुक्त थे। अपने अध्यक्ष-काल में श्री स्वामी चिदानन्द जी ने इस संस्था का पर्याप्त विस्तार किया जो सर्वविदित है। पाश्चात्य देशों में भी जा कर 'दिव्य जीवन संघ' के कई केन्द्रों की स्थापना की तथा पुराने केन्द्रों का समुचित सुधार किया।

भारतवर्ष में यह पुरानी परम्परा है कि जब-जब धर्म की ग्लानि होती है तथा क्षणिक भौतिक सुखों से उद्विग्न मानव शान्ति की प्राप्ति के लिए ईश्वर को पुकारता है, तब करुणामय परमेश्वर व्यथित, सन्त्रस्त जीवों के पथ-प्रदर्शन तथा उद्धार के लिए अपने अंश से सम्भूत दिव्य आत्माओं को पृथ्वी पर भेजता है। ये दिव्यात्माएँ, उन अवतारों से भिन्न हैं जो दशावतार के रूप में प्रसिद्ध हैं।

श्री स्वामी चिदानन्द जी भी ईश्वरानुग्रह प्राप्त उन दिव्यात्माओं में से हैं जिनके द्वारा अनेक भ्रान्त, पथ-भ्रष्ट जीवों का पथ-प्रदर्शन तथा उद्धार हुआ है। ईश्वर उन्हें दीर्घायु प्रदान करें जिससे अधिकाधिक जीवों का कल्याण हो।

'सेवाश्रम', फूलचट्टी, पौड़ी-गढ़वाल

****

सच्चे सन्त

- श्री स्वामी गणेशानन्द जी महाराज-

श्री स्वामी चिदानन्द जी महाराज के अल्पकालिक सम्पर्क से भी मैंने यह देखा कि स्वामी जी सरल स्वभाव के सच्चे सन्त हैं। ऐसे सन्त की धराधाम पर उपस्थिति सर्वलोक मंगलकारिणी है।

उनकी 'हीरक जयन्ती' के अवसर पर हमारी हार्दिक शुभेच्छा है कि स्वामी श्री चिदानन्द जी महाराज अपने उज्ज्वल जीवन से चिरकाल तक जिज्ञासु भक्तों को अभय एवं दिव्यानन्द प्रदान करते रहे।

त्यागमूर्ति, महामण्डलेश्वर
संस्थापक,
साधना सदन, हरिद्वार

सन्त पूजन ही सर्वेश्वर पूजन है

-श्री स्वामी कृपाल्वानन्द जी महाराज -

मुझे यह जान कर अतीव प्रसन्नता हुई कि आप लोगों ने आदरणीय स्वामी श्री चिदानन्द जी महाराज की 'हीरक जयन्ती' मनाने का शुभ संकल्प किया है।

गुण-पूजा ही 'लोक-संग्रह' है। उसमें स्थूल दृष्टि से व्यक्ति का पूजन नयनगोचर होता है, किन्तु सूक्ष्म दृष्टि से यह व्यक्ति-पूजा नहीं, चारित्र्य की पूजा, गुण-पूजा है। गुण-पूजा ही गुणों को प्राप्त करने का उपकरण है। जिस समाज अथवा राष्ट्र में गुण-पूजा नहीं होती अर्थात् सुशीलता का सत्कार नहीं होता, वह समाज अथवा राष्ट्र संस्कारहीन है। उसका उत्कर्ष कदापि नहीं हो सकता।

जिस प्रकार रत्न की परीक्षा सामान्य मनुष्य नहीं कर सकता, कोई विशिष्ट मनुष्य-रत्नाकर ही कर सकता है, उसी प्रकार सुशीलता की परीक्षा भी सामान्य मनुष्य, सामान्य समाज अथवा सामान्य राष्ट्र नहीं कर सकता। कोई एक सुशील मनुष्य, एक सुशील समाज अथवा कोई एक सुशील राष्ट्र ही कर सकता है।

सन्त का पूजन सर्वेश्वर का ही पूजन है।

जलती ज्योति से ही ज्योति को जलाया जा सकता है।

सुशील सन्त जलती हुई सत्य-ज्योति है। उसी की कृपा से व्यक्ति, समाज एवं राष्ट्र की ज्योति जल उठती है।

दीर्घायुष्य हो सद्‌गुणी सन्त और दीर्घायुष्य हो सद्‌गुण-पूजक समाज! समारोह की सफलता चाहता हूँ। हार्दिक शुभ-कामनाएँ।

योगाचार्य, संस्थापक,
श्री कायावरोहण जी तीर्थ सेवा समाज बड़ौदा

'सर्वभूत हिते रताः'

-श्री स्वामी गुरुचरणदास जी महाराज -

प्रायेण देव मुनयः स्वविमुक्तिकामा ।
मौनं चरन्ति विजने न परार्थनिष्ठाः ।।

-श्रीमद् भागवत : ७/९/४४

'मुक्ति की कामना के लिए ऋषि-मुनि लोग, निर्जन वन में, योग-मार्ग का अनुसरण करते हैं; धारणा, ध्यान तथा समाधि लगा कर परमेश्वर को, परमपद को प्राप्त करते हैं।' किन्तु '**सर्वभूत हिते रता**ः-परार्थ निष्ठा समस्त सन्तों तथा ऋषि-मुनियों में भी नहीं पाई जाती। संसार में भोजन, वस्त्र, स्वर्ण, भूमि तथा शयनागार दान करना उतने महत्त्व का नहीं है, जितना कि अज्ञान

से उन्मत्त, विषय-वासना में आसक्त हुई इन्द्रियों को ज्ञान के माध्यम से सन्मार्ग में लगाना महत्त्वपूर्ण है। मनुष्य सब कुछ छोड़ सकता है-भोजन, वस्त्र का भी त्याग कर सकता है, किन्तु अपने स्वभाव को परिवर्तित करना अत्यन्त दुष्कर है। सन्त-महात्मा व्यक्ति के स्वभाव को, उसके हृदय को परिवर्तित कर देते हैं।

स्वामी विवेकानन्द जी, स्वामी रामतीर्थ जी, श्री अरविन्द तथा रमण महर्षि जैसे विद्वान् सन्तों ने भारतीय संस्कृति को, अपने सनातन धर्म को पाश्चात्य देशों में फैलाया। **उसी परम्परा में श्री स्वामी शिवानन्द जी महाराज आये जिन्होंने भक्ति, ज्ञान तथा योग आदि पर अनेकों प्रामाणिक ग्रन्थ लिख कर विश्व-ख्याति प्राप्त की। अब उन्हीं के स्थानापन्न, 'दिव्य जीवन संघ' के वर्तमान परमाध्यक्ष श्री स्वामी चिदानन्द जी हैं, जो अपने गुरुदेव के पद-चिह्नों पर चल कर, देश-विदेश में नयी चेतना, आशा तथा विश्वास का संचार कर रहे हैं।**

आप परम सन्त ही नहीं वरन् एक उच्च कोटि के विद्वान् भी हैं। अँगरेजी में आपने अनेक पुस्तकें लिखी हैं, जिनका अनेक भाषाओं में अनुवाद भी हो चुका है।

स्वामी चिदानन्द जी ने निर्जन वन में बैठ कर, एकान्त साधना के द्वारा मुक्ति प्राप्त करने की कामना को त्याग कर अपने **गुरुदेव की भाँति सक्रिय हो कर अपने जीवन में सेवा को प्रथम स्थान दिया है। उनका समस्त जीवन दूसरों के लिए अर्पित है- 'लोकाः समस्ताः सुखिनो भवन्तु '।**

उनके सम्पर्क में आने से उनकी विद्वत्ता, गम्भीरता, सरलता, विनम्रता तथा सादगी स्पष्ट दीख पड़ती है। यही एक सच्चे सन्त तथा तत्त्ववेत्ता के लक्षण हैं।

ऐसे सन्त संसार में विरले ही मिलेंगे। २४ सितम्बर को स्वामी चिदानन्द जी की 'हीरक जयन्ती' के अवसर पर मैं भारत साधु समाज तथा व्यक्तिगत रूप से अपनी हार्दिक शुभ-कामनाएँ भेजता हूँ।

अध्यक्ष, भारत साधु समाज, नई दिल्ली

जीवन के दुर्गम पथ पर संघर्षरत परिश्रान्त पथिक के लिए ज्योतिर्मय महान् व्यक्तियों का जीवन एवं उनके कार्य अनवरत प्रेरणा एवं नवचेतना के स्थायी स्रोत हैं। सन्तों और ऋषियों की दैनन्दिन प्रवृत्तियाँ एवं शिक्षाप्रद सम्भाषण भ्रमित पथिकों के लिए अतीव सहायक हैं।

-स्वामी चिदानन्द

स्वामी चिदानन्द जी : मेरी दृष्टि में

-श्री स्वामी आत्मप्रकाश जी महाराज -

परम श्रद्धेय श्री स्वामी चिदानन्द जी से मेरा अनेक वर्षों का परिचय है। जब कभी मैंने आपसे सामाजिक कार्यों में सलाह एवं सहयोग लेना चाहा, आपने बड़े उदार भाव से सहर्ष मुझे महत्त्वपूर्ण परामर्श एवं सहयोग दिया। अब तक के सम्पर्क में जैसा महाराज जी को मैं समझ पाया हूँ, वह अत्यन्त महत्त्वपूर्ण है। वह अनेकविध गुणों के धनी हैं। श्री स्वामी जी में अपने सद्गुरुदेव महाराज श्री स्वामी शिवानन्द जी के प्रति अगाध श्रद्धा तथा सम्पूर्ण समर्पण के भाव है। महाराजश्री जब भी कुछ समाज-सेवा के कार्य करते हैं और उन कार्यों के लिए स्वामी जी की प्रशंसा की जाती है, तो महाराज जी तुरन्त बोल उठते हैं, '**यह कार्य करने की क्षमता मुझमें नहीं है वरन् यह सब सद्गुरुदेव महाराज की कृपा तथा आशीर्वाद से ही सम्भव है।**' प्रत्येक कार्य को सम्पन्न करने में स्वामी जी 'गुरु-कृपा' का अनुभव करते हैं तथा कर्तृत्व के अहं से सदा रहित रहते हैं।

महाराजश्री विनम्रता की साक्षात् मूर्ति हैं। इतने बड़े विद्वान् और इतनी विशाल विश्व विख्यात संस्था के परमाध्यक्ष होते हुए भी उनके व्यवहार में कहीं अहं की गन्ध हमें देखने को नहीं मिली। महाराज जी का स्वभाव अति उदार है। जो भी उनसे मिलने आता है, उसे पुस्तकें बाँटते ही रहते हैं। सबसे बड़े प्यार और आत्मीयता से मिलते हैं। महाराज जी की वाणी में अति सरलता है। बड़े प्यार से सबसे बोलते हैं। स्वभावतः लोगों का उनके प्रति सहज आकर्षण है। महाराजश्री भारतीय संस्कृति के सच्चे उपासक हैं, अनुयायी हैं। महाराजश्री का जीवन एक आदर्श जीवन है। महाराज जी की गरीबों के प्रति बड़ी ही सहानुभूति है। गरीबों को सदा वस्त्र, धन, औषध आदि प्रदान करते रहते हैं। हमारे 'आनन्द धाम आश्रम' के निकट लक्ष्मणझूला में कुष्ठ रोगियों की सेवार्थ महाराज जी ने एक औषधालय खोला है, जिसमें निःशुल्क उनकी सेवा होती है। कोई भी गरीब उनसे जा कर मिले, उसके दुःख-दर्द को बड़ी सहानुभूति से सुनते हैं तथा उसकी नारायण भाव से कुछ न कुछ सेवा अवश्य ही करते हैं।

स्वामी जी में जाति आदि का भेदभाव नहीं है। महात्मा गाँधी के जन्म-दिवस पर सभी हरिजनों को सादर आमन्त्रित करके आप उनके स्वयं चरण धोते हैं। अपने हाथों से खिलाते हैं। उनकी जूठी पत्तल आप स्वयं उठाते हैं। सभी मनुष्यों में महाराज जी साक्षात् 'नारायण' की भावना रखते हैं और नारायण-रूप समझ कर ही सबकी सेवा नम्रता और प्रेमपूर्वक करते हैं। गरीब-अमीर सब महाराज जी की दृष्टि में एक हैं। महाराज जी का शरीर सदा समाज-सेवा में रत रहता है। इन्द्रियों में संयम है। हृदय में सबके प्रति आत्मीयता तथा गुरुदेव एवं भगवान् के प्रति अगाध विश्वास है। सन्तों और धर्म-शास्त्रों के प्रति पूर्ण श्रद्धा है। कर्तव्य के प्रति निष्ठा, 'सादा जीवन तथा उच्च विचार' का आदर्श स्वामी जी में विद्यमान है। सदा प्रसन्नचित्त रहना सहज स्वभाव है। हर

प्रकार की परिस्थिति में सन्तुलित रहना स्वामी जी के लिए सहज है। बालकोचित निश्छल एवं निरभिमानता का व्यवहार सभी के प्रति है। मेरे प्रति भी महाराज जी का सहज स्नेह है। स्वामी जी का जीवन अहं, मद और वासना से मुक्त है। एक बार जो मिल लेता है, उसे उनसे बार-बार मिलने की स्वाभाविक इच्छा हो जाती है।

भगवान् से यही प्रार्थना है कि महाराजश्री चिरायु रह कर इस धरातल पर मानव समाज की इसी प्रकार सेवा करते रहें। महाराज जी सदा शरीर से निरोग रहें।

संस्थापक : विश्व मानव सत्संग परिषद्
लक्ष्मणझूला, टिहरी गढ़वाल

श्रद्धा के सुमनन

- श्री स्वामी दिव्यानन्द जी महाराज, हरिद्वार -

श्री स्वामी चिदानन्द जी महाराज विश्व विख्यात महापुरुष हैं। आपका सौम्य स्वरूप, स्वस्थ पतला शरीर, धीमी मीठी वाणी और सुमधुर स्वर आपके व्यक्तित्व के उज्वल अंग हैं। **कोई भी व्यक्ति जब एक बार आपके सम्पर्क में आ जाता है, तो वह सदा के लिए आपका हो जाता है। यह आपमें एक चमत्कार है।**

कविवर तुलसीदास जी की उक्ति है- '**प्रभुता पाइ काहि मद नाहीं**?' अर्थात्, जब प्रभुता प्राप्त हो जाती है, तो कोई भी व्यक्ति ऐसा नहीं, जिसे अहंकार न हो जाता हो। **यह सत्य है,**

पर हमारे चरित्रनायक श्री स्वामी चिदानन्द जी महाराज इस दिशा में एक अपवाद हैं। आपमें अहंकार का लवलेश भी नहीं है। सच्चे सन्त का यही एकमात्र लक्षण है। ऐसे सन्त-महात्मा आज-कल कम ही देखने को मिलते हैं।

ब्रह्मलीन गुरुवर्य श्री स्वामी शिवानन्द जी महाराज द्वारा संन्यास-दीक्षा ग्रहण करने के पूर्व जब मैं 'शिवानन्द आश्रम' में एक भक्त व साधक के रूप में जाया करता था, **उन दिनों श्री स्वामी चिदानन्द जी महाराज 'दिव्य जीवन संघ' के महासचिव के पद पर आसीन थे। अतः इस नाते मुझे आपके साथ सत्संग करने का पर्याप्त अवसर मिल जाता था। घण्टों धर्म-चर्चा होती और आप अपने उपदेशों एवं युक्तियों द्वारा मेरे संशयों का सन्तोषपूर्ण निराकरण कर देते थे। यह आप ही के सदुपदेशों का सुफल था कि मैं कालान्तर में संन्यास ग्रहण कर इसी आश्रम में प्रवेश पा सका तथा लगभग पाँच वर्षों तक महाराजश्री के निकट रहने का सुअवसर प्राप्त कर सका।**

श्री स्वामी चिदानन्द जी महाराज का मेरे प्रति भ्रातृभाव, समादर व स्नेह अगाध रहा है। इस सम्बन्ध में मुझे एक घटना याद आ रही है जिसका उल्लेख कर देना यहाँ असंगत नहीं होगा। बात १९६५ की है जब स्वामी जी धर्म-प्रचारार्थ विदेश यात्रा पर थे। उन्होंने डर्बन (साउथ अफ्रीका) से मेरे नाम एक पत्र भेजा। मेरी पुस्तकों के विषय में उन्होंने बड़ा सन्तोष प्रकट किया था तथा उन्हें मूल्यवान् बताया। आज भी वह मेरी कतिपय पुस्तकों की समालोचना के सन्दर्भ से मुझे आध्यात्मिक मार्ग में उत्साहित करते रहते हैं।

अन्त में मैं महामाया भगवती राजराजेश्वरी से यही प्रार्थना करता हूँ कि वे उन्हें सुस्वास्थ्य और दीर्घायु प्रदान करें ताकि उनके सदुपदेशों द्वारा विश्व लाभान्वित होता रहे।

चिदानन्द महाराज के, युग-पद-पंकज माँय।
पुष्पांजलि अर्पित करूँ, सादर शीष नवाय ।।

गुरुदेव स्वामी शिवानन्द जी महाराज का नाम असंख्य घरों में विख्यात है, जो आध्यात्मिक जगत् में आदर्श चरित्र और निष्काम सेवा का द्योतक बन गया है। स्वामी शिवानन्द जी ने मानवता की निष्काम सेवा, भगवान् की पूजा व आराधना, दिव्य ज्ञान की प्राप्ति व ध्यान के अभ्यास तथा आत्म-साक्षात्कार द्वारा मुक्ति का उपदेश दिया।

-स्वामी चिदानन्द

एक अद्वितीय प्रकाश-स्तम्भ

-श्री स्वामी मनुवर्य जी महाराज-

'दिव्य जीवन संघ' के संस्थापक-अध्यक्ष परम पूज्य श्री स्वामी शिवानन्द जी महाराज के ब्रह्मलीन होने के पश्चात् परम पूज्य श्री स्वामी चिदानन्द जी महाराज संस्था के परमाध्यक्ष तथा अपने गुरुदेव के मिशन के सुयोग्य पथ-प्रदर्शक बन गये हैं।

प्रायः देखने में आया है कि संस्था के प्रधान के अभाव में संस्था का वैभव भी समाप्त हो जाता है। कहीं-कहीं तो संस्था को बन्द होते भी देखा गया है; किन्तु यहाँ स्थिति दूसरी ही है। परम पूज्य श्री स्वामी शिवानन्द जी महाराज के ब्रह्मलीन होने के पश्चात् भी 'दिव्य जीवन संघ' ने शक्ति अर्जित की है और अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर प्रत्येक क्षेत्र में विकास किया है। गत बारह वर्षों से, श्री स्वामी चिदानन्द जी जब से परमाध्यक्ष बने हैं, 'दिव्य जीवन संघ' ने न केवल चहुँमुखी प्रगति की है, वरन् सभी क्षेत्रों में अनेक उपलब्धियाँ भी प्राप्त की है।

यद्यपि 'दिव्य जीवन संघ' परम पूज्य श्री स्वामी शिवानन्द जी के समय में ही अन्तर्राष्ट्रीय ख्याति की संस्था बन गया था, तथापि श्री स्वामी चिदानन्द जी ने संस्था के उद्देश्यों के प्रचारार्थ अब तक विदेशों की अनेक बार लम्बी यात्राएँ कीं और इस प्रकार उन्होंने संघ को विश्व के सभी भागों से अत्यन्त परिचित कराया। अर्थात् स्वामी जी महाराज ने विदेशों में भारतीय संस्कृति के प्रचार-प्रसार के लिए विलक्षण कार्य किये हैं।

परम पूज्य स्वामी चिदानन्द जी महाराज सदैव व्यस्त रहते हैं। वह सदा पूर्व से पश्चिम और उत्तर से दक्षिण आते-जाते दिखायी पड़ते हैं। 'दिव्य जीवन संघ' से के उद्देश्यों के प्रचार-प्रसार में उन्होंने अपनी पूरी शक्ति लगा दी है। उनका उत्साह और लगन से पूरित प्रयत्न सदैव फलीभूत हुआ है। उन्होंने संघ के उद्देश्य तथा अपनी संस्कृति के लिए भारत के दूर-दूरस्थ क्षेत्रों की व्यापक यात्राएँ की हैं।

स्वामी जी ब्राह्ममुहूर्त से रात्रि में विलम्ब तक कार्यरत रहते हैं। प्रातः वह अपने पत्रों तक को स्वयं टाइप करते हैं। यहाँ तक कि वायुयान, ट्रेन अथवा कार से यात्रा करते समय भी वह कार्य में व्यस्त रहते हैं। उनके लिए प्रत्येक क्षण महत्त्वपूर्ण है। उनका पतला दुबला शरीर शक्ति का भण्डार है, जो कि चौबीसों घण्टे कठोर उद्यम झेल सकने में सक्षम हैं। उनके पास अद्वितीय आत्म-शक्ति है जिसके कारण वह इस सीमा तक कार्य कर पाते हैं।

उनकी विनम्रता अतुलनीय है। उनके इसी गुण ने उन्हें प्रत्येक का प्रियपात्र बना दिया है। **वह अतुलनीय गुणों के स्वामी हैं। वह स्वयं को सद्गुरुदेव महाराज का एक विनीत 'सेवक' कहते हैं।**

सद्गुरुदेव महाराज की तरह उन्होंने भी सभी योगों का समन्वय किया है एवं संस्था के हेतुक- 'सर्व-धर्म सम भाव' सभी धर्मों एवं सन्तों के प्रति वह प्रेम और सम्मान के पक्ष का समर्थन करते हैं। वह स्वयं भी सबके प्रति प्रेम और सहानुभूति से ओत-प्रोत हैं तथा सत्यार्थ में विश्व को व्यापक स्तर पर उन्नत बनाने के लिए उन्होंने अपनी आत्मा को समर्पित कर रखा है। उन्होंने दूसरों को वेदान्त की परम्परागत शिक्षा प्रदान करने के लिए स्वयं अपने अहं का पूर्ण रूप से दमन कर दिया है।

उनके इस 'हीरक जयन्ती' महोत्सव के अवसर पर मैं हार्दिक बधाई प्रेषित करता हूँ तथा परम पिता परमात्मा प्रार्थना करता हूँ कि स्वामी जी को स्वास्थ्यप्रद दीर्घ आयुष्य प्रदान करें तथा वह परम पूज्य श्री स्वामी शिवानन्द जी महाराज के प्रकाश स्तम्भ बने रहें।

संस्थापक, योग-साधन आश्रम,
अहमदाबाद

विनय-प्रतीक

-श्री स्वामी देवानन्द जी महाराज -

हमारे देश में अनादि काल से अवतारी पुरुषों, दिव्य विभूतियों तथा सन्त-महापुरुषों का एक विशेष पद्धति से जन्म-दिवस मनाया जाता रहा है। उन जन्म-दिवसों में, विशेषतः षष्ट्यब्दिपूर्ति (६० वीं जयन्ती) को लोग विशेष रूप से मनाते हैं। इसका अर्थ यह है कि आपने इन साठ वर्षों में कैसा जीवन यापन किया? स्वयं के लिए और संसार के लिए क्या किया? इसका थोड़ा सिंहावलोकन करके तथा जो कुछ शेष समय रह गया है, उसे और भी सुचारू रूप से अपने तथा लोक-कल्याण में बिताने के लिए स्मरण करने का प्रयास करना है।

हम जिस महापुरुष की 'हीरक जयन्ती' मनाने जा रहे हैं, वह सन्त-महापुरुष हैं। सन्त-महापुरुष अपनी 'जयन्ती' मनाना नहीं चाहते, लेकिन लोक-कल्याण हेतु तथा भक्तों की श्रद्धा और भक्ति बढ़ाने के लिए ही जयन्तियाँ मनायी जाती हैं। प्रश्न उठता है, सन्त- महापुरुष कैसे होते हैं?

शान्ता महान्तो निवसन्ति सन्तो वसन्तवल्लोक हितं चरन्तः ।
तीर्णाः स्वयं भीमभवार्णवं जनाः नहेतुनान्यानपि तारयन्तः ।।

'जैसे वसन्त ऋतु सुगन्ध, मन्द वायु से, नव कोमल मृदु पत्र-पुष्प-लताओं से विश्व को शान्ति तथा आनन्द प्रदान करती है, उसी प्रकार सन्त-महापुरुष भयंकर संसार रूपी सागर को स्वयं पार करके अपनी अहेतुकी कृपा से इस संसार-सागर में डूबी हुई जनता को पार करके शान्ति तथा परमानन्द प्रदान करते हैं।' उन्हीं उच्चकोटि के महापुरुषों में हमारे परम पूज्य श्री स्वामी चिदानन्द जी महाराज हैं। हम सब जानते हैं कि वह विनम्र स्वभाव वाले, प्रेम-स्वरूप तथा शान्त-मूर्ति हैं। **उनके पास जो भी जाये, छोटे-बड़े का भेद-भाव भूल कर सर्वप्रथम स्वयं ही प्रणाम करते हैं।**

फरवरी '६८ में पूज्य स्वामी जी के साथ मैं हैदराबाद गया था। वहाँ श्रीमती रानी ललिता देवी के घर पूज्य स्वामी जी महाराज की अध्यक्षता में 'श्री राम सप्ताह' तथा प्रातः सायं प्रवचन का कार्यक्रम था। उस कार्यक्रम में **गायत्री पीठाधिपति श्री विद्याशंकर भारती स्वामी भी आये थे।** अपने एक प्रवचन के प्रारम्भ में उन्होंने कहा- "श्री स्वामी चिदानन्द जी विनय के स्वरूप हैं। वह विनय की मूर्ति हैं। एक बड़ी संस्था के परमाध्यक्ष होते हुए भी उनमें अहंकार का लेश भी नहीं है। वह पहले सबको प्रणाम करते हैं। हम उनकी तरह नहीं कर सकते। सबसे प्रेमपूर्वक वार्तालाप करते हैं। जिन्होंने ऐसे उत्तम शिष्य को पाया, वह श्री स्वामी शिवानन्द जी महाराज धन्य हैं। श्री स्वामी शिवानन्द जी महाराज भी विलक्षण मूर्ति थे। जीवन काल में ही मैंने उनका प्रभाव देखा था। श्री स्वामी चिदानन्द जी और अन्य शिष्यों को विदेश भेज कर उन्होंने भारतीय संस्कृति का खूब प्रचार कराया। श्री स्वामी चिदानन्द जी की प्रशंसा मैंने विशेष रूप से सुनी। धन्य है 'दिव्य जीवन संघ' जिसने एक 'विनम्र मूर्ति' को परमाध्यक्ष के रूप में प्राप्त किया।" ये शब्द उन्होंने एक बृहत् सभा में कहे थे।

उनकी 'हीरक जयन्ती' के शुभ अवसर पर हम भगवान् से और सद्गुरुदेव से प्रार्थना करते हैं कि पूज्य श्री स्वामी जी महाराज को पूर्ण आयुष्य तथा तुष्टि, पुष्टि प्रदान करें; ताकि वे और भी लोक-कल्याण करने में समर्थ हो सकें।

-शिवानन्दाश्रम, ऋषिकेश

स्वामी चिदानन्द : अलौकिक गुरु-भक्ति के धनी

- श्री स्वामी विष्णुशरणानन्द माता जी-

धर्मशास्त्रों में गायी हुई गुरु-भक्ति की महिमा सर्वविदित है। गुरु को ब्रह्मा, विष्णु, महेश तथा साक्षात् परम ब्रह्म के समान बताया है। सन्त कबीर ने तो गुरु को ईश्वर से भी बड़ा बताया है-

गुरु गोविन्द दोऊ खड़े काके लागू पाँय ।
बलिहारी गुरु आपकी गोविन्द दिये बताय ।।

गुरु-प्रदत्त ज्ञान और मार्गदर्शन से ही शिष्य परमात्म-प्राप्ति का अधिकारी बनता है- '**बिन गुरु ज्ञान न होय गोसाईं।**'

सभी महान् आचार्यों, ऋषि-मुनियों, महात्माओं तथा अवतारों तक ने गुरु-चरणों का आश्रय ले कर कठोर अनुशासन एवं तपश्चर्या द्वारा ब्रह्म-विद्या सीखी और गुरु-भक्ति के बल से ही वे स्वयं गुरु-पद के अधिकारी बने। भगवान् श्री कृष्ण ने अपने गुरु सान्दीपनि ऋषि के चरणों का आश्रय लिया। श्री राम को गुरु वसिष्ठ जी ने उपदेश दिया। स्वामी जी महाराज ने गुरुदेव शिवानन्द जी से शक्ति प्राप्त की और अब अनन्य गुरु-भक्ति के बल से उस प्रकाश को अखिल विश्व में प्रज्ज्वलित कर रहे हैं। सन् १९४३ में स्वामी जी ने गुरुदेव स्वामी शिवानन्द जी के चरणों में आश्रय लिया था। तभी से परोक्ष रूप में गुरु-भक्ति का अनवरत स्रोत उनके जीवन में संचरित होता रहा।

सन् १९४९ में उन्होंने संन्यास की दीक्षा ली और गुरुदेव की महासमाधि तक उनके रंग में रंगे रह कर दिव्य जीवन के सन्देश सुने। गुरु-भक्ति के धनी स्वामी चिदानन्द जी विश्व-भ्रमण द्वारा अपने इस अलौकिक धन को देश-विदेशों में विकीर्ण करते हुए अखिल मानवता को त्राण दे रहे हैं।

दिव्यत्व के प्रतीक स्वामी चिदानन्द जी महाराज का मानस जाज्वल्यमान गुरु-भक्ति से ऐसा ओत-प्रोत है मानो उनके अस्तित्व के कण-कण और रग-रग में गुरु की ज्योति प्रदीप्त है। जब वह स्नेहमयी दृष्टि से देखते हैं तो मानो गुरु की शक्ति उनके नेत्रों से विकीर्ण होती है। जब भक्तों

को दिव्य वाणी से आशीष देते हैं तो गुरुदेव के नाम पर और प्रवचन देते हैं तो बारम्बार श्रोताओं को स्मरण कराते रहते हैं- 'मैं नहीं बोल रहा हूँ, मेरे कण्ठ के माध्यम से गुरुदेव की वाणी प्रस्फुटित हो रही है।' यह है सच्ची गुरु-भक्ति जिसके कारण पूज्य गुरुदेव स्वामी शिवानन्द जी महाराज के पार्थिव शरीर के न रहने पर भी आश्रम एवं 'दिव्य जीवन संघ' की विश्व-व्यापी शाखाओं के सभी कार्य-कलापों में सन्निहित आपकी आत्मा के प्रकाश से उत्तरोत्तर दिव्य भावों का अधिक प्रचार और प्रसार हो रहा है तथा पीड़ित मानवता की सेवा हो रही है।

कुष्ठ रोगियों की सेवा में प्रबल रुचि होना उनकी निष्काम सेवा-वृत्ति का ज्वलन्त प्रमाण है। स्वामी जी में देवत्व और मानवत्व का अपूर्व सम्मिश्रण उनकी अलौकिक गुरु-भक्ति का ही प्रसाद है।

हमारी परम पिता परमात्मा से प्रार्थना है कि स्वामी जी महाराज षष्ट्यब्दपूर्ति समारोह' के मंगलमय अवसर पर गुरु-भक्ति से प्राप्त दिव्य आत्मिक शक्ति का अपने भक्तों में संचार करते हुए भारत की अध्यात्म-निधि से अनन्त काल तक विश्व-कल्याण करते रहें।

****

उनकी ज्योति से ज्योतित

-श्री स्वामी राधाप्रियानन्द माता जी, श्रीधाम-

शाश्वत सत्य है कि सूर्योदय होते ही तिमिर विच्छिन्न हो जाता है। सूर्य स्वभावतः समस्त प्राणि-जगत्, वनस्पति-जगत्, समग्र सृष्टि का जीवनदायक है, प्राणपोषक है, नेत्रों की ज्योति है, आदि-आदि। जो वस्तुएँ घने अन्धकार के आवरण में अस्पष्ट होती हैं, जिनका नाम-रूप, अस्तित्व अज्ञात प्रतीत होता है, वे सब सूर्य के प्रकाश में प्रकाशित हो कर प्रकट हो जाती हैं।

संसार के पूर्व में अवस्थित पुण्यमय देश भारतवर्ष के आध्यात्मिक क्षेत्र में उदित एवं प्रदीप्त हुआ सूर्य-स्वामी शिवानन्द सरस्वती-अज्ञानान्धकार- नाशक, प्राण-संचारक, आनन्द एवं प्रफुल्लता-प्रदायक, समभाव दर्शायक एवं दिव्य जीवन संचालक के रूप में। शिवानन्द-सूर्य की ज्ञान-ज्योति के ज्योतित होते ही मानव-हृदय में दैवी सम्पदा रूपी प्रकाश का अवतरण होता है और आसुरी सम्पदा रूपी तमिस्रा विनष्ट हो जाती है। भारत को ही नहीं, अपितु समूचे विश्व को नित्य शिवानन्द सूर्य, नित्य आध्यात्मिक ज्ञान-प्रकाश से, प्रकाशित कर रहे हैं।

निर्विवाद तथ्य है कि चन्द्र सूर्य के प्रकाश से प्रकाशित होता है। चन्द्र-प्रकाश का मूल स्रोत है सूर्य। चन्द्र अपने स्रोत के समक्ष शान्त, विनीत एवं सौम्य है। ठीक वैसे ही चिदानन्द-चन्द्र का स्रोत है शिवानन्द सूर्य। चिदानन्द-ज्योत्स्ना परिव्याप्त है नित्य पूर्णिमा की चन्द्र-चन्द्रिका सम चतुर्दिक्। चिदानन्द-चन्द्र की

शीतल, शान्त, सुखदायक ज्योत्स्ना में स्नान कर समस्त प्राणि-वर्ग के मन-मन्दिर आध्यात्मिक प्रकाश की शीतल किरणों द्वारा परिशान्त एवं निर्मल हो जाते हैं, जो सतत स्मृति दिलाते हैं शिवानन्द-सूर्य की।

चन्द्र आदि काल से अपनी परिसीमा में सीमित है, मर्यादा पालन में संस्थित है। नत है वह सदैव सूर्य के समक्ष । ठीक उसी प्रकार चिदानन्द चन्द्र विनीत भाव से आज्ञाकारी अनुयायी, स्वामि-भक्त सेवक की भाँति, शिवानन्द-सूर्य-प्रदत्त दिव्य ज्ञान प्रकाश द्वारा आनन्द, शीतलता एवं अमृत वृष्टि कर रहा है चहुँ ओर-भव-जीवों के उद्धारक, नवजीवन प्रदायक, मानवता के उन्नायक, लोकोपकारक के रूप में। किन्तु चिदानन्द-चन्द्र पूर्णतया सचेत है अपनी परिसीमा एवं मर्यादा के प्रति विनत है शिवानन्द-सूर्य के सम्मुख। शिवानन्द-सूर्य प्रतिबिम्बित हो रहा है चिदानन्द-चन्द्र में। चिदानन्द उद्घोषित करते हैं-

'मेरा मुझमें कुछ नहीं, जो कुछ है सो तोर।'

उल्लेखनीय है, अनुकरणीय है, किन्तु अकथनीय है चिदानन्द-चरित्र!

आइए! निज जीवन धन्य बनाएँ-निमज्जन कर शिवानन्द-सूर्य-प्रकाश में! अवगाहन कर चिदानन्द-चन्द्र-चन्द्रिका में।

जय शिवानन्द! जय चिदानन्द !!

शिवानन्द आश्रम, दिव्य जीवन संघ
शिवानन्दनगर (उत्तराखण्ड)

विलक्षण व्यक्तित्व

- श्री स्वामी याज्ञवल्क्यानन्द जी महाराज-

परम पूज्य गुरुदेव के आदरणीय शिष्य श्री स्वामी चिदानन्द जी महाराज को भक्तिभाव-सुमन अर्पित करना हमें अति प्रिय होगा।

अनुमान करो, कोई व्यक्ति किसी बालक को यदि पूछे, "क्या तुम मुझे बता सकोगे कि ईश्वर कैसा है?" -तब वह बालक क्या कहेगा? उसी प्रकार मैं स्वामी चिदानन्द जी महाराज के विषय में क्या कह सकता हूँ? कुछ कहने का प्रयास करना भी व्यर्थ है। किन्तु मानव अहंकारी है और कोई-न-कोई बात कहना चाहेगा। अतः मैं भी आपके सम्मुख स्वामी जी की कुछ विशेषताएँ जितना संभव हो सकेगा उतना संक्षिप्त रूप में कहूँगा। अनेक वर्षों पूर्व, हम गुरुदेव स्वामी शिवानन्द जी के

साथ कुटीर में बैठे थे और चाय-पान कर रहे थे। संध्या का समय था। उन दिनों में स्वामी जी की कुटीर में बिजली नहीं थी। स्वामी चिदानन्द जी गंगा स्नान हेतु घाट की ओर जा रहे थे। क्या आप जानते हैं कि उनके शरीर पर कितने वस्त्र थे? एकमात्र वस्त्र गंगाजी में नहाने के लिए और केवल एक वस्त्र स्नान-पश्चात् धारण करने के लिए। तभी गुरुदेव ने मुझसे पूछा, "क्या आप इस व्यक्ति से परिचित हैं?" मैंने कहा, "आप मेरी हँसी उड़ा रहे हैं। पूरे आश्रम में स्वामी चिदानन्द जी से कौन परिचित नहीं?" स्वामी जी ने नेत्र एक मिनट बंद किए और बोले, "नहीं, नहीं, आप उन्हें नहीं जानते, कदाचित् ही कोई उन्हें जानता है। वे किसी की भी कल्पना से कहीं अधिक महान् हैं। आपकी बुद्धि उनकी महानता ग्रहण नहीं कर पाएगी। वे इतने महान् व्यक्ति हैं। किन्तु मैं उनकी सिद्धता को सिद्ध करने यहाँ आया हूँ।" वास्तव में ये शब्द गुरुदेव ने वर्ष १९५६/१९५७ में कहे थे। थोड़े मिनटों पश्चात् कुछ सैन्य अधिकारी गुरुदेव के दर्शनार्थ आये। कुछ ही

क्षणों में हाथ में एक फाइल लिए स्वामी कृष्णानन्द जी आये। अधिकारी बैठे थे और स्वामी कृष्णानन्द जी खड़े थे। इतने में गुरुदेव ने कहा," कृष्णानन्द जी, इन सैन्य अधिकारियों को दिव्य जीवन के विषय में दस मिनट में कुछ बताओ।" जैसे ही स्वामी जी ने यह कहा, कृष्णानन्द जी ने कहना प्रारम्भ किया और दस मिनटों में ही उन्होंने अपना वक्तव्य समाप्त कर दिया। उनके चले जाने के पश्चात् गुरुदेव ने अधिकारियों से कहा, "मानो शंकराचार्य जी ने कृष्णानन्द के रूप में पुनः जन्म लिया हो ।" गुरुदेव की अपने शिष्यों के प्रति यही संकल्पना अथवा धारणा थी। मैंने वस्तुतः ऐसे गुरु नहीं देखे जो अपने शिष्यों की प्रशंसा करें। वे आत्मश्लाघा कर सकते हैं। परन्तु कदाचित् ही अपने शिष्यों की प्रशंसा करें।

दूसरी एक घटना है कि गुरुदेव की महासमाधि के पश्चात् स्वामी जी सर्वसम्मति से परमाध्यक्ष मनोनीत किए गए। शिवरात्रि, जो उनके परमाध्यक्ष के पद पर आसीन होने से पहले थी, को मैंने स्वामी जी से पूछा, नीलकंठ महादेव के दर्शन हेतु जाना उन्हें अनुकूल रहेगा क्या? वास्तव में वह दिन शिवरात्रि के दो-तीन दिन पूर्व का था। उन्होंने मुझे लम्बे मार्ग से जाने के लिए बताया और कहा कि वे थोड़े समय पश्चात् प्रस्थान करेंगे। इसलिए हमने प्रातःकाल में ही प्रस्थान किया तथा मध्याह्न के बारह बजे वहाँ पहुँचे। इतने में स्वामी जी भी वहाँ पहुँच गये। अतिशय शीत का अनुभव हो रहा था जैसा कि शिवरात्रि-पूर्व होता है। हमने रात्रि वहाँ व्यतीत की और ब्राह्ममुहूर्त में स्वामी जी ने हमें पूछा, "आप सब स्नान करेंगे?" मैंने कहा, "स्वामी जी, बहुत ठण्ढ है इस कारण चलिए, हम आश्रम को लौटेंगे और फिर वहीं स्नान करेंगे।" उन्होंने कुछ नहीं कहा। आधे घंटे में स्वामी जी ने स्नान कर लिया और हमारी ओर आये। जैसे ही वे हमारे पास से गुजरे, उन्होंने मंद स्मित किया। उस स्मित ने हमें शक्ति और प्रेरणा दी और हमने भी स्नान किया, पश्चात् मध्याह्न भोजन भी किया और सब तैयार हो गये। एक हरिजन, जो मंदिर को बुहारता था, उसको स्वच्छ करता था, बाहर खड़ा था। स्वामी जी ने मुझसे पूछा, "मेरी जेब में कितने पैसे हैं?" मेरे पास जितने भी थे, उतने मैंने एक प्लेट में रखे। स्वामी जी बाहर गये और उस प्लेट को हरिजन के सम्मुख रखकर उसे प्रणाम किया। वे जब वापस आए तब उन्होंने मुझे कहा, "वह महान् साधक है।"

किसी और अवसर पर हम आश्रम गये थे और पार्वती कुटीर में ठहरे थे। स्वामी जी प्रायः अपराह्न में सैर करने (घूमने) जाते थे। एक दिन हम वहाँ बैठे थे और वे हमारे पास से मुस्कराते

हुए निकल गये। मुझे ज्ञात था कि स्वामी जी जब सैर को निकलते थे तब कोई उनके साथ हो, यह उन्हें पसंद नहीं था, इसलिए मैं शांत रहा। लगभग आधे घंटे के पश्चात् वे वापस आये और बोले, "डाक्टर जी, हम सैर को जाएँगे?" सामान्यतया, वे इस प्रकार नहीं कहते, इसलिए मैंने विचार किया कि वे मुझसे कोई बात करना चाहते हैं अथवा उन्हें मुझसे कोई काम होगा, अतः मैं उनके साथ गया। जब हम मुख्य मार्ग पर पहुँचे तब मैंने देखा कि एक थोड़े से बड़े कद के श्वान (कुत्ते) को एक ट्रक ने टक्कर लगायी थी। स्वामी जी श्वान को पहले ही सड़क की एक ओर ले गये थे, उसके ऊपर जल छिड़का था और उसके चारों ओर पत्थर का घेरा बनाया था जिससे उसे कोई पुनः कुचल न दे। इतना सब करने के पश्चात् ही वे मुझे बुलाने आए थे। इसी बीच पूर्व ही, उन्होंने किसी को, नागराजन जी (स्वामी विमलानन्द जी) को बुलाने के लिए भेज दिया था। वे उस समय स्वामी जी के सचिव के रूप में कार्य कर रहे थे। श्वान अभी भी जीवित था परन्तु उसकी पीठ टूट गयी थी, इसलिए वह हिलने-डुलने की कोई चेष्टा नहीं कर पा रहा था। मैंने स्वामी जी को कहा कि मैं मानव-चिकित्सक हूँ, श्वान के उपचार का मुझे ज्ञान नहीं है। श्वान गंभीर रूप से जख्मी हुआ था इस कारण हम किसी पशु-चिकित्सा के शल्यक्रिया निष्णात का परामर्श ले सकते हैं। उसी दौरान नागराजन जी वहाँ आ पहुँचे। स्वामी जी ने उनके कक्ष में जितना भी दूध है, उसको लाने को कहा; दूध आने पर उन्होंने श्वान को दूध पिलाया और कहा, "नागराजन जी, हमें श्वान को पशु चिकित्सालय में ले जाना चाहिए।" नागराजन जी ने उन्हें कहा कि पशु- चिकित्सालय में जो श्वान पालतू या घरेलु न हो उस श्वान को भर्ती नहीं करते। स्वामी जी ने कहा, "उन्हें कहो कि यह स्वामी जी का अपना श्वान है तथा उसके उपचार का खर्च वे ही करेंगे।" श्वान की दूसरे दिन मृत्यु हो गयी, किन्तु वह संयोग ही था। ये सब घटनाएँ उनके व्यक्तित्व के विशेष गुणों की कुछ झलक दिखाती हैं।

मैं एक अंतिम घटना बताना चाहूंगा। बोर्ड ऑफ ट्रस्टीज (न्यासी मंडल) ने वर्ष १९६३ में स्वामी जी का दिव्य जीवन संघ के परमाध्यक्ष के पद पर सर्वसम्मति से चयन किया था। किन्तु, स्वामी जी ने कहा कि उनको केदारनाथ भगवान् के अनुमोदन की आवश्यकता थी। "मेरी आकांक्षा भगवान् केदारनाथ जी के चरणों में बैठकर अंतिम निर्णय लेने की है।" अपने मन की यही बात उन्होंने मुझे कही। इसलिए वे केदारनाथ गये; वापस आये परन्तु आश्रम में किसी को ज्ञात नहीं था कि वहाँ क्या हुआ। थोड़े समय पश्चात्, मैं बद्रीनाथ-केदारनाथ की यात्रा को प्रस्थान करने वाली मंडली का एक प्रतिभागी था। मैंने स्वामी जी को, हमें एक संदेश देने की प्रार्थना की, जिसे हम प्रतिदिन प्रातः ही, टेप-रिकार्डर पर बजा सकें कि जिससे यात्रियों को सामर्थ्य और प्रेरणा मिले। उन्होंने मुझे टेप रिकार्डर उनके पास छोड़ जाने को कहा, जिससे वे संदेश को बाद में रिकार्ड कर सकें। हमने कैसेट यात्रा मार्ग में बजाया। उनके परामर्श के अतिरिक्त उनके एक निर्देश आदेश ने मेरा ध्यान आकर्षित कर लिया। "केदारनाथ में श्री तिवारी नामक एक व्यक्ति हैं; उन्होंने इस शरीर की उत्तम सेवा की, उनके यहाँ ठहरना ।" बस, इतना ही उन्होंने बताया था। जब हम केदारनाथ पहुँचे, हमने उस व्यक्ति को खोज लिया और उनके साथ ठहरने का प्रबंध कर लिया। मैंने उन्हें, स्वामी जी ने किस कारण आपका उल्लेख किया, इस विषय में पूछा। उन्होंने इस विषय में अपनी अज्ञानता तो जतलायी किन्तु कुछ समय सोचने के पश्चात् उन्होंने बताया कि थोडे दिन पूर्व एक संन्यासी यहाँ आये थे; किन्तु वे देर से आये थे। पूजा पहले ही समाप्त हो चुकी थी और हर व्यक्ति काम से निवृत्त हो कर चला गया था। किसी काम से हाथ में टार्च लिए मैं बाहर निकला। टार्च के सहारे मैंने देखा कि कोई

व्यक्ति वहाँ बैठा था। हिमवर्षा हो रही थी। उस पर से बर्फ निकालने के पश्चात् मुझे प्रतीत हुआ कि वह एक संन्यासी था। बड़ी कठिनाई से मैं उन्हें अपने निवासस्थान पर ले आया और उनकी सेवा की। अगले दिन वे लौट गए। उन्होंने यह नहीं बताया कि वे कौन थे, किन्तु केदारनाथ भगवान् के श्रीचरणों में पहुँचने की उनकी दृढ़प्रतिज्ञा, उनके कष्ट-पीड़ा तथा उनके संकल्प के साक्षी हम हो सकते हैं।

इस प्रकार की घटनाएँ अनेक हैं, परन्तु उनके द्वारा हम स्वामी जी की महानता का कुछ ही ज्ञान प्राप्त कर सकते हैं।

वीरनगर, गुजरात

ॐ

जो स्वामी शिवानन्द जी के बहुत निकट सम्पर्क में आये, उन्होंने देखा कि स्वामी जी एक ऐसे अलौकिक गुण से सम्पन्न हैं जो बहुत खोजने पर भी नहीं मिल पाता। अपने प्रति किये गये गम्भीर अपराधों को भी वे शीघ्र भूल जाते हैं। तथापि प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से की गयी उनकी सेवा को हृदय में सदैव सँजोये रखते हैं। भूलो और क्षमा करो' सिद्धान्त उपदेश के लिए सरल है; किन्तु विरली ही कोई ऐसी महान् आत्मा पायी जाती है जो इस गुण को सहज आचरण में लायी हो। यह गुण मैंने इस सन्त में (गुरुदेव में) पराकाष्ठा तक पहुँचा हुआ पाया है।

***

उदारता और परोपकार को अधिक महत्त्व देते हुए वह कभी थकते नहीं। पूजा-भाव से किया गया एकमात्र यह कार्य ही लक्ष्य प्राप्ति में सहायक होता है। गुरुदेव के विचार से यह साधन और साध्य दोनों ही है। यहाँ इससे व्यक्ति अनेक बार इस परिणाम पर पहुँचता है कि स्वामी जी का प्रमुख उद्देश्य आत्म-साक्षात्कार- प्राप्त्यर्थ निष्काम सेवा को निश्चयात्मक पथ बताना है। निकट सम्पर्क में आने वाले व्यक्तियों का यह अभिमत है कि इस युग की महान् पूजा के रूप में निष्काम सेवा के सिद्धान्तों को प्रतिष्ठापित करना ही स्वामी जी के जीवन का प्रमुख लक्ष्य है।

- स्वामी चिदानन्द

- श्री स्वामी दिव्यानन्द सरस्वती, ऊधमसिंहनगर -

(श्री कुँवरबहादुरसिंह, ऊधमसिंहनगर)

मेरा अभिनन्दन लो हे हिमगिरि के वासी!
श्रद्धा के इन सुमनों को दो शरण चरण में,
हाथ गहो जन-जन के तुम भव-सिन्धु-तरण में,

कर्म-अकर्म-विकर्म-भेद-द्रष्टा संन्यासी!!

याज्ञवल्क्य शंकर के तुम अति भव्य संस्करण,
आप्तकाम तुम, सोम-पान से तृप्त शची-पति,
आत्मक्रीड, व्यापार तुम्हारा मात्र आत्म-रति,
देश-देश के, दिशा-दिशा के तुम आकर्षण ।।

तुम समर्थ हो स्वर्ण-पात्र के अनावरण में,
प्रकृति-नृत्य निःशेष तुम्हारे सम्मुख यतिवर,
मधु-विद्या-निष्णात, तुम्हारी कीर्ति अनश्वर,
समदर्शी शीतातप, सुख-दुःख, जन्म-मरण में ।।

यह व्यक्तित्व तुम्हारा बहुआयामी अप्रतिम,
ईसा और तथागत की करुणा के निर्झर,
किन्तु साथ ही अनुद्विग्न मन, अविचल प्रस्तर,
निरासक्त से ही मिलता है स्नेह अकृत्रिम ।।

चरण-स्पर्श तुम्हारा तीर्थाटन से पावन,
तुमको देखा, तन-मन के सब कलुष धुल गये,
आज अयाचित ही शत-शत वरदान मिल गये,
हुए अवतरित नयनों के सम्मुख 'नारायण।'
मेरा अभिनन्दन लो...!

***

चिदानन्द-हृदया

- श्री ए. के. सिन्हा -

हम सबके अति प्रिय चिदानन्द जी से मिलने से पूर्व, तीस-वर्षीय आयु में ही जो जीवन्मुक्त होने हेतु संसार-त्याग कर रहा हो, इस प्रकार के किसी भी युवक से मैं परिचित नहीं था। यह सामान्यतया सहज ही देखने में नहीं आता कि श्रीमंत माता-पिता द्वारा संवर्धित तथा ईसाई महाविद्यालय में शिक्षित एक युवक स्नातक, विवाह कर गृहस्थाश्रम में स्थिर होने की अपेक्षा यथार्थ रूप में संन्यासी बन रहा हो। **वे संन्यासी बने। उनके लिए एक श्वान तथा एक चण्डाल उतने ही प्रेम पात्र हैं जितने कि एक राजकुमार या पण्डित!** सामान्य नागरिक से घृणा प्राप्त करने वाला कुष्ठरोगी उनकी स्नेहपूर्ण सेवा पर अधिकार जताता है। **स्वामी चिदानन्द जी किसी भी कुष्ठरोगी के घावों को उतनी ही सतर्कता और सावधानीपूर्वक स्वच्छ करेंगे जितने ध्यान और चिन्तापूर्वक विश्व की सर्वोत्तम परिचारिका किसी सम्राट् की सेवा करेगी।** उनकी विनम्रता, तत्त्वमीमांसा के उनके द्वारा दिये गये उत्तरों के समान ही प्रियकर और आकर्षक है। **पटना रोटरी क्लब में, परम पूज्य गुरुदेव के रोटरी-सदस्यों को किये गये उद्बोधन पश्चात् विभिन्न वर्गसमुदाय के बुद्धिजीवियों द्वारा रखे गये प्रश्नों के उत्तर परम पूज्य गुरुदेव के आदेशानुसार स्वामी चिदानन्द जी द्वारा अति विस्मयजनक प्रांजलता से दिये गये। प्रश्नोत्तर के उस कार्यक्रम**

की कार्यवाही में प्रतिभागी उच्च न्यायालय के न्यायाधीशों तथा वकीलों को, उनके द्वारा दिये गये उत्तरों की तत्परता, सम्पन्नता और सिद्धता ने प्रभावित किया। सर्वत्र, उन्हें प्रेम प्राप्त होता है, इसमें कोई आश्चर्य नहीं। मैं उनके परिचय से स्वयं को धन्य मानता हूँ। प्रभु कृपा और आशीर्वाद उन पर हों। मानव-जाति की उन्नति के उनके कार्य हेतु, वर्तमान शरीर में वे शत वर्षों से भी अधिक आयुष्मान् हों।

सेवा-निवृत्त पुलिस इन्सपेक्टर जनरल
पटना

आवरण-मुक्ति

आत्म-साक्षात्कार का अर्थ उस प्रभु के साक्षात्कार से है, जो आपके वास्तविक स्वरूप, आपके अपने निज स्वरूप के रूप में आपकी हृदय गुहा में उद्भासित हो रहा है। यह आपकी शाश्वत दिव्य पहचान है जो इस अस्थाई, क्षण-भंगुर और परिवर्तनशील मानवीय पहचान से परे है, क्योंकि यह मानवीय स्वरूप तो व्यावहारिक सत्ता मात्र है जो केवल प्रतिभासित हो रहा है। आपकी वास्तविक पहचान इस अस्थाई स्वरूप के नीचे छिप कर रह गयी है। किन्तु आपकी वास्तविक पहचान के ऊपर यह अस्थाई स्वरूप का आवरण किसी भी रूप में क्यों न विद्यमान हो, इसे धीरे-धीरे एक तरफ हटाना ही पड़ेगा, इसका बहिष्कार करके इसके अतीत में जाना ही होगा।

-स्वामी चिदानन्द

मैं

पुष्पांजलि देना चाहता हूँ। मैं, अब गुरुमहाराज स्वामी शिवानन्द जी और स्वामी वेंकटेशानन्द जी द्वारा, स्वामी चिदानन्द जी महाराज विषयक कहे गये शब्दों को यहाँ उद्धृत करता हूँ।

गुरुमहाराज कहते हैं, "स्वामी चिदानन्द जी, मिशन के कोहनूर हैं। आप सबको उनके साथ अपने गुरु के अनुरूप व्यवहार करना चाहिए। वास्तव में, मैं भी उन्हें अपने गुरु समान सम्मान देता हूँ। मैंने उनसे अगणित पाठ सीखे हैं। वे मुझे प्रिय प हैं। मैं उनको पूजनीय समझता हूँ। उनका ज्ञान बृहत है। उनका विवेक यथार्थ में अन्तः-प्रेरित और स्वानुभूत है। उनका सुस्वभाव अनुपम है। उनका हृदय अति विशाल तथा उनकी करुणा अद्वितीय है। आप सबको उनसे शिक्षा प्राप्त करनी चाहिए, तब ही आपमें सुधार हो कर आपका विकास और ऊर्ध्वीकरण होगा।"

स्वामी वेंकटेशानन्द जी, स्वामी चिदानन्द जी विषयक स्व-लिखित संक्षिप्त जीवन रेखाचित्र में लिखते हैं, "**अलौकिक तथा प्रतिभाशाली आभापूर्ण रंग बिखेरने वाले विशुद्ध तथा पावन प्रिज़्म, आज हमारे गुरुदेव श्री स्वामी शिवानन्द जी के रूप में दीप्तिमान् परमात्मा, श्री स्वामी चिदानन्द जी महाराज के दिव्य चरणयुगल में कोटि-कोटि प्रणाम। उनके पवित्र चरणकमलों की रज, हम सबको विमल करके हमारी रक्षा करे।**"

वर्ष १९५० में गुरुदेव की अखिल भारत-यात्रा के दौरान त्रिप्लीकेन, मद्रास में, दिनांक १ अक्तूबर को गुरुदेव के दर्शन करने के पश्चात् मैं बस की प्रतीक्षा कर रहा था। स्वामी चिदानन्द जी उस मार्ग से जा रहे थे। उस समय स्वामी वेंकटेशानन्द जी ने मेरा उनसे परिचय कराया। हमारा वार्तालाप कुछ ही क्षणों का था, तथापि स्वामी जी के चुम्बकीय व्यक्तित्व और सरलता के कारण मैं उनकी ओर अत्यन्त आकर्षित हुआ। **वर्ष १९५३ के अप्रैल माह में पार्लियामेन्ट ऑफ रीलिजियन्स की अवधि में मैं आश्रम में था, तब स्वामी चिदानन्द जी को कुष्ठरोगियों की बस्ती के रोगियों की सेवा करते और हर एक कुष्ठरोगी को प्रणाम सहित वस्त्र वितरित करते देख मैं चकित हो गया।**

मैं मानता हूँ कि गुरुमहाराज ने 'अठारह ईटीज़' - Eighteen Ities की गीत-रचना करते समय स्वामी चिदानन्द जी का आदर्श स्व-सम्मुख रखा होगा।

परम कृपालु प्रभु आनन्द-कुटीर के इस कोहनूर को अत्यन्त दीप्तियुक्त रखें तथा समस्त संसार को प्रबुद्ध करने हेतु, स्वास्थ्य तथा दीर्घायुष्य प्रदान करें।

सभी वस्तुओं और व्यक्तियों में भलाई ही देखने की दुर्लभ प्रवृत्ति का स्वामी शिवानन्द जी में अति-आश्चर्यजनक मात्रा में विकास हो चुका है। उनमें दूसरों में त्रुटियों और दोषों का देखने की प्रवृत्ति लेशमात्र भी नहीं है। कई बार ऐसा हुआ कि कई ऐसे व्यक्ति प्रायः उनके पास आते रहते और कार्य करते जिनमें विभिन्न प्रकार की कई कमजोरियाँ होतीं और वे वस्तुतः कई रूपों में अशोधनीय थे। यदि उनमें एक गुण भी लेशमात्र दिखायी दे जाता, तो उन पर अपना वरदहस्त रखते और उनकी समस्त कुटिलताओं की ओर से आँखें मूंद लेते।

-स्वामी चिदानन्द

– श्री लेडी फ्लोरेन्स द रेन्डाल, यू. एस. ए.—

यह युवा-रत्न, स्वामी चिदानन्द, विश्व-भर के युवा-वर्ग को, एक श्रेष्ठ उदात्त बरदान है। उनसे मैं विस्मयपूर्ण तथ्य सीख पायी हूँ। इस प्रतिभा सम्पन्न युवक को सम्मानपूर्वक मेरे श्रद्धा-सुमन! मैंने उनके विचार कुछ सिद्धों तथा चिन्तकों को प्रदर्शित किये हैं।

स्वामी चिदानन्द से अधिक महान् कोई भी व्यक्ति हो नहीं सकता, जिसे श्री स्वामी शिवानन्द जी का मिशन न्यस्त किया जाये। मैं बहुत से अन्य महान् व्यक्तियों को मिली हूँ तथा उनकी ज्ञानपूर्ण पुस्तकें मैंने पढ़ी हैं। किसी में भी इतनी युवा उम्र में, आध्यात्मिक क्षेत्र में परब्रह्म विषयक इतनी परिपक्व प्रतिभा सम्पन्नता तथा गहरी पहुँच कदाचित् ही देखने को मिलती है।

श्री स्वामी शिवानन्द जी की पुस्तकें तथा उनके कार्य में सहायक उनके पटु, समर्थ और पथदर्शक आध्यात्मिक शिष्य मेरे लिए आश्चर्य का अनवरत स्रोत है।

परोपकारी और सेवाभावी बनें!

अपने दैनिक जीवन और नित्य-प्रति के कार्य-कलापों में परोपकार तथा सेवा के नियम और आदर्श को सर्वोपरि स्थान दें। प्रत्येक परिवार के सदस्य इस उत्कृष्ट भावना को आत्मसात् करें और इससे प्रेरित हों। इस प्रकार परिवार के अन्य सभी सदस्यों की सेवा करते हुए और उन्हें हर्ष प्रदान करते हुए जीवन व्यतीत करें। अब पारिवारिक क्षेत्र में जीवन एक नवीन और उत्कृष्ट स्तर की ऊँचाइयों तक उन्नयन कर जायेगा।

आपका व्यावसायिक जीवन एक यज्ञ बन जाना चाहिए। व्यावसायिक कार्य परोपकार की भावना पर आधारित होने चाहिए। व्यावसायिक जीवन का आय-अर्जन पक्ष गौण है, प्रमुख नहीं। यह पक्ष यज्ञ, सेवा और परोपकार के आधारभूत आदर्शों के अधीन रहना चाहिए, अन्यथा मानव मानव नहीं है। वह मानव के रूप में एक पशु ही है, भेड़ की खाल पहने हुए भेड़िया है।

-स्वामी चिदानन्द

देह से प्रस्फुटित दिव्यत्व

- श्री डॉ. इशर सिंह. एम. बी. बी. एस., देहरादून -

एक गौरवर्णीय सुसज्जित मोहक युवती मेरे चिकित्सालय में परामर्श हेतु आयी। "मेरा नाम कुमारी माया है तथा मैं आपकी मदद चाहती हूँ"- स्व-परिचय देते हुए उसने कहा। "हाँ, माता जी, मैं आपके लिए क्या कर सकता हूँ" मैंने उत्तर दिया।

वह गहन व्यथा में डूबी सी दिखती थीं। धीरे-धीरे उसने कहना प्रारम्भ किया, "व्यवसाय से मैं जादूगरनी हूँ। मैं अति समृद्ध हूँ। अपनी सांसारिक समस्याओं के विषय में मैं सदैव चिन्तित हूँ। मैं मोह, क्रोध, लोभ, तृष्णा, घमण्ड तथा मिथ्यात्व में गहनता से उलझ गयी हूँ। मैं अति समर्थ हूँ फिर भी, बुद्धिवादी और विश्लेषणात्मक होते हुए भी मैं अगणित अतृप्त कामनाओं, अगणित भय तथा आशंकाओं से आपूरित हूँ। मेरा मन सदा व्यग्र रहता है और मैं दुःखी हूँ। मुझे किस प्रकार शान्ति और परमानन्द की प्राप्ति हो सकेगी? कृपया, मेरी अवश्य सहायता कीजिए!" -उसने रोते-रोते कहा।

"ठीक है, कृपया, कल अपराह्न में ४-०० बजे ऋषिकेश पहुँचना," मैंने उत्तर दिया। वह सहमत हुई। अगले दिन मैं उसे ऋषिकेश में बस स्टैन्ड पर मिला और हम शिवानन्द आश्रम की ओर पैदल चले।

"ऋषिकेश सन्तों से भरा हुआ है" - मैंने टिप्पणी की।

"सन्तों से? कितनी अर्थहीन बात! कलियुग में सन्त है ही नहीं," कठोरता से उसने उत्तर दिया।

"क्या आप जानती हैं कि यथार्थ सन्त किसे कहते है?" मैंने पूछा।

"स्पष्ट रूप से नहीं। कृपया, मुझे बताइए ताकि यदि मैं किसी सन्त से मिलूँ तो उन्हें पहचान सकूँ" -उसने उत्तर दिया।

"ध्यान से सुनना, माता जी, गुरु नानकदेव जी ने सन्त विषयक जो कहा है, वह मैं आपको कहूँगा। वे ही सन्त हैं-

"१. जिन्होंने प्रभु-कृपा से सन्तों का संग किया है, जिन्हें सद्गुरु प्राप्त हुए हैं तथा जिन्होंने श्रद्धापूर्वक स्वयं को उनके चरणों में आत्म-समर्पित किया है, उनसे गुरु-मन्त्र प्राप्त किया है; पश्चात् जो उनकी आज्ञा का पालन करते हैं और परम प्रेमपूर्वक प्रार्थना, गुरु-पूजा, गुरु-सेवा और कीर्तन करते हैं।

"२. ईश्वर-कृपा से जिनके मोह, क्रोध, वासना, लोभ, मद रूप मल की माया दूर हुई हो, जिन्होंने संसार के मिथ्यात्व को जान लिया हो, वैराग्य रूप माला धारणा की हो, जिनमें सत्य, ब्रह्मचर्य, सौम्यता और अनुकम्पा हो, जो 'ईश्वरेच्छा बलियसि' मान कर विनम्रता और सत्य से जीवन व्यतीत करते हों।

"३. ईश्वर-कृपा से जिनमें वास्तविक ज्ञान और आत्म-विचार हों।

"४. प्रभु-कृपा से जिन पर 'नाम-खुमारी चढ़ी रहती हो' तथा जो ध्यान, समाधि और दिव्य आनन्द में लीन रहते हों और सदा निर्भय हों।

"५. जो प्रभु-कृपा से माया से अलिप्त हों और सचराचर में केवल ईश्वर का ही दर्शन करते हों।"

वह प्रत्येक शब्द ध्यानपूर्वक सुनती थी तथा ऐसा प्रतीत होता था कि मेरा हर एक शब्द वह याद कर रही थी। कुछ देर के पश्चात् उसने कहा, "इन सबकी प्राप्ति तो अति दुष्कर है। वास्तव में यह लौकिक अस्तित्व की समाप्ति है। यदि इस प्रकार का कोई वीर होगा भी, तो मेरी उससे भेंट होनी अभी बाकी है।" दीर्घ काल पैदल चलने से हम थोड़े श्रान्त हुए थे किन्तु शीघ्र ही हम एक कुटिया पर पहुँचे, जिसका द्वार बन्द था। कुटिया के समीप नीचे ही हम बैठे। "यहाँ कौन रहते हैं?" उसने मुझे पूछा।

"कहते हैं कि स्वामी चिदानन्द यहाँ रहते हैं," मैंने उत्तर दिया। स्वामी जी नमस्कार की मुद्रा में हाथ जोड़ कर आये और हमें साष्टांग दण्डवत् कर हमारे चरणस्पर्श किये। पश्चात्, स्मित बिखेरते हुए उन्होंने कहा, "बड़े हर्ष की बात है कि आपने मुझे दर्शन दिये।" वे अपने छोटे से कमरे में हमें ले गये।

जीवन में इससे पूर्व ऐसा अनुभव न हुआ हो, ऐसी स्वामी जी की असीम नम्रता, परमानन्द अवस्था, शान्ति तथा स्नेह से कुमारी माया प्रभावित हुई। "ये ऊँचे, पतले व्यक्ति कैसे परमानन्द में डूबे हैं," कुमारी माया ने कहा।

"आप यहाँ, हिमालय में कैसे आये?" कुमारी माया ने पूछा।

"मेरा जन्म ३८ वर्ष पूर्व दक्षिण भारत के एक धनाढ्य परिवार में हुआ। प्रभु कृपा से मुझे सन्तों का संग मिलता रहा, वैराग्य हुआ और ऋषिकेश में मेरे सद्गुरु स्वामी शिवानन्द जी महाराज के मिलन हेतु मैंने गुप्त रूप से गृहत्याग किया। मैं श्रद्धापूर्वक उनके चरणकमलों पूर्णतया शरणागत हुआ और अब परम प्रेम सहित में मैं दासत्वभाव से प्रार्थना, गुरु-पूजा, गुरु-सेवा और कीर्तन करता हूँ," स्वामी जी ने उत्तर दिया। कुमारी माया यह सुन कर आश्चर्यचकित हो गयी। यह सच्चे सन्त के लक्षणों का प्रथम लक्षण था। उनकी जिज्ञासा बढ़ी।

"आपने कब विवाह किया और आपकी कितनी सन्तानें हैं?" कुमारी माया ने प्रश्न किया।

स्वामी जी मुस्कराये और प्रत्युत्तर दिया, "मैंने विवाह का विचार कदापि नहीं किया और इस कारण सन्तानों का प्रश्न नहीं उठता।"

कुमारी माया को विस्मय हुआ और आश्चर्य से बह बोल पड़ी, "सचमुच कलियुग में आप जैसे सन्त दुर्लभ हैं जो वैराग्य और ब्रह्मचर्य के मूर्त रूप हों।"

कुमारी माया ने कमरे में चारों ओर दृष्टिपात किया। कमरे में फर्निचर, चारपाइयाँ, वस्त्रों के लिए सूटकेस, रेडियो, ग्रामोफोन, इलेक्ट्रिक हीटर अथवा इलेक्ट्रिक इस्त्री, ड्रेसिंग टेबल अथवा डाइनिंग टेबल कुछ भी नहीं था। वह केवल सन्तों और पैगम्बरों की तस्वीरें, अगणित पुस्तकें और एक कोने में रखे हुए थोड़े रसोई के बर्तन देख सकी। कुमारी माया को इस प्रकार के घर को देख अति विस्मय हुआ।' "यह घर है कि लायब्रेरी?" वह धीरे से बोली। स्वामी जी ने कहा, "मैं कहीं भी रह सकता हूँ। अपने इस निवास से मैं सन्तुष्ट हूँ। यह भी मेरे लिए आवश्यकता से अधिक ही है।"

कुमारी माया गहरे सोच में डूब गयी। फिर उसने पूछा, "स्वामी जी, आपके कोई रिश्तेदार नहीं हैं और यदि इस एकान्त स्थान में आप बीमार हो गये तो आप क्या करोगे? और आपको भोजन-वस्त्र कैसे मिल जाते हैं?" स्वामी जी हँस पड़े और उन्होंने प्रत्युत्तर दिया, "माता जी भगवान् मेरी देखभाल करते हैं। उनके योगक्षेम से मुझे जो चाहिए, वह मिल जाता है।" कुमारी माया आश्चर्य से भौंचक्की रह गयी। कैसे व्यक्ति है ये? इन्हें न चिन्ता है, न भय। यथार्थ सन्त होने का यह एक और लक्षण।

इस समयावधि में उन्होंने सन्त विषयक स्व-विचारों का संशोधन प्रारम्भ कर दिया था। स्वामी जी उनकी मनःस्थित जान गये और उन्होंने हँसते हुए टिप्पणी की, "माता जी, यह संसार माया का एक खेल है। वह बहुत ही चमक-दमक युक्त तथा चालबाज है। भौतिक सम्पत्ति, सांसारिक विचार-चक्र, अहं, मोह, काम, क्रोध, लोभ, मद और झूठ, अतृप्त तृष्णाएँ, आशंकाएँ, सांसारिक ज्ञान यहाँ हैं और उनके फलस्वरूप भय, चिन्ताएँ और पीड़ा होती हैं, और

मानव आवागमन के चक्र में उलझा रहता है। केवल ईश्वर-कृपा से प्राप्त दिव्य जीवन ही परमानन्द और शान्ति दे सकता है। अपने निज स्वरूप-आत्मा में ही सदैव स्थित रहो।"

कुमारी माया को और भी आश्चर्य हुआ उसके एक भी प्रश्न बिना पूछे ही स्वामी जी उनके मन की सब बातें जान गये। इतने कम शब्दों में कितना दुर्लभ आत्म-विचार उन्होंने समझाया।

अचानक ही स्वामी जी ने हमारे आतिथ्य सत्कार में विलम्ब होने के कारण क्षमा माँगी। हाँ, किन्तु यह उनका दोष नहीं था। कुमारी माया द्वारा पुनः पुनः पूछे गये प्रश्नों के कारण ही यह विलम्ब हुआ था। वे शीघ्र ही थोड़ा दूध तथा फल ले कर आये और हमारे सम्मुख रख कर, उनके उपभोग के लिए हमें प्रार्थना की। हमारा साथ देने हेतु हमारी विनती को स्वामी जी ने मेरे थोड़े आग्रह के पश्चात् ही स्वीकार किया। उनका समग्र जीवन सेवार्थ ही है। कुछ जप, ध्यान और समाधि के पश्चात् उन्होंने अल्पाहार लिया। कुमारी माया स्वतः ही कुछ बोलने लगी। "कैसे व्यक्ति हैं ये! इतने एकान्त स्थान पर रहते हैं तथापि उन्हें इतने सुन्दर फल प्राप्त होते हैं तथा वे सदैव ईश्वर-चिन्तन करते हैं।" हम धीरे-धीरे फलों का उपभोग करते थे। सहसा, एक बन्दर भीतर आया और कुमारी माया के हाथ से नारंगी झपटने का प्रयास करने लगा। वे भयभीत और क्रोधित हुई; किन्तु स्वामी जी निर्भय, शान्त और करुणा के सागर थे। उन्होंने मुट्ठी भर फल लिये और बन्दर को दिये, जिन्हें बन्दर ने आनन्द से ग्रहण किया। फिर स्वामी जी ने द्वार बन्द किये। कुमारी माया का हृदय भय से अभी भी धड़क रहा था। कैसा स्थान है! उन्होंने स्वामी जी की शान्त और प्रसन्न मुद्रा देखी और मनः सन्तुलन पाया तथा फल खाने लगी।

कुमारी माया अब एक परिवर्तित स्त्री थी। वह स्वामी जी के दर्शन से इतनी अभिभूत हुई कि प्रेमाश्रु सहित उन्होंने सब बहुमूल्य आभूषण स्वामी जी के चरणों में रखे, कारण अर्पण करने हेतु हमारे पास अन्य कुछ नहीं था। स्वामी जी ने कहा, "वे (आभूषण) आपको विभूषित करते हैं, मैं उनका क्या करूँ? मेरे लिए वे मिट्टी के समान हैं।" मेरे पास ईश्वरनाम स्मरण का बड़ा खजाना है। पश्चात् उन्होंने अपने हाथ जोड़े तथा उनकी वापसी के लिए प्रार्थना की। **कुमारी माया स्वामी जी की सराहना में पूर्णतया डूब गयी और उसने अनुभव किया कि स्वामी जी मूर्तिमंत ईश्वर का अवतार हैं जो विचरण कर रहे हैं।** उसकी सब शंकाएँ नष्ट हुई। वह देख सकी कि **स्वामी जी आप्तकाम हैं और माया से परे केवल सत् स्वरूप ही हैं। उसने परमानन्द की झलक की अनुभूति की** और जैसे ही मैंने उसे अपनी वापसी के प्रति सचेत किया, वह एकाएक रुदन में फूट पड़ी। उसने स्वामी जी के चरणकमलों में साष्टांग प्रणाम किये तथा निज अश्रुओं से उनका प्रक्षालन किया, चरणस्पर्श किया और इस धरा पर ईश्वर द्वारा निज स्वरूप के हमें इहलोक में ही दर्शन कराने के लिए ईश्वर के आभार प्रकट किये। प्रेमाश्रु से हमारा कण्ठ अवरुद्ध हुआ तथा विदाई लेनी भी भूल गये एवं बस स्टैन्ड की ओर शीघ्रता से चल पड़े। वे हम सब पर दया करें और पुनः दर्शन देते रहें।

गुरुदेव स्वामी शिवानन्द जी महाराज में सार्वभौमिक शक्ति एवं प्रेम की धारा ही उनके क्रिया-कलापों में बह रही है। उनका जीवन शिशुवत् विनम्रता से परिपूर्ण है जिसे साधारण दर्शक समझने में असमर्थ हैं। अद्वितीय सरलता, पूर्ण निष्कपटता, पूर्ण निस्स्वार्थता और अनासक्ति-ये सब अन्तर्चेतना से प्रस्फुटित हुए हैं।

-स्वामी चिदानन्द

मिशन के अन्तर्यामिन्

-श्री ज्ञान-भास्कर, दिवान बहादुर के. एस. रामस्वामी शास्त्री, बी. ए. वी. एल., मद्रास-

परम पूज्य स्वामी चिदानन्द जी, जिनमें अनेक दुर्लभ जन्मजात गुणों की अक्षय-निधि निहित है। उनका हमारे दर्शनशास्त्र में सम्पूर्ण प्रभुत्व है। वे ओजस्वी और विशद प्रतिभासम्पन्न हैं। वैसे ही वे अत्यन्त सुमधुर स्वभावयुक्त पवित्र आत्मा हैं। सामान्यतया वे शान्त तथा मौन हैं, किन्तु वे अपने गुरु श्री स्वामी शिवानन्द में अपनी श्रद्धा अभिव्यक्त करने हेतु एवं हमारे दर्शनशास्त्र की जटिल समस्याएँ प्रतिपादित करने हेतु अन्तःप्रेरित होते हैं, तदा उनके मुख से वेगवान् झरने सदृश, शब्द प्रवाहित होते हैं।

वे दिव्य जीवन संघ के अन्तर्यामिन् हैं; केवल इस कारण नहीं कि वे महासचिव हैं किन्तु इस कारण भी कि अनेक वर्षों पर्यन्त उन्होंने इसकी गतिविधियों का आयोजन किया है तथा इसके विकास हेतु मार्गदर्शन दिया है। दिव्य जीवन संघ के स्थापक और परमाध्यक्ष, आनन्द-कुटीर के संत परम पूज्य गुरुदेव स्वामी शिवानन्द जी उनके उत्कृष्ट गुणों से अभिज्ञ हैं तथा स्वामी चिदानन्द में उन्हें सम्पूर्ण विश्वास है। प्रतिवर्ष वे दिव्य जीवन का वार्षिक विवरण प्रस्तुत करते हैं और उस विवरण की विषयवस्तु तथा शैली की परिपूर्णता के कारण उनका श्रवण या पठन सदा ही सुखद और प्रेरक होता है।

स्वामी चिदानन्द को प्रायः इसकी प्रतीति होती है और वे कहते हैं कि दिव्य जीवन संघ का कार्य बृहत् रूप से विस्तृत हो रहा है। यह एक चमत्कार है कि जब आनन्द-कुटीर के संत-सेवकगण वित्तीय परिस्थिति के कारण निराशा का अनुभव करते हैं तब किस प्रकार, चमत्कारिक रीति से धनवर्षा होती है। वर्ष १९४९ में अपने विवरण में स्वामी चिदानन्द ने लिखा: "स्वामी शिवानन्द जी के मानवों के हृदयों पर्यन्त पहुँचने के तथा समय-समय पर उन्हें निर्मल और अन्तशुद्ध करने के प्रयास निस्सीम रहे हैं। दिव्य जीवन संघ निज को खतरनाक ढंग से आर्थिक भँवर तथा जलावर्तों में उलझा हुआ देखता है और कोई भी चकित होता है कि वह उनसे किस प्रकार बच निकलता है तथा जलावर्तों पर से निज को ऊपर उठा देखता है। आनन्द-कुटीर का यह महानतम और सबसे अनजान चमत्कार है। यह, सदैव प्रस्तुत ईश्वरीय अनुग्रह जो कि सन्तों में श्रेष्ठ और उदात्त, स्वामी शिवानन्द जी महाराज पर निरन्तर बरसता रहता है, उसका भी प्रमाण है।

इस वर्ष (१९५४) में प्रकाशित स्वामी शिवानन्द के, 'ब्रह्म-विद्या-विलास' में, स्वामी चिदानन्द कहते हैं, "सभी लोग मानते हैं कि स्वामी शिवानन्द अति समृद्ध स्वामी हैं-सत्य यह है कि स्वामी जी का हृदय अति समृद्ध है- यथोचित समय पर स्वर्ग से कुछ बरसता है।"

इस प्रकार के चमत्कार केवल यही प्रमाणित करते हैं कि परमात्मा की विधि-संहिता मानव की विधि- संहिता से उच्चतर है और जब मानव अपनी स्वार्थी इच्छाओं को त्याग देता है तथा ईश्वर से जुड़ता है, ईश्वर की सन्तानों का भला करता है, तब ईश्वर आवश्यक योगक्षेम इस प्रकार वहन करता है जो हमारे लिए रहस्यमय किन्तु उसके लिए पूर्वभासित है। मैं मानता हूँ कि इससे भी अधिक वास्तविक चमत्कार यह है कि मेधावी और आध्यात्मिक रुचियुक्त आध्यात्मिक विकास में

संवृद्ध विशाल मण्डली स्वामी शिवानन्द के आध्यात्मिक प्रभावशाली आकर्षण से निरन्तर खिंची आती है और उस मण्डली में अत्यन्त परिष्कृत और चयनित मनीषियों में से एक, स्वामी चिदानन्द हैं।

****

जिनके हृदय से दिव्यजीवन-ऊर्जा प्रवाहित होती है

-श्री योगी गौरी प्रसाद, निवृत्त न्यायाधीश, स्वर्गाश्रम -

शिवानन्द आश्रम के उत्तराधिकारी वर्ग में जिनका व्यक्तित्व अद्वितीय है, जिनके व्यक्तित्व का मूल्यांकन करना सरल नहीं है, जिनके प्रति अपनी विनम्र पुष्पांजलि अर्पित करने हेतु हम यहाँ इस सन्ध्या-बेला में एकत्रित हुए हैं। वह दिव्य जीवन संघ, ऋषिकेश के महासचिव तथा फारेस्ट यूनिवर्सिटी के उपकुलपति श्री स्वामी चिदानन्द जी महाराज हैं। उनका ही जन्मोत्सव मनाने हितार्थ आज हम यहाँ आये हैं।

आध्यात्मिक परिभाषा में मानव के दो जन्म माने जाते हैं। एक वह मानव-देह में जन्म लेता है तथा दूसरा जन्म, आध्यात्मिक जन्म है जो निज-स्वरूप प्राप्ति के लिए है। हमारे आदरणीय श्री स्वामी चिदानन्द जी महाराज-जो दिव्य जीवन संघ तथा शिवानन्द आश्रम के केन्द्र और हृदय-स्पन्दन हैं-के कदाचित् इस द्वितीय पुनर्जन्म को आज मनाने का सम्मान तथा विशेषाधिकार हमें उपलब्ध हुआ है।

यह अनवरत कार्यरत हृदय वास्तव में दिव्य जीवन की कार्य-शक्ति और दिव्य जीवन संघ के संस्थापक तथा संघ और उसकी बहुविध गतिविधियों के आधार, अपने गुरुदेव की चित्शक्ति स्पन्दित करता है। जो आनन्द कुटीर के जगद्गुरु, ऋषि और सन्त के ज्ञान, इच्छा-शक्ति तथा दिव्य गतिविधियों की कान्तिमय तेज किरणें बिखेर रहे हैं, उनका कोई किस प्रकार पर्याप्त रूप में शब्द-चित्रण, अंकन करने में समर्थ हो सकता है।

हमारे अति प्रिय व परम पावन युवा स्वामी चिदानन्द एक निष्ठावान् भक्त ही नहीं दैवी सम्पद युक्त ऋषि और द्रष्टा भी हैं, संन्यास-परम्परा के सर्वगुण सम्पन्न शुद्ध स्वरूप हैं जो अपने सदाचरण एवं दिव्य विचारों से सन्तमण्डल को महिमान्वित करते हैं। वे उन असाधारण व्यक्तियों में से एक हैं जो दिव्य जीवन संघ के आदर्श-सेवा, प्रेम, ध्यान और साक्षात्कार-के पालन हेतु गहन प्रयास कर रहे हैं। वे सच्चे प्रेमभाव तथा विशिष्ट नम्रतापूर्वक सबकी सेवा कर रहे हैं। इसमें वे प्रायः अपने शारीरिक स्वास्थ्य की देखभाल करना भूल जाते हैं अथवा उसकी उपेक्षा करते हैं।

जिसे भी उनके अन्तरंग सम्पर्क में आने का सौभाग्य प्राप्त हुआ है, 'प्रिज़्म' उपनाम से अपने गुरुदेव स्वामी शिवानन्द जी महाराज के जीवन तथा उपदेश विषयक उनकी एक दशक पूर्व लिखित पुस्तक 'Light Fountain' का बारीक अध्ययन करने का सुसंयोग मिला है, वह मानस-दर्शन करने में सक्षम हो सकेगा कि जब उन्होंने अपने गुरुदेव (एक सन्त और ऋषि) की दैनिक गतिविधियों का निरीक्षण करने का तथा उनके चैतन्य की उच्चतम अवस्था का यथार्थ रूप में

अर्थघटन किया है तब वे कितने नैतिक, आध्यात्मिक उच्चतम और सूक्ष्म स्तर पर विहार कर रहे थे। कितनी लगन से अपनी विश्लेषणात्मक बुद्धि से अपने गुरुदेव की गतिविधियों के छोटे गूढ़ कोनों पर तात्त्विक विश्लेषण का उज्ज्वल प्रकाश डाल सके और सच्चे नैतिक तथा आध्यात्मिक दृष्टिकोण प्रदर्शित कर सके; यह सत्य स्पष्ट रूप में प्रकट करता है कि अन्य कोई नहीं परन्तु उनमें उभरते हुए ऋषि और सन्त ही इस प्रकार की सुन्दरता और सुगमता से यह दर्शन करा सकते हैं।

मैं इस प्रकार के दृष्टान्त रूप और पावन व्यक्ति का नम्र अभिवादन तथा श्रद्धापूर्वक नमन करता हूँ। सर्वशक्तिमान् प्रभु, हमारे आदरणीय श्री स्वामी चिदानन्द जी महाराज की मानव जाति के प्रति उच्च आध्यात्मिक सेवा हेतु दीर्घायुष्य प्रदान करें। *

****

भगवान् हमारे हैं

- डा. श्रीमती अमरकौर, एम. बी. बी. एस., देहरादून-

भगवान् हमारे हैं।
शिवानन्द सतगुरु के।
चिदा बड़े प्यार हैं।।

भगवान् हमारे हैं।
शंकर भोले के ।
भगवान् हमारे हैं।

चिदा अख दे तारे हैं।।
इन सब सन्तन में।
चिदा सन्त न्यारे हैं।।

भगवान् हमारे हैं।
हम सब माताओं के
चिदा बेटे दुलारे हैं।।

ऋषिकेश, हिमालय के पुण्यशील मनीषी एवं सन्त श्री स्वामी शिवानन्द जी महाराज आधुनिक आध्यात्मिक जगत् में सर्वत्र विख्यात हैं। बीसवीं सदी के पिछले पचास वर्षों में वे अपने समय के उन जगद्गुरुओं में से एक हैं जिन्होंने संसार के अनेक देशों के लाखों लोगों के हृदयों में आध्यात्मिक जाग्रति उत्पन्न की। विश्व-भर के असंख्य जिज्ञासु इनके आभारी हैं। उनके लिए वे एक कृपालु शिक्षक, महान् सद्गुरु और अनुपम व करुणामय सन्त हैं।

श्री स्वामी शिवानन्द जी महाराज ने आध्यात्मिक प्रकाश प्रकाशित कर विभिन्न क्षेत्रों के लोगों को शान्ति तथा आनन्द प्रदान किया। इनका चित्ताकर्षक एवं देदीप्यमान व्यक्तित्व भद्रता, निस्स्वार्थता और सार्वभौमिक प्रेम से दीप्त है जिसके कारण ऋषिकेश के सन्निकट पावनी गंगा तट पर अवस्थित सुन्दर आध्यात्मिक कुटीर पर आधुनिक संसार की दशों दिशाओं से उत्कट जिज्ञासु और भक्त वैसे

'जीवेम शरदः शतम

- पं. पुण्डरीकाक्षाचार्य जी महाराज-

किसी भी महापुरुष के जीवन के सम्बन्ध में कुछ लिखने से पूर्व लेखक को उस महापुरुष के पूर्व-सम्पर्क में आना आवश्यक है और सम्पर्क सम्बन्ध भी अधिक समय तक का अवश्य होना चाहिए जिससे कि उन महापुरुष के जीवन-दर्शन की झाँकी का भली प्रकार परिचय हो और तथ्य को समझने का पूर्ण अवसर प्राप्त हुआ हो।

मैं जिनके सम्बन्ध में अपने इस छोटे-से लेख में कुछ पंक्तियाँ लिखना चाहता हूँ, उनका परिचय मुझ से श्रीधर राव नाम से उस समय हुआ, जब वे 'आनन्द- कुटीर' के परम सन्त, हिमालय की दिव्य विभूति, 'दिव्य जीवन संघ' के संस्थापक ब्रह्मलीन श्री स्वामी शिवानन्द जी महाराज के शिष्य के रूप में उन्हीं की आज्ञा से रोगियों को औषधि-दान के कार्य में रत रहते थे।

जिनकी 'षष्ट्यब्दपूर्ति' के अवसर पर यह 'अभिनन्दन-ग्रन्थ' प्रकाशित हो रहा है, वे ही श्रीधर नाम से मेरे परिचित हैं, जो कि आज १००८ श्री स्वामी चिदानन्द जी महाराज के नाम से आप सबके समक्ष विद्यमान हैं।

मैं 'दिव्य जीवन संघ' संस्था के निकट ही 'आदर्श श्री दर्शन महाविद्यालय' में पढ़ता था, अतः यथा-समय औषधि लेने के लिए आते-जाते रहने से अपने चरित्रनायक से उत्तरोत्तर घनिष्ठ सम्बन्ध होता ही गया, क्योंकि राव जी ने सहृदयता, उदारता, नम्रता, सरलता व सेवा-भाव आदि अपने अनन्त दिव्य गुणों से मेरे ही मन को अपनी ओर आकृष्ट किया हो, ऐसी बात नहीं, अपितु किसी भी कार्यवश अपने सम्पर्क में आने वाले सभी व्यक्तियों को अपने उक्त गुणों के कारण अपनी ओर आकृष्ट करने में वे सदा सक्षम रहे हैं। वही गुण उनमें आज भी पहले की अपेक्षा अधिक सक्षम व कार्यशील हैं।

राव जी के उक्त गुणों के ही कारण गुरुदेव श्री स्वामी शिवानन्द जी महाराज ने भी अपने हर कार्य में इनको अपना उत्तरोत्तर कार्य-भार सौंपना आरम्भ कर दिया। अपनी कार्य-कुशलता के कारण ही वह 'दिव्य जीवन संघ' के महासचिव पद पर आरूढ़ हो गये।

और फिर आपको गुरुदेव ने संन्यास-दीक्षा से दीक्षित कर दिया तथा 'चिदानन्द सरस्वती' नामकरण किया और क्रम यह रहा कि श्री गुरुदेव के ब्रह्मलीन होने के पश्चात् उनके योग्यतम शिष्य श्री चिदानन्द जी सरस्वती को आश्रम का पूर्ण उत्तराधिकारी निर्णीत कर लिया गया।

'**यथानामस्तथागुणः**' के अनुसार श्री स्वामी चिदानन्द जी महाराज आज विश्व-प्राणी की आत्मा हैं। इनके अन्दर अपार करुणा है, जिससे प्रेरित हो कर वह जीव मात्र की दुःख-निवृत्ति व सुख-प्राप्ति हेतु सतत प्रयत्नशील हैं।

परार्थबद्धदक्ष महापुरुष विरले ही होते हैं। ये महामहिम अपने शारीरिक तथा सांसारिक सुखों तथा उसकी परिधि से परे, अनन्त से अपना अन्तस्-सम्बन्ध स्थापित कर, देखने में बाह्य रूप से प्राणि मात्र की सेवा, उन्नति तथा मोक्ष का प्रयास करते हैं।

अतः मैं श्री स्वामी जी के इस 'षष्ट्यब्दपूर्ति महोत्सव' के प्रसंग पर स्वामी जी की दीर्घायु के लिए आनन्दकन्द मंगलमय भगवान् से प्रार्थना- 'पश्येम शरदः शतम्, जीवेम शरदः शतम्' करता हूँ।

-महन्त, श्री दर्शन महाविद्यालय
शिवानन्दनगर, उत्तराखण्ड

शिवानन्द-हृदय-चिदानन्द

प्रिंसीपल श्री चमनलाल शर्मा, दिल्ली-

आज सभी की जिह्वा पर एक ही बात आती है कि 'स्वामी चिदानन्द जी पूर्णरूपेण गुरुदेव स्वामी शिवानन्द जी महाराज के ही रूप में हैं।' सत्य भी है, क्योंकि श्रीधर राव (स्वामी चिदानन्द जी) ने आश्रम पहुँचते ही उनके महान् व्यक्तित्व के एक-एक गुण को सूक्ष्म रूप से देखा और उस समय तक की गुरुदेव द्वारा लिखित सैकड़ों पुस्तकों का गहन स्वाध्याय किया। तभी तो वे एक ही वर्ष के अन्दर 'लाइट फाउन्टेन' जैसी गम्भीर तथा रोचक पुस्तक लिखने में सफल हो सके। उस पर गुरुदेव ने सहर्ष यह टिप्पणी की- '**शिवानन्द भले ही ब्रह्मलीन हो जायें, किन्तु यह पुस्तक अमर रहेगी।**' इतने से ही

श्रीधर जी सन्तुष्ट नहीं हुए। तभी से उन्होंने गुरुदेव के आदेशों-आदर्शों का अनुसरण प्रारम्भ कर दिया, जिसके फल-स्वरूप आजके स्वामी चिदानन्द जी में गुरुदेव का प्रतिरूप सहज ही दृष्टिगत होता है।

सन् १९५० की भारत यात्रा में भी जहाँ कार्यक्रम रहता, उस स्थान के समीप के जिज्ञासुओं की पिपासा शान्त करने यदि गुरुदेव स्वयं पहुँच पाने में असमर्थ रहते, तो स्वामी चिदानन्द जी वहाँ पहुँच कर उनका प्रतिनिधित्व करते थे।

वास्तव में श्री स्वामी चिदानन्द जी पूज्य गुरुदेव के हृदय ही है। मैं उन्हें श्रद्धा के सुमन अर्पित करता हूँ।

****

आत्म-साक्षात्कार की सर्वोच्च अवस्था की प्राप्ति की अर्हता

यह नियम है कि हमें माँगना होगा, पाने के लिए प्रयास करना होगा, द्वार खटखटाना होगा। और, यह सब करने के पश्चात् इनको प्राप्त करने के लिए हमें अवश्यमेव उद्यत रहना चाहिए। यदि यह सब आप करते हैं, तब गुरु-कृपा के चमत्कार देखने को मिलते हैं। गुरु-कृपा हमारी ओर प्रवाहित होने लगती है और हमें असीमित आनन्द की ऊँचाइयों तक ले जाती है। अतः सर्वप्रथम हमें गुरु के साथ के समस्त मानवीय सम्बन्धों को भुला देना होगा। उसके लिए हमें आत्मनिष्ठ रूप में अपना आन्तरिक रूपान्तरण करना होगा। जब तक ऐसा नहीं होगा, उनकी दिव्यता हमारे लिए पूर्णतः उद्घाटित नहीं हो पायेगी। हमें अपने गुरु के मानव पक्ष की ओर बिलकुल ध्यान नहीं देना चाहिए और केवल उस दिव्यता के प्रति जागरूक रहना चाहिए जो वह हैं। केवल तभी हम उस कृपा को ग्रहण करने के योग्य होंगे, जो हमें निम्न मानवीय स्तर से ऊपर उठा कर लोकोत्तर सत्ता में रूपान्तरित कर देगी।

- स्वामी चिदानन्द

मोरे तुम प्रभु गुरु पितु माता ।
जाऊँ कहाँ तजि पद जल जाता ।।

(श्रीरामचरितमानस, उत्तरकाण्ड)

विश्ववन्दनीय सद्गुरु स्वामी शिवानन्द जी के आश्रम में अपने बालकपन से रहता रहा हूँ। यहाँ के शिवानन्द प्राइमरी स्कूल का मैं छात्र भी रहा। गुरुदेव अपने उपदेश जो भी गायन के रूप में सिखाते, मैं उसे भली प्रकार गा लिया करता था। जिस कारण गुरुदेव तो प्रसन्न होते ही थे; परम पूज्य स्वामी चिदानन्द जी की भी मुझ पर बड़ी कृपा रहती। सीखे हुए भजनों को कण्ठस्थ करके सुनाने पर स्वामी जी हर्षित हो मुझे प्रोत्साहित करते रहते। उन्हीं की अहैतुकी कृपा का परिणाम है कि एक कुशल संगीतज्ञ के रूप में मेरा सम्पूर्ण जीवन-निर्वहन हो पाया। प्रारम्भ से ही स्वामी जी के प्रति मेरा मातृभाव प्रबल रहा। अन्तर्यामी गुरुमहाराज स्वामी जी भी मेरे इस भाव को गहराई से लेते हैं। वे मेरे भजन बड़े चाव से यदा-कदा सुन कर मझे आशीर्वादित करते रहते हैं।

परम पूज्य स्वामी जी महाराज के जन्मोत्सव पर आज २४ सितम्बर को एक घटना बार-बार मेरे स्मृति-पटल पर आ रही है। बात पुरानी है। मैं छोटा बालक था। नेत्र-ज्योति तो शुरू से मन्द थी ही। फिर भी संध्या-समय अन्य बालक साथियों के साथ बिल्वपत्र संचयन करना मुझे बहुत पसन्द था। एक शाम मैं पेड़ पर चढ़ कर बेलपत्ते तोड़ रहा था कि अचानक मेरी दृष्टि सामने एक ऊँची डाल पर पहुँच गयी। उचक कर मैंने डाल को पकड़ ही लिया, पत्ते तोड़ रहा था कि पिछली डाल से पैर खिसक गये और मैं धड़ाम से नीचे गिर गया। बेहोश हो गया। (होश आने पर मुझे जो सब बताया गया अब मैं वह सब आपके समक्ष प्रस्तुत कर रहा हूँ) बालक चारों ओर इकट्ठे हो गये। मुझे होश नहीं आ रहा था। पूज्य स्वामी जी को सूचित किया गया। सुनते ही अपना कमरा बिना बन्द किये घटनास्थल पर दौड़ कर पहुँच गये। मुझे गोदी में उठा कर भजन हाल के साइड वाले कमरे में, जो 'शिवानन्द पिलर' की ओर है, ले गये। वहाँ बैठ कर मेरे शरीर के प्रत्येक अंग पर हाथ फिराते हुए टटोल कर जाँच की कि चोट कहाँ-कहाँ लगी। घावों की मरहम-पट्टी कर दी गयी। बेहोशी उनके लिए चिन्ता का कारण था। कानों में महामृत्युंजय मन्त्र का जाप कर रहे थे। सिर पर ममतामय हृदय से अपने हाथ फेरते रहे। कई घण्टों में होश आया। ऐसा बताया गया। आँखें खुलने पर मैंने देखा तो अवाक् रह गया। जैसे ममतामयी जननी-माँ अपने शिशु को अंक में लिटाये हुए हैं। स्वामी जी मेरी आँखें खुली देख कुछ आश्वस्त हुए। शरीर में कहीं भी पीड़ा का एहसास तो नहीं था, परन्तु पूर्ण स्वस्थ न होने के कारण सारी रात स्वामी जी इसी तरह मुझे गोदी में लिये बैठे रहे।

प्रभात समय गुरुदेव आये और प्रेमपूर्ण शब्दों में स्वामी जी से कहा- 'यह ठीक हो जायेगा। इसके शरीर को कोई हानि न होगी। अब निश्चिन्त हो कर नित्य-क्रिया से निवृत्त होने के लिए आप जा सकते हैं जी।' गुरुदेव ऐसा कह कर चले गये और पुनः आये एक अन्य स्वामी जी को ले कर मेरे पास बैठाने के लिए और फिर चले गये प्रातः ध्यान कक्षा संचालन हेतु। तदनन्तर पूज्य स्वामी जी महाराज आते-जाते निर्देशन दे गये उनको जो मेरी देखभाल के लिए आये थे, 'मन्त्र-जप जारी रहे, छोड़ना नहीं; चाय भेजूंगा, पिला देना।' परम पूज्य स्वामी जी महाराज ने अपने हाथ से बना कर चाय-दूध भेजा। मैं आज भी अभिभूत हूँ उनकी ममता, उनके वात्सल्य पर।

-शिव कुटीर, शिवानन्द आश्रम

ऐसे हैं स्वामी जी

- श्री योगेशचन्द्र बहुगुणा -

बाहर से देखें तो परम पूज्य स्वामी चिदानन्द जी अखण्ड कर्म-प्रवाह की पीड़ा को झेलते कर्मयोगी दिखायी देंगे, दूसरी ओर जरा अन्दर आ कर देखें, तो वहाँ भक्ति की निर्मल, शान्त अजस्र धारा बहती दिखायी देगी। प्रचलित अर्थों में उन्हें विद्वान् (कोरे शास्त्रों को जानने वाला) नहीं कहा जा सकता। कभी-कभी वह कहते भी हैं, "मैंने शास्त्र बहुत नहीं पढ़े हैं। अन्दर से जो भगवद् प्रेरणा होती है, वही मैं लोगों के सामने वाणी से प्रकट करता हूँ।"

जब सारी वासनाएँ क्षीण हो जाती हैं, तब एक करुणा की वासना जिलाए रखती है कि जो प्राप्त किया है,उसे करोड़ों-करोड़ों प्यासे प्राणियों तक पहुँचा दिया जाये। वेद का ऋषि आज्ञा देता है- "शत हस्त समाहर सहस्र संकिरः" अर्थात्-सौ हाथों से इकट्ठा करो और हजार हाथों से उसे बाँट डालो। इस अन्तिम अवस्था में वह जो भी कर्म करता है, वह करुणा-प्रेरित करता है। जब-जब स्वामी चिदानन्द जी के सान्निध्य में रहने का मौका मिला है, तब-तब इस करुणा से अन्तर्भूत चेतना का स्पर्श हुआ है। भगवान् ने 'माँ' के रूप में करुणा को सजीव व साकार रूप दिया है। माँ का बात्सल्य बच्चे की सेवा करता है। वात्सल्य लेने के लिए नहीं जीता। बस, देना ही जानता है। स्वामी जी के सान्निध्य में रहने पर भी माँ के आँचल लहराने की सुखद अनुभूति होती है।

अन्तःराष्ट्रीय भ्रमण द्वारा ज्ञान-यज्ञ से ले कर सामान्य गृहस्थ की समस्याएँ सुलझाने तक स्वामी जी के सेवा-क्षेत्र का विस्तार है। इसकी एक हृदयस्पर्शी घटना मैं कभी भूल नहीं पाऊँगा। दूर देहात से एक मुसलमान भाई अपनी लड़की की शादी की समस्या को ले कर स्वामी जी के पास आया था। पाँच-सात दिनों में बारात आने वाली थी। लगभग बीसेक मेहमान आने वाले थे, परन्तु उनके भोजन की व्यवस्था अभी तक न हो पायी थी। संयोगवश मैं भी वहाँ पर पहुँच गया। उन्होंने हर चीज के बाजार भाव की जानकारी मुझसे ली। वह भी मैं अन्दाज से ही बता पाया था। बीस आदमियों के भोजन और चीजों के बाजार भाव से एक सौ पैंतालीस रुपये के लगभग बनते थे। स्वामी जी ने इतनी रकम फौरन उस मुसलमान भाई के हाथ में थमा दी। लेकिन इतनी रकम से उस मुसलमान भाई का समाधान नहीं दीखता था। "थोड़ी-सी कमी और रह गयी है, स्वामी जी", उसकी तरफ से निवेदन था। स्वामी जी ने सहायक को पुकारा और बीस रुपये का नोट ले कर उस भाई को दे दिया। फिर एक लिफाफे पर अपने हाथ से पता लिख कर उस भाई को देते हुए कहा, "बाजार से जो सामान खरीदोगे, उसकी रसीद दुकानदार से ले लेना और इस लिफाफे में रख कर हमें भेज देना।" चेहरे पर रौनक विखेरता वह भाई चला गया।

जीवन-भर गृहस्थ-जीवन से विमुख रहने पर भी आश्रम और देश-दुनियाँ की गृहस्थियों से जुड़े, वीतराग होने पर भी सतत निष्काम सेवा-कायों में प्रवृत्त, ख्याति प्राप्त होने पर भी नम्रता की प्रतिमूर्ति, संन्यास के कठोर अनुशासन के बावजूद मातृ-हृदय, 'समं सर्वेषु भूतेषु' की दृष्टि-ऐसे हैं स्वामी जी! जिसने भी एक बार उनके व्यक्तित्व का स्पर्श पा लिया, वह सदा-सदा के लिए उनका हो जाता है।

श्री स्वामी जी की 'हीरक जयन्ती' पर मैं उनका हार्दिक अभिनन्दन करता हूँ। ..

****

ब्रह्मनिष्ठ श्री स्वामी चिदानन्द सरस्वती

- श्री सच्चिदानन्द मैठानी, आयुर्वेदाचार्य, शिवानन्दनगर -

भगवत्प्रेरित अनन्त-विभूति अध्यात्म-ज्योति श्रोत्रिय ब्रह्मनिष्ठ स्वनामधन्य श्री स्वामी चिदानन्द जी महाराज का दिव्य जन्म '**बहुजन हिताय बहुजन सुखाय लोकानुग्रहाय**' इस ईश्वरीय प्रेरणा-पूर्ति हेतु हुआ। ईश्वर-प्रदत्त पुरुष ब्रह्मनिष्ठ श्री स्वामी चिदानन्द जी का पवित्र सिद्धान्त अपने में पूर्णतः एवं सर्वतः भारतीय विद्या विहित एवं उपनिषद्, पुराण, धर्मशास्त्र आदि कलाओं से ओत-प्रोत है। उनकी विशुद्धात्मा भारतीय संस्कृति की पवित्र ज्ञान-गरिमा को अपनी ही ऋतम्भरा-प्रज्ञा में सन्निहित कर उसकी पावन-प्रभा को विश्व के विविध भूभागों में प्रकीर्ण कर रही है।

इस बीसवीं शती के महापुरुष श्री स्वामी चिदानन्द जी महाराज न केवल भारतीय आत्मा हैं, वरन् यह दिव्यात्मा आज अपने पूर्व पुण्यार्जित प्रभाव से विश्वात्मा बन गये हैं। सम्पूर्ण विश्व उनका अपना निवास है, विश्व के जन-मानस में एवं प्रत्येक प्राणी में उनका अपना प्राण है- '**सर्वभूत हिते रताः**' सेवा एवं श्रद्धा के स्वरूप में अपने दैविक-कर्मयोग के माध्यम से वे अखिल विश्व की आराधना कर रहे हैं, उनके पवित्र शरीर का कण-कण एवं दिव्य जीवन संघ का प्रतिक्षण इस धराधाम के प्राणियों की सेवा हेतु समर्पित है। दिव्यात्मा श्री स्वामी चिदानन्द जी महाराज का सिद्धान्त मानव को पवित्र कर्मयोग से आत्मानुभूति की ओर प्रेरित करता है-

न त्वहं कामये राज्यं न स्वर्गं न पुनर्भवम्।

कामये दुःखतप्तानां प्राणिनामार्ति नाशनम् ।।

'स्वर्गीय ऐश्वर्य, सुख-समृद्धि इस नश्वर शरीर को नहीं चाहिए, केवल दुःख, शोकादि ग्रसित प्राणि मात्र की सेवा करना मेरे जीवन का लक्ष्य है।'

इस भू-भारती में स्वनामधन्य श्री स्वामी चिदानन्द जी महाराज का लोक-कल्याण कार्य हजारों दलित-पतित वर्गों को अपनी अभिरामधाम छत्र-छाया में स्वान्तः सुखाय आश्रय प्रदान कर रहा है। रोगियों की रोगमुक्ति हेतु एवं मानव की सुख-समृद्धि के लिए उन्होंने अपने पुण्यमय जीवन में विशेष स्थान दिया है। भारतीय वेदान्त शास्त्र पर पूज्यपाद स्वामी जी महाराज ने अनेक उच्चकोटि के ग्रन्थ लिखे हैं। इन विशिष्ट ग्रन्थों के माध्यम से पाश्चात्य देश वासियों को, भारतीय संस्कृति के आदान-प्रदान में अभूतपूर्व सहायता मिली है।

विश्व की ख्याति प्राप्त आध्यात्मिक संस्था 'दिव्य जीवन संघ' के परमाध्यक्ष-पीठाधिपति के सर्वोच्च पद पर आसीन होने पर भी उन्हें उपरोक्त पद से किंचिदपि मोह-ममता तथा आसक्ति नहीं, '**पद्मपत्रमिवाम्भसा**' (गीता : ५-१०) अर्थात्-जल के अन्दर कमल-पत्र के रहने पर भी उसमें जल का प्रभाव नहीं पड़ता। धन्य है यह भारतवर्षीय तपोभूमि जिसमें पावन मनस्वी यशस्वी श्री स्वामी चिदानन्द जी महाराज का दिव्य जन्म हुआ! धन्य है यह गंगा-हिमालय की देवभूमि एवं ब्रह्मलीन गुरुदेव श्री स्वामी शिवानन्द जी महाराज की पावन तपोभूमि शिवानन्दनगर जहाँ इस मंगलमय पवित्र वेला में श्रोत्रिय ब्रह्मनिष्ठ श्री स्वामी चिदानन्द जी महाराज की कीर्तिमान् 'हीरक जयन्ती' उनके यशस्वी जीवन की 'षष्ट्यब्द- पूर्ति' में मनायी जा रही है। भारतीय आध्यात्मिक-संस्कृति के विकास के इतिहास में स्वनामधन्य दिव्यात्मा श्री स्वामी चिदानन्द जी महाराज की अमरगाथामयी हीरक जयन्ती सदैव स्मृतिगत रहेगी- 'वन्दे महापुरुष ते चरणारविन्दम्।'

****

जय हे, जय हे, जय हे!

-श्री सन्तशरण पाण्डेय-

चिदानन्दमय सद्‌गुरु शिव हे,
जय हे, जय हे, जय हे!

जटिल ग्रन्थि टूटे मानस की
नष्ट तिमिर प्रभु तुम मुस्काये,
मन्त्र दीप्त चैतन्य बोध से
दिव्यीकृत साधक स्वर पाये,

पुनः जागरण की बेला में
चिर प्रकाश के स्रोत अभय हे!

योग समन्वय के शिल्पी प्रभु
ज्ञान खड्ग आशा का कर ले,

छिन्न करो प्रभु मोहपाश को
कठिन पुरातन निर्मम प्रण ले,
मानव के आराध्य वन्द्य नित
जीवन के निर्मल निश्चय हे!

हे नटराज पिनाकी पशुपति
महाकाल भैरव हे आओ,
रुद्र रूप धर करो ध्वस्त दुःख
विप्लव भेरी वाद्य बजाओ,

गरल पान कर सुधा दान दो
युक्त वराभय योगीश्वर है!
शुभ्र ज्ञान युत शून्य मार्ग से
कुल-कुण्डलिनी का संचालन,

शक्तिपात से कर दो स्वामी
सहज सिद्ध प्रभु तव अनुशासन,
दिग्विजयी वेदान्त तुम्हारा
परम पिता प्रिय करुणामय हे!

***

स्वामी चिदानन्द और करुणा

- श्री एल. एन. आत्रेय -

करुणा ही कदाचित् सृष्टि का कारण है। उस रात! अचानक स्वप्न से जाग कर डा. कुप्पू स्वामी के मन में करुणा का सागर ही तो तरंगित हो उठा था। स्वप्न में ही तो किसी ने कहा था- 'मैं जानता हूँ, तू डॉक्टर है। कराहते रोगियों को हँसते-खेलते देखना तुझे अच्छा लगता है। परन्तु क्या तू उन्हें सुख दे पाया? क्या तूने उन्हें हँसते-खेलते देखा? इस सीमित चिकित्सीय जीवन को

छोड़, असीमित विश्व-चिकित्सक के जीवन में पदार्पण कर। तुझे वहाँ अक्षय सुख प्राप्त होगा। '**सर्वे भवन्तु सुखिनः**' का स्वप्न साकार होगा और तुझे शान्ति मिलेगी।'

और सारे ऐश्वर्य, वैभव को उसी क्षण छोड़ कर वह नगराज हिमालय की हरी-भरी घाटियों और धवल शिखरों की ओर चल पड़े थे, जहाँ उन्होंने भूतभावन भगवान् आशुतोष शंकर की तरह अनेक शारीरिक कष्टों का गरल पान कर संसार को आनन्द प्रदान किया और '**शिवकल्याणमस्तु**' की उक्ति को यथार्थ में चरितार्थ कर शिवानन्द कहलाये।

उन्हीं की कृपा से श्रीधर राव साक्षात् चिदानन्द हो गये। वैसे तो वैराग्य के बीज का रोपण नन्हें से श्रीधर राव के मन में उनके नाना के मित्र श्री अनन्तैया ने किया और मानव-सेवा के क्षेत्र में राष्ट्रपिता बापू के प्रति उनके हृदय में बचपन से ही अगाध श्रद्धा रही।

कभी 'आनन्द-कुटीर' के सामने बैठ कर गुरुदेव स्वामी शिवानन्द जी महाराज दीन-दुखियों की सेवा-सुश्रूषा करके '**सर्वेसन्तु निरामयाः**' को चरितार्थ करते थे। श्रीधर राव को भी हमने देखा है- जिनके दुर्गन्धित घावों से पीप चू-चू पड़ता था, हाथों और पैरों की उँगलियों का लिजलिजाता हुआ वह सड़ा माँस रह-रह कर टपक पड़ता था जिसमें कीड़े कुल-बुलाते थे, उनका औषधोपचार करते समय जब कभी कोई रोगी भावों से उठती हुई असहनीय टीस के कारण कराह उठता तो उसकी आँखों की कोरों में उमड़ते हुए आँसुओं को श्रीधर राव जी धीरे से अपनी लम्बी-लम्बी, गोरी गोरी 'स्पंज सी' उँगलियों से पोंछ दिया करते थे और तब वह रोगी टकटकी बाँध कर राव जी की ओर देखते हुए करुणा से अभिभूत हो कर सिसक उठता था, 'स्वामी जी! मैं मर किलैणी नी जान्दों!' हमने उस समय राव जी की बड़ी-बड़ी आँखों में तैरती जिस तरलता को देखा है, उसकी याद कर हम आज भी सिहर उठते हैं, रोमांच हो आता है।

हमने राव जी को लंगर में झाड़ू लगाते, जूठे बर्तन माँजते अनेक बार देखा है। तब भी शिवानन्द डिस्पेंसरी तो जैसे उनका संसार थी। रोगियों का मल-मूत्र साफ करते हुए, लम्बी साँस के साथ राव जी के अधरों से प्रस्फुटित होने वाला 'हरि! हरि!' शब्द हमने अनेकों बार सुना है।

भलों को तो सभी प्यार करते हैं, पर बुरों पर प्यार बरसाने वाला कोई विरला ही होता है। 'पतित-पावन' बनना सरल तो नहीं है? बुरों को राह पर लगाते हुए तब के राव जी और आज के स्वामी चिदानन्द जी को कई बार धोखा भी मिला है, किन्तु मनुष्य की अच्छाई पर से उनका विश्वास कभी नहीं डगमगाया। जिन्होंने इस शिवानन्द आश्रम में घुटनों के बल रेंगना छोड़ कर लड़खड़ाते कदमों पर खड़ा होना सीखा, महा-मानव स्वामी शिवानन्द जी से पिता का प्यार पाया, उन्होंने 'कुपुत्रो जायेत क्वचिदपि कुमाता न भवति' के अनुसार स्वामी चिदानन्द जी से माता की ममता भी पायी है। यदि कोई थोड़ा भी बीमार पड़ जाता था तो राव जी की आँखों से नींद कोसों दूर चली जाती थी।

ईश्वर करे वे दिन सदा-सदा बने रहें। मेरी शत-शत शुभ-कामनाएँ।

***

साधु-स्वभाव

- श्री पंडित गोपालदत्ताचार्य जी -

स्वामी जी के साधु-स्वभाव से प्रायः सभी लोग परिचित हैं। आये दिन लोग उनके सन्त-स्वभाव के कृपा-भाजन बनते रहते हैं तथा उनकी शरण में आ कर उनकी कृपा से सन्तुष्ट तथा कृतार्थ होते रहते हैं। मुझे भी स्वामी जी के निकट सम्पर्क में आने का सौभाग्य प्राप्त हुआ है। मैं उनके सहज-सरल व्यवहार से परिचित हूँ। स्वामी जी अत्यन्त दयालु तथा कृपालु स्वभाव के हैं। वह गुणों के भण्डार हैं तथा सन्त-स्वभाव और परोपकार की भावना उनमें स्वाभाविक है। तुलसीदास जी ने सन्त की असली पहचान यही बतायी है-

'पर उपकार वचन, मन, काया।
सन्त सहज सुभाउ खगराया ।।'

(मानस उ.का. १२०/७)

स्वामी जी के दयालु स्वभाव से मानव-समाज के दीन-दुःखी व अनाथ लोग विशेष रूप से लाभान्वित हुए हैं। स्वामी जी का दयालु स्वभाव उस समय नजर आता है, जब समाज की दृष्टि में घृणित, शारीरिक व मानसिक व्याधियों से अत्यन्त रोगयुक्त तथा आर्थिक स्थिति से दीन-हीन के ऊपर स्वामी जी दृष्टिपात करते हैं। ऐसे लोगों को देख कर स्वामी जी का दयालु स्वभाव द्रवित हो जाता है जिसके कारण उनमें अन्तर-पीड़ा उत्पन्न होती है और जिसके फल-स्वरूप स्वामी जी के प्रसन्न मुख पर उदासी के बादल छा जाते हैं और सब-कुछ भूल कर वे उनके पास तक पहुँचने के लिए, उन्हें दोनों हाथ फैला कर आश्रय देने के लिए तथा उनके दुःख में भाग लेने के लिए; उन्हें दिव्य व नवीन जीवन देने के लिए अपने तीव्रगामी कदमों से आगे बढ़ते हैं। स्वामी जी को इस तरह जाते देख कर सभी दर्शक गण उनके सन्त-स्वभाव से आश्चर्य-चकित हो जाते हैं।

स्वामी जी को जब कभी मैंने आश्रम में देखा, लोगों से घिरा हुआ पाया। सोचा कि किसी विषय में विचार-विमर्श हो रहा होगा। उत्सुकतावश जब मैं वहाँ पहुँचा, तो देखा कि स्वामी जी के इर्द-गिर्द अनेकों झंझटों में फैसे, परेशान, दुःखी लोग अपनी-अपनी राम कहानी सुना रहे हैं, क्योंकि स्वामी जी ऐसे सन्त हैं जिनके पास आ कर हर दुःखी व्यक्ति अपनी समस्या अथवा

दुःखभरी कहानी सुना कर कुछ सन्तोष पाता है और स्वामी जी से उचित राय अथवा अन्य सहायता ले कर अपने दुःख से छुटकारा पाता है। इधर स्वामी जी भी 'येन-केन- प्रकारेण' उन्हें समस्याओं से उबारने के लिए शक्ति से भी अधिक प्रयास करते हैं और जब एक दुःखी व्यक्ति का उदास व मुरझाया हुआ मुख उनके सम्मुख एक बार खुले रूप में हँस नहीं जाता, तब तक उन्हें सन्तुष्टि नहीं होती। विशेष कर हँसना स्वामी जी का एक स्वभाव भी है। उनके चित्त को भाने वाली केवल यही दो बातें हैं-हँसना और हँसाना।

अतः अन्तिम पंक्तियों में संक्षिप्त रूप से यही कहूँगा कि स्वामी जी आनन्द निधान हैं। उनके सम्पर्क में आ कर व्यक्ति पूर्ण सन्तोष व दिव्यानन्द को प्राप्त करता है, फल-स्वरूप उनका जीवन दिव्य हो जाता है। स्वामी जी भगवान् से सदैव 'सर्व-लोक-कल्याण' के लिए ही प्रार्थना करते हैं।

समस्त परिवार की ओर से उनके चरणों में मेरी मंगल-कामनाएँ।

-महन्त, शत्रुघ्न मन्दिर
शिवानन्दनगर

***

बहुविध विभूतियों के धनी : स्वामी चिदानन्द

-श्रीमती रामप्यारी चमनलाल शर्मा, दिल्ली-

सन्त-जन भगवान् के साकार रूप हैं जो धरातल पर अवतरित हो भवसागर में डूबते हुए जीवों का उद्धार करते तथा भवरोगों से पीड़ित जीवों के अज्ञानान्धकार को मिटा कर ज्ञान के प्रकाश से प्रकाशित करते रहते हैं। शिवस्वरूप, आनन्ददाता तथा कलिप्रदत्त पीड़ा से पीड़ित जीवों

के उद्धारक, भक्तों के रक्षक, दुखियों के सहायक सद्‌गुरु भगवान् श्री स्वामी शिवानन्द जी महाराज ऐसे ही सन्त थे। उन्हीं स्वामी शिवानन्द जी के योग्यतम शिष्य एवं उत्तराधिकारी हैं- श्रद्धास्पद स्वामी चिदानन्द जी महाराज।

'परहित सरिस धरम नहिं भाई।
पर पीड़ा सम नहिं अधमाई ।।'

यह सिद्धान्त श्री स्वामी जी के जीवन का मूलमन्त्र है। आपका सम्पूर्ण जीवन त्यागमय है। सेवा के तो आप मूर्तिमान् रूप ही है। मन, वचन तथा कर्म से सदा सेवा में लीन रहते हैं। जीवन का हर क्षण सेवामय है। सब प्राणियों का कल्याण हो यही आपका हर क्षण प्रयत्न रहता है। आपका रोम-रोम लोक-कल्याण और विश्व-कल्याण की याचना करता है। आपके लिए सम्पूर्ण जगत् ही अपना परिवार है- '**वसुधैव कुटुम्बकम् ।**' भला भगवान् में भेद-बुद्धि कहाँ? सब बिना रोक-टोक आपके पास पहुँच अपना भिक्षा-पात्र फैला सकते हैं और आप उन्हें निराश कभी नहीं लौटाते; क्योंकि आप जनता में जनार्दन, जीव में शिव तथा नर में नारायण के दर्शन करते हैं। आपकी दृष्टि में भेद नहीं है। सबके साथ समान व्यवहार आपकी अपनी विशेषता है।

विनम्रता की तो आप साक्षात् मूर्ति ही हैं। यदि आप मर्यादा-पालन में भगवान् राम और शारीरिक गठन तथा भाव-विभोरता में चैतन्य महाप्रभु के सदृश्य हैं, तो नाम-निष्ठा में गुरु नानक की कोटि में आते हैं। आपके शब्दों में- 'हमारा असली रोग है प्रभु-विस्मरण और भगवद्-नाम गान में अरुचि।' यही भवरोग है। उसके लिए औषधि है एकमात्र राम-नाम ।

पूज्य स्वामी जी ने अपने गुरुदेव के दिव्य गुणों को इतना स्वायत्त कर लिया है कि भक्तजन अपनी अटूट श्रद्धा एवं प्रगाढ़ भक्ति से आपमें ही गुरु भगवान् के दर्शन करते हैं। आप अब भी अपने सारे क्रिया-कलाप अपने को गुरुदेव का सेवक मान कर ही करते हैं। '**मेरा मुझ में कुछ नहीं, जो कुछ है सो तोर।**' 'शिवानन्दार्पणमस्तु' कह कर ही सारे कार्य आरम्भ करते हैं।

'करुणैकमूर्ति.' 'करुणासिन्धौ' आपके नाम हैं। आपकी करुणा के पात्र केवल मनुष्य ही नहीं, पशु-पक्षी एवं वनस्पति- जगत् के पेड़-पौधे भी हैं।

आप क्या नहीं हैं? प्रेम, भक्ति, कर्म, ज्ञान एवं राजयोग सभी रूपों में आपके निराले दर्शन हैं। मनो-निग्रह एवं इन्द्रिय-संयम का तो आप मूर्तिमान् रूप हैं। आपका जीवन अत्यन्त कार्य-व्यस्त है। **निःस्वार्थ सेवा ही आपका दिन है, निष्काम भक्ति ही रात्रि है तथा सेवायोग ही आपका विश्राम है।**

आपका जीवनादर्श है-

देखो, पर ध्यान न दो, सुनो, पर कान न दो,
स्पर्श करो, पर स्पर्श-भान न हो, चखो, पर स्वाद न लो।

हमारी प्रभु से प्रार्थना है कि वह आपको दीर्घायुष्य प्रदान करें जिससे संसार के मायाजाल में भ्रमित मानवता आपके पथ-प्रदर्शन का लाभ चिरकाल तक उठाती रहे!

***

मातेश्वरी तू धन्य है!

- कु. विमला शर्मा-

माँ सरोजिनी तू धन्य है! मातृ-श्री तू धन्य है!
माँ सरोजिनी तू धन्य है! मातेश्वरी तू धन्य है!

श्रीधर-सरीखे सुत को, जन्म दिया तुम्हीं ने;
शिशु-क्रीड़ा, बाल-केलि का आनन्द लिया तुम्हीं ने।
तेरी कोख धन्य है, तेरी गोद धन्य है।
ममतामयी तू धन्य है, मातेश्वरी तू धन्य है।।

ईश-प्रेम का संगीत सुनाया तुम्हीं ने,
मानव-सेवा का गीत सिखाया तुम्हीं ने।
तेरी ममता धन्य है, तेरी वत्सलता धन्य है।
नेहमयी तू धन्य है, मातेश्वरी तू धन्य है ।।

दिव्य जीवन का बीज बोया तुम्हीं ने,
सन्त-जीवन का पाठ पढ़ाया तुम्हीं ने।
तेरा त्याग धन्य है, तेरा भाग्य धन्य है।
करुणामयी तू धन्य है, मातेश्वरी तू धन्य है।।

तेरा लाड़ला बना, शिवानन्द-दुलारा,
तेरे नयनों का तारा, जगत् का सहारा।
तुम्हारी शिक्षा धन्य है, तुम्हारी दीक्षा धन्य है।
जगज्जननी तू धन्य है, मातेश्वरी तू धन्य है।।

'चिदानन्द' तुम्हारा प्राणधन है हमारा।
हृदय-धन तुम्हारा, जीवन-धन है हमारा।
तुम्हारा धाम धन्य है, तुम्हारा परिवार धन्य है।।
प्रातः स्मरणीया तू धन्य है, मातेश्वरी तू धन्य है।।

कोटि-कोटि प्रणाम माँ! तव श्री-चरणों में,
यही माँगते आज माँ कर-बद्ध तुम्हीं से।
सूरज-चन्दा जब लीं चमकें,
चिदानन्द-चन्द्र-वदन तब लौं दमकें।
दिव्य जीवन संघ धन्य है, शिवानन्द आश्रम धन्य है।
विश्व-वन्द्या तू धन्य है, मातेश्वरी तू धन्य है।

जब लौं गंग-जमुन की धारा, तब लौं जीये 'लाल' तुम्हारा।
पा कर तुम्हारे लाल को, अखिल विश्व धन्य है।।
'शिवानन्द-दरबार' धन्य है, 'शिवानन्द-श्रीधाम' धन्य है।
परम आराध्या तू धन्य है, परम वन्दनीया तू धन्य है।।

– श्रीधाम परिवार

नूतन शुभारम्भ

सौभाग्यशाली आत्मन्!
दुर्लभ मानव-जन्म उपहार मिला,
फिर क्यों करना इसे व्यर्थ भला?
है कहाँ भरोसा इस क्षणिक साँस का भला?

इसी मानव देह से पाओ आत्मसाक्षात्कार।
मानव शरीर से ही सम्भव भगवद् साक्षात्कार ।

उज्ज्वल आत्मस्वरूप !

भारतीय परम्परा में

- श्री एन. अनन्तनारायण-

कटक के बाराबत्ती स्टेडियम का मैदान था और सर्दियों की दोपहर थी, धूप खिली हुई थी। उस धूप का आनन्द लेते हुए हजारों लोग-स्त्रियाँ, पुरुष और बच्चे, हर जाति के, अमीर-गरीब, पढ़े-लिखे और अनपढ़, रंग-बिरंगे कपड़ों में एक विशेष उत्साह और उत्सुकता लिये हुए इधर-उधर घूम रहे थे। ये लोग कोई सर्कस या मेला देखने नहीं आये थे, न ही कोई खेल तमाशा-क्रिकेट या फुटबाल का मैच देखने के लिए आये थे। इतनी बड़ी संख्या में इन लोगों को यहाँ खींच कर ले आने वाला यह अवसर था, दिव्य जीवन संघ का अखिल भारतीय सम्मेलन और आकर्षण का मुख्य केन्द्र था-स्वामी चिदानन्द के दर्शन!

सम्मेलन के अन्तिम दिन, जब मुख्य अतिथि सामूहिक चित्र के लिए एकत्रित हुए तो जनरल करिअप्पा, जो कि स्वामी जी महाराज की अगली कुर्सी पर बैठे हुए थे, उनकी ओर झुक कर

आश्चर्य सहित बोले, **"इन लोगों में आपके प्रति जो दृढ़ विश्वास और पूर्ण भरोसा है, उसे देख कर तो मैं आश्चर्य चकित रह गया हूँ!"**

उनकी यह टिप्पणी हमें स्वामी जी की गहराई और ऊँचाई और उसका मूल्य बताती है। स्वामी चिदानन्द जो कार्तिक के मनोरम और ज्योतिर्मय चन्द्रमा की भाँति स्वामी शिवानन्द नामक प्रकाशमान आध्यात्मिक सूर्य के प्रकाश को पूर्णतया प्रतिबिम्बित करता है, आज बड़ी संख्या में विश्व भर के आध्यात्मिक जिज्ञासुओं के पूर्ण विश्वास और आस्था को प्राप्त किये हुए हैं। उनके अनुयायी और प्रशंसकों में विनीत, निम्न तथा उच्च एवं सभी श्रेणियों के और सभी प्रकार के लोग हैं।

स्वामी शिवानन्द जी महाराज के बेजोड़ शिष्य आध्यात्मिक ज्ञान के प्रचार-प्रसार के सेवा कार्य को (जो कि गुरुदेव को अतीव प्रिय रहा है) विश्व-भर में कर रहे हैं। दिव्य जीवन लहर के इन समस्त मशालचियों में से सम्भवतया स्वामी चिदानन्द अग्रगण्य हैं जो पिपासु आत्माओं के लिए व्यक्तिगत रूप से सर्वत्र सुलभ हैं।

यह मानव-जन्म परमात्मा का अमूल्य दिव्य उपहार है। अपने परम श्रेयस के हेतु इसका भव्य उपयोग करें। इन्द्रियों को निरर्थक तुष्ट करने में इस जीवन को नष्ट न करें। सेवा करें। पवित्र बनें। ईश्वर की उपासना करें। ध्यान करें। ज्ञान प्राप्त करें। आत्म-साक्षात्कार करें।

-स्वामी चिदानन्द

सांस्कृतिक परम्परा के वास्तविक स्वरूप हैं। हिन्दू धर्म और दर्शन को पावन और समृद्ध करने वाले आधुनिक सन्तों और विचारकों में उनका एक विशिष्ट स्थान है। **उनकी सहज स्वाभाविक विनम्रता जो उनके व्यवहार में एक विलक्षणता लाती है, निष्काम सेवा के लिए उनका छलकता हुआ उत्साह; उनमें से विकीर्ण होने वाली शान्ति और आनन्द, और सबसे बढ़ कर दिव्य जीवन के महिमा मण्डित आदर्शों का विश्व में चहुँ ओर पुनरुत्थापन करने के लिए उनका अथक प्रयास, यह सब हमें आध्यात्मिक जीवन और साधना के प्रति एक नवीन दृष्टिकोण देते हैं।**

अपने तपस्वी और पवित्र व्यक्तिगत जीवन तथा सन्देश और विदेश में प्राप्त विलक्षण उपलब्धियों के कारण स्वामी चिदानन्द जी ने विश्व-ख्याति प्राप्त कर ली है तथा जिन्हें भी उनके सम्पर्क में आने का सौभाग्य प्राप्त हुआ है, उन सभी के लिए वे हरमन प्यारे हो गये हैं।

भारतीय सांस्कृतिक परम्परा के सौभाग्यशाली उत्तराधिकारी के रूप में, स्वामी जी ने अपना जीवन भारतवर्ष के त्याग और सेवा के दीप्तिमान् आदर्शों का उज्ज्वल ज्योतिपुंज बना लिया है; स्वयं को हमारे धर्म का जीवन्त साकार रूप बना लिया है तथा परोपकार और परम आत्म-ज्ञान के उदात्त सिद्धान्तों का स्वयं को मूर्तिमान् रूप बना दिया है।

'मुझे अपने दासों का दास बनने दो'

आजकल पश्चिम के युवा लोगों के बीच एक बहुत अर्थ-गर्भित और लोकप्रिय कहावत प्रचलित है- 'लेट गो एंड लेट गॉड' अर्थात् 'अहंकार का त्याग करो और ईश्वर को (अपने में) प्रवेश करने दो।' यह त्याग भी है और निग्रह भी। अहंकार बार-बार प्रकट होना चाहता है, अपने-आपको अभिव्यक्त करना चाहता है, अपने अस्तित्व को प्रमाणित करना चाहता है, अपनी उपस्थिति की ओर ध्यान आकर्षित करवाना चाहता है। अहंकार की इस अभिव्यक्ति के प्रति अस्वीकृति ही इस प्रक्रिया का प्रारम्भ है "मुझे अपने दासों का दास बनने दो।"

-स्वामी चिदानन्द

उनकी पावनता की एक झलक

-जनरल के. एम. करिअप्पा -

कुछ वर्ष पहले जब मैं पहली बार उनसे मिला तो **उनके निरस्त्र कर देने वाले, मनोहारी और आकर्षक प्रेमपूर्ण व्यवहार, और मानव मात्र की भलाई के प्रति उनके सच्चे गम्भीर उद्गारों के कारण मैं अनजाने में ही उनकी ओर खिंच गया। गुरुदेव ने जिस भलाई और अच्छाई का वर्णन किया है, ये उन समस्त अच्छाइयों का मूर्तिमान् रूप हैं। किसी भी बात को कहने और करने के ढंग में उनकी सदा ही दृष्टिगोचर होने वाली सौम्यता सचमुच ही व्यक्ति को आनन्द प्रदान करने वाली है।** मैं हर आयु के, हर श्रेणी के, किसी भी धर्म या जाति के उस व्यक्ति को-जो मानवता की भलाई करने में रुचि रखता है-स्वामी चिदानन्द जी के सन्देश के छोटे-छोटे चौपन्ने या पुस्तिकाएँ पढ़ने के लिए अत्यन्त बलपूर्वक अनुरोध करता हूँ, क्योंकि ये सन्देश अत्यन्त उदार हृदयी और प्रयोग करने के लिए अत्यन्त व्यावहारिक हैं।

यह बात शायद कुछ अटपटी लगे किन्तु उन परम पूज्यश्री का अपने आरम्भिक दिनों में बाइबिल का अध्ययन करना मात्र एक नियम ही नहीं था। उनके लिए यह परमात्मा में ही निवास करना था। वे यीशु के प्रति उतना ही भक्तिभाव रखते हैं, जितना श्री विष्णु भगवान् के प्रति। वे ऐसे कट्टर व्यक्ति नहीं हैं (मैं पुनः दोहराता हूँ-नहीं हैं) जो केवल हिन्दू धर्म की महानता के बारे में बात करते हों। आजके इस समय में, जब कि सारे संसार के लोगों के मन-मस्तिष्क में पूर्णतया हलचल है, और सभी अशान्त अवस्था में हैं, **हमारे वर्तमान गुरु, परम पूज्य श्री स्वामी चिदानन्द जी से बढ़ कर और कोई परमात्मा का सन्देशवाहक नहीं हो सकता।** योग और साधना के सम्बन्ध में उनके विचारों को जानना सचमुच बहुत ही लाभप्रद है, क्योंकि वह दैवी उपदेश बन कर व्यक्ति के विचारों और कर्मों को सँवारने में सहायक बनते हैं। उनकी अपनी ही पुस्तक 'पाथ टू ब्लैसनैस' में 'लेखक की भूमिका' जिस सहज भाषा में लिखी है, वह उनकी विनम्रता को अत्यन्त भली-भाँति अभिव्यक्त करने के लिए पर्याप्त है। जो लोग मानसिक शान्ति और दिव्य आनन्द प्राप्ति के इच्छुक हैं, उन सभी को मैं अत्यन्त बलपूर्वक उनकी पुस्तक - 'पाथ टू ब्लैसनैस' पढ़ने का अनुरोध किया करता हूँ। मैंने इसे बहुत बार पढ़ा है और सदा ही अत्यधिक मानसिक शान्ति और सन्तुष्टि प्राप्त की है।

गुरुदेव स्वामी शिवानन्द जी महाराज ने सत्य, अहिंसा तथा ब्रह्मचर्य के सिद्धान्तों के आचरण पर बल दिया। सत्यता, शुद्धता, प्रेम, सेवा, भक्ति, ध्यान तथा ईश्वरानुभूतिमय जीवन को स्वामी जी ने 'दिव्य जीवन' की संज्ञा दी है। १९३६ में संस्थापित अपनी 'दिव्य जीवन संघ' संस्था द्वारा इन्होंने दिव्य सन्देशों का प्रचार किया। वे दिव्य जीवन के धर्मदूत के रूप में अभिनन्दित हुए।

- स्वामी चिदानन्द

प्राचीन मूल्यों पर बल

-श्रीमती सावित्री असोपा माता जी -

श्री स्वामी चिदानन्द जी अत्यधिक सर्वतोमुखी व्यक्तित्व से सम्पन्न हैं। यह उन पर शिवानन्द का मुद्रांकण है। मैंने उन्हें प्रभुमूर्तियों की पूजा करते और सफाई कर्मचारियों को भोजन खिलाते समय एक ही सम-भाव में देखा है। आश्रम में यदि किसी पर कोई मुसीबत आ पड़े तो वह सीधा स्वामी चिदानन्द जी के पास जाता दिखायी देगा, क्योंकि उनके लिए सेवा, साधना का प्रथम पग है। वह रोग-ग्रस्त पशु और रिसते घावों वाले कुष्ठ रोगी की सेवा अत्यन्त दिव्य भाव से करेंगे। सम्भवतया वह उनमें भगवान् के ही दर्शन कर रहे होते हैं। और निश्चित रूप से वे लोग भी उन्हें अपना भगवान् ही समझते हैं। वह प्राथमिक सहायता देते हुए साथ ही साथ हास-परिहास भी कर सकते हैं। वह अतिथियों की देखभाल अत्यन्त हर्षानन्द पूर्वक कर सकते हैं और अवसर के अनुकूल अत्यधिक उत्साह और गम्भीरता से प्रवचन भी कर सकते हैं। स्वामी शिवानन्द जी कहते हैं कि किसी भी पथ पर सफलता पाने का रहस्य है प्रसन्नता, चिदानन्द जी सदैव प्रसन्न रहते हैं। वह सदा कहते हैं, "चिन्ता क्यों? जो कुछ भी होता है, सब भगवान् की इच्छा के अनुसार होता है। इसे जान लो और प्रसन्न रहो।" यही कारण है कि स्वामी चिदानन्द जी कभी भी असफल या विचलित नहीं होते, भले ही कैसी भी परिस्थिति क्यों न हो! किसी भी तरह का काम हो, वह अत्यन्त प्रसन्नतापूर्वक करेंगे। वह एक ही समान सहजता से खिलाने, पकाने, गाने, झाड़ू-बुहारी करने तथा ध्यान करने और समाधि में जाने के कार्य कर लेंगे। वह सरलतम जीवन जीने तथा उच्चतम विचार रखने में विश्वास रखते हैं। उनका दर्शन अधिक से अधिकतम व्यावहारिक तथा न्यून से न्यूनतम सैद्धान्तिक है। वह प्राचीन आध्यात्मिक मूल्यों पर आधारित नव-जगत् को लाने वाले अग्रदूत हैं। वह स्वयं भी उनके अनुसार जीवन जीते हैं और हमें भी बताते हैं कि प्राचीन आध्यात्मिक मूल्य जीवन्त सत्य हैं, पुस्तकों में बन्द कपोल कल्पनाएँ मात्र नहीं हैं।

पिंजरा तो पिंजरा ही है भले ही लोहे का हो अथवा स्वर्ण का। स्वर्ण का पिंजरा भी उन्मुक्तता को छीनता ही है। अतः इसको भी त्यागना ही पड़ेगा। यह लोहे के पिंजरे से अधिक सुन्दर और मूल्यवान् हो सकता है; किन्तु कार्य तो इसका भी वही है। अतः इसके साथ की ममता को भी एक दिन त्यागना ही होगा। और, यह त्याग या तो शत-प्रतिशत होगा अथवा बिलकुल भी नहीं होगा।

-स्वामी चिदानन्द

आदर्श महापुरुषों के आकाश का एक उज्ज्वल नक्षत्र

-श्री ए. के. कृष्ण-सीता नाम्बियार -

दक्षिण भारत के एक धनाड्च परिवार में उत्पन्न होने बाले श्रीधर राव (अब स्वामी चिदानन्द), भारतवर्ष की आध्यात्मिक संस्कृति की सर्वोत्तम परम्परा- 'ईश्वर से संयुक्ति और सांसारिक जीवन से विरक्ति' को साथ ले कर जन्मे थे। वह उच्चकोटि के साधक हैं और अन्तःप्रज्ञा, अतीव करुणा और स्वाभाविक सरलता से सम्पन्न हैं। गुरु स्वामी शिवानन्द जी की योग शिक्षाओं में पूर्णता से ढल गये और उन शिक्षाओं की प्रतिमूर्ति बन गये। स्वामी चिदानन्द सदैव प्रेमपूर्वक निष्काम भाव से दूसरों की सेवा में रत रहने लगे तथा कुष्ठरोगियों, कष्ट-पीड़ित पशु-पक्षियों तथा अन्य अभावग्रस्तों की देखभाल अपने हाथों से करने लगे शीघ्र ही ऋषिकेश के आस-पास के सभी लोगों के दिलों को उन्होंने जीत लिया। लोग उनमें एक सहायक मित्र, एक दार्शनिक और एक निर्देशक के दर्शन करने लगे।

यद्यपि स्वामी चिदानन्द जी सभी प्रकार के योगों में रुचि रखते हैं, तथापि आध्यात्मिक विकास के लिए वह राजयोग की साधना करते रहे हैं। इस साधना ने उन्हें ऐसा बना दिया है कि अपने निज सच्चिदानन्द स्वरूप में स्थित रहते हुए ही वह हर सम्भव परिस्थिति में विविध प्रकार के लोगों से यथानुसार यथोचित व्यवहार करते हैं। वह सदैव राग-द्वेष की तरंगों से ऊपर सदा-सर्वदा समता की अवस्था में स्थित पाये जाते हैं। अहं से ऊपर उठे हुए वह विनम्रता की मानो प्रतिमूर्ति ही हो गये हैं।

स्वामी चिदानन्द हमारी आध्यात्मिक संस्कृति की सच्ची सन्तान हैं। मानव के विविध धर्मों के प्रति वह एक माँ के समान समभावपूर्ण सहानुभूति रखते हैं। स्वामी जी का कथन है कि भगवान् किसी एक धर्म के ही नहीं हैं, क्योंकि भगवान् न हिन्दू हैं, न ही सिख या ईसाई। इस सम्बन्ध में वह 'वर्तमान, भूत और भविष्य के सभी सन्तों' को नतमस्तक प्रणाम करते हैं। वह भगवान् के पथ पर आरूढ़ एक सन्त-स्वभाव के व्यक्ति हैं। भारतवर्ष की आध्यात्मिक संस्कृति के अनुरूप जीवन, जो कि उनके गुरु स्वामी शिवानन्द जी के सिद्धान्त थे, के प्रचार-प्रसार के लिए वह अपने शरीर की सुख-सुविधा की ओर किंचित् भी ध्यान न देते हुए अथक परिश्रम करते हैं। इस रूप से वह बिलकुल वही कर रहे हैं जो सेंट पाल ने यीशु के सिद्धान्तों के लिए किया था।

स्वामी चिदानन्द जी ऋषिकेश में जिस आध्यात्मिक संस्था अर्थात् दिव्य जीवन संघ के परमाध्यक्ष होने से एक अनिवार्य अंग हैं-उसी के माध्यम से विगत बहुत वर्षों से आध्यात्मिकता का प्रचार-प्रसार कर रहे हैं। अपने इस कार्य के दौरान वह इस विश्व में लगभग सभी देशों में विभिन्न धर्मों के लोगों को सम्बोधित करते हुए घूमे हैं। और उनका केवल हिन्दू ही अत्यन्त उत्साहपूर्वक स्वागत नहीं करते अपितु ईसाई, मुस्लिम, यहूदी आदि सभी उतने ही उत्साह और प्रेमपूर्वक उनका स्वागत करते हैं, क्योंकि वह जहाँ भी जाते हैं, केवल मानवता की भलाई की बात करते हैं। **अब तो वह विश्व में शान्तिदूत बन गये हैं**, तथा जो भी उनके सम्पर्क में आते हैं उनके लिए एक बड़े सहायक और सान्त्वना प्रदाता हैं। उनके आध्यात्मिक व्यक्तित्व की दीप्ति तथा उनके

उपदेशों के प्रकाश ने उन्हें पर्याप्त प्रसिद्धि दिलायी है। वास्तव में स्वामी चिदानन्द का जीवन साधना और शिक्षाओं द्वारा दूसरों की सेवा करने के लिए ही है। ...

***

गुरुदेव उनमें निवास करते हैं

- प्रो. जे. एन. असोपा-

"मैं एक अप्रकट हीरक था,
मेरी प्रदीप्त किरण ने मुझे प्रकट कर दिया!"

श्री स्वामी चिदानन्द जी के लिए मुझे प्रायः कुरान की यह पंक्तियाँ याद आ जाती हैं। श्रीधर राव (पूर्वाश्रम में चिदानन्द जी इस नाम से जाने जाते थे) से श्री स्वामी चिदानन्द जी महाराज तक की यात्रा, आकांक्षा और उपलब्धि, दोनों एक से एक बढ़ कर और स्वयं को प्रकट कर देने वाली ज्वलन्त किरण रही है। सर्वोच्चता के मूल्यों की उपलब्धि में, वास्तव में स्वामी चिदानन्द जी महाराज सर्वश्रेष्ठ हैं। सर्वप्रथम जो व्यक्ति को प्रभावित करता है, वह उनकी विनम्रता और सेवा की भावना है। **वह विनम्रता के अवतार हैं। मैं, जो अनुभव करता हूँ, वह यह है कि वे केवल इतना ही नहीं हैं। मेरे लिए तो वे स्वयं विनम्रता ही हैं।** मैं यह कोई अतिशयोक्ति का प्रयोग नहीं कर रहा हूँ। विनम्रता उनमें मूर्तिमान् हो गयी है, विनम्रता उनमें परिपूर्णता को प्राप्त हो गयी है। सेवा-भावना उनमें अति गहन है, ऐसे **सेवामय जीवन के प्रति उनके प्रेम का कहीं ओर छोर नहीं है।** मैं उस तथ्य को दोहरा मात्र ही रहा हूँ जो बिलकुल सामने प्रत्यक्ष दिखायी देता है। **सेवा, भक्ति, दान, पवित्रता, ध्यान, साक्षात्कार के गुरुदेव के कथन उनमें सजीव हो उठे हैं।**

मनुष्य और बन्दर की समान भाव से सेवा करते हुए वे देखे जाते हैं। जो व्यक्ति रिसते हुए घावों वाले कुष्ठरोगियों में अथवा अपंग बन्दर या घायल गिलहरी में श्रीमन्नारायण के दर्शन कर सकता है, वे निस्सन्देह नारायण भगवान् का प्रिय पात्र ही हो सकता है।

चिदानन्द जी हमारी प्राचीन संस्कृति से भी एक कदम आगे हैं। किसी राष्ट्र की संस्कृति का प्रतीक वास्तव में उस राष्ट्र की वे कतिपय महान् विभूतियाँ ही होती हैं जो अपने जीवन के कार्यक्षेत्र में दुःखी हृदयों को सान्त्वना देने के लिए तथा संसार-चक्र में फँसी हुई मानवता के अध्यात्म के प्रति डोलते हुए विश्वासों को पुनः दृढ़ करने के लिए अवतरित होती हैं। **हमारी संस्कृति में श्रेष्ठतम और उदात्ततम होने के नाते जो कुछ भी सर्वोत्तम, है, वह सभी कुछ देने के लिए, चिदानन्द जी के पास है। तप और निष्ठा, सेवा ओर सच्चाई, परोपकारिता और आत्मत्याग आदि गुण उनमें श्रेष्ठता की चरम सीमा तक या सही कहें तो श्रेष्ठतातीत हैं। एक आदर्श साधु, परम संन्यासी, परोपकारी गुरु-यह वे हैं, हमारी संस्कृति उनमें अपनी परिपूर्णता पाती है।**

आधुनिक भारत के पावन सन्त गुरुदेव स्वामी शिवानन्द जी महाराज जगत् को प्रकाशित करने वाला प्राची दिशा का प्रकाश थे। उनके देश ने मुनियों, पुण्यात्माओं, सन्तों और ऋषियों की इस भूमि में जन्म लेने वाले उच्च कोटि के आध्यात्मिक मार्ग-प्रदर्शकों में से उन्हें एक महान् सन्त माना। उन्होंने अपनी आजीवन की गयी सेवाओं से वैदिक धर्म को पुनर्जीवित किया। योग-वेदान्त की अध्यात्म-विद्या का प्रभावशाली प्रचार किया जो वर्तमान शती में अद्वितीय तथा विशिष्ट मानी गयी।

- स्वामी चिदानन्द

'सन्त-मिलन सम सुख जग नाहीं'

- श्री लक्ष्मणशरण भागवतकिंकर, जयपुर -

दुर्लभो मानुषोदेहो देहिनां क्षणभंगुरः ।
तत्रापि दुर्लभंमन्ये वैकुण्ठप्रियदर्शनम् ।।

(श्रीमद्भागवत : ११-२-२९)

अपने परमाराध्य श्री सद्गुरु के लाड़ले-दुलारे एवं हम दीन-हीन, अकिंचनों के सहारे, पथ-प्रदर्शक श्री श्री अनन्त श्री सम्पन्न गुरुवर्य श्री स्वामी चिदानन्द जी महाराज का दर्शन विगत वर्ष गुरुपूर्णिमा के परम पावन सुअवसर पर श्री शिवानन्द आश्रम में हुआ। दर्शन करके ऐसा लगा जैसे श्रीमद्भागवत के कपिलोपाख्यान में वर्णित सन्त लक्षणों से प्रकट साक्षात्कार हो रहा है।

तितिक्षवः कारुणिकाः सुहृदः सर्वदेहिनाम् ।
अजातशत्रवाः शान्ताः साधवः साधुभूषणाः ।।

मय्यनन्येत भावेन भक्तिं कुर्वन्ति ये दृढाम्।
मत्कृते त्यक्त कर्माणस्त्यक्त स्वजन बान्धवाः ।।

मदाश्रयाः कथामृष्टाः शृण्वन्ति कथयन्ति च।
तपन्ति विविधास्तापा नैतान्मद्गतचेतसाः ।।

(श्रीमद्भागवत : ३/२५-२१-२३)

सरलता एवं सादगी से प्लावित श्री गुरु श्री गोविन्द रस से आपूरित भीगा-भीगा दिल, खोई-खोई आँखें सदैव भगवदाराधना में समर्पित महान् सन्त का दर्शन करके जीवन धन्य हुआ।

अपने गुरुदेव परम पूज्य श्री स्वामी शिवानन्द जी महाराज के लाड़ले-दुलारे कृपापात्र हमारे गुरुवर्य्य श्री स्वामी चिदानन्द जी महाराज, जिनकी दृष्टि में परमात्मा के अलावा कोई अन्य स्वरूप नहीं एवं परमात्म-सेवा के अलावा कोई दूसरा कार्य नहीं, का दर्शन कर जीवन धन्य हुआ।

हमारे गीताकार श्री पार्थसारथी ने पार्थ को बताया-

अनन्यचेताः सततं यो मां स्मरति नित्यशः ।
तस्याहं सुलभः पार्थ नित्ययुक्तस्य योगिनः ।।

(श्रीमद्भगवद्गीता : ८-१४)

पार्थ! मेरा मिलना तो बहुत सरल है, पर मेरे हृदय स्वरूप मेरे सन्तों का मिलना बहुत दुर्लभ है।

बहूनां जन्मनामन्ते ज्ञानवान्मां प्रपद्यते ।
वासुदेवः सर्वमिति स महात्मा सुदुर्लभः ।।

(श्रीमद्भगवद्गीता : ७-१९)

राम का मिलना सहज है सन्त का मिलना दूर।
पलटू सन्त मिले बिना राम से परे न पूर ।।

हमारे परम पावन भारत देश के ऐसे महान् सन्त की चिरायु की शुभ मंगल कामना के साथ-साथ पावन पाद पद्मों में साष्टांग प्रणिपात।

सन्त सरल चित जगत हित जानि सुभाउ सनेहु।
बाल विनय सुनि करि कृपा, राम चरन रति देहु ।।

त्वमेव माता च पिता त्वमेव त्वमेव बन्धुश्च सखा त्वमेव ।
त्वमेव विद्या द्रविणं त्वमेव त्वमेव सर्वं मम देवदेव ।।

शिवानन्द स्वरूप चिदानन्द हे!

-श्रीधाम परिवार -

शिवानन्द स्वस्वरूप, आत्मरूप चिदानन्द है।
शिवानन्द अभिन्नरूप, प्रतिरूप चिदानन्द हे।
शिवानन्द हृदयरूप, चित्तस्वरूप चिदानन्द है।
शिवानन्द आनन्दरूप, नमामि चिदानन्द हे।।

गुरु भगवान्, गुरु गुणगान, गुरु ही प्राण मानी है।
गुरु ही ज्ञान, गुरु ही ध्यान, गुरु ही प्रेम मानी है।
गुरु ही दाता, गुरु ही माता, गोविन्दरूप निहारी हे।
शिवानन्द आनन्दरूप, नमामि चिदानन्द है।।

प्रफुल्ल मुखमण्डल, स्वरूप मनोहारी है।
सरस नैन, मंगल बैन, सर्वचित्त हारी है।
ललित गान, मधुर तान, कोकिल कण्ठ पै वारी हे।
शिवानन्द आनन्दरूप, नमामि चिदानन्द है।

अधर शुचि, हास उज्ज्वल, रूपहली दन्तावली है।
दीप्त भाल, कम्बु कण्ठ, गति गयन्दवारी हे।
सर्वांग लसित, संग सुखद, प्रियदर्शी रूप निहारी हे।
शिवानन्द आनन्दरूप, नमामि चिदानन्द हे ।।

आजानु भुज, वरदहस्त, सर्व हितकारी है।
पादाम्बुज तरणिरूप, भव-वारिधि तारी है।
चापल्य मधुर, अति गम्भीर, पुण्यश्लोक जानी है।
शिवानन्द आनन्दरूप, नमामि चिदानन्द हे ।।

भक्त-वृन्द-वन्दिते, त्रिविध तापहारी है।
अनाथ नाथ, करुणैक मूर्ति, सर्व सुखकारी हे।
विश्व-मण्डन, पाप-खण्डन, सर्व दुःखहारी है।
शिवानन्द आनन्दरूप, नमामि चिदानन्द है।

'तृणादपि सुनीचेन' विनीत रूप निहारी है।
'अमानिना मानदेन' समदर्शी रूप निखारी है।
'तरोरपि सहिष्णुना', शान्तचित्त विहारी है।
शिवानन्द आनन्दरूप, नमामि चिदानन्द हे ।।

महादानी, आत्मध्यानी, देहाध्यास न जानी है।
परम त्यागी, सदाचारी, पुण्य श्लोक मानी हे।
परोपकारी, रोगोपचारी, निज सुख-त्यागी है।
शिवानन्द आनन्दरूप, नमामि चिदानन्द हे ।।

सर्वशास्त्र ज्ञान ज्ञाता, ज्ञानयोगी जानी है।
ब्रह्मनिष्ठ, तपोनिष्ठ, वीतरागी मानी है।
प्राण प्रणव, राजयोगी, कर्मयोगी मानी हे।
शिवानन्द आनन्दरूप, नमामि चिदानन्द हे ।।

धर्म-प्रचारक, प्रेम-संचारक, जन-सेवा धर्म मानी है।
कर्म-रत, मृदुल गात, वर्ण-भेद न मानी है।
परम भक्ति, परम शक्ति, सत्य अहिंसा मानी है।
शिवानन्द आनन्दरूप, नमामि चिदानन्द है।।

शिवानन्द-सन्देश सुरभि, दिव्योपदेश प्रसारी हे।
सहज भाव रस-सिन्धु, काषाय वस्त्र धारी है।
या छवि पै बलिहारी हे, 'चेरी' सर्वस्व वारी है।
शिवानन्द आनन्दरूप, नमामि चिदानन्द हे।।

यौवन के स्वर्णिम काल में जब हममें से अधिकांश व्यक्ति अपना समय जीवन के सुखोपभोग प्राप्त करने में लगा देते हैं, श्री स्वामी शिवानन्द जी महाराज उस समय की बहुत अधिक एवं ज्वलित शक्ति का प्रयोग प्रसन्नतापूर्वक एवं मुक्त उदार हृदय से अपने आस-पास की जनता के कल्याणार्थ किया।

गुरुदेव स्वामी शिवानन्द जी महाराज का सम्पूर्ण जीवन पूर्णतया निरन्तर आध्यात्मिकता के क्षेत्र में समर्पित हुआ जिसने इन्हें जिज्ञासु साधक तथा स्त्री-पुरुष, युवक, वृद्ध, विद्यार्थी, शिक्षक, व्यवसायी, राजनीतिज्ञ जैसे सभी प्रकार के व्यक्तियों को शिक्षण-प्रशिक्षण देने, प्रेरणा तथा मार्ग-दर्शन देने, प्रेरित करने, शान्ति प्रदान करने, रूपान्तरण लाने तथा सहायता करने में अहर्निश व्यस्त रखा।

- स्वामी चिदानन्द

भक्तिमय जीवन

स्वामी चिदानन्द जी का जीवन भक्तिमय था। श्रीमद्भागवत में कहा गया है-

वाणी गुणानुकथने श्रवणौ कथायां
हस्तौ च कर्मसु मनस्तव पादयोर्नः ।

स्मृत्यां शिरस्तवनिवास जगत्प्रणामे
दृष्टिः सतां दर्शनऽस्तु भवत्तनूनाम् ।।

भक्त भगवान् से प्रार्थना करते हैं- हे प्रभो! वाणी आपके गुणानुवाद में, श्रवण आपके कथा-श्रवण में, हाथ आपकी सेवा में, मन आपके चरण कमलों के स्मरण में, शीष आपके निवासभूत सारे जगत् के प्रणाम करने में तथा नेत्र आपके चैतन्यमय विग्रह सन्तजनों के दर्शन में लगे रहें।

द्वितीय प्रकाश

ॐ

'श्री स्वामी शिवानन्द जी महाराज

मेरे गुरु ही नहीं वरन्
मेरी माता तथा मेरे पिता भी हैं
मैं उन्हीं का एक रूप हूँ
मैंने अनुभव किया है कि मेरे

पीछे उन्हीं की प्रेरणा
कार्य कर रही है-'

-स्वामी चिदानन्द

जननी के दिव्य अंक में

दिव्यतम संन्यासी रूप में
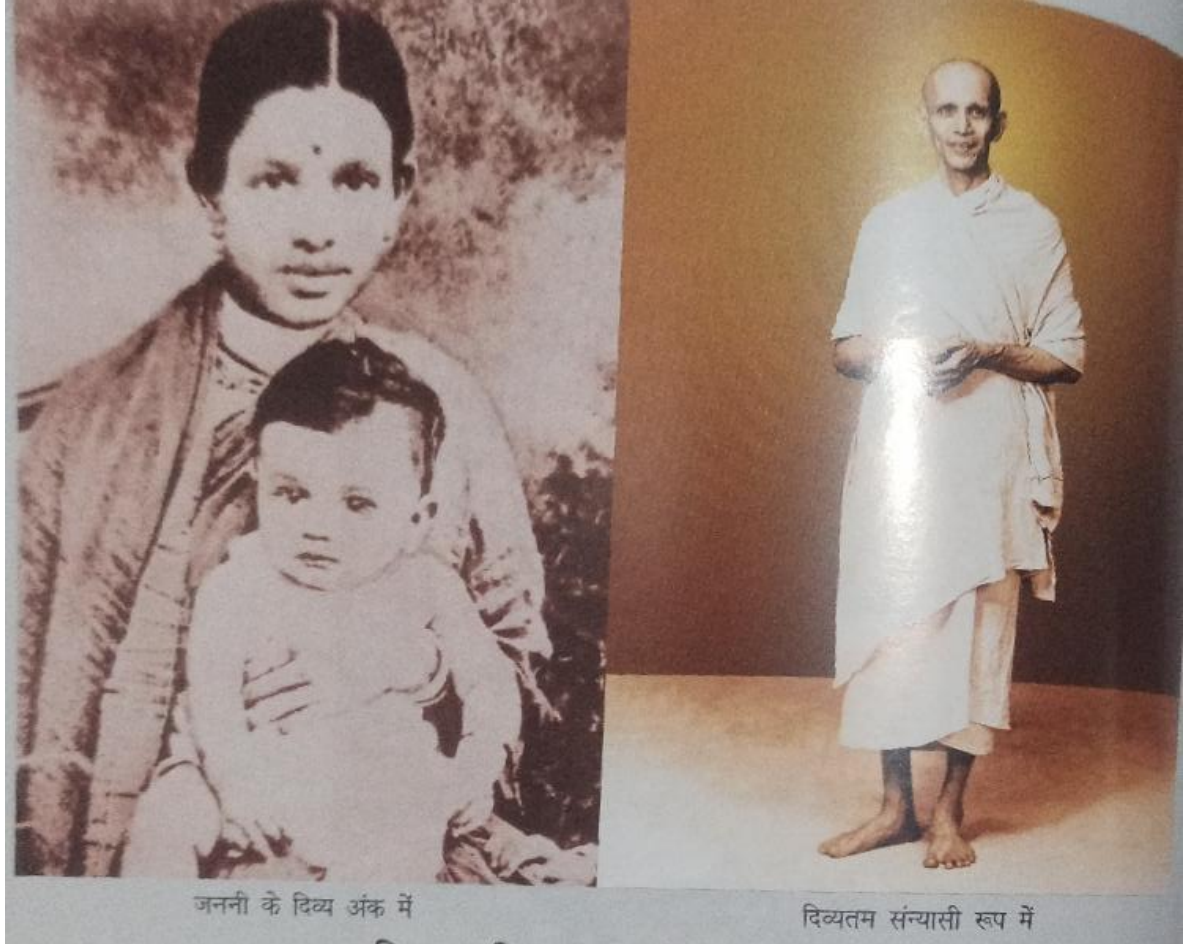
दिव्य व्यक्तित्व एवं दिव्य कृतित्व

ॐ

धन्य हैं भाग्य तेरे, माँ सरोजनी तू धन्य है ।
श्रीधर (चिदानन्द) सुत को जन्म दिया तुम्हीं ने,
बोया सेवा, स्नेह, सरलता, दया, दान, परहित,
एवं दिव्य जीवन का यह दिव्य बीज तुम्हीं ने,
धन्य है कोख तेरी, 'दिव्य जीवन संघ' धन्य है ।।

शिवानन्द स्वस्वरूप, आत्मरूप चिदानन्द हे ।
शिवानन्द अभिन्नरूप, प्रतिरूप चिदानन्द है ।

शिवानन्द हृदयरूप, चित्तस्वरूप चिदानन्द है ।
शिवानन्द आनन्द रूप, नमामि चिदानन्द हे ।।
शिवानन्द स्वस्वरूप, आत्मरूप चिदानन्द है ।

'आस्तां तावदीयं प्रसूतिसमये दुर्वारषूलव्यथा ।
नैरच्यं तनुशोषणं मलमयीशय्या च संवत्सरी ।
एकस्यापि न गर्भभारभरणक्लेशस्य यस्याः क्षमो ।
दातुंनिष्कृतिमुन्नतोपि तनयस्तस्यै जनन्यै नमः ।।'
[1]

श्री स्वामी चिदानन्द सरस्वती

- जीवन का एक रेखा-चित्र -

स्वामी चिदानन्द जी के पूर्वाश्रम का नाम श्रीधर राव था। उनके पिता का नाम श्रीनिवास राव और माता का नाम सरोजिनी था। उनका जन्म २४ सितम्बर, १९१६ को हुआ। वह अपने माता-पिता की पाँच सन्तानों में से द्वितीय सन्तान और पुत्रों में ज्येष्ठ थे। श्रीनिवास राव समृद्ध में जमींदार और दक्षिण भारत में कई ग्राम, विस्तृत भूखण्ड और राजसी भवन के स्वामी थे। सरोजिनी देवी एक आदर्श भारतीय माता थीं और अपने साध्वाचार के लिए प्रसिद्ध थीं।

आठ वर्ष की आयु में उनके जीवन पर एक अनन्तैया नामक व्यक्ति का प्रभाव पड़ा। श्री अनन्तैया इनके दादा के मित्र थे और रामायण तथा महाभारत महाकाव्य से उन्हें कथाएँ सुनाया करते थे। तपश्चर्या, **ऋषि-जीवन यापन और भगवद्-दर्शन उनके प्रिय आदर्श बने ।**

उनके फूफा श्रीकृष्ण राव ने उनके चतुर्दिक् व्याप्त भौतिकवादी जगत् के कुप्रभावों से उनकी रक्षा की और उनमें निवृत्ति-जीवन का बीज वपन किया। जैसा कि बाद की घटनाओं ने सिद्ध किया, यह उस बीज को सन्तत्व में विकसित होने तक बड़ी प्रसन्नता से धारण किये रहे।

प्रारम्भिक शिक्षा मेंगलोर में प्राप्त कर यह सन् १९३२ में मद्रास के मुत्थैया चेट्टी स्कूल में प्रविष्ट हुए जहाँ पर एक प्रतिभाशाली विद्यार्थी के रूप में इन्होंने ख्याति प्राप्त की। इन्होंने अपने प्रफुल्ल व्यक्तित्व, अनुकरणीय व्यवहार तथा असाधारण गुणों से अपने सम्पर्क में आने वाले सभी अध्यापकों और विद्यार्थियों के हृदय में अपने लिए एक विशिष्ट स्थान प्राप्त कर लिया।

सन् १९३६ में लॉयोला कालेज में प्रवेश किया, जिसमें बहुत ही मेधावी विद्यार्थी ही प्रवेश पाते हैं। सन् १९३८ में साहित्य-स्नातक (बी. ए.) की उपाधि प्राप्त की। इनका विद्यार्थी जीवन अधिकांशतः ईसाई कालेज व्यतीत हुआ, इसका भी अपना महत्त्व है। इनके हृदय प्रभु ईसा, ईशदूतों तथा ईसाई सन्तों के भव्य आदर्श का हिन्दू-संस्कृति के सर्वोत्कृष्ट एवं अभिजात तत्त्वों के साथ सुन्दर संश्लेषण हुआ है। बाइबिल का स्वाध्याय इनके लिए केवल दैनिक कृत्य ही नहीं था,

---

[1]यहाँ से दिव्य व्यक्तित्व सम्बन्धी लेख प्रारम्भ।

वह तो इनके लिए भागवत-जीवन था। वह इनके लिए उतना ही जीवन्त और सत्य था जितना कि वेद, उपनिषद् और गीता के शब्द। अपने स्वाभाविक विशाल दृष्टिकोण के कारण ये कृष्ण में ईसा के, कृष्ण के स्थान में ईसा के नहीं, दर्शन कर सके। यह ईसा मसीह के उतने ही भक्त थे जितने कि भगवान् विष्णु के थे।

राव परिवार उच्च कोटि की सदाचारिता के लिए प्रसिद्ध था और यह श्रीधर राव के जीवन में भी प्रतिष्ठित किया गया। **उनके परिवार के प्रत्येक व्यक्ति के कण-कण में दान और सेवा का गुण व्याप्त था। इन सद्गुणों ने श्रीधर राव में अपना साकार रूप ग्रहण किया।** उन्होंने इन गुणों की अभिव्यक्ति के साधन ढूँढ़ निकाले। कोई भी व्यक्ति, जो उनसे सहायता की याचना करता था, खाली हाथ वापस नहीं जाता था। वह दरिद्रों को मुक्त हस्त से दान करते थे।

कुष्ठियों की सेवा ने उनके जीवनादर्श का रूप लिया। वह अपने घर के विस्तृत मैदान में उनके लिए झोपड़ियाँ बनवाते और उनकी इस तरह से देखभाल करते मानो वे साक्षात् देवता हों। कालान्तर में जब वह आश्रम में आ गये तो उनके प्रारम्भिक जीवन का यह गुण पूर्ण व निर्बाध रूप से अभिव्यक्त हुआ। 'सभी प्राणी एक हैं', इस परम ज्ञान पर आश्रित दिव्य प्रेम के विशाल साम्राज्य में श्रेष्ठ से श्रेष्ठ व्यक्ति भी कदाचित् ही प्रवेश करने का साहस करे। पास-पड़ोस से नाना प्रकार के उग्र व्याधियों से पीड़ित रोगी उनके पास आते और चिदानन्द जी के लिए वे रोगी नहीं थे, साक्षात् नारायण थे। वह मृदु प्रेम और करुणा से उनकी सेवा करते। उनके हाथों की गति ही उनका ऐसा चित्रांकन करती मानो वह साक्षात् भगवान् नारायण की पूजा कर रहे हों। कोई भी कार्य हो, कितना ही तात्कालिक अविलम्बिता का कार्य हो, वह रुग्ण आश्रमवासी को सुख और सान्त्वना देने से कभी न रुकते ।

सेवा और विशेषकर रोगियों की सेवा से ऐसा पता चला कि उन्हें अपनी व्यक्तिगत पृथक् सत्ता का भान नहीं रहता। ऐसा लगता है कि मानो उनका शरीर एक ऐसे जीवात्मा से ढीला-ढाला चिपटा हुआ है जो कि पूर्ण रूप से उद्‌बुद्ध हो चुका है और यह अनुभव करता है कि वही सब शरीरों में निवास करता है।

और उनकी यह सेवा केवल मानव जाति तक ही सीमित नहीं थी। पशु और पक्षी भी, यदि मनुष्य से अधिक नहीं तो कम-से-कम मनुष्य के समान उनके ध्यान के अधिकारी थे। वह उनकी पीड़ा की भाषा समझते थे। एक बीमार कुत्ते की सेवा पर गुरुदेव ने उनकी बड़ी सराहना की थी। किसी व्यक्ति को अपनी उपस्थिति में किसी मूक प्राणी पर नृशंसता का व्यवहार करते देख कर वह अपने हाथ के इंगित से उसे उग्र शिक्षा देते।

कुष्ठियों के कल्याण-कार्य में गम्भीर और स्थिर रुचि रखने के कारण वह राजकीय अधिकारियों की प्रशंसा व विश्वास के पात्र बने और प्रदेश द्वारा संस्थापित कुष्ठी कल्याण समिति के लिए निर्वाचित किये गये। मुनि-की-रेती अधिसूचित क्षेत्र समिति के वह पहले तो उपाध्यक्ष और बाद में अध्यक्ष निर्वाचित हुए।

यद्यपि श्रीधर सम्पन्न परिवार के थे, तथापि एकान्त और ध्यान में संलग्न रहने के लिए उन्होंने बचपन से ही सभी सांसारिक भोगों को तिलांजलि दे दी। जहाँ तक अध्ययन का सम्बन्ध है, कालेज की पुस्तकों की अपेक्षा आध्यात्मिक पुस्तकों में उनकी अधिक रुचि थी। लॉयोला कालेज

में रहते हुए भी वह पाठ्य-पुस्तकों की तुलना में आध्यात्मिक पुस्तकों को प्राथमिक स्थान देते थे। श्री रामकृष्ण, स्वामी विवेकानन्द और गुरुदेव की पुस्तकों को अन्य सभी पुस्तकों से पूर्वता देते थे।

श्रीधर अपने ज्ञान में दूसरों को इतना सहभागी बनाते थे कि वह घर तथा पास-पड़ोस के लोगों के वस्तुतः गुरु बन गये। उनके साथ वह सच्चाई, प्रेम, शुचिता, सेवा और भगवद्-भक्ति की चर्चा किया करते थे। वह श्री राम का जप करने के लिए उन्हें उत्साहित किया करते थे। जब **वह बीस वर्ष की वय के ही थे, तभी से उन्होंने नवयुवकों को रामतारक मन्त्र की दीक्षा देना आरम्भ कर दिया था। उनके अनुयायियों में एक श्री योगेश थे जो बालक गुरु श्रीधर द्वारा दिये गये तारक मन्त्र का जप १२ वर्ष तक निरन्तर करते रहे।**

वह श्री रामकृष्ण और स्वामी विवेकानन्द के परम प्रेमी थे। मद्रास के मठ में नियमित रूप से जाते और वहाँ पूजा में भाग लेते थे। स्वामी विवेकानन्द का संन्यास के लिए आह्वान उनके शुद्ध हृदय में गूँजता रहता था। महानगर में पधारने वाले साधु-सन्तों के दर्शन के लिए वह सदा ही लालायित रहते थे।

सन् १९३६ में श्रीधर छुप कर घर से चले गये। उनके माता-पिता ने बड़ी खोज के बाद उन्हें तिरुपति के पवित्र पर्वतीय मन्दिर से कुछ मील दूर एक धर्मात्मा सन्त के निर्जन आश्रम में पाया। बहुत समझाने-बुझाने पर वे घर वापस गये। उनका यह अस्थायी वियोग परिवार, मित्र और सम्पत्ति के मोहमय संसार से अन्तिम विदाई लेने की तैयारी थी। जब वह घर पर थे, तब भी उनका हृदय अपने अन्तर्वर्ती ज्ञान-गंगा के सनातन प्रणव-नाद के साथ सस्वर हो कर स्पन्दित होता और आध्यात्मिक विचारों के निस्तब्ध बनों में रमण करता रहता था। तिरुपति से वापस आने पर उन्होंने सात वर्ष घर में व्यतीत किये। इन दिनों उनके **जीवन पर एकान्तवास, सेवा, आध्यात्मिक साहित्य के गहन अध्ययन, आत्म-संयम, इन्द्रिय-निग्रह, सरल और सात्त्विक जीवनचर्या और आहार, विलासिता का परिहार और तपोनिष्ठ जीवन के अभ्यास की गहरी छाप पड़ी और ये ही उनकी अन्तःआध्यात्मिक शक्ति के संवर्धन में सहायक हुए।**

सन् १९४३ में उन्होंने अपने भावी जीवन के सम्बन्ध में अन्तिम निर्णय किया। ऋषिकेश के श्री स्वामी शिवानन्द जी से वे पहले से ही पत्र-व्यवहार कर रहे थे। अन्त में वह आश्रम में सम्मिलित होने के लिए स्वामी जी की अनुमति प्राप्त करने में सफल हुए।

आश्रम में पदार्पण करने के साथ ही उन्होंने पद से स्वभावतः औषधालय का कार्यभार अपने ऊपर ले लिया। उनके हाथों में रोग के निवारण की अद्भुत शक्ति थी। यह ख्याति चारों ओर फैल गयी, जिससे शिवानन्द दातव्य औषधालय में रोगियों का जमघट लगने लगा।

आश्रम आने के तत्काल बाद ही श्रीधर ने अपनी कुशाग्र बुद्धि का पर्याप्त परिचय दिया। उन्होंने भाषण दिये, पत्र-पत्रिकाओं के लिए लेख तैयार किये और आश्रम में पधारने वाले जिज्ञासुओं को आध्यात्मिक उपदेश दिये। **सन् १९४८ में जब 'योग-वेदान्त आरण्य विश्वविद्यालय' (अब योग-वेदान्त आरण्य अकादमी के नाम से प्रसिद्ध) की स्थापना हुई, तो गुरुदेव ने उन्हें इसका उप-कुलपति और राजयोग का प्राध्यापक नियुक्त कर यथोचित सम्मान दिया। प्रथम वर्ष में उन्होंने महर्षि पतंजलि के योग-सूत्रों की प्रांजल व्याख्या प्रस्तुत कर जिज्ञासुओं को योग-मार्ग की प्रेरणा दी।**

आश्रम में अपने निवास-काल के प्रथम वर्ष में ही उन्होंने स्वामी शिवानन्द जी की अमर जीवन-कथा पर 'आलोक-पुंज' (लाइट् फाउन्टेन) नामक ग्रन्थ की रचना की। इस **ग्रन्थ पर गुरुदेव ने एक बार अपना मत व्यक्त करते हुए कहा था- 'ऐसा समय आयेगा जब शिवानन्द इस जगत् से प्रयाण कर जायेगा, किन्तु 'लाइट् फाउन्टेन' सदा अमर रहेगी।"**

कार्यबहुल एवं गम्भीर साधनामय जीवन होते हुए भी उन्होंने गुरुदेव के निर्देशन में सन् १९४८ में योग-म्यूज़ियम (योग-संग्रहालय) की स्थापना की जिसमें वेदान्त का सारा दर्शन तथा योग साधना की सभी प्रक्रियाएँ चित्रों द्वारा दर्शायी गयी हैं।

सन् १९४८ के अन्तिम दिनों में जब श्री निजबोध जी ने दिव्य जीवन संघ के महासचिव के अवकाश ग्रहण किया, तो गुरुदेव ने श्रीधर को उनके स्थान पर मनोनीत किया। अब उनके कन्धों पर संघ की व्यवस्था का महान् उत्तरदायित्व आ पड़ा। इस नियुक्ति के तत्काल बाद ही इन्होंने संस्था की सभी प्रवृत्तियों में उपस्थित रह कर, मन्त्रणा दे कर तथा बुद्धिमत्तापूर्वक उनका नेतृत्व वहन कर आध्यात्मिकता का पुट दिया। वह सभी को अपनी चेतना को दिव्य चेतना के समकक्ष लाने प्रोत्साहित करते रहते थे।

१० जुलाई १९४९ को गुरु-पूर्णिमा के दिन श्रीधर परम पूज्य श्री स्वामी शिवानन्द जी महाराज से दीक्षा ले कर संन्यास आश्रम में प्रविष्ट हुए। अब वह 'स्वामी चिदानन्द' के नाम से अभिहित हुए। चिदानन्द का अर्थ है- सर्वोपरि चेतना और ज्ञान में स्थित व्यक्ति।

भारत के विभिन्न भागों में दिव्य जीवन संघ की शाखाओं के कुशलतापूर्वक संयोजन का श्रेय उन्हें प्राप्त हुआ। इसके अतिरिक्त **सन् १९५० में गुरुदेव की नवयुग निर्माणकारी अखिल भारत यात्रा की सफलता में उनका योगदान चिरस्मरणीय रहेगा। सब लोगों के सम्मिलित प्रयास से भारत के बड़े-बड़े राजनैतिक तथा सामाजिक नेता गण, राजकीय उच्च पदाधिकारी तथा राज्यों के नरेशों में दिव्य जीवन के अभियान की ओर जाग्रति पैदा की।**

गुरुदेव ने स्वामी चिदानन्द को अपने व्यक्तिगत प्रतिनिधि के रूप में नूतन जगत् में दिव्य जीवन के सन्देश का प्रचार करने के लिए भेजा। उन्होंने अमरीका का यह विस्तृत पर्यटन सन् १९५९ के नवम्बर माह में आरम्भ किया। **अमरीकावासियों ने पाश्चात्य वैचारिक भूमि में पले हुए लोगों में भारतीय योग की व्याख्या प्रस्तुत करने में पूर्ण निष्णात भारत के एक योगी के रूप में उनका स्वागत किया।** उन्होंने दक्षिणी अमरीका का भी पर्यटन किया और माण्टीवीडियो तथा ब्यूनिस आयर्स आदि नगरों में धर्म-प्रचार किया। अमरीका से उन्होंने यूरोप की क्षिप्र यात्रा की और १९६२ के मार्च माह में आश्रम वापस आ गये।

अप्रैल १९६२ में उन्होंने दक्षिण भारत की तीर्थयात्रा के लिए प्रस्थान किया। अपनी इस यात्रा में वह दक्षिण के मन्दिरों और तीर्थस्थानों के दर्शन करते तथा आत्मप्रेरक भाषण देते थे। **गुरुदेव की महासमाधि से लगभग आठ-दश दिन पूर्व ही वह १९६३ की जुलाई के प्रारम्भ में ही दक्षिण की यात्रा से आश्रम में वापस आ गये। इसे वह एक अलौकिक घटना ही मानते हैं।**

अगस्त सन् १९६३ में वह गुरुदेव के उत्तराधिकारी के रूप में दिव्य जीवन संघ के परमाध्यक्ष तथा योग-वेदान्त आरण्य अकादमी के कुलपति निर्वाचित हुए।

महान् गुरु के एक सुयोग्य उत्तराधिकारी होने के नाते उन्होंने इन कतिपय वर्षों में न केवल इस संस्था की सुदूर देशों तक फैली हुई शाखाओं के ढाँचे में ही, वरन् विश्व-भर के उन असंख्य साधकों के हृदयों में भी जो कि उनका परामर्श, उनकी सहायता तथा मार्ग-दर्शन प्राप्त करने के लिए उत्सुक रहे हैं-**त्याग, सेवा, प्रेम और आध्यात्मिकता का झण्डा ऊँचा बनाये रखने के लिए अथक श्रम किया है। एक उन्नत कोटि के संन्यासी का अनुकरणीय जीवन यापन करने, आध्यात्मिकता का आकर्षण केन्द्र होने तथा विश्व में दिव्य जीवन के भव्य आदर्शों को पुनर्जीवन प्रदान करने के लिए अपने बहुमुखी उग्र प्रयास के कारण वह सभी लोगों के प्रेम-पात्र बन गये।**

पूर्ण अवधानपूर्वक सुरक्षित उनके व्यक्तित्व के स्वभावगत सौजन्य तथा स्वच्छन्द सेवाभावी प्रेमल स्वभाव ने लाखों व्यक्तियों के जीवन में अमित सान्त्वना प्रदान की है। देश के सुदूर और निकट के स्थानों की यात्रा के साथ-साथ स्वामी जी ने अभी हाल ही में मलेशिया तथा हाँगकाँग की यात्रा की और वहाँ पर सच्ची संस्कृति, आध्यात्मिकता तथा सभी कर्मों में अहंभावराहित्य की भावना को विकीर्ण एवं प्रसारित किया और इस भाँति सहस्रों व्यक्तियों के हृदयों में दिव्य जीवन यापन की कला स्थापित की। उनके इन गुणों के कारण जीवन के सभी क्षेत्रों के लोग उनके प्रति अमित कृतज्ञता का भाव द्योतन करते हैं।

संसार-भर में दिव्य जीवन के महान् आदर्शों के पुनरुज्जीवन के लिए अथक परिश्रम करते-करते गुरुवार, २८ अगस्त २००८ को परम आराध्य श्री स्वामी चिदानन्द जी महाराज ब्रह्मलीन हो गये।

* * *

असाधारण दिव्य व्यक्तित्व

"परोपकाराय सतां विभूतयः

-सज्जनों की सम्पत्ति परोपकार के लिए ही होती है।"

शिवानन्द जी ने मानव जाति को जिस महत्तम निधि का उत्तरदान किया है वह है चिदानन्द जो उनके ही प्रतिरूप में ढले एक असाधारण आध्यात्मिक व्यक्ति हैं, उनकी ही प्रतिकृति हैं। गुरुदेव अपने इस कथन में सुनिश्चित थे कि चिदानन्द अपने पूर्व-जन्म में एक उच्चकोटि के सन्त थे और उनका जन्म अपने इस अन्तिम जन्म में एक महान् कार्य पूर्ण करने के लिए हुआ है। गुरुदेव उनकी सर्वोपरि प्रशंसा करते थे। उन्होंने अपने शिष्यों को यहाँ तक कहा-**"आप सबको स्वामी चिदानन्द के साथ अपने गुरु के रूप में व्यवहार करना चाहिए। मैं भी अपने गुरु के रूप में उनका सम्मान करता हूँ। मैंने उनसे असंख्य शिक्षाएँ ग्रहण की हैं। मैं उनसे प्रेम करता हूँ। मैं उन पर श्रद्धा रखता हूँ।"** भविष्यवक्ता के इन शब्दों को अचिन्त्य,

अति-उदार प्रशंसोक्ति नहीं समझा जा सकता। जैसे-जैसे समय व्यतीत होता गया, स्वामी जी जो-कुछ भी कहते अथवा करते रहे हैं उन सबके द्वारा उन्होंने वास्तव में अपने अद्वितीय होने का औचित्य अधिकाधिक सिद्ध किया है। वह सर्वथा विमल दिव्य जीवन के उत्कृष्ट उदाहरण हैं। जिस प्रकार गुरुदेव उनसे अत्यन्त प्रभावित थे उसी भाँति अन्य सन्त भी स्वामी जी की उच्च आध्यात्मिक स्थिति से प्रभावित हुए हैं।

कहा जाता है कि नित्य सिद्ध आत्माएँ मानव जाति का पथ-प्रदर्शन करने के लिए समय-समय पर भूलोक में अवतरित होती रहती हैं। भगवान् की कार्य-विधि अबोधगम्य है; इसी भाँति ईश-मानवों की भी कार्य-विधि अबोधगम्य हुआ करती है। अपने क्षुद्र अहं से आबद्ध हम कठिनाई से समझ सकते हैं कि वे क्या थे और वे क्या हैं। **पाश्चात्य देशों में अनेक लोग स्वामी चिदानन्द पर भारत के सन्त फ्रान्सिस के रूप में श्रद्धा करते हैं।** असीसी के सन्त फ्रान्सिस की सरल प्रार्थना, जो स्वामी जी का प्रिय स्तुति-गीत है, निश्चय ही वह आदर्श है जिस पर उनके जीवन का निर्माण हुआ है। **अन्य कुछ लोग उनके भावप्रवण संकीर्तनों तथा सार्वभौम प्रेम के कारण उन्हें श्री चैतन्य के अवतार के रूप में पूज्य मानते हैं।** स्वामी जी का हृदय बुद्ध के हृदय की भाँति कोमल तथा प्रफुल्ल है। वह पीड़ित प्राणियों को देखते ही द्रवित हो जाता है तथा गम्भीर सहानुभूति और व्यग्रता से उनके पास जाता है। इनकी चिन्ता का विस्तार वनस्पति-जगत् तक है। महाशिवरात्रि के दिन आश्रम के भक्तजन भगवान् शिव की पूजा के लिए जब बिल्वपत्र एकत्र करने जाते हैं तो उन्हें यह परामर्श देते हैं कि वे वृक्ष की ओर कुल्हाड़ी उठाये हुए न जायें; क्योंकि इससे वृक्ष भयभीत हो जायेगा। वे वृक्ष के पास स्नेह तथा विनम्रतापूर्वक जायें और उससे पत्तियों के लिए याचना करें। पत्ते तोड़ने का कार्य कोमलता, प्रेम तथा भक्तिभाव से करें।

स्वामी जी की आन्तरिक स्थिति वर्णनातीत है। स्वामी वेंकटेशानन्द के शब्दों में, "उनका वर्णन करने का प्रयास न करें। आप असफल रहेंगे। मौन भगवान् का नाम है।"

एक बार राउरकेला में सभामंच पर जब उनका परिचय 'एक असाधारण दिव्य व्यक्ति' के रूप में दिया गया तो उन्होंने अपने भाषण के प्रारम्भिक भाग में कहा कि यदि श्रोताओं में से प्रत्येक व्यक्ति यह स्वीकार करे कि वह भी एक दिव्य व्यक्ति है तो मैं उस सम्मान को स्वीकार करता हूँ। यह निश्चय ही उनके जन्म के उद्देश्य को व्यंजित करता है। ऐसा प्रतीत होता है कि भगवान् ने चिदानन्द को हमें यह निश्चय कराने के लिए भेजा है कि जैसा सत्त्व उनमें है, वैसा सत्त्व-सम्पन्न व्यक्ति मर्त्य मानव मात्र नहीं समझा जा सकता है।

चिदानन्द गुरु-भक्ति के सर्वश्रेष्ठ उदाहरण हैं। गुरुदेव के समस्त उच्चतर गुणों से सम्पन्न होने पर भी इस महान् आत्मा ने केवल एक समर्पित शिष्य की भूमिका अदा करना ही पसन्द किया है। वे अपनी सभी महती नैतिक तथा आध्यात्मिक उपलब्धियों का श्रेय विनम्रतापूर्वक गुरु-कृपा को ही देते हैं। वे जो कुछ करते हैं, **वे जो कुछ भी कहते हैं वह सब वे सदा ही गुरुदेव शिवानन्द के नाम से ही करते हैं।** यह अहंभाव के पूर्ण उन्मूलन तथा गुरु के प्रति अशेष आत्मसमर्पण का उत्कृष्ट निदर्शन है। उन्होंने गुरुदेव के जीवन काल में अपने एक प्रेरणादायी प्रवचन में बल दिया "**गुरु भगवान् के समान नहीं है, गुरु भगवान् ही हैं।**" एक अन्य प्रवचन में उन्होंने श्रद्धामयी कृतज्ञता के साथ अपना उद्गार प्रकट किया : "पूर्व-जीवनों के अनन्त पुण्यों ने हमें इस पवित्र स्थान में बैठने तथा उस अपरिमित आध्यात्मिकता की, अपरिमित दिव्यता की जीवन्त ज्वाला से निःसृत अग्नि का दर्शन करने का यह उत्कृष्ट सुअवसर प्रदान किया है जिसे

गुरुदेव ने अपने में मूर्तरूप दिया है।" यद्यपि स्वामी जी स्वयं एक अत्युच्च कोटि के प्रबुद्ध योगी तथा आधुनिक जगत् की आवश्यकताओं का समाधान प्रस्तुत करने को उत्कृष्ट रूप में उपयुक्त हैं; **किन्तु वह कभी भी अपने ऊपर सन्त की कोई भी पदवी प्रक्षेपित करना नहीं चाहते हैं तथा अपने प्रत्येक कर्म को गुरुदेव के पवित्र चरणों में समर्पित कर पवित्र बनाते हैं। वह कभी भी ऐसा अनुभव नहीं करते कि वह गुरुदेव की गद्दी के उत्तराधिकारी बन चुके हैं। वह सदा ही अपने को गुरुदेव के सेवक के रूप में ही निर्दिष्ट करते हैं।** गुरुदेव के उत्तराधिकारी की हैसियत से, संस्था के अध्यक्ष के रूप में दिव्य जीवन संघ की शाखाओं की सम्बद्धता के प्रमाण-पत्रों पर औपचारिक रूप से हस्ताक्षर करते समय भी वह ऐसा ही करते हैं। वह कई बार विश्व की यात्राएँ कर चुके हैं, सनातन धर्म का सन्देश ले कर भारत के एक कोने से दूसरे कोने तक परिभ्रमण कर चुके हैं। उन्होंने इतनी प्रशस्तियाँ तथा बधाइयाँ प्राप्त की हैं जितनी कि अन्य इने-गिने व्यक्तियों ने ही प्राप्त की होंगी। अगण्य जिज्ञासुओं ने अपने जीवन के एकमात्र आनन्द के रूप में इनकी कल्याणकारी कृपा का आश्रय लिया है। इन सबको वह गुरुदेव के चरण-कमलों में सहज भाव से अर्पित करते हैं। इनका कथन है कि 'भक्त जिस भगवान् की उपासना करता है वह कम-से-कम कुछ अंशों में उसकी कल्पना पर आधारित होता है, किन्तु उसका गुरु तो शरीर (की दृष्टि) से उपस्थित है। शिष्य अपने सद्गुरु की पूजा करता है और इस भाँति वह अन्ततः गुरु-भक्ति को यथार्थतः भगवद्भक्ति में रूपान्तरित करने में सफल होता है।'

स्वामी जी ने किसी आचार्य के चरणों के पास बैठ कर उपनिषदों का आद्योपान्त अध्ययन कभी भी नहीं किया। उन्होंने गुरुदेव से भी उनका अध्ययन नहीं किया। तथापि गुरुदेव ने उनके सम्बन्ध में कहा : "यद्यपि स्वामी चिदानन्द ने उपनिषदों का परिशीलन नहीं किया है और न वह उनका परिशीलन करना चाहते ही हैं, पर यदि आप उनके प्रवचनों को ध्यानपूर्वक समझेंगे तो आपको ज्ञात होगा कि उनमें समस्त औपनिषदिक ज्ञान स्पष्ट किया गया है। वह उपनिषदों को अपने हृदय से प्रकट करते हैं। वह ब्रह्मसूत्र तथा गीता के मूर्तरूप हैं।" स्वामी जी ने १९६४ के साधना-सप्ताह में 'मेरा ब्रह्मसूत्र' पर प्रवचन किया। अपने इस बोधप्रद प्रवचन में उन्होंने इस बात पर बल दिया कि शिष्य के लिए गुरु-वाक्य ही ब्रह्मसूत्र है। ऐसा कह कर उन्होंने गुरुदेव-रचित एक पुस्तक निकाली और उसमें से एक परिच्छेद पढ़ कर सुनाया जिसमें वेदान्त का सार समाविष्ट था।

इस भाँति स्वामी जी अपने अनुकरणीय जीवन द्वारा यह शिक्षा देते हैं कि एक साधक को गुरुभक्ति-रूप कवच के द्वारा सदैव सुरक्षित रहना चाहिए। उनके उनतालीसवें जन्म-दिवस पर शिवानन्दाश्रम के सभी वरिष्ठ साधकों ने जब इन पर अपनी प्रशंसाओं की वृष्टि की तो स्वामी जी ने कहा, "आप सभी मूर्ति की प्रशंसा कर रहे हैं। इसका श्रेय तो मूर्तिकार को है। मूर्ति में मूर्तिकार की ही बौद्धिक क्षमता तथा प्रतिभा दृष्टिगोचर होती है। आप मूर्तिकार के विषय में सब-कुछ विस्मरण कर मूर्ति के विषय में सभी प्रकार की बातें कर रहे हैं। मूर्तिकार स्वामी शिवानन्द जी महाराज में विद्यमान है। स्वामी चिदानन्द के दिव्य अभियन्ता स्वामी शिवानन्द हैं। सभी गुणगान उन चरण-कमलों को ही उचित है।" स्वामी जी ने इससे यह दर्शाया कि व्यक्ति को किस प्रकार नाम तथा यश सहित अपने सभी कर्मों के फल को अपने गुरुदेव के चरणों में समर्पित कर देना चाहिए।

उनके एक अन्य मंगलमय जन्म-दिवस के अवसर पर समारोह में भाग लेने के लिए कैलास-आश्रम के हरिहर तीर्थ जी महाराज शिवानन्दाश्रम पधारे। उन्होंने अपने प्रवचन में स्वामी जी

की सेवाओं, आध्यात्मिक उपलब्धियों, उदारता तथा गुरु-भक्ति की प्रशंसा की। अपने उत्तर में स्वामी जी ने तीर्थ जी महाराज के प्रति उनके स्नेहमय शब्दों के लिए कृतज्ञता के गम्भीर भाव व्यक्त करने के साथ ही कहा, "**मुझ पर की गयी प्रशंसा की वृष्टि तो गुरुदेव पर ही की जानी चाहिए। मैं तो उनका निमित्त मात्र हूँ। यदि परिपक्व फल मधुर है तो इसका कारण उसका बीज है। आज मैं जैसा तथा जो कुछ भी हूँ, वैसा मुझे गुरुदेव की कृपा ने ही निर्मित किया है।**"

उड़ीसा के भद्रक नगर के एक साधना-शिविर में एक सच्चे जिज्ञासु ने यह जानने की अभिरुचि प्रदर्शित की कि क्या स्वामी जी अब भी किसी भावातीत लोक में गुरुदेव के दर्शन करते हैं। स्वामी जी ने उत्तर दिया कि उनके विषय में श्री गुरुदेव के दर्शनों का प्रश्न ही नहीं उठता। उन्हें प्रतिक्षण यह अनुभव तथा प्रत्यक्ष बोध होता है कि गुरुदेव उनके भीतर हैं, उनके बाहर हैं तथा आकाश के अणु-अणु में व्याप्त हैं।

स्वामी जी के पाश्चात्य जगत् के एक शिष्य डान ब्रिडेल ने उनसे अपना परिचय देने को कहा। इस पर स्वामी जी ने अपने कक्ष के अन्तिम छोर में वेदी पर प्रतिष्ठापित स्वामी शिवानन्द के एक चित्र की ओर इंगित कर दिया। तत्पश्चात् उन्होंने स्पष्ट किया कि जब गुरुदेव से यही प्रश्न किया जाता था तो वह प्रश्नकर्ता को दिव्य आत्मा अर्थात् अन्तरस्थ भगवान् की ओर निर्दिष्ट किया करते थे। डान ब्रिडेल ठीक ही कहते हैं: "यह स्पष्ट है कि शिवानन्द अपनी दिव्य सत्ता में निरवशेषीकृत हो चुके थे और स्वामी चिदानन्द, शिवानन्द नामक उस दिव्य सत्ता को इतना पूर्ण रूप से आत्मसमर्पित हैं कि उनका शिवानन्द के परम तत्त्व के साथ पूर्ण तादात्म्य हो चुका है।"

स्वामी जी अपने को शून्य तक अस्वीकृत कर अपने को तुच्छ समझने को सदा ही प्रयत्नशील रहते तथा अपने गुरुदेव के गुणगान के लिए सतत दृढ़संकल्प हैं। किन्तु उनकी-जैसी प्रभा किसी भी उपाय से गुप्त नहीं रखी जा सकती थी। 'किम्बली' के इस अमूल्य रत्न, जिसे शिवानन्द ने अपने मिशन के कोहनूर के रूप में खोज निकाला था, की नियति में विश्व के महत्तम तथा श्रेष्ठतम लोगों से श्लाघा तथा सम्मान प्राप्त करना था।

" **मैं प्रच्छन्न हीरा था;**
प्रखर रश्मियों ने मुझे उद्घाटित कर दिया।"

जब व्यक्ति स्वामी चिदानन्द के विषय में चिन्तन करता है तो कुरानशरीफ के उपर्युक्त सारगर्भित शब्द उसे सहज ही स्मरण हो उठते हैं।

भले ही एक व्यक्ति इस भागवत पुरुष का विविध दृष्टिकोणों से अवलोकन करे, उसे इनके कार्यों में कुछ चमत्कारिक वस्तु अवश्य ही दिखायी पड़ेगी। वेदान्त-ज्ञान के उन्नत शिखर से संसार के गतिमान परिदृश्य को देखते हुए शान्त तथा अनुद्विग्न रहते हुए भी किसी जिज्ञासु आत्मा से मिलने पर वह एक संवेदनशील, स्नेही माता-पिता का कर्तव्य अपना लेते हैं। वह अपने लिए कठोरतम रूप के उपवास, तपश्चर्या, आत्मत्याग तथा संयम निर्धारित करते हैं तथा दूसरों को वह स्नेहिल अनुरोध, भ्रातृवत् अनुराग तथा मातृसुलभ देखभाल प्रदान करते हैं। उनका अविरत तथा सुसंगत लोकोपकारवाद अगण्य अवसरों पर प्रभावशाली ढंग से अभिव्यक्त हुआ है।

स्वामी जी को सम्बलपुर विश्वविद्यालय के परिसर में स्थित 'ज्योति विहार' के अपने आवास-काल में एक बार अपने शिर का मुण्डन कराने के लिए एक नापित की आवश्यकता पड़ी। जब नापित आया तो स्वामी जी ने सौजन्यतापूर्वक उससे उसका नाम पूछा। नापित ने बतलाया कि उसका नाम माधव है। इस पर स्वामी जी ने नापित के रूप में उनकी सेवा करने वाले माधव के चरणों में साष्टांग प्रणाम किया जिससे वह परम आश्चर्य में पड़ गया। नापित की सेवाएँ प्राप्त करने के पूर्व उन्होंने सर्वप्रथम उस व्यक्ति को अपनी हार्दिक प्रार्थना निवेदित की। क्षौर-कर्म समाप्त होने पर स्वामी जी ने उसे भोग के रूप में प्रचुर फल तथा दक्षिणा के रूप में कुछ सिक्के दिये। इस भाँति वह अपने वैयक्तिक उदाहरण द्वारा यह शिक्षा प्रदान करते हैं कि जिज्ञासु को मानव में माधव का दर्शन करना चाहिए तथा मनुष्यत्व से देवत्व में उन्नत होना चाहिए।

ऐसी असंख्य घटनाएँ होंगी, स्वामी जी के दिव्य व्यक्तित्व के सुरभित सत्त्व को अभिव्यक्त करने वाले अगण्य पुष्प होंगे। उनका जीवन यह तथ्य व्यक्त करता है कि भगवान् अन्तरिक्ष के कण-कण में व्याप्त है। रहस्यवादी तुलसीदास की भाँति ही वह सर्वत्र तथा सबये भगवती सीता माता तथा भगवान् रामचन्द्र के दर्शन करते हैं। ऐसा सन्त जो सर्वत्र भगवान् को देखता है तथा भगवान् के अन्दर समस्त विश्व को देखता है, नित्य ईश्वरीय चेतना में स्थित रहता है। वह निस्सन्देह एक विरल दिव्य व्यक्ति है जो अनेक जन्मों की दीर्घकालिक साधना के अनन्तर यह अनुभव कर लेता है कि यहाँ जो कुछ भी है, वह सब भगवान् से व्याप्त है। भगवान् गीता में कहते हैं: "ज्ञानवान् व्यक्ति बहुत जन्मों के अतिक्रमण के पश्चात् समस्त जगत् वासुदेव-रूप है, इस प्रकार मुझे प्राप्त करता है, सुतरां ऐसा महात्मा बहुत ही दुर्लभ है" (७/१९)।

उनके इस अहंभाव के परम राहित्य तथा दृष्टि की निर्दोष शुचिता के कारण गुरुदेव ने दृढ़तापूर्वक कहा था, **"यह उनका अन्तिम जन्म है।" चिदानन्द निस्सन्देह वह प्रबुद्ध सन्त हैं, विरल दिव्य व्यक्ति है जो अनेक जन्मों की तपस्या के सुकृत के परिणामस्वरूप आज सर्वत्र भगवान् को देखते हैं और उनमें ही सदा-सर्वदा स्थित हैं। भगवत्साक्षात्कार-प्राप्त आत्माओं में वह मानव-जाति के वरदान के रूप में विभासित हैं। अब यह मनुष्य के हित में है कि वह उनका आह्वान सुने, "हे मानव! तुम दिव्य हो। तुम यह भौतिक शरीर नहीं हो, तुम यह चंचल मन भी नहीं हो। तुम ज्योतिर्मय दिव्य आत्मा हो। तुममें से प्रत्येक व्यक्ति दिव्य व्यक्ति है।" वह मनुष्य के पास मसीहा के रूप में आये हैं और इस महान् पाठ की शिक्षा देने के लिए घर से दूसरे घर, से पश्चिम पूर्व छ छोटी तथा तुच्छ झोपड़ी से भव्य भवन के लोगों में विचरण कर रहे हैं कि मनुष्य पाशविकता त्याग दे और मनुष्यता से देवत्व तक उन्नत बने और इस भाँति मानव-जीवन के प्रमुख उद्देश्य को प्राप्त करे। ...**

* * *

सन्तों की संगति में

"महत्संगस्तु दुर्लभोऽगम्योऽमोघश्च

-महात्माओं का संग दुर्लभ, अगम्य और अमोघ है"

– (नारदभक्तिसूत्र-३९)।

स्वामी चिदानन्द ने दो दशकों तक विश्व के एक छोर से दूसरे छोर तक भ्रमण किया, बहुत बड़ी दूरी तय की तथा महाद्वीपों के आर-पार अपने यश की सुरभि फैलायी। उन पर अतुलनीय श्रद्धा तथा प्रशंसा की वृष्टि होती रही, बहुत बड़ी संख्या में नगर तथा लोग उनके दर्शन की माँग करते रहे, आध्यात्मिक तथा प्रापंचिक दोनों प्रकार के अत्यधिक प्रतिष्ठित व्यक्तियों ने उन्हें अपनी श्रद्धांजलि तथा सकामनाएँ अर्पित कीं; किन्तु वह सदा की भाँति ही वही विनम्र तथा सरल सन्त, गुरुदेव का प्रकाश विकिरण करने वाले क्रकच (प्रिज़्म) बने रहे। लोक-संग्रह तथा **एकान्त-साधना के अतिरिक्त यदि उनकी कोई वैयक्तिक कामना थी तो वह थी सन्तों की संगति की। उनके मन में यह कभी नहीं आता है कि वह स्वयं एक उच्च कोटि के सन्त हैं जो अपने को किसी उत्कृष्ट एकान्तता में रखने का पर्याप्त कारण है। गुरुदेव ने बार-बार कहा था कि 'चिदानन्द एक जन्मजात सन्त, आदर्श योगी, परम भक्त तथा महान् ज्ञानी हैं' तथा इस दृढ़ोक्ति की सत्यता स्वामी जी के जीवन तथा कार्यों ने अनेक प्रकार से सिद्ध भी कर दी है।** निष्कल्मष व्यक्तिगत पवित्रता तथा सजातीय मानवों के लिए गहरी संवेदना, जो उनके समग्र जीवन की विशिष्टताएँ हैं, किसी महान् सन्त में ही हो सकती हैं। एक ओर तो वह अपनी समस्त संवेदना तथा लोक-संग्रह को रखते हुए भी अपने हृदय के गुप्त प्रकोष्ठ में निरन्तर प्रतिष्ठित रहते हैं, अनादि तथा अमर सत्ता के साथ एकीभूत रहते हैं तो दूसरी ओर अपनी पूर्ण अनासक्ति तथा निरवशेष आत्म-तुष्टि के होते हुए भी **वह सभी मतों तथा देशों के सन्तों से मिलने तथा उनके साथ संलाप करने को सदा लालायित रहते हैं। प्रवृत्ति के आन्तर तथा बाह्य क्षेत्रों में जैसा एकीकरण चिदानन्द लाते हैं वैसा केवल एक आदर्श योगी ही कर सकता है। उनके सदृश सरलता, विनम्रता तथा अपने चतुर्दिक् के सभी अस्थावर प्राणियों के प्रति प्रखर किन्तु अनासक्त प्रेम एक परम भक्त में ही हो सकता है। जीवन के गम्भीर दार्शनिक सत्यों के व्यक्तीकरण की उनकी सहजता तथा प्रशस्य सरलता केवल महान् ज्ञानी में ही हो सकती है।** उन्हें अपने भाषणों के लिए जिस सामग्री की आवश्यकता होती है, उसे वह प्रायः अपने अन्दर से ही लाते हैं; तथापि वह अपने सभी धर्मोपदेशों में ऐसी अति-जटिल तथा दुर्बोध समस्याओं की चर्चा करते तथा उन्हें स्पष्ट करते रहते हैं जिससे प्रकाण्ड वेदान्ती भी विस्मित तथा अभिभूत हो जाते हैं। जब वह अपना मुँह खोलते हैं, तो वह सहज ज्ञानी की अवस्था में होते हैं। जब कभी वह बातें करते हैं तो उनके ओष्ठों से सुचारु रूप से विद्वत्ता मात्र नहीं अपितु ज्ञान टपकता है। ये बातें इतनी सुविदित हैं कि इनके विस्तार में जाने की आवश्यकता नहीं है। भूमण्डल के सभी सुदूर भूभागों में असंख्य कृतज्ञ साधकों ने स्वामी जी में भक्ति, ध्यान तथा ज्ञान के अद्भुत समन्वय के अपने-अपने मूल्यांकन अंकित किये हैं। यदि मानव जाति के सामान्य लोगों की ऐसी अनुक्रिया है तो प्रश्न उठता है कि उनके समान के सन्त उन्हें किस रूप में देखते हैं? स्वामी जी सन्तों तथा योगियों के प्रति कैसा व्यवहार करते हैं और वे लोग इनके साथ कैसा व्यवहार करते तथा इन्हें कैसा मानते हैं? सन्तों की रीति अबोधगम्य होती है, उनके सम्भाषण की भाषा हमारे लिए अत्यधिक गूढ़ तथा रहस्यपूर्ण होती है। तथापि उनकी पारस्परिक अनुक्रियाएँ तथा समादर कभी-कभी ऊपर आते हैं और यह विचाराधीन पूतात्माओं की महत्ता को समझने का प्रयास करने वाले व्यक्ति के लिए निश्चय ही परम महत्त्व का विषय है।

सन्तत्व स्वामी जी के जीवनभर उनके अप्रतिरोध्य आकर्षण का विषय रहा है। किन्तु यह सन्तत्व ऐसा नहीं था जो किसी विशेष वर्ग अथवा साधना के अन्तर्गत हो। सामान्य संन्यासी से भिन्न, स्वामी जी अपने जीवन के प्रारम्भिक काल से ही, जहाँ-कहीं भी उन्हें सन्तत्व दिखायी देता,

उस पर ध्यान देने तथा उसको महत्त्व देने को पर्याप्त संवेदनशील थे। **गैरिक वस्त्र उनके हृदय में प्रवेश पाने के लिए कोई आवश्यक पारपत्र न था।** उदाहरणार्थ, गान्धी जी उनके लिए आजीवन एक महान् सन्त बने रहे। वह उन सर्वप्रथम सन्तों में से एक थे जो उनके जीवन में बहुत ही अल्पायु में आये तथा जिन्होंने उनके व्यक्तित्व पर अपना अमिट प्रभाव डाला। सत्य, अहिंसा तथा ब्रह्मचर्य, जो बापू जी के सिद्धान्त थे, श्रीधर के प्रारम्भिक जीवन से ही उनके वैयक्तिक स्वीकृत धर्म बन गये। राम-नाम ने, जो गान्धी जी का प्रायः प्राण था, उनके हृदय में उसके समान स्थान पाया। वास्तव में, व्यक्ति स्वामी जी के जीवन में ऐसी अनेक महत्त्वपूर्ण बातें देख सकता है जिनमें उनके ऊपर गान्धी जी का प्रभाव अन्तर्भूत है। उदाहरणार्थ व्यक्ति इस दिशा में उनकी कुष्ठियों की सेवा तथा हरिजनों की पूजा की ओर इंगित कर सकता है।

सन्तों की संगति में स्वामी जी का आचरण विशेष रूप से शिक्षाप्रद होता है। भारतीय परम्परा के पक्के अनुयायी वह वयोवृद्ध सन्तों को बड़ी ही विनम्रतापूर्वक नमस्कार करते, उनका अत्यधिक शिष्ट तथा अवधानपूर्ण रीति से आतिथ्य-सत्कार करते तथा उन्हें सम्मान देते हैं। गुरुदेव के जीवन-काल में कैलास-आश्रम के महामण्डलेश्वर स्वामी विष्णुदेवानन्द जी महाराज, हिमालय के चूड़ामणि तथा आकाशदीप उत्तरकाशी के स्वामी तपोवन जी महाराज, गुरुदेव के पूर्वाश्रम के सहपाठी तथा दक्षिण भारत के सन्त-विद्वान् कवियोगी महर्षि शुद्धानन्द भारती जैसे वयोवृद्ध लब्धप्रतिष्ठ आध्यात्मिक व्यक्ति आश्रम में आया करते थे। उस समय स्वामी जी महासचिव थे। वह उन सबकी सेवा का सभी उत्तरदायित्व अपने ऊपर ले लिया करते थे और इसे अपनी लोकप्रसिद्ध विनम्रता से सम्पन्न करते थे। कवियोगी के मिलन को वह एक शताब्दी के सत्संग के तुल्य मानते थे। इसी भाँति वह वर्ष में न्यूनातिन्यून एक बार गुरुदेव की भेंट के साथ कैलास-आश्रम के महामण्डलेश्वर के दर्शन करने को उत्सुक रहते थे।

स्वामी जी सन्त-महात्माओं के दर्शन के सुअवसर को कभी भी हाथ से नहीं जाने देते थे। हरिद्वार में श्री स्वामी ब्रह्मानन्द जी महाराज के एक शिष्य स्वामी आत्मानन्द जी महाराज द्वारा **'सत्संग के महत्त्व' के विषय को श्रवण कर स्वामी जी महाराज अत्यधिक प्रभावित हुए। उनके मन पर उनकी महानता की गहरी छाप पड़ी।**

कभी नर्मदा तट पर, कभी उत्तरकाशी, कभी स्वर्गाश्रम में वास कर साधना निष्ठित परमहंस नारायण स्वामी जी भागवतीय चेतना में अहर्निश अभिनिविष्ट रहते थे। उ**नके आनन्दमय मुखमण्डल तथा दिव्य आनन्दमयी अवस्था का दर्शन स्वामी जी लगातार घण्टों तक करते रहते। उन्होंने स्वयं भी अन्तरात्मा के आनन्द का अनुभव किया। स्वामी जी ने उनमें विनम्रता तथा सरलता को मूर्तिमान् पाया।**

श्री श्री माँ आनन्दमयी के साथ श्री स्वामी जी महाराज का सम्बन्ध तथा व्यवहार विलक्षण रहा। वे दोनों एक-दूसरे के प्रति दिव्यानन्द में अतिशय प्रेम तथा सम्मान प्रकट करते हैं। श्री माँ के हृदय में श्री स्वामी शिवानन्द जी महाराज तथा श्री स्वामी चिदानन्द जी के लिए असाधारण प्रेम तथा सम्मान है। वे इन दोनों में कोई भेद नहीं करती। **वह स्वामी चिदानन्द को 'शिवानन्द बाबा' सम्बोधित करती हैं।** उनका कथन है- "बाबा तो नित्य ही संयम की स्थिति में रहते हैं।" स्वामी जी सुनिश्चित हैं कि 'श्री माँ सदा सहज समाधि अवस्था में रहती हैं।' 'हे भगवान्, हे भगवान्' माँ का यह सुमधुर कीर्तन गायन सबको अभिभूत कर देता है।

श्री माँ उनसे सन्तान के समान वात्सल्य, ममता एवं स्नेह करती हैं, योगी के रूप में सम्मान देती हैं, सन्त के रूप में उनकी प्रशंसा करती हैं तथा उनके साथ मित्रवत् व्यवहार करती हैं। स्वामी जी भी उन्हें 'भगवती माँ' का अवतार मानते हैं। उनके लिए वह सन्त नहीं 'शुद्ध भागवत सत्ता हैं'।

श्री स्वामी जी महाराज जब कभी किसी सन्त से मिलते हैं तो विनम्रता तथा शालीनता के साथ आगे बढ़ कर उन्हें अपनी श्रद्धा अर्पित करते हैं। उनका यह सदाचार सबके लिए प्रेरणादायी उदाहरण प्रस्तुत करता है। **वह उत्कृष्ट कोटि के वेदान्ती हैं जो सदा अपने सच्चिदानन्द स्वरूप में स्थित रहते हैं। किन्तु वह परम सत्ता के सभी प्रकट रूपों की पूजा करते हैं तथा उनके उपासकों और सिद्धों को प्रणाम करते हैं।**

उत्तर भारत के एक विलक्षण रहस्यवादी सन्त 'हनुमान् सिद्ध नीम करोली बाबा' के प्रति भी स्वामी जी अत्यधिक पूज्य भाव रखते थे। एक बार कुमायूँ में नैनीताल के निकट स्थित कैंची ग्राम में उनका सम्मिलन हुआ। स्वामी जी ने तख्त पर विराजमान बाबा के तख्त के पास घुटने टेक कर प्रणाम किया तथा 'श्री हनुमान्' की स्तुति में कुछ स्तोत्र तथा भजन गाये। कीर्तन की समाप्ति पर **मौनावलम्बी बाबा ने अपने सभी शिष्यों को स्वामी जी महाराज के श्रीचरणों में नमस्कार करने का आदेश दिया और कहा कि यदि वह ऐसा नहीं करते तो वे सब एक उच्चकोटि के सन्त को साष्टांग प्रणाम करने का अनुपम अवसर खो देंगे।** इस पर स्वामी जी ने करबद्ध नम्रतापूर्वक कहा, **"मैं तो गुरुदेव शिवानन्द जी महाराज का एक साधारण सेवक मात्र हूँ।" आगे कहा, "यदि एक व्यक्ति एक पुष्प को अपनी हथेली में चिरकाल तक कस कर पकड़े रखे तो उसकी सुगन्धि हथेली में महकती रहेगी। अतएव गुरुदेव के दीर्घकालिक मंगलप्रद सम्पर्क के कारण उनके सद्गुणों की सुरभि कभी-कभी उनसे हो कर फैलती है तो उसमें कोई आश्चर्य नहीं।" यह है स्वामी चिदानन्द जी महाराज का ढंग। अपनी इस बालसुलभ सरलता एवं नम्रता वैभव से वह सन्त जगत् में सुशोभित हैं।**

श्री शंकराचार्य, श्री रामानुजाचार्य, श्रीमध्वाचार्य तथा अन्य महान् आचार्यों की पीठों के धर्माध्यक्षों के प्रति स्वामी जी की श्रद्धा अनुकरणीय है। परन्तु वह स्वयं श्री शंकराचार्य के केवलाद्वैतवाद के अनुयायी हैं। **'कांचीकामकोटि पीठ' के वरिष्ठ शंकराचार्य जगद्गुरु श्री चन्द्रशेखरेन्द्र सरस्वती के दर्शनार्थ एक बार वह शिशिरकालीन रात्रि में केवल एक वस्त्र धारण कर अपने हाथों में फलों की टोकरी ले, बिना किसी पूर्व सूचना के मन्दिर में पहुँच गये। धर्माध्यक्ष को दण्डवत् प्रणाम किया। धर्माध्यक्ष मौनव्रत में थे। उन्होंने अपनी मंगलमयी दृष्टि से आनन्दप्रद आशीष दिया। स्वामी जी के लिए यह पूर्णरूपेण सन्तोषजनक दर्शन था।**

आधुनिक भारत के सन्त 'ठाकुर श्री सीतारामदास ओंकारनाथ' बाबा जी महाराज 'महामन्त्र की कीर्तन साधना' में दृढ़विश्वास रखते थे। उनसे स्वामी जी का विशेष प्रेममय सम्बन्ध रहा। परस्पर प्रेमिल व्यवहार करते। एक बार 'एकाक्षर ॐ उत्कीर्णित लाठी उन्होंने स्वामी जो को ससम्मान भेंट की तथा अन्य अवसर पर एक पूरा 'व्याघ्रचर्म' सप्रेम भेंट किया। स्वामी जी ने इन्हें पावन 'स्मृति-प्रतीक' रूप में सहेज कर रखा हुआ है। स्वामी जी का कथन है कि **बाबा दिव्य नाम स्वरूप आधुनिक भारत के भगवत्साक्षात्कार प्राप्त सन्तों में वरिष्ठ सन्त हैं।**

स्वामी जी दक्षिण भारत के कन्हनगढ़ अवस्थित 'आनन्द आश्रम' के यशस्वी संस्थापक 'स्वामी रामदास' जी महाराज की आध्यात्मिक ऊँचाइयों से भलीभाँति सुपरिचित ही नहीं बल्कि अतिशय प्रभावित भी थे। पूर्वाश्रम में ही स्वामी जी पापा रामदास के आश्रम में जाया करते थे तथा पापा की आशीर्वाद-सम्पदा से समृद्ध हुए थे, जिससे वह प्रिय पापा स्वामी रामदास जी की आध्यात्मिक उत्तराधिकारिणी पुण्यात्मा माता कृष्णाबाई के निकट सम्पर्क में आ गये। माता जी स्वामी जी का बड़ा सम्मान करती थीं तथा उनका आश्रम-वास के समय पर वात्सल्यभाव से ध्यान रखती थीं। स्वामी जी के अपने शब्दों में "**माता कृष्णाबाई वात्सल्यमयी श्री माँ आनन्दमयी के सदृश ही हैं।**"

वृन्दावन के श्रीमद्भागवत के लब्धप्रतिष्ठ व्याख्याकार **स्वामी अखण्डानन्द जी महाराज स्वामी जी का 'विनम्रता के साक्षात् अवतार' के रूप में सम्मान करते हैं।**

स्वामी जी महाराज ऋषिकेश आने वाले प्रतिष्ठ सन्तों में से अधिकांश को शिवानन्द आश्रम में निमन्त्रित करते हैं। प्रज्ञाचक्षु स्वामी शरणानन्द जी (वृन्दावन) ऐसे ही एक सिद्ध महात्मा थे। वह प्रतिवर्ष ग्रीष्मकाल में गीता भवन (स्वर्गाश्रम) में आते और मास पर्यन्त प्रवचन करते। बाहर कहीं नहीं जाते थे। किन्तु स्वामी चिदानन्द जी के प्रति विशेष प्रेम के कारण वह उनके अनुरोध पर एक-दो बार शिवानन्द आश्रम आ कर प्रवचन करते तथा वहाँ के साधकों को आशीर्वाद देते।

गुरुदेव के समकालीन सन्तों के साथ स्वामी जी शिष्य सुलभ व्यवहार करते हैं। परमार्थ निकेतन के श्री स्वामी शुकदेवानन्द जी महाराज, श्री स्वामी भजनानन्द जी महाराज तथा दक्षिण स्थित शान्ति आश्रम के स्वामी ओंकारानन्द जी महाराज जैसे महात्माओं के प्रति स्वामी जी का श्रद्धास्पद व्यवहार अनुकरणीय है।

मोक्ष-आश्रम नैमिषारण्य के जगदाचार्य स्वामी नारदानन्द जी कहते हैं-"**स्वामी चिदानन्द जी गंगा की धारा हैं**", "**प्रेम की गंगा हैं। आपने चिदानन्द में शिवानन्द को प्राप्त कर लिया है। उदारता तथा निस्स्वार्थता में चिदानन्द शिवानन्द के समान हैं। वह वेद स्वरूप हैं।**"

उड़ीसा के एक रहस्यवादी सन्त 'बाया बाबा' के प्रति स्वामी जी की विशेष श्रद्धा थी। उधर 'बाया बाबा' भी स्वामी जी का विशेष सम्मान करते थे।

इस प्रकार चिदानन्द सन्त समूह में चमकते हैं। सन्त जन उन्हें अपना प्रेम और आदर प्रदान करते हैं जबकि स्वामी जी महाराज को न इसकी आकांक्षा ही है न अपेक्षा ही। तथापि सन्त जगत् में उनका विशिष्ट स्थान, असंख्य साधकों के लिए बहुत ही अर्थपूर्ण तथा शिक्षाप्रद है। वह परिव्राजकों और मठवासियों के लिए 'एक आदर्श संन्यासी', व्यावहारिक लोकोपकारी के लिए 'महान् परोपकारी', 'पददलितों के मित्र', साक्षात्कार प्राप्त ज्ञानियों के लिए 'एक व्यावहारिक वेदान्ती' तथा असंख्य भक्तों के लिए 'पराभक्त' हैं।

मैंने गुरुदेव को कभी किसी की प्रार्थना अस्वीकार करते नहीं देखा। सत्य तो यह है कि व्यक्ति द्वारा आवश्यकता प्रकट करने से पूर्व ही वे उसको भाँप जाते हैं। यदि एक बार आवश्यकता प्रकट की जाती है, तो जब तक वह पूर्ण नहीं होती, तब तक उन्हें चैन

नहीं पड़ता। पूर्ति भी उसी समय, उसी जगह होनी चाहिए। उपकार करने में देरी उन्हें सहन नहीं।

कई ऐसे अवसर भी आये जब भक्तों ने उन्हें संकीर्तन के लिए निमन्त्रित किया। उस समय वे ज्वर से इतने अस्वस्थ थे कि उस स्थिति में अन्य व्यक्ति शय्या पर ही पड़ा रहता; किन्तु स्वामी जी ज्वर की उपेक्षा करके शीघ्र ही संकीर्तन करने के लिए चले गये।

- स्वामी चिदानन्द

पददलितों के मित्र

"ते प्राप्नुवन्ति मामेव सर्वभूतहिते रताः ।

-सब प्राणियों के हित में निरत व्यक्ति मुझ (ईश्वर) को प्राप्त कर लेते हैं"

-(गीताः १२-४)।

चिदानन्द सेवा के लिए ही जीते हैं। उन्होंने इस पार्थिव जगत् में अपना सम्पूर्ण जीवन प्रभु के सृष्ट जीवों की निरन्तर सेवा के लिए अर्पित कर दिया है। वह पतितों के उदात्त उद्धारक तथा पीड़ितों की चिन्ता करने वाले उनके मित्र हैं। इस जन्मजात सन्त के दिव्य हृदय से सभी जीवधारियों के लिए अक्षय परिमाण में करुणा निस्सृत होती है। ऋषिकेश तथा उसके परिसर के अभागे कुष्ठियों के लिए तो यह साक्षात् परित्राता ही रहे हैं। अपने सम्बन्धियों द्वारा भी निन्दित, अभिशप्त तथा बहिष्कृत इन सजातीय व्यक्तियों के प्रति उनकी दयालुता तथा सहानुभूति सम्पूर्ण मानव-जाति के लिए सेवा तथा परोपकार का एक प्रेरणादायी पाठ रहेगा। आध्यात्मिक आचार्य तथा सन्त तो अनेक हुए हैं जिन्होंने अपनी व्यक्तिगत हानि उठा कर भी जिज्ञासुओं के मार्ग को प्रकाशित किया है; किन्तु उनमें अल्पसंख्यक व्यक्ति ही ऐसे हुए हैं जिन्होंने चिदानन्द के समान पूर्ण समर्पण-भाव से विकलांगों तथा रोगग्रस्तों के सहानुभूतिपूर्ण शारीरिक देखरेख के कार्य में आजीवन अपने को लगाये रखा हो। महापुरुषों में यीशु, बुद्ध, गान्धी, डेमियन, चिदानन्द बहुत ही कम संख्या में हैं जो इन सभी वैविध्य के मध्य परमैक्य का साक्षात्कार कर सामाजिक तथा मानवीय अभिरुचियों की मर्यादाओं से ऊपर उठते हैं तथा इस संसार के घोर पापी, निकृष्टतम कुत्सित तथा

पीड़ित प्राणियों को गले लगाते हैं। चिदानन्द ने अपने जीवन के प्रारम्भिक काल से ही इन हतभाग्य प्राणियों के लिए जो असाधारण सहानुभूति तथा चिन्ता प्रदर्शित की, उस पर जीवन-स्रोत पुस्तक में इससे पूर्ववर्ती एक अध्याय में प्रकाश डाला जा चुका है। **एक कुष्ठी की कुछ अस्थायी सहायता तथा देखभाल से सन्तुष्ट न रह कर उन्होंने उसके लिए अपने घर के अहाते में एक झोपड़ी बनवायी तथा उसका योग-क्षेम वहन किया। ऐसा करना उनके लिए स्वाभाविक ही था और ऐसा उन्होंने उस समय किया जब वह अल्पवयस्क ही थे।** सार्वलौकिक साहचर्य, आत्मिक एकता तथा सार्वभौम प्रेम की दृढ़ धारणा ने उन्हें न केवल मानवों में अपितु पक्षियों, पशुओं तथा चतुर्दिक् अलक्षित रूप से चलने तथा रेंगने वाले कीटों की सेवा करने को प्रेरित किया। अतएव एकान्त, मौन तथा साधना के लिए अपने घर तथा परिजनों को त्याग कर गंगा के तट पर आ जाने पर भी अपने नये घर-आश्रम के चतुर्दिक् के वातावरण को विदीर्ण करने वाले घोर व्यथा के क्रन्दन को अनसुनी न कर पाना उनके विषय में स्वाभाविक ही था। **उन्होंने इसे चित्त-विक्षेप के रूप में देखने अथवा इसके प्रति वेदान्तिक उदासीनता का भाव उत्पन्न करने के बजाय सक्रिय साधना तथा पूजा के रूप में, सार्वभौमिक प्रेम की सामान्य अभिव्यक्ति के रूप में संवेदनाशील सेवा को अपनाया।** प्रतिकूल प्रकृति तथा उदासीन मानवों से समान रूप से परित्यक्त बहुत बड़ी संख्या में कुष्ठियों को वहाँ किसी प्रकार अपने दुःखद जीवन को घसीटते देख कर वह अत्यधिक द्रवित हो उठे। उनकी दुर्दशा निश्चय ही अवर्णनीय थी। उन्हें रास्ते के किनारे पर तीर्थयात्रियों से जो कुछ भिक्षा-रूप में मिल जाता, उसी से वह किसी-न-किसी तरह अपने शरीर तथा प्राण को बचाये रखते थे। कुष्ठरोग के साथ-साथ उनमें अनेक प्रकार की शारीरिक तथा मनोवैज्ञानिक वेदनाएँ प्रवेश कर गयी थीं। उनमें से अनेक विविध प्रकार के अन्य रोगों से पीड़ित थे।

अपने अभ्यासगत सायंकालीन भ्रमण के समय स्वामी जी ने सड़क के किनारे भिक्षा माँगते हुए कुष्ठरोगियों की पंक्तियाँ देखीं। उनके भाग्य को सुधारना शीघ्र ही उनकी चिन्ता का मुख्य विषय बन गया। यद्यपि कुष्ठी गैरिक वस्त्रधारी संन्यासी से कुछ भी अपेक्षा नहीं रखते थे; **किन्तु यह युवा संन्यासी उनका परम मित्र तथा परित्राता बन गया।**

सन् १९४३ के प्रारम्भिक दिनों में जब स्वामी जी शिवानन्द धर्मार्थ औषधालय के कार्यभारी थे तब उन्हें कुष्ठियों की कुछ सार्थक सेवा प्रदान करने का अवसर स्वतः प्राप्त हो गया। उन्होंने उनके स्वास्थ्य की ओर पूरा ध्यान देना आरम्भ कर दिया। वह स्वयं ही उनकी झोपड़ियों तक उनके लिए औषधियाँ ले जाते थे। जब कुष्ठियों को पता चल गया कि उन्हें प्रेम तथा आशा लाने वाला मनुष्यों में एक देवदूत है, उनके शरीर, मन तथा आत्मा का उपचार करने वाला डाक्टर है तथा औषधालय के कार्यभारी स्नेहशील ब्रह्मचारी से औषधियाँ तथा परामर्श उपलब्ध हो सकते हैं तो वे बड़ी संख्या में औषधालय में आने लग गये। इस प्रकार शिवानन्द धर्मार्थ औषधालय कुष्ठियों के लिए एक चिकित्सालय बन गया। नरेन्द्रनगर के उदार महाराजा कुष्ठरोगियों के लिए प्रथमोपचार का सामान तथा मरहमपट्टी की सामग्री उपलब्ध कराते थे। उस समय कुष्ठियों को एकमात्र यही व्यवस्थित चिकित्सीय सहायता उपलब्ध थी। **अब स्वामी जी अपना रोगहर हाथ ले कर साक्षात् भगवान् के रूप में उनके समक्ष आये और स्वामी जी के लिए इन पीड़ितों के रूप में स्वयं भगवान् उपस्थित हुए। अतएव वह लोकोपकारी कर्म वास्तव में सर्वशक्तिमान् प्रभु की सेवा थी। स्वामी जी जब कुष्ठरोग की विकसित अवस्था में रोगियों के खुले व्रणों की मरहमपट्टी करने में संलग्न रहते तो उनके नेत्रों से करुणा व्यक्त होती तथा उनके मुख से गम्भीर वात्सल्य-प्रेम चतुर्दिक् प्रसरित होता था।** स्वामी जी उनके लिए प्रातः बड़े सबेरे ही औषधालय में

उपलब्ध रहते जिससे भिक्षा-संग्रह करने के लिए वे खाली हो जायें और औषधालय में आने वाले अन्य रोगियों के मन में उनकी उपस्थिति से विक्षोभ न हो। औषधालय में कुष्ठियों की इनकी महती सेवा से चिकित्सा शास्त्र के विशेषज्ञों में भी विस्मय तथा श्लाघा का भाव उत्पन्न होता। स्वामी जी रोगियों को जिस प्रकार रोग-मुक्त करते थे, उसे देख कर भारतीय सेना की चिकित्सा सेवाओं के तत्कालीन निर्देशक मेजर जनरल ए. एन. शर्मा चकित रह गये। **उन्होंने कहा कि यह युवक ब्रह्मचारी सामान्य व्यक्ति नहीं है।**

एक पंजाबी सन्त कुष्ठरोग से पीड़ित थे। रोग गम्भीर रूप से बढ़ चला था। वह कुछ दिनों तक तो सड़क पर ही दिन काटता रहा। अन्त में उसने एक दिन स्थानीय पाठशाला के एक अध्यापक से उन्हें शिवानन्दाश्रम पहुँचाने की प्रार्थना की। उस अध्यापक की सहायता से वह रोगी आश्रम के द्वार तक पहुँच पाया। उस समय रात्रि के दश बज चुके थे। जब स्वामी जी को यह सूचना प्राप्त हुई कि एक रोगी उनकी प्रतीक्षा कर रहा है तो रात्रिकालीन सत्संग समाप्तप्राय था। स्वामी जी हाथ में चोरबत्ती लिये हुए बाहर आ गये और उस स्थान पर गये जहाँ रोगी लेटा हुआ था तथा उसकी दयनीय दशा देखी। वह उसे तत्काल योग साधना-कुटीर के बरामदे में ले गये और गुरुदेव को सन्देश दे कर उस रोगी को आश्रम के अन्दर स्थान देने के लिए उनकी अनुमति माँगी। गुरुदेव स्वयं दया भाव से अभिभूत थे। उन्होंने आवश्यक अनुमति दे दी।

उसके पश्चात् स्वामी जी ने उस रोगी की सेवा-सुश्रूषा इतने प्रेम तथा ध्यान के साथ आरम्भ कर दी कि उससे बढ़ कर माँ भी नहीं कर सकती थी। उन्होंने उस रोगी के लिए, जिसने उनके चरणों का आश्रय लिया था, अपने कुटीर के सामने ही एक झोपड़ी बनवा दी। उन्होंने पन्दरह दिन तक लगातार सेवा कार्य किया तथा क्लोरोफार्म, तारपीन तथा अन्य औषधियाँ लगा कर रोगी के शरीर से रोगाणुओं को दूर करने में वह सफल हुए। वह अपने हाथों से उसके व्रणों की मरहमपट्टी करते थे। उन्हें प्रसन्नता थी कि उन्हें इस महान् सेवा में पुत्तूर के श्री सूर्यनारायण का सहयोग प्राप्त था। **मित्र, चिकित्सक, परिचारिका, रसोइया तथा स्वच्छता कर्मचारी की संयुक्त भूमिका निभाते हुए वह लगातार कई महीनों तक यह सेवा करते रहे। उस अभागे प्राणी का मल-मूत्र भी वह साफ करते थे। जब नाई ने उसके बाल काटने से इनकार कर दिया तब उन्होंने स्वयं ही यह कार्य किया। नियत तालिका के अनुसार उन्हें उस रोगी को दिन में आठ या दश बार खिलाना पड़ता था। आखिरकार, वह रोगी निस्सहाय के रूप में नारायण के अतिरिक्त अन्य कोई न था, अतएव उसके लिए जो कुछ भी आवश्यक होता उसे यह विनम्र भक्त (स्वामी जी) बड़ी ही परवाह, प्रेम तथा श्रद्धा के साथ करता था।**

एक दिन सन्ध्या के समय आँधी आयी जिससे रोगी की झोपड़ी नष्ट हो गयी। कुछ-न-कुछ अस्थायी प्रबन्ध करना था; किन्तु वहाँ कौन था जो उस असहाय प्राणी की ऐसे विषम समय में देख-भाल करता! उसके एकमात्र मित्र, सहानुभूतिशील स्वामी जी उस रोगी को एक समीपवर्ती गुफा में ले जाने के लिए आँधी रहते ही अपने कुटीर से बाहर आ गये। वह रोगी की खाट तथा अन्य सामान भी अपने कन्धों पर ले गये। आगामी दिवस को उन्होंने उस छोटी-सी गुफा को साफ-सुथरा किया और तब उस व्यक्ति के लिए एक नयी झोपड़ी बनवायी। तत्पश्चात् पुनः वही मूक सेवा धारा की भाँति अपने सामान्य तथा सहज प्रवाह के साथ चलती रही। वहाँ न तो कोलाहल था और न आत्माभिनन्दन अथवा थकान की भावना ही। यह सब सार्वभौमिक प्रेम की भावना से परम प्रशान्ति से किया गया। **रोगी कभी-कभी मिष्टान्न खाने की इच्छा व्यक्त करता। स्वामी जी उसके निर्देशानुसार उन मिष्टान्नों को तैयार करते और उसे स्फूर्तिदायक स्नान कराने के पश्चात्**

स्वयं उसे स्नेह पूर्वक परोसते। दूसरों के उपहास की उपेक्षा करते हुए तथा सभी प्रकार की कठिनाइयों को पार करते हुए अन्त में वह उस रोगी को रोगमुक्त करने में सफल हुए।

गुरुदेव ने टिप्पणी की कि स्वामी जी ने तो एक चमत्कार कर दिखाया। रोगी साधु, जिसके बचने की आशा अन्य लोगों ने छोड़ दी थी, अब स्वयं इधर-उधर चलने तथा स्नान करने में सक्षम हो गया। गुरुदेव ने बड़े ही प्रशंसात्मक भाव से कहा, **"चिदानन्द जी ने अपनी प्रेममयी सेवा से उसे नवजीवन प्रदान किया है।"** उन्होंने और आगे कहा कि वह स्वयं भी ऐसी पूर्ण भक्ति के साथ उसकी सेवा न कर पाये होते। जब स्वामी जी सितम्बर १९५० में अखिल भारत यात्रा में गुरुदेव के साथ जाने की तैयारी कर रहे थे तब उस रोगी ने स्वयं ही सूचित किया कि वह किसी मार्गरक्षी की सहायता से अमृतसर में अपने मठ में जाना अधिक पसन्द करता है। स्वामी जी ने उसे उसके मार्ग-व्यय के लिए रुपये दिये और इस प्रकार परम सन्तोष के साथ अपनी सेवा पूर्ण की। रोग-मुक्त करने का उनका यह चमत्कारिक कार्य शिवानन्दाश्रम की सेवाओं की गाथा में बहु-उद्धृत उदाहरण बन गया है। स्वयं गुरुदेव ने अखिल भारत यात्रा में अपने व्याख्यानों में स्वामी जी की इस असाधारण सेवा का कई बार उल्लेख किया था।

अखिल भारत यात्रा से वापस आने के पश्चात् स्वामी जी ने कुष्ठरोगियों की सेवा के कार्य को तीव्र कर दिया। **उनके दीर्घकालिक प्रयास के परिणामस्वरूप कुछ भूमि प्राप्त की जा सकी तथा ब्रह्मपुरी की कुष्ठ-बस्ती का निर्माण हो सका।**

सन् १९५२ में एक दिन मूसलाधार वर्षा हुई और चन्द्रभागा ने अपने किनारों को तोड़ डाला। मुनिकीरेती के निकट की कुष्ठ-बस्ती की कई झोपड़ियाँ बह गयीं। तब जिला अधिकारियों से स्वामी जी ने सम्पर्क किया। उन्होंने एक सार्वजनिक सभा का भी आयोजन किया और कुष्ठियों की विकट समस्या की ओर सभी सम्बन्धित व्यक्तियों का ध्यान आकर्षित किया। सभा में यह निर्णय किया गया कि एक कुष्ठ-निवारक-समिति स्थापित की जाये। उनके प्रयत्नों से परिणामतः टिहरी गढ़वाल जिले की **प्रथम कुष्ठ-निवारक समिति संघटित हुई।**

कुष्ठियों को, धन संग्रह करके, खाद्यान्न वितरण किया जाने लगा। उनसे कहा गया कि अब कुष्ठी अपने जीवन निर्वाह हितार्थ सड़क के किनारे नहीं बैठा करेंगे। जिला अधिकारियों ने बस्ती के लिए एक प्रतिष्ठित कुष्ठ निवारक चिकित्सक की सेवायें उपलब्ध करवायीं।

अधिकांश सामाजिक कार्यकर्ताओं के लिए इस प्रकार का कार्य दुष्कर हो सकता था। इधर देखिए श्री स्वामी जी महाराज अपनी आध्यात्मिक साधना के लिए जीवन का सब-कुछ त्याग कर आश्रम में आये थे, किन्तु **उन्होंने इन सबको भगवान् की पूजा के रूप में माना और जो उस महान् आध्यात्मिक ऊँचाई पर प्रतिष्ठित हो चुका हो उसके लिए कोई भी प्रवृत्ति वास्तव में चित्त विक्षेप का कारण नहीं बन सकी।**

जब स्वामी जी महाराज विदेश यात्रा पर थे तब निस्स्वार्थ सेवा पर उनके प्रवचन से प्रभावित माता सीता प्रथम व्यक्ति थीं जिसने इस निस्स्वार्थ सेवा के महान् यज्ञ में उदारता से प्रचुर दान दिया। अन्तर्राष्ट्रीय ख्याति प्राप्त महिला माता सिमोनेटा ने अन्तर तक प्रभावित हो, अपना पुराना व्यवसाय छोड़ ब्रह्मपुरी (ऋषिकेश, भारत) में कुष्ठियों की, शरणार्थियों, निस्सहायों तथा अनाथों की सेवा में अपना जीवन अर्पित करने के लिए शिवानन्द आश्रम, भारत आ गयीं। तब से

उनके लिए हार्दिक समर्पण तथा सहानुभूति से कार्य कर रही हैं। वह कहती हैं-"स्वामी जी महाराज में अपनी निष्ठा के कारण ही मैं यह कार्य कर सकती हैं। और मैं यह कार्य अपनी साधना के रूप में करती हूँ?"

इस सेवानिष्ठ महिला ने **श्री स्वामी जी की प्रेरणा शक्ति से ब्रह्मपुरी बस्ती में बुनाई की मशीने लगवायीं और स्वस्थ हो चुके कुष्ठ रोगियों को उत्पादनकारी कार्य में लगा दिया।** श्री स्वामी जी महाराज वहाँ जाते और उन्हें सप्रेम प्रोत्साहित करते। श्री स्वामी महाराज की प्रेरणा से 'दिव्य जीवन संघ' ने 'जिला कुष्ठ निवारक समिति' को अपना सहयोग प्रदान किया।

माता सिमोनेटा की सप्रयत्नों के फलस्वरूप **'इंग्लिश कुष्ठ-निवारक संस्था' का नाम 'चिदानन्द अन्तर्राष्ट्रीय कुष्ठ निवारक-निधि' रखा गया। इस भाँति हमारे समय के परम सहानुभूतिशील सन्त के नाम पर इस लोकोपकारी संस्था का जन्म हुआ। दिव्य जीवन संघ की सभी कुष्ठ-निवारक-प्रवृत्तियाँ इस निधि के माध्यम से चलती हैं।**

विशेष शुभावसरों जैसे शिवानन्द जयन्ती, चिदानन्द जयन्ती पर श्री स्वामी जी महाराज स्वयंसेवकों की टोली के साथ कार द्वारा 'ब्रह्मपुरी, ढालवाला तथा लक्ष्मणझूला बस्तियों' में जाते हैं। वहाँ मिष्टान्न, फल, दक्षिणा रूप में नकद भेंट देते हैं। कभी-कभी खाद्यान्न तथा वस्त्रादि भी ले जाते हैं।

माता सिमोनेटा ने अपने अन्य निष्काम-सेवा-साथियों के साथ (जैसे श्रीमान् व श्रीमती ब्रेल आदि) **वहाँ ढालवाला बस्ती में कताई-बुनाई की एक औद्योगिक इकाई खोली जो दरियाँ, ऊनी स्वेटर, गुलूबन्द (मफलर) तथा इसी प्रकार की अन्य वस्तुएँ तैयार करती है जिससे कुष्ठ-रोगी स्वावलम्बी बन सकें। तत्पश्चात् 'चिदानन्द कुष्ठ उपचार चिकित्सालय' खोला गया। वहाँ डाक्टर सूचक तथा अन्य उदार हृदयी जन अपनी सेवाएँ उपलब्ध करा रहे हैं।**

इसके अतिरिक्त स्वामी जी द्वारा आरम्भ किये गये कुष्ठ-निवारण-कार्यक्रम की एक अन्य प्रमुख ऐतिहासिक घटना है सन् १९७५ में लक्ष्मणझूला कुष्ठ-बस्ती में औषधालय की स्थापना। इससे उन रोगियों को बहुत आराम प्राप्त हुआ जिन्हें इससे पूर्व आश्रम के चिकित्सालय तक का पूरा मार्ग चल कर आना पड़ता था। **निस्सन्देह उनकी आध्यात्मिक शक्ति के कारण ही दिव्य जीवन संघ प्रति वर्ष सहस्रों रुपये व्यय करके स्थानीय कुष्ठ-बस्तियों के बन्धुओं को स्मरणीय लोकोपकारी सेवा प्रदान करने में सक्षम हुआ है।**

स्वामी जी की कुष्ठियों की सेवा उनकी दिव्य प्रकृति की सुन्दर अभिव्यक्ति है। स्वामी जी, जो कि दिव्य जीवन संघ के परमाध्यक्ष तथा वर्तमान समय के महत्तम आध्यात्मिक नेताओं में से एक हैं और जो दर्शन तथा पथप्रदर्शन के लिए सभी सामाजिक स्थिति तथा व्यवसाय के अनेक भक्तों से सदा घिरे रहते हैं, दीनों में से सर्वाधिक दीनों से मिलने, उनमें से प्रत्येक के साथ कुछ प्रिय वचन बोलने तथा उनकी शारीरिक सुख-सुविधा की देख-भाल करने के लिए किसी-न-किसी तरह समय निकाल ही लेते हैं। गिरिधारी की कहानी जिसके लिए इतिहास सम्भवतः स्थान न दे सके; किन्तु यह लोकोपकारवाद के इतिहास में, सच्चे भाईचारे तथा स्वभाव-सौजन्य के इतिहास में स्वर्णिम अक्षरों में अभिलिखित होगी।

स्वामी जी कदाचित् अपने प्रियतम शिष्य की जितनी देखभाल करते उससे भी अधिक उन्होंने गिरिधारी की की। बीस अथवा इससे भी अधिक वर्षों तक रोगी चलने में असमर्थ था और स्वामी जी इन सब वर्षों में उसे भोजन भेजते तथा सभी सम्भाव्य उपायों से उसकी देखभाल करते रहे। गिरिधारी सदा ही उनके ध्यान का प्रथम विषय होता था। उदाहरणार्थ, वह जब अपनी लम्बी विश्व-यात्रा पर आश्रम से प्रस्थान करने वाले थे तब वह उस व्यक्ति से विदाई लेने गये और कहा कि वह उसे प्रतिदिन स्मरण करते रहेंगे। उस बेचारे ने करबद्ध प्रार्थना की तथा स्वामी से आश्वासन प्राप्त किया कि वह उसकी मृत्यु से पूर्व उसके पास अवश्य आ जायेंगे।

उसकी प्रार्थनाएँ सुन ली गयीं। कोई भी यह विश्वास नहीं करता था कि स्वामी जी के आने तक गिरिधारी जीवित रह सकेगा। किन्तु ऐसा हुआ कि स्वामी जी नियत समय से ढाई माह पूर्व ही आश्रम वापस आ गये। जब उन्हें गिरिधारी की दशा का पता चला तो वह-जिन्होंने बीस वर्षों तक उसकी अथक सेवा-सुश्रूषा की थी-अब उसको शान्तिपूर्ण महाप्रयाण के लिए तैयार करने को उत्सुक थे। **उन्होंने एक साधारण कम्बल खरीदा और ढालवाला में गिरिधारी की झोपड़ी में उससे मिलने गये।** माता सिमोनेटा उस समय उसके पास उपस्थित थीं। **स्वामी जी ने मृदु स्वर में गिरिधारी से कहा: "अब आप अपना शरीर त्याग सकते हैं। आप शान्ति से जा सकते हैं।" इस भाँति असीम करुणाशील गुरुदेव को अपने पास बैठा हुआ देख कर सद्भाग्यवान् गिरिधारी कुछ समय तक प्रसन्न तथा शान्त रहा और तत्पश्चात् उसने अपना नश्वर शरीर त्याग दिया।** उसे उसी छोटे सूती वस्त्र से ढक दिया गया और दिव्य नाम के उच्चार के साथ उसके शरीर का दाहसंस्कार किया गया।

असहाय लोगों के प्रति स्वामी जी की ऐसी हृदयस्पर्शी सेवा तथा प्रेम के उदाहरण अनेक हैं। ढालवाला का एक अन्य कुष्ठी जिसकी पत्नी उसे छोड़ कर चली गयी थी, अपने दो बच्चों के साथ असहाय रह गया था। स्वामी जी को अपनी माँ से अलग होने पर बच्चों के दुःख तथा तत्परिणाम स्वरूप बेचारे पिता के कष्ट का पता चला। अतः वह उन बच्चों को आश्रम में लाये, उनको भोजन कराया तथा वस्त्र दिये और तत्पश्चात् उन्हें एक महिला चिकित्सक को समर्पित कर दिया जो उनकी माता जी बनीं। इस प्रकार के उदाहरण संख्यातीत हैं।

वर्ष में एक बार जब होली का आनन्दपूर्ण उत्सव आता है तब तीनों कुष्ठ-बस्तियों के कुष्ठी भाई कुछ-कुछ क्षणों के पश्चात् 'चिदानन्द भगवान् की जय' के तुमुल नाद के साथ नृत्य तथा गान करते तथा अपनी ढोलकै बजाते हुए आश्रम आते हैं। वे आते हैं, अपने मित्र तथा परित्राता से मिलते हैं और उस व्यक्ति को स्नेहमय नमस्कार करते हैं जो उनमें से प्रत्येक के जीवन में बहुत ही महत्त्वपूर्ण रहा है। इधर सन्त भी उनके समान उत्साह के साथ बाहर उनके पास आते, उनका स्वागत करते तथा उन्हें मिष्टान्न भेंट करते हैं। प्रेम तथा उल्लास, सन्त के मुख पर की कान्ति, कुष्ठियों के मुख पर की कृतज्ञता तथा स्नेह और पूर्णतया मुक्त तथा अबाध सत्कार-विनिमय दर्शकों में उन्नयनकारी आनन्दानुभूति संघटित करते हैं।

इस प्रकार उत्तराखण्ड की अभागी तथा पीड़ित आत्माओं ने स्वामी जी से शान्ति तथा आश्रय प्राप्त किया। सहानुभूतिशील स्वामी जी उन सबके न केवल चिकित्सक थे अपितु उनमें से प्रत्येक के स्नेहमयी माँ, कठोर पिता, सहायक मित्र तथा सर्वोपरि उद्धारक तथा परित्राता भी थे और हैं।

व्यक्ति अपनी निष्कपट निस्स्वार्थ सेवा से उद्दण्ड व्यक्तियों का हृदय सदा ही परिवर्तित कर सकता है। गुरुदेव ने अपनी पुस्तक 'कर्मयोग-सम्बन्धी संकेत' में लिखा है कि 'किस प्रकार ऐसे सभी व्यवहार हृदय को पवित्र तथा विशाल बनाते, संकल्पशक्ति को सुदृढ़ करते तथा आत्मज्ञान की प्राप्ति के लिए मन को तैयार करते हैं।' स्वामी जी के लिए तो ऐसे कार्य उनकी बाल्यावस्था से ही उनकी प्रकृति के अंग बन चुके हैं। तथापि इस अवस्था में भी, जब वह आप्तकाम हैं और व्यक्तिगत साधना के रूप में उन्हें कुछ भी करने को शेष नहीं रहा है, वह इन व्यवहारों को केवल इसलिए बनाये नहीं रखते कि यह 'लोकशिक्षा' है तथा उनके शिष्य तथा प्रेमी उसी मार्ग का अनुसरण करेंगे, वरन् इसलिए कि उत्कृष्ट कोटि की परोपकारिता का कोई परवर्ती-सामाजिक अथवा धार्मिक-उद्देश्य नहीं हुआ करता है।

उनके जीवन का आनन्द दूसरों को, यहाँ तक कि संसार-भर को दिन-रात निरन्तर शारीरिक, मानसिक, बौद्धिक तथा आध्यात्मिक रूप में अपना जीवन तथा समय प्रदान करने में पूर्णतया निहित है। इस तैलधारावत् आत्म-त्याग की भावना से सन्तुष्ट न हो कर श्री स्वामी शिवानन्द जी महाराज का जीवन सदैव नित्य नयी विधियों को अपनाने में रत है जिससे वे संसार-भर के क्षुद्र प्राणी तक पहुँच कर उसका कष्ट मिटा सकें। इस प्रेमिल और निष्काम सेवा में ही अपने को मिटा देने वाले स्वामी जी के हर्षोल्लास व अखण्ड आनन्द का रहस्य छिपा है। आनन्दपूर्ण त्याग ही जीवन है, प्रमाद या आराम नहीं।

-स्वामी चिदानन्द

गुरुदेव के साथ उनके अन्तिम दिनों में

"योगः कर्मसु कौशलम्
-कर्म करने का कौशल ही योग है"

(गीताः २-५०)।

तपश्चर्या तथा अज्ञात संचार की अवधि इस भाँति अकस्मात् समाप्त हो गयी। स्वामी जी २१ जून १९६३ को आश्रम वापस आ गये। गुरुदेव उस समय अपनी महासमाधि की तैयारी कर रहे थे। यद्यपि उन्होंने कोई विशिष्ट घोषणा नहीं की थी, उन्होंने १४ जुलाई की तिथि की ओर अपने शिष्यों का ध्यान स्पष्ट रूप से आकृष्ट किया था तथा उसे तिथि-पत्र में रेखांकित कर दिया था। उन्होंने उनसे प्रतीयमानतः विनोद के रूप में कहा था कि उन्हें ऊपर ले जाने के लिए वैकुण्ठ से विमान उतर रहा है। उनके अतिरिक्त अन्य किसी को भी इस अनागत का ज्ञान न हो सका कि उनका तिरोभावदिवस इतना शीघ्र आने वाला है। तथापि वह उत्क्रमण की तैयारी कर रहे थे। अतः उनके उत्तराधिकारी को उस महत्त्वपूर्ण दिवस से पर्याप्त समय पूर्व ही आश्रम को वापस लाना पड़ा। यह दैवकृत योजना थी जिसने स्वामी चिदानन्द को बारलोगंज से अपने पग वापस लेने को विवश किया।

जिन दिनों स्वामी जी आश्रम से बाहर थे, लगभग सैकड़ों मील दूर अपने आन्तरिक कोश में छिपे हुए थे, संयोगवश उन्हीं दिनों योग-समाज, चेन्नै के संस्थापक कवियोगी शुद्धानन्द भारती आश्रम पधारे। गुरुदेव उनके बालपन के सखा थे। उनके साथ अपने वार्ता-काल में उन्होंने गुरुदेव से पूछा, **"स्वामी जी! कृपया मुझे वह अनश्वर रिक्थ (वसीयत) बतलाइए जो आप मानव-जाति को अपनी पुस्तकों तथा भवनों के अतिरिक्त उत्तरदान करेंगे।** क्या यह दिव्य जीवन संघ है अथवा संन्यासियों का वह पुण्यशील समाज है जिसे आपने प्रशिक्षित किया है।" **शिवानन्द कुछ समय तक अन्तर्मुख तथा मौन हो गये और तत्पश्चात् उन्होंने कहा: "निस्सन्देह चिदानन्द। वह जीवित रिक्थ हैं जिसे मेरे पश्चात् दिव्य जीवन संस्था का कार्य चलाने के लिए मैं अपने पीछे छोड़ रहा हूँ।"** और तब, मानो कि उन्होंने ब्रह्माण्डीय योजना को अपने मन में पहले ही देख लिया हो, आगे कहा, "वह शीघ्र ही आ रहे हैं।" अनेक अवसरों पर उन्होंने यह संकेत दिया था कि चिदानन्द उनके उत्तराधिकारी हैं। सन् १९५३ में आश्रम में आयोजित विश्व धर्म परिषद् के समय उन्होंने कोलकाता के श्री एन. सी. घोष को ऐसा ही इंगित किया था। स्वामी विमलानन्द ने हमें बताया कि इसी भाँति एक अन्य अवसर पर जब गुरुदेव डायमण्ड जुबिली हाल में कार्यालय का कार्य कर रहे थे, गीता-प्रेस के प्रसिद्ध संस्थापक श्री जयदयाल गोयन्दका ने उनका दर्शन किया तथा उनसे अपने उत्तराधिकारी के चुनाव के विषय में पूछा। गुरुदेव ने उनके प्रश्न का उत्तर देने के बदले चिदानन्द जी को वहाँ तत्काल आने का सन्देश कहला भेजा। स्वामी जी आये और दूर से ही गुरुदेव को श्रद्धापूर्वक तीन बार दण्डवत् प्रणाम किया और तत्पश्चात् गोयन्दका जी को भी साष्टांग प्रणाम किया। अन्य कुछ भी नहीं हुआ। कुछ कहा भी नहीं गया; किन्तु सहज शिष्टाचार ने गीता-प्रेस के श्रद्धेय संस्थापक पर बहुत गहरा प्रभाव डाला। चिदानन्द की मात्र उपस्थिति तथा विनम्र दण्डवत् प्रणाम ने उन्हें एक असाधारण भाव से पूरित कर दिया। उन्हें उनका उत्तर प्राप्त हो गया।

इस चुने हुए उत्तराधिकारी को ठीक समय पर आश्रम वापस आना पड़ा। वह वहाँ २१ जून को पहुँच गये तथा पूछताछ करने पर उन्हें ज्ञात हुआ कि गुरुदेव किंचित् अस्वस्थ हैं तथा विश्राम ले रहे हैं; अतएव वह शान्तिपूर्वक अपने कुटीर को वापस चले गये। अगले दिन प्रातःकाल उन्होंने गुरुदेव के कुटीर में उनके दर्शन किये।

गुरुदेव तथा उनके इस चुने हुए शिष्य का पारस्परिक सम्बन्ध भी विलक्षण प्रकार का था। स्वामी जी श्रुतियों का श्रवण करने के लिए अपने ब्रह्मनिष्ठ गुरु के समीप कभी नहीं बैठे। गुरुदेव के समय-समय पर कहे हुए शब्द ही इस समर्पित शिष्य के लिए ब्रह्मसूत्र थे। वह न तो निरन्तर गुरुदेव के साथ रहे थे और न उनके निजी सचिव ही रहे थे। उनकी गम्भीरतम श्रद्धा तथा पूर्ण

विनम्रता गुरुदेव के साथ परमावश्यक विषय से अधिक वार्ता करने में उनके मार्ग में बाधक थीं। वह सदा ही श्रद्धापूर्ण दूरी बनाये रखते थे और यदि कभी वह उनसे बातें करते भी थे तो वह कुछ आवश्यक इने-गिने शब्द ही बोलते थे। जब स्वामी जी दिव्य जीवन संघ के महासचिव के उच्च पद पर थे और गुरुदेव के साथ व्यक्तिगत वार्ता करने के लिए अनेक अवसर उन्हें उपलब्ध थे, उस समय भी वह सामान्यतः विनम्र तथा संकोची थे। वह यद्यपि परमोच्च अद्वैत स्थिति से सम्पन्न थे तथापि वह शास्त्राज्ञा का पालन करते तथा सदा ही गुरुदेव से यथोचित दूरी पर रहते थे। गुरुदेव यह जानते थे कि उनका चुना हुआ शिष्य पूर्णतया अपने व्यक्तिगत अधिकार से चमक रहा है; सदा दिव्य चेतना में स्थित है तथा उसे उनके समीप रहने की कोई आवश्यकता नहीं है।

किन्तु अब समय आ गया था। गुरुदेव ने अपने उत्तराधिकारी को अपने पास खींच लिया और अपनी आध्यात्मिक शक्ति के महान् आवेग से उन्हें अनुप्राणित कर दिया। यही रहस्यमय शक्ति-संचार के नाम से विदित है। वह आध्यात्मिक संसर्ग समाप्त हो गया। शिवानन्द अब चिदानन्द में अन्तर्निविष्ट थे। दो एक बन गये। शिवानन्द अब चिदानन्द और चिदानन्द शिवानन्द स्वरूप थे।

गुरुदेव के लिए यह परम सन्तोष का विषय था कि उनके तिरोभाव के समय उनका योग्य शिष्य उनके पास था। अपनी महासमाधि से दो दिन पूर्व एक सायंकाल को गुरुदेव ने चिदानन्द जी की ओर उँगली से संकेत कर डा. कुट्टी से कहा: "वरिष्ठतम शिष्य।" उन्होंने इसे दो बार दोहराया। वह पाँचवें दशक में सूचित कर चुके थे कि राव जी उनके उत्तराधिकारी हैं। महासमाधि की पूर्व-सन्ध्या को वरिष्ठतम शिष्य के रूप में चिदानन्द जी का बार-बार उल्लेख कर उन्होंने पूर्वसम्प्रत्यय की पुष्टि की थी। जब गुरुदेव के तिरोभाव की अन्तिम घड़ी द्रुतगति से आ रही थी उनका योग्य उत्तराधिकारी उनके पास पूर्ण गाम्भीर्य के साथ उपनिषद् के महावाक्यों का उच्चारण करते हुए पाया गया। अन्त में जब १४ जुलाई १९६३ की अर्धरात्रि को उनके जीवन का अवसान हुआ तो वह गुरुदेव के कुटीर से बाहर आये और एकत्रित आश्रमवासियों से कहा, **"यह एक सुन्दर जीवन था और इसने अनेक जीवनों को सुन्दर आकार दिया।"**

जगद्गुरु ने अपना जीवनोद्देश्य पूर्ण कर लिया था। वह परम सत्ता में विलीन हो गये। गुरुदेव द्वारा अपने पीछे छोड़े गये शिष्यों में सबसे वरिष्ठ होने के कारण चिदानन्द ने गुरुदेव की महासमाधि के समय भगवन्नाम का उच्चारण किया। दो दिन पश्चात् १६ जुलाई १९६३ को अपराह्न में गुरुदेव के पवित्र पार्थिव शरीर को पूर्ण गाम्भीर्य तथा विषाद के साथ पवित्र समाधि-मन्दिर में भूसमाधि दे दी गयी। तत्पश्चात् चिदानन्द जी की वैयक्तिक देख-रेख में षोडशी क्रिया सम्पन्न हुई। गुरुदेव के रुग्णता-काल में तथा बाद में उनकी महासमाधि के अनन्तर चिदानन्द ने ही सभी महत्त्वपूर्ण व्यवस्थाओं की देखभाल की। एक बूंद भी अश्रुपात किये बिना, वह अत्यन्त गम्भीर तथा अन्तर्मुखी बदन से सभी आवश्यक कार्यों को करने तथा आश्रम के भक्तों के शोकसन्तप्त परिवार को सान्त्वना देने में लगे रहे। शेष समय वह सदा ही मौन, प्रशान्त तथा चिन्तनशील रहते थे।

१४ जुलाई १९६३ से १८ अगस्त १९६३ तक प्रकटतः (पद) रिक्तता की मध्यावधि थी। षोडशी-पूजा के समाप्त हो जाने पर अध्यक्ष निर्वाचित करने के लिए दिव्य जीवन संघ के प्रन्यासियों की एक बैठक हुई। उस समय स्वामी चिदानन्द जी मौन ध्यान में अत्यधिक तल्लीन रह कर सबसे दूर रहा करते थे। संघ के सदस्य चाहते थे कि अनिच्छुक स्वामी चिदानन्द जी महाराज गुरुदेव का स्थान ग्रहण करें। गुरुदेव के नाम में उन्हें वस्तुतः बलात् उस स्थान में डाला गया। सदा की भाँति ही विनीत तथा अनाटकीय रह कर उन्होंने उस समय अपना विचार प्रकट किया : "एक भार ले

लिया गया है। इस वहन करना ही होगा।" वह १८ अगस्त १९६३ को औपचारिक रूप से दिव्य जीवन संघ के अध्यक्ष निर्वाचित हुए। उत्तरदायित्व ग्रहण करने के समय उन्होंने गुरुदेव से एक भावपूर्ण बालसुलभ प्रार्थना की : "गुरुदेव की आत्मा से मेरी एकमात्र प्रार्थना यह है कि वह शुद्ध भाव से मुझे सेवा करने, कर्तव्यनिष्ठा से कार्य करने तथा योग्य रीति से जीवन यापन करने में समर्थ करें। वह इस सेवक को नम्रता का गुण और निस्स्वार्थपरता तथा समर्पण की योग्यता प्रदान करने से इनकार न करें।"

दिव्य जीवन संघ के इतिहास में १९४३ से १९६३ तक के दो दशक निस्सन्देह अत्यधिक महत्त्वपूर्ण हैं। पुण्यसलिला गंगा के तट पर भागवतीय सत्ता ने अपनी विभूति को दो रूपों-कर्मठ गुरु तथा समर्पित शिष्य में प्रकट किया। भारतवर्ष की पुण्य भूमि मेंभागवतीय सत्ता अपने को सद्‌गुरु के रूप में असंख्य बार प्रकट करती है, किन्तु केवल समर्पित तथा अधिकारी शिष्य दुर्लभ होते हैं। स्वामी चिदानन्द इन दुर्लभतम पुष्पों में से एक हैं जो गुरुदेव की किरण के स्पर्शमात्र से पुष्पित तथा विश्व को मधुर रूप देने के लिए अपने में सुरभि संचित किये हुए आये। अतः ऐसी आत्मसंयमी तथा समर्पित आत्मा सारे विश्वभर के साधकों को उनके जीवन-पथ में मार्गदर्शन कराने वाले सद्‌गुरु, वास्तविक मित्र, तत्त्ववेत्ता तथा मार्गदर्शक के रूप में उभर कर आगे आये तो इसमें कोई आश्चर्य नहीं। गुरुदेव ने उनसे किसी विशेष रहस्य का उद्‌घाटन नहीं किया। स्वामी जी ने गुरुदेव के जीवन से जो एकमात्र रहस्य सीखा, वह था : **"अपने को रिक्त बनाओ, मैं तुम्हें सम्पूरित कर दूँगा।" चिदानन्द वास्तव में शरणागति तथा गुरुभक्ति के मूर्तिमान् आदर्श हैं जो अपने गुरुदेव से अपृथक्करणीय हैं और मानव को महान् पाठ की शिक्षा देने में प्रवृत्त है: "ईश्वर परम गुरु है, विश्व सद्‌गुरु है। यह विश्व ईश्वर का दृग्गोचर रूप है। अतः विश्व गुरु है और जीवन शिष्यत्व है; अतएव आपको विश्व की सेवा तथा विश्व से ज्ञान प्राप्त करने के लिए ही जीवन यापन करना चाहिए। यह ही मोक्ष प्रदायक धर्म है।"**

स्वामी शिवानन्द जी के मानव-रूप का एक रेखा-चित्र देखिए। आश्रमवासियों व अभ्यागतों के साथ आत्मीयतापूर्ण व्यवहार करते हुए वे एक महान् एवं शान्तमूर्ति के रूप में अभिव्यक्त हो उठते हैं। वे सरल एवं महान् व्यक्ति हैं और सभी कार्य निष्काम व नितान्त अनासक्त भाव से करते हैं। जब उनके सान्निध्य में रहने का पर्याप्त अवसर मिलता है, तब उनके स्वर्ण-तुल्य विशुद्ध व्यक्तित्व में बहुमूल्य रत्न-रूपी विशिष्टताएँ प्रकाश में आती है।

इस महान् व्यक्ति की सर्वोत्तम विशिष्टता है-आचार और विचार में आश्चर्यजनक निष्कपटता। उनका मन सांसारिकता एवं कुटिलता से एकदम रहित है। वे शिशुवत् सरल हैं और उनकी क्रियाओं में प्रति-पग पर सरलता प्रतिविम्बित होती है। मन की दार्शनिक गरहाइयों के होते हुए भी यह सहज स्वतः प्रस्फुटित अकृत्रिमता शीघ्र ही उनकी थोड़ी देर की उपस्थिति से ही प्रकट हो जाती है, जो एक समय में एक गम्भीर सन्त और शिशु के अनूठे मेल को प्रदर्शित करती है।

जिन व्यक्तियों का स्वामी जी से सम्पर्क रहता है, उनके हृदय स्वामी जी की स्वभावगत सरलता के कारण प्रभावित हो जाते हैं।

-स्वामी चिदानन्द

दिव्य जीवन

"सर्वगुहातमं भूयः श्रृणु मे परमं वचः

-सम्पूर्ण गोपनीयों से भी अतिगोपनीय मेरे परम रहस्यमय वचन को फिर सुनो"

(गीता : १८/६४) ।

स्वामी चिदानन्द का इतिवृत्त मानव-व्यक्तित्व के पूर्ण दिव्यीकरण का इतिवृत्त है। यह मौन सेवा तथा पूर्ण अनात्मशंसा का इतिवृत्त है। अतः हिमालय का यह अप्रतिम सन्त अपने वैयक्तिक अनुभव के गम्भीर प्रमाण तथा अपरोक्ष अन्तर्ज्ञानोपलब्ध बोध के आधार पर जिज्ञासु-जगत् में यह घोषित कर सका, "योग मात्र निर्विकल्प-समाधि की अवस्था में ही नहीं है। यह जीवन के प्रत्येक क्षण में है।" उनका निष्कलंक जीवन ईश्वरपरायणता से प्रतिक्षण प्रदीप्त रहता है।

चिदानन्द का जीवन पवित्र सेवा की गाथा है। सेवा तथा आत्मत्याग उनके जीवन की प्रमुख विशिष्टताएँ रही हैं। उनका संस्कार ऐसा था कि श्रेष्ठ आध्यात्मिक सद्गुण उनके लिए सहज संकल्प-व्यापार थे। इस भाँति **इस निःसीम करुणापूर्ण सन्त ने अपनी किशोरावस्था में ही उन भाग्यहीन कुष्ठियों के पिता तथा चिकित्सक होने के भयजनक कार्य का उत्तरदायित्व अपने ऊपर ले लिया जिन्हें उनके सभी सजातियों ने ठुकरा दिया था और जिनको वे घृणा करते थे। औदार्य, पवित्रता तथा करुणा उनमें सहज रूप से आये। भौतिक समृद्धिमय जीवन के विचारों से वह कभी भी प्रलुब्ध नहीं हुए। उनका जन्म एक सम्पन्न परिवार में हुआ तथा राजकुमारों की भाँति उनका पालन-पोषण हुआ; किन्तु धन-सम्पत्ति तथा सांसारिक प्रतिष्ठा उनके लिए अर्थहीन थी। यौवनावस्था में भी वह इन्द्रियों के पाश से बहुत ऊपर थे। सेवा तथा आत्मत्याग ही उनके सुख-साधन थे। सन्तों की संगति ही उनकी एकमात्र लालसा थी। ध्यान उनकी एकमात्र वासना थी। पूजा ही उनका एकमात्र आमोद था।**

इस जन्मजात सिद्ध को अपने नवयौवन-काल में यह अनुभव हुआ कि वह संसाराग्नि में झुलस रहे हैं। अतः उपयुक्त समय आते ही उन्होंने तत्काल अपना घरबार त्याग दिया। वह एक पूर्णिमा के पुण्य दिवस को ऋषिकेश में पावनी गंगा के तट पर अपने गुरुदेव से मिले। उन्होंने गैरिक परिधान धारण कर लिया तथा पुरातन संन्यास-आश्रम से सम्बद्ध हो गये। एक दशक से अधिक समय तक वह उग्र सेवा तथा साधना में निमग्न रहे तथा एक ज्ञानी के रूप में विभासित हुए। इसके आगामी दशक में गुरुदेव के जीवनकाल में उन्होंने नयी दुनिया (अमेरिका) में योग तथा वेदान्त का सन्देश पहुँचाया। वहाँ से वापस आ कर वह स्वेच्छा से एक एकाकी परिव्राजक संन्यासी का जीवन यापन करते हुए एकान्तवास में निमग्न हो गये। वह संन्यासाश्रम से भी उदासीन हो चले। वह भगवान् पर निर्भर रह कर ईश्वरीय चेतना की भूमिका में आनन्दपूर्वक निवास करते हुए सभी पाशों से मुक्त हो एक अवधूत की भाँति स्वच्छन्द विचरण करते थे।

इस अवस्था में भगवदिच्छा उन्हें लोक-संग्रह की, उत्कृष्ट आध्यात्मिक सेवा की भूमिका में वापस लायी। **गुरुदेव स्वामी शिवानन्द ने अपना भौतिक कलेवर त्याग दिया तथा वह परम**

सत्ता में विलीन हो गये। अतः गुरुदेव के दिव्य मिशन के नेतृत्व का कार्य उनके चुने हुए शिष्य के कन्धों पर पड़ा। इस भाँति संसार का त्याग करने वाला व्यक्ति आधुनिक जगत् में सर्वाधिक सक्रिय धार्मिक कार्यकर्ता बना।

चिदानन्द सभी समयों तथा सभी अवसरों पर अश्रान्त सेवा करते हैं। वह प्रभु की इस विश्व-रूप में सेवा करते हैं। वह अपने गुरुदेव के दिव्य मिशन के माध्यम से सेवा करते हैं। वह राममय जगत् में निवास करते हैं। राम उनके जीवन में क्योंकर आये, यह प्रत्येक जिज्ञासु के लिए एक शिक्षाप्रद पाठ है। वह उनके जीवन में उनकी बाल्यावस्था में कोदण्ड राम की मूर्ति के रूप में आये जिनकी वह पूजा करते तथा जिनमें अपनी पूर्ण सत्ता रखते थे। एक परवर्ती अवस्था में वह उनके पास हतभाग्य कुष्ठियों के रूप में आये। तत्पश्चात् एक ऐसा समय आया जब वह रामदास के उत्प्रेरित शब्दों के रूप में उनके समक्ष प्रकट हुए। तदनन्तर रामकृष्ण परमहंस का जीवन अपनी ओर संकेत करते हुए एक आदर्श के रूप में उनके सम्मुख दिखायी पड़ा। सन्तों तथा रहस्यवादियों ने उन्हें आशीर्वाद दिया। **अन्त में भगवान् ने अपने सद्गुरु के रूप में उन्हें दर्शन दिया। शिवानन्द उनकी सत्ता में ही प्रवेश कर गये। वह गुरुभक्ति से आपूरित हो उठे। शिवानन्द उनमें वास करते थे और वह शिवानन्द में वास करते थे। दोनों मिल कर एक बन गये।** स्वामी कृष्णानन्द जी के शब्दों में "**उन्होंने (चिदानन्द ने) श्री गुरुदेव से जो रिक्थ आत्मसात् किया है, वह शतप्रतिशत है। हमें उनमें गुरुदेव के सभी चमत्कारात्मक तथा आश्चर्यकारक गुण दृष्टिगोचर होते हैं।**"

'सर्वं राममयं जगत्', 'सर्व विष्णुमयं जगत्', 'वासुदेवः सर्वम्', 'सर्वं खल्विदं ब्रह्म' - ये उनके जीवन के सूत्र तथा जीवन में आने वाली सभी परिस्थितियों के नुसखे हैं। **वह समग्र विश्व को ईश्वर की अभिव्यक्ति के रूप में देखते हैं। यह संसार गुरु है। जीवन शिष्यत्व है। अतः व्यक्ति को अपना जीवन संसार की सेवा करने तथा स्वयं संसार से ज्ञान ग्रहण करने के लिए यापन करना है। यह धर्म है जो व्यक्ति को मोक्ष तक पहुँचाता है। यही मानव के प्रति चिदानन्द के सन्देश का मूल भाव है। वह इस सन्देश को अपने व्यक्तिगत उदाहरण तथा गूँजने वाले आदेशों के माध्यम से सम्प्रेषित करते हैं।** अतः उनमें वर्तमान गुरुपन की भावना ने विनम्र शिष्यत्व के जीवन को वरण किया है। **वह अपने को सदा गुरुदेव का सेवक मात्र मानते हैं। वह अपने शिष्यों को गुरुदेव का शिष्य मानते हैं। इतना ही क्यों, वह उन्हें साक्षात् नारायण समझते हैं। वह आधुनिक काल के सन्तों के चूड़ामणि हैं, किन्तु वह सबके सामने नतमस्तक होते हैं। वह न केवल अपने गुरुजनों को अपितु अधमाधम लोगों को भी साष्टांग प्रणाम करते हैं।**

वह इस पार्थिव जगत् के सभी प्राणियों की अक्षय करुणा के साथ सेवा करते तथा उनसे प्रेम करते हैं। जब वह आध्यात्मिक उपलब्धियों की पराकाष्ठा पर पहुँच गये तो निरर्थक बातों में करुणाजनक रूप से उलझे हुए अपने सजातियों के दयनीय दृश्य देख कर उनका हृदय द्रवित हो गया। उन्होंने सभी प्रकार की असुविधाओं तथा कठिनाइयों पर ध्यान न दे कर उन लोगों को मुक्त कराने के कार्य के लिए अपने को समर्पित कर दिया। उन्हें ज्ञात था कि लोग अज्ञानतावश भूलें करते हैं। अतः उन्होंने उन्हें न तो तुच्छ समझा और न उनकी भर्त्सना ही की। वरन् उनको ऊपर उठाने के लिए वे स्वयं प्रेम से नीचे झुक गये। उनका प्रेम निःसीम है जो पशुओं, पक्षियों तथा कीड़ों तक को अपने क्रोड़ में लेने के लिए फैला रहता है।

चिदानन्द सनातन धर्म की किरणें प्रसारित करने वाले एक शुद्ध क्रकच (प्रिज्म) हैं। नितान्त निष्कल्मष साधु व्यक्ति तथा साक्षात्कार प्राप्त आत्मा होने से वह अमित आध्यात्मिक शक्ति से सम्पन्न हैं। उनकी उपस्थिति ही उन्नयनकारी अनुभव है। वह संघर्षरत जिज्ञासुओं के संशयों का निराकरण करती तथा उनमें नवीन आध्यात्मिक ओज अनुप्राणित करती है। उनके शिष्य अनेक हैं और ऐसे लोग तो असंख्य हैं जो यद्यपि उनसे दीक्षित नहीं है पर उन्हें अपना सद्गुरु मानते हैं। किन्तु यह प्रेम तथा करुणा का महान् स्वामी उन सबके मध्य में एक सामान्य साधक की भाँति विचरण करता है। **वह जन्मजात सिद्ध है, किन्तु जिज्ञासु की भाँति आचरण करते रहते हैं।**

असाधारण ऊँचाइयों पर आरोहण करने वाले ईश-मानवों ने मानव-मन पर अपनी अमिट छाप छोड़ी है। बुद्ध अपने पीछे 'चार आर्य सत्य' तथा 'अष्टांगिक मार्ग' छोड़ गये। शंकराचार्य ने हमें परम सत्ता के पाठ का उत्तरदान किया। चैतन्य ने हमें नाम-संकीर्तन का आनन्दातिरेक प्रदान किया। शिवानन्द ने मानवता की सेवा, भक्ति, ध्यान तथा प्रबोध-रूप साधन-चतुष्टय प्रदान किया। इसी अविच्छिन्न परम्परा में, चिदानन्द सृष्टिकर्ता की खोज किसी अज्ञात रहस्यमय लोक में न कर स्वयं सृष्टि में ही खोजने का उपदेश हमें अपने भाव तथा कर्म द्वारा देते हैं। उन्होंने मानव को कर्म-योग, प्रकाशपूर्ण चैतन्य-योग, प्राणियों की सेवा तथा भगवदाराधन-योग का उत्तरदान किया है। वह नित्य निरन्तर पुजारी-भगवान् के सतत आराधक हैं। वह अपने सजातियों को दिव्य जीवन यापन करने के लिए भावोद्दीपक उपदेश देते हैं। वह अत्यधिक उत्कण्ठा तथा गम्भीर भाव से परामर्श देते हैं:

भगवान् के विराट् स्वरूप को नमस्कार करने के लिए प्रतिदिन ब्राह्ममुहूर्त में जग जायें। दिन का कार्य आरम्भ करने से पूर्व उन-(प्रभु) के समक्ष श्रद्धा से नतमस्तक हों। शान्त चित्त तथा सुख-शान्ति तथा सन्तोष से पूर्ण रह कर दिनभर व्यवहार करें। इस संसार में कुछ भी गर्हित नहीं है। अपने दृष्टिकोण में परिवर्तन लायें। दुर्भाव त्याग दें। शत्रु को क्षमा कर दें। चिन्ता करना बन्द कर दें तथा अपने-आप मन्द-मन्द मुस्करायें। अनुभव करें कि यह समग्र संसार ईश्वर की अभिव्यक्ति है तथा आप इन सभी नामरूपों में उस ईश्वर की ही सेवा कर रहे हैं। जीवन को योग में रूपान्तरित कर दें। सदाचारी तथा परोपकारी बनने का प्रयास करें। **ईश्वर सरल लोगों के साथ चलता है, दुःखियों के प्रति अपने को उद्घाटित करता है, भद्र लोगों को विवेक प्रदान करता है तथा अहंकारियों से अपनी कृपा अलग रखता है। अतः अहंता त्यागें, सद्गुणों का अर्जन करें तथा मुक्त बने।** मन को सदा शान्त तथा निरुद्विग्न रखें। मन की बाधाओं पर विजय पाने का यही रहस्य है। बोलने से पूर्व अपने सभी शब्दों पर भली-भाँति विचार करें। इने-गिने शब्द ही बोलें। यह शक्ति को सुरक्षित रखेगा तथा मानसिक शान्ति तथा आन्तरिक शक्ति प्रदान करेगा। अपना प्रेम व्यक्त करें। इसे पुनः व्यक्त करें। इसे और भी पुनः व्यक्त करें। इसे एक बार पुनः और व्यक्त करें। मन को कभी भी पूर्णतया बहिर्गामी न होने दें। अपने मन के विजेता, अपनी वासनाओं के दमनकारी तथा **अपने भाग्य के स्वामी बनें; क्योंकि आप ही स्वामी हैं।**

गुरुदेव शिवानन्द आपको जगाने के लिए आये। भूल जायें कि आप यह नश्वर शरीर हैं। **स्मरण रखें कि आप शुद्ध चेतना हैं।** और अधिक निद्रा में न पड़े रहें। **तृणवत् विनम्र बनें। सेवा करें। प्रेम करें। दान दें। शुद्ध बनें। ध्यान करें। आत्मसाक्षात्कार करें। भले बनें। भला करें। दयालु बनें। संवेदनशील बनें। दिव्यता आपका जन्मसिद्ध अधिकार है।** इस दिव्यता को नियमित साधना द्वारा प्रकट करें। "**ईशावास्यमिदं सर्वम्।**" यह अखिल ब्रह्माण्ड ईश्वर से व्याप्त है। अतः मानव जाति की सेवा करें तथा दिव्यता की खोज करें।

ये चिदानन्द के सन्देश के स्वरचिह्न हैं। महान् गुरुदेव की भाँति वह समान रूप से बल देते हैं: "केवल विश्वास ही न कीजिए, वरन् वैसा बनिए तथा उसे जीवन में उतारिए।"

मानव-जीवन का महत् उद्देश्य भगवत्साक्षात्कार है। वृक्ष, पशु, पक्षी तथा कीड़े जन्म लेते तथा मर जाते हैं। उनका विकास नहीं होता है। उन्हें उनके स्रष्टा ने सद् तथा असद् में विवेक करने की चेतना से सम्पन्न नहीं किया है; किन्तु मानव-जीवन ईश्वर की अमूल्य देन है। किन्तु मानव-जीवन का पथ 'क्षुरस्यधारा' का पथ है। इन्द्रियों ने हमें अन्धा बना दिया है और हमारी चेतना का अपहरण कर लिया है। हमारे अनेक अन्धकूप हैं। जीवन के इस महान् तथा दुर्गम पथ में हमारी सँभाल करने तथा हमें सम्बल प्रदान करने के लिए यदा-कदा ईश्वर के सन्देशवाहक, हमारे मित्र तथा पथप्रदर्शक के रूप में प्रकट होते हैं। वह गुरु है। वह समग्र मानव जाति का है। वह आपके अन्तर्तम प्रकोष्ठ को खटखटाता तथा आपसे सानुकम्पा अनुरोध करता है: "हे भाग्यशाली मित्र! पालन करूँगा। आप अज्ञान की गहन निद्रा से कब जागेंगे?... आइए! आइए! अब जग जाइए। इस स्वप्न को भंग कीजिए। अपने जन्मसिद्ध अधिकार की माँग कीजिए तथा अपने सत्स्वरूप को पहचानिए। अभी तथा यहीं पर अपने स्वरूप का ज्ञान प्राप्त कीजिए तथा दिव्य आनन्द, शान्ति तथा ज्ञान के अनुभव में प्रवेश कीजिए जो कि आपका शाश्वत स्वरूप है।"

यह मानव जाति को चिदानन्द का दिव्य आह्वान है। ईश्वर करे कि हम इस रोमांचकारी उद्बोधन पर ध्यान दें तथा गीता के अर्जुन की भाँति कहें :

"करिष्ये वचनं तव" मैं आपकी आज्ञा का पालन करूँगा ।

ॐ तत्सत्!

ॐ

ओ मानव! सूर्योदय से ले कर सूर्यास्त तक तुम्हारे जीवन का एक दिन समाप्त हो गया। इस प्रकार से तुम्हारी जीवनावधि का कितना ही समय बीतता जा रहा है। इस अल्प काल में ही तुम्हें वह सब करना है जो जीवन के लिए अत्यन्त आवश्यक है। इसलिए उठो! जागो! अब देर मत करो। ऊपर उठ कर कुछ करो। आध्यात्मिक पथ पर सक्रिय हो जाओ।

जागो, अपनी आँखें खोलो। ईश्वर की इस रचना में उसे अपने समक्ष देखो। वह सर्वोच्च मानव से ले कर छोटे-से-छोटे कृमि में समान रूप से गतिशील है। इसी रूप में ईश्वर की सेवा और आराधना के लिए जिओ। सभी प्राणियों में बसने वाली दिव्यता की पूजा ही तुम्हारा जीवन हो।

गुरुदेव श्री स्वामी शिवानन्द जी महाराज तुम्हें दिव्यता के लिए जागरूक करते रहते थे कि तुम समस्त प्रकाशों के प्रकाश की शाश्वत प्रदीप्त किरण के समान ईश्वर के बालक हो। इसलिए पवित्रता, सत्य, दया, निष्काम सेवा से, ईश्वर के प्रति प्रेम, नित्य ईश्वर की प्राप्ति के लिए ध्यान करके अपने जीवन को दिव्य बनाओ। दिव्य जीवन के इस उत्कृष्ट कार्य में तुम्हें सफलता प्राप्त हो!

-स्वामी चिदानन्द

प्रियतम गुरुमहाराज

(स्वामी चिदानन्द जी द्वारा हस्तलिखित पत्र का टाइप प्रति)

THE DIVINE LIFE SOCIETY (REGD.)

Propagates Yoga and Vedanta and the Ethical and Spiritual Culture of India, Promotes Universal Love, the Unity of Religions, the ideas of Brotherhood, and the Spirit of Service among Mankind

Founder: H.H. SRI SWAMI SIVANANDA
P.O. SHIVANANDANAGAR 249 192, DISTT TEHRI GARHWAL, U.P.,HIMALAYAS, INDIA
(Grams: DIVINELIVE: Phone: RISHIKESH 40: Rly. Stn.: RISHIKESH. N. Rly.)

श्री शिवानन्दाश्रम ।

ॐ श्री शिवानन्दाय नमः ॥ जय गुरुदेव ॥ हमारे परम पूजनीय तथा प्रियतम गुरुमहाराज श्री स्वामी शिवानन्द भगवान का विषय कुछ लिखने का सु अवसर मिलना यह मेरे लिए एक परम सौभाग्य है। श्री गुरुदेव तो हमारे लिए एक आदर्श देवता पुरुष है। इस वर्तमान युग में आधुनिक जगत का विशिष्ट दिव्य विभूति होतेहुवे वे अपना स्वयं जीवन द्वारा विश्व मानव जगत को दिव्य जीवन का का मर्ग दिखलाया तथा उस दिव्य दिशा में प्रेरित किया ।।

गुरुदेव शिवानन्द जी शान्तिकी की दूत थे। विश्व प्रेम का प्रतिरुप थे। आपका उत्कृष्ट व्यक्तित्व धार्मिकता का आश्रय था । उनमें हम चारों योगों का सुन्दर समन्वय देखा और सीखा ॥ मानव इतिहास में गुरुदेव सदा काल के लिये अमर बनकर रहेंगे ॥ हे पाठक वृन्द आप भी गुरुदेव का दिव्य चरणों में भेंट चढाना हो तो तुम - दिव्य जीवन पथ पर चलो। । सत्य व्रती बनो। सदाचार को अपनावों । दयावान बनो। सेवाकरो। योगी बनो। भाल ज्ञान प्राप्त करो।

स्वामी चिदानन्द ॐ

यहाँ से दिव्य कृतित्व सम्बन्धी लेख-श्री गुरुदेव स्वामी शिवानन्द जी विषयक ।

श्री गुरुदेव स्वामी शिवानन्द जी महाराज-प्रार्थना के धर्मदूत

हममें से वे लोग जो ऐसी स्थिति में हैं कि न तो वे सेवा के क्षेत्र में हैं और न जिनको निष्काम सेवा का सुअवसर ही मिलता है, उनके सामने **स्वामी जी के जीवन का यह (प्रार्थना) एक ऐसा अल्प-परिचित पक्ष है जो प्रेरणा और महानता की सम्पदा से परिपूर्ण है। परहित हेतु गुप्त रूप से सतत प्रार्थना करना उनका अभ्यास है। जो लोग ठोस सेवा करने में अशक्त हैं, उन्हें सदैव, सर्वत्र, सभी अवसरों पर सबके हित के लिए प्रार्थना करनी ही चाहिए।** सभी प्राणियों के हित एवं कल्याण के लिए प्रामाणिकता से प्रार्थना आरम्भ कर देनी चाहिए। जिनको सहायता की आवश्यकता है, उन सबको हम अपनी निष्काम प्रेम की भावनाओं से रहस्यमय ढंग से सेवा कर सकते हैं। अपने-आपमें यह एक उत्कृष्ट सेवा है।

सेवा प्रेम का अभिव्यक्त स्वरूप है। व्यक्ति में विकसित यह असीम प्रेम विश्व-हित की दृढ़ सकारात्मक चाह से द्विगुणित होने पर प्रभावी एवं उच्च कोटि की सेवा का रूप धारण कर लेता है। स्वास्थ्य एवं सहयोग का हमारा ऐसा स्पन्दन ही सूक्ष्म तथापि अधिक सशक्त रूप से सामान्य हित-साधन करेगा।

स्वामी जी अब भी इसको अभ्यास में प्रतिदिन लाते हैं। मैंने देखा है कि वे निरपवाद रूप से सबके लिए प्रार्थना करते हैं। **यदि वे किसी रुग्ण व्यक्ति को देखते हैं, तो तत्क्षण उसकी स्वस्थता के लिए प्रार्थना करते हैं। किसी की मृत्यु के शोक-समाचार को सुनते ही दिवंगत आत्मा की शान्ति के लिए वे तुरन्त प्रार्थना करेंगे।** युद्ध की समाप्ति के लिए तथा बंगाल की क्षुधा-पीड़ित जनता की राहत के लिए वे नित्य नियमित रूप से प्रार्थना करते हैं। **लँगड़ाते कुत्ते को देख कर प्रार्थना उनके हृदय से प्रस्फुटित हो उठती है। उनकी उपस्थिति में किसी के पाँव से यदि चींटी कुचल जाती है, तो तत्काल ही उनका हृदय मूक भाव से प्रार्थना करने लग जाता है।**

किसी से अन्य व्यक्ति की अस्वस्थता का समाचार जानने पर स्वामी जी उस अपरिचित व्यक्ति के आरोग्य एवं स्वास्थ्य के लिए प्रार्थना करने लग जाते हैं। जब कभी उनके अपने दो शिष्य परस्पर असहमत होने पर क्रोधावेश में कुछ अपशब्द कह बैठते, तो स्वामी जी बिना किसी को बताये उस दिन निराहार रह कर दोषी व्यक्ति के लिए प्रार्थना करने लग जाते। **प्रार्थना करने का सतत अभ्यास उनके जीवन का इतना आधार बन गया है कि वह स्वामी जी के अस्तित्व से अभिन्न हो गया है।**

स्वामी जी प्रार्थना में निष्कपटता और प्रामाणिकता के प्रति प्रबल आस्थावान् हैं। एक बार एक प्रश्न के उत्तर में उन्होंने कहा था- "**हाँ, प्रार्थना में अमित प्रभाव है। निष्कपटता से की गयी प्रार्थना सब-कुछ करने में समर्थ है। यह तुरन्त सुनी जाती है तथा तत्काल फलवती होती है।** अपने नित्य-प्रति के संघर्षयुक्त जीवन में प्रार्थना करें तथा अपने लिए महान् प्रभाव की अनुभूति कीजिए। **प्रार्थना जिस ढंग से करना चाहें, करें। शिशुवत् सरल बनिए। निष्कपट बनिए। तभी आप सब-कुछ प्राप्त करेंगे।**"

उन्होंने अपने इसी जीवन में इसको प्रमाणित कर दिखाया है। मुझे इसमें किंचित् भी सन्देह नहीं है। स्वामी जी के पास देश भर से आने वाले असंख्य पत्रों को पढ़ने का सौभाग्य मुझे मिला हुआ था। यह कहना अत्युक्ति न होगा कि भारत के कोने-कोने से लोग उनसे पत्र-व्यवहार करते हैं। **मैंने पाया कि स्वामी जी के पास प्रतिदिन आने वाले असंख्य पत्रों में किसी व्यक्ति के**

लिए प्रार्थना करने का निवेदन होता था। कभी किसी की रोग-मुक्ति के लिए, कभी नव-विवाहित दम्पति की सुख-समृद्धि के लिए अथवा नवजात शिशु की मंगल-कामना के लिए निवेदन होता था। कोई पेचीदे कार्य में सफलता प्राप्त करने हेतु प्रार्थना के लिए अनुनय करता है। स्वामी जी द्वारा की गयी प्रार्थनाओं के रहस्यात्मक प्रभाव के प्रति कृतज्ञतापूर्ण प्रमाण-पत्र अनिच्छित होने पर भी आते रहते हैं।

इसे आप आत्म-विश्वास का फल कहिए या मनोचिकित्सा-सम्बन्धी नियम या कुछ भी कहिए, ठोस वास्तविकता तो यही है कि यह एक यथार्थ है। । हाल ही में लगातार तीन दिन आवश्यक तीन तार आये। उन तीनों में मालाबार के फैरोकी (Feroke) निवासी गोपाल एम. नामक दीर्घकालीन रोगी की ओर से प्रार्थना के लिए विनय की गयी थी। ऐसी असंख्य घटनाएँ हैं जिनको देख कर संशय करने का साहस ही नहीं होता कि स्वामी जी का प्रार्थना-विषयक दृढ़ अभिमत उनके निजी अनुभवों और प्रयोगों पर आधारित है।

आज के जाग्रत युग में एक बौद्धिक एवं तार्किक व्यक्ति नियमित प्रार्थना करने के विलक्षण काल- व्यतिक्रम पर हँसे बिना नहीं रह सकेगा। यह उचित होगा कि व्यक्ति अपने-आपसे पूछे कि प्रार्थना के कट्टर व आस्थावान् समर्थक गान्धी जी को नवयुग का महान् विचारक कैसे माना जाता है? यदि प्रार्थना प्राचीन परिपाटी मात्र ही होती, तो गान्धी जी की विवेचनात्मक बुद्धि, जिसकी श्रेष्ठता प्रश्नातीत है, इसको निःसंकोच ठुकरा देती। जो प्रार्थना को तुच्छ एवं असंगत समझते हैं, उन्होंने कभी विचार ही नहीं किया कि प्रार्थना क्या है और कैसे क्रियाशील होती है?

परजनों के लिए प्रार्थना एक प्रकार से उनकी भलाई चाहने का उत्कट भाव है। **सबकी भलाई के लिए निरन्तर चिन्तन करने का यह निःस्वार्थ भाव प्रार्थनापूर्ण हृदय में विशुद्ध प्रेम की धारा प्रवाहित करता है। विशुद्ध अहैतुकी प्रेम वस्तुतः स्वयं में ईश्वर है। प्रेम दिव्यता का सार तत्त्व है।** अतः आकाश-मण्डल में जिसके अन्तर्गत ब्रह्माण्ड का अस्तित्व है, प्रार्थना दिव्यता की धारा प्रवाहित करती है और जहाँ इसकी आवश्यकता पड़ती है, यह तरंग (लहरी) अपनी अनुग्रह-शक्ति से वहाँ पहुँच कर क्रियाशील होती है। विश्व के एक कोने के एक अँधेरे कक्ष की मेज पर बैठा हुआ व्यक्ति जब बटन दबा कर तत्काल अपना सन्देश सहस्रों मील दूर भेजने में समर्थ होता है, तब प्रार्थना के विधायक प्रभाव को सरलता से समझा जा सकता है। मानव में अन्तर्निहित मानसिक एवं अति-मानसिक शक्तियों को मानव-क्रियाओं के निर्धारण में सशक्त कारक किया जा रहा है। के रूप में तेजी के साथ मान्य

स्वामी जी इस दृढ़ विश्वास से इतने आपूरित हैं कि कोई भी पर्यवेक्षक जो निरीक्षण में विशेष उत्सुक है, जान जायेगा कि **उन्होंने प्रत्येक सम्भव कार्य और अवसर (प्रसंग) को प्रार्थना के कार्य से संयुक्त किया हुआ है। मैंने देखा है कि जो कुछ उनके अपने द्वारा या उनके मार्ग-दर्शन से अन्यों द्वारा सम्पन्न होता है, उन सबका शुभारम्भ व उपसंहार प्रार्थना द्वारा ही होता है। यदि किसी कमरे का निर्माण हो रहा होता है, तो सभी कर्मचारी नन्हें दीप के चारों ओर एकत्र हो कर पहले भगवद्-कीर्तन तथा प्रार्थना करते हैं और तब कार्य प्रारम्भ करते हैं। यदि किसी द्वारा प्रेषित संगमरमर की प्रतिमा पहुँचती है, तो तुरन्त ही प्रार्थना की जाती है।**

साधुओं को दिये गये भोज के अवसर पर प्रार्थना भी उस समारोह का अभिन्न कार्यक्रम होता है। पैकेट और पत्रिकाओं को डाक में भेजने के लिए बाँधते और लपेटते समय स्वामी जी कर्मचारियों को बताते हैं कि हाथों से कार्य करते हुए भगवद्- गुणगान करो। व्यर्थ की बातचीत मत करो। आश्रम में पर्वत पर स्थित भजन-कक्ष में वे तथा उनके थोड़े से कार्यकर्ता एकत्रित हो कर सम्मिलित स्वर व लय में ईश्वर का नाम गाते हैं। पुनः सान्ध्य वेला में गम्भीर मौन में विश्व शान्ति के लिए विश्व-प्रार्थना की जाती है।

* * *

अस्तित्व और कर्म

गुरुदेव श्री स्वामी शिवानन्द जी महाराज की बाह्य प्रवृत्तियों को देख कर नव-दर्शनार्थी उनके प्रार्थनामय जीवन का अनुमान नहीं लगा सकता, अपितु उसके ऊपर विपरीत प्रभाव पड़ता है। यदि कोई ऐसा व्यक्ति है जो काल्पनिक जगत् में विचरण नहीं करता, तो वह स्वामी जी हैं। मैंने इनसे अधिक व्यस्त और सक्रिय जीवन कोई और देखा ही नहीं। जिस तपस्वी ने पाँच वर्ष तक अपनी कुटिया में ही एकान्तवास किया और २५ वर्ष तक उस स्थान को नहीं त्यागा, उसकी गत्यात्मकता पर सहज ही विश्वास नहीं हो पाता। जब उनसे मेरा सम्पर्क नया था और उनकी आश्चर्यजनक क्रियाशीलता के साथ मैं अभ्यस्त नहीं हो पाया था, तो मैं इनकी व्यस्तता को देख कर चकित व असहाय रह जाता था। छह मास पूर्व जब कि इनका सत्तावनवाँ जन्म-दिवस मनाया गया, तब से आज तक यह भास नहीं हो पाता कि वह षोडशवर्षीय (युवक) नहीं हैं।

पाठक यह विश्वास रखें कि मैं लेशमात्र भी भावुक नहीं हूँ, पर जो यथार्थता मेरे सामने है, उसे स्वीकार करने को बाध्य हो जाता हूँ। यौवनमय उत्साह से परिपूर्ण हाव-भाव उनकी अवस्था को नकारता है। प्रायः देखा गया है कि अनायास कोई विचार अथवा कोई नयी योजना उनको जैसे ही सूझी, तो तत्क्षण ही आभा-युक्त मुखाकृति से बाल-सुलभ उल्लास प्रस्फुटित हो उठता है, उनके अन्तर्मन की प्रफुल्लता नेत्रों में चमक उठती है। इससे यह प्रकट हो जाता है कि उनकी कल्पनाशीलता में उद्भूत विचारों को क्रियान्वित करने में वे कितने संलग्न हो जाते हैं। वे किसी कार्य को अधूरा नहीं छोड़ते। उनमें अनिश्चितता नहीं है। झिझक तो नाम मात्र को नहीं है। वे कर्म-सम्पादन में जितने प्रवीण हैं, उतने ही प्रार्थनामय जीवन में निष्कपट, प्रगाढ़ एवं परम पावन है।

कल-कल ध्वनि-युक्त प्रवाहित गरिमामयी मौन गंगा के तट पर स्थित शान्त कुटीर से आप प्रातः १० बजे बाहर पधारते हैं। निज कक्ष से बाहर निकलते ही वे भिन्न व्यक्ति बन जाते हैं। वे जीवन-विद्युत् तरंगों से परिपूर्ण हो उठते हैं। ईंटों से निर्मित द्वार से संस्था के प्रांगण में उनके

तीव्र गति से पहुँचते ही छोटे-से शिष्य-समुदाय में सक्रियता प्रकट होने लगती है। उनकी उपस्थिति में किसी का भी क्रियाहीन रहना असम्भव हो जाता है।

कतिपय प्रमादी साधकों के साथ उनका व्यवहार रोचक था। ऐसे ही एक साधक का स्वभाव दम्भपूर्ण एवं प्रमादी था। अपने इस स्वभाव को वह आन्तरिक आध्यात्मिक शान्ति के रूप में अभिहित करता था। पर्वत पर स्थित सामूहिक पूजा-गृह के बाहर चौड़े बरामदे में स्वामी जी कुछ आगन्तुकों के साथ वार्तालाप कर रहे थे। ढीली-ढाली मस्त चाल से चलते उक्त साधक पर तत्काल स्वामी जी की दृष्टि पड़ी। उन्होंने कहा- "युवक! इधर आओ। आपके साथ क्या समस्या है? क्या भूखे रहते हो? क्या रसोईघर में भोज्य पदार्थ कुछ भी नहीं है या तुम्हारे पास भोजन करने के लिए समय नहीं है? तुम्हारे बाल अभी सफेद नहीं हुए; किन्तु अर्ध भूखे व्यक्ति की-सी चाल क्यों है? तुम्हारी शक्ति और यौवन कहाँ चला गया है? तुम दौड़ कर फुर्ती से क्यों नहीं चलते? मैं तुम्हें दौड़ते हुए देखना चाहता हूँ। आओ, उपासना-गृह का एक चक्कर लगाओ।"

उस नव-युवक का संकोच देख कर एकाएक मेरी ओर मुड़ कर स्वामी जी ने मुझे गम्भीर वाणी में कहा- "इस युवक को मैं सैनिक-शिविर में भेजना चाहता हूँ। सैनिक प्रशिक्षण द्वारा मदहोश साधुओं में भी शक्ति का संचार हो सकता है। मेरा विचार है कि यह व्यक्ति जन्मता ही आलसी है। ऐसा मालूम पड़ता है कि इनके लिए वैराग्यमय जीवन शारीरिक शिथिलता और निष्क्रियता का पर्याय है। भगवान् जाने ऐसे विचार इनको कहाँ से प्राप्त होते हैं? मेडिकल कालेज के युवा छात्रों से तथा नगर-निवासियों के व्यस्त जीवन से तुम्हें कुछ सीखना चाहिए। एक युवा चिकित्सक कितना स्फूर्तिवान्, योग्य और उत्साह से परिपूर्ण होता है। अस्पताल के दैनिक जीवन में वह कितनी फुर्ती से एक प्रखण्ड से दूसरे प्रखण्ड में, एक वार्ड से दूसरे वार्ड में, बरामदों तथा सीढ़ियों से जाता है। हम उसको अपना आदर्श क्यों नहीं मानते? इसके विपरीत एक संन्यासी को तो गतिशील कार्यकर्ता होना चाहिए; क्योंकि वह (लौकिक) जीवन की विविध सन्तापपूर्ण चिन्ताओं से मुक्त होता है। कल से ही स्फूर्तिवान् बन जाओ। मैं तुम्हें इस रूप में देखने के बजाय दौड़ता हुआ देखूँ। मैं तुम्हें तत्काल सर्वत्र उपस्थित देखें। साधुता शिथिलता का पर्याय नहीं है। यदि ऐसा होता तो कुर्सी, मेज, स्तम्भ, भित्ति भी इस श्रेणी में आ जाते। प्रिय युवक! अपने में स्फूर्ति लाओ और निष्णात कार्यकर्ता में परिणत हो जाओ।"

संशय-युक्त युवक के मुख से हड़बड़ी व उद्विग्नतापूर्वक ये शब्द निकले "श्रीमान्! मैं ऐसा ही बनूँगा।" ये शब्द कहता हुआ वह वहाँ से शीघ्रता से चला गया। दूसरे ही क्षण स्वामी जी ने अभ्यागतों को सरल चित्त से सम्बोधित करते हुए कहा - "आपका इस सम्बन्ध में क्या विचार है? क्या मैंने उचित नहीं कहा? अथवा क्या यह उबा देने वाला उपदेश मात्र था? क्या आपका यह विचार नहीं है कि प्रत्येक युवा को सक्रिय और स्फूर्तिवान् होना चाहिए?"

विश्वास कीजिए कि दूसरे ही दिन से न केवल वह साधक बल्कि ऐसे ही एक-दो और ढीले-ढाले साधक चुस्ती एवं शक्तिमय स्फूर्ति से कार्य करते देखे गये।

इस सन्दर्भ में एक विलक्षण प्रमेय के वर्णन किये बिना नहीं रह सकता जिसने विशिष्ट रूप से मेरा ध्यान आकृष्ट किया है। स्वामी जी जब किसी व्यक्ति के कर्म का मार्ग-दर्शन करते हैं, तो वह न चाहते हुए भी देर-सवेर उसका अनुसरण करने ही लग जाता है। वह चाहे कितना ही प्रमादी क्यों न हो, चाहे उसको निर्देशों का विस्मरण ही हो जाये अथवा भले ही उस समय उनके

मार्ग-दर्शन को वह इतनी महत्ता न दे या व्यस्तता के कारण उस पर ध्यान देने में असमर्थ रहे; किन्तु अन्ततः वह स्वामी जी की शिक्षाओं का अनुपालन करने लग ही जाता है। इसके पीछे का रहस्य क्या है?

पाठक निस्सन्देह रूप से जानते हैं कि ऐसे सहस्रों क्रुद्ध पितृ गण, निराश माताएँ, असहाय शिक्षक वर्ग, आचार्य गण, भयकारी अधिकारी गण तथा कटु शिकायतें करने वाले नेता गण हैं जो सदा आदेशों का अनुपालन करवाने में जनता को आकृष्ट करने में असफल रहे हैं। वे नहीं जान पाते कि किस प्रकार जनता का ध्यान अपने आदर्शों की ओर आकर्षित किया जाये? किन्तु ऐसे कार्यकर्ताओं से, जिनका लौकिक जीवन से परस्पर कोई सम्बन्ध नहीं है और जिनका उद्देश्य सब बन्धनों से विमुक्त होना है, एक ऐसा विलक्षण व्यक्ति है जो संक्षिप्त उपदेश व परामर्श देता है; परन्तु अनुपालन की विधियों व पद्धतियों की चिन्ता नहीं करता। फिर भी थोड़े ही समयोपरान्त बड़े उपयुक्त प्रयास से तदनुसार आचरण होता देखते हैं। इसका रहस्य कहाँ है? इसकी व्यावहारिक उपयोगिता से क्या ग्रहण कर सकते हैं ?

मैं इस परिणाम पर पहुँचने में बाध्य हो जाता हूँ कि व्यक्ति की कथनी और करनी के अन्तर में यह गूढ़ रहस्य छिपा है। लोग केवल किसी व्यक्ति के शब्द सुन कर ही कार्य के लिए प्रेरित नहीं होते; परन्तु जिसका आचरण कथनानुसार है, उसका अनजाने ही अनुसरण करने लग जाते हैं। वाणी के अनुसार आचरण करने वाले व्यक्ति के सामने अत्यधिक अड़ियल तथा अहंकारी व्यक्ति भी नतमस्तक हो जायेगा। उदाहरण-रूप में स्वयं को आदर्श-रूप में प्रस्तुत करना ही उसके अनुसार करवाने की पद्धति है। जो केवल उपदेश मात्र करते हैं और वे जो स्वभावानुसार सतत निस्स्वार्थ रूप से सब प्राणियों की समदृष्टि से सेवा करते है-दोनों में महान् अन्तर है। इस दिशा में परामर्श और अनुपालन करने की गम्भीर समस्या की समीक्षा करने से निस्सन्देह सन्तप्त अभिभावक, उपदेशक, शिक्षक और नेता गणों को बहुत अधिक सहायता मिलेगी।

आधुनिक युग के चमत्कारी पुरुष गान्धी जी के जीवन के राजनैतिक एवं सामाजिक नैतिकता की उपलब्धियों की पृष्ठभूमि में यही नियम क्रियाशील है। लाखों के हृदयों में उनके नाम का प्रभाव है और उन्हें एक शक्ति के रूप में जाना गया है। यह उल्लेखनीय उपलब्धि आस्थाओं के प्रति जीवन की समरसता एवं परम निष्कपटता के कारण ही उन्हें हो पायी है। क्षुद्र कार्य को भी पूजा का रूप देना उनके जीवन का प्रभावकारी अंग है।

कहा जाता है कि जब उनके सुपुत्र देवदास गान्धी का विवाह सुविख्यात श्री राजगोपालाचार्य की सुपुत्री से हुआ, तो विवाह-संस्कार के तुरन्त बाद टोकरी और झाड़ू ले कर उस क्षेत्र के कुछ स्थानों की सफाई के लिए कहा। वर के पिता की विवाह-संस्कार के उपलक्ष्य में नव-दम्पति को यही शुभ भेंट थी। सेवाग्राम के महान् सन्त स्वयं उन आदर्शों की जीवन्त मूर्ति हैं जिनका प्रचार वे स्वयं भी करते हैं। ठीक यही विशेषता आनन्द-कुटीर के गतिशील सन्त की विभिन्न प्रकार की प्रवृत्तियों में प्रकट होती है। मुझे यह प्रत्यक्ष अनुभव हुआ कि स्वामी जी के लिए नैतिक तथा आध्यात्मिक सत्य केवल धर्म-ग्रन्थों की शोभा बढ़ाने वाले वाक्य मात्र नहीं हैं, अपितु अपने जीवन की कथनी और करनी में साम्य प्रमाणित करने के तथ्य होते हैं। व्यक्ति को उन उपदेशों और शिक्षाओं का जिन्हें वह सुनाना और अनुसरण कराना चाहता है, मूर्तिमान् अभिव्यक्ति बनना चाहिए।

तभी जगत् उसका उसी प्रकार अनुसरण करेगा जैसा कि दिवस रात्रि का करता है। नहीं तो कथावाचक ब्राह्मण की तरह आज्ञा पालन करवाने की आशा रखना व्यर्थ होगा।

ऐसा कहा जाता है कि कर्नाटक के एक व्यावसायिक कथावाचक ब्राह्मण को एक समय दैनिक श्रोताओं में से एक प्रशंसक ने एक सब्जी की टोकरी भेंट की। उपहार में दी गयी शाक-सब्जियों के अतिरिक्त उसमें कुछ एक ताजा रस-भरे बैंगन भी थे। पण्डित ने घर पहुँच कर अपनी पत्नी को टोकरी देते हुए कहा कि इनसे स्वादिष्ट कढ़ी तैयार करो। बात यह थी कि उससे एक दिन पूर्व पण्डित जी ने कथा में कई वस्तुओं का गुण-कथन करते हुए बैंगनों को प्रतिदिन के आहार में त्याज्य बतलाया था, क्योंकि वह मानव में तामसिकता को उद्दीप्त करते हैं। उनकी पत्नी ने, जो उस व्याख्यान में उपस्थित थी, यह सब सुना था उसने साहस के साथ पण्डित जी को शास्त्रोक्त उक्ति का स्मरण दिलाया। तत्क्षण वह क्रुद्ध हो गया और चिल्लाया-"ओ नारी! क्या तुम मुझे धर्म का पाठ पढ़ाना चाहती हो? सुनो! ग्रन्थों में वर्णित बैंगनों का प्रयोग वर्जित कहा गया है, टोकरी वाले बैंगनों का नहीं। शीघ्रता से टोकरी वाले बैंगनों को पकाओ!"

स्वामी जी पूर्ण योग्यता के साथ अपने लेखों में वर्णित विचारों और वचनों को निरन्तर तथा यथाशक्ति अपने कार्यों में चरितार्थ करते हैं। यही कारण है कि उनके वचनों का उल्लंघन अन्य व्यक्तियों के लिए असम्भव-सा हो जाता है। स्वामी जी से प्राप्त होने वाला व्यक्तिगत परामर्श जीवन्त, अधिकारपूर्ण किन्तु मूक होता है।

विश्व के सभी धर्मों के अनुसार प्रार्थना तथा पूजा जीवन का आधार है। अधिकांश साधकों के लिए नित्य दैवी उपासना हेतु यह साधन है। प्रार्थना से मनोभाव की वृद्धि होती है तथा दिव्यता की दिशा में गति होती है। इस भाँति प्रार्थना साधक को पवित्र कर उन्नत बनाती है।

-स्वामी चिदानन्द

जीवनोपदेश

प्रस्तुत विषय अन्य विषयों की अपेक्षा आध्यात्मिक जीवन तथा व्यावहारिक **आध्यात्मिक साधना से अधिक सम्बन्धित है**, जिसका निष्पक्ष अध्ययन करने पर अनेक शिक्षाएँ मिलती हैं- वन्दनीय **श्री स्वामी शिवानन्द जी महाराज** के साधना-काल की प्रारम्भिक अवस्थाओं में कठोर अनुशासन, तपश्चर्या, अन्तर्द्वन्द्व, निस्पृह अभीप्सा का अनवरत अथक प्रयत्न, दृढ़ संकल्प की प्रगतिशील विजय, निश्चित दिनचर्या एवं मायावी रूप मन पर उत्तरोत्तर विजय से उनका व्यक्तित्व पूर्णतः निखर उठा, जिसका उद्घाटन इस संन्यासी व्यक्तित्व में प्रत्यक्ष हो रहा है।

वैराग्य और आध्यात्मिक उपलब्धियों से कई शिक्षाप्रद तथ्यों का प्रकटन होता है। जीवन के प्रारम्भिक वर्ष उस बुनियाद बनाने का काम कर रहे थे जिस पर परवर्ती प्रेरणादायी आध्यात्मिक जीवन का मकान निर्मित होना था।

अपने जीवन के प्रारम्भिक काल से गुरुदेव श्री स्वामी शिवानन्द जी महाराज स्वभावतः हर कार्य के लिए, जिसको वे हाथ में लेते थे, अपनी सारी (ईश्वर-प्रदत्त) शक्ति व समस्त ध्यान लगा

दिया करते थे। उस विशेष कार्य से सम्बन्ध न रखने वाली हर बात को वे दूर रखते व उसकी उपेक्षा करते। उदाहरणार्थ-एक नवयुवक के रूप में, जब वे किशोर ही थे, शरीर को सुडौल बनाने की धुन उन्हें सवार हो गयी। तत्क्षण उनके मस्तिष्क ने सोत्साह इस विचार को पकड़ लिया और उसमें लीन हो गया। तत्काल उन्होंने व्यायाम का विशेष अभ्यास आरम्भ कर दिया। पुराणपन्थी माता-पिता इसके बहुत अनुकूल नहीं थे, तो भी वह किशोर प्रभात-वेला में ही तीन अथवा साढ़े तीन बजे शय्या त्याग देता और परिवार के दूसरे सदस्यों के (निद्रा त्यागने) से पहले ही घर से चला जाता ।

स्मृति आने पर चमक भरी आँखों से उन्होंने एक बार कहा - "मैं इस बात को अब भी स्वीकार करता है। कि कई बार मैं अपनी शय्या पर तकिये को इस तरह बिछा देता कि जैसे निर्दोष गहन निद्रा में में ही सो रहा हूँ।" ये सब उन्हें अपने निरीक्षक पिता को सन्तुष्ट करने के लिए। करना पड़ता। उनको यह ज्ञात न हो पाता कि उनका बेटा व्यायामशाला में है और शरीर को हृष्ट-पुष्ट करने वाली क्रीड़ा में तल्लीन है।

वे अदम्य साहस से सम्पन्न थे। सम्मानित अतिथियों की अभ्यर्थना करने, स्वागत-भाषण देने या अभिनय के लिए वे अपने मित्र गणों तथा विशिष्ट जनों के आकर्षण का केन्द्र बने रहते। विनम्र होते हुए भी अवसर आने पर वे निर्भय हो विशिष्ट जनों के समक्ष आ जाते। उनकी यह निर्भयता अब भी उनमें प्रमुख है और स्वर्गाश्रम में साधना के दिनों में इससे उन्हें बहुत सहायता मिली है। यह विशेषता अब भी उनके स्वभाव में विद्यमान है। अंशतः उनके स्पष्टवादी व निर्भीक सुधारक होने का रहस्य भी इसी में है। जनता की आलोचना उन्हें कभी विचलित नहीं करती। लोक-कल्याण से सम्बन्धित किसी योजना के लिए कटिबद्ध हो जाने पर वे किसी की राय पर ध्यान नहीं देते।

पाठक गण को भी इसका अनुभव हुआ होगा कि कोई भी मनुष्य जो अटल सिद्धान्तों को मूर्त रूप देने का प्रयत्न करता है, उसे अपने साहस की परीक्षा देने के लिए कड़े प्रतिरोध का सामना करना पड़ता है। ऐसे अवसर आने पर स्वामी जी सदैव अपने सिद्धान्तों पर अडिग रहते हैं। दायें हाथ से ऐनक ठीक करते हुए उठे हुए बायें हाथ की अनामिका ऊँगली से संकेत कर एक विशिष्ट विलक्षण मुद्रा में स्वामी जी ने एक बार कहा था-"नहीं-नहीं, मेरा यह रूप सदा नहीं रहता। मैं अत्यधिक आक्रमक भी हो जाता हूँ। यदि कोई ऐसा अवसर आता है, तो मैं पराजय स्वीकार नहीं करता। कभी-कभी तो मैं योद्धा के आवेश में आ कर उग्र रूप धारण कर लेता हूँ। इस दिशा में मैं गुरु गोविन्दसिंह सरीखा हूँ। समय आने पर सबको उत्साह दिखाना चाहिए।"

जो व्यक्ति उच्च आदर्शों व सिद्धान्तों का अनुसरण करने के लिए प्रयत्नशील है तथा जिसको इस साधना में पग-पग पर परीक्षा देनी पड़ती है, उसके लिए यह ठोस उदाहरण है। विशेषतया यदि आप विनम्र और शान्त प्रकृति के हैं और विरोधी परिस्थितियों में भीरु समझे जाते हैं, तो उस समय आप स्वामी जी के उपर्युक्त दृष्टिकोण का सहारा ले सकते हैं।

जो तन्मयता और उत्साह आज स्वामी जी के स्वभाव में दृष्टिगोचर होता है, यह स्वभाव उनका चिकित्सक-विद्यार्थी-काल में भी था। उनकी उपस्थिति में जब यह विरल टिप्पणी सुनने में आयी, तो स्वामी जी ने एक बार कहा -"मुझे यह नहीं मालूम कि काम को अधूरा कैसे छोड़ा जाता है? मैं सदैव काम को पूर्ण व सम्यक् ढंग से किया करता था तथा पूरा करके ही छोड़ा करता था। आज के तरुण-वर्ग में निर्दिष्ट समय पर ही तैयारी करने का जो स्वभाव है, उससे मैं

सदा अपरिचित रहा। बिना पूर्व-सूचना के किसी भी विषय की परीक्षा देने को मैं सदैव तैयार रहता। आज भी मैं अपने को परीक्षार्थी के रूप में तैयार रखता हूँ। सतत तत्पर रहने तथा सजग रहने का मेरा सहज गुण बन गया है।"

"विश्राम का मेरी दृष्टि में कोई अस्तित्व नहीं। मैं सदैव सजग तथा व्यस्त रहता हूँ। आपको जीवन के प्रति शाश्वत शिष्य की तरह यही दृष्टिकोण रखना चाहिए और अपने को सदैव परीक्षार्थी समझना चाहिए। प्रत्येक घड़ी, प्रत्येक समय, प्रत्येक दिन नये विषय को सीखने के लिए उत्सुक रहिए। मेरी तरह बौद्धिक सेवक बनिए। आप हर एक से कुछ-न-कुछ शिक्षा ग्रहण कर सकते हैं। एक जिज्ञासु के लिए सृष्टि के कण-कण से उपदेशामृत झरता है।"

"किसी भी अनुभव की उपेक्षा मत करिए। संसार के हर महान् उदाहरण से कुछ प्रेरणा व शिक्षा ग्रहण करिए। इस प्रकार शायद किसी समय आपके प्रति की गयी अचेतन में सुप्त आलोचना आपके जीवन में उभर कर आपको आपत्ति से बचा ले और आपके जीवन की धारा को ही परिवर्तित कर दे। हर वस्तु से सार-संग्रह करके उसे अपने मस्तिष्क में सँजो के रखिए। छोटी-छोटी बातों के प्रति उदासीनता वैराग्य का लक्षण नहीं, बल्कि उपेक्षा की तामसिक प्रवृत्ति का लक्षण है।"

उपर्युक्त प्रकार की अपनी ग्राह्य शक्ति को स्वामी जी ने बड़ी सावधानी तथा विवेक से बनाये रखा है। अपनी उपस्थिति में प्रस्तुत हर नये सुझाव, नये विचार, नयी सूचना को तत्क्षण वे अपने पास रखी नोटबुक में लिख लेते हैं। नोट करने के लिए वे सदैव अपने पास दैनन्दिनी रखते हैं। लौकिक तथा आध्यात्मिक-दोनों दृष्टिकोणों से इस अभ्यास के व्यापक हित के प्रति वे आश्वस्त हैं।

तरुण डाक्टर के रूप में भी वे अपने अवकाश के क्षणों को व्यर्थ गँवाने की अपेक्षा अध्ययन, निरीक्षण में ही पूरी तरह व्यतीत करते। अपना सारा चिन्तन वे और विषयों से हटा कर इसी रोचक विषय पर केन्द्रित कर लेते। इसमें कोई आश्चर्य की बात नहीं कि प्रथम वर्ष में ही वे चिकित्सा के पूरे पाठ्यक्रम से परिचित हो गये थे। उनकी अटूट एकाग्रता एवं सहजता का रहस्य उनके आज के दैनिक जीवन में भी देखा जा सकता है।

मैंने कई बार दिव्य जीवन संघ के कार्यालय में बिछी हुई पीठिका पर उनके विराजमान होते समय इसका निरीक्षण किया। उस समय कभी किसी उत्तेजित जिज्ञासु की पिपासा शान्त करने के लिए वे पत्रोत्तर लिखते, तो कभी शंका-समाधान अथवा प्रश्नोत्तरी करते। निकट से टाइपराइटर की टक-टक आवाज और पास के कमरे से ठक-ठक की आवाज आ रही है जहाँ कोई सेवक नयी पुस्तकों पर कार्यालय की मुहर लगा रहा है। बाहर से हथौड़ी से पुस्तकों की पेटिका पर कील ठोकने का शोर आ रहा है। कक्ष से कुछ दूर सड़क पर चलने वाली मोटर गाड़ियों की कर्ण-कटु ध्वनि और गंगा की धारा में तैरती नाव में यात्रियों के पावन गान का उनकी भाव-मुद्रा पर कोई प्रभाव नहीं पड़ता।

यही नहीं, स्वामी जी के पार्श्व में अभ्यागतों का समूह बैठा है। कोई हिन्दी पुस्तक के लिए याचना कर रहा है, तो कोई मेज पर फल-फूल भेंट कर रहा है। कोई शिशु चंचल व बातूनी है और कोई पहाड़ी रोग-ग्रस्त पुत्री के लिए औषधि की माँग कर रहा है। इन सबके मध्य पीठिका

पर शान्त मुद्रा में विराजमान स्वामी जी आस-पास के इस वातावरण से अविचलित हैं और उनकी लेखनी अपनी सहज गति से चल रही है। वह अपने इस कार्य में इतने अधिक संलग्न हैं कि जब तक पत्र पूरा नहीं होता, वह अपने चश्मे को आँखों से हटा कर 'केस' में वापस नहीं रख देते और लेखनी को 'कैप' लगा कर मेज पर नहीं रख देते, तब तक वह आस-पास के वातावरण से अनभिज्ञ ही रहते हैं।

जब उनकी दृष्टि समक्ष बैठे अभ्यागतों पर पड़ती है और उनको शोरगुल का भास होता है, तब वे कह उठते हैं-"कृपया यह ठक-ठक बन्द करो और एस. को कहो कि वह पुस्तकों पर मुद्रा-अंकन कुछ समय उपरान्त करे।"

इस प्रकार का अभ्यास प्रत्येक जिज्ञासु व सामान्य जन के लिए अनिवार्य है। एकाग्रता का सम्बन्ध समय और स्थिति-विशेष में किये जाने वाले कर्मकाण्ड से न हो कर साधक की अभ्यस्त मानसिक स्थिति से है। स्वामी जी के अनुसार धारणा और ध्यान का अभ्यास कोई चमत्कारिक जादूगरी का विषय नहीं। यह तो छोटे-से-छोटे काम को रुचि व ध्यानपूर्वक करने वाले व्यक्ति को सहज ही प्राप्त हो जाता है।

छोटे-से-छोटे कार्य को व्यवस्थित ढंग से न करने वाले का मस्तिष्क कमजोर हो जाता है, जिस कारण वह ध्यान की क्षमता भी खो बैठता है। स्वामी जी कहते हैं-"चाहे आप पेन्सिल बनायें या टिकट चिपकायें, उसको भी उतनी ही तन्मयता व सावधानी से करिए जितनी तन्मयता से एक जौहरी राजसी अँगूठी में हीरा जड़ता है या एक नेत्र चिकित्सक नेत्र की शल्य-चिकित्सा का कार्य करता है। जो भी कार्य आप करें-चाहे भोजन करने का हो या दन्त-धावन का, पढ़ने का हो या लिखने का, चाहे जूते साफ करने का ही हो, उसे पूर्ण तन्मयता से ध्यानपूर्वक करें। इस अभ्यास से एकाग्रता प्रभावी ढंग से विकसित होगी।"

गाजीपुर के पवहारी बाबा भी अपने साधकों को यही शिक्षा देते कि छोटे-से-छोटे कार्य को भी इतनी सावधानी से करो कि समस्त जीवन उसी पर आधारित है। प्रस्तुत कार्य के अतिरिक्त और सब-कुछ भूल जाओ।

विद्यार्थी-काल के पश्चात् मलेशिया तथा सिंगापुर में चिकित्सक के रूप में स्वामी जी ने चिकित्सा तथा मानव-समाज-सेवा के कार्यों में वही तल्लीनता दिखायी। मलाया में व्यतीत किये दश वर्षों में वह निष्कलंक रहे।

निस्सन्देह आध्यात्मिक साधना में तत्पर एक साधक के लिए एकाग्रता तथा उसकी प्राप्ति की मनोवृत्ति अनिवार्यतया धार्मिक भावना से सम्बन्ध रखती है। उसको अपनी हर क्रिया आध्यात्मिक आदर्श से सम्बन्धित करनी होती है।

सांस्कृतिक उत्थान के सम्बन्ध में सबसे अधिक महत्त्व की बात यह है कि व्यक्तिगत जीवन में ऐसा प्रशिक्षण शैशव-काल से आरम्भ कर देना चाहिए। बचपन में ही इस वृत्ति को प्रोत्साहन देने की आवश्यकता पश्चिमी देशों में सुपरिचित है। बच्चों को भवन-खण्डों, चित्रों, पहेलियों और बाद में प्रतिभाशाली व वैज्ञानिक विधि वाले 'मेकार्नो' की तरह के खेलों में व्यस्त रखा जाता है जो तन्मयता व तल्लीनता को प्रविष्ट कराने में सहायक होते हैं।

मैं यह देख कर आश्चर्यचकित रह गया कि यह तपस्वी भारतीय सभ्यता व संस्कृति के पुनरुत्थान जैसे उद्देश्य की पूर्ति के लिए ऋषिकेश जैसे एकान्त स्थल में बैठ कर दीर्घ काल से एकाग्रता, तन्मयता तथा तल्लीनता जैसे सिद्धान्तों का प्रयोग कर रहे हैं। अपने निकट के क्षेत्र में किये गये प्रयोग से उनको अभूतपूर्व सफलता मिली है। आश्रम द्वारा संचालित प्राथमिक पाठशाला इसी प्रयोग का एक उदाहरण है। नन्हे-मुन्ने जो अभी तुतलाते हैं, कीर्तन करने व राम-सीता ड्रिल व कीर्तन प्रमाण में कुशल होते जा रहे हैं।

साधना-सप्ताह तथा अन्य ऐसे ही अनेक सुअवसरों पर आये अभ्यागत विस्मित रह जाते हैं, जब वे देखते हैं कि इतनी बड़ी सभा में एक छोटा-सा बालक, जिसको उठा कर मंच पर खड़ा किया जाता है, प्रणाम करता है, हिन्दी तथा अँगरेजी में संक्षिप्त भाषण देने के पश्चात् मधुर स्वर में 'राधाकृष्ण', 'गोपालकृष्ण' का कीर्तन आरम्भ कर देता है। दूसरा बच्चा आ कर 'उपनिषद्' व 'गीता' में से उद्धृत कुछ पंक्तियों को अपनी तोतली भाषा में अविराम गति से प्रस्तुत करके आपको स्तब्ध कर देता है।

बड़ी महत्त्वपूर्ण बात यह है कि स्वामी जी यद्यपि अपने विचारों व सिद्धान्तों में अद्यतन प्रतीत होते हैं, तथापि दैनिक व्यवहार में देश की सांस्कृतिक परम्परा के अनुरूप बने रहने के प्रति पूर्णतया सजग रहते हैं। आज का युवा-वर्ग पूर्वी व पश्चिमी सभ्यता की मूल प्रवृत्तियों, विचारों तथा आदर्शों के दुःखदायी तालमेल में अपनी असावधानी के कारण ही असफल सिद्ध हुआ है।

जिस प्रकार एक कहावत है-"सुबह का भूला शाम को घर आ जाये, तो भूला नहीं कहलाता", स्वामी जी एक दूसरी ही कहावत लागू करने में विश्वास रखते हैं-"अच्छी शिक्षा जितनी शीघ्र प्रारम्भ की जाये उतना ही अच्छा है।" इससे भी आगे बढ़ते हुए वे मानते हैं कि बच्चे की शिक्षा उसके जन्म से पूर्व ही प्रारम्भ हो जानी चाहिए।

उनका कथन है- "गर्भस्थ शिशु के मस्तिष्क पर माँ की प्रत्येक क्रिया का गहरा प्रभाव पड़ता है। यदि एक गर्भवती स्त्री कीर्तन, अप तथा धार्मिक पुस्तकों के अध्ययन में समय व्यतीत करती है और अपनी इस अवधि में जीवन को पूर्ण पवित्र बनाये रखती है, तो वह गर्भस्थ शिशु आध्यात्मिक संस्कारों से सुसम्पन्न होगा। उसकी चित्त-वृत्ति जन्म से ही आध्यात्मिक होगी।"

पुनः कहे गये स्वामी जी के शब्द हैं- "बच्चों का मस्तिष्क सुकोमल व लचीला होता है जिसे बिना अधिक परिश्रम के सुन्दरता से निर्मित किया जा सकता है। जो भी संस्कार बाल्यावस्था में डाले जाते हैं, उनका प्रभाव आजीवन रहता है। वे संस्कार अमिट होते हैं।"

जब कभी कोई गृहस्थी स्वामी जी के पास आता है, तो वे उससे यह अवश्य पूछते हैं कि वह अपनी सन्तान को बचपन से ही शिक्षा-दीक्षा उचित विधि अनुसार दे रहे है अथवा नहीं।

स्वामी जी की यह उत्कट अभिलाषा है कि एक ऐसी संस्था स्थापित की जाये (जिसमें माता-पिता स्वेच्छा से अपने बच्चों को भेजें) जहाँ निःस्वार्थ संन्यासियों के मार्गदर्शन में निष्काम सेवा एवं आध्यात्मिकता का प्रशिक्षण बच्चों को बाल्यावस्था से दिया जाये। माता-पिता का स्वेच्छा से सन्तान को वहाँ भेजने का सहयोग वांछनीय है। वहाँ पर वे ऐसे उच्च व आदर्श वातावरण में घिरे रहे कि सांसारिकता से पूर्णतया अछूते रहें। उनमें श्रेष्ठ व उच्च विचारों का संचार किया जाये।

कौन जानता है (क्या पता?) एक दिन ऐसी संस्था का निर्माण हो जाये जो सार्वभौमिक तथा विश्व-प्रेम का पाठ पढ़ाने वाले मानव-सेवियों को जन्म दे!

पथ-निर्देश

जीवन के परम लक्ष्य-सम्बन्धी समस्त प्रश्नोत्तरों में **श्री स्वामी शिवानन्द जी महाराज के विचार सार-रूप में ग्रहण कीजिए।** विभिन्न अवसरों पर अभिव्यक्त उनकी उक्तियों का संकलन सुबोध शीर्षकों में प्रस्तुत है, जो अनौपचारिक बातचीत व कुछ उत्सुक जिज्ञासुओं के प्रश्नों के उत्तरों में अभिव्यजित हुई। एक ही दृष्टिपात से आप इसके सारतत्त्व से अवगत हो जायेंगे।

वास्तविक जीवन: जीवन की पृष्ठभूमि में एक भव्य उच्चादर्श है जो खाने-पीने तथा सोने से कहीं अधिक महत्वपूर्ण है। पूर्ण स्वतन्त्रता, पूर्ण निर्भयता, पूर्ण आनन्दमय आत्ममय नित्य जीवन ही वास्तविक जीवन है। यह अमरत्व और परम शान्ति की स्थिति है। सभी प्रकार के विनाश, मृत्यु, अशान्ति व कामनातीत स्थिति ही नित्य तुष्टि की स्थिति है।

जगत् : पृथ्वी विशाल सृष्टि के एक बिन्दु मात्र से भी छोटी है। समस्त सृजन अपने अनगिनत सूर्य, चन्द्र तथा तारा-मण्डल सहित परम सत्ता की अनन्तता के एक क्षण तुल्य है।

सर्वातीत परम सत्य नित्य, अखण्ड, सत्, चित्, आनन्द है।

यह सम्पर्ण दृश्य जगत् अणुओं का पिण्ड मात्र है। यह महान् महासागर केवल दो पैसों की संयुक्त संरचना है।

लक्ष्य : इस पार्थिव जीवन का लक्ष्य सत्, चित्, आनन्द की परमानन्द स्थिति की अनुभूति करना जीवन का उद्देश्य मन की निम्न वृत्तियों को विजित करना, परिसीमाओं से ऊपर उठना और खोये हुए दिव्यत्व को पुन प्राप्त करना है।

विघ्न-बाधाएँ: क्षणिक ऐन्द्रिक सुखों के आवर्त में मानव ने अपने लक्ष्य का विस्मरण कर दिया है। वह नहीं जानता कि वह वस्तुतः क्या कर रहा है। वह समझता है कि वह सब-कुछ जानता है, किन्तु वह अज्ञान के में डूबा हुआ है। इस भ्रम का कारण अविद्या या माया है। यह रहस्यमयी शक्ति आपके वास्तविक रूप को आच्छादित कर लेती है तथा आनन्द व अमरत्व की प्राप्ति में बाधक बनती है। अतिशय अहं-भावना, मानसिक चंचलता और ऐन्द्रिक सुखों की सतत

लालसा के रूप में माया मानव को भ्रमित करती है। निज देह के, कांचन और कामिनी की आसक्ति के मद में मानव पूर्णतया अन्धा हो गया है।

लौकिक जीवन: इस जगत् का जीवन अव्यवस्थित, अपूर्ण तथा अशान्ति से परिपूर्ण है। सांसारिक विषय-सुख-भोगों की कामना ही इस दुख का कारण है। इस विषय-सुख-भोग की कामना का कारण शान्ति को बाहर से प्राप्त करने की अज्ञानता है। समस्त कामनाएँ, आसक्तियाँ, निराशाएँ और यातनाएँ सदा के लिए विनष्ट हो जायेंगी, जब यह अनुभूति हो जायेगी कि शान्ति आपके हृदय में स्थित है। आपके भीतर ही आनन्द का सागर है। बाहर अहं एवं वासना की आग धधक रही है। सब प्राणी इसमें झुलस रहे हैं। उनके पास आत्म-निरीक्षण, मानसिक शुद्धि व ध्यान करने के लिए समय ही नहीं है।

एकमात्र उपाय: मानव शरीर ही एकमात्र ऐसा माध्यम है, जिससे हम भव सागर को पार कर सकते हैं। इसके अतिरिक्त और कोई विकल्प नहीं है। विलोक में मानव-जन्म ही महत्त्व एवं बहुमूल्य वरदान है। असावधानी और ऐन्द्रिक सुख में जीवन को व्यर्थ ही मा गँवाओं, अपितु प्रत्येक क्षण का सदुपयोग करो। यदि आपने इस दुर्लभ अवसर को खो दिया, तो यह पुनः प्राप्त नहीं होगा। समय गतिशील है और मन व इन्द्रियाँ प्रत्येक पग पर आपको प्रलोभित कर धोखा दे रही हैं। विघ्न-बाधाएँ व विरोधी शक्तियाँ सर्वत्र हैं, तो भी मुक्ति के लिए यही समुपयुक्त स्थान एवं समुचित समय है। 'समुद्र की तरंगों के शान्त होने पर ही मैं स्नान करूँगा' -ऐसा सोचना मूर्खता है। साधना को स्थगित मत करो।

आवश्यकताएँ: अरे मानव! भली-भाँति समझ लो कि आपको इसी क्षण से प्रयत्न करना प्रारम्भ कर देना होगा। जीवन अनिश्चित है, जब कि मृत्यु निश्चित है। यह भी समझ लो कि अनित्य लौकिक सम्बन्ध और नश्वर विषय-सुख असत्य हैं। सत्यता या वास्तविकता केवल मात्र ईश्वर ही है। सत्य और असत्य को विवेक से जानो। सत्यानुसन्धान के लिए उत्कट जिज्ञासा उत्पन्न करो और मिथ्या प्रलोभनों से अपने को मुक्त करो। परीक्षाओं और कष्टों की घड़ी में स्थिर रहना सीखो। अपनी इन्द्रियों और आवेगों को नियन्त्रण में रखो। सभी परिस्थितियों में सन्तुष्ट और प्रसन्न रहो। आत्म-विश्वास एवं ईश्वर में निष्ठा बनाये रखो। सम्यक् ज्ञानानुसार आचरण करो।

खोज के स्थल: ज्ञान और आनन्द केवल संन्यासियों और आरण्यकों की ही सम्पत्ति नहीं है। हृदय भगवान् का स्वर्ण-मन्दिर है। ईश्वर आपके और प्रत्येक प्राणी के हृदय में अवस्थित है। यह जगत् ईश्वर का परिव्यक्त स्वरूप है। अपने हृदय एवं मन को शुद्ध करिए; तभी आप अपने भीतर, बाहर एवं सर्वत्र उसी का दर्शन करेंगे।

मार्ग-दर्शक संकेत : सांसारिक दुःखों और अपूर्णताओं का सतत स्मरण करो। भगवत्-साक्षात्कार प्राप्त सन्तों का स्मरण करो और उनसे प्रेरणा प्राप्त करो। एक निश्चित उद्देश्य सम्मुख रखो, उत्तम विचारों की पृष्ठभूमि में जीवन का निर्धारित समुचित कार्यक्रम बनाओ। श्रद्धा और विश्वास से कार्य करो। आत्म-संयम और युक्त जीवन के अभाव में सद्गुण प्रस्फुटित नहीं होगा। अतः चरित्र का विकास करो। समस्त ज्ञान और धन-सम्पदा की अपेक्षा चरित्र अधिक मूल्यवान् और शक्तिमान् है। शुद्धता, सत्यता, सच्चरित्रता और दृढ़ धारणा से आप तुरन्त जीवनादर्श की अनुभूति करेंगे।

मार्ग-चतुष्टय: भिन्न-भिन्न प्रवृत्यनुसार चार प्रशस्त मार्ग निर्देशित हैं। बौद्धिक प्राणियों के लिए ज्ञान-मार्ग, भावना-युक्त प्राणियों के लिए भक्ति-मार्ग, सक्रिय व्यक्तियों के लिए कर्म-मार्ग तथा रहस्यमयी प्रकृति वालों के लिए राजयोग है।

अनुसन्धान करिए-निज स्वरूप का, छल, भय तथा अहं के मूल कारण का, अवस्था-त्रय (जागृति, स्वप्न तथा सुषुप्ति) का। अनित्यता को पूर्णरूपेण नकारिए, तभी आपमें ज्ञान-सूर्य का उदय होगा और आप माया के बन्धन से मुक्त होंगे।

ईश्वर के प्रति अगाध आसक्ति का उपार्जन करने से, उनसे दृढ़, प्रगाढ़ प्रेम सम्बन्ध स्थापित करने से तथा पूर्ण आत्म-समर्पण एवं पूर्ण प्रपत्ति से आप दिव्य दृष्टि और ईश्वर चैतन्यता की प्राप्ति करेंगे।

मानव-जाति, माता-पिता, पूज्यजन, गुरुजन, साधुओं, सन्यासियों, महात्माओं, रोगियों और निर्धनों के प्रति की गयी निष्काम सेवा ही ईश्वर की आराधना है। फल की इच्छा से रहित सेवा मन को शुद्ध करती है तथा इसे दिव्य प्रकाश व आनन्द-प्राप्ति के लिए तैयार करती है।

यम और नियम का अभ्यास, आसन में स्थिरता, प्राणायाम, बाह्य विषयों से मन की उपरति तथा प्रत्याहार से मन मे एकाग्रता आती है। परिणामतः मन ध्यान व समाधि में संस्थित हो जाता है।

कर्मयोग साधना : बुराई का प्रतिकार भलाई से करो। जो आपका अहित करते हों, उनकी सेवा करो। दूसरे की आवश्यकताओं को अपनी आवश्यकताओं अधिक महत्त्व दो। जो-कुछ आपके पास है, उसे दूसरों से में बाँटो, निर्धनों को दान दो। अशिक्षितों को शिक्षित करो। रोगियों की परिचर्या करो। यथाशक्ति दूसरों के कष्टों का निवारण करो। सेवा के लिए अपनी सुख-सुविधाओं का परित्याग करो। **'मन में राम, हाथ में काम' के माध्यम से अपने दैनिक कार्यों को ईश्वर-पूजा में रूपान्तरित करो।**

किन्तु नाम व यश की आकाक्षा से सचेत रहो। अहंकार धीरे-धीरे पनपेगा। सेवाभिमान अति हानिकारक है। प्रतिदिन आत्म-निरीक्षण एवं आत्म- विश्लेषण द्वारा इसका निवारण करो। अपनी सभी प्रेरणाओं का विश्लेषण करो। सच्ची विनयशीलता का उपार्जन करो।

भक्तियोग : भक्तों और साधुओं की सत्संगति, ब्राह्ममुहूर्त में उठना, भगवान् के मधुर नामों का संकीर्तन करना, जप, प्रार्थना व अपने इष्टदेव का पूजन करना, धार्मिक ग्रन्थों का स्वाध्याय करना, दान देना, सामयिक व्रत करना, रात्रि जागरण करना आदि भगवत्प्रेम के विकास एवं प्रगति के लिए अपेक्षित साधनाएँ हैं। भगवन्नाम का गायन भक्ति-भाव से करो। समस्त प्राणियों में भगवद्-दर्शन करो। अपने मन, हृदय तथा आत्मा को भगवान् के चरण-कमलों में समर्पित करो। प्रह्लाद की भाँति उत्सुकता से प्रार्थना करो। मीरा, राधा एवं रामकृष्ण परमहंस की भाँति भगवद्-दर्शन हेतु सच्चे हृदय से रुदन करो। भावपूर्ण हृदय से जपो- **"मैं आपका हूँ, सब आपका है; हे प्रभो! आपकी इच्छा पूर्ण हो!"**

आलस्य, कोरी भावुकता, थोथी भावनाएँ, अहन्ता, कपट, स्वार्थपरता आदि भक्ति-मार्ग के विकास में विश्वासघाती शत्रु हैं। सतत सजग रहो। निश्चित दिनचर्या बनाओ और दृढ़ता से प्रत्येक चर्या का पालन करो। इस प्रकार आलस्य को विजित करो। सत्य पर दृढ़ रहो। नैतिक साहस का उपार्जन करो। अतीत के भक्तों के साहसपूर्ण कार्यों से प्रेरणा प्राप्त करो। सबको साष्टांग प्रणाम निवेदन करने के द्वारा अहंकार और पाखण्ड पर विजय पाओ। उसकी करुणा-प्राप्ति के लिए सदा प्रार्थी रहो।

ज्ञानयोग : ज्ञानी गुरु की शरण लो। उससे श्रुतियों का श्रवण करो। श्रवण किये गये उपदेशों का पुन-पुनः मनन करो। वेदान्त के सत्यों पर अनवरत निदिध्यासन करो। स्पष्ट, गम्भीर ज्ञान तथा दृढ़ संकल्प-शक्ति विकसित करो। इस दृश्य जगत् को स्वप्नवत् समझो। त्रिलोकी की सम्पत्ति को तुच्छ समझो। शरीर की नश्वरता और विषय-वासनाओं की क्षणभंगुरता पर विचार करो। युगों के असत्य देहाध्यास को विनष्ट करो। **खोजो- 'मैं कौन हूँ?' सत्य और असत्य को विवेक द्वारा जानो। मुक्ति और सत्य ज्ञान की प्राप्ति के लिए उत्कट आकांक्षा उत्पन्न करो।**

देहासक्ति तथा 'मैं' और 'मेरे' की भावना मन को अज्ञानबद्ध रखती है। अहंकार सदैव मनमानी करता है। पूर्व-जन्मों की वासनाएँ, संकल्प, भय, मानसिक चंचलता, भ्रमात्मक विचार एवं मोह आत्मिक खोज और ध्यान की बाधाएँ हैं।

ब्रह्म-भाव की सकारात्मक भावना को दृढ़ता से विकसित करो। आप नित्य शुद्ध, निराकार, असीम आत्मा हैं-इस भाव की अनुभूति करो। जो भी पदार्थ देखो, उसके नाम-रूप को नकारते हुए उसके भीतर सस्थित अन्तरात्मा के दर्शन करो। बाह्य विकारों से अप्रभावित रह कर साक्षी-भाव में संस्थित रहो। इन्द्रियानुभव को नकारो। **'ॐ' का निरन्तर उच्चारण करो तथा इस भाँति मन को स्थिर तथा शरीर और जगत् की भावना को विनष्ट करो।**

राजयोग: इन्द्रिय-दमन तथा चरित्र की शुद्धता के पश्चात् ही राजयोग की कठोर साधना सम्भव है। यह एक गुप्त रहस्यमय विज्ञान है। **सत्यवादी बनो। किसी को हानि नहीं पहुँचाओ। संयमी रहो। शुद्धता, सन्तोष, तपश्चर्या, स्वाध्याय तथा आराधना-सम्बन्धी शास्त्रोक्त प्रनियमों का अनुपालन करो।** आसनों के अभ्यास द्वारा स्वस्थ एवं पुष्ट शरीर बनाओ तथा प्राणायाम द्वारा अन्दर के कोषों को शुद्ध करो। जब मन शुद्ध हो जाये, तब उसे इन्द्रिय-जन्य अनुभवों से विमुख करो। इसे ही प्रत्याहार से अभिहित किया जाता है।

प्रत्याहार मन की बहिर्मुखता पर प्रभावकारी अंकुश का काम करता है, मन की उत्तेजनाओं को शान्त करता है तथा मन को एकाग्र करता है। एकाग्रता ही धारणा का रूप धारण करती है। धारणा अविच्छिन्न धारा में प्रवाहित हो कर ध्यान में रूपान्तरित होती है। परिणामत ध्यान समाधि में परिणत हो जाता है और समाधि आवागमन के चक्र से जीव को मुक्त करती है।

अशुद्ध प्रेरणा, ब्रह्मचर्य का अभाव, अधिक भोजन, आलस्य, अधिक सोना, मिथ्या भय, कल्पना में विचरण करना और निम्न स्तर की अलौकिक शक्तियाँ, जैसे-दूर की बातों को सुनने एवं घटनाओं को देखने की शक्ति आदि इस मार्ग की बाधाएँ एवं गट्टे हैं। जिह्वा का विवेकपूर्ण नियन्त्रण, त्राटक और प्राणायाम समाधि के सहायक उपकरण हैं। साहस को सजगता से संयुक्त

कर प्रत्येक स्थिति में अपनी सामान्य बुद्धि का प्रयोग करो। **परमानन्द और अमरत्व के उच्चादशों की अनुभूति के लिए तीव्र वासनाओं व इच्छाओं के त्याग से सिद्धियों को दूर भगाओ।**

सामान्य पृष्ठभूमि : मानव के सफल प्रयासों की मौलिक पूर्वापेक्षाएँ सर्वत्र समान हैं। वे हैं- नैतिकता तथा सामान्य मानसिक और शारीरिक स्वस्थता। नैतिकता के अभाव में प्रगति सम्भव नहीं। सब-कुछ होते हुए भी यदि इस जगत् में व्यक्ति आरोग्यता-सम्पन्न न हो, तो वह न स्वय के लिए और न जगत् के लिए ही लाभदायक होगा। स्वास्थ्य के अभाव में कोई भी प्रयत्न अथवा प्रयास सम्भव नहीं है। इसी प्रकार संसार का स्वामित्व प्राप्त होने पर तथा असीम शक्ति एवं बुद्धि से सम्पन्न होने पर भी नैतिकता के अभाव में उसका जीवन व्यर्थ है। अन्तत उसका घोर पतन होगा। अत स्वास्थ्य और प्राकृतिक नियमों का पालन करो। संयमित तथा नियमित सरल जीवन यापन करो।

दैनिक व्यायाम, प्राणायाम, आसन, अल्पाहार और शुद्ध विचारों से शरीर को हलका और शुद्ध रखो। सद्‌गुणों के व्यावहारिक अभ्यास द्वारा चरित्रवान् बनो। भले कार्य करो और समस्त कुटिलता और कायरता को विनष्ट करो। ईर्ष्या व घृणा का उन्मूलन करो। सत्य पर दृढ रहो, समग्र स्त्री-जाति में दिव्यता के दर्शन करो। सफलताओं और उपलब्धियों में जीवन की प्रथम नींव सस्थित है। त्वरित प्रगति और आत्म-साक्षात्कार के लिए आप आश्वस्त हो जायेंगे।

महिमा: कितना भी कठिन कार्य क्यों न हो, एक ईमानदार व्यक्ति के लिए कुछ भी असम्भव नहीं है। जो एक व्यक्ति कर चुका है, वह दूसरा भी कर सकता है। जब आप जीविकोपार्जनार्थ पचीस रुपये मासिक वेतन प्राप्त करने के लिए आठ घण्टे कार्यालय में बैठ कर खून-पसीना बहा सकते हैं, तब कैवल्य और अमरत्व की आनन्दमयी स्थिति प्राप्त करने के लिए क्या थोड़ा भी प्रयास उपयोगी न होगा? यह परमानन्द की स्थिति अवर्णनीय है। आपको अखण्ड आनन्द, परम स्वतन्त्रता और नित्य शान्ति की प्राप्ति होगी। आप महाराजाधिराज हो। वह परम स्थिति निर्भय, निर्विकार और अमर है।

आह्वान : ओ अमर पुत्रो' अपूर्णता, अज्ञानता और असन्तोष का जीवन खूब बिता चुके हो। पूर्ण और सब प्रकार से विकसित जीवन व्यतीत करो। **एक ज्योतिर्मय आत्मा बनो। इसो क्षण, जहाँ भी तुम हो, पृथ्वी को स्वर्ग बनाओ। अविद्या-रूपी निद्रा से जागो और दिव्य जीवन व्यतीत करने के लिए तत्पर हो जाओ। प्रयत्नशील बनो। आलस्य और कायरता को विनष्ट करो। सिंह के समान बनो। प्रत्येक कार्य में आपको सफलता प्राप्त होगी। आप भौतिक और आध्यात्मिक क्षेत्र में भव्य उन्नति करोगे। आप अविलम्ब लक्ष्य की प्राप्ति करोगे। मैं आपको आश्वासन देता हूँ।**

प्रगति हेतु सामग्री (जानो और साहसी बनो) :

१. बाह्य शत्रुओं से भयभीत मत होइए। अहकार, मद, काम, क्रोध, लोभ, मोह और स्वार्थ आपके वास्तविक शत्रु है।

२. जितनी शक्ति आप दूसरों के उत्थान में लगायेंगे, उतनी ही अधिक दिव्य शक्ति आपके भीतर प्रवाहित होगी।

३. प्रारम्भ में संयम, आत्म-परित्याग व धारणा के अभ्यास बहुत अधिक अरुचिकर व शुष्क प्रतीत होंगे। यदि आप इनमें शान्तिपूर्वक सलग्न रहे, तो आपको इनके द्वारा बल, शान्ति, नया ओज और आनन्द की प्राप्ति होगी।

४. यदि आप सच्चे और ईमानदार हैं, यदि आप सदैव सामान्य बुद्धि को प्रयुक्त करते हैं तथा धैर्यवान् और निरन्तर प्रयत्नशील हैं, तो आप लक्ष्य की प्राप्ति शीघ्र ही कर लेंगे।

५. सफलता आपको अवश्य मिलेगी; क्योंकि आपने इसीलिए जीवन धारण किया है। आप अपने उत्तराधिकार का विस्मरण कर चुके हैं। अभी अपने जन्मसिद्ध अधिकार की माँग करें।

पाठको' यही सन्देश है। यही जाग्रति का उद्घोष है। यह आप पर निर्भर करता है कि अब आप माँगें, खोजें और खटखटाएँ। जो चाहिए वह यहीं है। केवल प्राप्ति की इच्छा की अपेक्षा है। आओ' कुछ समय के लिए बातें बन्द कर दें। भगवान् आपको कार्य करने की प्रेरणा दें।

मैंने देखा कि स्वामी शिवानन्द जो अपने तक कुछ भी नहीं रख सकते, भले ही वह बाहरी सम्पदा हो या कोई विचार या जानकारी ही क्यों न हो। वे अतीव निष्कपट व उन्मुक्त हृदय है जिनको असावधानी से देखने पर सर्वमान्य विनीत कुशलता का अभाव समझने की भूल हो सकती है।

अगाध आत्म-विश्वास होते हुए भी उनमें श्रेष्ठमन्यता की भावना लेशमात्र भी नहीं है। वे सबको आत्मवत् समझते हैं और सबके साथ उन्मुक्त एव समता का व्यवहार करते हैं। कुछेक क्षणों की बातचीत के पश्चात् ही व्यक्ति उनको पूर्णतया अपना समझने लग जाता है । वे सबसे, चाहे कोई बच्चा ही क्यों न हो, परामर्श लेने को तैयार रहते हैं, क्योंकि वे किसी को भी कम महत्त्वपूर्ण तथा बुद्धिहीन नहीं समझते।

दूसरी प्रमुख विशेषता, जिसकी उनमें प्रधानता है, वह है-शीतल ज्योत्स्ना के समान परम शान्ति जो उनके रोम-रोम में व्याप्त है। उन्होंने लक्ष्य की प्राप्ति कर ली है और उसी में स्थित हैं। किसी भी स्थिति में वह उत्तेजना या भावना के वशीभूत नहीं होते। प्रत्येक स्थिति में वह शान्ति की साकार मूर्ति हैं। उनकी उपस्थिति में यदि कोई व्यक्ति किसी कार्य को अव्यवस्थित व अनियमित ढंग से करता है, तो उसका संशोधन मौन असहमति एवं गम्भीरता दर्शा कर करते हैं। आवश्यकता पड़े, तो वे उस स्थान को भी छोड़ देते हैं।

-स्वामी चिदानन्द

आलोक-पुंज

समय ने सुदूरपूर्व हमारी मातृभूमि में अतिशय रुचि ली। उसने इस पर अवतरित होने वाले प्रभु-प्रेषित सन्देशवाहकों को शान्तिपूर्वक, धैर्य से, आश्चर्य से चित्रित किया। सच्चाई की आशापूर्णता, वातावरण के मधुर प्रभा-मण्डल तथा धरातल की उर्वरता को समय ने अनुभव किया।

भारत दूर तक फैला विशाल वट वृक्ष है। योग-दर्शन रूपी सुविस्तीर्ण शाखाओं तथा अनन्त मूलों वाले इस वृक्ष की जड़ें धर्म में गहराई तक प्रवेश कर गयी हैं। जीवन-लक्ष्य, जीवनोद्देश्य तथा जीवनादर्श का उपदेश संसार में प्रचारित करने के लिए भारत माता एक के पश्चात् दूसरा तत्त्ववेत्ता अवतीर्ण करने में थकती नहीं। आज उसने हमारे समक्ष किसको प्रस्तुत किया है? **वे स्वामी शिवानन्द हैं।**

मानव नहीं चाहता कि उसकी सन्तति क्षीण ज्योति विकीर्ण करने वाली तारिका तथा वर्तिका-दीप हो। जब सामान्य लोगों की यह बात है तो उनके विषय में क्या कहना है जो स्वयं प्रोज्ज्वल ज्योति हों! ऐसे ही एक परिवार ने गर्भ में ही परिपक्व अग्नि-पुंज को प्रज्वलित किया। ८ सितम्बर १८८७ को सुदूर दक्षिण भारत में एक शिशु ने जन्म लिया, जिसका रहस्य सम्भवतः माता-पिता ने भी नहीं जाना था। बहुत सम्भावना इस बात की है और निश्चयात्मक रूप से कहा जा सकता है कि प्रभु ने उस शिशु को आत्मज्ञान से सम्पन्न कर दिया था। इनके जन्म-स्थान (पट्टामडई) को गायक पक्षियों का घोंसला कहा जाता है। **इस ग्राम पर अप्पय दीक्षितार की अमिट छाप लगी है**, जो सदैव स्मरणीय रहेगी। इसे एक छोटी नदी ने परिवृत्त कर रखा है। इसके चतुर्दिक् चरागाहों तथा हरे-भरे खेतों की दृश्यावलियाँ हैं तथा यत्र-तत्र गगनचुम्बी गाढ़ा नीला पश्चिमी घाट है, जो सम्भवतः माधुर्य भाव को मूर्तिमान् करता है। इसके निवासी ज्ञात-अज्ञात रूप से भगवद्-स्मरण में तल्लीन हो जाते थे।

ज्ञान और बुद्धिमत्ता से प्रदीप्त तथा पूर्ण उल्लास, शक्ति, उत्साह और अन्त प्रेरणा से युक्त स्वामी जी अपने सभी खिलाड़ी साथियों और सहपाठियों को पराजित कर देते थे। उनका शरीर विलक्षण रूप से सम्पुष्ट एवं सुडौल था। विद्यालय तथा महाविद्यालय में वे अनेक पुरस्कारों के विजेता थे।

सम्भवत उन्होंने यह विचार किया कि मनोविज्ञान के ज्ञान से भी पूर्व आरोग्य-विज्ञान का ज्ञान होना परमावश्यक है। तभी सन् १९१० में उन्होंने चिकित्सक का व्यवसाय अपनाया तथा सिंगापुर, मलेशिया प्रस्थान किया। व्यक्ति और पदार्थ में समता लाने का कार्य समीकरण कला के न्यायाधीशों को उत्तराधिकार के रूप में सौंपा गया, किन्तु अविवेक और अज्ञानता के कारण उनमें से अधिकांश इसका उपयुक्त प्रयोग करने में असफल रहे। अपनी बारी में चिकित्सकों ने इस कला को सीखा और देह की असन्तुलित अवस्था को सन्तुलित बनाने में इसका विवेकपूर्ण प्रयोग किया।

स्वामी जी ने इस कला को चिकित्सा क्षेत्र में नहीं बल्कि आध्यात्मिक क्षेत्र में भी अपनाया। स्वामी जी ने न केवल सहस्रों रोगियों को व्याधियों से मुक्त किया अपितु उन आत्माओं को, जो वर्तमान यातनाओं तथा कष्टों से संघर्षरत व पीड़ित और मुक्ति के लिए प्रयत्नशील थीं- उनको भी मुक्त किया। भारत माता कब तक उनके वियोग की पीड़ा सहन कर सकती थी? परन्तु क्या वह परिचय-पत्रों तथा पत्र-शीषर्षों की शोभा बढ़ाने वाली तथा अँगरेजी वर्णमाला के छब्बीस वर्षों के उलट-फेर मात्र से रचित प्रतिष्ठित उपाधियों से विभूषित इस व्यक्ति को स्वीकार करने को तैयार थी? कदापि नहीं। कदापि नहीं। क्या वह इनकी अनुपयोगिता और अक्रियता को नहीं जानती थी? क्या वह उस उद्देश्य का विस्मरण कर चुकी थी, जिसके लिए उसने उन्हें जन्म दिया था?

उनका हृदय त्याग से दीप्त हो उठा था। उनका निवास-स्थान उनके लिए अग्नि की भट्टी तुल्य भड़क उठा। आध्यात्मिक ज्वालाओं ने उनकी चल और अचल सम्पत्ति को निगल लिया। पदवी, सम्पत्ति, मित्रों तथा साथियों का उन्होंने परित्याग कर दिया। उनके अन्तर में आध्यात्मिक आवेग ने प्रहार किया और उनके हाथ में जलती ज्वाला थमा दी।

दृढ़ निश्चय और सकल्प से इस मशाल को ले कर विचार और आचार की बुराइयों-जिनसे मानवता आक्रान्त है-का उन्मूलन अपने शब्द और नाद से करने के लिए अपूर्व बुद्धि और नवीन उल्लास से परिपूर्ण व्यक्ति अब भारत में १९२३ में लौटे। **१ जून १९२४** को एक ज्योतिर्मय महात्मा ने उनको परमहंस-परम्परा में दीक्षित किया। **तब से वे 'शिवानन्द सरस्वती' के नाम से समलंकृत हुए।**

संसार-रूपी पिंजरे से मुक्त हो कर उन्होंने एक स्थान से दूसरे स्थान की पद-यात्रा की, वहाँ के निवासियों को अमूल्य शिक्षाएँ प्रदान कीं, तैयार जिज्ञासुओं की भावनाओं को उद्दीप्त किया तथा जो उद्दीप्त थे, उनकी भावनाओं को पूर्णतया प्रज्वलित किया।

परिव्राजक जीवन की सन्तुष्टि के उपरान्त उन्होंने हिमालय की तलहटी में पहुँच कर एकान्त-वास किया। **घोर तपस्या, संन्यासियों तथा यात्रियों की निष्काम सेवा, स्वाध्याय में अदम्य रुचि, उच्च गम्भीरता, कार्यों में नियमितता, समग्र मानव जाति का आलिंगन करने वाली महती भावना एवं सहानुभूतिमय दृष्टिकोण से सम्पन्न हो कर तथा जाति-भेद-भाव से ऊपर उठ कर वे पूर्ण योगी बन गये।** अवशिष्ट ऐन्द्रिक उत्तेजनाएँ तथा हृदय के कोने में प्रच्छन्न अति सूक्ष्म वासनाएँ ऐसी भागी जैसे भट्टी से बिच्छू भागता है।

उनके हृदय में आनन्ददायी गम्भीर शान्ति का साम्राज्य है, जिसकी मधुर सुरभि तथा आध्यात्मिक स्पन्दन वे विश्व-भर में भेजते रहते हैं, जिनका रसास्वादन संसार के किसी भी कोने में वास करने वाला प्रत्येक व्यक्ति करता है। वे ज्ञान की विभिन्न पद्धतियों से पूर्णतया परिचित हैं। वे विलक्षण स्मरण-शक्ति से सम्पन्न है। उनका प्रवचन सबको मन्त्र-मुग्ध कर देता है।

वे कर्तव्य-सम्पादन में निपुण हैं। उनकी सब पर समदृष्टि है और अपने मधुर स्वभाव से सबके साथ सम-व्यवहार करते हैं। वे अतिशय सरल हैं। वे सहज प्राप्य हैं, सबको आत्म-सम मानते हैं। क्या उनकी कृपा प्राप्ति का यह अवसर खो देना होगा? अतिमानव-रचित स्पष्ट सुबोध शैली में ज्ञान-प्रदायिनी पुस्तकों के रूप में स्वर्गिक उपहारों को प्रत्यक्ष पा कर भी हाथ से जाने देंगे? क्या हमें दैवी उपहार-जो खड़ी चट्टान-सम पतनकारी सांसारिक बन्धनों से मुक्त करवाने में सहायक है-को अस्वीकृत करना होगा ?

कुछ क्षणों के लिए अपनी आँखें मूदिए। सम्पूर्ण पापों सहित अपने मन को शिवानन्द की ओर प्रेरित कीजिए। इस वेदी पर अपनी समस्त बुराइयाँ अर्पण कर दीजिए। समस्त शारीरिक अवयवों को शान्तिः शान्तिः !! शान्तिः !!! का पाठ पढ़ाइए। कुछ समय के लिए आनन्द में लीन हो जाइए। ओ मानव! मन को अन्तर्मुखी करो। आपने संसार का अभी पूर्णरूपेण त्याग नहीं किया है। 'जन्म-दिवस' पर दिये गये उनके सन्देश को श्रवण कीजिए। ध्यानपूर्वक उनका अनुसरण कीजिए। ईश्वर आप पर शान्ति, प्रचुरता और समृद्धि की वर्षा करें!

योग-वेदान्त फॉरेस्ट यूनिवर्सिटी सर्टिफिकेट

(मूल कापी का टाइप प्रति)

THE YOGA - VEDANTA
FOREST UNIVERSITY

Service **Love** **Meditate** **Realise** **Tat-Twam-Asi**

WHEREAS, by the Grace of God, the Fountain of Eternal Bliss, and by the Will of the Almighty, it has been recognised that **Sri Prema-Murti Swami Chidananda** is worthy of being awarded the Sacred Title of **Adhyatma Jnana Jyoti** in appreciation of meritorious services rendered in the field of **spiritual uplift of mankind** and a firm devotion to Truth, Love and Purity, I hereby make this award in token of such recognition, with my best wishes and devout prayers to the Lord to bless the recipient hereof with health, long life, peace, prosperity, Eternal Bliss, success in all under- takings, Vidya, Tushti. Pushti and Divine Aiswarya

This Twenty-fourth day of June 1954.

Swami Sivananda.
(signature)
Chancellor

योग-वेदान्त फॉरेस्ट यूनिवर्सिटी सर्टिफिकेट

(हिन्दीरूपांतरण)

द योग-वेदान्त फॉरेस्ट यूनिवर्सिटी

सेवा प्रेम ध्यान साक्षात्कार तत्-त्वम्-असि

शाश्वत आनन्द के स्रोत परमात्मा की कृपा से और उस सर्वशक्तिमान् की इच्छा से यह पाया गया है कि **श्री प्रेम-मूर्ति स्वामी चिदानन्द**, आध्यात्मिक क्षेत्र में मानवता के उत्थापन के लिए की गयी सराहनीय सेवाओं के लिए और सत्य, प्रेम और पवित्रता में दृढनिष्ठ होने के लिए **अध्यात्म ज्ञान ज्योति** की उपाधि से विभूषित किये जाने के योग्य हैं। अतः मैं इन प्रशंसनीय कार्यों के प्रमाण के रूप में प्रशस्ति पत्र अपनी इन समस्त हार्दिक शुभ कामनाओं और प्रार्थनाओं सहित प्रदान करता हूँ कि स्वामी चिदानन्द उत्तम स्वास्थ्य, दीर्घायु, शान्ति, सम्पन्नता, शाश्वत आनन्द, सर्व-कार्य-साफल्यता, विद्या, तुष्टि, पुष्टि और दिव्य ऐश्वर्य से सम्पन्न हो।

२४ जून १९५४

Swami Sivavarda
सही
(स्वामी शिवानन्द)
कुलपति

मानव-जीवन का लक्ष्य

इस संसार में तीन वस्तुएँ दुर्लभ हैं-मानव-जन्म, मोक्ष की कामना और सन्तों का संग। ये तीनों भगवत्कृपा और उसके अनुग्रह से प्राप्त होती हैं। इन तीनों में मनुष्य-जन्म अमूल्य वरदान है, अत उसे प्रथम स्थान दिया गया है। सत्ता की यही एक ऐसी अवस्था है जिसमें जीव को बुद्धि और नित्यानित्य-वस्तु-विवेक की अति-दुर्लभ क्षमता उपलब्ध होती है। इसीलिए मनुष्य-जीवन भगवान् की अत्यन्त दुर्लभ देन माना गया है। अतः मनुष्य-जीवन प्राप्त करके भी यदि आपमें उस अवस्था को पहुँचने की तीव्र अभिलाषा नहीं है जो आपको नित्य आनन्द और अमरता प्रदान करेगी, तो इसका अर्थ है कि आप इस मनुष्य जीवन का उपयोग किसी लक्ष्य हेतु नहीं कर रहे हैं। यदि ऐसा ही

है, तो आपका अस्तित्व पशुवत् है। खाना, पीना, सोना और वासना - जन्य आनन्दोपभोग मनुष्य और पशु में समान हैं। मनुष्य का आदर्शवाद और भौतिक सत्ता से कहीं ऊपर उठने की उसकी आकांक्षा उसे पशु से भिन्न बना देती है। हम जानते हैं कि हमें कुछ उच्चतर प्राप्त करना है तथा इस भौतिक जीवन की अपूर्णताओं से मुक्त होने की तीव्र आकाक्षा भी हममें है।

इसके पश्चात् आता है विद्वज्जनों का संग। उक्त दो वस्तुएँ अर्थात् मानव-जन्म और मुमुक्षुत्व प्राप्त कर लेने पर भी हमारा जीवन भ्रम से आवृत रहता है, असफल प्रयासों से भरा रहता है। यह सब केवल इसी कारण कि हम नहीं जानते कि सही प्रयत्न क्या है? सम्यक् प्रयत्न की क्षमता तो उस भाग्यशाली व्यक्ति को प्रदान की गयी है जिसे पथ की बाधाएँ दूर करने वाला यह तीसरा वरदान प्राप्त है। यदि हम स्वयं को प्रभु को अर्पित कर दें, तो वह

हमें मार्ग दिखाता है। जब प्रलोभन हमें पथ-भ्रान्त करता है, उन क्षणों में वह हमें प्रेरणा दे सकता है, अत्साह और साहस दे सकता है। हमें तीनों ही वरदान प्राप्त है-तीनों ही नहीं, प्रत्युत चारों अर्थात् मन भी। मन भी सहमति जतायेगा। मानव-मन से बड़ा कोई दानव नहीं है। वह माया का दूत है, अत ईश्वर-प्राप्ति के मार्ग में बाधक है। अतएव मन अनुकूल होना चाहिए। आप पर चाहे देव-कृपा हो, गुरु-कृपा और शास्त्र- कृपा ही क्यों न हो. मन को आपका सहयोगी होना ही चाहिए।

हम अपने परम ध्येय, परमादर्श की ओर दिन-प्रति-दिन उन्नति तथा प्रगति करते जाने के लिए ही यहाँ हैं। अत आज का यह शुभ दिन और पुनीत अवसर है कि आज से हम ऐसी नियमित कक्षाएँ चालू कर रहे हैं जिनमें ध्यान के सिद्धान्त बताये जायेंगे, ध्यान का अभ्यास कराया जायेगा तथा साधना के सभी पहलुओं पर प्रकाश डालते हुए यह भी बताया जायेगा कि अपनी प्रत्येक क्रिया

(यहां से लेख, प्रवचन और सन्देश प्रारम्भ।)
को आध्यात्मिक किस प्रकार बनाया जाये। हम प्रात और साय ध्यान करते हैं, परन्तु फिर भी दिन-भर के अपने कार्य-व्यापार तथा अन्य के संगण व्यवहार में अति-संकीर्णता और स्वार्थपरता दिखाते हैं। यह हमारी साधना में अवरोध पैदा कर ध्यान के परिणाम को नष्ट कर देते हैं।

यूलिसिस की अनुपस्थिति में उसकी पत्नी देवेलोप के कई चाहने वाले हो गये, परन्तु वह किसी दूसरे को पत्नी होना ही नहीं चाहती थी। वह निष्ठावान् और पतिपरायण स्त्री थी। अत उसने अपने प्रणावियों से कहा कि वह एक वस्त्र बुन रही है और जब तक वह वस्त्र तैयार नहीं हो जायेगा, वह तब तक किसी से विवाह नहीं कर सकती। उन्होंने मान लिया और जब तक बूलिसिस लौट कर नहीं आया, वह दिन-भर वस्त्र बुनती रहती और दिन-भर का बुना रात में उधेड़ देती। इसी तरह का उधेड़ना हमारे जीवन में नहीं होना चाहिए। प्रातः और साथ हमने जितनी भी साधना की हो, उसमें हमें अदिव्य तत्त्व नहीं जोडने चाहिए।

अपने कार्यों के बीच में यदि हम अपने मूलभूत तत्त्व को भूल जाते हैं, रुक्ष हो जाते हैं, किसी की आलोचना करते हैं या सच्चाई से हट जाते हैं, तो जो साधना हमने ध्यान के क्षणों में की है, उसे उधेड़ कर रख देते हैं। अतः हमारा बहिर्गत जीवन और हमारी क्रियाएँ, हमारी वाणी और कर्म, हमारे ध्यान, उपासना और साधना की भावना के अनुरूप हों और उस भावना का

संवर्धन करने वाले हो। इसलिए अपनी साधना को बनाये रखने के लिए आवश्यक है कि उसे हम केवल अपने शान्तिपूर्ण क्षणों तक ही सीमित न रख कर अपने समस्त कर्मों में दिव्यता ले आयें। हमारे समस्त कर्म हमारे वास्तविक स्वभाव के अभिव्यंजक हों। वे दिव्य हो जायें।

यही कारण है कि कर्मयोग में समस्त कर्मों को दिव्यता प्रदान की जाती है। यह सबको जानना चाहिए -चाहे वह ध्यानयोगी हो, भक्त हो या वेदान्ती हो। कर्मयोग बड़ा कठिन है। एकान्त में आपकी बड़ी आदर्श भावना हो सकती है, परन्तु कठोर यथार्थ से सामना होने पर, इस विषमताओं से भरे जगत् में सन्तुलन रखना, केवल दिव्यता को अभिव्यक्त करना तथा निःस्वार्थ रहना बड़ा कठिन कार्य है। परन्तु फिर भी स्पृहणीय है, क्योंकि इसके द्वारा अन्य योग सफल हो जायेंगे।

जो मनुष्य आत्म-त्याग की भावना के साथ, माधुर्य के साथ आदर्श जीवन व्यतीत करता है, उसका एक माला जप भी अन्य व्यक्तियों की हजारों माला जप के बराबर होता है, क्योंकि उसका स्वभाव दिव्य कर्मों के द्वारा पवित्र और समुद्यत हो जाता है। परन्तु यदि स्वभाव काम, क्रोध आदि से पूर्ण है तब चाहे आप ध्यानोपासना करते रहें, पर भूमि तैयार न होने से वह फलवती नहीं होगी।

व्यक्ति को आश्चर्य होता है कि उसकी उन्नति क्यों नहीं हो रही है? नहीं हो रही है, क्योंकि अपने कार्यरत जीवन में वह साधना के प्रतिकूल चलता है। साधक को विवेकशील होना चाहिए। उसे देखना चाहिए कि छिद्र कहाँ है? अन्यथा पात्र टपकता ही रहेगा। आप कितना ही भरते जायें, व्यर्थ है। अतः आपको जानना होगा कि पात्र कहाँ से रिसता है और इस हेतु आपको कर्मयोग की कला का ज्ञान होना चाहिए।

इसका व्यावहारिक ज्ञान आपको आश्रम की कक्षाओं में ही मिलेगा। एक राजा के पास तीन खोपड़ियाँ थीं। उसने अपने राज-पण्डित से पूछा कि इन तीनों में कौन श्रेष्ठ है? उस पण्डित ने एक खोपड़ी को लिया और उसके कान में तार डाला। वह तार दूसरे कान से बाहर निकल आया। दूसरी खोपड़ी के कान में जब तार डाला गया, तो वह मुख-द्वार से बाहर आ गया। तीसरी खोपड़ी के कान में जब तार डाला गया, तो वह सीधा वक्ष में चला गया। राज-पण्डित ने बताया कि तीसरी खोपड़ी श्रेष्ठ है।

पहली खोपड़ी ऐसे लोगों की प्रतीक है जो एक कान से सुन कर उसे आत्मसात् किये बिना ही दूसरे कान से निकाल देते हैं और उसके विषय में भूल जाते हैं। दूसरी खोपड़ी उन लोगों की प्रतीक है जो ज्ञान प्राप्त कर उसे जनता में फैलाने को तो व्यग्र रहते हैं, परन्तु स्वयं उस पर नहीं चलते। ये द्वितीय श्रेणी के लोग हैं। तीसरी खोपड़ी श्रेष्ठ कोटि के साधकों की प्रतीक है जो ज्ञान श्रवण कर उसे हृदयंगम कर लेते हैं और उसका दैनिक जीवन में प्रयोग करने की चेष्टा करते हैं। मैं आपसे अनुरोध करूँगा कि आप तीसरी खोपड़ी की तरह बन जाये और जो कुछ भी बुद्ध जनों के संग से, सन्तों और महात्माओं के निकट सत्सग से प्राप्त हो, उसका विकास और अभ्यास करें। भगवान् का आशीर्वाद आप सबको प्राप्त हो!

हमारे जीवन में गुरुदेव

आराध्य दिव्य उपस्थिति को सादर प्रणाम! हम आपके शाश्वत, असीम अस्तित्व के अभिन्न अंग हैं। हम अनिवार्य रूप से आपसे जुड़े हुए हैं। हम आपसे अपना सम्बन्ध भूले बैठे हैं। आप हमारे आदि, मध्य और अन्त हैं। आप हमारे सर्वस्व हैं। भूलवश हमने स्वयं को आपसे दूर कर लिया है। इसी कारण हम आनन्द, शान्ति और प्रकाश से वचित रह रहे हैं जो हमारा जन्मसिद्ध अधिकार और हमारा अपना स्वरूप है। हमने इस आत्मानुभव की स्थिति से स्वयं को वचित कर लिया है और हम अप्रामाणिक, झूठे, बनावटी अनुभवों से भरा जीवन जी रहे हैं जिसमें प्रेम और घृणा, हँसना और रोना, उत्सुकता और तनाव, भय और बन्धन, लड़ना-झगड़ना, आत्मकेन्द्रित प्रवृत्ति, स्वार्थभाव, क्रोध और ईर्ष्या भरी पड़ी है। यह कृत्रिम अवस्था है। यह विषम अवस्था है। यह हमारे लिए स्वाभाविक नहीं है, कृत्रिम है।

इस शान्त वातावरण में, इस क्षण, इस नीरव प्रातःकाल में हमारे प्रिय पूजनीय **गुरु भगवान् स्वामी शिवानन्द जी** की पावन उपस्थिति में हम उनके चरणों में अपनी श्रद्धाजलि और प्रणाम समर्पित करते हैं। हम अपने हृदयतल से, मानवीय मन से, प्रार्थना करते हैं कि यह वियोग, यह प्रतिकूलता, आपसे दूर भागने की इस प्रवृत्ति का अन्त होना चाहिए। सारे कष्ट, विषाद, दुःख, हानि, दुर्दशा, भ्रम, सम्मोहन आदि स्थितियों का मूल कारण अपने स्वरूप की जागरूकता के प्रति, आपके साथ हमारे शाश्वत सम्बन्धों के प्रति सुषुप्ति का कारण, हमारा आपको भूल जाना ही है। आपकी कृपा से उसका अन्त हो जायेगा।

ईश्वर करें, हम पुनः आपके साथ अपनी आन्तरिक दिव्य शाश्वत एकता बनाये रखें। कोटि-कोटि अगणित अर्धसत्यों और प्रकट रूपों के मध्य आप ही केवल सत्य हैं। ऐसी जागृति आने पर ही हमारा शोक आनन्द में , उत्सुकता और व्याकुलता शान्ति में, भ्रम और अज्ञान बुद्धिमानी में तथा अपूर्ण अस्तित्व पूर्णत्व में अर्थात् ब्रह्मानन्द में परिणत हो जायेगा।

इस ब्राह्ममुहूर्त में हम प्रार्थना करते हैं: "**असतो मा सद्गमय, तमसो मा ज्योतिर्गमय, मृत्योर्मा अमृतं गमय।**" इस वियोग को समाप्त करो, इसके लिए आपने स्पष्ट रूप से कहा है "**तम् विद्याद् दुःख संयोग-वियोगं योग संज्ञितम्**" (गीता ६-२३) कष्ट रूप ससार के सयोग की समाप्ति को योग कहते हैं। योग से सारे कष्ट दूर हो जाते हैं, सारी विपदा समाप्त हो जाती है, ताप-त्रय समाप्त हो जाते हैं। अब रोने-विलाप करने के दिन गये। वहाँ तो आनन्द है, प्रसन्नता है। कृपया हमें उस योग का उपहार दीजिए।

श्रीमद्भगवद्गीता के अमर ज्ञान की शिक्षाओं का यही आह्वान है जिसमें सारे सन्देशों, सभी शिक्षाओं, सभी ईश्वरीय आदेशों में यही कहा गया है कि तुम ही नारायण हो और अर्जुन के माध्यम से नरों को आह्वान है- "**तस्माद्योगी भवार्जुन**" और स्वामी शिवानन्द जी के रूप में आपने पुनः यह आह्वान किया है-"आओ, आओ, योगी बन जाओ, तुम क्यों रोते और विलाप करते हो? तुम क्यों इस बन्धन को दूर तक खींचना चाहते हो? आओ, योगी बन जाओ।" ऐसा उनका आह्वान था। बीसवीं शताब्दी के आधुनिक मानव के लिए श्री स्वामी शिवानन्द जी महाराज ने सनातन आह्वान की पुनरावृत्ति की है।

पूजनीय आध्यात्मिक उपस्थिति, गुरुदेव आप ही हमारे प्रकाश और जीवन के मार्गदर्शक हैं। आप अपने आह्वान से हमें बार-बार इसी प्रकार सावधान करते रहिए। आपके चरणों में हमारी यही प्रार्थना है। उन सभी साधक आत्माओं के लिए जो आपकी उपस्थिति में, आपकी गुरु-कृपा से आकृष्ट हो कर हर दिन की प्रातः बेला में आपके आश्रम के इस समाधि हाल में यहाँ उपस्थित हुए हैं, उनके लिए आपसे यही प्रार्थना है।

प्रकाशवान् आत्माओ! हम पुण्यतिथि की वार्षिक आराधना के निकट हैं। गुरुदेव अपने पीछे जो दायित्व हमारे ऊपर सौंप कर गये हैं, हम उसी पर चिन्तन करते रहे हैं। गंगा के किनारे स्थापित मूल्यवान् अमूल्य आश्रम के रूप में हमें आपने जो सुविधा दी है, हम उस पर विचार करते रहे हैं। यह एक वास्तविकता है, यह एक अनुभव है; ठोस, साकार एक सारगर्भित तथ्य है। कोई इसे नकार नहीं सकता। यह भवन भक्ति, ज्ञान, ध्यान, कर्मयोग, परोपकार और सेवा की सुविधा प्रदान करता है तथा यहाँ पर ज्ञान-गंगा में स्नान करने के लिए प्रेरक, आत्म-जाग्रत करने वाला, प्रकाशित करने वाला, अनुदेश देने वाला आध्यात्मिक साहित्य है। उन्होंने हमें जीवन के आदर्श और दृष्टान्त भी दिये, जिन्हें वे 'दिव्य जीवन' कहते थे। यह जीवन केवल स्थूल शारीरिक जीवन नहीं अथवा सूक्ष्म, मनोवैज्ञानिक जीवन नहीं दिव्य जीवन है, एक ऐसा जीवन जो हमारे स्वरूप से विशेषित है, हमारे पूर्णतया आन्तरिक स्वभाव से विशेषित, एक ऐसा जीवन जो केवल हमारी अनावश्यक उपाधियों की ही अभिव्यक्ति नहीं है, प्रत्युत एक ऐसा जीवन है जो देवत्व की अभिव्यक्ति है, जो हम सबका आभ्यन्तर सत्य है। उन्होंने हमें आदेश और सन्देश दिया- "तुम जिसके लिए आये हो, अपना जीवन दिव्यता से व्यतीत करो, यदि तुम अपनी उपाधियों को प्रकट करते रहोगे, तो तुम अपने-आपको प्रकट नहीं कर रहे हो।"

देवत्व की ओर अग्रसर होने के लिए धर्मशास्त्रों के सारतत्त्व को सुव्यवस्थित स्वरूप दिया। गुरुदेव ने कहा "उसकी नींव है-सत्य और दया तथा सार्वभौम प्रेम। आकार है- सतत निःस्वार्थ सेवा, भक्तिपूर्ण आराधना, अनुशासन, एकाग्रता, ध्यान, सतत आत्म-निरीक्षण, आकांक्षा, जिज्ञासा, मुमुक्षुत्व, विचार, विवेक, अभिव्यक्ति से परे सत्य की प्रकृति का निरीक्षण, नित्य परिवर्तनशील, मिथ्या नाम और रूप (जो मात्र अभिव्यक्ति हैं) से परे सच्चिदानन्द तत्त्व में लीन होना; क्योंकि वह नित्य है, शाश्वत है, ज्योतिर्मयी आत्म-चेतना से उद्भासित है, ज्ञान स्वरूप है, प्रकाश स्वरूप है और जो वास्तव में अत्यन्त प्रिय है, आनन्द स्वरूप है।"

एवंविध, सत्य, अहिंसा और ब्रह्मचर्य की नींव पर उन्होंने सेवा, भक्ति, ध्यान और आत्मज्ञान का एक उत्कृष्ट आकार हमें प्रदान किया है। पर उनकी एक अनोखी प्रेरणा हमें हमारी एक नयी पहचान के रूप में मिली है। उन्होंने कहा- "तुम यहाँ केवल एक यात्री के समान घूमते रहने के लिए नहीं हो, कहीं खाई में गिरने के लिए नहीं हो, पाँचों इन्द्रियों रूपी डाकुओं से घात

लगा कर लुटने के लिए नहीं हो; बल्कि उससे हट कर तुम यहाँ सर्वोच्च ईश्वर से मिल जाने के लिए हो। तुम उनके सान्निध्य में रहो। जीवन का वास्तविक अर्थ यही है। ईश्वर से बिछुड़ने और एक बार फिर उनसे मिलने की यात्रा है। तभी दुःख आनन्द में परिणत होगा। दुःख से सयोग समाप्त करने के लिए योगी बन जाओ।"

इस प्रकार उन्होंने हमें ऐसी पहचान दी है- "तुम सभी योगी हो, तुम्हें योगी के समान जीवन यापन करना है। जीवन ही योग है। उनसे पुनः एकत्व प्राप्त करने की प्रक्रिया ही जीवन है। वह संयोग, वह आन्तरिक सम्बन्ध जिसने तुम्हारे ईश्वर होने के दैवी स्रोत से टूटी हुई कड़ी को खो दिया है। इसलिए योगी के रूप में रहने के लिए अपने-आपको जागरूक रखो।"

और यह नयी पहचान वास्तविक रूप में व्यावहारिक जीवन पर आधारित थी। केवल अपने-आपको योगी मान लेना ही पर्याप्त नहीं है। "व्यावहारिक योगी बनो। योग साधना का अभ्यास करो। साधक बनो। और कुछ बनने के स्थान पर योगी बनो। चाहे तुम वकील, इंजीनियर, डाक्टर, प्रोफेसर, शिक्षक, टैक्सीचालक, व्यवसायी या दुकानदार हो, इससे कोई अन्तर नहीं पड़ता। साधक बनो। मेरे प्रिय बच्चो ! सच्ची साधना करो, साधना करो, सच्चे साधक बनो, अपने-आपको आध्यात्मिक साधना में व्यस्त रखो। अपने दिन-प्रतिदिन के जीवन का इसे अंग बन जाने दो। दिन का प्रारम्भ साधना के साथ करो और अन्त भी साधना के साथ करो। दिन-भर के सारे कार्य-कलाप सब साधना के भाव से पूरे करो - "**यत् यत् कर्म करोमि तत्तदखिलं शम्भो तवाराधनम्**" (मैं जो कुछ भी कर्म करूँ, हे ईश्वर। मैं सब आपको समर्पित करके करूँ। यही मेरी पूजा है)।"

बीसवीं शताब्दी की अखिल विश्व की भाग्यशाली मानव-जाति के लिए गुरुदेव श्री स्वामी शिवानन्द जी का यही अनोखा उपहार है। और आप सबमें सबसे भाग्यशाली वे हैं जो इस प्रकार के उपहार के लिए सीधे-सीधे उनके सामने थे तथा उन्होंने उस प्रकार की साधना का जीवन-निर्वाह करने का निश्चय किया। तुम्हीं साधक हो, तुम्हीं योगी हो। उन्होंने इसी रूप में नया जीवन प्रदान किया है। भ्रान्त पहचान को हटा कर यही नयी पहचान उन्होंने आपको दी "मैं यह हूँ, मैं वह हूँ, मैं अमुक व्यक्ति हूँ, मैं स्त्री हूँ, मैं पुरुष हूँ, मैं ब्राह्मण क्षत्रिय हूँ, मैं वैश्य-शूद्र हूँ, मैं ब्रह्मचारी संन्यासी वानप्रस्थी हूँ।" इन सबसे ऊपर उन्होंने आपकी पहचान करायी-"मैं योगी हूँ, मैं ईश्वर से अपना सम्बन्ध स्थापित करना चाहता हूँ। मैं साधक हूँ, मेरा जीवन साधना के लिए है। मेरा जीवन साधना से भरा हुआ होना चाहिए। यदि साधना मेरे से छिन गयी, तो मैं शून्य हूँ। उसे मेरे जीवन का अन्त समझो, मेरे जीवन में कुछ नहीं बचा समझो। मैं शव के समान हूँ।" उन्होंने इस प्रकार की पहचान हमें साधक, योगी, भक्त, परोपकारी, ध्यानी, वेदान्ती बनने के लिए दी। वेदान्ती बन जाओ। हाड़-मास के इस पिंजरे में से ओंकार की ध्वनि की गूंज चारों और फैल जाने दो। वह यही चाहते थे।

इस प्रकार उन्होंने हममें नयी चेतना प्रदान की, पूर्ण रूप से ईश्वर के साथ सम्बन्ध की नयी पहचान दी, सीधे-सीधे ईश्वर के साथ जुड़े रहने की नयी चेतना जगायी। पर उस सबसे ऊपर उन्होंने हमें जो पहचान करायी थी, वह थी- "योगी के समान जियो, साधक के समान जियो।" यही तुम्हें उनसे उत्तराधिकार के रूप में मिला है। यही उन्होंने अपने पीछे छोड़ा है। अमूल्य निधि, एक मूल्यवान् थाती जिसका मूल्य जाँचा नहीं जा सकता, उसे सोने-चाँदी और अमूल्य रत्नों के रूप में आँका नहीं जा सकता। वह अतुल्य है, अमूल्य है।

इस प्रकार सम्मिलित रूप में हमें गुरुदेव के चरणों में आदरपूर्वक प्रणाम करके उस महापुरुष को प्रेम के साथ श्रद्धांजलि अर्पित करनी चाहिए, जिन्होंने प्राचीन घोषणा का प्रतिनिधित्व किया, जिसे 'गीता' में भी सुन सकते हैं। उन ज्ञान-उपदेशों को उन्होंने इस बीसवीं शताब्दी में पुनः जागरित करके योगी-वाणी प्रदान की-"आओ, आओ, योगी बन जाओ, इसी जीवन में आत्मोपलब्धि, ईश्वरोपलब्धि प्राप्त करो।"

इसीलिए गुरुदेव हमारे लिए आये थे। इसीलिए वह उन लोगों के सदा अपने बने रहेंगे जो सच्चाई के साथ इस पर मनन करते हैं तथा यह खोजने का प्रयास करते हैं कि हम उनके कौन हैं, हम किस रूप में उनसे सम्बन्धित हैं, उन्होंने अपने जीवन और उपदेशों के रूप में हमारे लिए क्या किया। इस महासमाधि दिवस पर हम इस मास की चौबीस तारीख को उस व्यक्ति के जीवन और उनकी शिक्षाओं के रूप में मनाने की तैयारी कर रहे हैं। हमें पूर्ण रूप से उनके गुणों की प्रशसा करनी चाहिए कि वह व्यक्ति कौन है जिसके महासमाधि दिवस का आयोजन हम गुरुपूर्णिमा के पश्चात् की नवमी को करते हैं। आप सबको ईश्वर का आशीर्वाद प्राप्त हो। .

गुरु-कृपा

हमारे धर्मशास्त्र हमें यह बतलाते हैं कि गुरु-कृपा एक ऐसा अद्‌भुत रहस्यमय तत्त्व है जो साधक को जीवन के परम श्रेयस् आत्मसाक्षात्कार, भगवदर्शन अथवा मोक्ष की खोज तथा उपलब्धि में सक्षम बनाता है। शिष्य साधना करे अथवा न करें, वह अधिकारी हो अथवा अनधिकारी, गुरु-कृपा आध्यात्मिक क्षेत्र में प्रवर्ती सभी प्रसामान्य विधानों को उत्सादित कर उसे (शिष्य को) भावातीत आनन्द में ले जाती है। यदि हम शास्त्रों पर विश्वास करें तो हम कह सकते हैं कि **जीवन में पूर्णता प्राप्त्यर्थ गुरु-कृपा के अतिरिक्त अन्य कोई भी वस्तु अपेक्षित नहीं है।**

इसके साथ ही, यदि यह तथ्य भी सत्य है कि गुरु दया के असीम सागर हैं तथा वे समस्त जिज्ञासुओं पर, चाहे वे अधिकारी हों अथवा अनधिकारी, योग्य हों अथवा अयोग्य, अपनी कृपा की वृष्टि निरन्तर करते रहते हैं। यदि ऐसी बात है तो अब तक हम सभी आप्तकाम, आनन्दमय बन चुके होते। पर क्या ऐसा है? नहीं। हमें यह देख कर खेद होता है कि हम फँस गये हैं। हममें अज्ञानता है, भ्रम भी वर्तमान है तथा हम अपनी ही निम्न आत्मा द्वारा जीवन के प्रत्येक मोड़ पर प्रवंचित हो रहे हैं।

त्रुटि कहाँ है? इनमें से कौन असत्य है? यदि उपर्युक्त दोनों ही कथन सत्य हैं तथापि शिष्य अद्यावधि बहुत कुछ पार्थिव ही बने हुए हैं तो कहीं पर अन्य कुछ भूल होगी। वह 'अन्य कुछ' क्या है? हम शास्त्रों को असत्य कहने की धृष्टता नहीं कर सकते, पर साथ ही हम यह भी दृढ़तापूर्वक नहीं कहते कि गुरु करुणामय नहीं हैं तथा वह हम पर अपनी कृपा-वृष्टि नहीं करते।

यदि हम इस पर चिन्तन करें तो हमारे समक्ष कुछ ऐसे तथ्य उपस्थित होते हैं जिन पर गम्भीरतापूर्वक विचार करने की आवश्यकता है। **निस्सन्देह गुरु-कृपा एक ऐसी दिव्य शक्ति है जो चेतन प्राणी ही नहीं, निजीव पाषाण तक को असीम सच्चिदानन्द में रूपान्तरित कर**

सकती है। इस कथन में तथा इस तथ्य में कि गुरु सदा ही दयापूर्ण होते हैं, किचिन्मात्र भी अतिशयोक्ति नहीं है। तथापि गुरु-कृपा केवल प्रदान ही नहीं की जाती, दी ही नहीं जाती, अपितु ग्रहण भी की जाती है। इसे ग्रहण कर हम अपने को अमर बनाते हैं, अपना दिव्यीकरण करते हैं।

एक उदार दानदाता अपरिमित दान दे सकता है, किन्तु संसार की समस्त सम्पत्ति भी उस अकिंचन के लिए निरर्थक ही है जो इस महान् अवसर का लाभ नहीं उठाता तथा प्रापक नहीं बनता। इसीलिए प्रभु यीशु ने कहा "माँगो, तो तुम्हें दे दिया जायेगा, ढूँढ़ो, तो तुम पाओगे; खटखटाओ, तो तुम्हारे लिए खोल दिया जायेगा।" ऐसी बात नहीं कि भगवत् दानशीलता का, दिव्य कृपा का, गुरु-कृपा का कोई अभाव था। प्रकाश की कमी व थी, किन्तु एक विधान था कि हमें माँगना है, हमें ढूँढ़ना है तथा हमें खटखटाना है और ऐसा करके हमें उसे ग्रहण करने के लिए उद्यत रहना होगा। यदि यह स्थिति है तो गुरु-कृपा सभी प्रकार के आश्चर्य करती है। यह हमारे अन्दर प्रवाहित हो कर हमें उन्नत कर अमरत्व, शाश्वत प्रकाश तथा असीम आनन्द के उच्चतम प्रदेश में पहुँचा देती है।

तब हम उस कृपा को कैसे प्राप्त कर सकते हैं? उसको ग्रहण करने को उद्यत रहने के लिए हमें कैसा व्यवहार करना चाहिए? शिष्यत्व के द्वारा, क्योंकि गुरु तथा गुरु कृपा का प्रश्न शिष्य के सम्बन्ध में ही उठता है। जो शिष्य नामक श्रेणी में नहीं आते, ऐसे लोगों के लिए ऐसा नहीं कहा गया कि उन्हें, दया, करुणा, कृपा अथवा आशीर्वाद नहीं प्रदान किया जायेगा, किन्तु इसमें गुरु कृपा का उल्लेख नहीं है। जब मैं गुरु कृपा कहता है तो यह कुछ विशेष वस्तु है, कुछ रहस्यमय वस्तु है, कुछ ऐसी वस्तु है जो न केवल इस लोक की ही कोई भी वस्तु प्रदान करती है वरच वह सर्वोच्च वस्तु भी प्रदान करती है जिसके लिए यह मानव-जन्म हुआ है, क्योंकि भक्त को सन्त का आशीर्वाद मिल सकता है, वह उनकी करुणा का भी भागीदार बन सकता है, किन्तु गुरु-कृपा की भेंट प्राप्त करने के लिए प्रथम हमें शिष्य बनना होगा।

व्यक्ति शिष्य कैसे बन सकता है? यह बात नहीं है कि गुरु शिष्य को स्वीकार करता है, वरच शिष्य को प्रथम गुरु को स्वीकार करना होता है। यदि शिष्य सर्वप्रथम अपने को शिष्य का रूप दे डालता है तो इस बात का कोई महत्त्व नहीं रहता कि गुरु कहे 'हाँ, तुम मेरे शिष्य हो' अथवा न कहे। वह गुरु-कृपा का अधिकारी तथा वैध अध्यर्थक बन जाता है।

तत्पश्चात् हमें गुरु की सेवा करनी होती है। यह सेवा है। सेवा ही वह रहस्यमय कोई वस्तु है जो हमारे तथा गुरु-कृपा के प्रभाव के मध्य अवरोधक को धराशायी बना डालती है। अहंकार ही सबसे बड़ा अवरोधक है। हमारे आत्माभिमान के, पूर्व-निर्मित धारणाओं के प्राचीन समूह द्वितीय भीषण अवरोधक का काम करते हैं। इन सबके लिए सेवा एक प्रभावकारी अवरोध-उन्मूलक है।

एक बार एक गुरु ने अपने शिष्य की परीक्षा लेने के लिए उसे अपने पैरों से अपनी कमर दबाने का आदेश दिया। गुरु ने कहा "मेरी कमर में पीड़ा हो रही है। मेरे प्रिय शिष्य क्या तुम अपने पैरों से उसे दबाओगे?"

शिष्य ने कहा "महाराज' मैं आपके पवित्र शरीर पर अपने पाँव कैसे रख सकता हूँ? यह जघन्य अपराध है।"

गुरु ने उत्तर दिया "किन्तु क्या तुम इस भाँति मेरी आज्ञा का उल्लघन कर मेरी जिह्वा पर पैर नहीं रख रहे हो ?"

व्यक्ति को इस उदाहरण से शिक्षा ग्रहण करनी चाहिए। **अपने गुरु की आज्ञा पालन में शिष्य को अपनी बुद्धि का प्रयोग नहीं करना चाहिए।** उसे धृष्टता त्याग देनी चाहिए तथा गुरु के प्रति सच्ची तथा चिरस्थायी भक्ति का विकास करना चाहिए। व्यक्ति को प्रत्येक सम्भव उपाय से गुरु की सेवा करनी चाहिए। बिना किसी हिचकिचाहट के उनकी आज्ञाओं का नि संशय पालन करना चाहिए।

गुरु की शिक्षाओं का यथासम्भव पालन करने का प्रयास ही उनकी सेवा है। उनके उदात्त उपदेशों पर हमें अपने जीवन का निर्माण करना है। आत्मा से स्वेच्छापूर्वक गुरु की आज्ञाओं का पालन ही अपने क्षुद्र सामर्थ्यानुसार उनके उपदेशों के अनुसरण का रहस्य है। भूलुण्ठित हो उन्हें नमस्कार करने की तत्परता रखना, उन्हें अपना मार्गदर्शक स्वीकार करना तथा उनकी आज्ञाओं का पालन करना ही सर्वाधिक आवश्यक वस्तु है ।

गुरु, उनकी कृपा तथा उनके कार्य के विषय में जो विचार-समूह हमारे अन्दर किसी-न-किसी रूप में प्रवेश कर गये हैं, उन्हें भी हमें अन्दर उन्मूलन करना है। यह कष्टसाध्य कार्य है, पर इसे करना ही होगा, क्योंकि शिष्य के लिए गुरु का स्वरूप मानव नहीं है। हमें गुरु के मानवीय पहलू की ओर से अपने नेत्र मूँद लेने चाहिए तथा उनके दिव्य स्वरूप की ओर ही जागरूक रहना चाहिए। इस दशा में ही हम गुरु-कृपा के भागीदार बन सकेंगे जो कि हमें निम्न मानव से मानवातीत दिव्यता में रूपान्तरित कर देगी। जब तक हम अपने को पार्थिव प्राणियों से सभी अभावों, परिसीमाओं तथा कमजोरियों से युक्त मानव- प्राणी, पार्थिव प्राणी समझते हैं, तब तक हम गुरु के चरम दिव्य स्वरूप की चेतना में पूर्णत प्रवेश नहीं कर सकते। अत हमारी साधना होनी चाहिए दिव्य चेतना को उत्पन्न करना तथा अपनी मानवी चेतना को निकाल फेंकना। यदि हम यहाँ दिव्य नियति से युक्त दिव्य प्राणी के रूप में रहना आरम्भ कर दें तो गुरु-कृपा तथा गुरु का दिव्य स्वरूप शनैः शनै अभिव्यक्त होने लगेंगे। ...

धर्म का सार

सर्वप्रथम जीवन का अर्थ और ध्येय समझना अत्यन्त आवश्यक है तब ही व्यक्ति अपने अस्तित्व और यहाँ पृथ्वी पर अपनी उपस्थिति के महत्त्व को आनते हुए अर्थपूर्ण जीवन यापन कर सकता है तथा इस प्रकार से वह सही दिशा में अग्रसर हो सकता है एवं जीवन में सफलता और पूर्णता प्राप्त कर सकता है। इस मानव संसार में सारे धर्म जो अस्तित्व में हैं, उनका उद्देश्य और प्रयोजन मानव-जाति को अपने स्वयं के जीवन के सम्बन्ध में सही ज्ञान देना है। धर्म हमें सच्चा

ज्ञान और विवेक देने के लिए है कि हम यहाँ क्यों आये हैं, पृथ्वी पर हमारी उपस्थिति का अर्थ और महत्त्व क्या है और र वह लक्ष्य क्या है जो हमें इस जीवन में प्राप्त करना है। समस्त धर्मों के अन्तर्तम उपदेश समान हैं।

धर्मों की बाह्य आकृति और क्रियाओं में अन्तर है। यह अनिवार्य है, क्योंकि इन धर्मों का विकास विश्व के विभिन्न भागों और मानव-इतिहास के भिन्न-भिन्न कालों में हुआ है और इसलिए ऐतिहासिक तत्वों और भौगोलिक स्थितियों के कारण धर्म का बाह्य विधि-विधान और कर्मकाण्ड स्वभावत एक-दूसरे से भिन्न है। भौगोलिक स्थिति और ऐतिहासिक कालावधि में भिन्नता के कारण ये धर्म सर्वप्रथम कुछ महान् पैगम्बरों के उपदेशों द्वारा अस्तित्व में आये, परन्तु जब कोई धर्म के बाह्य रूढ़िवाद, मात्र कर्मकाण्ड और धर्मानुष्ठान के परे जाने की चेष्टा करे तो वह पायेगा कि समस्त धर्मों का आन्तरिक सार उनको एक-दूसरे के निकट लाता है और उनमें एक सादृश्यता है जो धरातल पर दिखायी नहीं देती। समस्त धर्मों का सार लगभग समान है; क्योंकि सभी महान् पैगम्बर परमात्मा के दूत थे और उनका सन्देश पृथ्वी पर मानव के लिए परमात्मा की इच्छा की घोषणा करना था। पृथ्वी पर मानव के लिए दिव्य योजना और मानव के जीवन और आचरण के लिए परमात्मा की आज्ञा तथा मनुष्य का पृथ्वी पर ध्येय प्रेम, शाति, समरस्य, सेवा और सत्य है और सता रहा है। ये समात धर्मों के सबसे अधिक महत्त्वपूर्ण उपदेश रहे हैं, क्योंकि यह परमात्मा की इच्छा है कि मानव प्रेम की मूर्ति बने जैसा कि वह (परमात्मा) स्वयं है ताकि मनुष्य सत्यता, ईमानदारी व पवित्रता से पूर्ण प्राणी बने तथा व्यकि कृपालु और दयालु प्राणी बने। हम अपने लिए परमात्मा से यही आशा करते हैं कि वे हमारे पापों को क्षमा करें, सहानुभूति और दया भाव द्वारा हमारे छोटे-छोटे दोषों, कमियों और मानव-चरित्र की दुर्बलताओं को क्षमा करें।

हमें अपने स्वयं के जीवन में इन आधारभूत दिव्य गुणों का धर्म आचरण के रूप में अभ्यास करना चाहिए। धर्म केवल शास्त्रीय क्रिया और विधि नहीं है। धर्म इसके परे है। धर्म हमारे अस्तित्व की सबसे गहरी चालक शक्ति है। यहाँ हम केवल भौतिक और धरती के प्राणी नहीं हैं. बल्कि दिव्यता के स्फुल्लिंग हैं। हम नित्य दिव्य अस्तित्व रूपी सागर पर लहरों की भाँति हैं।

हमारे अस्तित्व की इस अन्तरतम गहराई में हम आध्यात्मिक प्रकृति के हैं। इस गहराई में हम निश्चित प्रयत्न करते हैं, हम अपने-आपको अपने अस्तित्व के दिव्य स्रोत के साथ पुनः एक बार जोड़ने के लिए सतत प्रयत्न करते हैं। यह धर्म का सच्चा सार है। धर्मो का अस्तित्व और कार्य मनुष्य और पररमात्मा के मध्य पुनः एक सजीव सम्बन्ध स्थापित करना है। **परमात्मा के साथ हमारा विस्मृत सम्बन्ध पुनः स्थापित करवा धर्म का सार है।**

*****

ज्ञान और कर्म-कर्म अपरिहार्य है

ज्ञान का मार्ग पूर्णतः अपरिहार्य तथा परमावश्यक है। ज्ञान का अभाव ही समस्त दुःखों का मूल कारण है। आत्मा की अनश्वरता को न समझना ही सभी आसक्तियों, दुःखों और भ्रान्तियों का कारण है। ज्ञान के बिना आपका सम्पूर्ण जीवन पूर्णत अव्यवस्थित हो जायेगा तथा आपकी दशा अत्यन्त दयनीय हो जायेगी।

सम्यक् ज्ञानार्जन तथा सम्यक् कर्म-सम्पादन परस्पर विरोधी नहीं हैं। ये दोनों वस्तुतः एक-दूसरे को सहयोग प्रदान करते हैं। ज्ञान को कर्म का अनुपूरक बनना चाहिए तथा समस्त कर्मों को ज्ञान से पूर्ण होना चाहिए।

ज्ञान पर आधारित कर्म तथा कर्मोन्मुखी ज्ञान श्रीमद्भगवद्गीता के द्वितीय अध्याय का सन्देश और साधना है। यदि आप अपने अज्ञान से मुक्त हुए बिना ही कर्म में प्रवृत्त होंगे, तो नष्ट हो जायेंगे। आप कष्टों को ही आमन्त्रित करेंगे। और सैद्धान्तिक ज्ञान प्राप्त करके यदि आप सम्यक् कर्म की उपेक्षा करेंगे, तब आपका क्रमविकास रुक जायेगा। कर्म मानव को पूर्णता की ओर ले जाने वाली भगवान् द्वारा निर्मित एक व्यवस्था है। कर्म में मानव के सामूहिक तथा वैयक्तिक क्रमविकास के आन्तरिक गतिविज्ञान के तत्त्व संघटित होते हैं।

एक पुरानी किन्तु बहुत विवेकपूर्ण कहावत है, जिसका अर्थ 'आराम हराम है।' कर्म किसी वस्तु को पैना करने के लिए सान से धार लगाने के समान है। ज्ञान को कर्म में परिणत करने पर ही अनुभूति बनता है। ज्ञान व्यवहार में लाने के लिए ही होता है। और इसलिए यदि आप क्रिया-प्रतिक्रिया के चक्र में फँसना नहीं चाहते, तो आपको यह तथ्य भलीभाँति हृदयंगम कर लेना होगा कि ज्ञान के लिए कर्म उतना ही आवश्यक है जितना सम्यक् कर्म के लिए ज्ञान आवश्यक है। कर्म के बीच में रहते हुए भी यदि आप कर्म से बँधना नहीं चाहते तो ज्ञान ही इसका एकमात्र उपाय है, मार्ग है।

अत: सांख्ययोग और कर्मयोग परस्पर विरोधी नहीं हैं। वे एक-दूसरे को समर्थन प्रदान करते हैं। ज्ञानपूर्ण कर्म द्वारा ज्ञान के पूर्णतम प्रस्फुटन की दिशा में होने वाले जीवात्मा के उत्तरोत्तर क्रमविकास की प्रक्रिया के ही दो पहलू हैं ये सांख्ययोग तथा कर्मयोग। अतः जो योगी अपने जीवन में सांख्ययोग और कर्मयोग-दोनों का इस प्रकार समन्वय कर लेता है, वह ही वास्तव में दक्ष योगी है। वही अपने आध्यात्मिक जीवन में सफलता प्राप्त करेगा।

ऐसा ही योगी-जिसने अपने सामान्य लौकिक कर्मों को आत्मा का एक उच्चतर आयाम प्रदान करके उत्कृष्ट आध्यात्मिक कार्यकलापों में रूपान्तरित कर लिया है-जानता है कि स्वयं जीवन को मोक्ष की प्रक्रिया बनाने की कला तथा विज्ञान क्या है। किसी प्रविधि का अभ्यास करते समय समस्त मानसिक वृत्तियों का दमन योग कहलाता है। यही योग कर्मशील व्यक्ति के लिए **'योगः कर्मसु कौशलम्'** (कर्मों में कुशलता ही योग है) बन जाता है। आप इस बोध के साथ कार्य करते हैं कि तीनों गुण अपने-अपने धर्म के अनुसार व्यवहार कर रहे हैं, जबकि मैं-जो त्रिगुणातीत आत्मतत्त्व हूँ-वास्तव में निष्क्रिय हूँ। मैं समस्त क्रियाकलापों का मूक, अनासक्त तथा अप्रभावित द्रष्टा हूँ। मुझे कर्म कैसे बाँध सकता है? किन्तु मैं निष्क्रिय द्रष्टा नहीं हूँ। अपने समस्त अगों तथा समस्त विचारों पर मैं अपने ज्ञान का प्रकाश छोड़ता हूँ। तब ज्ञान से प्रकाशित हो कर वे कर्म में प्रवृत्त हो जाते हैं।

कर्म अपरिहार्य है

गीता-उपदेश के द्वितीय चरण में हमारे समक्ष अन्य अकाट्य सत्य को प्रस्तुत किया गया है "आप चाहे जो करें, आप कर्म को टाल नहीं सकते, क्योंकि आप प्रकृति के अंश हैं और प्रकृति में रजोगुण अत्यधिक मात्रा में होता है। वह आपसे कर्म करा ही लेगी। आप इससे बच नहीं

सकते। चाहे आप सोधे, 'मैं कोई कार्य नहीं कर रहा, चाहे आप प्रकट रूप में चुपचाप बैठे रहे, तब भी सहयो प्रक्रियाएँ निरन्तर आपकी स्वयं की शरीर-संरचना के अन्दर चल रही होती हैं। कोशिकाएँ पर कर समाप्त होती रहती हैं और नयी कोशिकाएँ निर्मित होती रहती है। रक्त आपकी धमनियों और शिराओं में प्रवाहित होता रहता है। आपका हृदय इस रक्त को पम्प करता रहता है और फेफड़े इसे शुद्ध करने के लिए ताजा आक्सीजन देते रहते हैं। शरीर के समस्त अंग-जिगर, गुरदे, मूत्राशय, आमाशय आदि सक्रियतापूर्वक अपना- अपना कार्य करने में लगे हुए हैं। बिना कर्म के आप जीवित भी नहीं रह सकते।

"जब आप समझते हैं कि आप कुछ नहीं कर रहे हैं, तब भी आप श्वास ले रहे होते हैं। श्वास लेना भी एक कर्म है। जब आप समझते हैं कि आप कोई भी कर्म नहीं कर रहे हैं, तब भी आपका मन सैकड़ों आतें सोचने में, सैकड़ों बातें याद करने में, सैकड़ों योजनाएँ बनाने में और सैकड़ों कल्पनाएँ करने में व्यस्त रहता है। आप कैसे कह करें सकते हैं कि आप कर्म नहीं कर रहे हैं? आप अनेक प्रकार ज्ञान के कार्य कर रहे होते हैं। जब आपको अपने कर्तव्य-कर्म दे। शुद्ध के एक भाग के रूप में किसी कार्य में प्रवृत्त होना होता है, तब आप कर्म करना अस्वीकार कर देते हैं। यह या तो दिव्य तथा ईश्वरोन्मुखी बन जायें। इस प्रकार अपने मूर्खता है या फिर मिथ्याचार है। अतः इस तथ्य को ठीक अन्त करण को ज्ञानामि द्वारा शुद्ध करके ज्ञानपूर्ण कर्म में से समझ लें-जब तक आप इस प्रकृति के लोक में हैं, प्रवृत्त हो जायें। समस्त कार्यों को बुद्धिमत्ता से तथा आप कर्म का परिहार नहीं कर सकते। इसलिए कौशलपूर्वक करें और आन्तरिक रूप से अनासक्त रहते मूर्खतापूर्ण कर्म करने की अपेक्षा बुद्धिमत्ता से कर्म करना हुए कर्म के बन्धनकारी प्रवाह से ऊपर उठ आयें। अच्छा है।"

प्रकृति में इच्छा-शक्ति, क्रिया-शक्ति और ज्ञान-शक्ति है। यदि ज्ञान की उपेक्षा कर दी जाती है और इच्छा (काम) ही आपकी क्रिया (कर्ज) की प्रेरक शक्ति बन जाती है, तब आपको दुख उठाने पड़ते हैं। तब आप अनेक प्रकार की त्रुटियों करते हुए कर्म-सम्पादन करते हैं। जब आप ज्ञान से अपनी इच्छा को शुद्ध कर लेते है, तब आपकी क्रिया मोक्षदायिनी शक्ति बन जाती है।

कर्म-पुरुषार्थ कभी भी अवांछनीय नहीं होता। 'योगवासिष्ठ' में ब्रहार्षि बसिस द्वारा मर्यादापुरुषोतम भगवान श्रीराम को दिये गये विपुल उपदेशों से अन्ततः ज्ञान (जिससे कर्म के सम्यक मार्ग का बोध प्राप्त होता है) की सहायता लेते हुए सम्यक् कर्म-पुरुषार्थ करते की श्रेष्ठता सिद्ध होती है।

"अतः हे अर्जुन कर्म में प्रवृत्त हो जाओ, किन्तु मूर्खतापूर्वक नहीं। अनासक्त रहते हुए, पूर्णत जागरूक रहते हुए तथा सब वस्तुओं को जानते हुए बुद्धिमतापूर्वक कर्म करो, तथापि उनसे भ्रान्त न होओ।" इस भूलोक में अपने कर्मों को करते हुए तथा भगवत्साक्षात्कार के परम लक्ष्य की ओर अग्रसर होते हुए प्रत्येक जीवात्मा के लिए यह है भगवद्गीता का सन्देश।

कर्म तो आपको इच्छा अथवा अनिच्छापूर्वक करना ही है; किन्तु यदि आप ज्ञान की सहायता लेते हुए बुद्धिमत्तापूर्वक कर्म नहीं करते, तो आप कर्म-बन्धन में आबद्ध हो जायेंगे। अतः अपने भीतर के ज्ञान को प्रकट करें और इस ज्ञान की सहायता से कर्म में प्रवृत हो जायें। ज्ञान आपकी इच्छाओं को शुद्ध करके उन्हें धार्मिक बना दें। शुद्ध इच्छाएँ ईश्वर-साक्षात्कार के मार्ग में

बाधक नहीं होती। आपकी समस्त इच्छाएँ धार्मिक, आध्यात्मिक, दिव्य तथा ईश्वरोन्मुखी बन जायें। इस प्रकार अपने अन्त:करण को ज्ञानाग्नि द्वारा शुद्ध करके ज्ञानपूर्ण कर्म में प्रवृत्त हो जायें। समस्त कार्यो को बुद्धिमत्ता से तथा कौशलपूर्वक करें और आन्तरिक रूप से अनासक्त रहते हुए कर्म के बन्धनकारी प्रवाह से ऊपर उठ जायें।

*****

योग तथा वेदान्त

अपने पुरातन तथा उज्वल भूतकाल से विरासत के रूप में हमें दो बहुमूल्य निधियाँ प्राप्त हुई हैं-योग तथा वेदान्त। **वेदान्त है दिव्य परम तत्त्व का दिव्य ज्ञान। योग है वह विज्ञान जिसकी सहायता से हम उस दिव्य ज्ञान के साथ चेतन सम्बन्ध स्थापित करते हैं, उस ज्ञान की अनुभूति करते हैं तथा उस ज्ञान का साक्षात्कार करते हैं।**

इन दोनों (योग तथा वेदान्त) का सार-तत्त्व वेदान्त है। की यह उद्‌घोषणा है कि **तत्त्वतः आप दिव्य हैं**; आप मानव नहीं हैं, सीमित नहीं हैं, अपूर्ण नहीं हैं। **दिव्यता ही आपकी यथार्थता है।** आपका मानवीय स्वभाव आपकी पहचान में जोड़ा गया एक अस्थायी घटक है-यद्यपि यह अद्वितीय, अप्रतिम तथा अत्यन्त मूल्यवान घटक है।

दिव्यता सर्वव्यापी है। यह सर्वत्र है। यह समस्त नाम-रूपों में छिपी हुई है। यह समस्त प्राणियों का केन्द्र-बिन्दु है। इस धरती पर जो हमारा घर है-हमारे साथियों के रूप में अगणित प्राणी हैं जो हमारे साथ-साथ जी रहे हैं। हमारी संख्या की अपेक्षा उनकी संख्या बहुत अधिक है; परन्तु उनकी स्थितियाँ (status) चिड़ियों, कृमियों, सरीसृपों (रेंगने वाले कीड़ों), कीटों, मछलियों, पशुओं के रूप में उस रचना-तन्त्र से विहीन हैं जिसकी सहायता से वे अपनी तात्त्विक दिव्यता का साक्षात्कार करने में सक्षम हो सकते हैं। दूसरी ओर, मानव-स्थिति की विशिष्टता यह है कि वह आत्म- साक्षात्कार करने अथवा आत्मज्ञान प्राप्त करने के लिए आवश्यक उपकरणों से सम्पन्न है। इसका कारण यह है कि इस स्थिति में चिन्तन करने, अनुभव करने, तर्क करने तथा आत्म-साक्षात्कार के लक्ष्य की ओर उन्मुख उद्देश्यपूर्ण कर्म करने की दुर्लभ क्षमताएँ हैं।

मानव ईश्वर का ही प्रतिरूप है। इस कारण उसमें पहले से ही भगवदीय सारतत्त्व या भगवदीय स्वभाव, भगवदीय क्षमताएँ, भगवदीय सौन्दर्य, भगवदीय उत्कृष्टता, भगवदीय पूर्णता और भगवदीय अखण्डता पाये जाते हैं। मानव का यह अनोखापन है। उसमें स्रष्टा- जो सर्वोच्च, सर्वशक्तिमान् तथा ब्रह्माण्डीय सत्ता और विश्वात्मा है-का प्रतिरूप है।

अतः मानव में पायी जाने वाली तात्त्विक दिव्यता चेतना की एक प्राप्य अथवा अनुभव-गम्य स्थिति है। इस स्थित को उपलब्ध करने के लिए मानव को पर्याप्त साधन दे दिये गये हैं। उपर्युक्त क्षमताओं का उपयोग सही दिशा में, व्यवस्थित ढंग से तथा सर्वोच्च स्थिति को उपलब्ध करने के उद्देश्य से इन क्षमताओं का विनियोग करने के लिए आवश्यक सम्पूर्ण ज्ञान के साथ किया जाने वाला उपयोग- इसी से सम्बन्धित है योगशास्त्र।

अतः वेदान्त का सार है-**आप दिव्य है; आप अनन्त, अविनाशी तथा पूर्णातिपूर्ण हैं; आप सच्चिदानन्द आत्मा हैं।** आपकी सत्ता है, इस कारण आप सत् हैं। आपमें अपनी सत्ता की एक ज्योतिर्मय तथा देदीप्यमान जागरूकता है। आप जानते हैं कि **आपकी सत्ता है। मेरी सत्ता है-इस तथ्य की चेतना आपमें है। इस कारण आप चित् हैं।** बाह्य रूप से जो आप दिखलायी पड़ते हैं, वह आप नहीं हैं। बाह्य रूप से दृष्टिगोचर आपकी सत्ता नाम-रूप के अतिरिक्त और कुछ नहीं है। नाम-रूप-जो एक अवास्तविक तथा प्रातिभासिक व्यक्ति का परिचय देते हैं तथा जो अस्थायी, सदा परिवर्तनशील आवरण है-के पीछे, परे तथा अन्दर एक ज्योतिर्मय चेतना के कान्तिमय केन्द्र के रूप में आपकी सत्ता है। इस पवित्र स्थिति में आप उन अपूर्ण अनुभवों से मुक्त हैं जो इस शारीरिक तथा मनोवैज्ञानिक चेतना से सम्बन्धित होते हैं। **आप भय, शोक, चिन्ताओं, पीड़ाओं, वेदनाओं, बन्धनों तथा भ्रान्तियों से भी पूर्णतः मुक्त हैं। आप एक अविक्षुब्ध, सतत, चिरस्थायी प्रसन्नता एवं शान्तिपूर्ण तथा प्रशान्त परमानन्द की स्थिति में हैं। यही आपका वास्तविक स्वरूप है। सच्चिदानन्द ही आपका वास्तविक स्वरूप है। इसका साक्षात्कार करें और मुक्त हो जायें।** इस ज्ञान को प्राप्त करें और मुक्त हो जायें। यह वेदान्त है। आपकी दिव्यता वेदान्त का सार है। इस दिव्यता की सतत जागरूकता-आत्म- चिन्तन-ही वेदान्त का व्यवहार-पक्ष है।

योग का सार यह है कि आपको इस आन्तरिक दिव्यता-जो आपकी सत्ता का स्रोत तथा उद्गम, सर्वव्यापी आत्मा, ब्रह्म, अपरिवर्तनशील अन्त- रात्मा है-के निरन्तर सम्पर्क में रहना है। परम दिव्य तत्त्व का सतत निरन्तर स्मरण एवं उसके साथ अटूट, जीवन्त तथा चेतन सम्बन्ध योग है। विभिन्न साधनों की सहायता से इस स्थिति को प्राप्त करना भी योग है।

पूज्य स्वामी शिवानन्द जी महाराज की दिव्य जीवन की अवधारणा में वेदान्त का भावात्मक पक्ष और योग का व्यवहार-पक्ष सम्मिलित हैं। अपनी दिव्यता के प्रति जागरूक रहते हुए जीवन व्यतीत करें। अपनी दिव्यता के ब्रह्माण्डीय स्रोत, अपने दिव्य उद्गम, अपने शाश्वत दिव्य आधार और अपने दिल्य धाम के निरन्तर, निकट सम्पर्क में रहते हुए प्रत्येक क्षण और प्रत्येक श्वास का जागरूकतापूर्वक उपयोग करते हुए जियें।

योग तथा वेदान्त, सेवा, भक्ति, ध्यान तथा आत्म-साक्षात्कार पर आधारित दिव्य जीवन के दो संघटक हैं। आपके लिए वेदान्त की स्पष्ट उद्घोषणा है-"**अहमात्मा निराकारः सर्वव्यापी स्वभावतः** " (मैं स्वभावतः निराकार तथा सर्वव्यापी आत्मा हूँ) । "इन्द्रियों तथा मन से परे मैं ज्योतिर्मय प्रज्ञा चेतना का सारतत्त्व हूँ" यह ज्ञान आपको वेदान्त प्रदान करता है और आपसे यह अपेक्षा करता है कि आप इसे व्यवहार में लायें। और, **योग है परम दिव्य तत्त्व के साथ अविच्छिन्न चेतन तथा उद्देश्यपूर्ण सम्पर्क एवं सतत वर्धमान सम्बन्ध ।**

राधारमण कहो

जिस देश में जिस वेश में जिस हाल में रहो।
राधारमण राधारमण राधारमण कहो ।।

जिस काम में जिस धाम में जिस गाँव में रहो ।
राधारमण राधारमण राधारमण कहो ।।

जिस संग में जिस रंग में जिस ढंग में रहो ।।
राधारमण राधारमण राधारमण कहो ।।

जिस योग में जिस भोग में जिस रोग में रहो।
राधारमण राधारमण राधारमण कहो ।।
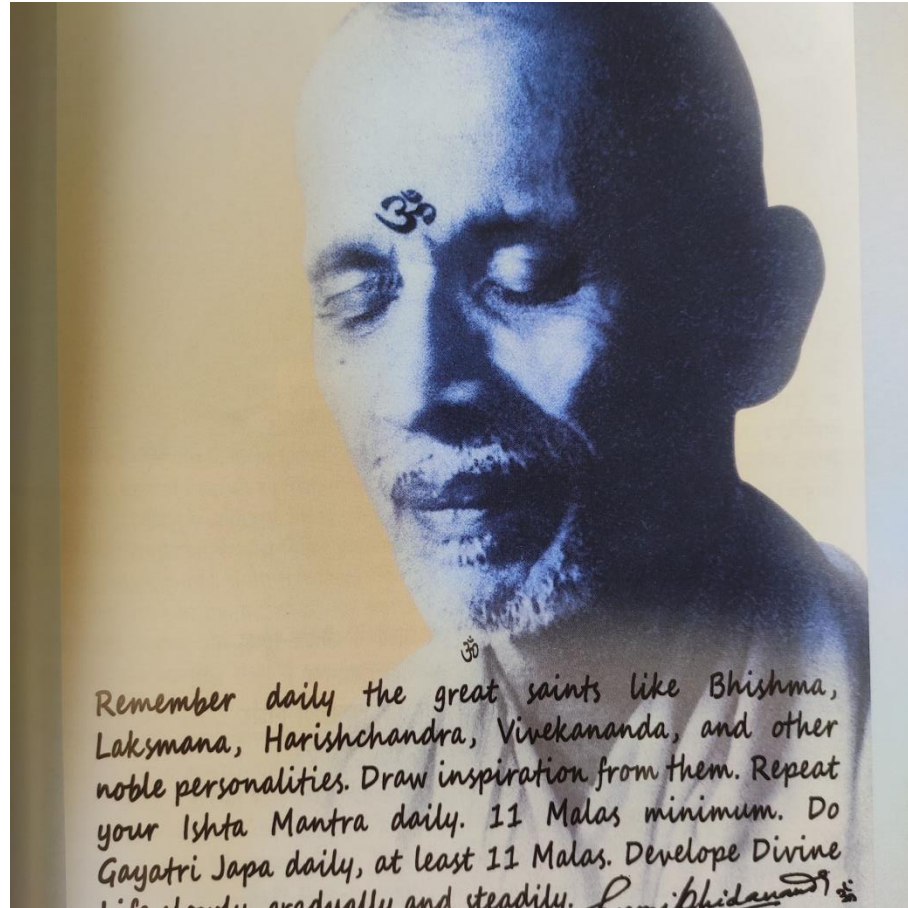
करुणैक चिदानन्द

ॐ

नयन-अनुकम्पा दृष्टि से जग-ताप से झुलसे प्राणी में शीतल-सुखद
नवजीवन का संचार है करता **यह करुणैक चिदानन्द** ।
नयन-वात्सल्य चितवन से दीनों की देख दीन दशा वत्सलता-निर्झर
निर्झरित है करता दीनता-हरण यह **दीनबन्धु चिदानन्द ।**
नयन-दया दृष्टि-वृष्टि से रोगियों-दुःखियों के रोग-दुःख का कर निवारण
सुख-शान्ति प्रदान है करता यह **दयासिन्धु चिदानन्द** ।
नयन-शय्या पर दलितों-दरिद्रों, अनिकेतों-अनाश्रितों, असहायों-अनाथों,
पतितों-पीड़ितों को सस्नेह-ममत्व से शान्ति-आनन्दपूर्ण विश्राम
है कराता **गुडाकेश यह अनाथ-नाथ चिदानन्द ।**

भगवद्गीता का दर्शन

भगवद्गीता का दर्शन उपनिषदों के दर्शन से भिन्न नहीं है। एक दृष्टि से यह उससे एक कदम आगे ही है। भगवद्गीता दर्शन ने उपनिषद्-दर्शन को वनों में रहने वाले ऋषि-मुनियों के और आश्रमों में रहने वाले तपस्वियों तथा संन्यासियों के बीच से उठा कर सांसारिक जीवन में, व्यवहार-जगत् में और गृहस्थों के घरों में एक प्रमुख स्थान दे दिया है। इस प्रकार गीता

व्यावहारिक उपनिषद्-दर्शन बन गयी है। उपनिषदिक प्रज्ञा का व्यावहारिक रूप हमें गीता में देखने को मिलता है। **गीता उपनिषदों के आदेशों तथा सन्देशों का व्यवहार- पक्ष ही है।** गीता का उद्देश्य हमें यह सिखाना है कि उपनिषदों को सचमुच कैसे व्यवहार में लाया जा सकता है और कैसे उ**न्हें दैनिक जीवन का आधार बनाया जा सकता है।**

श्रीमद्भगवद्गीता का दर्शन मुख्यतः इस धरती पर प्रवास करने वाले जीवात्मा की उन स्थितियों का निरूपण करता है, जो जीवन के अपरिहार्य अंग के रूप में उत्पन्न विक्षोभकारी समस्याओं के बीच निर्मित होती रहती हैं तथा जो इस जगत्-प्रपंच में प्रेम तथा घृणा, रुचि तथा अरुचि और राग तथा द्वेष के द्वन्द्वों से, श्रेय तथा प्रेय, भावना तथा कर्तव्य और कर्म-अपेक्षित कर्म-के बीच होने वाले आन्तरिक संघर्ष से तथा धर्म-संकट से सम्बन्धित रहती हैं।

परिस्थितियों की अव्यक्त यथार्थताओं का ज्ञान प्रदान करके यह व्यक्ति को आवश्यक शक्ति प्रदान करता है। अपने अपर्याप्त ज्ञान के तथा सम्यक् परिप्रेक्ष्य के अभाव के कारण व्यक्ति परिस्थिति के बाह्य रूप को ही वास्तविक मान लेता है तथा उसमें निहित तत्त्वों का विश्लेषण नहीं कर पाता, न ही उसके सारतत्त्व को समझने का प्रयास करता है। इस प्रकार वह जीवन का एक ऐसा मार्ग अपना लेता है जो उसके अपने तथा संसार के कल्याण के विपरीत होता है।

गीता हमारे अन्तःकरण, मन, हृदय तथा बुद्धि को सम्यक् विवेचन-शक्ति तथा समुचित बोध के प्रकाश से परिपूरित करके हमें ऐसे संघर्षों तथा अन्तर्द्वन्द्वों को उत्पन्न करने वाले मोह-भ्रम से मुक्त करती है। जब मनुष्य परिस्थिति को ठीक से समझने और वस्तुस्थिति को स्पष्टतः देखने लगता है, तब वह उनके सारतत्त्व को (उनके बाह्य रूप को नहीं) भली प्रकार समझने की क्षमता अर्जित कर लेता है। गीता यह किस प्रकार करती है?

गीता का दर्शन अनुभूत सत्य की उद्घोषणा मात्र नहीं है। यह मात्र कुछ रहस्यों का उद्घाटन नहीं है। इस संसार में मानव को अपनी जीवन-यात्रा सम्पन्न करने में जिन विभिन्न स्थितियों, समस्याओं तथा संघर्षों का सामना करना पड़ता है, उनसे सम्बन्धित मार्गनिर्देशन प्रदान करने वाले तथ्यों को गीता में तार्किक ढंग से आरम्भ से अन्त तक प्रस्तुत किया गया है। गीता में तयों की प्रस्तुति तार्किक है। इसके प्रत्येक अध्याय में विशिष्ट विचार-बिन्दुओं से सम्बन्धित शिक्षा दी गयी है। यह शिक्षक बन कर शिक्षा प्रदान करती है। गीता मानो कक्षा में पढ़ाया जाने वाला पाठ है जैसे-जैसे विद्यार्थी शिक्षक से प्रश्न करता जाता है और शंकाएँ रखता जाता है, वैसे-वैसे शिक्षक जटिल विचार- बिन्दुओं को स्पष्ट करते हुए उसके सभी प्रश्नों का उत्तर देता जाता है।

अतः गीता का दर्शन जीवात्मा को त्रुटिपूर्ण बोध तथा सम्भ्रमित मनःस्थिति की दशा से निकाल कर सम्यक्-स्पष्ट बोध तथा सम्भ्रम-मुक्त मनःस्थिति की उच्चतर दशा में ले जाने की एक शैक्षिक प्रक्रिया है। शिक्षक विद्यार्थी को शिक्षक की आँखों से देखने के योग्य बनाता है जब कि इससे पूर्व वह (विद्यार्थी) अपनी ही आँखों से देखने का प्रयास करता था।

***

नूतन शुभारम्भ

दैवी सम्पद् का अर्जन करें : आसुरी सम्पद् का उन्मूलन करें

अन्तर्मन में दो विरोधी तत्त्वों का स्थान नहीं। मन में द्वन्द्व नहीं होना चाहिए। यदि ऐसा है तो इसका उच्छेदन करना होगा। ऐसा करना भी साधना का एक अंग ही है। जो दिव्य नहीं, जो हमारे आन्तरिक शाश्वत स्वरूप का विरोधी तत्त्व है बड़ी सावधानीपूर्वक उसकी खोज करनी है, उसे ढूँढ़ पाना है और फिर उसे उखाड़ फेंकना है। यह साधना का एक आवश्यक पक्ष है। यदि यह नहीं किया गया, और आप मल-कूड़ा-करकट को संचित करने का प्रयास करेंगे तो यह उसी प्रकार होगा जैसे कक्ष के कोनों-किनारों और कालीन के नीचे फर्श पर भरी धूल को हटाये बिना सजावट करना केवल बाहरी सजावट होगी। स्वामी विवेकानन्द कहा करते थे- "यदि हृदय में आध्यात्मिकता का समावेश नहीं, हृदय में नैतिक सौन्दर्य नहीं, यदि अन्तस में दैवी सम्पदा नहीं, समग्र दिव्य गुण नहीं हैं, तो जीवन एक सुसज्जित-अलंकृत शव तुल्य होगा।" वह कहते थे- "सुसज्जित शव।" जब अन्त्येष्टि के लिए शव ले जाया जाता है, कैसे सुन्दर ढंग से सजाते हैं, बढ़िया से बढ़िया सिल्क, मखमल के वस्त्र डालते हैं, उस पर ढेरों पुष्प, साथ ही इत्र छिड़कते हैं; क्योंकि उसकी दुर्गन्ध को रोकना है। चटकीले-भड़कीले वस्त्रों से- जरी, सिल्क मखमल से शव आवृत होता है; जिस पर असंख्य पुष्प चढ़ाये जाते हैं तथा सुगन्धि हितार्थ अगरबत्ती-धूप जलायी जाती है। परन्तु उस समय इन सब आच्छादनों के नीचे होता क्या है? कुछ नहीं, केवल अस्थिचर्ममय दुर्गन्धियुक्त सड़ा हुआ मृत शरीर अर्थात् शव। स्वामी विवेकानन्द कहते थे- "इस प्रकार की साज-सज्जा एक शव को सजाने के तुल्य है।" बाहर से भव्य दृष्टिगत होती है; पर भीतर कुछ नहीं होता।

इसलिए एक साधक को बड़ा सचेत, सावधान, सतर्क रहना चाहिए कि किसी भी हालत में ऐसी स्थिति। को टिकने न दे, प्रभावी न होने दे। इसके विपरीत यदि कोई बाहर से अति सुन्दर सुसज्जित नहीं है तो कोई बात नहीं; किन्तु आत्मा के सौन्दर्य से (अपना) अन्तस परिपूरित होना चाहिए। ईश्वर परायणता तथा पावन दिव्यता से अन्तस ओत-प्रोत होना चाहिए। अन्तर्मन परम ज्योति से परिपूर्ण हो, प्रकाशमान हो। दिव्यता से, दिव्य प्रकाश से ज्योतित होना चाहिए। इसके विपरीत कुछ भी हो, अर्थात् अदिव्यता, अनाध्यात्मिकता का मूलोच्छेदन कर देना चाहिए। श्रीमद्भगवद्गीता के सोलहवें अध्यायानुसार अपेक्षा की जाती है कि दैवी सम्पदा का अर्जन करें, आसुरी सम्पदा का उन्मूलन। यह साधना ही चित्तशुद्धि की आन्तरिक साधना कहलाती है। अतः यही सच्ची साधना है। इसलिए प्रत्येक मार्ग या पथ-जैसे ज्ञानयोग, भक्तियोग, राजयोग, जपयोग अथवा कर्मयोग आदि सभी सदा-सर्वदा कुछ अपरिहार्य सकारात्मक दिव्य गुणों के अर्जन और विकास हेतु साधना को अत्यावश्यक अभिहित करते हैं। सभी योगमार्ग इसी पर बल देते हैं। अवगुणों-दुर्गुणों की सूची वर्णित करते हैं जिन्हें निकाल फेंकना है-

त्रिविधं नरकस्येदं द्वारं नाशनमात्मनः ।
कामः क्रोधस्तथा लोभस्तस्मादेतत्त्रयं त्यजेत् ।।

(गीता : १६-२१)

काम, क्रोध और लोभ-ये तीन प्रकार के नरक के द्वार हैं, अर्थात् उसको अधोगति में ले जाने वाले हैं। अतएव तीनों को त्याग देना चाहिए।

कामः क्रोधश्च लोभश्च देहे तिष्ठन्ति तस्कराः ।
ज्ञानरत्नापहाराय तस्मात् जाग्रत जाग्रत ।।

आदि शंकराचार्य जी ने अपने 'वैराग्य डिडिम' में बताया है कि काम, क्रोध, लोभ रूपी चोर हमारे शरीर के भीतर वास करते हैं। शरीर में रहते हुए ज्ञान रूपी हीरे मोती चुरा लेते हैं। इसलिए जागो! जागो ! सजग हो जाओ। सचेत हो जाओ।

व्यास भगवान् का उद्बोधन है-

मुक्तिमिच्छसि चेत्तात विषयान् विषवत् त्यज।
ब्रह्मचर्यमहिंसा च सत्यं पीयूषवत् भज ।।

"यदि आप मोक्षाभिलाषी हैं तो ऐन्द्रिक विषयों को विष सम जान उनका परित्याग कर दें तथा ब्रह्मचर्य, अहिंसा, सत्य रूपी अमृत का सेवन करें अर्थात् तीनों का अनुपालन करें।"

इस प्रकार प्राचीनकाल से वे हमारा ध्यान इस विषय पर संकेन्द्रित करने का प्रयास करते रहे और प्रबोधित करने का प्रयत्न करते रहे-

"तुम दिव्य हो! केवल दिव्यता ही तुम्हारे अन्तस में संस्थित रहे। तुम्हारे मूल वास्तविक सहज स्वरूप के विरुद्ध हो जो उसे कभी भीतर स्थान न दो। सावधान रहो। जाग्रत रहो। सचेत रहो। भीतर झाँको। आत्मावलोकन करो। मनन-विचार का प्रयास करो। बुद्धिमत्ता से उन सबका उन्मूलन करो जो तुम्हारे वास्तविक स्वरूप- दिव्यता को आच्छादित करें।"

इस प्रकार अपना जीवन दिव्यता से यापन करें। केवल तभी आपका जीवन सच्चा, विश्वसनीय, शुद्ध, पवित्र, यथार्थ एवं सत्यता से पूर्ण होगा। फिर कोई और प्रतिद्वन्द्व या प्रति विरोध नहीं होगा। अनावश्यक का, परिहार्य विरोधों का सामना करने में आन्तरिक बल एवं आध्यात्मिक शक्ति विनष्ट नहीं होगी। इन बातों के संघर्ष के प्रयास में नकारात्मक प्रक्रिया द्वारा शक्ति नष्ट न करें तो शक्ति का बचाव ही होगा।

इसलिए पूर्वज कहा करते थे-"विवेकी बनो। अपनी आन्तरिक शक्ति का अपव्यय मत करो। इसे परिहार्य नकारात्मक प्रक्रिया में व्यय मत होने दो। इसे सकारात्मक-रचनात्मक प्रक्रिया में लगाओ, ताकि तुम्हारी सम्पूर्ण ऊर्जा शक्ति, आध्यात्मिक शक्ति शतशः ऊर्ध्वगामी हो दिव्योन्मुख रहे।"

इस प्रकार दिव्यतापूर्ण जीवन जीयें। अन्तस में दिव्य बनें। यह समझें और जानें कि आप दिव्य हैं। अपने जीवन को दिव्य बनायें। मनसा वाचा, कर्मणा दिव्य बनें। विचारों में, वाणी में, कर्मों में, सबमें दिव्यता का गुण भरें। दिव्य जीवन यापन आपका जन्म सिद्ध अधिकार है। दिव्य जीवन ही आपका वास्तविक जीवन है। दिव्य जीवन आपकी अन्तरात्मा की सहज स्वाभाविक अभिव्यक्ति है। ऐसा होने दें। जीवन को ऐसा बनने दें। साधना को इसी रूप में समझें अर्थात् जो आप हैं उसी की अभिव्यक्ति होने दें। अतः मैं पुनः दोहराता हूँ नववर्ष में दिव्यता के सद्गुण को ही जीवन का मूल सिद्धान्त मूल रूप से बनाये रखें। 'दिव्यता' शब्द को अपने हृदय से

गम्भीरतापूर्वक पूर्णतया समझें, जानें और मानें। आपके मन में दिव्यता सदैव प्रदीप्त रहे। पग-पग पर सतत स्मरण करते रहें- "मैं दिव्य हूँ। मेरा परिवेश दिव्य होना चाहिए। मुझसे सम्बन्धित सब दिव्य होना चाहिए। दिव्यता ही मेरा वास्तविक सत्य स्वरूप है। दिव्यता ही मेरे जीवन की विशिष्टता होनी चाहिए। मेरा आदर्श, मेरा लक्ष्य दिव्यता ही हो। दिव्यता की ही दिशा में मेरा जीवन उन्मुख हो, अग्रसर रहे।" दिव्यता। हम ईश्वर के अंश हैं, ईश्वर परिपूर्णतः पूर्णतम दिव्य है। अतः हम भी परिपूर्ण दिव्य हैं। इसी संचेतना का आपके जीवन पर प्रभुत्व रहे- प्रमुखता रहे। आपका ऐसा ही आदर्श वर्ष बने।

***

स्वकर्मों का अध्यात्मीकरण करो

स्वकर्मो को आध्यात्मिक बनाओ। दिव्य जीवन व्यतीत करने के लिए अपने सभी अध्ययन, वचन, क्रीड़ा आदि को प्रभु के अर्पण कर दो। अनुभव करो कि सम्पूर्ण जगत् में वही व्याप्त है। आपकी सन्तान भगवान् की ही अभिव्यक्ति है, ऐसा अनुभव करो। ऐसे आभ्यन्तर आध्यात्मिक भाव से मानवता की सेवा करो। तब आपकी सभी दैनिक क्रियाएँ आध्यात्मिक अभ्यास में रूपान्तरित हो जायेंगी। वे योग में परिणत हो जायेंगी।

प्रत्याई अपने नित्य कर्मों के साथ-साथ ही आपको यह आन्तरिक सम्पर्क, दिव्य स्रोत के साथ-प्रार्थना, आराधना और एकान्त ध्यान द्वारा योग स्थापित किये रखना है। यह आपका प्रथम कर्तव्य है। किसी भी कारण से इसकी उपेक्षा नहीं करनी चाहिए। प्रातः ब्राह्ममुहूर्त में जागो और ध्यान का अभ्यास करो। कतिपय योग-मुद्राओं का अभ्यास करो-शरीर की उपेक्षा मत करो। थोड़ा प्राणायाम भी करो। धर्मग्रन्थों का अध्ययन करो। यह आभ्यन्तर मौन और ध्यान सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण है। आध्यात्मिक अभ्यास हेतु प्रभातकाल ही महत्त्वपूर्ण है। प्रातः एवं सायं, धूलिवेला में कुछ समय के लिए भी ध्यानाभ्यास अतीव महत्त्वपूर्ण है।

विचार की पृष्ठभूमि (मानसिक जप), भगवद् चिन्तन का अभ्यास करो। सावधान-इसकी उपेक्षा नहीं करना। अपने दिव्य आदर्श का चिन्तन स्वरूप बनो। प्रत्येक व्यक्ति की किसी-न-किसी विचार की पृष्ठभूमि होती है; किन्तु प्रायः यह लौकिक, जघन्य (कुत्सित) अथवा भौतिक होती है। एक वकील की मानसिक विचारधारा श्रावक, न्याय-सभा अथवा न्याय के नियमों आदि से पूर्ण होगी। एक चिकित्सक के विचारों की पृष्ठभूमि अस्पताल, इन्जैक्शन, रोगी, औषधि, शुल्क आदि से परिपूर्ण होगी। दादी माँ अपने पौत्र एवं पुत्रों का ध्यान करेगी। दिव्य जीवन के अभ्यासी के विचारों की पृष्ठभूमि दिव्य प्राप्ति के गरिमामय आदर्श भगवान्, भद्रतापूर्ण जीवन और दिव्य नाम से युक्त होनी चाहिए। दिव्य गुणों का आरोपण करो। निषेधात्मक गुणों का निराकरण करो। विश्व के प्रति, सबके प्रति अपने मानसिक भावों को परिवर्तित करो। अपने अमूल्य समय का एक क्षण भी व्यर्थ न गँवाओ। भद्र जीवन, प्रभु, दिव्य चिन्तन के आदर्श का चिन्तन और कीर्तन करो। भगवान् के लिए जीवन यापन करो। अपने नित्य कर्मों के समय प्रत्येक व्यक्ति तक जिसे भी आप मिलें, दिव्य सन्देश का प्रसारण करो। किसी मित्र को मिलने पर इधर-उधर की व्यर्थ की बातें करने की अपेक्षा उससे प्रश्न करो कि इन दिनों वह ध्यान की कौन-सी विधि का अभ्यास कर रहा है अथवा कौन-से नवीनतम आध्यात्मिक साहित्य का अध्ययन कर रहा है। यही आपका वार्तालाप होना

चाहिए। आपके सम्बन्ध में प्रत्येक वस्तु भद्र और दिव्य हो, उत्कृष्ट हो। वृथालाप त्याग दो। उपन्यास पढ़ना छोड़ दो। वृथालाप और उपन्यास आपको मानसिक शान्ति प्रदान नहीं करेंगे। वे आपके मानसिक सन्तुलन को बिगाड़ते हैं। आपके मस्तिष्क को अनावश्यक, दुःखद, लौकिक विचारों से भर देते हैं। इनकी अपेक्षा अपने मस्तिष्क को दिव्य विचारों से परिपूर्ण करो। आपकी अन्तरात्मा दिव्य तेज से उद्दीप्त हो उठे। इस पर पवित्रता व्याप्त हो जाये।

सर्वदा स्मरण रखो कि यह संसार दुःख, पीड़ा, जरा और मृत्युमय है और आपका सर्वप्रथम कर्तव्य चक्र को पूर्ण करना भगवद्-साक्षात्कार करना, आत्मानुभूति करना है। केवल इसी में आप परम शान्ति, शाश्वत आनन्द, नित्य ज्योति को प्राप्त कर सकते हैं। कमर कसो । स्वयं को इस दिव्य जीवन में ढालने के लिए उद्यत हो जाओ। व्यावहारिक जिज्ञासु बनो। आप अमरत्व प्राप्त करेंगे। आप परम शान्ति एवं नित्यानन्द का उपभोग करेंगे, इसमें लेशमात्र भी सन्देह नहीं।

आपके सर्व कृत्यों में, उज्वल भविष्य में, सर्वसम्पन्नता और परम दिव्यानन्द तथा परम पद में भगवान् आप पर आरोग्यता, दीर्घायु, शान्ति, समृद्धि, परम दिव्य आनन्द एवं परम पद की वृष्टि करें!

संक्षेप में दिव्य जीवन के मूल तत्त्व

अब मैं एक अल्प गीत के साथ उपसंहार करूँगा जिसमें गुरुदेव ने दिव्य जीवन, दिव्य वास और उन सद्गुणों का समावेश किया है जिन्हें मनुष्य को दिव्य जीवन के स्तम्भ स्वरूप स्वयं में अंकुरित करना चाहिए।

दिव्य जीवन के मूल तत्त्व हैं- पवित्रता, निःस्वार्थता, सेवाभाव, प्रेम (मानव-प्रेम और ईश्वर-प्रेम), नियमित ध्यान, आभ्यन्तर जीवन और अन्ततः परमात्मा का साक्षात्कार। अतएव दिव्य जीवन के सम्बन्ध में गुरुदेव गाते हैं:

सेवा, प्रेम, दान, पवित्रता, ध्यान, साक्षात्कार ।
भले बनो, भला करो, दयालु बनो।
खोजो, 'मैं कौन हूँ', आत्मज्ञान करो और मोक्ष पाओ ।।
सेवा, प्रेम, दान, पवित्रता, ध्यान, साक्षात्कार ।
भले बनो, भला करो, दयालु बनो।

संक्षेप में यह आपके लिए दिव्य जीवन है। इसी में आवागमन के चक्र, इस सांसारिक बन्धन से मुक्ति का उपचार, अद्भुत सर्व रोग-हर औषधि और सर्व चिकित्सा है। किन्तु जब आप औषध ग्रहण करते हैं, तो आहार के सम्बन्ध में आपको कतिपय नियमों का भी पालन करना होता है और ये हैं आहार के अष्टादश नियम :

प्रसन्नता, नियतता, निरभिमानता,
विमलता, सरलता, सत्यवादिता,
समचित्तता, स्थिरता, शालीनता,
युक्तता, नम्रता व संलग्नता,

(अखण्डता) पूर्णता, आर्यता, उदारात्मता,
दयालुता, उदारता, पुण्यशीलता ।।
इन सबका अभ्यास जो नित्य करता,
अचिरेण ही प्राप्त करता अमरता ।।
ब्रह्म ही है केवल नित्य सत्ता,
अमुक नाम स्वरूप तो है मिथ्या सत्ता।
धाम होगा आपका आत्यन्तिक नित्यता,
देखोगे आप भिन्नता में स्वयं एकता;
विद्यालय में इस ज्ञान की है दुर्लभता,
'आरण्य संस्थान' में ही है सुलभता ।।

इन दिव्य गुणों का नित्य अभ्यास करो। वे आपके जीवन को दिव्य बनाने में सहायक होंगे। वे आपके आभ्यन्तर आध्यात्मिक जीवन का आधार होंगे; क्योंकि बिना गुणों के आपका जीवन शुष्क है, गुणों के बिना आपका जीवन निरर्थक है और आपकी दिव्य प्रकृति को क्रीड़ा हेतु उपयुक्त क्षेत्र प्रदान नहीं कर सकता। दृढ़ संकल्प तथा ईश्वर और उसकी शक्ति में सहायतार्थ पूर्ण निष्ठा द्वारा जीवन को, सर्व निषेधात्मक पक्षों पर विजय प्राप्त कर एवं सम्पूर्ण व्यक्तित्व को, सर्वगुणों का क्रीड़ा-स्थल बनाने पर ही आप नित्यात्मा में दिव्य ज्योति के प्रकाश और (आपके द्वारा) इसके प्रसरण की पूर्ण आशा कर सकते हैं। ऐसा दिव्य जीवन यापन करो। स्वयं को इन गुणों की प्रतिमूर्ति बनाओ। अपनी निम्न प्रकृति को पूर्णतया संयत करके स्वयं को अन्तरात्मा में केन्द्रित दिव्यता के तेजपुंज के प्रवाह हेतु स्रोत और साधन-रूप बनाओ। ऐसा है दिव्य जीवन!

ईश्वर करे, आप दिव्य हों! दिव्यता आपको प्रेरित करे और आपके सर्वकर्मों में आपका पथ-प्रदर्शन करे! आपका समस्त जीवन दिव्य जीवन का अलौकिक और उज्ज्वल दृष्टान्त हो! यही आपसे मेरी विनती है। यही आपसे आकांक्षा है। मेरे प्रिय मित्रो, दिव्यतापूर्ण हो कर जीवन यापन करो। निज दिव्य प्रकृति को विस्मृत करके चिन्ता के भ्रम-जाल में स्वयं को निक्षिप्त करके नहीं जिओ। अपनी दिव्य प्रकृति को प्रतिपादित करो और परमात्मा के उपवन में विस्मय-विमुग्ध करने वाले पुष्प, दिव्य सौन्दर्य को बिखेरते हुए सुन्दर, मनोहर कुसुम, दिव्य सुरभि, आध्यात्मिक सुरभि बनो!

भगवान् आप सबको आशीर्वाद दें! आपकी अन्तरात्मा आपको प्रेरित करे! गुरुदेव शिवानन्द जी आप पर अपने आशीष की वृष्टि करें ! भूत और वर्तमान के पूर्वी और पाश्चात्य सन्त आपको आश्रय प्रदान करें और आपको दिव्य गौरवमयी प्रकृति के साक्षात्कार की ओर अग्रसर करें!

मेरे प्रिय साधको, आपके मध्य रह कर आप सबमें अदृश्य रूप से व्यष्टि रूप से विद्यमान परमात्मा को इन

शब्दों द्वारा पूजा अर्पित करने का आपने मुझे सौभाग्य प्रदान किया, इसके लिए मैं पुनः आपका आभारी हूँ। सदा संगठित रहो। संगठित रह कर संगठित रूप से विचार करो, संगठित हो कर साधना करो, संगठन में कर्म करो और संगठित हो कर कर्मक्षेत्र की ओर कूच करो। अनुभव करो कि आप एक हैं और इस एकता और मित्र भाव द्वारा आपके सम्पर्क में आने वाले सभी जनों को अनिर्वचनीय आशीष प्राप्त हों !

प्रभु करे, आप दिव्यता के महान् केन्द्र बनें! असंख्य जनों के लिए आध्यात्मिक जाग्रति के महान् केन्द्र बनें! प्रीति, समन्वय, एकता के केन्द्र एवं भातृ भाव तथा ऐक्य भाव के ज्वलन्त दृष्टान्त बनें! आने वाले वर्षों में आप दिव्य जीवन के आनन्द को समस्त विश्व में सम्प्रसारित करें!

आज गुरु निवास से पैदल ही आने पर गणेश कुटीर के पास से होते हुए अस्पताल के मुख्य द्वार से गुजर रहा था तो एक स्वच्छता कर्मचारी को झाडू लगाते, सफाई करते देखा तो मन में विचार आया और स्वयं से मैंने कहा- "यह कोई साधारण बात नहीं, इसमें अवश्य कुछ विशेष तात्पर्य निहित है। अभी छह भी नहीं बजे और वह सवेरे सवेरे जागा, तैयार हुआ, कपड़े पहने, कार्यस्थल पर पहुँचा और अपने निर्दिष्टकर्म (स्वच्छता) में व्यस्त हो गया। उसका निवास स्थान भी अन्यत्र है, घर से यहाँ पहुँचने में कितना फासला भी तय किया होगा।" मैंने सोचा "वस्तुतः इसी में यह सत्य सन्निहित है कि व्यक्ति को अपने दिवस का शुभारम्भ प्रातः बेला से ही अपनी स्वच्छता, निर्मलता, पवित्रता, विशुद्धिकरण की प्रक्रिया द्वारा कर देना चाहिए। साधक का जीवन कैसा होना चाहिए, आध्यात्मिक जीवन कैसा होना चाहिए? उसके लिए यह एक संकेत निर्देशन है। यह साधक के जीवन का यथातथ्य प्रस्तुतीकरण है। प्रातःकाल जल्दी उठे, भगवचिन्तन, भगवद्नामोच्चारण से अपने तन को निर्मल, मन को पवित्र, चित्त को विशुद्ध करे।"

-स्वामी चिदानन्द

भक्ति-प्रभु को प्रिय

शाश्वत सत्य के प्रति श्रद्धा के साथ नमन! वे जो अनादि, अनन्त, असीम, अपरिवर्तनशील, शाश्वत, सर्वव्याप्त, अन्तर्यामी, अन्तर्निहित सत्य हैं, वे ही जगत् के स्रोत, आधार, संसार के परम पालनकर्ता, असीम और सर्वव्यापक हैं; इसीलिए वे सर्वत्र विद्यमान हैं। तुम्हारे भीतर निवास करते हैं; इसलिए तुमसे भी अधिक तुम्हारे निकट हैं। वह सत्ता जिसमें तुम रहते हो, चलते-फिरते हो और अपने-आपको जीवित रख पाते हो, वे तुम्हारे शरीर-मन्दिर में, हृदयस्थ हैं। इसीलिए तुम्हारी प्रत्येक क्रिया दैवी क्रिया ही है।

मन की इस आन्तरिक वेदी पर इस वर्ष तुम अपने शरीर-मन्दिर में सच्चाई, सत्य भाव, निष्कपटता, स्वामी-भक्ति, समर्पण, निष्कपट मन, स्पष्टवादिता, सरलता के पुष्पों को चढ़ा कर ईश्वर की पूजा करो। जीवन की सारी कुटिलता, छल-कपट, दुरंगी-चाल से रहित हो कर पूजा

करो। पवित्रता, दया भाव और सरलता के पुष्प चढ़ा कर पूजा करो। इन्द्रियों को संयमित करके जीवन में **आत्म-संयम के पुष्प चढ़ा कर पूजा करो।**

यह ऐसे पुष्प हैं जो तुम्हारे शरीर-मन्दिर में स्थित, मन के परम पावन गर्भ गृह में निवसित सत्ता को अतिप्रिय हैं। उन्हें अपनी पूजा के लिए बहुमूल्य पदार्थ नहीं चाहिए। वे अगणित लोकों के अधिपति हैं। वे सबके स्वामी हैं। तुम उन्हें दे ही क्या सकते हो? ऐसा कुछ है ही नहीं जो उनका न हो। भक्ति ही प्रभु को प्रिय है।

पर तुम्हारा अहंकार तुम्हारा अपना है, मन तुम्हारी सम्पत्ति है, तुम्हारा जीवन तुम्हारे लिए है। यदि अपने मन, अपने अहं को अपने जीवन-पुष्प के रूप में उनके चरणों में अर्पित करते हो, तब निश्चित रूप से उनकी कृपा का संचार तुम्हारे भीतर होगा। जब तुम उन्हें सच्चाई, क्षमा, सरलता, निष्कपटता के पुष्प अर्पित करोगे, जहाँ कुटिलता, कपट, द्विविध भाव, मानवीय चतुराई नहीं होगी, तभी उन्हें अच्छा लगेगा। तुम उन्हें उसी से प्रसन्न कर सकते हो।

यह सारे अवगुण आध्यात्मिक आदर्शों की दृष्टि से सन्त और बुद्धिमान् व्यक्ति के लिए तिरस्कार योग्य हैं। ये सारे साधन केवल कुटिल, धूर्त, बेईमान और प्रबंचकों के लिए हैं। जिन्होंने अपने जीवन का उच्च आदर्श ईश्वर को माना है, इन दुर्गुणों को अपना कर वे संन्यासी, साधक और ईश्वर के भक्त नहीं बन सकते। इन घृणित साधनों से आध्यात्मिक व्यक्ति की प्रतिष्ठा नहीं हो सकती।

यदि आत्म-विश्लेषण, आत्म-परीक्षण और प्रार्थना द्वारा इन अवगुणों को दूर नहीं किया जाता, तो ये तुम्हारे आध्यात्मिक जीवन में बाधा बनेंगे। इस पथ पर आगे बढ़ने से रुक जाओगे। यदि तुम दिव्यता प्राप्ति की प्रगति का प्रयास नहीं करते, तो अपना आध्यात्मिक जीवन दस, बीस क्या पचास साल तक भी यापन करने पर तुम वहीं-के-वहीं रहोगे। अपूर्ण सांसारिकता की ओर बढ़ते हुए तुम्हारे चरण अपनी मानवीय दुर्बलताओं और अवगुणों के कारण डगमगा गये हैं। रास्ता भटक जाना ही आध्यात्मिक जीवन की दुःखद घटना है।

हमारी वैदिक जीवन-पद्धति के आधार पर हमारी पूरी दिनचर्या धर्म के आधार पर चलती है। तुम जो-कुछ भी हो, जिस परिस्थिति में भी हो, तुम्हें एक निश्चित धर्म का पालन करना होगा। तुम्हारी वास्तविक पहचान देवत्व की है, वह ज्ञान तुम्हें गुरु ने ही दिया है। तुम जो हो, उसके अनुरूप तुम्हें व्यवहार करना चाहिए। अपनी वास्तविक पहचान को अपने जीवन में प्रकट करने के लिए तुम्हें दिव्य जीवन व्यतीत करना होगा; दिव्य चिन्तन, दिव्य वचन और दिव्य व्यवहार करना होगा। यही तुम्हारा धर्म है। **तुम्हारी बाह्याभिव्यक्ति अन्तरभिव्यक्ति से भिन्न न हो।**

***

राधा-तत्त्व

जगन्माता, परमाराध्या श्रीराधा के श्रीचरणों में प्रणिपात। इनकी प्राकट्य-स्थली, श्री बरसानाधाम, वृन्दावन सन्निकट है। **श्रीकृष्ण-प्रेम की साक्षात् मूर्ति हैं श्रीराधा।**

श्रीकृष्ण-प्रेम का सारभूत तत्त्व है महाभाव। इसी महाभाव का साकार विग्रह हैं श्रीराधा। श्रीराधा-कृष्ण की परस्पर रसकेलि अलौकिक है। सर्वस्व समर्पित माधुर्यभाव की पराकाष्ठा महाभाव की अनुभूति दास्य, वात्सल्य आदि अन्य भावों द्वारा नहीं की जा सकती। केवल सखियाँ ही इस रसानुभूति की अधिकारिणी हैं। **श्रीकृष्ण लीला रस का पूर्ण आस्वादन केवल सखियाँ ही करती हैं-अथवा श्रीकृष्ण-आराधक वे रसिक भक्त जो गोपी भाव- भावित हैं।**

सखियों का श्रीकृष्ण के साथ रमण स्वसुख के लिए नहीं है। श्रीराधा-माधुर्य-रस विहार के विधान हेतु सखियाँ सतत चेष्टारत रहती हैं। इसी में उनकी हार्दिक तुष्टि है। श्रीकृष्ण-प्रेम-वांछा-कल्पतरु की कल्पलता हैं श्रीराधा। सखी वृन्द उस कल्पलता की फूल-पत्तियाँ हैं। श्रीकृष्ण की रस-क्रीड़ा से श्रीराधा-रूपी कल्पलता को यदि रसामृत प्राप्त होता है, तो पुष्प-पल्लव-रूपी सखियों को उस रस की प्राप्ति स्वयमेव हो जाती है, बल्कि उनको लाख गुणा अधिक परितृप्ति मिलती है। श्रीकृष्ण आलिंगन पाने को सखियाँ अपने लिए इतनी उतावली नहीं, जितनी श्रीराधा-कृष्ण की प्रेमालिंगनबद्ध छवि निहारने को। विविध लीलाएँ रच कर वे श्रीकृष्ण को श्रीराधा के समीप भेजने में प्रयत्नशील रहती हैं। इसी लीला में उन्हें स्व-सुख की अपेक्षा कई गुणा अधिक दिव्य सुख की प्राप्ति होती है। **सखियों का पारस्परिक निश्छल, विशुद्ध प्रेम ही श्रीकृष्ण-रास रस की अभिवृद्धि करता है। भगवान् श्रीकृष्ण भी इसी प्रेम से रीझते हैं। गोपी-प्रेम काम-वासना रहित है।** इन्द्रिय-तृप्ति लौकिक प्रेम है। इसी का पूर्णरूपेण त्याग किया है सखियों ने। श्रीकृष्ण-रमण के लिए उनमें स्वसुख की कामना लेशमात्र भी न थी। वे श्रीकृष्ण का चिन्मय प्रेमालिंगन पाश भी श्रीकृष्ण-तृप्ति के लिए स्वीकार करती हैं, न कि स्वसुख कामना हेतु।

आप पूजा तथा ध्यानाभ्यास चाहे कितना ही क्यों न करें, **गोपीभाव से रिझाये बिना श्रीकृष्ण आह्लादित नहीं होते।** श्रीलक्ष्मी महारानी ने वैकुण्ठाधीश्वर की इतनी कठिन आराधना की, परन्तु वह भी श्रीकृष्ण को रिझाने हेतु व्रज में गोपी-रूप देह प्राप्त न कर सकीं।

श्रीराधा आराध्या देवी हैं। वे दीप्तिमयी है, सुन्दरता की घनीभूत राशि हैं। आनन्दकन्द श्रीकृष्ण-रस-केलि-कुंज की अधीश्वरी हैं। प्रत्येक वस्तु में उन्हें श्रीकृष्ण छवि के ही दर्शन होते हैं। श्रीकृष्ण अद्वितीय प्रेमास्पद हैं। वस्तुतः श्रीराधा- कृष्ण एक ही हैं। श्रीराधा श्रीकृष्ण अभिन्न हैं। श्रीकृष्ण की आह्लादिनी शक्ति का नाम ही राधा है। श्रीकृष्ण-प्राणा श्रीराधा जी का जीवन है श्रीकृष्ण- सुख। श्रीकृष्ण की प्रत्येक मनोकामनापूर्ति ही **उनकी आराधना है। यही आराधना ही उनके अस्तित्व का आधार है।** इसलिए पुराणों ने उन्हें '**कृष्णमयी**' की संज्ञा से अभिहित किया है। उनके रोम-रोम से श्रीकृष्ण-प्रेम की वृष्टि होती है। **अन्तर्बाहा कृष्ण ही कृष्ण।** श्रीकृष्ण ने अपने वशीकरण सौन्दर्य से सबको विमोहित कर रखा है। **पर श्रीराधा के चुम्बकीय प्रेमाकर्षण ने श्रीकृष्ण को वशीभूत किया हुआ है। इसलिए वह दिव्य प्रेम की अधिष्ठात्री हैं। समस्त पूजनीय देवताओं तथा देवियों की भी परम आराध्या हैं श्रीराधा।** वे जगन्माता हैं, जगद्धात्री हैं। षडैश्वर्यपूर्ण भगवान् श्रीकृष्ण की अथवा वैकुण्ठ लक्ष्मी की एकमात्र अधीश्वरी श्रीराधा हैं। वे श्रीकृष्ण की दिव्य शक्तियों की सर्वोपरि शक्ति हैं, अनन्त शक्ति स्वरूपा हैं। वे सौन्दर्य की जननी हैं, केन्द्रीभूत लावण्य ही हैं। लक्ष्मी आदि देवियाँ उन्हीं के राशि-राशि सौन्दर्य के अंशांश सौन्दर्य से विभूषित हो सौन्दर्यमयी है।

भगवान् श्रीकृष्ण आनन्दकन्द हैं। आनन्द का आश्रय और स्रोत ये ही हैं। ये ही दिव्यानन्द सुधा पिला कर अमरत्व प्रदान करते हैं। इन्द्रिय-जन्य सुख विष के समान है जो रोग और मृत्यु को आमन्त्रित करता है। **भगवान् की निज विशिष्ट अन्तरंग शक्ति को स्वरूप शक्ति की संज्ञा भी दी जाती है। यही शक्ति भगवान् श्रीकृष्ण और उनके अनन्य प्रेमी भक्तों को दिव्य आनन्द प्रदान करती है। इसे ही आह्लादिनी शक्ति कहा गया है। आह्लादिनी शक्ति का सारभूत तत्त्व है प्रेम अर्थात् श्रीकृष्ण के प्रति निःस्वार्थ स्वसुख विरहित प्रेम। यही स्वसुख रहित कृष्णसुख परिपूरित प्रेम ही चिन्मय आनन्द-रस है और इसी रस की घनीभूत मूर्ति हैं श्रीराधा।**

श्रीराधा महाभाव की साकार प्रतिमा हैं। श्रीराधिका का व्युत्पत्तिमूलक अभिप्राय है आराधक अथवा भक्त । श्रीराधा श्रीकृष्ण की आराध्या हैं (जैसा कि राधा नाम से स्पष्ट है)। श्रीराधा श्रीकृष्ण की हृदयेश्वरी हैं। वैकुण्ठ-लोक की समस्त लक्ष्मी श्रीराधा की विलास मूर्तियाँ हैं। द्वारकाधीश की रानियाँ उनकी छायामात्र हैं। वृन्दावन की गोपियाँ श्रीराधा की अंशस्वरूपा हैं। श्रीकृष्ण के आनन्द की अभिवृद्धि के योगदान में श्रीराधा अपने सूक्ष्म स्वरूप गोपियों के रूप से सतत संलग्न हैं। **श्रीकृष्ण का आह्लाद श्रीराधा हैं।** श्रीराधा श्रीकृष्ण की मनमोहिनी हैं, **उनकी प्राणशक्ति हैं। श्रीराधा ही श्रीकृष्ण की सर्वस्व हैं। ब्रजसुन्दरियों की सम्राज्ञी हैं श्रीराधा।** समस्त दिव्य सुषमा तथा लावण्य की शिरोमणि श्रीराधा हैं। जैसे अग्नि तथा उसकी दाहिका शक्ति, हिमकण व उनकी शीतलता, पुष्प व उसकी सुगन्धि अभिन्न हैं-वैसे ही श्रीराधा श्रीकृष्ण अभिन्न है, एक हैं। **श्रीकृष्ण-प्रेम-माधुर्य और सुकोमलता से निर्मित हैं श्रीराधा का श्रीविग्रह। श्रीराधा महाभाव का अन्तर्निहित सूक्ष्मरूप ही श्रीकृष्ण-प्रेम है।** श्रीकृष्ण-मिलन की उत्कट लालसा का प्रतीक है श्रीराधा का नीलाम्बर। उनकी मधुर प्रभामयी मुस्कान ही श्रीकृष्ण-आरती उतारने हेतु कर्पूर है। उनकी मनमोहक विशिष्टताएँ ही पुष्प-मालायें हैं। उनकी भाव-चेष्टाएँ ही उनके अवयव तथा अलंकार हैं। भगवान् कृष्ण का मधुर नाम तथा उनके मधुर गुण श्रीराधा के कर्णभूषण हैं। श्रीराधा की मधुर वाणी से श्रीकृष्ण के सुमधुर नाम तथा लीला-गुणगान की सहज धारा प्रवाहित होती है। **अनन्य-प्रेम-रसामृत से वे श्रीकृष्ण को परितृप्त करती हैं।**

भक्ति की पराकाष्ठा ही माधुर्य भाव है। अनन्य प्रेम के अथाह वेग में आराध्य-आराधक एकाकार हो जाते हैं। नित्य संयोग की यही स्थिति राधा-प्रेम है। माधुर्य भाव में भक्त और भगवान् का अन्तरंग सम्बन्ध स्थापित हो जाता है। इसमें काम वासना की गन्ध भी नहीं है। इन्द्रिय-जन्य सुख का तो यहाँ प्रवेश ही नहीं है। **माधुर्य-भाव की निर्मलता, पवित्रता तथा विशुद्धता को समझना कामुक व्यक्तियों की कल्पना से भी परे है**, क्योंकि उनका मन विषय-वासनाओं से भरपूर है। तरुणावस्था प्राप्त बेटा अपनी जननी के प्रति जो पवित्र प्रेम-भाव रखता है, उसी निर्मल पवित्र प्रेम को दृष्टि में रख गोपी-प्रेम की विशुद्धता की कल्पना की जा सकती है। इन्द्रिय-तृप्ति की कामना से बिलकुल अछूता प्रेम। क्या एक युवा पुत्र अपनी जननी के प्रति कामवासना की कल्पना कर सकता है? कदापि नहीं। सूफी सन्त ईश्वरीय उपासना माधुर्य-भाव द्वारा ही करते हैं। **कवि जयदेव रचित 'गीत-गोविन्द' का काव्य भी माधुर्य रस आप्लावित है।**

सूफी सन्त रस-भीनी जिस भाषा का प्रयोग करते हैं, उसके अथाह-असीम आनन्द से सांसारिक लोग वंचित हैं। उसको हृदयंगम करना सांसारिक लोगों की समझ से परे है। अनन्य प्रेम का वह सुमधुर रस तो श्रीराधा, गोपियाँ, मीरा, तुकाराम, नारद तथा हाफिज सरीखे प्रेम-भक्तों के रोम-रोम को सिंचित किये हैं। अतः **प्रेमियों की गूढ़ भाषा तो ये सब प्रेमी भक्त ही समझ सकते हैं।**

आनन्दघन की आह्लादिनी शक्ति श्रीराधा की जय हो! देवकी-अंक-धन-श्रीकृष्ण की जय हो! योगियों के परम सत्य, भक्तों के परमाश्रय व जीवन-सर्वस्व, यशोदा तथा नन्द के लड़ते लाल श्रीकृष्ण की सदा जय हो! लाड़िली लाल की जय हो! आप पर उनकी अहैतुकी कृपावृष्टि अनवरत होती रहे !

जय श्री राधे जय नन्दनन्दन ।
जय जय गोपी जन-मन-रंजन ।।

सार-रूप में

"कृष्णस्तु भगवान् स्वयम्" आह्लादिनी शक्ति **"आत्मा तु राधिका तस्य"** श्रीराधा के नाम से सभी परिचित हैं। पर **राधा-तत्त्व से भी सभी सुपरिचित हो जायें-ऐसा प्रयास गुरुदेव श्री स्वामी शिवानन्द जी महाराज का रहा।**

राधा-प्रेम का मूर्तिमन्त रूप वे स्वयं रहे और निज को विश्व-सेवा के लिए विसर्जित कर दिया। कृष्ण-प्रेम उनमें छलक पड़ता था। उनके कुटीर में प्रतिष्ठित **श्रीकृष्ण भगवान् का मुरलीमनोहर स्वरूप दर्शनीय है। विशुद्ध प्रेम, निष्काम सेवा, सर्वात्म-समर्पण, सर्वस्य त्याग-ये ही तो हैं राधा-प्रेम के सोपान जो कृष्ण-प्रेममय बना देते हैं।** भगवान् कृष्ण कोई सामान्य नायक नहीं। श्रीराधा कोई सामान्य नारी (नायिका) नहीं। गोपी कोई सामान्य स्त्री नहीं। वंशी कोई सामान्य जड़ वस्तु नहीं।

विश्व-शान्ति की विकट समस्या का समाधान श्रीराधा-प्रेम में सन्निहित है; वह है-स्व-सुख कामना की संकुचित परिधि से बाहर निकल कर पर-सुख को ही स्व-सुख मानना । आज के घोर कलिकाल में सामान्य जनता को श्रीराधा-प्रेम के विराट् रूप को हृदयंगम करना है, जो कि संकीर्ण न हो कर सर्वांगीण है, सीमित न हो कर असीमित है, व्यक्तिगत न हो कर वैश्विक है।

श्रीराधा के तीन रूप मुख्य हैं-रस-रूपा अर्थात् माधुर्य भाव की एकमात्र अधीश्वरी हैं रासेश्वरी श्रीराधा-जो भाव-साम्राज्य की एकछत्र सम्राज्ञी हैं, भाव-उपासना की परमोच्च शिखर हैं।

विशुद्ध प्रेम की, त्याग की, तपस्या की साकार मूर्ति 'वियोगिनी राधा' उनका दूसरा रूप है- जिसके द्वारा वह विशुद्ध प्रेम-पथ पथिक की पथ-प्रदर्शिका एवं आदर्श हैं। वह आत्म-बलिदान एवं एकांगी प्रेम, वह सीमाहीन त्याग कल्पना से भी परे हैं। जगत् में आज राधा अपने इस रूप में अणु-अणु में व्याप्त हैं।

महाऐश्वर्यशालिनी, लीलामयी, जगज्जननी उनका तीसरा रूप है। वे मूल प्रकृति हैं। **वे आद्या शक्ति हैं।** यह समस्त **ब्रह्माण्ड उनकी लीला है।**

रसेश्वरी रासेश्वरी भावभावेश्वरी रक्ष माम्।
परमेश्वरी सर्वेश्वरी मातेश्वरी पाहि माम् ।।

इस प्रार्थना के साथ मातेश्वरी के चरणों में भावपूर्ण नमस्कार! प्रेममय प्रणाम! **उनका कृपा कटाक्ष पाना दुरूह नहीं, केवल चाहिए बाल-सुलभ निश्छलता जो विकार रहित होती है- अपने-पराये की भावना से कोसों दूर। जय श्री राधे।**

महाशिवरात्रि
२६-२-८७

स्वामी चिदानन्द
अध्यक्ष
दिव्य जीवन संघ, ऋषिकेश

विजयादशमी

महान् लक्ष्य तथा उसकी उपलब्धि

(भगवान् का मातृरूप)

तवामृतस्यन्दिनि पादपंकजे
निवेशितात्मा कथमन्यदिच्छति ।
स्थितेऽरविन्दे मकरन्दनिर्भर
मधुव्रतो नेक्षुरसं हि वीक्षते ।।[2]

आज माता जी के विजय-दिवस का महोत्सव है। इस विजय-दिवस पर समस्त देव प्रसन्न होते हैं तथा समस्त मानव-जाति आनन्दातिरेक में मग्न होती है; क्योंकि उन्हें यह परमोत्कृष्ट आश्वासन प्राप्त हुआ है कि वे यदि विपद् और आपद् में पड़ कर सहायतार्थ माँ की ओर मुड़ेंगे, तो माँ उन्हें शक्ति और साहाय्य अवश्य प्रदान करेंगी; क्योंकि जो विपत्ति में पड़ कर माँ के दिव्य चरणों में शरणापन्न होता है, माँ उसकी रक्षा करती हैं। माता जी अनन्त शक्ति का आधार महाशक्ति हैं। अतः उनके सम्मुख जाते ही हमारी निर्बलता तिरोहित हो जाती है। समस्त अमंगल, अज्ञान तथा मोह की शक्ति के ऊपर महत् जय-लाभ का कार्य सम्पन्न होता है और माता जी के साथ विजयोत्सव का आनन्द मनाते हैं। **विजयादशमी साधक के विश्वास, शक्ति तथा साहस-प्राप्ति का परम दिवस है।**

इस दिवस को सभी साधकों तथा भगवान् की खोज में रत भक्तों को महाशक्ति तथा साहस प्राप्त होता है। इसका कारण यह है कि माँ ने उनके दिव्य भाव के पूर्णाधार रूप में प्रकाशित होने के मार्ग में अन्तराय-रूप में आने वाली **आसुरी शक्ति को ध्वंस कर परब्रह्म के धाम के प्रवेश-द्वार को उद्घाटित कर दिया है। आज के परम पवित्र दिवस पर माता जी की आराधना महामाया के परम विशुद्ध विद्या-स्वरूप का पूजन है।** आज तक नवरात्र के दिनों में मानव-व्यवहार के इस दृश्य जगत् में प्रकट हुए माता जी के विविध रूपों की उपासना हमने की; किन्तु विजयादशमी के दिन से माता जी के विद्या और अविद्या-रूपी बाह्य स्वरूपों के परे

---

[2] चरण कमल से निःसृत अमृत में प्रविष्ट जिसकी आत्मा। कैसे भजे अन्य थल को जब लगन लगी हो तुझमें माँ।।
ज्यों पराग में लीन भ्रमर हो, कमल मध्य में स्थित माँ। मधुर ईख-रस क्योंकर चाहे, चखकर भक्ति-अमिय रस माँ।

पराशक्ति के विशुद्ध विद्या माया के मुखारविन्द का हम दर्शन करते हैं। इस रूप का दर्शन करना स्वयं परब्रह्म की अगाध तथा अतल गहराइयों का दर्शन करना है।

कारण, हमने इस पूजा के प्रारम्भ में यह कहा था कि माँ परब्रह्म के अतिरिक्त अन्य कुछ भी नहीं हैं। वह परब्रह्म ही माता जी हैं। अतएव, अपने विशुद्ध विद्या माया रूप में वह स्वयं परब्रह्म हैं। इसी से आज इस परम महान् तथा मंगलकारी विजयादशमी के दिवस पर माँ के उस अत्युज्वल दीप्तिमान् विद्या-रूप को, आत्मज्ञान- प्रकाशक रूप को हम प्रणाम करते हैं।

आज के दिन निम्न-भाव का किसी भी रूप में अस्तित्व नहीं है। किसी प्रकार की आसुरी सम्पत्ति नहीं रह गयी है। क्षुद्र वृत्ति का कोई चिह्न अवशेष नहीं रहा है। अन्धकार पूर्ण रूप से ध्वंस हो गया है। इसका पूर्ण तिरोभाव हो गया है। वहाँ एकमात्र माँ का साम्राज्य व्याप्त है। माँ इस समय असीम चिद्घन हैं। माँ के इस तेजोमय स्वरूप की उपासना उस परब्रह्म की श्रेष्ठ उपासना में अपने को विसर्जन करना है। इस भाँति अब हम उस परब्रह्म की पूजा तथा उपासना आरम्भ करते है जहाँ पहुँच कर जन्म-मृत्यु का दुष्ट चक्र समाप्त हो जाता है। यही वह शाश्वत प्रकाश का धाम है जहाँ जाने के पश्चात् शोक तथा दुःख में प्रत्यावर्तन नहीं होता। हम उस परम धाम को सदा के लिए प्राप्त कर लेते हैं जो कि समस्त शोकों, समस्त कष्टों तथा मोहों से परे है। यह साधक, जिज्ञासु तथा समस्त मानव का चरम लक्ष्य है। वास्तव में एकमात्र इस सर्वोच्च ध्येय की उपलब्धि के लिए ही हमें इस जगत् में यह मानव-जन्म प्राप्त हुआ है। संसार के अन्य पदार्थों के प्राप्त्यर्थ अपनी भाग-दौड़ भ्रामक एवं निरर्थक है। इस अमूल्य जन्म का एकमात्र आशय, उद्देश्य तथा लक्ष्य परब्रह्म का साक्षात्कार करना है।

गुरु : परब्रह्म की स्थूल मूर्ति

माता जी स्वयं गुरु के रूप में प्रकट होती हैं, इस गुप्त रहस्य का ज्ञान साधक को परमात्मा अथवा माता सरस्वती की कृपा से ही होता है।

शिष्य के लिए गुरु माता जी की विद्या माया तथा विद्या-शक्ति का प्रत्यक्ष प्राकट्य है। साधक के लिए सद्गुरु माता जी का ही स्वरूप है। साधक ने जिस आध्यात्मिक व्यक्ति को अपने मार्गदर्शक तथा गुरु के रूप में स्वीकार किया है, वह उसके लिए भगवती माता जी का साक्षात् साकार स्वरूप है, ऐसा उसे पूर्णतम भाव से मानना चाहिए। माता जी की इस भावना के आधार के ऊपर ही साधक के आध्यात्मिक जीवन का प्रासाद स्थित होता है। हिन्दू-संस्कृति का सम्पूर्ण तत्त्व-ज्ञान इस प्रकार की भावना पर ही निर्भर करता है। यह एक अपूर्व भावना है जिसकी समता संसार की किसी भी अन्य संस्कृति में नहीं मिलती।

सद्गुरु के व्यक्तित्व में परब्रह्म का दर्शन ही साधक की आध्यात्मिक खोज की सफलता का मूल आधार है। इस प्रकार साधक-वर्ग ने जिस व्यक्ति विशेष की शरण में जा कर उसे अपने हृदय के अन्तरतम प्रकोष्ठ में अपने आध्यात्मिक मार्ग-दर्शक के रूप में स्वीकार किया है, उसके लिए वही सद्गुरु साक्षात् पराशक्ति का स्वरूप है। वह ब्रह्मा है, वह विष्णु है, वह महेश्वर है, वह शक्ति है और वही स्वयं अक्षर परब्रह्म है। शाश्वत सत्ता की खोज में सद्भावपूर्वक तत्पर किसी भी साधक को इस सत्य को एक क्षण के लिए भी दृष्टि से ओझल नहीं होने देना चाहिए, न विलग करना चाहिए और न उसे विस्मृत ही करना चाहिए।

गुरुर्ब्रह्मा गुरुर्विष्णुर्गुरुर्देवो महेश्वरः ।
गुरुः साक्षात्परं ब्रह्म तस्मै श्रीगुरवे नमः ।।[3]

महान् धर्मशास्त्रों का सारतत्त्व

आज विजय के गौरवपूर्ण दिवस पर विजयी विद्या-माया-स्वरूपा भगवती माता जी की हम जो आराधना कर रहे हैं, वह सद्गुरु के आध्यात्मिक व्यक्तित्व में तथा उसके द्वारा प्रकट हो रहे सर्वोपरि परब्रह्म की ही पूजा है। हमने विविध प्रकार से माता जी की आराधना की है। आज हमने धर्मग्रन्थों के पाठ द्वारा विद्यारम्भ से विशेषकर माता जी के वाङ्मय स्वरूप की आराधना करने का प्रयत्न किया है। गीता, ब्रह्मसूत्र, भागवत, रामायण इत्यादि श्रेष्ठ धर्मशास्त्र माता जी के वाङ्मय-स्वरूप हैं।

धर्मशास्त्रों के पाठ से माता जी के वाड्मय स्वरूप की आराधना किस प्रकार होती है, इस विषय में यहाँ कुछ शब्द कहना अप्रासांगिक न होगा। हम देख चुके हैं कि स्वाध्याय साधक के लिए एक विशिष्ट प्रकार की प्रक्रिया है; परन्तु यह जीवन का व्यावहारिक मार्ग भी है। स्वाध्याय हमारी आकांक्षाओं, हमारे आदर्शों तथा हमारे दैनिक जीवन के व्यवहारों का सुन्दर निर्माण करता है। अतएव गीता, ब्रह्मसूत्र, भागवत, रामायण तथा महाभारत जैसे धर्मग्रन्थ हमारे आध्यात्मिक जीवन में श्रेष्ठ मार्ग-दर्शन प्रदान करते हैं।

भगवद्गीता के द्वारा माता जी क्या सार प्रदान करती हैं? भगवद्गीता द्वारा माता जी का एक ही आदेश है और वह है त्याग। गीता का अर्थ है त्याग। गीता त्याग का रहस्य समझाने वाला धर्मग्रन्थ है। गीता कहती है कि इस व्यावहारिक जगत् से सम्बद्ध सम्पूर्ण पदार्थों का त्याग करना, अपने कर्तृत्व-अभिमान, अहंता और ममता का त्याग करना तथा सम्पूर्ण विश्व भगवान् का विराट् स्वरूप है और हमारे सभी कर्म उस विराट् की पूजा हैं, ऐसी दृढ़ भावना रखना ही परम तत्त्व के साक्षात्कार का एक मार्ग है। अनासक्ति और त्याग- ये दो गीता के परम आदेश हैं।

भागवत में हमें सकारात्मक पक्ष का दर्शन होता है। इस दृश्य जगत् का त्याग करो। नश्वर जगत् के सभी पदार्थों के प्रति मन का मोह दूर करो तथा परमात्मा के प्रति परम प्रेम रखो। **भागवत का सम्पूर्ण सन्देश 'प्रेम' शब्द में समाहित है। यह प्रेम भगवत्प्रेम है। यह शुद्ध प्रेम का प्रोज्वल सार-तत्त्व है, भगवान् के प्रति रति है। गीता पूर्ण अनासक्ति का उपदेश देती है, पर भागवत भगवच्चरण में पूर्ण हृदय से अनुरक्त होने को कहता है।**

महाभारत 'धर्म' के आदर्श पर अटल बने रहने को कहता है। उसका उपदेश है कि जीवन का बलिदान दे कर भी धर्म के सिद्धान्तों से विचलित नहीं होना चाहिए। धर्म पर ही टिके रहो। धर्म से ही अन्तःकरण तथा जीवन निर्मल बनते हैं, पवित्र बनते हैं।

---

[3] गुरु ब्रह्मा है गुरु विष्णु है और महेश्वर है गुरुदेव। अतः दण्डवत् प्रणाम गुरुदेव को परब्रह्म साक्षात् गुरुदेव ।।

मानव-जीवन के सभी क्षेत्रों में धर्म का आचरण कैसे शक्य होता है, यह **रामायण में बताया गया है। रामायण का ग्रन्थ हमारे समक्ष एक आदर्श धार्मिक व्यक्ति के ठोस तथा व्यावहारिक जीवन का उदाहरण प्रस्तुत करता है। यह एक आदर्श पति, आदर्श पुत्र, आदर्श भ्राता, आदर्श सेवक, आदर्श जिज्ञासु तथा आदर्श राजा का प्रतिमान प्रस्तुत करता है। मनुष्य जीवन के भिन्न-भिन्न क्षेत्रों के आदर्शों का सच्चा दर्शन रामायण के दिव्य पात्रों के द्वारा हमें कराया गया है। यदि मनुष्य ईश्वर के प्रति प्रेम विकसित करने के साथ-साथ धार्मिक जीवन यापन करना चाहता है, तो उसे अपने जीवन के विविध क्षेत्रों में क्या करना चाहिए, इसका प्रतिरूप रामायण में दिया गया है।** रामायण में वर्णित प्रसंगों से शिक्षा ले कर मनुष्य परम धार्मिक जीवन यापन के अनुकूल अपने जीवन को ढाल सकता है।

ब्रह्मसूत्र में इन सभी का मूलभूत कारण दर्शाया गया है। मनुष्य-जीवन का चरम लक्ष्य क्या है, उसे इसमें बतलाया गया है। **यह कहता है-"अविनाशी परम तत्त्व शाश्वत आनन्द की प्राप्ति ही जीवन का ध्येय है और ये सभी पदार्थ इस ध्येय की प्राप्ति के लिए साधन हैं। इन सब साधनों से परम धाम की प्राप्ति होती है, जहाँ पहुँच कर दुःख तथा मृत्यु से संकुल इस संसार में पुनः नहीं आना पड़ता।"** ब्रह्मसूत्र का अन्तिम मन्तव्य यह है कि धर्म, त्याग तथा भक्ति-मार्ग से एक बार परब्रह्म की प्राप्ति कर लेने के पश्चात् 'न पुनरावर्तते' अर्थात् जीव पुनः वापस नहीं आता। वह सदा-सर्वदा के लिए असीम चेतना, अविनाशी सत्ता, शाश्वत आनन्द तथा चिरन्तन शान्ति में अवस्थित हो जाता है।

यही ध्येय है। **'यद्गत्वा न निवर्तन्ते तद्धाम परमं मम'** ऐसा भगवान् गीता में कहते हैं। इस परम धाम में पहुँच कर मनुष्य पुनः इस संसार में वापस नहीं आता।

यही परम परिपूर्णता का स्वरूप है। **'यो वै भूमा तत्सुखम्।'** यह भूमा ही इस जगत् में मनुष्य का ध्येय है। जिसके जान लेने पर अन्य कुछ जान लेने को शेष नहीं रहता- **'यस्मिन् ज्ञाते सर्वमिदं विज्ञातं भवति।"**[4]

जिसको प्राप्त कर लेने पर अन्य कोई प्राप्तव्य नहीं रहता- **'यं लब्ध्वा चापरं लाभं मन्यते नाधिकं ततः।**[5]

जिसकी प्राप्ति तथा अनन्त उपभोग के लिए हम यहाँ निरन्तर प्रयास कर रहे हैं, ऐसी अलौकिक स्थिति की महिमा का, उसके परम ऐश्वर्य का वर्णन है। इस भाँति वे हमें ध्येय तथा आदर्श दोनों ही प्रदान करते हैं। **आत्म-साक्षात्कार हमारा ध्येय है। इनके साधन हैं गीता में वर्णित त्याग, भागवत में बतायी गयी भक्ति, महाभारत का धर्म तथा रामायण का आदर्श जीवन ।**

मनुष्य-जीवन का लक्ष्य तथा उद्देश्य तथा उनकी प्राप्ति के साधनों का स्पष्ट तथा गम्भीर रूप इन श्रेष्ठ धर्मग्रन्थों में से जानने को मिलता है। यदि कोई साधक इन साधनों द्वारा ध्येय के प्राप्त्यर्थ प्रयास करने में तत्पर हो, तो उसके लिए व्यावहारिक सूचना भी प्राप्त होती है।

---

[4] जान कर फिर जानना रहता न कुछ भी शेष है।
[5] प्राप्त कर जिसको कि कुछ पाना न रहता शेष है।।

विजयादशमी प्रार्थना

परमा माता भगवती की नवरात्र के नौ दिन की आराधना के अन्त में आने वाले **इस विजयादशमी के महोत्सव में हम उनसे प्रार्थना करें कि वह हमारे हृदय में बुद्धि तथा स्मृति-रूप में प्रकट हों।** हम सब माता जी से प्रार्थना करें कि वह स्मृति-रूप में इन महान् सत्यों को हमारे हृदय में सदा सजीव बनाये रखें जिन पर हमारा सम्पूर्ण जीवन आधारित हो और जिसके आधार पर हमारे समस्त जीवन का गठन हो तथा इन महान् सत्यों को हम जीवन में चरितार्थ करें; क्योंकि उनकी 'भ्रान्ति-शक्ति' तथा 'माया-शक्ति' इतनी रहस्यमयी हैं कि हम इन सत्यों से सुपरिचित हैं, हम उनके विषय में बारम्बार सुनते हैं. और इससे हम उन्हें स्मरण रखने का प्रयास करें, तो भी न जाने कैसे एक पल में वह हमें विस्मृत करा देती हैं और इस वैषयिक जगत् की इन बाह्य वस्तुओं का ही बोध कराती हैं। हमारी चेतना के ऊपर माता जी का यह आवरण पड़ते ही एक क्षण में ही इन महान् सत्यों को हम भूल जाते हैं। हम क्षणिक आनन्द प्रदान करने वाले पदार्थों में ही तन्मय बन जाते हैं और बाह्य जगत् के नाम-रूपों में बंध जाते हैं। अतः हम बार-बार प्रार्थना करें- "**हे माँ! विद्या-स्वरूप में हमारे पास प्रकट हों। तुम्हारे विद्या-स्वरूप से हमारी चेतना प्रकाशित हो।**"

अतः हमें करबद्ध तथा नतमस्तक हो कर प्रार्थना करनी चाहिए- "**हे माँ! तुम अपने तेजोमय स्वरूप से मुझमें प्रकट होओ और अपने अविद्या माया-स्वरूप से मेरी रक्षा करो।**" माता जी प्रसन्न होंगी, वह तुष्ट होंगी और अपने तेजोमय नेत्रों से हमें देखेंगी, हमारे सामने मन्द स्मित करेंगी। तब हमारी समस्त भ्रान्ति, सम्पूर्ण दुःख, समग्र अन्धकार का अन्त होगा और **हम माता जी के सच्चिदानन्द परब्रह्म-स्वरूप का दर्शन पायेंगे।**

इन नौ दिनों में माता जी की विविध प्रकार से पूजा की गयी। आराधना में भजन, कीर्तन, नृत्य, अलंकार, पूजा इत्यादि थे तथा पूजा के अंग के रूप में माता जी द्वारा प्रदान की हुई वाणी से उनकी 'वाक्शक्ति' के स्वरूप का हमने पूजन किया व हमने शब्दों द्वारा उनकी आराधना करने का प्रयास किया। इस विजयादशमी के पवित्र दिवस पर माता जी के चरण-कमलों में ये अल्प शब्द अर्पित कर प्रार्थना करते हैं-"**हे माँ, यह अल्प भी स्वीकार करो। तू प्रेम है। तू करुणा है। तू प्रकाश है। तू मुक्ति है। यह सब कहने का क्या तात्पर्य है? इतना ही कहना पर्याप्त होगा कि हे माँ, तू माँ है। अतः माँ-रूप में तुम्हारे चरणों में अर्पित प्रेम की यह भेंट स्वीकार करो और हम पर अपनी कृपा की वृष्टि करो। हमारी ओर मुस्कानपूर्ण दृष्टिपात कर अपनी अविद्या माया का अन्धकार विदूरित कर दो। हमारे गुरुदेव के दिव्य चरणों में रहने वाले सभी साधकों को आत्मज्ञान रूपी तेजोमय प्रकाश तथा सच्चिदानन्द का अक्षय सुख प्रदान करो।**

श्री राम की सर्वव्यापकता का गीत

ॐ श्री राम जय राम जय जय राम
ॐ श्री राम जय राम जय जय राम

पृथ्वी जल अप्ति वायु आकाश में हैं राम
हृदय मन प्राण और इन्द्रियों में है राम

श्वास रक्त नाड़ी और मस्तिष्क में हैं राम
शब्द भाव विचार और कर्म है राम ।। (श्रीराम)

भीतर राम बाहर राम सामने हैं राम।
ऊपर नीचे राम आगे-पीछे हैं राम
दायें राम बायें राम सर्वत्र हैं राम
व्यापक राम विभु राम पूर्ण हैं राम ।। (श्री राम...)

सत् हैं राम चित् हैं राम आनन्द हैं राम
शान्ति हैं राम शक्ति हैं राम ज्योति हैं राम
प्रेम हैं राम दया है राम सौन्दर्य है राम
आनन्द हैं राम प्रसन्नता है राम पवित्रता है राम।। (श्री राम...)

आश्रय हैं राम, सांत्वना राम, गति राम साक्षी है राम
माता पिता मित्र बन्धु गुरु हैं राम
मूल आधार स्रोत आदर्श केन्द्र लक्ष्य है राम। राम
सृष्टिकर्ता पालनकर्ता संहारकर्ता मुक्तिदाता हैं राम ।।
(श्री राम...)

चरम लक्ष्य मानव का केवल एक हैं राम
श्रद्धा प्रेम उपासना से वरेण्य हैं राम
समर्पित भाव भक्ति से मिलते हैं राम
अर्चन वन्दन प्रार्थना कीर्तन से प्राप्य हैं राम ।। (श्री राम...)

श्री राम जय राम जय जय राम
श्री राम जय राम जय जय राम ।। (श्री राम...)

कोई भी अपरिहार्य नहीं!

कभी जब लगे आपको, महत्त्वपूर्ण हैं आप बहुत,
कभी जब आपका अहं हो अपने शिखर पर;
कभी जब समझने लगे कि सर्वश्रेष्ठ हैं आप यहाँ,
कभी जब लगे आपको कि यहाँ से जाना आपका-

छोड़ जाएगा एक भरा न जा सकने वाला खालीपन ।
तब ऐसा करें..... और देखें....
कैसे चूर करता है यह आपका अभिमान;

एक बर्तन लें और भर लें उसे पानी से
कलाई तक डुबा दें इसमें हाथ अपना;

फिर बाहर निकालें, और गड्ढा दिखाई दे जितना,
वह माप है कि खलेगा कितना जाना आपका;

प्रवेश करते वक्त चाहे जितनी हलचल दें मचा,
जितना चाहे पानी को दें उछाल....
किन्तु रुकें, क्षण एक ही में देखेंगे आप,
कैसे यह दिखने लगा है पहले ही जैसा।

देता है शिक्षा यह उदाहरण महान्,
करें! जितना भी श्रेष्ठतम कर सकते हैं आप;
कर लें घमण्ड स्वयं पर भी, पर रखें याद,
नहीं है कोई भी इस संसार में अपरिहार्य!

अनूदित

महामन्त्र

हरे राम हरे राम राम राम हरे हरे ।
हरे कृष्ण हरे कृष्ण कृष्ण कृष्ण हरे हरे

नारी-पुनीत संस्कार-प्रदात्री

आज के वैज्ञानिक इस बात से पूर्णतः सहमत हैं कि जन्म के एक वर्ष पूर्व से ही बच्चे का शिक्षण प्रारम्भ हो जाना चाहिए। **इसलिए हमारे पूर्वजों ने गर्भिणी माता के वातावरण को मंगलमय बनाने का सुझाव दिया है जिसके लिए पिता का सक्रिय सहयोग अपेक्षित होता है।** माता-पिता इस बात का पूर्णतया ज्ञान रखें और ध्यान करें कि अपनी सन्तान के भविष्य निर्माण का बीजारोपण करने के लिए यह स्वर्णिम सुअवसर है। **ऐसे समय का पूरा-पूरा सदुपयोग करें। सच्चरित्रता को आधार बना कर भावी सन्तति के जीवन-निर्माण हेतु सङ्ग्रन्थों का अध्ययन करें। शुभ चिन्तन ही करें। सद्धर्चाएँ ही सुनें।**

बालक प्रह्लाद की उच्चकोटि की भक्ति के पीछे उन सदुपदेशों का प्रभाव था जो उसकी (गर्भिणी) माता दैत्येश्वरी कयाधू को देवर्षि नारद द्वारा सुनाये गये थे। वीर अभिमन्यु की कथा से भला कौन परिचित न होगा? जब वह अपनी जननी सुभद्रा की कोख में ही था तब (पिता) अर्जुन अपनी सहधर्मिणी सुभद्रा को रणकौशल सम्बन्धी अनेक कथा-वार्ताएँ सुनाया करते थे। उनमें से एक कथा चक्रव्यूह-भेदन की भी थी। चक्रव्यूह में प्रवेश करने का रहस्य तो उस गर्भस्थ बालक (अभिमन्यु) ने इतने ध्यान से सुना था कि ज्यों का त्यों उसे करके भी दिखा दिया।

मैं[6] अपनी ही व्यक्तिगत बात कहूँ। मैं जो आज हूँ, उसके लिए महत्त्वपूर्ण कारण मेरी माँ हैं। सबसे बड़ी (पुत्र) सन्तान होने के कारण मेरी माँ मुझसे बहुत प्रेम करती थीं। मुझे तो अपनी ममतामयी माँ के बिना नींद नहीं आती थी। मैं उनके कण्ठ से लिपट कर गीत गाने तथा कहानियाँ कहने के लिए उनसे अनुनय-विनय किया करता था। वह भक्तिभाव से

---
[6] मैं अर्थात श्री स्वामी चिदानन्द जी महराज

सन्त रैदास और मीराबाई आदि के भजन गातीं; उत्तराखण्ड के सन्त-महात्माओं की प्रेरणाप्रद गाथाएँ सुनातीं। सोते समय माँ के द्वारा सुनायी गयी इन कथाओं से ही ईश्वर-भक्ति के सुसंस्कार मैंने प्राप्त किये।

आप सब एक साधारण नारी नहीं हैं। भारतीय नारी हैं। **भारतीयता का आदर्श है-सन्नारी और सन्नारी का आदर्श है पवित्रता तथा मातृत्व का आदर्श ।** इसलिए आपका व्यक्तित्व और व्यवहार भारतीय संस्कृति का जीवन्त प्रतीक होना चाहिए। यही सही ढंग है मातृ-भूमि, भारत-भूमि, जन्म-भूमि की उपासना का। भारत जड़ भूमि नहीं, यह जाग्रत शक्ति है। इस शक्ति को आपको ही जीवित रखना है। **आपका परम सौभाग्य है कि आप भारत माता की सन्तान हैं।** आपके द्वारा मानवता को मार्ग-दर्शन मिलता रहना चाहिए।

आप माताएँ ही तो अपनी सन्तान की प्रथम गुरु हैं। आपको ही उनकी प्रथम प्रशिक्षिका होने का दायित्व वहन करना है।

आपका प्रधान व्यक्तित्व मातृत्व का है। पत्नी तो आप मात्र एक ही पुरुष (पति) के लिए हैं- अग्नि देवता की साक्षी में। आपका भाव सदा यह होना चाहिए कि आप मानव की माता है; जगत् की जननी हैं। आपको एक सुमाता होने का उत्तरदायित्व निभाना है। एक सुमाता अपने कोमल करों से पालना झुलाते समय स्मरण रखती है कि वह सन्तति के भावी जीवन-निर्माण की नींव को सुदृढ़ से सुदृढ़तर बनाने में प्रयत्नशील है।

मानवता की माता होने के नाते मानव का शैशव आपकी गोद में है। इस प्रकार समग्र विश्व का भविष्य आपके हाथ में है। माताओं को चाहिए कि वे गर्भावस्था से ही, बच्चों की शैशवावस्था से ही जीवन का परम उद्देश्य- विश्व बन्धुत्व, वसुधैव कुटुम्बकम्, विश्व शान्ति एवं विश्व-कल्याण का पाठ पढ़ायें। यह सब आप ही के द्वारा सम्भव है।

जिन परिवारों में सन्तानों को माताओं का निर्देशन, पिताओं का संरक्षण व्यक्तिगत रूप से मिलता रहता है। अर्थात् जो माता-पिता अपने दायित्व को भली प्रकार समझते हैं और सन्तानों के प्रत्येक क्रिया-कलाप का निरीक्षण करते हुए उन्हें युक्तिपूर्वक प्रेमपूर्वक यथोचित प्रशिक्षण देते हैं **ऐसे ही आदर्श परिवारों में राष्ट्र निर्माण की आधारशिलाएँ रखी जाती हैं। इस तथ्य से प्रमाणित होता है कि परिवार राष्ट्र की पौधशाला है।**

विदेशयात्रा-काल में श्री स्वामी जी की पोप पाल षष्ठ से सप्रेम भेंट

१९ फरवरी १९६९ को पोप पाल षष्ठ तथा स्वामी जी की एक अर्ध अशासकीय भेंट हुई वेटिकन सिटि में। पोप इस भारतीय सन्त को देखते ही प्रेम से इतना भर गये कि उन्होंने परम धर्माध्यक्षीय प्राधिकार की प्रायिक औपचारिकताओं को अलग रख कर उनके हाथों को पकड़ लिया तथा उन्हें भाव-प्रवणता के साथ शिष्टाचार का आदान-प्रदान करते हुए देर तक पकड़े रखा। उन्होंने स्वामी जी का अभिवादन भारतीय रीति से किया तथा स्वामी जी ने उसके प्रत्युत्तर में पाश्चात्य लोकाचार के अनुसार गुरुदेव शिवानन्द के नाम में घुटने टेक कर उनका अभिवादन किया। पोप ने शिवानन्द का नाम सुनते ही सस्नेह गुनगुनाया: "मैंने आपके गुरुदेव के प्रशस्त आध्यात्मिक कार्य के विषय में सुना है। मैं आपके गुरुदेव के आध्यात्मिक कार्य को बहुत महत्त्व देता हूँ।" स्वामी जी ने पोप के प्रति अपने प्रेम तथा सम्मान के प्रतीक-रूप में गुरुदेव की पुस्तक 'Bliss Divine' (ब्लिस डिवाइन) उन्हें भेंट की। पोप ने भेंट को बड़ी ही प्रसन्नता से स्वीकार किया और आशा दी कि वह उसे रुचिपूर्वक पढ़ेंगे। वार्तालाप-काल में उन्होंने बार-बार कहा: "मैं भारत को प्रेम करता हूँ। मैं भारत को प्रेम करता हूँ" तथा वार्ता के एक चरण में कहा: "भारत अलौकिक देश है। मैं एक बार पुनः भारत जाने की उत्सुकता से प्रतीक्षा कर रहा हूँ।" उन्होंने कहा कि वह उन लोगों की प्रशंसा करते हैं जो सत्य का साक्षात्कार कर लेने पर प्रेम-धर्म के सुसमाचार का प्रचार करने के लिए बाहर निकल आते हैं। स्वामी जी ने पोप को दिव्य जीवन संघ के प्रतिनिधि के रूप में शान्ति, प्रेम तथा आध्यात्मिकता के आदर्शों के प्रचार करने के अपने लक्ष्य के विषय में अवगत कराया और उनसे आशीर्वाद माँगा। पोप ने स्वामी जी को आशीर्वाद दिया और उनके पवित्र लक्ष्य में उनकी सफलता की कामना की। स्वामी जी ने अपने सुझावों का तैयार किया हुआ प्रारूप उन्हें दिया जिसमें कैथोलिक चर्च के तत्त्वावधान में रोम में सर्वधर्म-सम्मेलन आयोजित करने के लिए पोप से अनुरोध किया गया था। उन्होंने पोप को यह भी सुझाव दिया कि धार्मिक एकता का सन्देश पहुँचाने के लिए उन्हें एक विश्व-यात्रा आरम्भ करनी चाहिए। पोप ने सुझाव का प्रेमपूर्वक स्वागत किया और कहा: "मैं उसे ध्यानपूर्वक देखूँगा।" उन्होंने उनके प्रेम के प्रतिदान में स्वामी जी को एक स्मारक पदक प्रदान किया। वहाँ पर जो कतिपय व्यक्ति उपस्थित थे, उन्हें स्पष्ट हो गया कि ख्रीस्त जगत् के परमधर्माध्यक्ष स्वामी जी के आध्यात्मिक व्यक्तित्व से अत्यधिक प्रभावित थे।

शान्ति और आनन्द के एकमात्र स्रोत-भगवान्

आनन्दमय आत्मस्वरूप, परमपिता परमात्मा की दिव्य अमर सन्तान!

कूजन्तं राम रामेति मधुरं मधुराक्षरम् ।
आरूहा कविताशाखां वन्दे वाल्मीकिकोकिलम् ।।

यह श्लोक परम सौभाग्यशाली ऋषि वाल्मीकि के सम्बन्ध में कहा गया है कि कविता रूपी शाखा पर बैठ कर सुमधुर कण्ठ से मधुराक्षर राम-राम का उच्चारण करने बाले वाल्मीकि रूपी कोयल को मेरा नमस्कार।

यही श्लोक सन्त तुलसीदास के लिए भी परिपूर्णतया सही कहा जा सकता है जिन्होंने अपनी मधुर लेखनी से राम-नाम की महिमा और राम-भक्ति के माधुर्य को, अपनी सुन्दर अतुलनीय महाप्रख्यात महाकाव्य 'रामचरितमानस' के माध्यम से भारतवर्ष की सौभाग्यशाली जनता तक पहुँचाया। आप जानते हैं कि सन्त तुलसीदास प्रख्यात होने के पूर्व कैसे थे? इसी प्रकार वाल्मीकि, महर्षि होने के पूर्व कैसे थे? क्या थे? आप जानते हैं कि वे एक संसारी की तरह प्रपंच में, मोह-ममता के पाश में फंसे रहे। जब उन पर भगवत्कृपा हुई तो एक क्षण में उनके जीवन में क्रान्तिकारी परिवर्तन हो गया। तुलसीदास जी को अपनी पत्नी द्वारा ज्ञान प्राप्त हुआ जिनके प्रति तुलसीदास जी की अत्यधिक आसक्ति थी। इसीलिए कहा है कि माया अविद्या माया हो कर जीवात्मा को बन्धन में डालती है किन्तु वही माया जब विद्या माया के रूप में प्रकट होती है तो मोक्षदायिनी, भगवती, अनुग्रहस्वरूपा बन जाती है। सन्त तुलसीदास जी के जीवन में यह बात प्रत्यक्ष प्रमाणित है।

इस परिवर्तन के बाद सन्त तुलसीदास विवेकी हो गये, अनासक्त बन गये और उनके लिए प्रपंच में रस नहीं रहा। मात्र इतना ही नहीं हुआ अपितु जब उनमें जागृति आयी, उनके जीवन में जमीन-आसमान का अन्तर आ गया। सब प्रपंच छोड़ कर परमार्थ साधना में लग गये, महावैरागी हो गये और भगवान् के परम भक्त बन गये। उनके हृदय में प्रभु-दर्शन की तीव्र आकांक्षा उत्पन्न हो गयी। किस प्रकार प्रभु के दर्शन हों, रात-दिन यही लौ उनके भीतर लगी रही। प्रभुप्रेमी बन करके उन्होंने अपना सम्पूर्ण जीवन प्रभु की खोज में लगा दिया। वे कहते-"प्रभु दर्शन कहाँ होगा ? कैसे होगा? कौन हमें मार्ग दिखायेगा?"

"**बिन लाठी के निकला अन्धा, राह कोई बता दे रे!**" और अन्त में प्रभु दर्शन हुआ, बाहर भी हुआ और भीतर भी हुआ।

कोई कहे वह है वृन्दावन में, कोई कहे है वन में।
लेकिन अन्त में देख सका, मैं उसको अपने मन में ।।

तुलसीदास जी को रामकृपा प्राप्ति का रहस्य तथा प्रभु राम के दर्शन प्राप्ति का रहस्य स्वयं साक्षात् आंजनेय स्वामी ने बताया। आप सभी यह जानते हैं कि आंजनेय स्वामी अर्थात् हनुमान् जी के विषय में कहा जाता है कि जहाँ राम कथा होती है, वहाँ भवन में जब कोई भी नहीं आया हो अर्थात् सबसे पहले वे ही आते हैं और कथा समाप्ति पर सभी श्रोतागणों के जाने के बाद अर्थात् सबके आखिर में वे जाते हैं। यदि आप में सच्ची लगन व दृष्टि हो तो आप हनुमान् जी के दर्शन कर सकते हैं। तुलसीदास जी को इस बात में पूर्ण विश्वास था। वे कोई बुद्ध नहीं थे, पढ़े-लिखे थे, विद्वान् थे, कवि और चित्रकार थे और युवा भी थे। फिर भी उनके हृदय में श्रद्धा और दृढ़ विश्वास था और इसी श्रद्धा और विश्वास के कारण उन्होंने इस बात को परिपूर्ण रूपेण ग्रहण करके निश्चय किया कि मैं हनुमान् जी के दर्शन करूँगा। उन्हें विश्वास था कि राम कथा प्रारम्भ होने के पूर्व सबसे पहले आने वाले और सबसे अन्त में जाने वाले हनुमान् जी ही होंगे, फिर चाहे वह किसी भी स्वरूप में हों। उन्होंने इस बात का भावार्थ लिया, मार्मिक गूढार्थ लिया। केवल स्थूलार्थ नहीं लिया कि हनुमान् जी पूँछ धारी कपीश्वर के रूप में ही आयेंगे। पहले दो-तीन दिन मात्र स्थूलार्थ लेने के कारण उन्होंने समझा कि हनुमान् जी नहीं आये, क्योंकि जो श्रोतागण आये हैं वे हम जैसे मानव ही हैं! किन्तु फिर सोचा कि इस बात में अवश्य कुछ मर्म है। मैंने भूल की है।

इस बात में मात्र इतना संकेत है कि सबसे पहले आने वाले और अन्त में जाने वाले हनुमान् जी हैं। इसीलिए आज मैं खाली भवन में बैठ कर देखूँगा कि कौन सबसे पहले आता है और सबके आखिर में जाता है। उन्होंने एक वृद्ध ब्राह्मण को सबसे पहले बैठे हुए देखा, उन्हें विश्वास हो गया और तुलसीदास जी ने उनके चरण पकड़ लिये। इस प्रकार बात का मार्मिक अर्थ लेने और पूर्ण श्रद्धा व विश्वास के कारण तुलसीदास को हनुमान् जी के दर्शन हुए।

कलियुग में इस प्रकार की श्रद्धा और विश्वास बहुत कम है-इसे अन्धविश्वास समझा जाता है। हम नहीं जानते हैं कि जो सूक्ष्म है, अदृश्य है, अव्यक्त है, वह अधिक सत्य है। जो दृश्य, स्थूल और व्यक्त है, जो पहले नहीं रहा है, कुछ समय पूर्व जिसका उद्भव हुआ है और कुछ समय बाद चला जायेगा-वह असत्य है, नाशवान् है। इसीलिए कहा गया है- "Unseen is real." अर्थात् अदृश्य ही सत्य है।

सन्त तुलसीदास ने संस्कृत भाषा की 'वाल्मीकि रामायण' को जन-जन तक पहुँचाने के लिए इसे अवधी भाषा में कविता रूप में लिखा। उनकी इस रचना पर वाराणसी के संस्कृतज्ञ पण्डितों ने टीका-टिप्पणी करते हुए कहा कि यह पवित्र रामायण सर्वसाधारण के कान में नहीं डाली जानी चाहिए। साधारण भाषा में लिखे जाने से यह पवित्र ग्रन्थ अशुद्ध हो गया है-यह केवल संस्कृत में लिखा जाना चाहिए। उन्होंने कहा कि इस विषय में निर्णय वाराणसी के विश्वनाथ मन्दिर में होना चाहिए। पाण्डुलिपि मन्दिर में रख दी गयी। पूरी सभा बैठी और सन्त तुलसीदास भी बैठे। तभी यह अद्भुत चमत्कार हुआ। पहले तो आँधी उठी, अन्धकार छा गया। इसके बाद एक ही क्षण में महान् प्रकाश हुआ, मन्दिर की सभी घण्टियाँ स्वतः बजने लगीं, हनुमान् जी प्रकट हुए। सभी ने देखा कि पाण्डुलिपि के ऊपर त्रिशूल की नोक से 'राम-राम' लिखा हुआ था। भगवान् ने अपना परिपूर्ण आशीर्वाद और अनुग्रह देते हुए कहा कि मैं इसको स्वीकार करता हूँ। इसके बाद पण्डितों का अहंकार नम्रता में परिवर्तित हो गया। उन्होंने तुलसीदास जी से कहा कि हम धन्य हुए कि आपने ऐसा ग्रन्थ दिया है जो साक्षात् भगवत् अनुग्रह को प्रमाणित करता है। **इसमें मर्यादापुरुषोत्तम प्रभु श्री राम की दिव्य अवतरण लीला के साथ-साथ धर्म, अर्थ, काम तथा मोक्ष इन चारों पुरुषार्थों की प्राप्ति का उपदेश भी है। इसके उत्तर भाग में काकभुशुण्डी व गरुड़ के संवाद द्वारा जितना ज्ञान दान किया गया है वह अवर्णनीय है।**

भगवान् राम अपने भक्तों की इच्छा पूरी करने के लिए पुनः द्वापर युग में कृष्ण अवतार ले कर आते हैं। वे हमें यही कहते हैं कि इस माया की रचना में, इस प्रपंच में हम अपने पूर्वजन्मकृत कर्मों के अनुसार सुख-दुःख भोगने के लिए आये हैं; किन्तु भगवान् ने हमें यहाँ कर्मफल भोगते-भोगते साधना करके मोक्ष प्राप्ति के लिए भेजा है। कर्मफलप्राप्ति के लिए कर्मफल का भोग अनिवार्य है; लेकिन मोक्षप्राप्ति के लिए जो साधना करनी है, वह हमारे अपने संकल्प पर निर्भर है। इसको कहते हैं सत्संकल्प, शुभेच्छा। यह तो प्रभु ने हमारे हाथ में सौंपा है उन्होंने इसके लिए परिपूर्ण सामग्री दी है। हमें विचार शक्ति दी है, अनेक ग्रन्थों द्वारा ज्ञान का ऐश्वर्य दिया है, समय-समय पर हमें चेतावनी दी है कि-

अनित्यमसुखं लोकमिमं प्राप्य भजस्व माम्

(गीता : ९-३३)

भगवान् कहते हैं-हे मानव! यह अनित्य प्रपंच है यहाँ सभी पदार्थ, सब नाम रूप नाशवान् हैं, नश्वर हैं। भाष्यकार भगवान् आदि शंकराचार्य अपने 'विवेक चूड़ामणि' नामक ग्रन्थ में कहते हैं कि जो भी देखा जाता है वह क्षणिक है, वह नाशवान् है। **"यद् दृश्यं तद् नश्यम्।"** पाँचों ज्ञानेन्द्रियों के द्वारा जो भी हम अनुभव करते हैं-वह नाशवान् है। केवल मात्र एक अविनाशी तत्त्व है-उसे प्रभु कहो, परब्रह्म कहो, आत्मा कहो या कुछ भी न कहो। उपनिषदों में भी इतना कहा है। उऊँ तत्सत् न इदम्। तत्सत् यद् तद् बुद्धिमगाह्यतीन्द्रियम्। **वही सत्य है** यह नहीं। **वह सत्य, शाश्वत, अविनाशी तत्त्व इन्द्रियों से परे है। उसी शाश्वत, अविनाशी, परिपूर्ण ब्रह्म की अनुभूति के द्वारा शाश्वत शान्ति प्राप्त होगी तथा दिव्य अवर्णनीय आनन्द प्राप्त होगा। शाश्वत शान्ति और आनन्द परिपूर्ण ब्रह्म में है**, इस क्षणिक दृश्य संसार में नहीं है।

अनित्यमसुखं लोकमिमं प्राप्य भजस्व माम्।

(गीता : ९-३३)

भगवान् श्रीकृष्ण कहते हैं कि मेरा भजन करने से तुम्हारा जन्म सफल होगा। प्रभु ऐसा क्यों कहते हैं? 'मेरा भजन' का अर्थ क्या है? यदि हम अशाश्वत, अनित्य वस्तु के पीछे जायेंगे तो उनके द्वारा हमें जो अनुभव प्राप्त होगा-वह भी क्षणिक व नाशवान् होगा। नाशवान् वस्तु के आधार पर जो अनुभव होता है वह भी नाशवान् ही होता है। इसी प्रकार नित्य तत्त्व, शाश्वत तत्त्व से प्राप्त अनुभूति भी नित्य होगी, शाश्वत होगी और वह कभी नहीं मिटेगी। इसी अनुभूति की प्राप्ति की आवश्यकता है।

भगवान् को परम लक्ष्य मान कर यदि हम अपना सम्पूर्ण जीवन साधना व भगवत्-भजन में लगा दें तो हम इस जीवन नामक खेल में जीत प्राप्त कर लेंगे। परमार्थ की साधना का जीवन ही वास्तविक है। यही तुलसीदास जी का वचन है और यही पूर्णावतार जगद्गुरु श्रीकृष्ण का वचन है। जितने ग्रन्थ हैं, जितने सन्त हैं, सबका यही कहना है कि-

"In God Alone You Can Ultimately Find Heppiness.'

भगवान् ही आनन्द के स्रोत हैं, अन्यत्र कहीं सुख और आनन्द नहीं है।

जीवन के अन्तिम चरण संन्यास आश्रम में प्रवेश करने वाला व्यक्ति 'विरज होम' नामक वह अनुष्ठान करता है जिसके द्वारा संन्यास का वास्तविक, अर्थ-ग्रहण सम्भव है। पूर्वाश्रमों की मोहग्रस्त एवं अहंकार-युक्त चेतना का आत्यन्तिक उच्छेद और सर्वत्याग की प्रोज्ज्वल अग्नि में इच्छा, आसक्ति का भस्मीकरण ही सन्यास है। शारीरिक चेतना की परिसमाप्ति तथा एक सर्वथा नवीन एवं महिमामयी चेतना के अभ्युदय को ही संन्यास कहते

हैं। 'विरज' होम' में संन्यासी की इन्द्रियों एवं उसके शरीर, मन, प्राण तथा अहंकार की आहुति दे दी जाती है और तत्पश्चात् वह अपने आपको शरीर और मन से पृथक् अमर आत्मा समझने लगता है। त्याग का यह उच्चतम रूप है। संन्यास में सर्वत्याग की भावना निहित है।

संन्यास के वास्तविक अर्थ तथा उसकी यथार्थ गरिमा को उन सन्तों के जीवन के सूक्ष्म एवं सजग निरीक्षण द्वारा समझा जा सकता है जो संन्यास में निहित उच्चतम तथा उत्कृष्टतम तत्त्वों के जीवन्त प्रतीक हैं। ये लोग वास्तविक संन्यास के मूर्त रूप होते हैं। निश्चित ही गुरुदेव श्री स्वामी शिवानन्द जी महाराज वास्तविक संन्यास के महानतम उदाहरण हैं। उनका प्रत्येक कार्य वास्तविक संन्यास का प्रोज्ज्वल उद्घाटन-कर्ता है।

-स्वामी चिदानन्द

छात्र, आध्यात्मिक साहित्य और शिवानन्द

विद्यार्थियों का नव-निर्माता

प्रश्न : शिवानन्द साहित्य विद्यार्थियों के विचार-परिष्कार में कहाँ तक सहायक हो सकता है?

उत्तर : आध्यात्मिक साहित्य विद्यार्थी मात्र का ही नहीं, वरन् प्रत्येक व्यक्ति का सहायक एवं प्रेरक होता है। शरीर की भाँति मस्तिष्क को भी आहार की आवश्यकता होती है। यदि पशु को पशुशाला में ही सुन्दर चारा खिलाया जाये, तो वह गन्दी वस्तु चुगने के लिए बाहर नहीं जायेगा। इसी प्रकार यदि मन को उच्च विचार-रूपी खाद्य-पदार्थ, जो कि आध्यात्मिक साहित्य में प्रचुरता से उपलब्ध है, प्राप्त हो जाये तो उसकी रुचि गन्दे और तुच्छ साहित्य में न रहेगी।

फिर भी आप इस बात को ध्यान में रखें कि यद्यपि आध्यात्मिक साहित्य सदा ही सहायक हुआ करता है; किन्तु एक व्यक्ति उससे कितना लाभान्वित होता है, यह उस व्यक्ति की क्षमता

पर निर्भर है। आपको भी उसी सीमा तक लाभ प्राप्त होगा जहाँ तक कि आपके नैतिक चरित्र का स्तर होगा, आध्यात्मिक विषय में आपकी जितनी रुचि होगी और ग्रन्थ तथा उसके लेखक के प्रति आपकी जितनी श्रद्धा होगी। जो बात समस्त आध्यात्मिक साहित्य के लिए सामान्य रूप से सत्य है, वह शिवानन्द साहित्य पर भी चरितार्थ होती है। इसके साथ ही शिवानन्द साहित्य में पापियों तथा नास्तिकों को भी परिवर्तित करने की अपनी विशेषता है और इसका प्रमुख कारण है लेखक की दिव्य शक्ति। स्वामी जी का अभ्याह्वान बहुत ही प्रभावशाली है। उनकी लेखन-शैली बहुत ही सरल है। वे पाठक को सीधे सम्बोधित करते हैं और इस भाँति अपने दिव्य उद्बोधक सन्देशों द्वारा उसके हृदय को स्पर्श कर लेते हैं। वे मलिनता एवं दूषणों पर विजय प्राप्त करने तथा दिव्य बनने के व्यावहारिक उपाय एवं साधन बतलाते हैं। वे आपमें धैर्य, आशा एवं प्रेरणा का संचार करते हैं। वे छात्रों में उनके विकास-स्तर के अनुरूप बात करते हैं और उनके एक परम मित्र और हितैषी के रूप में उन्हें सत्परामर्श देते हैं। वे उन्हें प्रोत्साहित करने तथा उनमें नयी आशा एवं श्रेष्ठतावाद का संचार करने के लिए सदा सीधा मार्ग अपनाते हैं। दोषारोपण तो वे कदाचित् ही करते हैं। इसलिए उनकी पुस्तकें नवयुवकों के लिए रोचक तथा उनके विचार और चरित्र के परिष्कार के लिए प्रभावशाली होती हैं।

महाविद्यालयों में आध्यात्मिक साहित्य

प्रश्न : क्या स्वामी जी की पुस्तकें महाविद्यालय की पाठ्य पुस्तक के रूप में कहीं पर निर्धारित की गयी हैं ?

उत्तर : हाँ, तीन पुस्तकें: 'हिन्दू धर्म' (All About Hinduism), 'विश्व के धर्म' (World Religions) तथा 'वेदान्त सार' (Essence of Vedanta) कैलीफोर्निया के विद्यार्थियों की पाठ्य पुस्तकें हैं। दक्षिण भारत के महाविद्यालय में 'जीवन में सफलता के रहस्य' (Sure Ways for Success in Life and God Realisation) पाठ्य पुस्तक के रूप में स्वीकृत की गयी है। मुझे यह देख कर प्रसन्नता होगी कि गुरुदेव की पुस्तकें और अधिक पाठशालाओं के पाठ्यक्रमों में निर्धारित की जायें; क्योंकि उनकी कृतियाँ उद्बोधक और मानव को देव बनाने वाली हैं। यह सच है कि आजकल विद्यार्थी ईश्वर-विषयक लेखों की अपेक्षा कहानियाँ अधिक पसन्द करते हैं। इस पर स्वामी जी ने 'आध्यात्मिक कहानियाँ' (Spiritual Stories), 'दार्शनिक कहानियाँ' (Philosophical Stories) तथा 'दिव्य कथायें (Divine Stories) आदि पुस्तकें लिखी हैं। इन्हें बालक और बालिकाएँ बहुत ही पसन्द करते हैं। हमारी छात्र, आध्यात्मिक साहित्य और शिवानन्द शिक्षा-संस्थाओं के पाठ्यक्रमों में ये पुस्तकें रखने योग्य हैं।

आधुनिक विद्यार्थियों के लिए पुस्तकें

प्रश्न : आधुनिक कालेजों के विद्यार्थियों के लिए होनी आप गुरु महाराज की कौन-सी पुस्तकों का अभिस्ताव करते हैं।

उत्तर : मैं तो यही कहूँगा कि कालेज के विद्यार्थियों को स्वामी जी की पुस्तकें अधिक से अधिक पढ़नी चाहिए। शिवानन्द साहित्य उन्हें भय, क्रोधादि दुर्गुणों पर विजय प्राप्त करने, दृढ़ मनोबल को विकसित करने तथा जीवन के यथार्थ उद्देश्य को समझने में सहायक होगा। वैसे तो गुरुदेव ने लगभग ३०० पुस्तकें लिखी हैं। जिनमें से विद्यार्थियों को कम-से-कम निम्नांकित पुस्तकें पढ़ने का प्रयास करना चाहिए। इनमें बालक और बालिकाओं के लिए स्वामी जी के उपदेशों का सार है।

१. जीवन में सफलता के रहस्य और भगवत्साक्षात्कार
२. विद्यार्थी जीवन में सफलता
३. ब्रह्मचर्य साधना
४. नैतिक शिक्षा
५. मन और उसका निग्रह
६. आध्यात्मिक पुनरुत्थान
७. प्रेरक सन्देश
८. सद्गुणों के अर्जन और दुर्गुणों के निवारण केउपाय
९. क्रोध पर विजय
१०. भय पर विजय
११. प्राथमिक चिकित्सा
१२. आध्यात्मिक शिक्षावली
१३. शिवानन्द उपदेशामृतम्
१४. विद्यार्थियों के लिए भगवद्गीता
१५. भगवद्गीता की नैतिक शिक्षा
१६. विश्व-शान्ति
१७. विश्व के धर्म
१८. आचरणीय उपदेश

इनमें से कुछ पुस्तकें तो प्रत्येक विद्यार्थी की अपनी चाहिए। शेष पुस्तकें सामूहिक अध्ययन के लिए रखी जा सकती हैं। विद्यार्थियों को अध्ययन-कक्ष स्थापित करना चाहिए। ऐसे अध्ययन कक्षों को चाहिए, कि वे किसी पुस्तकालय से एक पुस्तक निकाल लायें और अपनी पाठशाला की दैनिक बैठकों में क्रमिक रूप से उसे पढ़ें और इस भाँति उस पुस्तक को समाप्त कर डालें। तत्पश्चात् दूसरी पुस्तक प्रारम्भ की जा सकती है। इस भाँति अपने कालेज-जीवन के एक या दो वर्ष में वे अपनी विश्वविद्यालय की शिक्षा के साथ-साथ इस प्रकार के आध्यात्मिक अध्ययन से अपने को प्रचुर ज्ञान-सम्पन्न बना सकते हैं।

उपदेश-सम्बन्धी एक आवश्यक प्रश्न

प्रश्न : विद्यार्थियों के लिए गुरुदेव के उपदेशों का सार क्या है?

उत्तर : यद्यपि मैं विद्यार्थियों तथा युवकों के लिए गुरुदेव के उपदेशों का सम्भवतया सारणीकरण नहीं कर सकूँगा, किन्तु मैं आपको उनकी मुख्य-मुख्य शिक्षाओं को बतलाने का अवश्यमेव प्रयत्न करूँगा।

(क) विद्यार्थियों का सर्वप्रथम कर्तव्य अपना अध्ययन होना चाहिए।

(ख) उन्हें अपने माता-पिता, शिक्षक तथा अपने से बड़ों का सम्मान करना चाहिए।

(ग) उन्हें कुसंगति से बहुत दूर रहना चाहिए; क्योंकि मनुष्य अपने मित्रों के अनुरूप ही बन जाता है। कुसंगति में रहने की अपेक्षा एकान्त सेवन श्रेयस्कर है।

(घ) विद्यार्थियों को आत्म-संयम का अभ्यास करना चाहिए, आत्म-अनुशासन रखना चाहिए और आत्म-विश्वास प्रकट करना चाहिए। ये सद्गुण न केवल उनके कालेज-जीवन में ही लाभदायक होंगे, वरन् उसके पश्चात् भी जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में उन्हें फलप्रद होंगे।

(ङ) विद्यार्थियों को चाहिए कि वे सरल जीवन व्यतीत करें और अपनी उत्कृष्ट राष्ट्रीय एवं सांस्कृतिक परम्पराओं का यथावत् पालन करें। दूसरों की नकल करना छोड़ दें। यह कितने खेद की बात है कि हमारे छात्रगण अपने पूर्वजों से प्राप्त अपनी भव्य संस्कृति की उपेक्षा कर पाश्चात्य फैशन और जीवनचर्या को अपना रहे हैं।

(च) विद्यार्थियों को चाहिए कि वे निर्धन, बीमार और अशिक्षित लोगों की सेवा करें। इससे उनमें निष्कामता, दया, सहनशक्ति आदि सद्गुणों का विकास होगा और प्रौढ़ होने पर वे अपने देश के सुयोग्य नागरिक बन सकेंगे।

(छ) विद्यार्थियों को नियमित तथा समयनिष्ठ होना चाहिए। युवावस्था अत्यन्त मूल्यवान् है, इसे यों ही नष्ट नहीं करना चाहिए।

(ज) विद्यार्थियों को अपने स्वास्थ्य की ओर विशेष ध्यान देना चाहिए। इसके लिए उन्हें चाहिए कि वे सात्त्विक आहार का सेवन करें, आसन और व्यायाम करें तथा खेल में सम्मिलित हों। युवा छात्र और छात्राओं के लिए खेल का मैदान उतना ही आवश्यक है जितना कि अध्ययन-कक्ष। 'काम के समय काम करो, खेल के समय खेलो; क्योंकि आनन्द और सुख का यही मार्ग है।' विद्यार्थियों को नैतिक शुद्धता और ब्रह्मचर्य में संस्थित होना चाहिए।

(झ) छात्रों को सदा भगवान् का स्मरण करना चाहिए। उन्हें नित्य प्रार्थना करनी चाहिए। प्रत्येक कार्य को आरम्भ और समाप्त करते समय भगवान् को स्मरण करना चाहिए।

इससे ऐसा भाव न बना लीजिए कि स्वामी जी विद्यार्थियों के प्रति बहुत ही कठोर हैं। मैंने यहाँ जो कुछ कहा है, वह प्रायः अन्य लोगों पर भी लागू होता है। स्वामी जी यदि कभी भी पक्ष लेते हैं तो नवयुवकों का ही। उनके प्रति अत्यधिक प्रेम के कारण तथा उनके कल्याण के विचार से ही वे उन्हें ये सम्मति देते हैं। अतः उनकी शिक्षाओं का अक्षरशः पालन करना आपके लिए सर्वथा उचित ही है।

स्वामी जी द्वारा रचित 'अठारह सद्गुणों का गीत' कण्ठस्थ कर लीजिए। युवकों के लिए उनके उपदेशों का सार अल्प शब्दों में ही उपलब्ध हो जायेगा।

शिवानन्द और विश्व-शान्ति

प्रश्न : क्या गुरुदेव ने अपने ग्रन्थों में विश्व-शान्ति पर भी कुछ प्रकाश डाला है? स्वामी जी! शिवानन्द साहित्य ने विश्व शान्ति के संस्थापन कार्य में कहाँ तक योगदान दिया है?

उत्तर : हाँ, गुरुदेव ने विश्व-शान्ति और राष्ट्रों की मैत्री का केवल अपने ग्रन्थों में वर्णन ही नहीं किया है, वरन् इस विषय पर एक बृहदाकार पुस्तक ही लिख डाली है। पुस्तक का नाम ही 'विश्व-शान्ति' है। स्वामी जी ऐसी अनेकों संस्थाओं के निरन्तर सम्पर्क में रहे हैं जिनका कार्य ही विश्व-शान्ति स्थापन में सहयोग देना है। स्वामी जी इन संस्थाओं को अपना असाम्प्रदायिक साहित्य निर्मूल्य भेजते रहते हैं और साथ ही विशेष अवसरों पर अपना प्रेरणादायी सन्देश भी भेजते हैं। इस भाँति उनका शान्ति-संदेश विश्व भर में प्रसारित होता है।

आध्यात्मिकता और दिव्य जीवन पर आधारित स्वामी जी का शान्ति, प्रेम तथा एकता का सन्देश यूरोप, जापान तथा उन देशों में विशेष सराहना प्राप्त कर चुका है जिन्हें गत विश्व युद्ध में भारी क्षति उठानी पड़ी थी। अपने साहित्य द्वारा लोगों को प्रभावित करने के अतिरिक्त वे कभी-कभी उन्हें एक सामान्य मंच पर एकत्रित करते हैं जिससे कि उनके पारस्परिक बातचीत से इसकी तथा इसी प्रकार की अन्य समस्याओं का समाधान खोजा जा सके। श्री स्वामी शिवानन्द जी के सभी उपदेश अहिंसा, भ्रातृत्व भावना, विश्व-प्रेम, निष्काम सेवा, करुणा, भलाई और क्षमा के आदर्श पर निरन्तर बल देते हैं। वे ओजपूर्ण शब्दों मैं धार्मिक जीवन, समता और अखिल मानव जाति में सहयोग के आदर्श का समर्थन करते हैं। इसी भाँति उनके उपदेश शान्ति और सद्भावना का मार्ग प्रशस्त करते हैं।

विद्यार्थियों को उपदेश

आप मातृभूमि के भविष्य की आशा हैं। आप कल के नागरिक हैं। आपको हमेशा जीवन के लक्ष्य के विषय में सोचते रहना चाहिए तथा उसे प्राप्त करने के लिए जीना चाहिए। **जीवन का लक्ष्य है-सभी प्रकार के दुःखों से मुक्ति अर्थात् कैवल्य-स्थिति अथवा जन्म-मृत्यु के चक्र से मुक्ति। सुसंयमित जीवन यापन करें। आध्यात्मिक उन्नति का आधार है नैतिक बल ।** नैतिक संस्कृति आध्यात्मिक साधना का अंग है। ब्रह्मचर्य व्रत रखें। प्राचीनकाल में बहुत से ऋषि-मुनियों ने ब्रह्मचर्य पालन करने से अमरत्व प्राप्त किया। ब्रह्मचर्य ही नयी स्फूर्ति, बल, सजीवता, जीवन में सफलता तथा अन्ततः परम शान्ति का स्रोत है। ब्रह्मचर्य प्राण-शक्ति है। प्राण-शक्ति की रक्षा करने हेतु विशेष सावधानी रखें। ब्रह्मचर्य से सुन्दर स्वास्थ्य, आन्तरिक शान्ति, मन की शान्ति तथा दीर्घायु प्राप्त होती है। यह मस्तिष्क तथा नाड़ी-तन्त्र को स्फूर्ति देता है और मानसिक तथा शारीरिक शक्ति का संचय करने में सहायता प्रदान करता है। इससे शक्ति तथा साहस की वृद्धि होती है। जीवन के दैनिक संघर्षों में यह कठिनाइयों को झेलने की सामर्थ्य प्रदान करता है। एक पूर्ण ब्रह्मचारी ज्ञानदेव की तरह पूरे विश्व को हिला सकता है तथा प्रकृति और पंचतत्त्वों पर नियन्त्रण स्थापित कर सकता है।

वेदों तथा मन्त्र-शक्ति में विश्वास करें। नित्य ध्यान का अभ्यास करें। सात्त्विक भोजन लें। अधिक न खायें। अपनी त्रुटियों के लिए पश्चात्ताप करें। अपने दोषों को स्वेच्छा से स्वीकार

करें। झूठे बहाने बना कर या झूठ बोल कर अपने दोषों को कभी भी न छिपायें। प्रकृति के नियमों का पालन करें। नित्य पर्याप्त शारीरिक व्यायाम करें। निश्चित समय पर अपने निश्चित कर्तव्य-कर्मों को करें, 'सादा जीवन, उच्च विचार' अपनायें। तुच्छ नकल का परित्याग करें। बुरी संगति से प्राप्त बुरे संस्कारों को पूर्णतः धो दें। उपनिषद्, ब्रह्मसूत्र, योगवासिष्ठ तथा शास्त्रों का स्वाध्याय करें। इन्हीं ग्रन्थों के स्वाध्याय से आपको सच्चा सुख तथा शान्ति मिलेगी। पाश्चात्य दार्शनिकों ने यह घोषणा की है-"**हम जन्म तथा धर्म से ईसाई हैं, लेकिन हमें मन की शान्ति तथा आत्मा का सुख पूर्व के द्रष्टाओं के उपनिषदों में ही मिलता है।" सबके साथ मैत्री-भाव से विचरण करें। सबको प्यार करें। सबकी सेवा करें। अपने में अनुकूलनशीलता तथा निस्स्वार्थ सेवा विकसित करें। अथक सेवा से दूसरों के हृदय में प्रवेश करें। यही अद्वैत एकता की वास्तविक प्राप्ति है।**

*****

चरित्र ही शक्ति है

चरित्र ही शक्ति है। चरित्रहीनता व्यावहारिक दृष्टि से मृत्यु ही है। **कर्म से चरित्र बनता है। चरित्र से इच्छा-शक्ति बनती है।**

गुणवान् व्यक्तियों का आभूषण चरित्र है। स्त्री का वास्तविक आभूषण तथा सुरक्षा चरित्र ही है।

आपके विचार तथा कार्य आपके चरित्र और भविष्य का निर्माण करते हैं। जैसा आप सोचेंगे, वैसे ही आप बनेंगे। यदि आप श्रेष्ठ विचारों का चिन्तन करेंगे तो आप श्रेष्ठ बनेंगे तथा आपमें अच्छे चरित्र का विकास होगा। यदि आप बुरा सोचेंगे तो आपका जन्म बुरे चरित्र के साथ होगा, आपमें बुरा चरित्र पैदा होगा। यह प्रकृति का अकाट्य नियम है। इसी क्षण से अपने चिन्तन का तरीका तथा मानसिक दृष्टिकोण बदल डालें। सम्यक् चिन्तन विकसित करें। शुद्ध सात्त्विक इच्छा रखें। विचारों के रूपान्तरण से आपका जीवन रूपान्तरित हो जायेगा।

अच्छे कर्म करें। मन में दिव्य तथा उदात्त विचारों को प्रश्रय दें और अपने चरित्र का निर्माण करें। एकमात्र यही शुद्ध पवित्र इच्छा रखें कि आप जन्म-मृत्यु के चक्र से मुक्ति पा जायें। घृणा को आमूल नष्ट कर दें। प्रेम और करुणा की आभा फैलायें। केवल शुद्ध प्रेम ही घृणा तथा शत्रुता पर विजयी हो सकता है। इस विश्व में सच्चा प्रेम ही एकमात्र सबसे महान् एकताकारी तथा मोचक शक्ति है। सभी वस्तुओं में आत्मा की उपस्थिति का अनुभव करें।

आपका चरित्र आपके मन द्वारा पोषित विचारों की तथा अपने आदर्शों के मानसिक चित्रों की गुणवत्ता पर निर्भर है। यदि आपके विचार निकृष्ट हैं तो आपका चरित्र खराब होगा। यदि आपके मन में श्रेष्ठ विचार और उदात्त आदर्शों के पवित्र चित्र हैं तो आपका चरित्र महान् होगा।

आपका व्यक्तित्व चुम्बक की तरह आकर्षक बन जायेगा। आप आनन्द, शक्ति तथा शान्ति के केन्द्र-बिन्दु हो जायेंगे। यदि आप अपने अन्दर दिव्य विचारों को विकसित करने का अभ्यास करें तो सभी निम्न विचार धीरे-धीरे स्वतः नष्ट हो जायेंगे। जिस प्रकार सूर्य के समक्ष अन्धकार नहीं टिक सकता, उसी प्रकार दिव्य विचारों के समक्ष बुरे बिचार नहीं टिक सकते। विद्यालयों में नैतिक शिक्षा के प्रशिक्षण से अधिक महत्त्वपूर्ण है बच्चों का घर में प्रशिक्षण। यदि माँ-बाप अपने बच्चों के चरित्र के विकास का ध्यान रखते हैं तो नैतिक शिक्षा का प्रभाव उपजाऊ भूमि में अच्छे बीज बोने की तरह होगा। जब बच्चे युवावस्था में प्रवेश करेंगे तब वे आदर्श मानव बनेंगे।

माता-पिता ही एकमात्र अपने बच्चों के चरित्र के लिए उत्तरदायी हैं। यदि माता-पिता धार्मिक नहीं हैं तो उनके बच्चे भी धार्मिक नहीं होंगे। अतः माता-पिताओं का यह परम कर्तव्य है कि वे अपने बच्चों को बाल्यावस्था में धार्मिक प्रशिक्षण प्रदान करें! उन्हें स्वयं दिव्य जीवन व्यतीत करना चाहिए। जब बाल्यावस्था में धार्मिक संस्कार डाले जाते हैं तो उनकी जड़ें बहुत गहरी होती है तथा वे पुष्पित और पल्लवित हो कर युवावस्था में फल देते हैं।

सद्गुण से बढ़ कर कोई भी धर्म नहीं है। सद्गुण से ही शान्ति मिलती है। सद्गुण समृद्धि तथा जीवन से भी बढ़ कर है। **सद्गुण ही आनन्द का द्वार है।** अतः सदैव गुणवान् बनें। सद्गुण आपके जीवन का मुख्य आधार हो!

****

गुरु अमरणशील है

इंग्लैण्ड के राजतन्त्र में एक महान् परम्परा है कि 'सिंहासन कभी रिक्त नहीं रहेगा देश कभी भी बिना राजा के नहीं रह सकता।' मरणासन्न राजा के अन्तिम श्वास लेते ही तुरन्त उत्तराधिकारी को राजा बना दिया जाता है और घोषणा की जाती है-"राजा की मृत्यु हो गयी है। राजा की दीर्घायु हो!" यह अयुक्ताभास लगता है, पर नहीं : राजा की मृत्यु हो गयी है, पर राजा अनुपस्थित नहीं है, क्योंकि उत्तराधिकारी ने उस राज्य के राजा के रूप में स्थान पा लिया है।

इस घोषणा पर विचार करो, "राजा की मृत्यु हो गयी है, राजा की दीर्घायु हो।" जब लौकिक व्यवस्था में राजा एक क्षण के लिए भी अनुपस्थित नहीं रहता, तो क्या आध्यात्मिक क्षेत्र में इस प्रकार का अभाव रह सकता है? क्या उनकी उपस्थिति की खोज होती है? क्या हम इस सोच के लिए हैं कि हम बिना गुरु के हैं, गुरु का देहावसान हो गया है? गुरु था और अब नहीं है? क्या हम इंग्लैण्ड की सकारात्मक परम्परा से किसी प्रकार कम है? क्या लौकिक तन्त्र एक पग आगे है और हम एक पग पीछे हैं? यह चिन्तन हास्यास्पद है कि ऐसा भी हो सकता है।

गुरु कभी गतप्राण नहीं हो सकते; क्योंकि वह अपने शिष्यों के माध्यम से जीते हैं। वह इसीलिए इतना जीवन्त हैं कि वह अपने आदर्शों, अपने विचार, दृष्टि-प्रवृत्ति और धर्मबुद्धि के रूप में अपने शिष्यों के माध्यम से अपना जीवन व्यतीत करते हैं। जीवन के लक्ष्यों और उद्देश्यों को पाने के लिए निरन्तर अथक परिश्रम करते रह कर शिष्य अपने गुरु को जीवित रखते हैं। मोमबत्ती का चमकता हुआ प्रकाश दूसरी मोमबत्ती को प्रकाश देने पर उसका प्रकाश कभी कम नहीं होता। यह स्वयं बुझ कर कभी दूसरी मोमबत्ती के माध्यम से पूर्ण प्रकाश के साथ प्रकाशित रहती है।

इसका ध्यानपूर्वक मनन करो। तुम ही वह व्यक्ति हो जिसके माध्यम से गुरु जीवित हैं। यह गौरव की बात है। तुम्हें यह सुविधा मिली है। यह एक बड़े सौभाग्य की बात है। यह एक उत्तरदायित्व भी है; यह एक कर्तव्य है; यह एक सत्य है जिसे समझ कर उसे सदा मन में रखना है- "मुझे उसी प्रकार का जीवन-निर्वाह करना चाहिए, जैसी गुरु ने मुझे शिक्षा दी थी। मुझे उसी प्रकार का जीवन जीना चाहिए, जैसा मेरे गुरु जीते थे।" पर...

किसी भी तरह से 'लेकिन' तो सदा रहता ही है। तुम अपनी पहली घोषणा को फिर से 'लेकिन' नहीं कर सकते; लेकिन गुरुदेव ने वस्तुतः स्वयं अनेकों बार कहा है-"जो मैंने किया है, उसे मत करो; पर जैसा मैं कहता हूँ, वैसा करो। जो मैं तुमसे कहता हूँ, वैसा करो। मैंने तुम्हें कुछ निर्देश दिये हैं, उनका पालन करो। मेरी नकल करने की आवश्यकता नहीं है। तुम मेरी समानता कर सकते हो। तुम मेरे स्वभाव के अनुरूप अपना स्वभाव, चरित्र, मेरे- जैसी उदात्त आदर्श दिनचर्या, मेरे-जैसा आध्यात्मिक व्यक्तित्व बना सकते हो। पर मेरी नकल मत करो। स्पर्धा करो। जिज्ञासा करो।"

नकल करना और स्पर्धा करना, यह दो शब्द हैं। प्रत्येक शिष्य को इन दोनों के बीच के भेद को समझ लेना चाहिए। शंकराचार्य ने अपने सिर पर अपने कपड़े को एक प्रकार से रखा था। आज बहुत से व्यक्ति उस प्रकार से अपने सिर पर कपड़ा रख कर उनकी नकल करते हैं। इसे शिष्यत्व नहीं कहते, इसे आध्यात्मिक समानता नहीं कह सकते; उन्होंने अपनी पुस्तक 'विवेकचूडामणि' और 'आत्मबोध' लिखते समय ऐसा नहीं सोचा होगा कि वह उसे इस रूप में

लेंगे। उन्होंने पहनावे की नकल करने के लिए नहीं लिखा होगा। यदि इस रूप में गुरु के समान रहने का निश्चय करेंगे, तो आपको बुरी तरह से असफल होना पड़ेगा।

गुरु तुम्हारे हृदय में निवास करते हैं, उनका उदात्त आशीर्वाद, उनकी आध्यात्मिक शिक्षाओं की गूँज तुम्हें अपने भीतर आध्यात्मिक विकास के रूप में करनी चाहिए। उनके चरित्र और आचरण की उदात्तता तुम्हारे मन में बसनी चाहिए। उनका दिव्य स्वभाव तथा जैसा दिव्य जीवन उन्होंने जिया है, वैसे ही तुम्हें रहने के लिए अपना मन बनाना चाहिए। तुम्हें देख कर ही तुम्हारे गुरु के देवत्व की पहचान हो जाये, ऐसा जीवन व्यतीत करना चाहिए। गुरुदेव ने इसीलिए कहा है-"मैंने तुमसे

जो-कुछ कहा है, वह करो। वह मत करो जो मैं करता था; क्योंकि मैं उसे दूसरे स्तर से करता था।" गुरुदेव ने यह भी कहा था- "आदर करने की अपेक्षा आज्ञा-पालन अच्छा 31 ^ 11 इसी प्रकार यदि शिष्य अनुकरण और स्पर्धा दोनों के भेद को जानता है, तो उसे उत्साह के साथ अनुकरण और आज्ञा-पालन करना चाहिए, तब गुरु का देहावसान कभी नहीं होगा। जब तक आप सब उनके जैसे सच्चे संघर्षरत, सदा अपने विचारों, शब्दों और कार्यों से उनकी शिक्षाओं के सारतत्त्व को ग्रहण करके दिव्य जीवन के पथ पर चलने के लिए तत्पर हैं, तब तक गुरुदेव श्री स्वामी शिवानन्द जी जीवित रहेंगे।

कौन कह सकता है कि स्वामी शिवानन्द जी थे और अब नहीं हैं। वह हैं तथा सदा रहेंगे। क्यों? क्योंकि आप सभी उनका प्रतिनिधित्व कर रहे हैं, उनका प्रकाश अब आपका प्रकाश है; उनका उत्तम पक्ष, उनका दिव्य जीवन सभी कुछ अब आपका अंग है। इसलिए वह जिस प्रकार से रहते थे, उसी स्वरूप को उनके शिष्य, सैकड़ों-सहस्रों व्यक्तियों को उस प्रकार से रहने की प्रेरणा दे रहे हैं।

यह एक बहुत बड़ी सुविधा है। यह एक महान् गुरु-सेवा है। आप भी इसी प्रकार से स्वयं को व्यस्त रखें। ईश्वर करे, आप हर चरण पर विवेक के साथ उत्साहपूर्वक उनका अनुकरण करते रहें। ऐसा न हो कि उनकी नकल करते हुए कहीं मार्ग से भटक न जायें।

यदि इंग्लैण्ड के लिए राजा नहीं मर सकता, तो **आध्यात्मिक संसार में गुरु भी कभी नहीं मर सकता। गुरु अमरणीय है। शिष्य गुरु के प्रकाश को सुरक्षित रखता है। गुरु की प्रेरणा, ज्ञान की शिक्षाएँ अनन्त काल तक मानव-समाज के सभी मनुष्यों में पूरी तरह से गुरु को उपस्थित रखेंगी।**

गुरु अपने प्रत्येक शिष्य के माध्यम से प्रकाशित हो कर जीवित रहते हैं। इसीलिए आप सभी स्वामी शिवानन्द जी के आदर्श और दिव्य जीवन के जीवित प्रकाश हैं। ईश्वर करे, परमेश्वर और गुरुदेव की कृपा और आशीर्वाद से आप बड़े प्रभावशाली ढंग से पूर्णतया सफलता के साथ सारी मानव जाति के कल्याणार्थ ऐसा करने में सफल हों!

* ** *

गुरुदेव ने हमें क्या शिक्षा दी!

विभिन्न गुरु आ कर भिन्न-भिन्न प्रकार की प्रणालियाँ बताते और पथ दशति हैं। कोई कीर्तन का मार्ग बताते हैं, कोई शक्तिपात करते हैं, कुछ कुण्डलिनीयोग, कई अन्य आत्म-संयम, प्रार्थना, उपासना, स्वाध्याय और ध्यान के पारम्परिक पथ दर्शाते हैं। अब हमारे समक्ष प्रश्न हो सकता है-"हमारे लिए गुरुदेव कौन-सा मार्ग बतलाते हैं और हमें उनके जीवन तथा उनके ऊर्जास्पद व्यक्तित्व को किस भाँति अपने व्यक्तिगत जीवन में अभिव्यक्त करना चाहिए?"

इस विषय में गुरुदेव ने अत्यन्त स्पष्ट रूप से हमारे लिए एक निश्चित मार्ग प्रस्तुत किया है। उन्होंने कहा- "**आप दिव्य हैं; अतः जो आप हैं, वही रहें। अपनी दिव्यता के प्रति जागरूक रहें और दिव्यतापूर्वक जीवन जियें। आपका मूल स्रोत दिव्य है; अतः दिव्यानुभूति को ही अपना परम लक्ष्य बनायें। जहाँ से आप आये हैं, उसी को निश्चित रूप से आपने पुनः प्राप्त करना है। यह आपका प्रारब्ध है और यही आपकी महान् अन्तिम परिणति भी है।**"

अतः उन्होंने 'दिव्य' और 'दिव्यता' शब्दों पर बल दिया। निश्चित रूप से आप दिव्य हैं। अस्थि-मांस का पिंजरा नहीं हैं आप। यह अशुद्ध, चंचल, परिवर्तनशील और अस्थिर मन भी आप नहीं हैं। न ही आप यह सीमित, कभी युक्तिसंगत और कभी अयुक्तिसंगत हो जाने वाली अविश्वसनीय बुद्धि हैं। आप शरीर, मन और बुद्धि से परे, परम पिता परमात्मा की सन्तान, समस्त अन्धकार से परे ज्योतियों की परम ज्योति की एक प्रकाश-किरण, सत्-चित्-आनन्द-स्वरूप परम चैतन्य के असीम सागर की एक तरंग हैं। आप परमात्मा का एक अंश हैं। दिव्यता आपका जन्मसिद्ध अधिकार है। यह जीवन उसी दिव्यता की जागरूकता और उसकी अनुभूति प्राप्त करने का एक सुअवसर है। अतः दिव्य जीवन जियें। दिव्यता आपका लक्ष्य है। दिव्यता आपकी मूल प्रकृति है। दिव्यता से आपका जीवन भर जाना चाहिए। अतः अपने जीवन को दिव्य बनायें।

इसके लिए उन्होंने अत्यन्त स्पष्ट निर्देश दिया है, आगे बढ़ने के लिए निश्चित मार्ग बताया है और उन्होंने इसके सारतत्त्व के रूप में अपने सन्देश के केन्द्रीय भाव को तीन सूत्रों के रूप में

जीवन में उतार लेने के लिए बता दिया-सम्पूर्ण प्राणी-वर्ग के प्रति विश्व-प्रेम तथा दया; काया-वाचा-मनसा सत्यता; और दैनिक जीवन में उदात्त, उच्च तथा शुद्ध चरित्र और व्यवहार।

उन्होंने हमें इन नियमों का पालन करने के लिए कहा। ये विश्व के समस्त धर्मग्रन्थों की शिक्षा का सारतत्त्व हैं। ईश्वर के सभी पीर, पैगम्बरों और मसीहाओं के उपदेशों का भी यही सार है। अतः ये तीनों धर्म का आधार, वेदान्त का आधार, योग का आधार, आध्यात्मिकता का आधार और ईश्वरानुभूति का आधार बनाते हैं। जो कुछ गुरुदेव ने कहा, उसके सम्बन्ध में उन्हें कोई शंका नहीं थी और जैसा वे चाहते थे कि हमें होना चाहिए, वह बता कर उन्होंने हमें भी किसी दुविधा में नहीं छोड़ा।

ये तीन सूत्र उन्होंने बनाये -अहिंसा, सत्य और पवित्रता, जो कि दिव्य जीवन संघ के सदस्य के लिए पूर्वापेक्षित हैं। उन्होंने यह भी सिखाया कि हमें हृदय, बुद्धि और हाथों का समन्वयात्मक और सुव्यवस्थात्मक विकास अपने दैनिक जीवन के प्रत्येक कार्य में, अपनी भावनाओं में और अपने आन्तरिक अनुशासन में करना चाहिए। वे चाहते थे कि हम इसके साथ-साथ सेवापरायणता की भावना, ईश्वर के प्रति श्रद्धा और विश्वास, इन्द्रिय-संयम, ध्यान के लिए मन की एकाग्रता और नियन्त्रण तथा दार्शनिक जिज्ञासा हेतु जागरूकता और सतर्कता को विकसित करें।

इस प्रकार यह एक जीवन्त आध्यात्मिक शक्ति है, जिसे प्रतिष्ठित करके वे हमारे लिए छोड़ गये हैं। इस शक्ति के रूप में वस्तुतः वे ही कार्य कर रहे हैं। दिव्य जीवन यापन के इस आलोक के रूप में वे ही कार्यशील हैं। जो व्यक्ति इन नियमों का अनुसरण करता है, वह गुरु की ही उपासना करता है और वह अपने लक्ष्य को प्राप्त कर लेगा। इसमें कुछ भी शंका नहीं है। या तो अभी ही अथवा कुछ समय पा कर भविष्य में निश्चय ही वह अपने लक्ष्य को अवश्य पा लेगा।

इस प्रकार 'शिवानन्द जीवन पद्धति' से जीवन यापन करने का रहस्य है दिव्यता। प्रत्येक क्षेत्र में, प्रत्येक वस्तु में, समस्त जीवन में पूर्णरूपेण दिव्यता। और, यह जानने के लिए सभी धर्मग्रन्थों का ज्ञान प्राप्त करना होगा कि दिव्यता की परिभाषा क्या है, और दिव्यता के अर्थ क्या हैं, दिव्यता के प्रतिकूल क्या-क्या है? हमारे जीवन को उदात्त बनाने के लिए, हमें ईश्वर की ओर ले जाने के लिए और हमें अपना जीवन परम आनन्द से विभूषित करने के लिए यह एकमात्र सूत्र-दिव्यता- ही पर्याप्त है।

यह है जो पूज्य गुरुदेव ने हमें दिया है और जो हमने उनसे ग्रहण किया है। यही वह सूत्र है जिससे हमारा जीवन और जीवन यापन का हमारा ढंग सम्पन्न होना चाहिए। उनके आह्वान का हमारा यही उत्तर होगा और हमारे शिष्यत्व का प्रमाण भी। यही शिक्षा देने के लिए वे आये थे। यह हमारी पैतृक सम्पदा है। अपने इस उत्तराधिकार को हमने प्राप्त करना है। आओ, हम सब अपने इस उत्तराधिकार को प्राप्त करें और उस दिव्यता से प्रकाशित हो जायें जो हम वास्तव में हैं!

प्रभु-कृपा और गुरु के आशीर्वाद तभी लाभप्रद होते हैं यदि आपके अपने सच्चे और गहन प्रयत्न द्वारा उनका अनुसरण हो। जो आवश्यक है, वह हम क्यों नहीं करते?

केवल उस एक आवश्यक कार्य जिसके लिए हम यहाँ आये हुए हैं-को छोड़ कर अन्य दर्जनों विभिन्न कार्यों में हम व्यस्त रहते हैं। इसीलिए ईश्वर साक्षात्कार लुप्तप्राय हो गया है।

जो आवश्यक है, वह हमें करना ही पड़ेगा। ईश्वर की कृपा है, यह मैं आपको विश्वास दिलाता हूँ। यहाँ आपमें से प्रत्येक के जीवन में ईश्वर की कृपा पर्याप्त मात्रा में है। यह मैं बलपूर्वक निर्भीकता से कहता हूँ। पूर्ण विश्वास के साथ मैं इस सत्य का समर्थन करता हूँ कि आप आशीर्वादित हैं। आपके जीवन में प्रभु की दिव्य कृपा अपार मात्रा में है और गुरुदेव का वरदहस्त, उनकी दयापूर्ण दृष्टि आप पर है; इसमें कुछ भी सन्देह नहीं है। अब शेष आप पर है कि आप उस अनुकम्पा और आशीर्वाद की विद्यमानता को पहचानें और जो आवश्यक है, वह करें।

-स्वामी चिदानन्द

बीस महत्त्वपूर्ण आध्यात्मिक नियम

आराध्य एवं श्रद्धेय श्री गुरुदेव के समक्ष हम प्रातःकाल की इस शान्त बेला में प्रार्थना और ध्यान के लिए एकत्रित हुए हैं। पूज्य गुरुदेव के चरणकमलों में मेरी सविनय प्रार्थना है कि ये जिज्ञासु आत्माएँ, जिन्होंने ईश्वर की दिव्य अनुकम्पा से तथा आप जैसे ज्ञानी गुरुओं के आशीर्वाद से तथा पूर्व में किये गये सकारात्मक शुभ कर्मों के फलस्वरूप आध्यात्मिक जीवन में प्रवेश किया है, वे इस अद्‌भुत सौभाग्य का पूर्णरूप से लाभ उठायें। यह बेकार न जाये। यह व्यर्थ न जाये, वे इस अमूल्य बात से अनभिज्ञ न रह जायें। उपरोक्त तीन तत्त्वों से युक्त होने के कारण, लाखों में से कुछ भाग्यशाली आत्माएँ ऐसा जीवन धारण करती हैं जहाँ वे अच्छाई को ग्रहण करती हैं, जहाँ वे ऐसी वस्तु की खोज करती हैं जो उन्हें परमानन्द की उच्च अवस्था में ले जाये, चाहे वह आकर्षक नहीं लगता हो और चाहे वह सुखद प्रतीत न होता हो। इसलिए इस मार्ग को कुछ भाग्यशाली आत्माएँ ही चुनती हैं। गुरुदेव! मेरा यह विश्वास है कि हम इस समय ऐसी विलक्षण आत्माओं की सभा में बैठे हैं, जिनको उनके शुभ कर्म उत्तराखण्ड में, पवित्र माँ गंगा के तट पर, ऋषियों के क्षेत्र हिमालय में और आपके पावन आश्रम की पवित्र भूमि पर ले आये हैं, आप उनके आन्तरिक ज्ञान को, उनके विवेक को, विचार शक्ति को, उनकी सही दृष्टि को जाग्रत कीजिए जिससे वे वस्तुओं को सही रूप में देखें और जो अमूल्य है उसके मूल्य को जानें और इस प्रकार अपने जीवन को श्रेष्ठ तथा धन्य बनाएँ।

हम विचार करें कि हमारे महान् गुरुदेव श्री स्वामी शिवानन्द जी महाराज ने हमें क्या करने को कहा है; उन्होंने हमें क्या करने के लिए निर्देश दिये हैं; हमारे जीवन का ढंग, हमारा व्यवहार तथा हमारे कार्य कैसे होने चाहिए? सम्भवतः किसी अन्य गुरु की तुलना में उनके पास कहने को बहुत कुछ था। यहाँ तक कि उनके जीवनकाल में ही उन्होंने आधुनिक जगत् को अपनी प्रज्ञायुक्त शिक्षाएँ दीं। हम विशिष्ट अर्थों में उनकी शिक्षाओं के उत्तराधिकारी हैं क्योंकि हम उनके

आध्यात्मिक आन्दोलन तथा उनकी आध्यात्मिक संस्था दिव्य जीवन संघ (Divine Life Society) से सम्बन्धित हैं। सम्भवतः इस अर्थ में हम विशिष्ट हैं।

अनेक आधुनिक सन्त-महात्माओं जैसे अरविन्द घोष, श्री रमण महर्षि, स्वामी रामदास, आनन्दमयी माँ, अवधूत नित्यानन्द, मुक्तानन्द बाबा, मलयाला स्वामी जी जिन्होंने बीसवीं शताब्दी में भारत को सुशोभित किया है, सम्पूर्ण विश्व ने उनकी प्रज्ञायुक्त शिक्षाओं को विरासत में प्राप्त किया है। उन्होंने कार्य किया तथा उन्होंने अपने सन्देश की घोषणा सम्पूर्ण विश्व में की। लोगों के उस समूह के लिए, जिन्होंने अपने आपको इनमें किसी एक महान् सन्त-महात्मा के साथ सम्बद्ध किया है उनके लिए इनकी शिक्षाएँ एक विशेष विरासत बन जाती है। रामकृष्ण मिशन के समस्त भक्त, सदस्य, ब्रह्मचारी, संन्यासी जिन्होंने इस मिशन के अध्यक्ष से दीक्षा ली है, स्वाभाविक रूप से उनकी शिक्षाओं के विशेष उत्तराधिकारी बन जाते हैं। तिरूवन्नामलाई के रमण महर्षि के भक्त स्वाभाविक रूप से उनकी शिक्षाओं के विशेष उत्तराधिकारी बन जाते हैं और उनका इन शिक्षाओं के प्रति एक विशेष दायित्व हो जाता है। इसी प्रकार भाग्य अथवा ऋणानुबन्ध-सम्बन्ध अथवा पूर्व-जन्म-कर्म- सम्बन्ध के कारण हमारा स्वामी शिवानन्द जी महाराज से, जो एक सन्त, गुरु व आध्यात्मिक पथ-प्रदर्शक हैं, उनसे एक विशेष, सीधा व व्यक्तिगत सम्बन्ध स्थापित हो गया है और वे हमारे जीवन का एक अंग बन गये हैं। वे हमारे जीवन का कितना अंग बन गये हैं यह हमें दैनिक व्यवहार में प्रदर्शित करना होगा। वे हमारे जीवन का कहाँ तक भाग बन गये हैं यह न केवल हमारे उनके प्रति भाव तथा भावात्मक सम्बन्ध के द्वारा प्रदर्शित करना होगा जो निःसन्देह इसका अंग है, बल्कि हमें अपने मन, विचारों, विवेक शक्ति के प्रयोग के ढंग को भी रूपान्तरित करके प्रदर्शित करना होगा। उन्होंने हमें विचार और विवेक के लिए पर्याप्त सामग्री दी है।

जो लोग श्री अरविन्द घोष के अनुयायी हैं वे मनोतीत योग (Supramental Yoga) पर चिन्तन, विचार, मनन व अनुसन्धान करते हैं। जो लोग रमण महर्षि से सम्बन्धित हैं, वे चिन्तन, मनन व निदिध्यासन करते हैं और सीधे विचार मार्ग द्वारा अन्वेषण करते हैं-'मैं कौन हूँ।' जो लोग किसी अन्य महात्मा से सम्बन्धित हैं, वे उनके द्वारा बताये गये मार्ग पर चलते हैं। जो लोग निसर्गदत्ता, महर्षि महेश योगी, मुक्तानन्द बाबा से सम्बन्धित हैं, वे सिद्ध-योग के मार्ग पर चलते हैं, ॐ नमः शिवाय का जप करते हैं और शक्तिपात में विश्वास करते हैं। चैतन्य महाप्रभु के गौड़ सम्प्रदाय के अनुयायी संकीर्तनयोग को अपनाते हैं, उन्होंने इसे विशेषरूप से विरासत में प्राप्त किया है क्योंकि वे महान् सन्त चैतन्य महाप्रभु के अनुयायी हैं। वे दूसरों को भी ऐसा करने के लिए कहते हैं। परन्तु पहले वे स्वयं इसका अनुकरण करते हैं, इसलिए वे दूसरों में भी इसका प्रचार करते हैं। वे किसी को विवश नहीं करते। वे प्रचार करते हैं क्योंकि सबको प्रेरणा देना उनका कर्तव्य है। वे यह भी जानते हैं कि दूसरे भी अपने गुरु के बताये हुए मार्ग पर चलेंगे।

हमें विरासत में भक्ति, ध्यान और आत्म-ज्ञान के तीन मुख्य मार्गों का समन्वय प्राप्त हुआ है जो कि तीनों का एक सुन्दर सम्पूर्ण समन्वय है। एक सुव्यवस्थित सम्मिश्रण है। इसलिए हमें विचार का प्रयोग करना होगा। इसके साथ गुरुदेव ने हमें व्यवस्थित ढंग से महत्त्वपूर्ण आध्यात्मिक नियम भी दिये हैं। यह उनकी विशिष्ट देन है। उन्होंने कहा, 'आपको अपना दैनिक जीवन इस आदर्श के अनुरूप ढालना है। आप प्रातःकाल जल्दी उठिए, थोड़ा सा ध्यान कीजिए, थोड़ा सा जप कीजिए, थोड़ा सा कीर्तन कीजिए। प्रतिदिन प्रातःकाल थोड़ी देर आसन व प्राणायाम कीजिए, उसके पश्चात् दिनचर्या प्रारम्भ कीजिए।' यह उनकी विशिष्टता है कि उन्होंने हमको पूर्ण, त्रुटिरहित, निश्चित, स्पष्ट निर्देश दिये हैं जिसमें कोई सन्दिग्धता नहीं है। इसमें दैनिक कार्यक्रम स्पष्टरूप से

दिया गया है, दर्शाया गया है। यदि हम, जो कि विशिष्टरूप से उनकी शिक्षाओं के उत्तराधिकारी हैं और जो उनके जीवनकाल में उनसे सीधे व व्यक्तिगत रूप से सम्बन्धित रहे हैं, यदि उनकी शिक्षाओं के अनुसार अपने जीवन को ढालने का प्रयत्न या कम से कम कठिन प्रयास नहीं करेंगे, तो फिर कौन करेगा? हम किसी अन्य से यह आशा क्यों करें कि वह करेगा?

आपको श्री अरविन्द घोष के अनुयायियों से यह आशा नहीं करनी चाहिए कि वे बीस आध्यात्मिक नियमों को व्यवहार में लायेंगे। आपको श्री रमण महर्षि के अनुयायियों से यह आशा नहीं करनी चाहिए कि वे साधना तत्त्व को व्यवहार में लायेंगे, परन्तु हम से यह आशा की जाती है कि हम उनको व्यवहार में लायेंगे। वे भी आपसे यह आशा नहीं करते कि आप सिद्ध-योग अथवा शक्तिपात को आचरण में लाएँ, क्योंकि गुरु परम्परा की यह पद्धति है। इसलिए कहा जाता है,

सदाशिव समारम्भां शंकराचार्य मध्यमाम्।
अस्मद् आचार्य पर्यन्तां वन्दे गुरु-परम्पराम् ।।

(मैं गुरु परम्परा की इस लम्बी पंक्ति को प्रणाम करता हूँ जिसका उदय स्वयं भगवान् शंकर से हुआ और जिसके मध्य में आदिशंकराचार्य थे और वर्तमान में अपने गुरु को प्रणाम करता हूँ जो कि मेरे लिए इस आध्यात्मिक परम्परा के वर्तमान प्रतिनिधि हैं।) इस प्रकार हमारा एक विशेष उत्तरदायित्व है, एक विशेष अधिकार है, हमारे लिए यह बड़े सौभाग्य और आनन्द का विषय है। मैं आपके समक्ष परमात्मा जो हमारा पालन करने वाले हैं, हमारी रक्षा करने वाले हैं और हमारे सब कुछ हैं उनके साथ सीधे सम्बन्ध के बारे में आपकी स्थिति का वास्तविक वर्णन कर रहा हूँ। उन्होंने हमारे जीवन को भौतिक स्तर, मानसिक स्तर, बौद्धिक स्तर, नैतिक स्तर, आचार सम्बन्धी स्तर और आध्यात्मिक स्तर पर बनाये रखा है। उन्होंने हमारे लिए क्या नहीं किया है? इसलिए उनके साथ हमारा गहरा सम्बन्ध है।

गुरुदेव ने कहा है, 'मैंने अपनी इतनी सारी पुस्तकों में जो कुछ भी लिखा है, वह सब मैंने बीस महत्त्वपूर्ण आध्यात्मिक नियमों में लिख दिया है।' ये नियम आप सबके लिए हैं जो इस समय यहाँ उपस्थित हैं। सम्भवतः आपने इन नियमों को कभी भी इस प्रकार अपना नहीं समझा। हमने हमेशा इसे दूसरों को बाँटने का प्रयास किया परन्तु स्वयं इनको नहीं अपनाया। जब भी कोई दर्शक आता है हम तुरन्त उन्हें बीस आध्यात्मिक नियमों की एक प्रति देना चाहते हैं और कहते हैं, 'इसे फ्रेम कराके रखें तथा इसे प्रतिदिन पढ़ें।' परन्तु हमने सम्भवतः इसे कभी व्यक्तिगतरूप से नहीं सोचा कि यह मेरे लिए भी हैं। कभी नहीं करने से तो विलम्ब से करना श्रेष्ठ है। क्यों न गुरुदेव के बीस आध्यात्मिक नियम मुझे व्यक्तिगत रूप से अपनाने चाहिए। यह जो उन्होंने मेरे लिए विरासत में छोड़ा है वह उन व्यावहारिक उपदेशों का सार है जो उनके द्वारा इस बीसवीं शताब्दी में समस्त विश्व को दिये गये। उनके द्वारा नियमों के ये तीन महत्त्वपूर्ण समूह यानि -

(१) सप्त साधन विद्या अर्थात् साधना तत्त्व, (२) विश्व-प्रार्थना, (३) बीस महत्त्वपूर्ण आध्यात्मिक नियम दिये गये।

उन्होंने ये सब आपके लिए छोड़े हैं, मेरे लिए छोड़े हैं, हम सबके लिए छोड़े हैं तथा ये हम में से प्रत्येक के लिए छोड़े हैं। यदि आप अपने को इस प्रकार बीस आध्यात्मिक नियमों से

जोड़ने का प्रयास करें और प्रतिदिन उसके विषय में सोचें तो सम्भवतः आपके जीवन में एक नया प्रकाश, एक नया ज्ञान और उसके प्रति एक नया भाव आ जायेगा कि उन्होंने यह मेरे लिए छोड़ा है, उन्होंने यह किसी और के लिए नहीं छोड़ा बल्कि यह मेरे लिए ही छोड़ा है। इस भाव के साथ आगे बढ़ो और बीस महत्त्वपूर्ण आध्यात्मिक नियमों का गहन चिन्तन करो, तब आप अपने बारे में तथा आध्यात्मिक जीवन के बारे में बहुत कुछ समझ लेंगे।

अभ्यास (Practice)

दत्तात्रेय भगवान् ने चौबीस गुरुओं का उल्लेख किया है जिनसे उन्होंने कुछ सीखा परन्तु उन्होंने उनका सम्बोधन प्राणी कह कर नहीं किया। उन्होंने कहा, 'मैंने ये बातें इन समस्त गुरुओं से सीखी हैं, आज मैं जो कुछ हूँ उनके कारण हूँ, हे यदुवंश के राजा! आप जो कुछ भी मुझ में देख कर आश्चर्य कर रहे हैं वह इसलिए है क्योंकि मैंने जो कुछ सीखा उसको अपने जीवन में उतारा। जो मैंने इन गुरुओं से ग्रहण किया और समझा, मैंने उसका अपने जीवन में समावेश किया तथा मैं वैसा बन गया जैसा मैंने देखा और सीखा। पृथ्वी, वायु, आकाश, जल, अग्नि, चन्द्र, सूर्य, कबूतर, अजगर, सागर, पतंग, हाथी, मधुमक्खी, मधु निकालने वाला, हिरन, मछली, पिंगला वेश्या, कुरर पक्षी, बालक, कुमारी कन्या, बाण बनाने वाला, साँप, मकड़ी तथा भृगकीट, प्रत्येक वस्तु जो मेरे सामने आयी और जिससे मैं कुछ ज्ञान प्राप्त कर सकता था, मैंने उससे सीखा, ग्रहण किया और उसे व्यवहार में लाया। मैं उस व्यवहार से ही बना हूँ।' यह अवधूत दत्तात्रेय ने यदुवंश के राजा को स्पष्ट किया।

अतः यह अभ्यास ही है जिसके द्वारा पूर्णता की पराकाष्ठा को प्राप्त किया जा सकता है, न कि पूर्णता प्राप्त करने की विधि के ढेर सारे ज्ञान से। थोड़े से ज्ञान को अधिक से अधिक अभ्यास से युक्त करने से सम्भवतः बहुत कुछ प्राप्त किया जा सकता है। निम्न जाति के कबीर जैसे व्यक्ति जो कि एक जुलाहा था; जो कोई उपदेश प्राप्त नहीं कर सका; उन्हें मार्ग भी मालूम नहीं था; जैसे तैसे उन्होंने एक शब्द प्राप्त कर लिया, वह भी छल से और वह शब्द भी गुरु रामानन्द के मुखारविन्द से आकस्मिक आश्चर्य के क्षण में निकला था। यह 'राम' के नाम का अभ्यास ही है जिसने उन्हें एक महान् वेदान्ती और भक्त एकसाथ बना दिया। वह कबीर दास बन गये जिनके भजनों का अनुवाद वर्तमान में अनेक भाषाओं में किया गया है। थोड़ा सा ज्ञान जो उन्होंने प्राप्त किया उसके अभ्यास से उन्हें महान् अनुभूति प्राप्त हुई और वह ज्ञान से परिपूर्ण हो गये। इस परा-विद्या के प्राप्त होने के कारण उनके भजन ज्ञान से परिपूर्ण हैं।

अभ्यास यह सांकेतिक शब्द (Keyword) जगद्गुरु भगवान् श्री कृष्ण ने अपने गीता ज्ञान उपदेश में विपरीत परिस्थितियों और आकर्षणों जिससे आप इस संसार में घिरे हुए हैं, उन पर विजय पाने के लिए तथा लक्ष्य प्राप्त करने के लिए दिया है। अभ्यास- यह एक सांकेतिक शब्द है। उन्होंने कहा, 'कुछ भी असम्भव नहीं है। जहाँ अभ्यास है वहाँ यह सम्भव है।' जहाँ अभ्यास नहीं है वहाँ हर चीज कठिन हो सकती है, हर चीज असम्भव भी हो सकती है। मैं परामर्श देता हूँ कि आप इस नयी भावना को अपनायें और बीस महत्त्वपूर्ण आध्यात्मिक नियमों का अभ्यास करें और देखें कि वे आपको क्या देते हैं।

बीस महत्त्वपूर्ण आध्यात्मिक नियम

१. **ब्राह्ममुहूर्त-जागरण**-नित्यप्रति प्रातः चार बजे उठिए। यह ब्राह्ममुहूर्त ईश्वर के ध्यान के लिए बहुत अनुकूल है।

२. **आसन**-पद्मासन, सिद्धासन अथवा सुखासन पर जप तथा ध्यान के लिए आधे घण्टे के लिए पूर्व अथवा उत्तर दिशा की ओर मुख करके बैठ जाइए। ध्यान के समय को शनैः शनैः तीन घण्टे तक बढ़ाइए। ब्रह्मचर्य तथा स्वास्थ्य के लिए शीर्षासन अथवा सर्वांगासन कीजिए। हलके शारीरिक व्यायाम (जैसे टहलना आदि) नियमित रूप से कीजिए। बीस बार प्राणायाम कीजिए।

३. **जप**-अपनी रुचि या प्रकृति के अनुसार किसी भी मन्त्र (**जैसे 'ॐ', 'ॐ नमो नारायणाय', 'ॐ नमः शिवाय', 'ॐ नमो भगवते वासुदेवाय', 'ॐ श्री शरवणभवाय नमः', 'सीताराम', 'श्री राम', 'हरि ॐ'** या गायत्री) का १०८ से २१,६०० बार प्रतिदिन जप कीजिए (मालाओं की संख्या १ और २०० के बीच)।

४. **आहार-संयम**-शुद्ध सात्त्विक आहार लीजिए। मिर्च, इमली, लहसुन, प्याज, खट्टे पदार्थ, तेल, सरसों तथा हींग का त्याग कीजिए। मिताहार कीजिए। आवश्यकता से अधिक खा कर पेट पर बोझ न डालिए। वर्ष में एक या दो बार एक पखवाड़े के लिए उस वस्तु का परित्याग कीजिए जिसे मन सबसे अधिक पसन्द करता है। सादा भोजन कीजिए। दूध तथा फल एकाग्रता में सहायक होते हैं। भोजन को जीवन-निर्वाह के लिए औषधि के समान लीजिए। भोग के लिए भोजन करना पाप है। एक माह के लिए नमक तथा चीनी का परित्याग कीजिए। बिना चटनी तथा अचार के केवल चावल, रोटी तथा दाल पर ही निर्वाह करने की क्षमता आपमें होनी चाहिए। दाल के लिए और अधिक नमक तथा चाय, काफी और दूध के लिए और अधिक चीनी न माँगिए।

५. **ध्यान-कक्ष**-ध्यान कक्ष अलग होना चाहिए। उसे ताले-कुंजी से बन्द रखिए।

६. **दान**-प्रतिमाह अथवा प्रतिदिन यथाशक्ति नियमित रूप से दान दीजिए अथवा एक रुपये में दस पैसे के हिसाब से दान दीजिए।

७. **स्वाध्याय**-गीता, रामायण, भागवत, विष्णुसहस्रनाम, आदित्यहृदय, उपनिषद्, योगवासिष्ठ, बाइबिल, जेन्द-अवस्ता, कुरान आदि का आधा घण्टे तक नित्य स्वाध्याय कीजिए तथा शुद्ध विचार रखिए।

८. **ब्रह्मचर्य-** बहुत ही सावधानीपूर्वक वीर्य की रक्षा कीजिए। वीर्य विभूति है। वीर्य ही सम्पूर्ण शक्ति है। वीर्य ही सम्पत्ति है। वीर्य जीवन, विचार तथा बुद्धि का सार है।

९. **स्तोत्र**-पाठ-प्रार्थना के कुछ श्लोकों अथवा स्तोत्रों को याद कर लीजिए। जप अथवा ध्यान आरम्भ करने से पहले उनका पाठ कीजिए। इसमें मन शीघ्र ही समुन्नत हो जायेगा।

१०. **सत्संग**-निरन्तर सत्संग कीजिए। कुसंगति, धूम्रपान, मांस, शराब आदि का पूर्णतः त्याग कीजिए। बुरी आदतों में न फैसिए।

११. **व्रत**-एकादशी को उपवास कीजिए या केवल दूध तथा फल पर निर्वाह कीजिए।

१२. **जप-माला**-जप-माला को अपने गले में पहनिए अथवा जेब में रखिए। रात्रि में इसे तकिये के नीचे रखिए।

१३. **मौन-व्रत**-नित्यप्रति कुछ घण्टों के लिए मौन-व्रत कीजिए।

१४. **वाणी**-संयम-प्रत्येक परिस्थिति में सत्य बोलिए। थोड़ा बोलिए। मधुर बोलिए।

१५. **अपरिग्रह**-अपनी आवश्यकताओं को कम कीजिए। यदि आपके पास चार कमीजें हैं, तो इनकी संख्या तीन या दो कर दीजिए। सुखी तथा सन्तुष्ट जीवन बिताइए। अनावश्यक चिन्ताएँ त्यागिए। सादा जीवन व्यतीत कीजिए तथा उच्च विचार रखिए।

१६. **हिंसा-परिहार**-कभी भी किसी को चोट न पहुँचाइए (अहिंसा परमो धर्मः)। क्रोध को प्रेम, क्षमा तथा दया से नियन्त्रित कीजिए।

१७. **आत्म-निर्भरता**-सेवकों पर निर्भर न रहिए। आत्म-निर्भरता सर्वोत्तम गुण है।

१८. **आध्यात्मिक डायरी**-सोने से पहले दिन-भर की अपनी गलतियों पर विचार कीजिए। आत्म-विश्लेषण कीजिए। दैनिक आध्यात्मिक डायरी तथा आत्म-सुधार रजिस्टर रखिए। भूतकाल की गलतियों का चिन्तन न कीजिए।

१९. **कर्तव्य-पालन**- याद रखिए, मृत्यु हर क्षण आपकी प्रतीक्षा कर रही है। अपने कर्तव्यों का पालन करने में न चूकिए। सदाचारी बनिए।

२०. **ईश-चिन्तन**-प्रातः उठते ही तथा सोने से पहले ईश्वर का चिन्तन कीजिए। ईश्वर को पूर्ण आत्मार्पण कीजिए।

यह समस्त आध्यात्मिक साधनों का सार है। इससे आप मोक्ष प्राप्त करेंगे। इन नियमों का दृढ़तापूर्वक पालन करना चाहिए। अपने मन को ढील न दीजिए

आध्यात्मिक नियम पढ़ना प्रारम्भ करने की विधि

अन्तिम नियम सबसे पहले पढ़ना प्रारम्भ करें अर्थात् बीसवें नियम के पश्चात् दिया गया भाग। अन्तिम चेतावनी जो गुरुदेव ने इन महत्त्वपूर्ण आध्यात्मिक नियमों के बिल्कुल अन्त में दी है, उस पर पूर्ण ध्यान दीजिए। यह अन्तिम चेतावनी उनके लिए बहुत मूल्यवान्, सहायक तथा लाभप्रद होगी जो अपना सर्वोच्च आध्यात्मिक कल्याण चाहते हैं। यदि इस अन्तिम निर्देश की ओर ध्यान न दिया जाये तो बीस महत्त्वपूर्ण आध्यात्मिक नियम अनुपयोगी होंगे और किसी के लिए भी लाभदायक नहीं होंगे।

अन्तिम चेतावनी को पहले पढ़ने का कारण यह है कि मानव-मन में अत्यन्त असावधान रहने की प्रवृत्ति होती है। असावधानता- यह मन के नकारात्मक गुणों में से एक है-इसलिए मन को ढील मत दो क्योंकि 'मन एवं मनुष्याणां कारणं बन्ध मोक्षयो' मनुष्य के लिए केवल मन ही बन्धन तथा मोक्ष का भी कारण है और यदि

'यदि मोक्षं इच्छसि चेत-तात विषयान् विषवत् त्यज ।
ब्रह्मचर्य अहिंसा च सत्यं पीयूषवद् भज ।।

'आप मोक्ष चाहते हैं तो विषयों के सुख और भोग को विष के समान त्याग दें तथा तीन सर्वोच्च गुणों-ब्रह्मचर्य, अहिंसा और सत्य को अमरत्व प्रदान करने वाली जीवनदायी सुधा के रूप में स्वीकार करें।' अब हम देखें व अध्ययन करें कि अन्तिम चेतावनी का सही अभिप्राय क्या है।

यह सब आध्यात्मिक साधनाओं का सार है। इससे आप मोक्ष प्राप्त करेंगे। इन समस्त आध्यात्मिक नियमों का दृढ़ता पूर्वक पालन करना चाहिए। अपने मन को ढील न दीजिए।

इससे प्रारम्भ करें, पहले इसे पढ़ें और उसके पश्चात् प्रथम नियम पर आ जायें। यह आज के लिए पर्याप्त है। कल पुनः बीसवें नियम के पश्चात् जो उपदेश है उसे पढ़ें और फिर दूसरे नियम को देखें। तीसरे दिन पुनः बीसवें नियम के पश्चात् दिये गये उपदेश को पढ़ें और फिर तीसरे नियम को देखें। चौथे दिन पुनः बीसवें नियम के पश्चात् दिये गये उपदेश को पढ़ें और फिर चौथे नियम को देखें। इस प्रकार क्रमवार एक-एक करके बीस महत्त्वपूर्ण नियमों पर विशेषरूप से अपना ध्यान केन्द्रित करें।

प्रत्येक नियम पर लगभग पन्द्रह मिनट ध्यान करें, उसके साथ अपना विशेष सम्बन्ध जोड़ें। जब आप परेशान न हों या जब आप फुरसत में हों तब पन्द्रह मिनिट इस प्रकार व्यतीत करें और इस पर चिन्तन करें।

बीस आध्यात्मिक नियमों का अध्ययन पूर्ण करने के पश्चात् (अर्थात् बीस दिन के पश्चात्), प्रथम नियम से प्रारम्भ करके उन पर पुनः चिन्तन करें, आधा घण्टा अथवा ४५ मिनिट तक इन बीस नियमों पर ध्यान करें। अब आपके मन की आँख के समक्ष ये नियम स्वर्ण अक्षरों में चमकते हुए दिखायी देने चाहिए। उन पर मन को केन्द्रित (धारणा) करें। उन पर ध्यान करें और देखें, वह आपके लिए क्या करते हैं, फिर उनको अपने दैनिक जीवन में उतारने के लिए उपाय सोचें। अपनी योग्यता और क्षमता की परिधि व क्षेत्र के अनुसार स्वामी शिवानन्द जी के बीस महत्त्वपूर्ण आध्यात्मिक नियमों का साकार रूप, जीता-जागता व सक्रिय मूर्त रूप बनें। में आपको पराक्रम दिखाने के लिए नहीं कह रहा। उपलब्धि का प्रदर्शन करने के लिए नहीं कह रहा। मैं आपको महाभारत में भीष्म जैसी आश्चर्यजनक दृढ़ प्रतिज्ञा के लिए नहीं कह रहा जिससे आकाश में बिजली चमकने लगी और गर्जना होने लगी, धरती हिली और सब ओर आँधी चलने लगी और लोग काँपने लगे। मैं आपको प्रदर्शन योग्य पराक्रम दिखाने के लिए नहीं कह रहा परन्तु में आपसे यह अवश्य आशा करता हूँ और चाहता हूँ कि आप इसे तीव्र उत्साह से करें। आप इसे दृढ़ निश्चय तथा गम्भीरता से करें, जो कि सम्भवतः आपने अभी तक अपने जीवन में नहीं किया है। **मैं आपसे यह अवश्य आशा करता हूँ कि आप इस अभ्यास से जिसकी रूपरेखा मैंने आपके सर्वोच्च लाभ, परम कल्याण, आध्यात्मिक जीवन में पूर्ण सफलता और आपकी स्वयं की कीर्ति के लिए दी है, अपनी अन्तर्निहित आन्तरिक शक्ति को जगा देंगे।**

तब मैं आपको निश्चय पूर्वक कह सकता हूँ कि गुरुदेव ने निरर्थक ही इस वाक्य का उल्लेख नहीं किया कि 'यह आपको मोक्ष की ओर ले जायेगा।' उन्होंने इसे इसलिए कहा है

क्योंकि उन्हें पूरा विश्वास है कि यदि आप उन सबका पालन करेंगे तो ये आपको मोक्ष की ओर ले जायेंगे। आप अपने को बीस महत्त्वपूर्ण आध्यात्मिक नियमों का सजीव व्यावहारिक मूर्तरूप बनायें तब मोक्ष आपकी हथेली पर आँवले की भाँति होगा। आप मोक्ष अपने लिए सुनिश्चित कर लें। आप इस जीवन में ही अपने लिए मोक्ष प्राप्त करने के लिए आश्वस्त हो जायें।

ईश्वर आप पर कृपा करें और आपको इस योग्य बनायें जिससे आप इन नियमों को अपने दैनिक जीवन में उतार सकें। गुरुदेव के आशीर्वाद से आपको सफलता प्राप्त हो।

****

विश्व-प्रार्थना

- प्रणेता गुरुदेव श्री स्वामी शिवानन्द जी महाराज प्रदत्त अद्वितीय देन -

सद्गुरुदेव श्री स्वामी शिवानन्द जी कृत 'विश्व-प्रार्थना' परम प्रिय है उनके भक्तों एवं प्रशंसकों को। यह सम्प्रदाय-निरपेक्ष, सर्वजनानुकूल प्रार्थना है। इसमें शास्त्रोपदेशों का सार-तत्त्व एवं भगवत्साक्षात्कार- निमित्त आध्यात्मिक साधना की प्रविधि सन्निहित है। प्रायः हम नित्य-पाठ में इसकी महत्ता से अनभिज्ञ एवं वास्तविक लाभ-प्राप्ति से वंचित रह जाते हैं, कारण कि यह सूत्र-रूप में विरचित है। यदि एकमात्र इसका ही श्रद्धा, भक्ति तथा समझ से नित्य-पाठ किया जाये, तो यही हमें लक्ष्य तक पहुँचा सकती है। ऐसा माहात्म्य है इस विश्व-प्रार्थना का। यह प्रार्थना प्रत्येक स्त्री-पुरुष, युवा-वृद्ध, पौर्वात्य-पाश्चात्य, उत्तरी दक्षिणी समस्त व्यक्तियों के लिए उपयुक्त है।

विश्व-प्रार्थना इस प्रकार है:

विश्व-प्रार्थना

हे स्नेह और करुणा के आराध्य देव!
तुम्हें नमस्कार है, नमस्कार है।
तुम सर्वव्यापक, सर्वशक्तिमान् और सर्वज्ञ हो।
तुम सच्चिदानन्दधन हो।
तुम सबके अन्तर्वासी हो।

हमें उदारता, समदर्शिता और मन का समत्व प्रदान करो।
श्रद्धा, भक्ति और प्रज्ञा से कृतार्थ करो।
हमें आध्यात्मिक अन्तः शक्ति का वर दो,
जिससे हम वासनाओं का दमन कर मनोजय को प्राप्त हों।

हम अहंकार, काम, लोभ, घृणा, क्रोध और द्वेष से रहित हों।

हमारा हृदय दिव्य गुणों से परिपूरित करो।

हम सब नाम-रूपों में तुम्हारा दर्शन करें।
तुम्हारी अर्चना के ही रूप में इन नाम-रूपों की सेवा करें।
सदा तुम्हारा ही स्मरण करें।
सदा तुम्हारी ही महिमा का गान करें।
तुम्हारा ही कलिकल्मषहारी नाम हमारे अधर-पुट पर हो।
सदा हम तुममें ही निवास करें।

नित्य अविनाशी तत्त्व की ओर प्रयाण ही जीवन-यात्रा है। जीवन स्वतः ही प्रगतिशील है नित्यानुभूति की ओर। जीवन स्वयमेव एक पद्धति और एक गति है, जो प्रतिदिन आपको पूर्णत्व की ओर अग्रसर करती है, जिसकी प्राप्ति आपका जन्मसिद्ध अधिकार है।

यह सन्देश है उनका जिनकी हम आराधना करते हैं, जिनको हम गुरुदेव' कह कर पुकारते हैं, जिन्होंने इस दिव्य पथ का प्रतिनिधित्व किया था। गुरुदेव ने इस विश्व-प्रार्थना को समस्त दिव्यता से ओतप्रोत कर मूर्तिमन्त किया। परम पावन सार-तत्त्व, उच्च जीवन, आध्यात्मिक जीवन, दिव्य जीवन, पूर्णता की ओर गतिशील जीवन, ज्ञानमय जीवन, आत्म-प्रकाशन के जीवन से परिपूर्ण है यह विश्व-प्रार्थना। अदिव्यता की उपेक्षा करती हुई यह प्रार्थना हमें दिव्यता की ओर ले जाती है।

धन्य हैं वे, जिनका गुरुदेव से प्रत्यक्ष सम्पर्क रहा है। धन्य हैं वे जिन्होंने उनके साक्षात् दर्शन किये हैं। धन्य हैं वे जिनका हृदय उनके ज्ञानमय सदुपदेशों के प्रकाश से प्रकाशित हुआ है।

आइए ! हम सब गुरुदेव-विरचित 'विश्व-प्रार्थना' का मनोयोग से पारायण करें। यह प्रार्थना आपके लिए सदुपदेश-सूत्र बने। यह आपके भावी जीवन की नित्य-मित्र एवं मार्गदर्शिका बने। यह आपके हृदयस्थ भावनाओं एवं विचारों का जीवन में सक्रिय रूप से अभिव्यक्त वाणी एवं क्रियाकलापों का मापक यन्त्र बने। स्वजीवन का निष्पक्ष विश्लेषण करने के हेतु यह प्रार्थना मापक यन्त्र, मानक एवं कसौटी बने। अतः स्वजीवन एवं स्वक्रियाकलापों का परीक्षण करने की कसौटी के रूप में सद्गुरुदेव स्वामी शिवानन्द जी द्वारा प्रदत्त इस प्रार्थना को शिरोधार्य करें।

इस प्रार्थना का मनन कीजिए, चिन्तन कीजिए। इसे अपना नित्य-सहचर बनाइए। इसमें आप सद्गुरु शिवानन्द जी के दर्शन करेंगे। इसमें योग-वेदान्त का सार-तत्त्व सन्निहित पायेंगे। यह प्रार्थना निश्चयतः शुभाशीष, मंगलकामना एवं दिव्य सन्देश से परिपूर्ण है। सभी धर्मों का सार-तत्त्व यही है कि सभी प्राणियों में दिव्यता का वास है। यही तथ्य, यही में स्वीकृति, यही जागृति, यही आत्मज्ञान जी कि सभा की ओर उन्मुख करेगा। यह आपको दैवी सम्पदा से सम्पन्न कर देदीप्य पथ की ओर गतिशील करेगा। आपके स्वभाव को दिव्यता में रूपान्तरित करेगा। फलतः आप पर प्रभु कृपा का वर्षण होगा।

योग-वेदान्त का प्रत्येक पक्ष, आदि, मध्य, अन्त, मूलाधार, प्रगति और चरमोत्कर्ष (पराकाष्ठा) आदि सभी इस आश्चर्यमयी प्रार्थना में सन्निहित है। गुरुदेव कथित दिव्य जीवन के सिद्धान्त (शिक्षा) को अपूर्व रूप में प्रस्तुत करती है यह प्रार्थना ।

इस महान् आत्मा, सरल जीवन के आदर्श, विश्वात्मक जीवन के गुरु, कृपालु एवं दयालु सद्‌गुरु श्रीमद्भगवद्गीता में वर्णित 'सर्वभूत हितेरताः' के अनुसार सर्वप्राणियों के हित में रत गुरुदेव के प्रति आप अपनी हार्दिक प्रार्थना तथा कृतज्ञता ज्ञापन हेतु यहाँ एकत्रित हुए हैं। गुरुदेव की आराधना करते हुए उनके साथ अपने आध्यात्मिक जीवन का नवीकरण कीजिए-इस प्रार्थना को, इस विश्व-प्रार्थना को आप हृदयंगम कीजिए।

गुरुदेव स्वामी शिवानन्द जी विरचित 'विश्व-प्रार्थना' समर्पित करता हूँ आप सबके हितार्थ प्रसन्नता, समृद्धि एवं सफलता-प्राप्ति के नित्यसूत्र, निश्चयात्मक सूत्र के रूप में। समस्त शास्त्रों का श्रेष्ठतम सारतत्त्व, समग्र महान् सन्तों एवं विवेकी जनों के उपदेश सम्मिलित हैं इस अनुपम प्रार्थना में। इसे अपनी प्राण-वायु समझिए।

प्रिय मित्र! प्रार्थनानुसार जीवन यापन करने का तत्परता से अभ्यास कीजिए। इसका दूर-सुदूर प्रचार-प्रसार कीजिए। यह प्रार्थना अमूल्य है। इसकी प्रत्येक पंक्ति स्वर्ण के तौल से अधिक बहुमूल्य है। मैं आप सबसे निवेदन करता हूँ कि इसका पारायण (पाठ) कीजिए। इसे मुद्रित करवाइए और सबमें निर्मूल्य (निःशुल्क) वितरित कीजिए। इसे कागज के एक ओर मुद्रित करवाइए ताकि अभिलषित जन (अभिलाषी) इसे फ्रेम करवा सकें। अपनी मातृभाषा में इसे अनूदित कीजिए। इसे समाचार पत्रों, साप्ताहिक एवं मासिक पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशित करवाइए। विद्यालयों एवं विश्वविद्यालयों, क्लबों तथा संघों में इसका प्रचार कीजिए।

यह प्रार्थना समग्र विश्व के कल्याण के लिए है। यह सम्प्रदायातीत है। यदि आप चाहें, तो इसे बड़े आकार के बढ़िया कागज पर मुद्रित करवा कर इसका नाम मात्र का मूल्य रख सकते हैं। यदि आप अकेले मुद्रित करवाने में असमर्थ हैं, तो कुछ मित्र सम्मिलित रूप से १००० प्रतियाँ मुद्रित करवाने की व्यवस्था कर सकते हैं।

संसार की संरक्षिका यह प्रार्थना घर-घर पहुँचाइए। समूचे विश्व में इसका प्रचार-प्रसार करिए। इसमें सन्निहित सदुपदेशों से अपने बच्चों को परिचित कराइए। प्रातःकाल इसका पारायण कीजिए। प्रत्येक नव-वर्ष को प्रार्थना-वर्ष के रूप में मनाइए। इससे महान् सद्भावना निःसृत होगी।

पुण्यशील गुरुदेव स्वामी शिवानन्द जी का यह विलक्षण उपहार शिरोधार्य कर इसका संरक्षण कीजिये। यह प्रार्थना आपके गृह को सौभाग्यमय बनायेगी। यह आपको पूर्णत्व की ओर ले जायेगी। यह दिव्य पथ की पथ-सन्दर्शिका है।

आप दिव्य है, अतः दिव्य जीवन यापन कीजिए। ईश्वर में निवास कीजिए। ईश्वरीय प्रकाश में विचरण कीजिए।

***

परात्पर तक पहुँचिए

-श्री स्वामी चिदानन्द जी महाराज-

हे शाश्वत, सर्वातीत, परम दिव्य सत्ता, आपको श्रद्धापूर्वक नमन करते हैं! आप, जो मन-वाणी से परे हैं, मनुष्य की विचार-शक्ति, तर्क-शक्ति, कल्पना-शक्ति और विवेक-शक्ति से परे हैं; आप, जो ऐसी अवर्णनीय, अकथनीय सत्ता हैं, जिसे केवल निज आत्मा की गहराई में अनुभव ही किया जा सकता है; और जिसे केवल वही अनुभव कर सकते हैं जिन पर आप कृपा करके स्वयं को प्रकट करने के लिए चुनते हैं। आपकी दिव्य कृपा-वृष्टि इस हम सब पर हो!

हमारे उन परम श्रद्धेय गुरुदेव श्री स्वामी शिवानन्द जी महाराज को श्रद्धापूर्ण प्रणाम है, जिन्होंने हमें उस सर्वातीत का ज्ञान, आत्मज्ञान अथवा परमात्म ज्ञान, परम सत्ता का ज्ञान प्रदान किया। उनकी गुरु कृपा और आशीर्वाद हम सब पर निरन्तर रहें!

हे साधक वृन्द! सदैव सर्वातीत तक पहुँचिए! अपनी वर्तमान आध्यात्मिक उपलब्धियों, आध्यात्मिक उन्नति अथवा प्राप्ति से सन्तुष्ट न रहें! लगे रहें! सदैव ऊपर की ओर बढ़ते चलें! अपनी अब तक की प्राप्ति, सफलता, चेतना के स्तर, उन्नति और अनुभूति की अवस्था से भी अतीत तक पहुँचने का प्रयास करते रहें। इसी में उच्चतम अनुभव प्राप्त करने का रहस्य छिपा हुआ है।

हमारे स्थूल, सूक्ष्म और कारण तीनों शरीरों से अतीत सूक्ष्म अति-भौतिक परम तत्त्व है। वही वास्तविक है जिसको पाना है। वही निधि है, अमूल्य रत्न है, आपके भीतर के स्वर्ग का साम्राज्य है। पंचकोषों से भी परे कोई है जो दृश्य कोष और अदृश्य कोषों से अतीत है। यह परम कोष नहीं, अति कोष है; बल्कि यह कोई कोष है ही नहीं, सभी कोष इससे पीछे छूट जाते हैं। इन पंचकोषों को पीछे छोड़ कर उसे प्राप्त करें जो इनसे अतीत है।

जाग्रत, स्वप्न और गहन सुषुप्ति की अवस्था से परे कुछ है वही है जो इन तीनों अवस्थाओं का द्रष्टा है। उसको खोजने का, जानने का और अन्वेषण करने का प्रयास करें। इसी ज्ञान में परम चैतन्य का तथा चेतना की उन तीनों अवस्थाओं से अतीत जाने का रहस्य निहित है जो कि सामान्य मनुष्य के अनुभव की पहुँच के भीतर है।

असंख्य, विविध नाम-रूपों और वस्तु-पदार्थों के मानव जगत् में, इस बाह्य जगत् और सुदूर अन्तरिक्ष में सूर्य, चन्द्रमा, सितारों से अतीत, सूक्ष्मदर्शी और दूरदर्शी से देखे जा सकने वाले समस्त नक्षत्रों इत्यादि सबसे परे पृथ्वी, जल, वायु, अग्नि और आकाश के पंचतत्त्वों से निर्मित समस्त दृश्य जगत् से अतीत जो परम तत्त्व है-उसे जानने का, उस तक पहुँचने का प्रयास करें। इसी में मोक्ष का रहस्य निहित है।

द्रष्टव्य के परे अदृश्य है। कहा गया है कि 'द्रष्टव्य ही विश्वसनीय है'; किन्तु 'अदृश्य वास्तविकता' इस दृश्य से कहीं अधिक सत्य है-मानव-जगत् के सीमित व्यावहारिक सत्य से कहीं अधिक विश्वसनीय है। अतः दृश्य से परे जायें और सूक्ष्म अदृश्य परम सत्ता को जानने का प्रयत्न करें। वही ऐसा एक विशिष्ट ज्ञान और कला है जो आपको दृश्य से परे अदृश्य के साम्राज्य तक ले जाने योग्य बना देगा।

अतः सदा उस परम सत्ता को जानें जो सर्वातीत है। सदैव उसी के जिज्ञासु बनें जो सामान्य अनुभव से ऊपर है, जो उस सबसे अतीत है जो हमें यहाँ जानने में आता है। उस अदृश्य, अज्ञात, अलक्ष्य और सर्वातीत परम तत्त्व के जिज्ञासु रहें। जो सबसे परे है, परात्पर है, वहीं तक पहुँचें। उसी की खोज में लगे रहें। उस सर्वातीत परमात्मा की अनुभूति की सदा कामना करें। स्वयं से भी अतीत जा कर उस सर्वातीत परम प्रभु तक की उड़ान भरें।

****

'वास्तविक धर्म'

(१९९३ की पार्लियामेंट ऑफ़ वर्ल्ड रिलिजन्स (विश्व-धर्मों की सभा) के प्रतिनिधियों को सादर प्रणाम और सप्रेम शुभकामनाओं सहित स्वामी चिदानन्द, दिव्य जीवन संघ, ऋषिकेश, भारत।)

सम्माननीय मित्रो,

जिस प्रकार परमात्मा तक पहुँचने के लिए मानव-स्वभाव के अनुसार अलग-अलग बहुत से योग हैं, उसी प्रकार आज इस संसार में जितनी भी धार्मिक पद्धतियाँ विद्यमान हैं, सभी उसी एक परम सत्ता तक पहुँचने के विविध मार्ग हैं जो लोकातीत है और जिसे अपनी सीमित इन्द्रियों और मन, बुद्धि इत्यादि अन्तःकरण चतुष्टय के सीमित घेरे में समेट कर मापा नहीं जा सकता। उसे संस्कृत भाषा में 'परा' कहा गया है, जिसका अर्थ है जो पर से भी परे अर्थात् परात्पर है।

धर्म बहुत से हैं और सभी समान रूप से प्रभावशाली, प्रमाणिक और वैध है, इसलिए सबको समान रूप से सम्मान, समान रूप से मान्यता और एक जैसा प्रेम देना चाहिए; सभी को हृदय में समान रूप से सँजोये रखना चाहिए, केवल सभी को सहन करना मात्र ही काफी नहीं है। कहते तो हैं 'धार्मिक सहनशीलता' अथवा परस्पर 'अन्तरधार्मिक सहनशीलता'। किन्तु सहनशील शब्द में से अन्य दूसरे को भी रहने देने की आज्ञा देने की कृपालुता करने के भाव की सी गन्ध आती है। स्वयं के अतिरिक्त दूसरे की भी मान्यता अथवा वैधता को सहन कर लेने की कृपालुता दिखाने मात्र का पुट है इसमें। यह ऐसा शब्द है जिसे धीरे-धीरे ढीला कर दिया जाना, अथवा छोड़ ही दिया जाना चाहिए। क्योंकि प्रश्न केवल दूसरे के दृष्टिकोण को सहन करने का ही नहीं है बल्कि दूसरे के दृष्टिकोण को उसी की दृष्टि से समझने का है। आप जिससे सहमत नहीं हैं, उसके विचार या भाव को यदि उसी की दृष्टि से देख सकें तो आप समझ जायेंगे कि वह व्यक्ति उसे अमुक ढंग से क्यों देख रहा है।

"**ये यथा माम् प्रपद्यन्ते, तांस्तथैव भजाम्यहम्** " -जो मुझे जिस प्रकार भजते हैं, मैं भी उनको उसी प्रकार प्राप्त होता हूँ (गीता: ४-११)। विश्व के समस्त धर्मों के प्रति कैसे भाव को ले कर चलना चाहिए उसके लिए यह सूत्र अथवा आदर्श वाक्य सर्वोत्कृष्ट है। सभी धर्म देखने में एक-दूसरे से भिन्न प्रतीत होते हैं, किन्तु सार तत्त्व सब का एक ही है। सब धर्मों की अभिन्नता एक तो इस रूप से है कि सभी का अस्तित्व एक ही लक्ष्य-एक ही महान् आध्यात्मिक लक्ष्य को पूर्ण करने के लिए है। और वह लक्ष्य है रेलिगेअर, अर्थात् आपको पुनः अपने मूल स्रोत-परम तत्त्व से जोड़ना।

आप आरम्भ में अपने स्रोत-परमात्मा से संयुक्त, उससे जुड़े हुए थे। किन्तु अब वह सम्बन्ध ढीला पड़ गया है, यह बन्धन नहीं, सम्बन्ध है, जो कि वांछित है, जो कि होना चाहिए। यह आवश्यक है, एक अनिवार्य वस्तु है यह। यह सम्बन्ध ढीला हो चुका है, या कहें कि जैसा यह था, वैसा अब नहीं है, टूट चुका है। देखा जाये तो ऐसा न कभी था और न ही हो सकता है कि यह सम्बन्ध ढीला हो या टूट गया हो। यह तो इसलिए लगता है क्योंकि आपने आध्यात्मिक जागरूकता को खो दिया है और यह समझने लग गये हैं कि आप कुछ और हैं, कोई अन्य अनाध्यात्मिक, भौतिक, शारीरिक, स्थूल, या लौकिक हैं।

इस निम्न-चेतना के कारण, हीन-चेतना के कारण आप अपने मूल-स्रोत, उस परमात्मा और आपके बीच के वास्तविक सम्बन्ध को, असली संयोजन को अनुभव नहीं कर पा रहे हैं। किन्तु धर्मग्रन्थ बार-बार उद्घोषित करते हैं कि कभी भी परस्पर विभाजन है ही नहीं। यह असम्भव है, क्योंकि 'वह' आपके भीतर सदैव आपके अन्तरतम में अपने आत्मतत्त्व के रूप में विद्यमान है। और आप 'उनमें' हैं। क्यों? क्योंकि आप और कहीं हो ही नहीं सकते, क्योंकि वह अनन्त है अतः सब जगह पर है, सर्वव्यापक है।

यह केवल इसलिए ही नहीं है कि वह आपके अस्तित्व का कारण है, इसलिए भी है क्योंकि आपमें और उस परम तत्त्व, परमात्मा में सारतत्त्व से भी अभिन्नता है। हमारे प्राचीन सन्त मनीषियों ने, जिन्होंने अपनी अध्यात्म-चेतना की गहनतम अनुभूतियों में अपने भीतर साक्षात्कार किया, उन्होंने कहा कि वह परमात्मा एकमेव अद्वितीय है। केवल मात्र एक वही है। एकमात्र वही

शाश्वत सत्ता है। उन्होंने अनुभव किया "**एकमेव अद्वितीयं ब्रह्म**" "**नेह नानास्ति**" अन्य दूसरा कुछ नहीं है।

अतः "**सर्वं खल्विदं ब्रह्म**" यह सब कुछ वास्तव में ब्रह्म ही है, एक तथ्य है। इसे समझना होगा। यही सत्य था। और क्योंकि वह परम सत्ता या परम तत्त्व अथवा परमात्मा एकमेव और अद्वितीय है, इसलिए जो विविधता हमें दिखायी देती है, यह भी निश्चित रूप से, सार रूप में वह एक परमात्मा ही होगी।

हमारे घरों में बहुत सी अलग-अलग वस्तुएँ होती हैं, जैसे चादरें, सिरहाने के लिहाफ़, मेज़पोश, कुर्ते, तौलिये, रूमाल, झाड़न इत्यादि। लेकिन जो इससे थोड़ा भीतर देखता है, तो उसे पता होता है कि सभी सूत के बने हैं, भले ही देखने में भिन्न-भिन्न दिखायी देते हैं, भिन्न-भिन्न आकार, रंग और रूप लगते हैं किन्तु हैं सूत अर्थात् कपास के ही। किसी महिला ने भले ही हार, कड़े, कुण्डल इत्यादि कितनी ही प्रकार के आभूषण पहने हों। हम भले ही उनके अनेक रूपों में विविध प्रकार के सौन्दर्य को देखें किन्तु स्वर्णकार की दृष्टि सबमें एक ही वस्तु-स्वर्ण को देखती है। कुम्हार की दुकान में अनेक प्रकार के, अनेक आकारों के बरतन हम देखते हैं, किन्तु कुम्भकार जानता है कि उन सबमें एक ही वस्तु है-चिकनी मिट्टी।

अतः जिस प्रकार विभिन्न प्रकार के वस्त्र एक ही वस्तु, सूत के बने होते हैं, जैसे विविध प्रकार के आभूषणों में वास्तविक वस्तु स्वर्ण ही होती है, और जैसे तरह-तरह के मिट्टी के बरतनों में मुख्य वस्तु मिट्टी ही है, ठीक इसी प्रकार असंख्य विविध नाम-रूपों से भरपूर इस विश्व में, सार तत्त्व में एक ही परम तत्त्व है जो यह सब विविधताएँ बन कर प्रकट हो रहा है। इसलिए अनेक रूपों में दिखायी देना उस परम तत्त्व की अद्वितीयता को अमान्य नहीं करता। एकमात्र वही अद्वितीय, अन्य किसी की भी सम्भावना से रहित, सर्वत्र परिव्याप्त है।

मानव-सृष्टि में, मनुष्य समाज में सभी धर्म, मानव को उसके मूल-स्रोत तक पुनः ले जाने के लिए ही सत्ता में आये हैं, और वापिस ले जाने के लिए ही नहीं बल्कि पुनः जोड़ने के लिए, पक्का सम्बद्ध करने के लिए हैं। कैसे? या तो अपने हृदय के प्रेम के द्वारा; भक्ति, प्रार्थना, उपासना, स्तुतिगान, महिमागान के द्वारा; अथवा बुद्धि के सूक्ष्म विश्लेषण द्वारा निरन्तर उसके स्मरण, मनन, उसके विषय में जानने खोजने के द्वारा; अथवा सभी बिखरी हुई मानसिक शक्तियों की किरणों को एकत्रित करके, फिर उस केन्द्रित मन को एकमेव परम अद्वितीय दिव्य सत्ता पर स्थिर करके, अन्य समस्त विचारों का बहिष्कार करके ध्यान के द्वारा; अथवा उस सर्वव्यापक सत्ता की सर्वत्र विद्यमानता को अनुभव करते हुए, उसे अभी और यहीं उपस्थित मानते हुए अपना समस्त जीवन, सम्पूर्ण प्रेम और सारे विचारों का एक सतत प्रवाह उस परम सत्य की ओर ले जाते हुए, समस्त मानव मात्र में, पशु-पक्षियों में, कीट-पतंगों में, पेड़-पौधों में, सृष्टि के समस्त जड़ चेतन में उसी सत्ता का स्वरूप देखते हुए स्वयं को उसका सेवक बना लेने के द्वारा।

वैदिक धर्म के सन्दर्भ में भी यह जो विभिन्न पहुँचमार्ग हैं, योग के मार्ग हैं- एक भावना के द्वारा, एक विवेचना के द्वारा, एक एकाग्रता के द्वारा, एक सक्रिय सेवा के द्वारा- यह सब देखने में भिन्न-भिन्न प्रतीत होते हुए भी वास्तव में एक ही माने जाते हैं। सभी उस एक की ओर ही ले कर जाते हैं। इसी प्रकार आज इस विश्व में जितनी भी धर्म प्रणालियाँ हैं, सभी उस एक

परम तत्त्व की उपासना की ओर ले जाती हैं, जो एकमेव अद्वितीय है, जो सर्वसम, एक रूप और अभिन्न है, भले ही उसको सहस्रों भिन्न-भिन्न नामों से बुलाते रहें!

समस्त धार्मिक पद्धतियाँ अन्ततः उसी एकमेव, परम तत्त्व, अद्वितीय परम सत्ता की ओर, उसके निकटतम ले जाने की प्रक्रियाएँ हैं, जो असंख्य कोटि ब्रह्माण्डों का स्रष्टा उनका उद्गम स्रोत है। सभी धर्म उसी एक की दिशा की ओर बढ़ाते हैं और सबका मात्र एक ही उद्देश्य है-व्यक्ति को, हर एक मनुष्य मात्र को उस परम सत्ता के सीधे सम्पर्क में लाना और स्थाई सम्बन्ध स्थापित करवाना। लक्ष्य सबका यही है; उद्देश्य एक ही है। इसके साधन भिन्न-भिन्न हो सकते हैं, किन्तु मार्ग एक ही ओर जाता है, उस परम लक्ष्य की ओर, ईश-अनुभूति की ओर। आप इसे अल्लाह-अनुभूति कहें, भगवदर्शन कहें, निर्वाण प्राप्ति कहें, ब्रह्मसाक्षात्कार कहें, यहोवा प्राप्ति कहें। कोई भी नाम रख लें; यह आपके अस्तित्व के मूल स्रोत की, अनुभवातीत परम सत्ता की अनुभूति है। समस्त सृष्टियों के मूल परम स्रोत की अनुभूति ही है।

इसी को समझने की आवश्यकता है। इसी को प्रेम पूर्वक समझाने की आवश्यकता है। दृढ़ विश्वास के साथ, पक्की धारणा के साथ यह सभी लोगों को समझाने की आवश्यकता है। और यह जो विद्वज्जन हैं, जो विभिन्न धर्मों के परिरक्षक है, उनका मानव के प्रति, भगवान् के प्रति और स्वयं अपने प्रति भी यह बड़ा भारी उत्तरदायित्व है। सर्वोच्च कर्तव्य है यह उनका कि वे इस भेद-भावना का प्रचार न करें, कि हम एक दूसरे से भिन्न हैं, बल्कि उस आन्तरिक और वास्तविक एकत्व को उद्घोषित करें जो कि इस मानव जाति का यथार्थ, और एकमात्र यही यथार्थ सत्य है। केवल तभी मानवता धीरे-धीरे एक होगी।

सभी धर्मों के परमाध्यक्षों को इकट्ठा होना चाहिए। उन्हें निश्चित रूप से यह मान लेना चाहिए कि वैश्व-मानवता के लिए अब एक नया अध्याय आरम्भ होने जा रहा है, और यह भी समझ लेना चाहिए कि उसमें धर्म अब तक जो भूमिका निभा रहा था अब वह नहीं, उससे भिन्न भूमिका उसने निभानी है। उसे विश्व के विगत धार्मिक इतिहास की भूलों को सुधारना होगा। इन सभी मूर्खताओं और पापों को सुधारना पड़ेगा। धर्मों ने धर्म के नाम पर सर्वाधिक पाप किये हैं। हम सभी को घुटनों के बल बैठ कर, अपने हृदयों को उन्नत करके, हाथ जोड़ कर भगवान् के सम्मुख पश्चात्ताप में रोते हुए कहना होगा कि धर्म अब तक गलती पर था। धर्म मानवता को गलत रास्ते पर ले कर जाता रहा है। धर्म ने मानवता को धर्म के नाम पर अधर्मी बनाया है।

धर्म तो प्रेम है। सब कहीं और सबमें एक जीवन्त सत्य के रूप में परमात्मा की उपस्थिति को पहचानना धर्म है। और प्रत्येक व्यक्ति, वस्तु और पदार्थ के, अर्थात् जड़-चेतन सबके प्रति प्रेम के द्वारा इसी सत्य पर बल देना और इसी सत्य को अभिव्यक्त करने वाला जीवन जीना यह वास्तविक धर्म है।

और जब तक धर्म, वैसा नहीं बन जाता जैसा उसे होना चाहिए, तब तक मानवता का भाग्य संघर्ष और विरोध, घृणा और द्वेष, आपसी फूट और असंगतियों से पूर्ण रहेगा। इससे केवल दुःख ही मिल सकते हैं, प्रसन्नता नहीं, शान्ति नहीं, समृद्धि नहीं। धर्म को अब निश्चित रूप से एक अलग, एक भिन्न भूमिका निभानी होगी, यही भूमिका, वास्तविक भूमिका है। अब तक इसने अपनी दिशा खोयी हुई थी, यह अपने स्थान से भटका हुआ था, अपने पथ से हट गया था यह!

जहाँ अन्य प्रत्येक वस्तु ईश्वर की सृष्टि में विभिन्नता प्रमाणित करती है, वहाँ धर्म एक ऐसा तथ्य है जिससे इसके एकत्व को उद्घोषित करने की अपेक्षा की जाती है। हम एक दूसरे से अभिन्न हैं। हम उस एक ही परम सत्ता की सन्तान हैं। वस्तुतः हम एक ही हैं, किन्तु यह अत्यन्त शोचनीय बात है कि अब तक धर्म विश्व में मानव-मानव में एकत्व स्थापित करने के उद्देश्य में पूर्णतया असफल हुआ है। यह गलत धारणाओं पर बल देता रहा है, परिवर्तनशील तत्त्वों पर बल देता रहा है। बल तो आत्मा पर दिया जाना चाहिए; रूप-आकारों पर नहीं! रूप-आकार, अन्तर्निहित आत्मा की वास्तविक एकता पर प्रभाव नहीं डाल सकते।

अतः धर्म को अब निश्चित रूप से यह समझ लेना चाहिए कि मानव-इतिहास में धर्म अब तक गलती पर था। धरती पर इसने अपना वास्तविक उद्देश्य पूरा नहीं किया। यह अत्यधिक दुःख-कष्ट पहुँचाने का कारण बना रहा है। इसे अपनी त्रुटि को पहचान कर, उसे सही करना चाहिए और निश्चय करना चाहिए कि एक नया अध्याय आरम्भ करना है जिसमें इसकी भूमिका भिन्न है। हमें एकीकर्ताओं की भूमिका निभानी होगी।

गलती को सुधारने में कभी भी इतनी देर नहीं होती कि उसे सुधारा न जा सके। वास्तविक धर्म का पुनरुत्थान किया जाना चाहिए, सच्चे धर्म का, जो कि एक ही है, पुनरुत्थान किया जाना चाहिए। **धर्म अनेक नहीं हैं। एक ही धर्म है, मानव को पुनः भगवान् की ओर ले जाने का पथ, जीव का वैश्व सत्ता की ओर ऊर्ध्वगमन, मनुष्य को प्रपंच से पुनः एक बार अपने दिव्य स्रोत, अपने असली धाम से जोड़ना।** और अब एकत्रित हुए धार्मिक अगुआओं को गम्भीरता पूर्वक उस गलती का सुधार करने में जुट जाना चाहिए जो अब तक दिशा भ्रान्ति के कारण होती रही है तथा एकत्व के उद्घोषक, समरसता के उद्घोषक की नयी भूमिका को निभाना चाहिए।

अतः सब धर्मों की सत्ता इसीलिए है कि वह मनुष्य की आत्मा को इसकी वास्तविक दिव्य स्थिति, ईश्वरीय स्थिति तक ऊपर उठाएँ ताकि मनुष्य का स्वभाव प्रेम, दया, करुणा, पवित्रता, उदात्तता, सौन्दर्य, शुद्धता और पावनता आदि दैवी गुणों से भरपूर हो जाये। मानव का हृदय, इन उदात्त दैवी गुणों-जैसे निःस्वार्थता, एकता, सहानुभूतिशीलता और सेवा भाव इत्यादि के निवास के लिए ही है। और इनका होना ही वास्तविक धर्म है। परमात्मा की सच्ची सन्तान बनना, उसकी सृष्टि का सच्चा द्रष्टा बनना ही धार्मिक व्यक्ति होना है।

हम परमात्मा के प्रतिनिधि हैं, अतः हमारे जीवनों में से उस परमात्मा की परिपूर्णता, सर्वश्रेष्ठता, सारे संसार को दिखायी देनी चाहिए। केवल तभी इक्कीसवीं शताब्दी की मानवता में नये युग का प्रभात हो सकता है। धर्म एकता लाने वाली एक बड़ी ताकत बन सकता है, और इसे निश्चित रूप से यह बनना चाहिए। तब हम कह सकते हैं कि भगवान् ने मनुष्य से वास्तव में कुछ कहा है और अब पुनः धर्म, मानव-समाज में अपने सही स्थान पर आया है, और अब इसने अपना उद्देश्य पूर्ण किया है, मानवता में एकत्व लाने की महान् भूमिका, उदात्त भूमिका इसने निभाई है, मनुष्य को अपने वास्तविक आध्यात्मिक स्वभाव के प्रति जागरूक किया है। क्योंकि **वास्तव में तो सबके भीतर वही एक जैसी परमात्मा की ज्योति का निवास है जो कि सबकी अपनी शाश्वत सच्ची पहचान है।**

****

आप दिव्य ज्योति हैं

उज्ज्वल दिव्यात्मा, कोई दीप किसी आवरण के नीचे ढके जाने के लिए नहीं जलाया जाता। दीप का उद्देश्य या प्रयोजन अपने चारों ओर प्रकाश फैलाना और अन्धेरे को समाप्त करके कण-कण को आलोकित करना होता है। यह सब ओर फैल कर अपनी आभा से दीप्तिमान् होता रहता है।

यहाँ जो कुछ भी ज्योतिर्मय है, वह अन्धकार से परे ज्योतियों की परम ज्योति से ही प्रकाशमान है, और आप लोग उसी महान् ज्योति की किरणें हैं। दीप्तिमान् होना आपका जन्मसिद्ध अधिकार है और प्रकाश आपका नित्य स्वरूप है।

फिर भी हम प्रार्थना करते हैं-"**तमसो मा ज्योतिर्गमय**" (मुझे अन्धकार से प्रकाश की ओर ले चलो)। हम यह भी कहते हैं "**धियो यो नः प्रचोदयात्**" (वह मेरी बुद्धि को प्रदीप्त करें)। यह विरोधाभास और असंगति क्यों? आप-जो ज्योतिषां ज्योतिः हैं, आप जो दिव्य तथा आध्यात्मिक प्रभा के ज्योतिर्मय केन्द्र हैं, ईश्वर से स्वयं को अन्धकार से प्रकाश की ओर ले जाने की प्रार्थना क्यों करते हैं? यह तमस् कहाँ से आ गया है?

यदि आप '**तमसो मा ज्योतिर्गमय**' प्रार्थना करते हैं तो इसका कारण यह नहीं है कि आपके भीतर अन्धकार छाया हुआ है। आप ज्योति के लिए याचना नहीं कर रहे हैं; क्योंकि आप स्वयं ज्योति हैं। "मैं प्रकाश में हूँ, प्रकाश मुझमें है, और मैं स्वयं प्रकाश ही हूँ।" यही एक मात्र सत्य है। बाकी सब, कुछ नहीं है।

महान् मनीषियों द्वारा इस तथ्य की सिद्धि की जा चुकी है कि आपके विचारों के ऊपर जाने की सीमा आकाश तक है। अतः आप उस अन्धकार को त्याग दीजिए, जो वास्तव में आपमें नहीं है पर प्रतीत होता है कि है। इस अन्धकार के लिए एक विशेष शब्द- 'आवरण' का प्रयोग

किया गया है। अतः आपकी प्रार्थना में उसको हटाने की माँग की गयी है, जो आपके जन्मसिद्ध अधिकार-आपके प्रकाश को ढके रखता है।

और इस अन्धेरे को हटाने के लिए इस प्रार्थना का कर्मों द्वारा अनुसरण करना अति आवश्यक है। इस कर्म को योग और साधना कहते हैं। अन्धकार को हटाने तथा प्रकाश को फिर से प्राप्त करने के लिए किया गया प्रयत्न ही धर्म-विज्ञान है। यह आपका सर्वोच्च कर्तव्य है।

आप नित्य गहन रुचि तथा अत्यधिक उत्साह के साथ इसे करने में लगे रहें और अपने जीवन को उत्साह से पूर्ण एक रोमांचक अभियान में बदल दें। आपका ध्यान हर समय उस परम प्राप्तव्य पर लगा रहे। "मैं समस्त अन्धकारों से परे ज्योतियों की परम ज्योति हूँ। प्रकाश पर मेरा जन्मसिद्ध अधिकार है और प्रकाश मेरी सहज अवस्था है। अपने आप के साथ-साथ दूसरे लोगों को भी देदीप्यमान् करना और अन्धकार को हटाना मेरे जीवन का प्रयोजन है" आपको इन शब्दों में निहित अर्थों का अनुभव हो और ईश्वर आपके इस महिमामय अभियान में आपकी सहायता करें!

****

परमाध्यक्ष स्वामी जी का पत्र :

(१९९७)

'दिव्य जीवन' के पाठकों तथा 'दिव्य जीवन संघ' के सदस्यों की सेवा में

सौभाग्यशाली अमर आत्मन् !
प्रिय साधको तथा जिज्ञासुओ!

परम पिता परमात्मा की दिव्य कृपा एवं आराधनीय और प्रिय सद्गुरु स्वामी शिवानन्द जी महाराज का प्रेमाशीष सदा-सर्वदा आप पर रहे! अपने देश की स्वतन्त्रता-प्राप्ति की स्वर्णिम जयन्ती के विशेष मांगलिक समारोह के उपलक्ष्य में मैं अपनी भ्रातृत्व-भाव-भीनी शुभकामनाएँ आप सबको इस पत्र के माध्यम से भेज रहा हूँ। यह स्वर्ण जयन्ती ब्रिटिश भारत के स्वाधीन घोषित होने की अर्थात् स्वतन्त्र भारत की है जो वस्तुतः भारतवर्ष के नाम से अभिहित है। निःसन्देह देश-भर में कई विशेष कार्यक्रम आयोजित किये जा रहे हैं- केवल स्वाधीनता दिवस मनाने हेतु नहीं, अपितु स्वर्ण जयन्ती के विशिष्ट समारोह को एक विशिष्ट रूप देने के लिए। ये समस्त विशेष आयोजन केन्द्रीय सरकार के निर्देशन में ही सम्पन्न होंगे। ऐसी ही आशा है।

यह स्वर्ण जयन्ती देश की सरकार के लिए ही ऐतिहासिक युगान्तरकारी घटना नहीं है; बल्कि मातृभूमि भारत माता की प्रत्येक सन्तान के लिए भी उतनी ही महान् घटना है। हर देश-भक्त नागरिक के लिए यह स्वतन्त्रता-दिवस महत्त्वपूर्ण दिवस है। इसी प्रकार 'दिव्य जीवन' के प्रत्येक पाठक एवं 'दिव्य जीवन संघ' के प्रत्येक सदस्य के लिए भी इसकी उतनी महत्ता है। यह बाह्य जगत् के व्यावसायिक, सामाजिक आदि सांसारिक कार्यकलापों में रत जीवन यापन करने वाले नागरिकों के लिए ही नहीं, अपितु आप सब पाठकों एवं दिव्य जीवन संघ के सदस्यों के लिए भी महत्त्वपूर्ण है, जो योग-वेदान्त एवं ध्यानाभ्यास द्वारा आध्यात्मिक साधनामय जीवन व्यतीत कर रहे हैं। राष्ट्र की इस अति-विशेष घटना का सम्भवतया आपके लिए तो और भी अधिक महत्त्व है अपेक्षाकृत ऐहिक जीवन व्यतीत करने वाले अगणित नागरिकों के।

जरा सोचिए, आज आप जो कुछ भी हैं, जिस आध्यात्मिकता को आप प्रदर्शित करते हैं, जो साधना अभ्यास आप करते हैं, जिस भी धार्मिक आदर्श, सदाचार, परोपकार का पालन जीवन में आप करते हैं; ये सब इसलिए सम्भव हो पाया है कि आपने इस पुण्य-भूमि, मातृभूमि में जन्म लिया है। आप जो भी हैं अपने अतीत के गौरवमय इतिहास की ही छवि हैं। आध्यात्मिक जिज्ञासु, साधक अथवा मुमुक्षु और योगी के रूप में आप जो साधनाभ्यास कर रहे हैं, वह सब आपको अपने देश भारत से सांस्कृतिक एवं आध्यात्मिक विरासत के रूप में प्राप्त हुआ है। इसी तथ्य को दृष्टिगत रखते हुए आप सोचिए कि अगर आपका जन्म भारत में न हुआ होता, जिसकी संस्कृति सनातन है, तो आप भी बाकी देशों के उन साधारण नागरिकों की ही तरह होते जिनकी संस्कृति का जन्म इस धरा पर बहुत बाद में हुआ। क्या अब आपको स्पष्ट हो गया कि आपका वैशिष्ट्य क्या है? आप आध्यात्मिक सम्पदा सम्पन्न व्यक्ति हैं। आप वंशज हैं उस आध्यात्मिकता के जो संसार को अति-पुरातन सभ्यता और सनातन संस्कृति से प्राप्त हुई है। आप उस अपूर्व, अनोखी आध्यात्मिकता के भागीदार हैं जिसकी गहन गम्भीरता देश के जन-जीवन में समायी हुई है, जो अखण्ड-अबाध रूप से गतिशील है, जिसकी धारा सतत रूप से प्रवाहित है। भले ही देश के इतिहास में राजनैतिक-सामाजिक कितने भारी परिवर्तन आये हों, कितने की उलट-फेर हुए हों, परन्तु संस्कृति की गति, आध्यात्मिकता के प्रभाव की गति निरन्तर प्रवाहित रही है। इस प्रकार

आज आप नैतिक, सांस्कृतिक तथा आध्यात्मिक रूप से जो भी हैं वह एक भारतीय नागरिक होने के नाते ही हैं; क्योंकि आपकी मातृभूमि भारत है।

ज्योतिर्मय दिव्य आत्माओ ! दिव्य जीवन के मेरे प्रिय सहभागियो! उपर्युक्त तथ्यों से प्रेरणा प्राप्त कर आप गम्भीरतापूर्वक सोचिए, विचार कीजिए कि इस पवित्र एवं आनन्ददायी स्वर्ण जयन्ती के उपलक्ष्य में इस राष्ट्रीय पर्व को बहुमूल्य तथा समृद्ध बनाने में आपके सहयोग का रूप क्या होगा? सहयोग स्वर्णिम जयन्ती की बाह्य शोभा बढ़ाने मात्र के लिए ही नहीं, अपितु उसके महत्त्व की स्थायी अभिवृद्धि के लिए हो, जिसका परिणाम भी ठोस हो। प्रथमतः कर्तव्य तो आपका एक भारतीय नागरिक होने के नाते ही है। प्रमुखतः एक आध्यात्मिक व्यक्ति के नाते, सद्गुरुदेव स्वामी शिवानन्द जी महाराज के दिव्य जीवन के पारिवारिक सदस्य होने के नाते आपका उत्तरदायित्व और अधिक बढ़ जाता है; क्योंकि गुरुदेव स्वामी शिवानन्द जी का हृदय राष्ट्र-प्रेम से ओत-प्रोत था जिसके परिणाम-रूप में, उनकी स्व-रचित रचना प्रस्तुत है, शीर्षक है-'भारत माता'। इसकी प्रत्येक पंक्ति में भारत माता के प्रति गुरुदेव के हृदय का प्रेम झलकता है।

भारत माता

भारत माता पर रहे ईश का मंगलमय आशीर्वाद विशेष
हमारा गौरवशाली पावन हिन्द देश।
उच्च अध्यात्म-संस्कृति-सम्पन्न ऋषि, योगी, सन्त-महात्माओं का देश।
भगवत्साक्षात्कार ही जीवन-उद्देश्य, भारत ही केवल ऐसा देश।
ऋषि-मुनि-योगियों से भरपूर केवल भारत देश ।।

भारत ने जन्म दिया कुशल राजनीतिज्ञों, शक्तिशाली सम्राटों को,
ऋषि-मुनियों, सन्त-महात्माओं, योगियों, कवियों औ' शूरवीरों को।
युधिष्ठिर, अर्जुन, वाल्मीकि, विश्वामित्र से कर्मवीरों को,
व्यास, वसिष्ठ, शंकर को, भगवान् राम औ' कृष्ण अवतारों को ।।

भारतभूमि है धर्म-भूमि, जहाँ जन-साधारण करता अभ्यास यम-नियम का,
यह पुण्य भूमि, जहाँ प्रवाहित होती सिन्धु औ' गंगा-यमुना ।
यह है प्रशान्त भूमि, सहिष्णु, उदार धर्मावलम्बियों की
रहे सतत कृपा-वृष्टि इस पर परमात्मा की,
जय हो भारत की, जय हिन्द देश की।।

बने एकता-प्रेम औ' कर्तव्यपरायण भारतमाता की सन्तान,
ईश्वर उन्हें स्वास्थ्य, दीर्घायु, शान्ति व समृद्धि करे प्रदान।
बनाये भगवान् उन्हें साहसी, वीर, कर्तव्यनिष्ठ, दिव्य औ' गुणवान्।
भरे उनके हृदय में निश्छल शुद्ध भावना देश-भक्ति की महान् ।।
हो भारत का यश समग्र विश्व में व्याप्त।
भारत की गौरवमयी सभ्यता-संस्कृति का फैले चहुँ ओर दिव्य प्रकाश।

विश्व-बन्धुत्व की भावना गुरुदेव के दिल-दिमाग में समायी हुई थी। उनका प्रेम समूचे विश्व से था। विश्व-प्रेमी होने के नाते भारत से तो उन्हें अथाह प्रेम था; क्योंकि यह उन्हें स्पष्ट ज्ञात था कि विश्व-शान्ति, विश्व-कल्याण, विश्व-सामंजस्य, मानव-एकता को बनाये रखने में भारतीय सभ्यता-संस्कृति और आध्यात्मिकता ही का विलक्षण सहयोग है। गुरुदेव ने अनुभव किया कि भारत की आध्यात्मिक जीवन-शैली और मानवता की दिव्यता का मानव जाति के भविष्य निर्माण में विशेष प्रभाव है। समूचे विश्व के मानव-परिवार के कल्याण और सुरक्षा हेतु भारतवर्ष को विशिष्ट भूमिका निभानी है। वे भारत और विश्व के अटूट आन्तरिक सम्बन्ध तथा भारत के नव-जागरण एवं विश्व-पुनरुत्थान के अन्तर्निहित सम्बन्ध को भली-भाँति जानते थे। अब पुनः उस सन्दर्भ पर लौटते हैं जहाँ मैंने गुरुदेव-रचित कविता को उद्धृत किया था। स्वाधीन भारत की अर्धशताब्दी का यह महत्त्वपूर्ण अवसर है। यह विचारणीय विषय है कि दिव्य जीवन के अनुयायियों का चिरस्थायी योगदान क्या होना चाहिए, जिससे भारत के प्रति आपके सहज स्वाभाविक प्रेम का साकार रूप में प्रकटीकरण हो? आपकी मातृभूमि भारतवर्ष के नाम से अभिहित है। निःसन्देह आपकी तात्कालिक एवं स्वतःप्रसूत प्रतिक्रिया यही होगी कि राष्ट्रीय आचार संहिता के निष्ठापूर्वक पूर्णरूपेण पालन द्वारा भारत के आदर्श नागरिक सिद्ध होने की प्रतिज्ञा करें। यह राष्ट्रीय आचार संहिता (THE DIVINE LIFE) पत्रिका में पिछले कई माह से लगातार छप रही है और जिसकी महत्ता पर मैंने इसके जून अंक में विस्तृत प्रकाश भी डाला था। स्वाभाविक है कि मेरे प्रश्न का यही उत्तर होगा कि देश के कोने-कोने में 'राष्ट्रीय आचार संहिता' का प्रचार-प्रसार किया जाये। अन्य प्रान्तीय भाषाओं में अनुवाद का विचार भी आपको सूझेगा। वस्तुतः यह सब तो किया जा चुका है। दिव्य दीवन संघ की बहत्तर शाखाओं के सक्रिय सदस्यों को लघु पुस्तिका (पाकेट बुक) के रूप में राष्ट्रीय आचार संहिता को भेज कर देश के लगभग सभी प्रान्तों में पहुँचा दिया गया है। क्षेत्रीय प्रादेशिक भाषाओं में इसके अनुवाद का कार्य तो कुछ वर्ष पूर्व हो गया था, जिसका वितरण सम्पूर्ण भारत में किया जा रहा है; किन्तु यह मुख्यतया दिव्य जीवन के सत्संगियों में ही वितरित हो पाया। विभिन्न वर्गों, विविध भागों तक इसे पहुँचाने का कार्य तो अभी शेष है जिसकी आज नितान्त आवश्यकता है। यह उत्तरदायित्व अब आपको ही निभाना है। पत्रकारों का, सभी स्थानीय अधिकारियों का प्रोत्साहन, समर्थन एवं सक्रिय सहयोग अपेक्षित है। ग्राम पंचायत के मुखिया से ले कर प्रान्त के मुख्यमन्त्री तथा उनसे सम्बन्धित अन्य मन्त्रियों को भी राष्ट्रीय आचार संहिता से अवगत कराना है। स्काउट-प्रशिक्षण-शिविर, युवा क्लब, युवा संस्थाओं एवं सांस्कृतिक संस्थानों द्वारा युवाओं की शक्ति को भी इसमें लगाया जाना चाहिए। अगर अगस्त माह के अन्त तक सम्भव न हो पाये तो इस वर्ष के अन्त तक तो अवश्य ही यह कार्य सम्पन्न हो जाना चाहिए कि एक भी भारतीय नागरिक ऐसा न हो जिसे राष्ट्रीय आचार संहिता का पूर्ण ज्ञान न हो। यह निर्विवाद सत्य है कि राष्ट्र का सुधार प्रत्येक नागरिक के सुधार में ही निहित है। एक साधारण सामान्य नागरिक को ही नहीं, बल्कि जन-नेताओं एवं प्रशासनिक अधिकारियों को भी राष्ट्रीय आचार संहिता के अक्षरशः पालन द्वारा जीवन में परिवर्तन लाने की आवश्यकता है।

ये सब उचित है, अनिवार्य है, अति-उत्तम है; किन्तु इससे और अधिक महत्त्वपूर्ण कार्य अभी बाकी है। विगत स्वर्णिम इतिहास को पुनः प्रतिष्ठित करना है जिसे पिछले पचास वर्षों में एक के बाद एक सत्तारूढ़ अधिकारियों में दूरदर्शिता के अभाव और ऐतिहासिक गौरव की अवहेलना के कारण खोया जा चुका है। मूलभूत मान्यताओं एवं प्रशासनिक आदर्शों की प्राथमिकता को समझने में वे असफल रहे। उनमें राष्ट्रपिता गान्धी जी द्वारा स्थापित उच्चादशों, महान् सिद्धान्तों के प्रति विश्वास का नितान्त अभाव था। भारत की स्वतन्त्रता के लिए गान्धी जी ने आजीवन अहिंसा, सत्याग्रह-आन्दोलन चलाये रखा जो मानव-इतिहास में अभूतपूर्व, अद्वितीय घटना मानी जाती है। स्वतन्त्रता-

प्राधि के अभी ६ महीने भी पूर्ण नहीं हुए थे कि राष्ट्र के लिए उन्होंने अपने प्राणों तक का बलिदान कर दिया। स्वतन्त्रता का मूल्य उन्होंने अपने प्राणोत्सर्ग द्वारा चुकाया। आर्थिक, सामाजिक, नैतिक, राजनैतिक, वैयक्तिक एवं सामूहिक तौर से समूचे राष्ट्रीय जीवन में एक नये युग को प्रतिस्थापित किया था। वर्तमान भारत की पुकार है, अनिवार्य माँग है इस युग को पुनर्जीवित करने की।

अपने नेताओं द्वारा २ अक्तूबर तथा ३० जनवरी के कार्यक्रमों का आयोजन; बापू, गान्धी जी के नाम से सड़क, मुहल्ले एवं नगरों के नामकरण, सार्वजनिक स्थानों में गान्धी जी की मूर्ति स्थापना और अनावरण, नोटों पर गान्धी जी की मुखाकृति अंकित करने में ही अपने कर्तव्य की इतिश्री मान कर मिथ्या सम्मान का ही परिचय देते हैं। ऐसे में जन-कल्याण तो कुछ हो न पाया। परिणाम स्वरूप सामान्य भारतवासी दुःख ही झेलते रह गये। मातृभूमि के प्रत्येक नागरिक के हृदय में गान्धी जी उन महान् आदर्शों, सिद्धान्तों एवं मान्यताओं को बिठाना चाहते थे जिनके लिए वे जीए और मरे; किन्तु राष्ट्र ने उनके प्रति उपेक्षा-दृष्टि रखी, अवज्ञा दिखायी। उनके आदर्शों में प्रमुख स्थान था-दरिद्रनारायण की सेवा और जनकल्याण का। साथ-साथ जाति, वर्ण और धर्म की असमानता को दूर कर मानव मात्र में प्रेम और बन्धुत्व की भावना उत्पन्न करने की अपरिहार्य आवश्यकता उन्होंने समझी। पवित्र लक्ष्य को पवित्र साधनों द्वारा प्राप्त करने की उनमें तीव्र आकांक्षा थी। अहिंसा, सत्य, ब्रह्मचर्य (मनसा वाचा-कर्मणा पवित्रता), निजी एवं सार्वजनिक जीवन में सदाचार के पालन को उन्होंने सर्वोपरि स्थान दिया। इन सब आदर्शों के वह मूर्तिमन्त रूप थे; बल्कि इनसे भी बढ़ कर थे। अपने आदर्शों की पूर्ति उन्होंने पूर्ण निर्भयता और साहस से की जिसका स्रोत था भगवन्नाम में उनकी अडिग निष्ठा और दृढ़ विश्वास। नित्य दैनिक प्रार्थना द्वारा वह भगवान् से निरन्तर अपना सम्बन्ध बनाये रखते थे। जीवन की अत्यन्त विकट परिस्थितियों का सामना एवं दुर्जेय बाधाओं को पार करने में वह धर्मग्रन्थों के ज्ञानोपदेश से मार्गदर्शन प्राप्त करते थे।

मानव-लक्ष्य की पूर्ति हेतु निजी जीवन-शैली का आदर्श जो उन्होंने हमारे सम्मुख प्रस्तुत किया उसके प्रति आस्था न दिखाते हुए जो अवहेलना और अवज्ञा हमारे द्वारा हुई उस भूल को सुधारने का उचित अवसर आ पहुँचा है। पन्दरह अगस्त का दिवस ही इसके लिए समुपयुक्त एवं समुचित अवसर है कि गान्धीवादी आदर्शों-सामाजिक व धार्मिक समानता के प्रति पुनर्समर्पण करें। निःस्वार्थता का सिद्धान्त, अहिंसा-सत्य का निजी एवं सार्वजनिक जीवन में निष्ठापूर्वक पालन करें। उच्चादर्शों का पालन कर जीवन में उसके प्रकटीकरण के लिए प्रत्येक अवसर का लाभ उठायें। इसी में भारत के नवोदय की सम्भावना है। १५ अगस्त से आरम्भ होने वाला आगामी ५० वर्षों की अवधि का समय स्वर्णिम युग सिद्ध हो सके, इसी में भारत का भाग्य सुरक्षित है। ऐसा नवनिर्मित भारत नवजीवन में जागृति पैदा कर नवजीवन का सन्देश लाये और गौरव एवं भाग्योदय के लिए अग्रसर हो। भारत की आत्मा उत्तिष्ठित और जागृति का सन्देश सुने और अपने वास्तविक स्वरूप का परिचय अपने ज्योतिर्मय आदर्श मानव-जीवन से दे सके।

महान् गुरु एवं उत्प्रेरक स्वामी विवेकानन्द तथा परम पूजनीय गुरुदेव के सजीव प्रेरणादायी विचारों को उद्धृत किये बिना विषय का उपसंहार अधूरा ही रहेगा। स्वामी विवेकानन्द जगत् के जाने-माने देशभक्तों में से थे। मातृभूमि भारत के प्रति उनके उद्गार सुनने योग्य हैं।

"क्या भारत निष्प्राण हो जायेगा? अगर भारत की आत्मा निष्प्राण हो गयी तो समूचे विश्व से आध्यात्मिकता विनष्ट हो जायेगी। समस्त नैतिक मूल्यों का विलोप हो जायेगा। आदर्शवाद लुप्त-प्राय हो जायेगा और विभिन्न देवी-देवताओं की पूजा के रूप में भोग-विलास का साम्राज्य छा जायेगा,

पनपने लगेगा। धन स्वीकार करने वाले पुजारी-पुरोहितों का बोलबाला हो जायेगा। विविध धर्मानुष्ठानों की प्रतिस्पर्धा के द्वारा ढोंग का ढोल पीटा जायेगा। मानव-आत्मा का हनन होने लगेगा। ऐसा कदापि न होने देना चाहिए। क्या सचमुच भारत की आत्मा मृतप्राय-सी हो जायेगी? क्या भारत माता की पुकार व्यर्थ जायेगी? नैतिकता, पवित्रता और आध्यात्मिकता की प्रतीक सत्य सनातन भारत माता, यह भारत भूमि ऋषियों की भूमि है, अवतारों की भूमि है जहाँ अब भी अनेकों भगवद्स्वरूप महान् आत्माएँ विद्यमान हैं। इस विशाल विश्व के नगर-नगर, डगर डगर, वन-उपवन अर्थात् कोने-कोने में दीपक ले कर ढूँढ़ने पर भी भारत में जन्मे सन्त-महात्मा नहीं मिलेंगे।"

"सम्पूर्ण जगत् मातृभूमि भारत का चिरऋणी है।"

"भारत के उत्थान का आधार आत्मबल है न कि शारीरिक बल, शान्ति और प्रेम की ध्वजा फहराने में है न कि विनाश की लाल झण्डी दिखाने में। भारत की छवि जो मैं स्पष्ट देख रहा हूँ कि भारत माता पुनः जाग उठी है। पुनर्जीवित हो कर वह पहले की अपेक्षा और अधिक दमकते गौरव एवं निखार से सिंहासन पर शोभायमान है। संसार भर में उसके द्वारा सुख-शान्ति का उद्घोष हो।"

"मेरे भारतीय बन्धुओ! सब मिल कर जी-जान से जुट जायें। अब प्रमाद का समय नहीं है। भावी भारत का निर्माण हमारे हाथों में है जो आज के निर्णयात्मक ठोस कदम पर निर्भर करता है। भारत माता कातर दृष्टि से हमारी ओर ताक रही है। उसकी दृष्टि हम पर टिकी है। वह स्वयं मूक है। उठें, जागें और दर्शन करें प्रफुल्लित रूप में शाश्वत सिंहासन पर विराजित भारत माता के। हमारी यह भारत भूमि पहले से भी अधिक गौरवमयी हो उठी है।"

(पृष्ठ ७८,८३, ८९; 'विवेकानन्दा-हिज़ काल टू द नेशन'; अद्वैत आश्रम, कलकत्ता)

अन्ततः मैं आपका ध्यान पूजनीय गुरुदेव के उस लेख की ओर आकर्षित करता हूँ जो अँगरेजी पत्रिका 'द डिवाइन लाइफ' के अगस्त अंक के पृष्ठ १७ और १८ में 'स्पीरिचुअल इण्डिया' शीर्षक से छपा है। आद्योपान्त उसे ध्यानपूर्वक पढ़िए। भारतवर्ष की महत्ता को भली-भाँति जानिए-समझिए कि आपकी मातृभूमि का आपके जीवन में सर्वोपरि स्थान होना चाहिए। इस स्वर्ण जयन्ती के अवसर पर सच्चे और आदर्श नागरिक के रूप में भारत के प्रति अपनी सेवाएँ सभी सम्भव रूपों में अर्पित कीजिए।

आपके सर्वकल्याण, सुख-समृद्धि, लौकिक एवं आध्यात्मिक जीवन के साफल्य की सादर-सप्रेम

शुभकामनाओं-सहित ।

ॐ तत्सत्! ॐ शान्ति!

अगस्त १९९७

गुरुदेव-आश्रित
स्वामी चिदानन्द
सही
(स्वामी चिदानन्द)

नववर्ष-सन्देश

(२००३)

ॐ ॐ ॐ
ॐ श्री गणेशाय नमः। ॐ श्री गुरुभ्यो नमः। ॐ श्री विश्वनाथाय नमः!

गुरुर्ब्रह्मा गुरुर्विष्णुर्गुरुर्देवो महेश्वरः ।
गुरुः साक्षात् परब्रह्म तस्मै श्रीगुरवे नमः ।।

मैं परब्रह्म परमेश्वर रूप अपने आध्यात्मिक आचार्य सद्गुरुदेव को भक्तिपूर्वक नमन करता हूँ, वन्दन करता हूँ, साष्टांग प्रणिपात करता हूँ, जो अखिल विश्व और अनन्तकोटि ब्रह्माण्डों के सृष्टिकर्ता ब्रह्मा, पालनकर्ता विष्णु एवं संहारकर्ता महेश्वर हैं।

उज्ज्वल अमर आत्मन् । ज्योतिर्मय ईश्वर की प्रिय सन्तान!

इस धराधाम के निवासी समस्त बन्धुवर्ग! समूचे विश्व के मानव बन्धुओ! आपके द्वारा स्वामी चिदानन्द को नववर्ष के लिए निवेदन किया गया है। नववर्ष सन्देश सन् २००३ ए. डी. सन्निकट है, कुछ दिन ही शेष हैं, आज२७ दिसम्बर है, केवल चार दिन ही शेष हैं, पाँचवें दिन होगा-नूतनवर्ष का शुभागमन; १ जनवरी २००३।

पहले भी कई बार नववर्ष-सन्देश देने का मुझसे अनुरोध किया जाता रहा है, तदनुसार मैंने सन्देश दिया भी। इस भूतल पर कुछ नवीन नहीं। बोलने-कहने को भी नया नहीं; परन्तु श्रोतागण अवश्य नये हो सकते हैं और पाठकगण भी नये हो सकते हैं। ५० वर्ष पूर्व जो मैंने सन्देश दिया, उस पीढ़ी का स्थान नयी पीढ़ी ने ले लिया। इसलिए उस दृष्टिकोण से यह सन्देश सदा नया है, नित्य नवीन है; क्योंकि जो अब सुनेंगे अधिकतर नये हैं, पहले वाले नहीं।

आपसे मेरा प्रथम आग्रह है, मेरा सर्वप्रथम प्रबोधन है--नववर्ष का शुभारम्भ आप अपने अन्तःस्तल से, सच्चे मन से गम्भीरतापूर्वक भगवान् से प्रार्थना-याचना करते हुए करें कि यह नया साल आपके जीवन काल का एक आदर्श वर्ष सिद्ध हो, जिसके स्वर्णिम ३६५ दिवस आदर्श तथा दिव्यतापूर्ण व्यतीत हों अर्थात् जिसका एक-एक दिन मनसा-वाचा-कर्मणा शिष्टता, पवित्रता, दयालुता, करुणा और सत्यपरायणता से जिया जाये। आपके दैनिक जीवन यापन की शैली सर्वभूत हितार्थ हो। आने वाले आगामी वर्ष का प्रत्येक दिन पर हित, पर-उपकार में बीते, दूसरों के लिए हर्षप्रद हो। आपका पर-हित चिन्तन केवल मानव बन्धु वर्ग तक ही सीमित न रह कर आपके आसपास के जगत् सभी जीव-जन्तुओं, सभी पेड़-पौधों और चर-अचर, यहाँ तक कि धरती की घास के लिए भी हो। ये सब भी आपके ही परिवार के अंग हैं। मात्र कुछ दिनों के लिए ही नहीं, अपितु १ जनवरी २००३ से ३१ दिसम्बर २००३ तक दिनानुदिन इस दयालु वृत्ति का अनुपालन होना चाहिए।

सन् २००२ के अन्तिम दिवस ३१ दिसम्बर को सोते समय तथा सन् २००३ की १ जनवरी को जागते हुए यह दृढ़ निश्चय करें, स्वयं से प्रतिज्ञा करें-"नववर्ष २००३ को पिछले वर्ष से चारगुना अधिक उपयोगी, महत्त्वपूर्ण, अधिक सुन्दर, बोधप्रद और आदर्श बनाना है। पुरातन वर्ष की अपेक्षा नूतन वर्ष बेहतर हो। आगामी वर्ष, बीते हुए वर्ष से अधिक मान्यतापूर्ण हो।" इस धारणा को दृढ़ से दृढ़तर करते जाइए। समय निकाल कर गत वर्ष का पुनरावलोकन करें। केवल अपनी अच्छाइओं का नहीं, बुराइयों का भी, केवल अपने गुणों का नहीं, अवगुणों का भी, केवल अपनी विशेषताओं का नहीं, अपनी त्रुटियों-कमजोरियों का भी निष्पक्ष भाव से पुनर्विवेचन करें। ताकि अन्तरावलोकन द्वारा आप गत वर्ष का सामान्य परिचय प्राप्त कर सकें। अपनी कमियों को दूर करने की ठान लें। अपने में सुधार लाने का पक्का निश्चय कर लें। कोई मानव अपने में पूर्ण नहीं। केवल परमात्मा ही परिपूर्ण है। अपनी छोटी से छोटी गलतियों को भी सुधारें और ध्यान रखें कि नये साल में वह दुबारा न होने पायें। पिछले वर्ष से शिक्षा ग्रहण करें, उस अनुभव के आधार पर नववर्ष को अधिक अच्छा, अधिक उपादेय बनायें।

आपका प्रत्येक प्रयास प्रगति की ओर हो। केवल मानब जगत् का ही नहीं, अपितु पृथ्वी-तल पर रहने वाले सभी पर लागू होने वाला व्यापक सिद्धान्त विकासोन्मुखी होने का है। निम्न से उच्च की ओर, उच्च से उच्चतर, उच्चतर से उच्चतम की ओर अग्रसर होने का है, जब तक कि परिपूर्णता की प्राप्ति नहीं हो जाती। इसी का नाम ऊर्ध्वीकरण है। अतएव मानव-जीवन का अर्थ है-उत्थान के पथ पर अग्रसर होते रहना। इसे कभी विस्मृत न करें। हमेशा ध्यान रखें कि आप जो कुछ सोचते हैं, जो कुछ बोलते हैं, वाणी से जिन शब्दों का प्रयोग करते हैं, जो भी क्रिया आप करते हैं, जिस कर्म में आप रत हैं, वह पूर्णता की ओर अभिमुख हो! उन सबके पीछे जो लक्ष्य हो, वह प्रगति-पथ में सहायक हो। मानव होने के नाते आपका जीवन बौद्धिक ज्ञान सम्पन्न होना चाहिए। आपके विचार, आपकी वाणी, आपके कर्म विशिष्ट हों। सोद्देश्यपूर्ण जीवन के विकास की प्रक्रिया में प्रभु-प्रदत्त इस बुद्धि का पूरा-पूरा प्रयोग करें। इस सूक्ति को सदैव स्मरण रखें-"मानव

जीवन का अर्थ है (विकास के सिद्धान्त के अनुसार) - पूर्णता की ओर अग्रसरण ।" विकास अर्थात् आरोहण! जीवन से अभिप्राय है-परिपूर्णता। क्योंकि जीव परमात्मा का ही अंश है। परमात्मा परिपूर्ण है, इसलिए आपका जीवन-लक्ष्य भी परिपूर्णता की प्राप्ति होना चाहिए। परिपूर्णता और दिव्यता आपमें अन्तर्हित हैं। उस प्रच्छन्न शक्ति को अभिव्यक्त करना है। जो अप्रकट है, उसे सक्रिय गत्यात्मक रूप से प्रकट करना है।

सम्पूर्ण मानव-जाति से ऐक्य का भाव स्थापित करें। आप अखिल विश्व के नागरिक बनें। आप ऐसा सोचें-"इस पृथ्वी पर वास करने वाला प्रत्येक व्यक्ति मेरा अपना भाई-बन्धु है।" सब एक हैं। भ्रातृत्व को अपने जीवन का मूल आधार बनाये रखें। दूसरों से मिले कटु अनुभवों को भूलते जायें। विशाल हृदय बनें। दूसरों की गलतियों को भुला कर महान् बनें, उदार बनें। मानव में अपूर्णता तो सदैव रहेगी ही; आप सोचें- "एक दिन उसमें सुधार आयेगा। उसकी भी प्रगति होगी।" ऐसा विचार रखते हुए इन छोटी-मोटी गलतियों को भूलते जायें और उदार चित्त बनें, क्षमाशील बनें, प्रेमिल बनें और मैत्रीपूर्ण व्यवहार करते हुए सच्चे अर्थों में मानव बनें। इसके विपरीत भावों को हृदय में स्थान न दें।

समस्त विश्व के लिए, समूची मानव जाति के लिए, ऑडियो कैसेट के श्रोताओं के लिए, वीडियो कैसेट द्वारा दर्शकों के लिए मेरा यही सन्देश है। आपका जीवन दिव्यतापूर्ण होना चाहिए। अतएव आपके भावों, विचारों, आपके कर्मों में दिव्यता का ही शत-प्रतिशत प्रकटीकरण हो। आप जहाँ भी जायें, चहुँओर के परिवेश में दिव्यता का ही संचार हो। दिव्य बनें। दिव्य होने के नाते आपका जीवन भी दिव्य हो।

हमारे परम प्रिय, परम आराधनीय, जीवन-पथ-प्रदर्शक, दार्शनिक, परम हित-चिन्तक, हमारे बन्धु परम पावन गुरुदेव श्री स्वामी शिवानन्द जी महाराज द्वारा मानव जाति को दिये गये सन्देश-उपदेश का आधारभूत मूल सिद्धान्त है-दिव्यता! दिव्यता! दिव्यता! मैं उन्हीं के सदुपदेशों की पुनरावृत्ति करता हूँ। कारण कि अखिल विश्व को गुरुदेव-प्रदत्त सन्देश से बढ़ कर सर्वोपरि सन्देश और कोई नहीं हो सकता। सबमें व्याप्त दिव्यता की अनुभूति करें। आत्मैक्य स्थापित करें। भाई-चारे की भावना को बनाये रखें। अपने भिन्न अस्तित्व को प्रधानता मत दें। मैत्री भाव को प्राथमिकता दें। महान् शाक्य मुनि तथागत बुद्ध ने कहा था- "प्रत्येक जीव के प्रति दयालु बनें, करुणैक बनें।" जिसे उन्होंने 'मैत्ता' नाम दिया। इसी को उन्होंने 'कारुण्य मैत्ता' भी कहा अर्थात् करुणापूर्ण मैत्री की संज्ञा दी।

श्रीमद्भगवद्गीता के द्वादश अध्याय का ध्यानपूर्वक स्वाध्याय करें, चिन्तन-मनन करें। विशेषकर अन्तिम आठ श्लोकों के अर्थ को हृदयंगम करें। भक्तियोग नामक इस विशेष अध्याय में भगवान् श्रीकृष्ण अर्जुन से कहते हैं- "हे अर्जुन! सुनो मेरे भक्तों के लक्षण। मेरे प्रत्ति समर्पित, भक्तिपूर्ण हृदय से अपने को मेरा भक्त कहने वाले का बोलना, उठना-बैठना, बात करना साधारण नहीं होता। उसका आचार-विचार-व्यवहार, उसका स्वभाव विलक्षण होता है।" फिर आगे कहा- "मेरे ये सब उपदेश विशेष हैं, दुर्लभ हैं।" और भगवान् कृष्ण ने अध्याय के अन्तिम आठ श्लोकों में दी गयी सारगर्भित शिक्षाओं को 'अमृताष्टक' नाम दिया। उस संक्षिप्त अंश 'शिक्षामृत' का प्रतिदिन पारायण करें। इसका पारायण आपने अपनी ही भाषा में करना है। यह सब भाषाओं में उपलब्ध है-इटैलियन, अँगरेजी, जर्मन, स्पैनिश इत्यादि। यह बहुत ही संक्षिप्त अंश है। इसका अध्ययन निरन्तर करते

रहें। भगवद्गीता का यह द्वादश अध्याय छोटा ही है। एकादश अध्याय में भगवान् अपने विश्व-रूप का दर्शन अर्जुन को कराते हैं। उसके पश्चात् है यह अध्याय। अर्जुन द्वारा आग्रह करने पर ही भगवान् श्रीकृष्ण ने विशिष्ट ज्ञानोपदेश दिया। अर्जुन ने गीतोपदेश ध्यानपूर्वक सुने। वह तो अभिभूत हो गया। विस्मित हो गया। हतप्रभ हो अर्जुन ने उन सदुपदेशों को साररूप में कहने की विशेष प्रार्थना की। तब भगवान् श्रीकृष्ण ने बारहवें अध्याय में उनका संक्षिप्त सार बतलाया। नाजीरथ के महान् सन्त ईसा जीसस के आदेशों को भी पढ़ें। जिनका जन्म बैतलेहम, पालनपोषण नाजीरथ क्षेत्र में, अन्ततः जीवन-बलिदान दिया जेरुसेलम में। धर्मपरायणता, दिव्यता की प्रतिमूर्ति महान् सन्तों की सशिक्षाओं को सदैव याद रखना चाहिए। इस सन्तात्मा की शिक्षाएँ चार ग्रन्थों में संग्रहीत हैं। उनके अनन्य अनुयायियों के नाम हैं-लूका, मार्क, मैथ्यू और जान।

इस सन्देश में भगवान् कृष्ण तथा सन्त-महात्माओं के उपदेशात्मक शब्दों को यहाँ उद्धृत किया गया है। आपमें से प्रत्येक को इसे नववर्ष-उपहार-रूप में ग्रहण करना चाहिए। गौस्पल का अध्ययन करें। भगवद्गीता के बारहवें अध्याय का नित्य पारायण करें और जीवन को उत्कृष्ट एवं महान् बनायें। अपनी दिव्यता का कभी विस्मरण न करें। अनन्तता, दिव्य संचेतनता, परमानन्द, सत्-चित्-आनन्द के महासागर की आप एक तरंग हैं। परमात्मा असीम है, शाश्वत है, अनादि-अनन्त सच्चिदानन्द सागर है। उसी सागर की आप एक बूँद हैं। सागर की बूँद होने से आप भी सत्-चित्-आनन्द ही हैं। यही आपका वास्तविक स्वरूप है। आपके इस नश्वर शरीर के अन्दर विद्यमान आपका आत्मा अनश्वर है, जो दृश्यमान नहीं है; परन्तु वही दिव्यात्मा आपकी असली पहचान है। आपके जीवन का मूलभूत आधार दिव्यता है। आपका जीवन इसी परमोच्च सत्य की अभिव्यक्ति की प्रक्रिया स्वरूप हो। सन् २००३ की प्रथम जनवरी के लिए आप सबके हितार्थ यही सद्बोधन-सन्देश है। दिये गये इस सुअवसर के लिए धन्यवाद।

परम पिता परमात्मा तथा गुरुदेव की कृपा अनुग्रह वर्षण आप सब पर सदा-सर्वदा हो !

ॐ पूर्णमदः पूर्णमिदं पूर्णात् पूर्णमुदच्युते। पूर्णस्य पूर्णमादाय पूर्णमेवावशिष्यते ।।

ॐ शान्तिः शान्तिः शान्तिः!

-स्वामी चिदानन्द

तत्त्वमसि

(गुरुपूर्णिमा-सन्देश जुलाई २००३)

उज्ज्वल अमर आत्मन्, मानव स्वरूप में दिव्यता!

इस स्वामी को बुलाया गया है, और स्वामी का विचार भी १५ मिनट केवल दर्शन के लिए आने का ही था। यह सभा किसी प्रवचन के लिए अथवा कीर्तन या भाषण के उद्देश्य से नहीं की गयी है। 'स्वामी जी यहाँ केवल दर्शन के लिए आ रहे हैं।' इसे किसी भी ढंग से कह सकते हैं-स्वामी जी यहाँ केवल आप सबके दर्शन करने के लिए आ रहे है, क्योंकि आप सब कुछ समय के लिए नाम रूपों में आबद्ध दिव्यताएँ ही हैं, यह जो आपके मानवीय नाम रूप है, यह आपकी असलियत नहीं है। आपकी असलियत इससे परे है, जिसे न आँख देख सकती है, न कान सुन

सकते हैं, न वाणी उसका वर्णन कर सकती है, न नाक उसे सूंघ सकती है और न ही हाथ उसको स्पर्श कर सकते हैं, वह इन सबसे अतीत है। और वह है क्या? उसे कहते हैं शरीरत्रय विलक्षण, पंचकोशातीत, अवस्थात्रय साक्षी, केवल निराकार, निर्गुण सच्चिदानन्द स्वरूप, एकमेव अद्वितीय परब्रह्म। आनन्द स्वरूप, चित् स्वरूप और सदा-सर्वदा है, अनादि अनन्त है। कालत्रय में उसका अभाव-भूत, भविष्य, वर्तमान में उसका अभाव कदापि नहीं, कभी भी नहीं, इससे सदा-सर्वदा वह है। उसको कहते हैं सत्, इसलिए सत् सदा, सर्वदा है। चित्, अर्थात् जड़ के रूप में नहीं है, पत्थर के रूप में या लकड़ी के रूप में वह कोई जड़ वस्तु नहीं है। वह चैतन्य स्वरूप है जो सब देखने वाला, सब जानने वाला-ज्ञान स्वरूप है, इसलिए वह चित् है। और सच्चिदानन्द परब्रह्म असीमित, अगाध आनन्द का सागर है, इसलिए वह आनन्द स्वरूप है। जो भी उसको प्राप्त कर लेता है, वह हमेशा हँसता ही... हँसता hat g ... हँसता ही रहता है। यदि उससे पूछें कि दुःख क्या है, तो वह कहता है, "दुःख क्या है मैं नहीं जानता। अरे, कोई बोलता है संसार दुःखमय है, लेकिन मैं नहीं जानता। मैं तो एक ही चीज़ को जानता हूँ-वह केवल अमिश्रित शतशः आनन्द है। परब्रह्म का दूसरा नाम है आनन्द। गुरु महाराज गाते थे, "आनन्दोऽहम् आनन्दोऽहम् आनन्दम् ब्रह्मानन्दम्" वह आनन्द केवल ब्रह्म में है। "आनन्दोऽहम् आनन्दोऽहम् आनन्दम् ब्रह्मानन्दम्। सचराचर परिपूर्ण शिवोऽहम्" ये शिव शंकर भगवान् 7 overline 51 , शिव अर्थात् मंगलमय, कल्याणप्रद, "सहजानन्दस्वरूप शिवोऽहम्, सचराचर परिपूर्ण शिवोऽहम् सदा सहजानन्दस्वरूप शिवोऽहम् आनन्दोऽहम् आनन्दोऽहम् आनन्दम् ब्रह्मानन्दम्" यह आप गुरु महाराज के 'इन्सपाइरिंग सौंग्स एण्ड कीर्तन' में प्राप्त करेंगे 'सौंग्स ऑफ़ आनन्दा (आनन्द के गीत) ! अतः आप सब आनन्द स्वरूप हैं। दुःख मिथ्या है, दुःख क्षणिक है, और उस दुःख का अनुभव भी 'आप' नहीं कर रहे हैं, आपके अन्तःकरण-चतुष्टय की भूमिका में यह दुःख-सुख, ये सब हैं, 'आप' तो उससे परे हैं। अन्तःकरण-चतुष्टय के केवल साक्षी हैं। अन्तःकरण-चतुष्टय की जो कुछ अवस्था है, वह आपकी अवस्था नहीं। दुःख आपके निकट नहीं आ सकता। जैसे अग्नि के निकट कोई चीज़ आयेगी तो भस्म हो जायेगी। दुःख आपके पास आयेगा तो दुःख जल कर भस्म हो जायेगा। दुःख का नाम-निशान नहीं रहेगा। आप ऐसे आनन्द स्वरूप है।

आप सब यहाँ एकत्रित हैं साधना सप्ताह के लिए, जो कल से प्रारम्भ होगा और सात दिनों के लिए सम्पन्न होगा, प्रतिपदा से सप्तमी तक। अष्टमी नागा है। अष्टमी के दिन कुछ कार्यक्रम नहीं। उस दिन मौन रह कर आत्मनिरीक्षण करना है, जो कुछ आपने साधना सप्ताह में सुना है, जो कुछ स्वाध्याय किया है, श्रवण किया है, उस पर मौन रह कर मनन करना है। और उस दिन लक्षार्चना के लिए जा कर बिल्वपत्ता, फूल संग्रह के लिए लाते हैं।

१९६३ में गुरु पूर्णिमा से ९ वें दिन गुरुदेव ने अपनी लोक-लीला का संवरण करके, जहाँ से आये थे, पुनः वापिस वहीं जाने का निश्चय कर लिया। अतः हम प्रत्येक गुरुपूर्णिमा का ९ वाँ दिन उनके आरोहण का दिवस शाश्वत में आरोहण, दिव्यता में आरोहण का दिवस मनाते हैं। और तब तक यह पण्डाल साधना के लिए उपयोग किया जायेगा।

और आप साधना किसे कहते हैं? साधना शब्द के माने क्या हैं? साधना शब्द के माने हैं, जो पुरुषार्थ किसी साध्य वस्तु की प्राप्ति के लिए किया जाता है, उसको साधना कहते हैं। आध्यात्मिक जीवन बिताने वाले जो साधक वृन्द हैं, उनकी वांछित साध्य-वस्तु क्या है? क्या प्राप्त करना चाहते हैं? क्या वे पैसा चाहते हैं, यश या पदवी चाहते हैं, अधिकार चाहते हैं, सत्ता चाहते

हैं, पूरे जगत् में अपने को बड़ा दिखाना, या लोग कहें कि अमुक व्यक्ति सबसे बड़ा है, ऐसा चाहते हैं? वे तो ऐसा कुछ भी नहीं चाहते, क्योंकि यह सब तो पिंजरा है, यह सब जाल है, इसे आशापाश कहते हैं। इसमें पकड़ा गया तो, "**पुनरपि जननं पुनरपि मरणं, पुनरपि जननी जठरे शयनम्, इह संसारे बहुदुस्तारे कृपयाऽपारे पाहि मुरारे।**" ऐसा कह कर जगद्गुरु आदि शंकराचार्य अपनी 'द्वादशमञ्जरिकास्तोत्रम्' में भजगोविन्दम् में कहते हैं, इस चक्कर में बार-बार नहीं आना है-

मूढ़ जहीहि धनागमतृष्णां कुरु सद्बुद्धिं मनसि वितृष्णाम्।
यल्लभसे निजकर्मोपात्तं वित्तं तेन विनोदय चित्तम् ।।

जो कुछ भी हमें प्राप्त हो जाता है हम उसी में सदा प्रसन्न रहते हैं। अतः बुद्धिशील व्यक्ति की साध्य-वस्तु क्या है? एक विवेकशील, जागरूक व्यक्ति कहता है, "मैं कोई भी अस्थायी वस्तु नहीं चाहता, तुच्छ क्षणिक वस्तु मैं नहीं चाहता, अपूर्ण वस्तु मैं नहीं चाहता। मैं वह चाहता हूँ जो परिपूर्ण है, नित्य निरन्तर और अपरिवर्तनीय है। परिवर्तन हो जाने वाली, कभी मीठी, कभी कड़वी हो जाने वाली नहीं! यह मुझे नहीं चाहिए।" इसका अर्थ है वह चाहता है, 'सर्वदुःख निवृत्ति परमानन्द प्राप्ति।' यही मोक्ष है, सदा के लिए दुःख, कष्ट, पीड़ा से छुटकारा पा कर परम अनन्त अक्षय सुख पा लेना। इसे कहते हैं-कैवल्य मोक्ष साम्राज्य। यह सर्वोच्च अवस्था है, और ऐसी अवस्था प्राप्त कर लेने पर "**यद्गत्वा न निवर्तन्ते तद्धाम परमम् मम।**" उस परम पद को प्राप्त हो कर मनुष्य लौट कर संसार में नहीं आते। और वह परम ज्योति स्वरूप है, उस स्वयं प्रकाश परम पद को न सूर्य प्रकाशित कर सकता है, न चन्द्रमा और न ही अग्नि, वही मेरा परम धाम है तथा

'न तत्र सूर्यो भाति न चन्द्रतारकं नेमा विद्युतो भांति कुतोऽयमग्निः ।
तमेव भान्तमनुभाति सर्वं तस्य भासा सर्वमिदं विभाति ।।'
-कठोपनिषद् - २ - ३ - १५

वह पूर्ण प्रकाश स्वरूप है, पूर्ण आनन्द स्वरूप है, चैतन्य प्रकाश है, उसी के प्रकाश से सब प्रकाशित है, इस पण्डाल का यह सारा प्रकाश भी !

अतः आगामी सात दिनों में आप इसी विषय पर और बहुत कुछ श्रवण करेंगे। इसलिए सही समय पर आयें, एक ही स्थान पर बैठें, प्रथम दिवस जहाँ बैठ गये, सातों दिन उसी जगह पर बैठें। जैसे बन्दर एक शाखा से दूसरी शाखा पर कूदता रहता है, ऐसे अपना स्थान न बदलते रहें। स्थिर रहें, निश्चल रहें और गुरुदेव कहा करते थे, 'दत्तचित्त हो कर श्रवण करो, सुनना है तो पूरा मन वहीं दे कर, और अन्य कहीं भी जाने न देते हुए अविक्षिप्त दत्तचित्त ! ऐसा गहन श्रवण होना चाहिए ताकि अधिक-से-अधिक लाभ उठा सकें। जितना ज्यादा से ज्यादा लाभ उठा सकते हैं, उतना लाभान्वित हो कर आप सबको धन्य बन जाना चाहिए। यही दास की याचना भगवत् चरण में, गुरु चरण में और सब सन्तों के चरणों में है-समर्थ रामदास, नामदेव, ज्ञानदेव, चैतन्य महाप्रभु और जो जो भी, जितने भी हैं, भारतवर्ष तो योगियों का, सन्त जनों का राष्ट्र है- उन सबसे यही याचना करता है आप लोगों के वास्ते ये दासानुदास, जिसको गुरु भगवान् स्वामी शिवानन्द जी महाराज ने चिदानन्द का नाम दिया। आज से बहुत साल पहले इसी दिन-१९४९ गुरुपूर्णिमा को, इस शरीर को चिदानन्द नाम दे कर आशीर्वादित किया ताकि यह सेवक कभी

अपने वास्तविक स्वरूप को न भूले क्योंकि इस नाम के उच्चारण मात्र से ही मैं कभी भूल नहीं सकता, मुझे हमेशा यही विचार आयेगा, "मैं चित् स्वरूप t और आनन्द स्वरूप हूँ।" और कुछ लोग सोचा करते थे और कहते भी थे कि जब गुरुदेव एक भजन विशेष गाते तो, ओह! गुरुदेव अपने चेले के बारे में गा रहे हैं। परन्तु वे अपने चेले के बारे में नहीं गाते थे, वे तो अपनी ही लहर में गाया करते थे-

चिदानन्द चिदानन्द चिदानन्द हूँ,
हर हाल में अलमस्त सच्चिदानन्द हूँ।
निजानन्द निजानन्द निजानन्द हूँ।
हर हाल में अलमस्त सच्चिदानन्द हूँ।
अजरानन्द अमरानन्द अचलानन्द हूँ

अजरानन्द-जरा, वृद्धावस्था रहित, अमरानन्द-मृत्यु रहित, अचलानन्द- गति रहित; मैं सदा पूर्ण हूँ, पूर्ण वस्तु हिल नहीं सकती क्योंकि सब जगह तो वह पहले से ही है, तो हिल कर जायेगी कहाँ, जहाँ जाना है, वहाँ तो पहले ही व्याप्त है क्योंकि वह परिपूर्ण है।

अजरानन्द अमरानन्द अचलानन्द हूँ
हर हाल में अलमस्त सच्चिदानन्द हूँ।
चिदानन्द चिदानन्द चिदानन्द हूँ,
हर हाल में अलमस्त सच्चिदानन्द हूँ।

इसके दो पद और भी हैं, लेकिन इतना ही बहुत है, क्योंकि मैंने ज्यादा से ज्यादा १५ मिनट बोलने को कहा था, इन्होंने कहा था कि पंडाल में सारे लोग नहीं आ सकते, आधे-आधे करके दो बार बैठेंगे इसलिए आप दोनों को बराबर समय दें। मैंने कहा ठीक है मैं दोनों को १५ - १५ मिनट दूँगा। अब इसलिए दोनों मिला कर आधा घण्टा बन जाता है। और वह आधा घण्टा हो ही चुका है।

इसलिए मैं आप सबके लिए परम आनन्द की शुभकामनाएँ करता हूँ। मैं सर्वशक्तिमान् भगवान् से प्रार्थना करता हूँ, प्रत्यक्ष भगवान् श्री स्वामी शिवानन्द जी जो यहाँ भी विद्यमान हैं और उच्चतर स्तर पर भी विद्यमान हैं, उन दोनों को प्रार्थना करता हूँ, सबसे याचना करता हूँ कि वे अपनी दिव्य कृपा की वृष्टि और चयनित आशीर्वादों की वृष्टि आप सब पर करें और आपको परम आनन्द प्रदान करें, परमानन्द, समृद्धि, प्रसन्नता, उत्तम स्वास्थ्य यहाँ पर भी और अन्ततः शरीर त्यागने पर कैवल्य मोक्ष, वह भी यहीं पर ही, फिर कभी दूर भविष्य में नहीं, किसी दूसरे जन्म में नहीं, इसी जन्म में कैवल्य मोक्ष प्रदान करें। यह मेरी विनीत प्रार्थना है। बारम्बार, तीन बार, बार-बार यही प्रार्थना है। हरि ॐ।

करुणाप्रेम मेरे साथ मिल कर एक गीत गाया करते थे, वह इस प्रकार था-बार-बार भगवान् में प्रसन्न रहो। हमेशा रहो, बार-बार प्रसन्न रहो, प्रसन्न रहो, प्रसन्न रहो, प्रसन्न रहो, बार-बार प्रसन्न रहो। इसका अर्थ है, यह जान लेना कि आप भगवान् की सन्तान हैं, यह अस्थायी, नाशवान् शरीर, जिसका इस नश्वर संसार में जन्म हुआ है, यह एक दिन जायेगा,

समाप्त हो जायेगा यह एक दिन। यह नाशवान् अस्थायी पंचभौतिक शरीर आपको लौकिक माता-पिता द्वारा मिला हुआ है, लेकिन यह अदृश्य, अनश्वर है-

न जायते म्रियते वा कदाचिन्नायं भूत्वा भविता वा न भूयः ।
अजो नित्यः शाश्वतोऽयं पुराणो न हन्यते हन्यमाने शरीरे।।

(गीताः २-२०)

तथा

नैनं छिन्दन्ति शस्त्राणि नैनं दहति पावकः ।
न चैनं क्लेदयन्त्यापो न शोषयति मारुतः ।।

(गीताः २-२३)

हड्डी, रक्त, मांस के इस भौतिक पिंजरे के भीतर यह जो अमर अविनाशी तत्त्व है, वह तुम हो, ओ श्वेतकेतु तत्त्वमसि, हमारे प्राचीन ऋषियों ने यह अवर्णनीय, अपरिवर्तनीय शाश्वत सत्य उद्‌घोषित किया।

यही कहते हुए मैं विराम लेता हूँ, अब दूसरे वक्ता कल प्रातः से आपको पूरा एक सप्ताह इसी मंच से सम्बोधित करेंगे। आप वास्तव में भाग्यशाली हैं, जो इस कलियुग में, इस भोगवाद के युग में, जहाँ लोग तुच्छ भोग पदार्थों के पीछे भागने में लगे हुए हैं-आपको यह श्रवण करने को प्राप्तव्य है। अतः आप अत्यन्त भाग्यशाली हैं। मैं आपको शुभकामनाएँ देता हूँ। मैं अल्प मात्रा में इतना ही कहता हूँ।

भगवान् का आशीर्वाद आप सब पर हो।

ॐ ॐ ॐ
कायेन वाचा मनसेन्द्रियैर्वा
बुद्ध्यात्मना वा प्रकृतेः स्वभावात् ।
करोमि यद्यत् सकलं परस्मै
नारायणायेति समर्पयामि।
श्रीमन्नारायणायेति समर्पयामि ।।
नाहं कर्ता हरिः कर्ता त्वत्पूजा कर्म चाखिलम्।
यद्यत् कर्म करोमि तत्तदखिलं शम्भो तवाराधनम् ।।

हरि ॐ तत् सत्।

स्वामी चिदानन्द

*****

शिवानन्द सत्संग भवन का उद्घाटन-भाषण गुरुपूर्णिमा पर

(जुलाई २००६)

श्री स्वामी शिवानन्द सत्संग भवन का उद्घाटन करते समय परम पावन परमाध्यक्ष श्री स्वामी चिदानन्द जी महाराज के श्रीमुख से निःसृत भाषण से पूर्व–

नवनिर्मित स्वामी शिवानन्द सत्संग भवन बाहर भीतर से नव दुल्हन की भाँति सजा हुआ था। पुष्प सज्जा सबका मन मोह रही थी, चारों ओर का वातावरण सुगन्धित और मोहक हो रहा था। शिवानन्द सत्संग भवन अकथनीय आनन्द और अनुभूति भाव से ओत-प्रोत था। भवन के भीतर और बाहर चतुर्दिक्, दर्शनों के लिए लालायित, उत्कण्ठित खड़े, अपनी सुध-बुध खोये, दूर-सुदूर से आये भक्त जन अपने आराध्य देव श्री स्वामी जी महाराज के आगमन से स्वयं को धन्य धन्य कर रहे थे। लगभग चार वर्षों की अवधि के पश्चात् श्री स्वामी जी महाराज के दर्शन कर अनेक भक्त जनों के चेहरों पर सहज प्रवाहित होते आनन्दाश्रुओं को देखा जा सकता था।

श्री स्वामी जी महाराज शान्ति और आनन्द विकीर्ण करते हुए शिवानन्द सत्संग भवन में प्रविष्ट हुए। आनन्द स्वरूप श्री स्वामी जी महाराज प्रसन्न एवं आनन्दित थे। प्रवेश करने पर श्री स्वामी जी महाराज मन्द-मनोहारी चाल से मंच पर पहुँचे। तदुपरान्त परम पूज्य परमाराध्य गुरुदेव श्री स्वामी शिवानन्द जी महाराज के विशाल चित्ताकर्षक चित्र तथा श्रीगुरुदेव-पादुकाओं को सश्रद्धा नतमस्तक प्रणाम करते हुए पुष्पांजलि अर्पित की। फिर अवसरोचित विशेष आसन पर विराजमान हुए। परम पूज्य श्री स्वामी जी महाराज ने कहा- "गुरु भगवान् प्रत्येक शुभ कार्य को प्रारम्भ करने से पूर्व 'जय गणेश' कीर्तन किया करते थे। मैं भी कार्यक्रम का शुभारम्भ 'जय गणेश' कीर्तन से करूंगा। कीर्तन के पश्चात् कुछ वचनामृत पान कराते हुए इस शुभावसर पर विशेष रूप से तैयार किये गये 'गुरुदेव महाराज के चित्र' एवं आध्यात्मिक साहित्य का विमोचन किया।

'श्री स्वामी शिवानन्द सत्संग भवन' (स्वामी शिवानन्द आडिटोरियम) का उद्घाटन करते हुए उद्घाटन भाषण में परम श्रद्धेय श्री स्वामी जी महाराज ने कहा :

"हम सब यहाँ पर इस आडिटोरियम का उद्घाटन करने के लिए एकत्रित हुए हैं जो कि हमारे बहुत से उद्देश्यों और कार्यों की पूर्ति करेगा। इसका उद्घाटन गुरुदेव की पादुकाओं के पूजन, पादुकाओं को पुष्प-माला अर्पण तथा कर्पूर आरती के द्वारा किया गया है। गुरुदेव की पादुकाएँ गुरुदेव का प्रतिनिधित्व करती हैं। मेरी प्रार्थना है कि श्री स्वामी शिवानन्द जी महाराज की गुरु-कृपा हम सब पर हो तथा पुनीत भारतवर्ष के सब सन्तों, महात्माओं, औपनिषदिक काल के सन्तों जैसे याज्ञवल्क्य, जनक, सुलभा, मैत्रेयी इत्यादि के आशीर्वाद हमारे इस सत्संग भवन पर हों। बाद के युग के सन्तों जैसे गुरुदेव स्वामी शिवानन्द जी महाराज, रमण महर्षि, श्री श्री माँ आनन्दमयी, अरविन्द घोष तथा उनकी शिष्या 'मदर' के आशीर्वाद भी हमारे इस भवन पर हों। इन शब्दों के साथ मैं इस भवन को उद्घाटित करता हूँ।"

तत्पश्चात् अपने श्री गुरुपूर्णिमा सन्देश के द्वारा वन्दनीय श्री स्वामी जी महाराज ने उपस्थित श्रद्धालु जनसमूह का प्रेरणाप्रद दिव्य वाणी से प्रबोधन करते हुए कहा कि वे दिव्यता की ओर उन्मुख जीवन जियें।

स्वामी चिदानन्द
प्रेज़िडेंट
द डिवाइन लाइफ सोसायटी

परमाध्यक्ष स्वामी जी महाराज का गुरुपूर्णिमा आशीर्वाद-सन्देश

(जुलाई २००६)

सौभाग्यशाली अमर आत्मन् !

गुरुपूर्णिमा के अवसर पर गुरुदेव श्री स्वामी शिवानन्द जी महाराज की कृपा आप सबके ऊपर हो! वह आपको दीर्घ जीवन, स्वास्थ्य, समृद्धि, सफलता, शान्ति तथा परमानन्द प्रदान करें! बह आपको इसी जीवन में भगवत्प्राप्ति हेतु साधना करने की क्षमता भी प्रदान करें-कौन जाने, हमें दोबारा मानव-जन्म मिले या न मिले! केवल भगवान् हो जानते हैं कि हमारे कर्मानुसार हमारा अगला जन्म किस योनि में होगा। अभी से साधना में रत हो जायें। गुरुदेव सदैव कहा करते थे- "जो करना है, उसे अभी करो-'डी . आई . एन . (डू इट नाउ)।"

अतः अपने घर-परिवार के काम-काज करते हुए, व्यवसाय के उत्तरदायित्वों का निर्वाह करते हुए कार्य-स्थल, दुकान आदि पर जाने से पूर्व ही ध्यान, जप तथा अन्तर्निरीक्षण के लिए एक या दो घण्टे का समय अवश्य निकालें। यही मेरा गुरुपूर्णिमा आशीर्वाद है। अपने सारे काम-काज गुरु-आराधना, ईश-आराधना के रूप में करें। बाह्य दृष्टि से काम चाहे जैसा दिखलायी पड़े, उसका आन्तरिक स्वरूप आराधनामय होना चाहिए। कर्म पूजा है। अपने कर्मों को भगवान् को अर्पित कर दें। कर्म का एक दूसरा पक्ष भी है। कर्मयोग के रूप में यह हृदय को शुद्ध करता है। शुद्ध हृदय में ही भक्ति का उदय होता है-अशुद्ध हृदय में नहीं। भक्ति-भाव के उदय होने पर इष्टदेव या गुरु-मन्त्र पर मन को एकाग्र करें। भक्ति आपको एकाग्रचित्त होने की क्षमता प्रदान करती है। एकाग्रचित्त हो कर ही आप यह अनुभव कर पाते हैं-'मैं यह पंचभूत-निर्मित अधम शरीर नहीं हूँ। एकाग्रचित्त होने की यह दशा जब और अधिक गहन हो जाती है, तब साधक सचमुच शरीर का और तथाकथित पंचभूतों का भी अतिक्रमण कर जाता है।

मध्याह्न में एक घण्टे तक साधनाभ्यास करें। सायंकालीन भोजन के पश्चात् समाचार-पत्र न पढ़ें तथा परिवार के सदस्यों के साथ इधर-उधर का निरर्थक और अनावश्यक वार्तालाप न करें। शैया पर बैठ जायें। गुरु द्वारा बतायी गयी विधि के अनुसार ध्यान करें। यह आपके ध्यान का तृतीय सत्र

होगा। इसके बाद सो जायें। सोते समय आपका अन्तिम विचार निद्रा की अवधि में अक्षुण्ण बना रहता है। यह विचार जागने के समय आपका पहला विचार होता है अर्थात् जागने पर यही विचार सबसे पहले मन में उठता है। यह मेरा गुरुपूर्णिमा सन्देश है।

भारत के समस्त आधुनिक तथा प्राचीनकालीन साधु-सन्तों की कृपा और आशीर्वाद आपको प्राप्त होते रहें! वे आपको समृद्धि, सत्यनिष्ठा तथा सच्चरित्रता के सद्गुण प्रदान करें! हरि ॐ तत्सत्!

स्वामी चिदानन्द
प्रेजिडेंट द डिवाइन लाइफ सोसायटी

नव-वर्ष २००७ के लिए सन्देश

ज्योतिर्मय दिव्य आत्मन् !

वर्ष २००६ को विदा देने तथा वर्ष २००७ में प्रवेश करने की इस महत्त्वपूर्ण वेला में आप सब तथा सम्पूर्ण मानवता पर अपनी कृपा की वर्षा करते रहने के लिए मैं ऊर्ध्वगामी दृष्टि तथा उठे हुए हाथों की मुद्रा में सर्वशक्तिमान् परमात्मा तथा परम पूज्य गुरुदेव स्वामी शिवानन्द जी महाराज से प्रार्थना करता हूँ।

अपने सभी कार्यों में आप सफलता प्राप्त करें! आप अच्छे स्वास्थ्य, दीर्घ जीवन, प्रसन्नता तथा समृद्धि को प्राप्त हो! परमात्मा का नाम सदैव आपके अधर-पुटों पर हो! आप सदा उनके सतत मानसिक स्मरण में लीन रहें! आप सदा-प्रति दिन, प्रति घण्टे, प्रति मिनट, नहीं चौबीस घण्टों के प्रत्येक सेकण्ड उनके प्रति अपने बोध-प्रवाह को अक्षुण्ण रखते हुए जीवन व्यतीत करें!

परमात्मा से मानव-जीवन का उपहार प्राप्त करके यदि हमने अस्थायी सुखों की खोज करते हुए ही अपनी इहलीला समाप्त कर दी, तो हमारा अमूल्य जीवन व्यर्थ ही गया। अतः वर्ष २००६ या भूतकाल की गलतियों को हम न दोहरायें। पूज्य गुरुदेव स्वामी शिवानन्द जी महाराज के बहुमूल्य उपदेशों को जीवन में उतारते हुए आगे ही बढ़ते रहें। यह उस प्रसन्नता की कुंजी है, जिसकी खोज में हम सभी रत हैं।

सरल भाषा में व्यक्त अपने सरल सन्देशों के रूप में पूज्य गुरुदेव ने यह कुंजी हमारे हाथों में पकड़ा दी है। बीस महत्त्वपूर्ण आध्यात्मिक नियम, साधना-तत्त्व तथा विश्व-प्रार्थना के माध्यम से उन्होंने वेदान्त और उपनिषदों का सार प्रस्तुत कर दिया है। लेकिन इससे पूर्व उन्होंने 'भले बनो, भला करो', 'दयालु बनो' तत्पश्चात् सेवा, प्रेम, दान, पवित्रता, ध्यान तथा साक्षात्कार के सन्देशों के माध्यम से अपने उपदेशों का प्रारम्भ किया।

नव-वर्ष में प्रवेश करने के इस अवसर पर मेरा यह सन्देश आपके लिए है।

प्राचीन कालीन प्रज्ञा-सम्पत्ति हमारे भावी जीवन को समृद्ध बनाये ! परमात्मा तथा पूज्य गुरुदेव की कृपा आप सब पर बनी रहे!

आदर, प्रेममयी शुभकामनाओं तथा ॐ सहित,

१-१-२००७

स्वामी चिदानन्द
प्रेजिडेंट

द डिवाइन लाइफ सोसायटी

गुरुपूर्णिमा-सन्देश

(२००७)

कम ही लोग यह बात जानते हैं कि जैसे सूर्य में प्रकाश है, सितारों में प्रकाश है, ऐसे चन्द्रमा में बिलकुल भी प्रकाश नहीं है। बहुत से सितारे तो बहुत ही बड़े हैं, इतने बड़े कि हमारी धरती के सामने फुटबाल के आकार के बराबर होंगे और हमारी धरती उनके सामने मटर के दाने जितनी, राई के दाने या छोटी-सी काली मिर्च जितनी होगी। चन्द्रमा में भले ही अपना प्रकाश नहीं है, तो भी उसमें परावर्तक-शक्ति (वापस लौटाने की शक्ति) है। चन्द्रमा जब पृथ्वी का चक्कर लगा रहा होता है, तो बीच में एक समय ऐसा आता है जब सूर्य का पूरा प्रकाश चन्द्रमा पर पड़ता है। और जब सूर्य का पूर्ण प्रकाश चन्द्रमा पर पड़ता है, तो उसे हम पूर्णिमा दिवस कहते हैं। क्योंकि चन्द्रमा में 'परावर्तक-शक्ति' है, इसलिए जब सूर्य का पूर्ण प्रकाश पूर्णिमा की रात को उस पर पड़ता है, तो वह पूर्ण-प्रकाशित चन्द्रमा, पूरा-का-पूरा प्रकाश वापस लौटा देता है। बिलकुल इसी तरह, शिष्य का अपने गुरु के साथ सम्बन्ध है। जब शिष्य अपने गुरु के समस्त निर्देश, सारे आदेश उपदेश ग्रहण कर लेता है और फिर उनके अनुसार चलने के प्रयत्न में लग जाता है, शत-प्रति-शत उन पर चलने लगता है, तब फिर गुरु उसके लिए सूर्य हो जाता है और शिष्य पूर्णिमा का चाँद! क्योंकि शिष्य वही अभिव्यक्त करता है जो उसने गुरु से प्राप्त किया होता है। ईश्वर-साक्षात्कार प्राप्त व्यक्ति की अवस्था तो बहुत ऊपर की है; अतः ईश्वरानुभूति उसे सभी देवी-देवताओं से ऊपर उठा देती है। ऐसा केवल हिन्दू धर्म में ही नहीं, बौद्ध और जैन धर्म में भी माना गया है। तिब्बती बौद्ध मत में तो पूर्ण प्रकाश प्राप्त गुरु हवा में उड़ सकते हैं। किन्तु शिष्य वही ग्रहण करता है जो उसकी इच्छा होती है। अपनी क्षमता से अधिक वह ग्रहण नहीं कर सकता। किन्तु जितना भी वह अपनी क्षमतानुसार लेता है, उतना ही उसके लिए पर्याप्त होता है। उसकी आध्यात्मिक उन्नति के लिए, उसकी साधना, स्वाध्याय, ध्यान और धारणा के लिए पर्याप्त होता है। उसने अपने गुरु से जितना प्राप्त कर लिया है, जितने निर्देश ले लिये हैं, वही उसे इस जीवन में ही भगवद्-साक्षात्कार करवा देंगे, यदि वह उन ग्रहण किये हुए आदेशों पर, ज्ञानोपदेशों पर शत-प्रति-शत चलेगा तो! इसीलिए, इसी सत्य को अनुभव करने के लिए प्रति वर्ष गुरुपूर्णिमा का पावन दिन आता है। शिष्य पूर्णिमा का पूर्ण चन्द्रमा है जो गुरु के ज्ञानोपदेशों के प्रकाश को पूर्णतया अभिव्यक्त करता है। इसी सत्य को बार-बार याद दिलाने के लिए प्रत्येक वर्ष, हर बारह महीनों के बाद हम यह पवित्र त्योहार मनाते हैं। इसी सत्य का स्मरण दिलाने के लिए गुरुपूर्णिमा आती है। गुरु के उपदेशों को और गुरु-तत्त्व को स्मरण कराने के लिए यह आती है। गुरुपूर्णिमा के दिन शिष्य को निश्चित रूप से गुरु के साथ अपने सम्बन्धों, आध्यात्मिक सम्बन्धों के बारे में गहन चिन्तन करना चाहिए। यही मेरा गुरुपूर्णिमा के लिए सन्देश है।

स्वामी चिदानन्द
प्रेजिडेंट द डिवाइन लाइफ सोसायटी

नववर्ष-सन्देश

(२००८)

भगवान् सदा आपके साथ रहें! पुराना वर्ष २००७ बीत गया। बर्द्धित ज्ञान-अनुभव के साथ हम नये वर्ष में प्रवेश कर रहे हैं। इस ज्ञान-अनुभव को हमने गत वर्ष के सभी ३६५ दिनों में अर्जित किया है। प्रत्येक दिवस हमें जो अनुभव हुए हैं, उनसे हमें कुछ नयी बातें सीखने को मिली हैं। इसी प्रकार नये वर्ष के ३६६ दिनों में भी आपके ज्ञान-अनुभव में वृद्धि होगी। इस कारण हम अपेक्षाकृत अधिक बुद्धिमान् बनेंगे तथा अपने और दूसरों को लाभान्वित कर सकेंगे।

हमें इस संसार में भेजने वाले भगवान् की दृष्टि में आपका जीवन सकारात्मक क्रमविकास की एक प्रक्रिया है। मनुष्य (जो एकमात्र ऐसा प्राणी है जिसके पास मन और विचारने की शक्ति हैं) के क्रमविकास और सर्वांगीण विकास से सम्बन्धित भगवान् का विधान सुनिश्चित है। लौकिक जीवन का उद्देश्य यही है कि प्रत्येक व्यक्ति को पूर्णता प्राप्त करने का अवसर मिले।

यह धरती पूर्णता प्राप्त करने हेतु एक विद्यालय के समान है। भगवान् की दिव्य पूर्णता हमारे अन्दर पहले से है, परन्तु यह अप्रकट रूप में है। अतः आप इसे विस्मृत कर सकते हैं। आपादमस्तक यह शरीर भगवान् के निवास करने हेतु एक दिव्य प्रासाद है। हमारे वक्षस्थल के दाहिनी ओर स्थित आध्यात्मिक हृदय भगवान् का सिंहासन है (आध्यात्मिक हृदय भौतिक शरीर को शुद्ध रक्त प्रदान करने वाला हृदय नहीं है)। इसी कारण भगवान् को अन्तर्यामी अर्थात् वह जो आध्यात्मिक हृदय में निवास करे-कहा जाता है। आप अपनी उस दिव्य पूर्णता को क्रमशः प्रस्फुटित (unfold) करें तथा उसे अपने दैनिक जीवन के कार्यकलापों में प्रकटित होने दें। प्रत्येक दिवस आपको कुछ नवीन बात सीखनी है और इस प्रक्रिया को आगे बढ़ाना है ताकि अन्ततः आप आध्यात्मिक और नैतिक दृष्टि से पूर्ण मानव बन जायें। गत वर्ष के सभी ३६५ दिनों में आपने जो-जो पाठ पढ़े हैं, उन्हें आपको वर्ष २००८ के ३६६ दिनों में व्यावहारिक रूप प्रदान करना है। पूर्णता तक पहुँचने हेतु क्रमविकास की प्रक्रिया में शरीर-मन-बुद्धि-सभी को विकासोन्मुख होना चाहिए।

भगवान् ने आपको इस संसार में इसलिए नहीं भेजा है कि आप जड़वत् गतिहीन बने रहें और आपमें परिवर्तन या विकास न हो या आपके शरीर बुद्धि सदा एक ही अवस्था में रहें। पूर्णता के बिन्दु पर पहुँचने तक आपका क्रमविकास होता रहे-भगवान् का विधान यही है। शरीर, मन, बुद्धि और विनाशी शरीर के अन्दर विद्यमान अविनाशी आत्मा-सभी को पूर्णता के गन्तव्य तक पहुँचना है।

इस सन्दर्भ में श्रीमद्भगवद्गीता के समान कोई दूसरा भारतीय धर्मग्रन्थ नहीं है। इस धर्मग्रन्थ में अपने सखा अर्जुन को सन्देहों तथा सम्भ्रान्ति की मनोदशा से उबारने के पश्चात् कर्मभूमि पर ले आ कर उसे निश्चितता की दिशा में अग्रसर करते हुए भगवान् कृष्ण ने विकास और पूर्णता के सभी पक्षों की सम्पूर्ण प्रक्रिया प्रस्तुत की है।

भगवद्गीता में भगवान् कृष्ण अर्जुन से कहते हैं कि शरीर, मन और बुद्धि दोष-मुक्त नहीं हैं तथा उनके कार्यकलाप सीमाओं से घिरे हुए हैं। मनुष्य को पूर्णता की स्थिति में लाने के लिए (जिसमें अग्नि, वायु, जल, शस्त्र आदि आत्मा को प्रभावित नहीं करते) अनश्वर आत्मा का क्रमविकास हो रहा है। इस क्रमविकास से शरीर, मन और बुद्धि सकारात्मक रूप से प्रभावित हो रहे हैं। व्यक्ति को सन्देहों से ऊपर उठ कर श्रद्धा-विश्वास तक पहुँचना चाहिए और विनाशी

अस्तित्व के बोध की कारा से अपने को मुक्त करके अविनाशी सत्ता के बोध-क्षेत्र में प्रवेश करना चाहिए। मानव इस बोध को अर्जित करने और निर्भय होने के लिए ही उत्पन्न हुआ है। भगवद्गीता में वर्णित इन सत्यों से थियोसोफिकल सोसायटी की डा. ऐनी बेसेंट अत्यधिक प्रभावित थीं और दूसरों को गीतोपदेश का पालन करने के लिए प्रोत्साहित करती थीं।

अपने नववर्ष के इस सन्देश के माध्यम से मैं यह कहना चाहता हूँ कि आप इस बात को समझें कि शरीर और आत्मा की भिन्नता समझ कर अनश्वरता के बिन्दु पर पहुँचने तक जीवन का उद्देश्य विकासात्मक है। शरीर जन्म लेता है तथा मृत्यु को प्राप्त होता है। शरीर की मृत्यु अवश्यम्भावी है। पूरे संसार, प्रत्येक देश तथा प्रत्येक दिशा में ईसाइयों और मुसलमानों के लिए कब्रिस्तान हैं। शरीर रूपी घर में अविनाशी अनश्वर आत्मा निवास करती है। आपकी आत्मा और सच्चिदानन्द आत्मा (ब्रह्म) एक ही हैं। अतः आध्यात्मिक साक्षात्कार 'अहं ब्रह्मास्मि' का अनुभव है। इस संसार में शरीर आते-जाते रहते हैं, परन्तु शरीरों को प्राणान्वित करने वाला अविनाशी तत्त्व आत्मा ही है जो आपके अन्दर निवास करता है।

समस्त पाठकों के लिए यह मेरा नववर्ष सन्देश है। इस मूलभूत सत्य पर अपने जीवन को आधारित करके उन्हें मुक्त और निर्भय हो जाना चाहिए।

इस सन्देश को समझ कर इसी क्षण से आप इसे जीवन में उतारने लगें-इस हेतु भगवान् और गुरुदेव की कृपा आप पर बनी रहे!

वर्ष २००८ आपके लिए सौभाग्यशाली और प्रगामी सिद्ध हो!

स्वामी चिदानन्द
प्रेजिडेंट द डिवाइन लाइफ सोसायटी

"कामना आपको भिखारी बनाती है। कामना निर्धनता है। कामना अपर्याप्तता की भावना है। जब आप कामना करने लगते हैं, उसी क्षण आप भिखारी बन जाते हैं। एक करोड़पति जो सदैव एक करोड़ और प्राप्त करने की कामना करता है, वास्तव में भिखारी ही है। एक कुली जो दिन में पचास रुपये कमाता है और अपनी आय से सन्तुष्ट रहता है, वह करोड़पति से कहीं अधिक अच्छा है; क्योंकि वह अपर्याप्तता की पीड़ाजनक भावना से मुक्त है।"

-स्वामी चिदानन्द

राष्ट्रीय आचार-संहिता

(भारत के नागरिकों के लिए)

१. देशभक्ति- आपके लिए देश का सर्वोच्च महत्त्व होना चाहिए। देश का कल्याण आपका अपना कल्याण है। अतः अपने देश भारत के लिए अपना जीवन तक अर्पित कर देने के लिए सदा

स्वेच्छा से तैयार रहें। अपने बालकों तथा पारिवारिक सदस्यों के लिए मन में देशप्रेम, देशभक्ति, देशसेवा तथा सह-नागरिकों की सेवा की भावनाएँ बैठायें।

२. **कर्तव्य-** आपका प्रमुख तथा सर्वोपरि कर्तव्य भगवान् तथा धर्मपरायणता के प्रति है। धर्मपरायण जीवन यापन आपकी अपने राष्ट्र के प्रति सर्वाधिक महती सेवा होगी।

३. **चरित्र-चरित्र-** सर्वाधिक महान् सम्पत्ति है। एक विकार-रहित तथा चरित्रवान् नागरिक आपके राष्ट्र की महत्तम परिसम्पत्ति है। चरित्र अपरिहार्य तथा प्राणाधार-रूप है। अतएव सच्चरित्रता को सर्वोच्च प्राथमिकता दी जानी चाहिए। इसी से हमारे राष्ट्र का कल्याण तथा इसका भावी स्थायित्व निर्भर है।

४. **स्वास्थ्य-** स्वास्थ्य सफलता का आधार है। स्वास्थ्य सम्पत्ति है। चरित्र के बाद यही सर्वाधिक महान् राष्ट्रीय परिसम्पत्ति है। एक नागरिक के रूप में राष्ट्र के प्रति हमारा मुख्य कर्तव्य है-चरित्र-निर्माण तथा स्वास्थ्य-रक्षा।

५. **सदाचार-** द्यूतक्रीड़ा, मद्यपान, मादक द्रव्य-सेवन, धूम्रपान तथा ताम्बूल-सेवन के दुर्व्यसनों का संगठित हो कर उन्मूलन करें। उत्क्रोच-ग्रहण, भ्रष्टाचार, स्वार्थपरता, अनैतिकता, बेईमानी तथा दुराचरण की बुराइयों का उन्मूलन करें। अपने राष्ट्र के प्रति निष्ठाहीनता अपराध तथा अक्षम्य पाप है।

६. **सार्वजनिक सम्पत्ति-** नागरिको ! हम सार्वजनिक सम्पत्ति के अभिरक्षक हैं। हम राष्ट्र की सम्पत्ति को विकृत न करें, उसका दुरुपयोग न करें, उसकी चोरी न करें या उसे नष्ट न करें। हम प्रेमपूर्वक तथा सावधानी से उसे सुरक्षित रखें। हम अपने देश को स्वच्छ रखें। यह हमारा पुनीत कर्तव्य है।

७. **एक ही परिवार-** सभी नागरिक हमारे भाई हैं। इस भ्रातृत्व का अनुभव करें। हम परस्पर प्रेम करें तथा संगठित रहें; क्योंकि हम एक ही परिवार हैं।

८. **धर्म-** सभी धर्मों, पन्थों तथा मतों के प्रति समान श्रद्धाभाव रखें। अपने मत के अनुयायियों को हम अपने ही भाई मान कर प्रेम करें। दूसरों से हम वैसा ही व्यवहार करें, जैसा हम उनसे अपने लिए अपेक्षा रखते हैं।

९. **अवैर-** सभी प्रकार की हिंसा तथा घृणा से बच कर रहे; क्योंकि ये राष्ट्र के निर्मल नाम पर कलंक है। ये आत्मा का हनन करते हैं तथा राष्ट्र के कल्याण और विकास के लिए अत्यन्त घातक हैं। ये हमारे राष्ट्र के आदर्श के सर्वथा प्रतिकूल हैं।

१०. **मितव्यय-** सादा जीवन तथा उच्च विचार को अपनायें। अपव्ययी न बनें। अपव्यय का परिहार करें। मितव्ययिता का अभ्यास करें। जो कुछ हमारे पास है, उसमें उन सह-नागरिकों को सहभागी बनायें, जिन्हें उसकी आवश्यकता है। यह एक राष्ट्रीय सद्गुण है, जिसकी आवश्यकता भारत को है।

११. कानून- कानून के शासन का आदर करें तथा सामाजिक न्याय को बनाये रखें। हमारे कल्याण का तथा उत्तम भारतोन्मुख सुव्यवस्थित विकास का आश्वासन इसी में निहित है।

१२. अहिंसा- अहिंसा सर्वोच्च सद्‌गुण है- 'अहिंसा परमो धर्मः ।' करुणा एक दिव्य गुण है। पशुओं की सुरक्षा करना हमारा पुनीत कर्तव्य है। यह भारत देश की विशिष्ट शिक्षा है। हम प्रत्येक जीव के प्रति अनुकम्पाशील हों। इस प्रकार हम सच्चे भारतीय होने का परिचय दें। दैनिक जीवन में हम दयालुता, करुणा तथा भलाई का मूर्त रूप बनने का प्रयास करें।

१३. इकोलाजी (पारिस्थितिकी) - मानव तथा प्रकृति अपृथक्करणीय हैं। मानव तथा उसके प्राकृतिक वातावरण (पर्यावरण) में अन्योन्य सम्बन्ध है तथा वे परस्पर निर्भर हैं। प्रकृति की प्रत्येक वस्तु का हमारी सुरक्षा तथा हमारे पोषण में योगदान है। अतः हम प्राकृतिक पर्यावरण की सुरक्षा करें। पारिस्थितिक सन्तुलन बनाये रखने में सहयोग देना हमारा कर्तव्य है। हमारे सुरक्षित जीवन तथा परम कल्याण के लिए यह अपरिहार्य है। सार्वजनिक स्थानों को तथा देश के वायु एवं जल को प्रदूषित करना राष्ट्रीय अपराध है। भूतकाल में की गयी अपनी गलतियों को हमें सुधारना चाहिए।

१४. एकता- देश के लोग जितना ही अधिक संगठित होंगे, वे उतना ही अधिक बाधाओं-विपत्तियों का सामना करने में सक्षम होंगे। संघटन शक्ति है, विघटन पतन है। वर्तमान भारत पर यह तथ्य विशेष रूप से लागू होता है। अतः हम अपने समस्त देशवासियों के साथ अन्तरंग सामंजस्य बनाये रखें तथा उनके साथ सद्भावनापूर्वक रहें। अपने देश के प्रति प्रेम का अर्थ है अपने देशवासियों के प्रति प्रेम। यह अपनी मातृभूमि के प्रति भारत के नागरिकों की अमूल्य सेवा होगी।

१५. शिक्षा- भारत की महान् संस्कृति तथा उसके गौरवपूर्ण आदर्शों, उत्कृष्ट मूल्यों एवं जीवन-सिद्धान्तों का ज्ञान प्रदान करना शिक्षा की प्रक्रिया में समाविष्ट होना चाहिए। युवाओं और विद्यार्थियों के जीवन की गुणवत्ता में संवर्धन तथा संवृद्धि की ओर शिक्षा को उन्मुख होना चाहिए।

इस भाँति आप एक सच्चे नागरिक के रूप में दीप्तिमान हों तथा अपने जीवन जीने के ढंग और आचरण के द्वारा ही सर्वोत्तम रूप से अपने देश की सेवा करें।

-देश के प्रेमीजन

हे अमृत पुत्रो! हे स्वतन्त्र भारत के प्रिय नागरिको !! उठो, जागो और अध्यात्म तत्त्व की इस लावण्यमयी उषा को देखो। विश्व के शुभ्र भाल रूपी आकाश पर "दिव्य जीवन" का यह प्रतापी सूर्य किस प्रकार अपने पूर्व रूप को प्रकट कर रहा है। योग और वेदान्त के प्रशान्त पथ से अपरिसीम शान्ति और आनन्द के लक्ष्य की ओर बढ़ो। अध्यात्म तत्त्व को समझो, चित्तशुद्धि को लाओ, अपने स्वभाव को चारु बनाओ, दानशील बनो और दिव्यत्व की प्राप्ति करो। ऋषि-मुनियों की कृतियों का मनन करो और उनसे प्रेरणा लो। तुम जैसे भोजन खाना नहीं भूलते, वैसे ही इनका मनन भी न भूलो। इस अभ्यास को

जीवन का प्रमुख कर्तव्य बन जाने दो। यह तुम्हारे जीवन में शान्ति, आनन्द और चित्त की समाहित अवस्था का जनक बनेगा। यह तुम्हारे जीवन में आत्म-साक्षात्कार को अवतरित करके तुम्हारे निमित्त उत्कृष्ट निधि के रूप में प्रकट होगा।

तुम सबों के लिए शान्ति और आनन्द का द्वार उन्मुक्त हो!

-स्वामी चिदानन्द

अमृताष्टक

श्रीमद्भगवद्‌गीता के द्वादश अध्याय का ध्यानपूर्वक स्वाध्याय करें, चिन्तन-मनन करें। विशेषकर अन्तिम आठ श्लोकों के अर्थ को हृदयंगम करें। भक्तियोग नामक इस विशेष अध्याय में भगवान् श्रीकृष्ण अर्जुन से कहते हैं- "हे अर्जुन! सुनो मेरे भक्तों के लक्षण। मेरे प्रति समर्पित, भक्तिपूर्ण हृदय से अपने को मेरा भक्त कहने वाले का बोलना, उठना-बैठना, बात करना साधारण नहीं होता। उसका आचार, विचार, व्यवहार तथा स्वभाव विलक्षण होता है।" फिर आगे कहा- "मेरे ये सब उपदेश विशेष हैं, दुर्लभ हैं 1 ^ ** और भगवान् कृष्ण ने अध्याय के अन्तिम आठ श्लोकों में दी गयी सारगर्भित शिक्षाओं को 'अमृताष्टक' नाम दिया। इस 'अमृताष्टक' का प्रतिदिन पारायण करें।

"अमृताष्टक"
(श्रीमद्भगवद्गीता के अध्याय १२ के श्लोक १३ से २०)

ऐसे हैं भक्त मुझे प्यारे, बतला दिया कृष्णमुरारी ने।
गीता द्वारा अमृत सबको, पिलवा दिया कृष्णमुरारी ने ।।

श्री भगवानुवाच :

अद्वेष्टा सर्वभूतानां मैत्रः करुण एव च।
निर्ममो निरहंकारः समदुःखसुखः क्षमी ॥१३॥

हो द्वेष रहित सब जीवों में, हो मैत्र, करुण, निर्मम निरहम्।
सुख-दुःख में सम और क्षमाशील, बतला दिया कृष्णमुरारी ने ॥१॥

सन्तुष्टः सततं योगी यतात्मा दृढनिश्चयः ।
मय्यर्पितमनोबुद्धिर्यो मद्भक्तः स मे प्रियः ॥१४॥

सन्तुष्ट सदा ध्यानी योगी, मन-इन्द्रियजित् दृढ़ निश्चय हो।

मुझ में अर्पित हो मन बुद्धि, बतला दिया कृष्णमुरारी ने ॥२॥

यस्मान्नोद्विजते लोको लोकान्नोद्विजते च यः।
हर्षामर्षभयोद्वेगैर्मुक्तो यः स च मे प्रियः ॥१५॥

जिससे जनता उद्विग्न न हो, जनता से जो उद्विग्न न हो।
हो हर्ष-रोष-भय-मुक्त सदा, बतला दिया कृष्णमुरारी ने ॥३॥

अनपेक्षः शुचिर्दक्ष उदासीनो गतव्यथः ।
सर्वारम्भपरित्यागी यो मद्भक्तः स मे प्रियः ॥ १६॥

अनपेक्ष, दक्ष, शुचि उदासीन, हो व्यथा-हीन, निर्द्वन्द्व सदा।
हो सर्वारम्भ परित्यागी, बतला दिया कृष्णमुरारी ने ।४।

यो न हृष्यति न द्वेष्टि न शोचति न कांक्षति ।
शुभाशुभपरित्यागी भक्तिमान्यः स मे प्रियः ॥१७॥

सुख में न हर्ष, दुःख में न द्वेष, नहीं शोक, न हो इच्छा कोई।
शुभ अशुभ कर्म का फल त्यागी, बतला दिया कृष्णमुरारी ने ॥५॥

समः शत्रौ च मित्रे च तथा मानापमानयोः ।
शीतोष्णसुखदुःखेषु समः संगविवर्जितः ॥१८॥

सम शत्रु मित्र, अपमान मान, शीतोष्ण दुःख सुख में सम हो।
हो अनासक्त सब विषयों में, बतला दिया कृष्णमुरारी ने ॥६॥

तुल्यनिन्दास्तुतिर्मौनी सन्तुष्टो येन केनचित् ।
अनिकेतः स्थिरमतिर्भक्तिमान्मे प्रियो नरः ।।१९।।

निन्दा स्तुति में हो सम, मौनी, सन्तुष्ट, मिले जो कुछ उसमें।
दृढ़ मति हो, गृह-ममता-त्यागी, बतला दिया कृष्णमुरारी ने ॥७॥

ये तु धर्म्यामृतमिदं यथोक्तं पर्युपासते ।
श्रद्दधाना मत्परमा भक्तास्तेऽतीव मे प्रियाः ॥२०॥

श्रद्धायुत इस धर्मामृत को, जो जन मत्पर हो पान करें।
अति ही प्रिय हैं वे भक्त मुझे, बतला दिया कृष्णमुरारी ने ॥८ ॥

-गंगाशरण 'शील' चन्दौसी

विश्व-यात्रा काल में

श्री स्वामी चिदानन्द महाराज जी के जोहान्सबर्ग पहुँचने पर एक बहुत ही मर्मस्पर्शी घटना हुई। सामान्यतया शिवानन्द कौशल्या के नाम से विख्यात स्वामी जी की एक उत्कट भक्त माता रोज़ कागन बहुत दिन पहले से मृत्यु-शय्या पर थीं। मूच्र्छावस्था में जाने से पूर्व उन्होंने महाराजश्री के अन्तिम दर्शन के लिए प्रार्थना की थी, परन्तु यह मानना कठिन था कि उनकी इच्छा की पूर्ति हो सकेगी। किन्तु निश्चय ही उनकी प्रार्थना सुन ली गयी। सहानुभूतिशील स्वामी जी, जो भक्तों के हृदय को जानते हैं और उनका उत्तर देते हैं, उनके प्राण त्यागने से पहले उनके पार्श्व में थे। उनकी शय्या के पास पहुँचने के पश्चात् उन्होंने कुछ समय तक प्रार्थना की और उस भाग्यशालिनी महिला को उन्हें अपनी शय्या के पास देखने के लिए कुछ क्षणों के लिए पुनः चेतना प्राप्त हो गयी। **उन्होंने स्पष्ट रूप से 'हरि ॐ' कह कर स्वामी जी को हाथ जोड़ कर नमस्कार किया और इस भगवत्स्मरण तथा दिव्य गुरु के दर्शन के साथ उन्होंने अपना मर्त्य शरीर छोड़ दिया। निश्चय ही वह भाग्यशालिनी थीं, क्योंकि उनका अन्तिम संस्कार भी महाराजश्री की उपस्थिति से पवित्र हो गया।**

तृतीय प्रकाश

ॐ
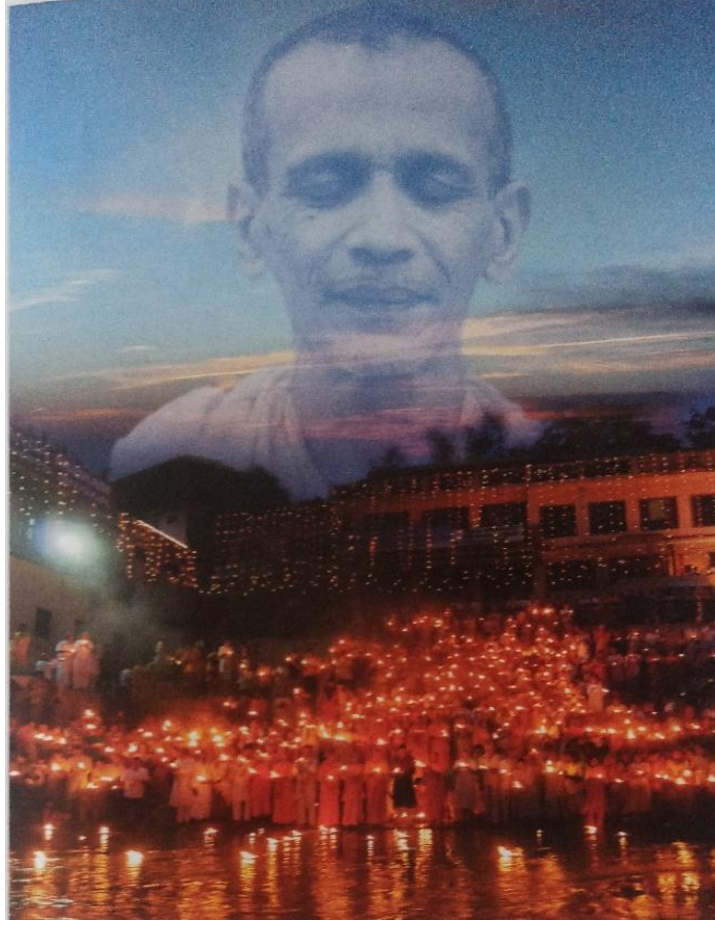
ज्योतिर्थ्योति स्वामी चिदानन्द

ब्रह्मज्योति शिवानन्द-आत्म ज्योति हो तुम,
ज्योतियोति चिदानन्द-स्वयं ज्योति हो तुम ।
परम परात्पर परिपूर्ण ज्योति हो तुम,
बाह्याभ्यन्तर प्रत्यक् ज्योति हो तुम ।।
ज्योतिर्थ्योति को बारम्बार प्रणाम

भावपूर्ण श्रद्धांजलियाँ

ॐ

'मुरझाते तो हैं सुमन, पर उसकी
सुरभि रहती चहुँ ओर व्याप्त ।
विनष्ट होता है शरीर, परन्तु
आत्म-सुरभि है अमर एवं शाश्वत ।।'
- स्वामी शिवानन्द

आत्म-सुरभि चिदानन्द चारु की,
फैली देश-विदेश चहुँ ओर
।
हिय-पात्र में भर श्रद्धा-सुमन,
बाँटे यत्र-तत्र, दूर-सुदूर ।।

अर्पित करें श्रद्धांजलि ।
गुरुदेव दीदार दीवाने को ।
शिवानन्द भक्त परवाने को ।
'सर्वभूतहिते रताः' मस्ताने को ।।

पावन-स्मृति में

एक महान् देदीप्यमान सितारे का पावन आख्यान
परम आराधनीय परम पूज्य श्री स्वामी चिदानन्द जी महाराज

वह महान् देदीप्यमान, उज्ज्वल सितारा, जो सम्पूर्ण विश्व-भर में लाखों-करोड़ों लोगों द्वारा श्रद्धा-भक्ति सहित पूजा जाता था, आज सशरीर हमारे बीच नहीं रहा, किन्तु हम सबके हृदय मन्दिरों में उन्होंने सदा के लिए एक वन्दनीय स्थान बना लिया है।

जीवन के अन्तिम समय तक दिव्य जीवन संघ के आध्यात्मिक गुरु और परमाध्यक्ष के रूप में किस प्रकार समस्त कार्यभार सतर्कतापूर्वक देखते रहे, यह सभी के लिए अत्यन्त आश्चर्यजनक था। स्वामी जी महाराज अभी, २४ सितम्बर को अपना ९२ वाँ वर्ष पूर्ण करने वाले थे कि हमारे परमाध्यक्ष परम आराध्य श्री स्वामी चिदानन्द जी महाराज की गुरुवार, २८ अगस्त को रात्रि के ८ बज कर ११ मिनट पर महासमाधि हो गयी। हम उन्हें, जिनका हमारे पूज्य गुरुदेव श्री स्वामी शिवानन्द जी महाराज की दृष्टि में भी अत्यन्त ऊँचा स्थान था, को अत्यन्त विनम्रता और आदरपूर्वक अपनी भाव-भीनी श्रद्धांजलि समर्पित करते हैं।

'दिव्य जीवन' पत्रिका के मई २००२ के अंक में परम पूज्य स्वामी जी महाराज की जो अन्तिम इच्छा प्रकाशित हुई थी, उसी का अक्षरशः पालन किया गया।

परम पूज्य स्वामी जी महाराज के पावन पार्थिव शरीर को पुष्पहारों से सुसज्जित लकड़ी के सिंहासन पर बैठा कर अर्धरात्रि १२ बजे शान्ति निवास, देहरादून से ला कर आश्रम मुख्यालय में परम पूज्य गुरुदेव श्री स्वामी शिवानन्द जी महाराज के समाधि-मन्दिर में तीन घण्टे अर्थात् प्रातः ३ बजे तक रखा गया था जिससे कि आश्रमवासी भक्त अन्तिम दर्शन और अपने श्रद्धा-सुमन समर्पित कर लें। इस पूरे समय में महामन्त्र-संकीर्तन, जो कि गुरुदेव और स्वामी जी महाराज दोनों को ही अत्यन्त प्रिय था, का निरन्तर गान किया जाता रहा।

प्रातः ३ बजे, कर्पूर आरती करने के बाद पूज्य स्वामी जी के शरीर को महामन्त्र, 'ॐ नमः शिवाय', 'ॐ नमो भगवते शिवानन्दाय' और 'श्री राम जय राम जय जय राम' इत्यादि नाम संकीर्तन गान करते हुए शोभा यात्रा के रूप में भगवती माँ गंगा की ओर ले जाया गया। यह शोभा यात्रा 'भजन हॉल' और 'श्री विश्वनाथ मन्दिर' के सामने रुकते हुए आश्रम की परिक्रमा करके 'शिवानन्द आर्क' की ओर जाने वाली मुख्य सड़क पर गयी और वहाँ से 'गुरु निवास' और 'गुरुदेव कुटीर' के सामने से होती हुई लगभग ४.३० पर माँ गंगा के 'श्री विश्वनाथ घाट' पर पहुँच गयी।

यहाँ पर गंगाजल और दूध के साथ वैदिक मन्त्रों और जो उन्हें विशेष रूप से प्रिय थे, उन पुरुषसूक्त और नारायणसूक्त के उच्च स्वर में गान के साथ अभिषेक किया गया। उसके उपरान्त परम्परागत विधि से नये वस्त्र समर्पण तथा भस्म, केसर, चन्दन और कुमुकुम से तिलक शृंगार किया गया।

उनके निर्देशों का अक्षरशः पालन करते हुए शरीर को गंगा माँ को समर्पित करने से पहले ७ बार 'ॐ नमो भगवते शिवानन्दाय', ५ बार महामन्त्र, ५ बार महामृत्युंजय मन्त्र और १६ बार प्रणव मन्त्र का उच्चारण किया गया। इस बात का विशेष रूप से ध्यान रखा गया कि 'चिदानन्द जी महाराज की जय' का उच्चारण न किया जाय, क्योंकि ऐसा करने के लिए उन्होंने हमें विशेष रूप से रोका हुआ था।

इसके पश्चात् पुष्पों से सुसज्जित उनके पावन शरीर को अति सुन्दर सजायी गयी नौका में ले जाया गया। मध्य धारा में धीमी गति से जाती हुई नौका की इस अन्तिम यात्रा की ओर भक्तों का समूह एकटक दृष्टि से देख रहा था और माँ गंगा अपने प्रिय पुत्र की देह को आलिंगन करने के लिए बाहें फैलाये आतुर दृष्टि से निहार रही थी। जब पावन देह को गंगा में छोड़ा गया तो ऊपर 'शिवानन्द झूला' पर खड़े हुए भक्तों ने पुष्प वर्षा की।

जिससे आजीवन अपने देह-मन को सदा मन, वाणी और कर्मों से परम पुनीत बनाये रखा' उसके लिए ऐसी अन्तिम विदाई हो तो इसमें क्या आश्चर्य!

षोडशी आराधना

शंकराचार्य सम्प्रदाय के संन्यासी की महासमाधि के उपरान्त षोडशी मनायी जाने की परम्परा के अनुसार, महासमाधि और षोडशी के बीच के १५ दिनों में विविध कार्यक्रम आयोजित किये गये। प्रतिदिन प्रातः का आरम्भ मन्त्र-श्लोक और प्रार्थना तथा ध्यान से होता और उसके उपरान्त प्रभातफेरी निकाली जाती थी। प्रत्येक कार्यक्रम के पीछे एक विशेष ही भक्ति और आध्यात्मिकता से ओत-प्रोत भावना छलकती थी। सितम्बर के प्रथम सप्ताह में राजकोट के पूज्य श्री धवलनारायण आचार्य जी द्वारा श्रीमद्भागवत ज्ञान यज्ञ किया गया। अगले दिन, एक दिवसीय अखण्ड पारायण तुलसीकृत 'श्री राम चरित मानस' का हुआ। गीता यज्ञ, महारुद्राभिषेक और होम, चण्डी यज्ञ, षोडशी हवन तथा भजन-कीर्तन होता रहा। प्रतिदिन स्कूल के बच्चों, साधुओं, कुष्ठ रोगियों, निर्धन लोगों और पशु-पक्षियों को भोजन प्रसाद बाँटा जाता रहा।

११ सितम्बर २००८ को एक विशेष दिव्य यात्रा निकाली गयी जो आश्रम से दोपहर लगभग २ बजे प्रारम्भ हुई। यात्रा में बहुत से विशेष रूप से सजाये गये वाहन थे जिनमें परम पूज्य गुरुदेव तथा परम पूज्य स्वामी जी महाराज के विशाल चित्र मनोहर पुष्पों से अलंकृत करके रखे हुए थे। 'ॐ नमो भगवते शिवानन्दाय', 'ॐ नमो नारायणाय', 'ॐ नमः शिवाय', 'श्री राम जय राम जय जय राम' तथा महामन्त्र का गान करते हुए यात्रा आगे बढ़ी। मार्ग में मुनिकीरेती और ऋषिकेश के लोग भी यात्रा में सम्मिलित हो गये। बहुत से लोग मन हो कर नृत्य करते हुए भी चल रहे थे। रास्ते में आने वाले सभी आश्रमों और संस्थाओं के माननीय लोगों ने अपने द्वार पर पहुँचने पर यात्रा की विशेष पूजा-आरती की और प्रसाद बाँटा। अनेक स्थानों पर लोगों ने सम्पूर्ण यात्रा पर पुष्प वर्षा भी की। यात्रा में लगभग २००० से अधिक भक्त जन रहे होंगे और यह यात्रा आश्रम से आरम्भ हो कर धीमी गति से ऋषिकेश नगर में प्रवेश करती हुई भरत मन्दिर से हो कर पुनः आश्रम लौटी। यह यात्रा पूरे रास्ते में विशेष ज्ञान-प्रसाद के रूप में पुस्तिकाएँ तथा फल और मिठाइयों का प्रसाद आस-पास के लोगों में वितरित करती हुई चल रही थी। विविध आश्रमों और संस्थाओं के अतिरिक्त अन्य भक्त व्यापारियों ने यात्रा के सारे मार्ग को अत्यन्त सुन्दर द्वारों

और झण्डों द्वारा सजाया था जो उनके दिव्य जीवन संघ की इन दो महान् विभूतियों-गुरुदेव और स्वामी जी महाराज के प्रति गहन प्रेम और श्रद्धा को अभिव्यक्त करता था।

१२ सितम्बर २००८ को मुख्य षोडशी कार्यक्रम दिवस पर यह आध्यात्मिक महोत्सव अपने चरम बिन्दु पर पहुँच गया था। दिवस का प्रारम्भ प्रातः ५ से ६ बजे तक ब्राह्ममुहूर्त के ध्यान-प्रार्थना सत्र और उसके उपरान्त प्रभातफेरी से हुआ।

पावन समाधि मन्दिर में ८ बजे विशेष महाभिषेक हुआ जिसमें आश्रम के समस्त वरिष्ठ स्वामी जी सम्मिलित हुए। इसके बाद सभी नव-निर्मित 'शिवानन्द सत्संग भवन' (शिवानन्द आडिटोरियम) में गये जो भाँति-भाँति के के -गुच्छों से तथा परम पूज्य स्वामी जी महाराज के विशालकाय चित्रों से समुचित रूप से सुसज्जित किया गया था। मुख्य कार्यक्रम का प्रारम्भ परम पूज्य गुरुदेव के पावन पादुका पूजन से हुआ। उसके बाद ९.३० से ११.३० ब्रह्मलीन परम पूज्य स्वामी जी महाराज को श्रद्धांजलि समर्पण का कार्यक्रम चला।

इस अवसर पर कैलास आश्रम के महामण्डलेश्वर श्री स्वामी दिव्यानन्द सरस्वती जी महाराज, परमार्थ निकेतन (ऋषिकेश) के महामण्डलेश्वर श्री स्वामी असंगानन्द जी महाराज, गरीबदास आश्रम (हरिद्वार) के महामण्डलेश्वर श्री स्वामी श्यामसुन्दर शास्त्री जी महाराज, साधना सदन (हरिद्वार) के महामण्डलेश्वर श्री स्वामी विश्वात्मानन्द पुरी जी महाराज, भारत माता मन्दिर (हरिद्वार) के महामण्डलेश्वर श्री स्वामी सत्यमित्रानन्द गिरि जी महाराज, साधना केन्द्र आश्रम (डोमेट, देहरादून) के परम पूज्य श्री चन्द्रास्वामी जी महाराज, लक्ष्मणझूला के निकट लक्ष्मण कुटीर के परम पूज्य अवधूत सन्त लक्ष्मण दास जी महाराज, बिहार स्कूल ऑफ योगा (मुंगेर, बिहार) के अध्यक्ष परम पूज्य श्री स्वामी निरंजनानन्द जी महाराज तथा आनन्द आश्रम, कांजनगढ़, केरल के परम पूज्य श्री स्वामी मुक्तानन्द जी महाराज ने श्रद्धांजलि समर्पित की। इनके अतिरिक्त अन्य कई संस्थानों जैसे चिन्मय मिशन, श्री श्री आनन्दमयी माँ मठ, रामकृष्ण मठ, गीता भवन, बाबा काली कमली वाला क्षेत्र इत्यादि से भी सन्त और वक्ता अपनी संस्थाओं की ओर से श्रद्धांजलि समर्पित करने के लिए आये हुए थे। प्रत्येक वक्ता ने अपनी भावभीनी श्रद्धांजलि में परम पूज्य स्वामी जी महाराज को प्राणिमात्र के प्रति गहन प्रेम और करुणा पूर्ण भावना, उनकी अतीव विनम्रता तथा उनके द्युतिमान आध्यात्मिक व्यक्तित्व की तथा अन्य अनेक दैवी गुणों की भूरि-भूरि प्रशंसा की।

बाद में, १६ महात्माओं की आरती पूजा करके उन्हें पुष्पहार पहनाये गये तथा १६ विविध प्रकार के व्यंजनों से युक्त विशेष भोजन, दक्षिणा तथा अन्य उपहार भेंट दिये गये।

इसके अतिरिक्त ऋषिकेश, हरिद्वार तथा अन्य निकटवर्ती स्थानों से ३००० साधुओं को भोजन, दक्षिणा, कम्बल और कमण्डलु दिये गये। उस दिन दस सहस्र से अधिक लोगों को भण्डारा खिलाया गया।

सायंकाल में नौका-संकीर्तन तथा उसके उपरान्त विशेष गंगा-पूजन 'श्री विश्वनाथ घाट' पर हुआ जिसमें सहस्रों की संख्या में दीपक गंगा जी में छोड़े गये।

रात्रि-सत्संग में दैनिक कार्यक्रमों के अतिरिक्त विशेष भजन-सत्र हुआ तथा पूज्य श्री स्वामी जी महाराज के जीवन और कार्यों पर एक छायाचित्र भी दिखाया गया। आरती और विशेष प्रसाद वितरण सहित कार्यक्रम सम्पन्न हुआ।

भगवान् श्री विश्वनाथ तथा परम पूज्य गुरुदेव स्वामी शिवानन्द जी महाराज तथा परम पूज्य श्री स्वामी चिदानन्द जी महाराज की अपार कृपा से पूज्य स्वामी जी महाराज की षोडशी आराधना का यह आध्यात्मिक महोत्सव अत्यन्त भव्य रूप से सम्पन्न हुआ।

-द डिवाइन लाइफ सोसायटी

अनुभूत...

गुरुवार, २८ अगस्त २००८, मध्यरात्रि - ध्यानमुद्रा आसीन ज्योतिर्मय स्वरूप आराध्य देव श्री स्वामी चिदानन्द जी महाराज को देहरादून से ला कर श्री स्वामी शिवानन्द समाधि मन्दिर, शिवानन्द आश्रम, ऋषिकेश में विराजे गये तो दिव्य कान्ति से दीप्त मुखमण्डल एवं विभासित काया से छिटकती आलोक किरणों से-गुरु भगवान् के नित्य प्रकाश से एकाकार हो-वहाँ का आलोक द्विगुणित हो उठा। प्रेमीभक्तों ने उन्हें मनभावन ढंग से वस्त्रालंकारों-मोतियों की मालाओं से अलंकृत कर सादर, सश्रद्धा सजल नयनों से पुष्पांजलि अर्पित की। ये सब हैं अकथ्य अनिर्वचनीय।

सखी! कैसे कहूँ मोहे कहत न आवै-
नैना देखें पर वे हैं नहिं रसना (जिह्वा),
सो वै नैना कछु बोल न पावैं।
रसना कह सकै पर वाके है नहिं नैना
सो बिन देखे रसना कछु कहत न पावै।
सखि! कैसे कहूँ मोहे कहत न आवै ।....

ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ

नगर परिक्रमा श्री विश्वनाथ घाट पहुँची। पावन अभिषेकोपरान्त श्री विश्वनाथ घाट से जैसे ही सबके सर्वस्व पुण्यशील स्वामी चिदानन्द-विराजित पुष्पसज्जित नौका-यान गंगा की मध्य धारा में पहुँचा, शिवानन्दझूला आकाश से सौरभित सुमनों की झड़ी लग गयी। इधर माँ गंगा-अपने नैष्ठिक ब्रह्मचारी, जितेन्द्रिय, अहंता-ममताशून्य, अनासक्त, लोकोपकारी, कृपालु दयालु, इष्टसमर्पित, गुरुतीर्थनिष्ठ, सेवा, प्रेम, त्याग, भक्ति, ज्ञान-वैराग्य, तपोनिष्ठ, सर्वगुणसम्पन्न, गुरुप्रेमरसभीने, दिव्यप्रेममूर्ति-बिछुड़े प्रियवत्स को मिलने हितार्थ हो उठी अधीर-

पुण्य सलिला ब्रह्मद्रवमयी गंगा मैया हो उत्कंठित
आगे हू बढ़ी तरलतरंग उमंग भरै हिय सों-

करन कू सत्कार औ' हार्दिक अभिनन्दन परमपुनीत प्रेमसों
भगवान् गुरुदेव स्वामी शिवानन्द प्रियतम शिष्यभगवत्पुरुष-

'अन्तर्राष्ट्रीय दिव्य जीवन संघ', 'कोहनूर' 'अध्यात्म-ज्ञान-ज्योति' स्वप्रिय सपूत को, वात्सल्य स्नेह सो बाँहें हूँ फैलाये कल-कल ध्वनि जय-जयकार से किया आलिंगनबद्ध त्वरा सों

परम पावन दिव्य प्रेम ममतामय अंक में भरलियो ब्रह्मनिधि स्वरूप को दिव्य परमपावन सर्वमनभावन प्यारे -न्यारे चिदानन्द को ।।

'चिदानन्द हूँ,' 'अमरानन्द हूँ' ये सहज ही आजीवन समझाया हम सबको, तुम्हारी ही करुणैक कृपा साँ पायेंगे चिदानन्द-सच्चिदानन्द स्वरूप को।।

-सं.च.

'ब्रह्मविद् ब्रह्मैव भवति'

- महामण्डलेश्वर श्री स्वामी दिव्यानन्द सरस्वती जी महाराज -

"ब्रह्मविद् ब्रह्मैव भवति।" श्रुति कहती है-ब्रह्म का साक्षात्कार जो करता है वह ब्रह्म ही हो जाता है। उसका कुल, पूर्वज, उसका शिष्य समुदाय ब्रह्मविद् गुरु के प्रति समर्पित हो ब्रह्मज्ञान प्राप्त करता है।

"तस्मादात्मज्ञं हार्चयेद् भूतिकामः।" (मुण्डक उपनिषद् ३-१-१०)

श्रुति कहती है जो ब्रह्म तत्त्व जानता है वह पूजनीय है-

"उपासते पुरुषं ये हाकामास्ते शुक्रमेतदतिवर्तन्ति धीराः।" (मुण्डक उपनिषद् 3 - 2 - 2)

जो निष्काम हो करके उपासना करते हैं वे जन्म-मृत्यु संसार से मुक्त हो जाते हैं।

विदेह मुक्ति को प्राप्त श्री स्वामी चिदानन्द जी सर्वप्रथम ब्रह्म ही थे, ब्रह्म ही हैं। उनके विषय में क्या कहा जाये? उनके स्वरूप को स्पर्श करने के लिए कोई शब्द नहीं। वह ब्रह्म हैं। ब्रह्म किसी शब्द का वाच्य नहीं। ॐ तत्सत् ।

-कैलास आश्रम, ऋषिकेश (उत्तराखण्ड)

जीवन्मुक्त महापुरुष

-महामण्डलेश्वर श्री स्वामी असंगानन्द जी महाराज-

उत्तराखण्ड की विशेष पावन विभूति श्री स्वामी चिदानन्द जी महाराज से हमारा परिचय बहुत पुराना तभी से है जब से सन् १९४५ से परम श्रद्धेय श्री स्वामी शिवानन्द जी महाराज का सम्बन्ध परमार्थ निकेतन से रहा। स्वामी जी की विद्वत्ता को तो हम प्रारम्भ से ही देखते आ रहे हैं।

श्रुति कहती है-

"तथा विद्वान् नामरूपाद् विमुक्तः ।

परात्परं पुरुषमुपैति दिव्यम्।" (मुण्डक उपनिषद् 3 -?-6

विद्वान कौन है? यहाँ पर केवल शब्दों को जानने वाला ही विद्वान् नहीं। विद्वान् वह है जो जल में रहते हुए जल के ऊपर रहता है। नाम-रूप आदि जल है। लोगों को लगता है वह सब कर रहा है, कार्यरत है, किन्तु वह कुछ करता नहीं। द्वन्द्व में रहते हुए वह अलिप्त रहता है। नाना रूप जगत् में वह जो कर रहा है ऐसे जैसे कुछ नहीं कर रहा। ऐसे जीवन्मुक्त महापुरुष थे हमारे स्वामी चिदानन्द जी। मैं समझता हूँ वे तत्त्वज्ञान स्वरूप, अजातशत्रु कृपा-सिन्धु एक आदर्श महात्मा के रूप में सिद्ध हुए। अन्त तक उनका जीवन सभी के लिए प्रेरणादायक रहा। शिवानन्द आश्रम में आने वाले समस्त भक्त जन स्वामी जी महाराज के लिए असीम श्रद्धा रखते हैं।

परमार्थ निकेतन, पो.
स्वर्गाश्रम पौड़ी-गढ़वाल
(उत्तराखण्ड)

गुरु-तीर्थनिष्ठ

-महामण्डलेश्वर डा. स्वामी श्यामसुन्दरदास जी शास्त्री-

एम. ए., सांख्ययोगवेदान्ताचार्य, साहित्यायुर्वेदाचार्य, बी. आई. एम. एस.

ब्रह्मलीन प्रातःस्मरणीय स्वनामधन्य श्री स्वामी चिदानन्द जी को भावभीनी श्रद्धांजलि अर्पित करते हुए उन महान् गुरुओं का भी स्मरण करता हूँ जिनकी कृपा से ऐसे महापुरुष मिले। संस्कृत श्लोकों की रचना द्वारा इस परम्परा को प्रस्तुत करता हूँ-

जगद्गुरु आदि शंकराचार्य, सर्वश्री निम्बार्काचार्य, मध्वाचार्य, वल्लभाचार्य, गोस्वामी तुलसीदास व सूरदास को प्रणाम करता हूँ।

उत्तर दिशा में देवता स्वरूप 'हिमालय' नामक रमणीय भू भाग है। उसमें प्रमुख द्वार के रूप में प्रसिद्ध एवं पावन तपोवन तीर्थ ऋषिकेश विराजमान है।

जहाँ रम्य, कल्याणकारी स्वामी शिवानन्द आश्रम है। **साक्षात् महादेव स्वरूप योगिश्रेष्ठ स्वामी शिवानन्द जी महाराज ने यह आश्रम संस्थापित किया।**

भारत भारती संस्कृति के रक्षक स्वामी शिवानन्द महाराज के यश की जयकार है। उत्तर भारत व दक्षिण भारत की संस्कृति को जोड़ने वाले यह त्यागात्मा देवता स्वरूप हैं।

गीता, उपनिषद्, ब्रह्मसूत्र के उद्घोषक एवं नाना प्रकार की भाषाओं के विद्वान्, अध्यात्मविद्या के जाज्वल्यमान दीपक स्वामी शिवानन्द गुरुदेव की जय हो।

स्वामी शिवानन्द जी महाराज के श्रेष्ठ कृपापात्र शिष्य स्वामी चिदानन्द जी महाराज गुरु-तीर्थनिष्ठ, सरल स्वभाव, विरक्त और अपने भक्तों के संरक्षक रहे हैं।

योग के द्वारा, मधुरवाणी तथा शारीरिक शुद्धि के द्वारा गोवंश और मातृवृन्द की सेवा में तत्पर रहे।

देश-विदेश में अध्यात्म शास्त्र, सदाचार-निष्ठा व विश्व-बन्धुत्व का संदेश स्वामी चिदानन्द जी महाराज अनवरत करते रहे।

सत्यम्, शिवम् द्वारा इस मन्त्र की शिक्षा देते हुए शिक्षा तथा चिकित्सा से जनता की सेवा, बाल-वृद्ध, रोग-ग्रस्त बन्धुओं की सेवा में तत्पर रहने वाले श्री स्वामी चिदानन्द जी महाराज की जय हो।

उनकी पावन षोडशी के पर्व पर मेरी उनके चरण कमलों में श्रद्धांजलि समर्पित है। वे मुनिकीरेती, शिवानन्दझूला 'दिव्य जीवन संघ' में सुशोभित हों।

सर्व प्राणियों में दयाभाव, ब्रह्मविद्या में निष्ठा, निःस्पृह स्वामी जी की जय हो।

श्री साधु गरीबदासीय सेवाश्रम ट्रस्ट
मायापुर, हरिद्वार (उत्तराखण्ड)

संस्कृत श्लोकों के भावार्थ को सार रूप में यहाँ प्रस्तुत किया गया है।

ब्रह्मविद्या-मूर्ति

-महामण्डलेश्वर श्री स्वामी विश्वात्मानन्द पुरी जी महाराज-

वेदों के अनुसार मनुष्य-जीवन की सफलता ब्रह्म का आत्मरूप से अनुभव करने से होती है। मनुष्य-जीवन का प्रथम लक्ष्य है-ब्रह्म का आत्मरूप से साक्षात्कार करना।

"समित्पाणिः श्रोत्रियं ब्रह्मनिष्ठम्।" (मुण्डक उपनिषद् : १-२-१२)

इस श्रुति के आदेश का पालन करते हुए परम श्रद्धेय श्री स्वामी चिदानन्द जी ने अपने सद्‌गुरुदेव प्रातः स्मरणीय श्री स्वामी शिवानन्द जी महाराज से ब्रह्मविद्या प्राप्त कर ली थी। ब्रह्म और शास्त्र की दृष्टि में जिसने ब्रह्मविद्या प्राप्त कर ली उसका कोई कुछ भी कर्तव्य-कर्म शेष नहीं रहता। गीता कहती है-

"एतद्‌बुद्‌ध्वा बुद्धिमान्स्यात्कृतकृत्यश्च भारत ।" (गीता : १५-२०)

उसका सारा कर्तव्य, आचार-व्यवहार सब सम्पन्न हो गया।

शास्त्र कहता है-

"न बुद्धिभेदं जनयेदज्ञानां कर्मसंगिनाम्।" (गीता : ३-२६)

तो गीता के इस आदेश-वचन का पालन करते हुए ब्रह्मलीन श्री स्वामी चिदानन्द जी महाराज ने अपने व्यक्तिगत जीवन में कोई कर्तव्य-कर्म शेष न रहने पर भी अपने गुरुदेव की आज्ञानुसार इस दिव्य जीवन संघ के परमाध्यक्ष पद पर रहते हुए केवल भारत के ही नहीं, विश्व के अनेक राष्ट्रों में रहने वाले तत्त्व-जिज्ञासुओं की तत्त्व-जिज्ञासा शान्त करने के लिए भारत के अनेक प्रान्तों में तथा देश-विदेश में अपने गुरुदेव की शिक्षाओं का, ब्रह्मविद्या का खूब प्रचार-प्रसार किया।

विद्वान् होते हुए भी महाराजश्री बड़े सरल और विनम्र रहे। एक प्रकार से वे सरलता-विनम्रता की प्रतिमूर्ति ही थे। उनका जीवन सादगीपूर्ण बड़ा सात्त्विक था। जीवन में दिखते थे वे एक साधारण व्यक्ति की ही तरह। उनकी सरलता और महान् व्यक्तित्व के सान्निध्य में जो भी आया अनायास ही प्रभावित हो जाता था। आकर्षित हो जाता था। उस व्यक्ति के हृदय को एक प्रकार से छू जाता था उनका उज्ज्वल व्यक्तित्व ।

ऐसे महाराजश्री समाज के प्रत्येक वर्ग के व्यक्ति के उत्थान के लिए, लौकिक-पारलौकिक जीवन में सुधार के लिए सदैव कार्यरत रहे। इस उद्देश्य से उनका जीवन-सिद्धान्त रहा, उसी के अनुरूप उनका दया-सहानुभूति पूर्ण व्यवहार रहा।

साधना सदन, हरिद्वार (उत्तराखण्ड)

सर्वे भवन्तु सुखिनः सर्वे सन्तु निरामयाः।
सर्वे भद्राणि पश्यन्तु मा कश्चिद् दुःखभाग्भवेत् ।।

आधुनिक युग के ऋषि

-श्री चन्द्रा स्वामी उदासीन -

यहाँ उपस्थित दिव्य जीवन संघ के पूज्य सन्तगण, विभिन्न आश्रमों-मठों से पधारे हुए परम पूज्य महामण्डलेश्वर महाराज व सन्त गण के चरणों में मेरा प्रणाम तथा यहाँ पधारे हुए भक्त जन व अन्य सभी को सप्रेम हरि ॐ।

आज हम सब यहाँ ब्रह्मलीन परम पूज्य स्वामी चिदानन्द जी महाराज के षोडशी संस्कार दिवस पर उन्हें अपनी श्रद्धांजलि अर्पित करने हेतु एकत्रित हुए हैं। परम पूज्य महाराज जी एक बोधवान् महापुरुष थे। ऐसे सन्तों के बारे में गुरुवाणी कहती है-

"सन्त मुए क्या रोइये ज्यों अपने घर जाए।
रोइये सातक बापड़े जो हाटे हाट बिकाए।।"

उन्होंने **आधुनिक युग के ऋषि** के रूप में अपनी त्याग, तपस्या, दिव्य प्रेम व निःस्वार्थ सेवा के गुणों से आध्यात्मिकता का सच्चा और व्यावहारिक सन्देश जगत् के समक्ष सामने रखा और अगणित लोगों को प्रभावित किया। उन्होंने कई दशकों तक परम पूज्य स्वामी शिवानन्द जी महाराज द्वारा स्थापित दिव्य जीवन संघ के अध्यक्ष के रूप में सेवा की तथा इसे सक्षम नेतृत्व प्रदान किया। उनकी उपस्थिति मात्र शान्ति और दिव्यता विकीर्ण करती थी। अतिशय विनम्रता उनका अनूठा गुण था। सन् १९९९ में हमारे साधना केन्द्र आश्रम को भी उन्होंने अपनी पद-रज से पवित्र किया था। उनकी मधुर स्मृति को मेरे अनेकों प्रणाम।

प्रभु से प्रार्थना है कि दिव्य जीवन संघ एवं हम सब पर उनकी कृपा सदा बनी रहे तथा यह संस्था पहले की ही तरह समाज में सच्ची आध्यात्मिकता, दिव्य प्रेम व निःस्वार्थ सेवा का प्रसार करती रहे।

पुनः पूज्यपाद सभी सन्तों, साधुओं के पवित्र चरणों में अनेक प्रणाम।

साधना केन्द्र आश्रम,
ग्राम-डुमेट (बाड़वाला),
डाकघर - अशोक आश्रम, देहरादून (उत्तराखण्ड)

सर्वात्मक भाव-भावित

-श्री स्वामी ध्यानानन्द जी महाराज-

परमाध्यक्ष श्री स्वामी चिदानन्द जी महाराज के सत्संग लाभ के मुझे कुछ ही सुअवसर मिले। उन सुअवसरों के प्रत्येक पल में उनके उस अगाध निष्काम प्रेम-प्रवाह के नैरन्तर्य से मैं मोहित हुआ हूँ। उनके उस प्रेम में एक ऐसा सर्वात्मक भाव था जो कि सदा आनन्द की अनुभूति प्रदान करता था।

आज परम पूज्य चिदानन्द जी महाराज हमारे साथ एक हो गये हैं। यदि हम आँखें मूँद कर अन्तर में झाँके तो मुझे पूरा विश्वास है कि वहीं से उनका आशीर्वाद व कृपा-दृष्टि प्राप्त होगी।

चिन्मय मिशन व विशेषतया अपने गुरु श्री स्वामी तेजोमयानन्द जी महाराज की ओर से मैं परम पूज्य श्री स्वामी चिदानन्द जी महाराज के पादपद्मों में श्रद्धांजलि अर्पित करता हूँ। हरिः ॐ!

तपोवन कुटी, चिन्मय मिशन,
उत्तरकाशी (उत्तराखण्ड)

दिव्य अमर आत्मा

- श्री स्वामी लक्ष्मणदास अवधूत जी महाराज -

'तृणादपि सुनीचेन' की साकार मूर्ति, महान् विभूति श्री स्वामी चिदानन्द जी महाराज से सन् १९४८, लगभग इकसठ वर्ष पूर्व से मेरा घनिष्ठ सम्बन्ध रहा है। इनसे अधिक विनम्र पुरुष मैंने कोई और नहीं देखा। 'निर्मानमोहा जितसंगदोषा...' श्रीमद्भगवद्गीता के ये वचन उन पर पूर्णतया चरितार्थ होते हैं।

श्री गुरु नानकदेव जी ने भी कहा है-

अपने को जो जाणें नीचा,
सोई गणियें सबसे ऊँचा।

स्वामी जी के जीवन में यह सब घटा था। इतनी नम्रता! मेरे पास वे खुद आया करते थे। जब आश्रम में आते तो पहले सेवकों को नमस्कार करते। पाकशाला में माताओं को मधुर वाणी से 'मातेश्वरी', 'अन्नपूर्णेश्वरी' इत्यादि शब्दों से सम्बोधित करके पुकारते थे। उन्हें तो 'सर्वं खल्विदं ब्रह्म', 'वासुदेवं सर्वं इति' दृष्टि प्राप्त थी। 'सिया राम मय सब जग जानी' इत्यादि ये सब कहना तो आसान है लेकिन इसे जीना? स्वामी जी महाराज में तो ये सब पूरी तरह से देखा। कथनी-करनी में कोई अन्तर नहीं था। उन्होंने तो इसी प्रकार का जीवन जी कर दिखाया। एक बार स्वामी रामतीर्थ जी की पुस्तक में पढ़ा था-

आप ही राम है तू, मुफ्त में बदनाम हूँ मैं।
मुँह से कह 'राम हूँ मैं', 'राम हूँ मैं' ।।

दिन हूँ मैं, रात हूँ मैं, सुबह हूँ मैं, शाम हूँ मैं।
मुँह से कह 'राम हूँ मैं', 'राम हूँ मैं', 'राम हूँ मैं ।।'

वे जब भी कभी हमारे पास आते, हम गले मिलते थे। वे सदा भजन बोलते। उनकी दिव्य वाणी अब भी हमारे कानों में गूँजती है -

जिस हाल में, जिस देश में, जिस वेष में रहो,
राधारमण, राधारमण, राधारमण कहो ।...

और कभी अलमस्ती में गा उठते-

चिदानन्द, चिदानन्द, चिदानन्द हूँ।
हर हाल में अलमस्त सच्चिदानन्द हूँ।।...

ये केवल उनकी वाणी ही नहीं जीवन में सब व्यवहार में लाये। इन्हीं भावों से युक्त कुछ पंक्तियाँ उन्हें उर्दू में सुनाता-

पूरे हैं वही मर्द जो हर हाल में खुश हैं!
खाने को दिया कम तो उसी कम में खुश हैं।।

ग़म दिया यार ने तो ग़म में रहे खुश
दुख-दर्द में, आफत में, जंजाल में रहे खुश ।।
पूरे वही हैं मर्द जो हर हाल में खुश हैं।।

ग़र खाट बिछाने को मिली तो खाट पर सोए, बाज़ार में जा कर बाट में सोए, टाट बिछाने को मिला, टाट पे सोए। पूरे वही हैं मर्द जो हर हाल में खुश हैं।।

एक दिन मैं सायंकालीन सत्संग में पहुँच गया। स्वामी जी मुझे देख कर बड़े प्रसन्न हुए! बोले- "सन्त के आने से आज 'सोने में सुहागा' पड़ गया, 'चन्दन में इत्र'।" क्या मीठी भाषा थी। उनकी वाणी से फूल झड़ते थे। मैं नाचीज। इतना पड़ा-लिखा नहीं; फिर भी इतना आदर! पुरानी चिट्ठी खोल के देखीं तो रोना आ गया। मुझे सम्बोधन करके 'कोटि-कोटि प्रणाम' लिखते। और अपने-आपको को लिखते- 'चरण रज', 'धूलि कण'। इतनी विनम्रता ! उनको छोटे-बड़े का कुछ था ही नहीं। उनकी दृष्टि ब्रह्ममय थी। सबमें भगवान् के ही दर्शन करते थे।

हमारी सच्ची श्रद्धांजलि यही है कि उनके वचनों पर चल कर हम अपना जीवन सफल बनायें। अन्त में उनके चरण-कमलों में कोटि-कोटि नमन करते हुए उन दिव्य अमर आत्मा से यही वरदान माँगते हैं-

चिदानन्द जी महाराज, मुझे अपने जैसा बना दो जी।
मुझे झुकना नहीं आता, मुझे झुकना सिखा दो जी।।

श्री लक्ष्मण कुटीर, पो. लक्ष्मणझूला
(तपोवन)
ऋषिकेश, उत्तराखण्ड

अखण्ड सच्चिदानन्द-प्रेम स्वरूप

-श्री स्वामी मेधानन्द पुरी जी महाराज-

ब्रह्मलीन स्वनामधन्य श्रीमत्स्वामी चिदानन्द जी महाराज बहुत दयालु थे, आप सभी लोग जानते हैं। वेदों में कहा गया है- "**ब्रह्मविद् ब्रह्मैव भवति।**" जो ब्रह्म को जानता है, वह ब्रह्म ही हो जाता है। उनके अन्दर न अभिमान रहता है, न उनके अन्दर कोई अहंकार। श्री स्वामी जी के अन्दर यह मैंने स्पष्ट रूप से देखा। स्वामी जी बहुत ही सरल और उदार प्रकृति के थे। अन्तर्राष्ट्रीय प्रसिद्धि प्राप्त महाराजश्री साधारण से साधारण भक्त को, महात्मा को बड़े ही प्रेम से मिलते थे। मैं जब कभी उनसे मिलने जाता तो अपना आसन छोड़ मेरे साथ ही बैठ जाते; मैं संकोच में पड़ जाता तो वे कहते-"सभी तो परमात्मा हैं; आपके अन्दर भी तो वही परमात्मा है, मैं आपके साथ नीचे बैठूँ तो क्या आपत्ति हैं?" उनका जीवन सरलता, निरहंकारिता और निरभिमानता से परिपूर्ण था। उनका कोई एक गुण भी हम अपने जीवन में उतारेंगे तो हमारा जीवन धन्य-धन्य हो जायेगा।

अखण्ड सच्चिदानन्द ही प्रेम स्वरूप महाराज श्री स्वामी चिदानन्द जी के रूप में हम सबको सत्प्रेरणा देने के लिए, अमृत तत्त्व देने के लिए आये थे। हम उनको सादर वंदन करते हैं।

कोषाध्यक्ष, श्री कैलास आश्रम
ऋषिकेश, उत्तराखण्ड

करुणामयी कृपा

-श्री स्वामी मुक्तानन्द जी महाराज-

।। ॐ श्री राम जय राम जय जय राम ।।
।। ॐ श्री राम जय राम जय जय राम ।।
।। ॐ श्री राम जय राम जय जय राम ।।

इस सभाकक्ष में प्रवेश करते ही परम पूज्य श्री स्वामी चिदानन्द जी महाराज के इन विराट् चित्रों को देख कर उनके जाज्वल्य स्वरूप का दिग्दर्शन होता है और कितनी स्मृतियाँ जग उठती हैं।

श्री स्वामी जी महाराज परम पूज्य पापा (स्वामी रामदास जी) के समय से ही आनन्द आश्रम (केरल) से सम्बन्धित रहे। शायद सन् १९३० में जब वे श्रीधर राव नाम से जाने जाते थे। परम पूज्या कृष्णाबाई माता जी के समय में भी प्रतिवर्ष कुछ समय आनन्द आश्रम में सत्संग में व्यतीत करते थे तथा हमें उनके सत्संग का लाभ मिलता था।

सन् १९६४ के अन्तिम दिनों में चेन्नई में उनके दर्शनों का सुअवसर मिला। दिव्य जीवन संघ के परमाध्यक्ष पद पर आसीन होने के पश्चात् वे पहली बार चेन्नई आये थे। उन्होंने सम्मेलन में पहुँचते ही, सबको आश्चर्यचकित करते हुए, उपस्थित समस्त जन-समूह को साष्टांग प्रणिपात किया। तदुपरान्त अपने प्रवचन का प्रारम्भ 'उज्ज्वल अमर आत्मन् !' इन दिव्य शब्दों से किया। आज ४५ वर्ष बाद भी वह सब प्रत्यक्ष है। ऐसा आनन्दोत्तेजक व्याख्यान हमें कहीं सुनने को नहीं मिला।

सन् १९६९-७० में हम अपनी नियमित यात्रा पर शिवानन्द आश्रम दर्शनार्थ पहुँचे। हम सभी विश्वनाथ मन्दिर के पास बैठे थे। अचानक स्वामी जी महाराज वहाँ पधारे। हमारी ओर देख कर पूछा- 'आप कहाँ से आये हैं?' मैंने कहा-'मैं केरल से हूँ।' उन्होंने फिर पूछा- 'कब आये आप?' उत्तर था- 'कुछ दिन पूर्व।' वे बोले- 'लौटने से पहले मुझे मिल लेना।' यह पूछने पर 'कब आयें?' उन्होंने कहा- 'कल दस बजे।'

अगले दिन हम दर्शनार्थ पहुँचे। वहाँ पर १०x१० या १०x१२ का कमरा। अन्दर कोई फर्नीचर नहीं था। एक कोने में पुस्तकों से घिरे हुए श्री स्वामी जी महाराज कार्यरत थे।

स्वामी जी ने पूछा- 'आप कहाँ से हैं?'
मैंने कहा-'केरल से।'

स्वामी जी- 'केरल के किस प्रान्त से?'

मैंने कहा- 'कन्चनागढ़' (कन्हनगढ़)?

स्वामी जी - 'आप आनन्द आश्रम गये हैं?

मैंने कहा- 'हाँ जी।'

स्वामी जी- 'क्या आपने माता जी का दर्शन किया है?'

मैंने कहा- 'हाँ जी।'

स्वामी जी-'तब आप यहाँ क्यों आये हैं?'

मैं तो एकदम स्तम्भित हो गया। तब पीछे से किसी अन्य भक्त ने कहा- 'हम यहाँ नियमित यात्रा के लिए आवे हैं।' तब उन्होंने कहा- 'मुझे प्रसन्नता है कि आप आनन्द आश्रम जाते हैं।'

सन् १९८९ में जब स्वामी जी आनन्द आश्रम आये तो मैं वहीं था। सत्संग के बाद सब दर्शनार्थी चले गये तो मुझे देख कर कहा- 'क्या आपने इस स्थान को अपना घर बना लिया है?' मैंने कहा- 'हाँ जी।'

ऐसे होते हैं सन्त। न ही कोई महत्त्वपूर्ण है, न ही कोई गौण है। हम जो शास्त्र में पढ़ते हैं, वे उसी के मूर्तरूप हैं।

हम अपनी मासिक पत्रिका 'व्हीजन' में हर बार श्री स्वामी जी महाराज का वक्तव्य छापने का प्रयास करते हैं। उनके सभी लेख हीरे हैं, किन्तु दो लेख मेरी स्मृति में घर कर गये हैं। एक है- 'गुरु अमरणशील है।' वे अपने शिष्यों के विचार, दर्शन, सदाचरण व दृष्टिकोण के रूप में जीवित हैं। और वे कहते हैं- "आपको देख कर जगत् को मालूम होना चाहिए कि आपके गुरु कौन हैं।" यह एक गौरव की बात है। परन्तु साथ ही एक महत् जिम्मेदारी भी। किसी भी विचार या कार्य को करते समय हमें विचार करना चाहिए कि क्या हमारे गुरु इसे मान्यता देंगे ? प्रत्येक क्षण सावधानी से ऐसा विचार करना होगा।

दूसरा है- 'ईश्वर की दृष्टि में आप अप्रतिम हैं।' उन्होंने कहा है- 'ईश्वर की योजना को कार्यान्वित करने हेतु सभी की महत्त्वपूर्ण भूमिका है। अतः सभी पवित्र और विशेष हैं। कोई भी गौण या हीन नहीं है। जितने लोग उतनी राहें (ईश्वर की ओर जाने की)। यथार्थतः जब हमारी आध्यात्मिक तीव्रता कम होने लगती है तो यही याद दिलाता है-आप अप्रतिम हैं। आपको अपने लक्ष्य-मार्ग पर स्वयं ही चलना है।' परम पूज्य पापा भी यही कहते हैं- 'आप अनोखे हैं।' आप अपने अनोखे तरीके से ईश्वर के सन्मार्ग पर चलिए।

परम पूज्य स्वामी जी की महासमाधि के समय से उनके संस्मरणों को याद करते हैं। एक बार वे आनन्द आश्रम में समाधि मन्दिर की ओर बढ़ रहे थे। कोई व्यक्ति अनजाने में एक पौधे की पत्तियों के अग्रभाग को तोड़ता जा रहा था। वहाँ रुक कर स्वामी जी ने उन सब टूटी पत्तियों को एकत्रित किया। उनके लिए कोई भी कार्य छोटा नहीं। उन्होंने जो-कुछ हमारे साथ बाँटा है,

हम उसके लिए आभारी हैं। हम उनसे प्रार्थना करते हैं कि उनके आशीर्वाद से हम शीघ्रतापूर्वक अपने आध्यात्मिक लक्ष्य तक पहुँचें। हरिः ॐ!

आनन्द आश्रम, कन्हनगढ़, केरल

अपना जीवन ऐसा बनाना चाहिए जिससे दूसरों को प्रसन्नता मिल सके, दूसरों को लाभ हो सके तथा दूसरों की सहायता हो सके। यदि ऐसा सम्भव न हो, तो उससे कम-से-कम दूसरों के कष्टों को, दुःखों को तो किसी प्रकार कम किया ही जा सकता है। ऐसा ही जीवन, वास्तव में जीवन है। यही हमारा धर्म है।

-स्वामी चिदानन्द

चिदानन्द चिदानन्द चिदानन्द हूँ।
हर हाल में अलमस्त सच्चिदानन्द हूँ।।

अजरानन्द, अमरानन्द, अचलानन्द हूँ।
हर हाल में अलमस्त सच्चिदानन्द हूँ।।
निर्भय और निश्चिन्त चिद्घनानन्द हूँ।
कैवल्य, केवल, कूटस्थ आनन्द हूँ।।
चिदानन्द, चिदानन्द...

अपने गुरु स्वामी सत्यानन्द जी के साथ चालीस वर्ष पूर्व आठ वर्ष की अवस्था में मैं यहाँ शिवानन्द आश्रम आया था। गुरुदेव कुटीर में सायंकालीन सत्संग में परम गुरु श्री स्वामी शिवानन्द जी महाराज के इस 'चिदानन्द भजन' को श्री स्वामी चिदानन्द जी महाराज के श्रीमुख से सुना था जिसे अभी हम सबने गाया है। मैं सोचता हूँ जो प्रारम्भ से ही अपने आपको '**सत्-चित्-आनन्द**' रूप में भूल चुका है, पूर्णतया रम चुका है; उसको भला क्या श्रद्धांजलि अर्पित की जाये?

उन्होंने संकल्प लिया था सद्गुरुदेव शिवानन्द जी के सिद्धान्तों को जीवन में आत्मसात् करके मानव जाति को दिव्यता का बोध कराने का। हमारे लिए उन्हें श्रद्धांजलि देने का सर्वश्रेष्ठ तरीका यही है कि अपने-आपको भूलें, ऐसे महात्मा के, ऐसे सिद्ध पुरुष के, ऐसे सन्त के स्वभाव को एवं उनके विचारों को अपने जीवन में आत्मसात् करें; उनके निर्देशित आदेशों का पालन करके उनके दिखाये सत्मार्ग पर चलें। हरिः ॐ तत्सत्!

परमाध्यक्ष, बिहार स्कूल ऑफ योग
मुंगेर, बिहार

उदारहृदयी

- श्री स्वामी हरिओमानन्द जी महाराज-

अपने परिव्राजक जीवन के प्रारम्भिक दिनों में मैं यहाँ शिवानन्द आश्रम आया। समाधि मन्दिर में दर्शनार्थ पहुँचा। रात्रि सत्संग चल रहा था। हॉल खचाखच भरा था। भीतर प्रवेश करना अति दुष्कर था। इसलिए मैंने बाहर से ही प्रणाम किया, और कमरे में लौट आया।

अगले दिन प्रातःकाल ही मुझे उत्तरकाशी जाना था। अतः श्री स्वामी चिदानन्द जी महाराज के दर्शनों से वंचित रहा। प्रस्थान करने ही वाला था कि उसी समय किसी ने दरवाजा खटखटाया। दरवाजा खुलने पर उसने दो पैकेट मेरे हाथ में दिये। एक में काजू था और दूसरे में थी दक्षिणा । दक्षिणा भी इतनी कि व्यक्ति उत्तरकाशी तक पहुँच जाये-उससे एक पैसा अधिक नहीं।

जैसा कि कहा जाता है-"यदि आपके पास अधिक पैसा होगा तो आपकी आदतें खराब हो जायेंगी।"

आप जानते हैं उस काजू का क्या हुआ ? उस काजू ने मुझको आज इस रूप में आपके सम्मुख बिठा दिया है।

उपरान्त मैं गंगोत्री की गुफा में गया। वहाँ मैंने ब्रह्म कमल (जो विशेष मांगलिक सुगन्धि से भरपूर होते हैं और १८०० फुट की ऊँचाई पर पाये जाते हैं) इकडे करके अपने परम पूज्य गुरु महाराज श्री स्वामी विष्णुदेवानन्द जी महाराज को कनाडा भेज दिये।

इसके तीन वर्ष पश्चात् पूज्य श्री स्वामी चिदानन्द जी महाराज वहाँ गये और दोनों गुरुबन्धु परस्पर मिले। वे दोनों विभिन्न विषयों पर काफी देर तक विचार-विनिमय करते रहे। तत्पश्चात् गुरु महाराज स्वामी विष्णुदेवानन्द जी महाराज ने उन्हीं ब्रह्मकमलों का हार परम पूज्य श्री स्वामी चिदानन्द जी महाराज को सप्रेम अर्पित किया।

इस प्रकार हम सब परस्पर सम्बन्धित हैं। महान् आत्मा श्री स्वामी चिदानन्द जी महाराज की करुणामयी कृपा सर्वदा हम सब पर बरसती रहे ताकि हम शान्ति, आनन्द से आप्लावित हों व सुख, स्वास्थ्य, दीर्घायु तथा आध्यात्मिक उन्नति से समृद्ध हों।

-श्री स्वामी विष्णुदेवानन्द आश्रम उत्तरकाशी (उत्तराखण्ड)

सर्वरूप परम पुरुष

-श्री स्वामी प्रेमानन्द जी महाराज-

चिदानन्द सागर की एक तरंग अब तक प्रकट रूप में रही। ब्रह्मलीन होने पर उस भाव-सागर में ही लीन हो कर वह सर्वरूप हो गयी। सोलह दिवसीय जो यह कार्यक्रम हुआ इसमें हर रोज, हर क्षण, प्रति पल हमारे दिल में सर्वरूप वही **परम पुरुष** बैठा है, यही सबने अनुभव किया। शिवानन्द आश्रम में धूल से ले कर पत्ते, कीट-पतंगे, कुत्ते, बन्दर, पशु-पक्षी सबमें,

आश्रम-वासियों एवं भक्त जनों का तो कहना ही क्या? सबके अन्दर केवल एक ही भाव समाया हुआ अनुभव किया- 'चिदानन्द !' 'चिदानन्द !' 'चिदानन्द !' सब चिदानन्द रूप ही हो गये।

उन महान् विभूति के गौरव का, उनके गुणों का वर्णन तो किया ही नहीं जा सकता। वे तो अवर्णनीय हैं। यहाँ उपस्थित हर व्यक्ति का मन श्री स्वामी जी के प्रति भाव से परिपूर्णतः ओत-प्रोत है। अगर सभी अपने भाव अभिव्यक्त करें, तो उनका गुणगान लिपिबद्ध कर स्टोर करने के लिए ऐसे दस सभागार (आडिटोरियम) भी शायद कम रहेंगे।

मैं व्यक्तिगत रूप से उनके साथ जुड़ा हुआ था। कहाँ तक कहा जाये? कैसे कहा जाये? वाणी अल्प है। उनको सतत स्मरण करना ही हमारी उनके प्रति श्रद्धांजलि है। वे जितना पहले हमारे साथ थे, शरीर त्याग करके अब उससे भी ज्यादा हमारे समीप हैं। हमारे साथ हमेशा थे, हमेशा साथ हैं।

दिव्य जीवन संघ शाखा,
उत्तरकाशी उत्तराखण्ड

'जीते-जागते परमात्मा का हस्ताक्षर

-श्री स्वामी चिदानन्द मुनि जी महाराज-

कहते हैं बदलता है जमाना अक्सर;
पर सन्त वे हैं जो जमाने को बदल देते हैं।

ऐसे महान् सन्त हैं पूज्य स्वामी चिदानन्द जी, जिनका जीवन गंगा के समान पवित्र और हिमालय की ऊँचाइयों के समान ऊँचा है। एकता और विनम्रता के मूर्तिमान् स्वरूप हैं स्वामी चिदानन्द जी।

भारत इसलिए महान् नहीं कि उसके पास काश्मीर की घाटियाँ और मुंबई की चौपाटियाँ हैं-भारत इसलिए, महान् है कि उसके पास परम पूज्य श्री स्वामी शिवानन्द जी महाराज, पूज्य श्री स्वामी चिदानन्द जी महाराज हैं।

क्या थी चिदानन्द स्वामी जी की महानता! ज्ञान की ऊँचाइयों पर पहुँच कर भी एक कुष्ठ रोगी के द्वार पर माथा टेकते मिलेंगे। कर्म-भक्ति जहाँ शीर्षासन करते हों, ज्ञान जहाँ शीर्षासन

करता हो.... उनका नाम है- चिदानन्द जी। **जीते-जागते उन परमात्मा का हस्ताक्षर हैं- चिदानन्द जी।**

भक्ति का, ज्ञान का, कर्म का सार है-झुकना।

झुकता तो वह है जिसमें जान होती है।
नहीं तो मुर्दे की पहचान होती है।।

ये तो वह सन्त हैं जिन्होंने दुनिया को हिलाया नहीं बल्कि हिलते हुओं को पकड़ा है, आश्रय-अवलम्ब प्रदान किया है।

कौन कहता है कि मौत आयेगी और
मैं मर जाऊँगा।
मैं तो दरिया हूँ, सागर में उतर जाऊँगा ।।

श्री स्वामी शिवानन्द जी महाराज गंगा-सागर हैं और गंगा हैं-स्वामी चिदानन्द जी। स्वामी जी का महाप्रयाण है स्वामी चिदानन्द-गंगा जा कर श्री स्वामी शिवानन्द-सागर में विलीन हो गंगा-सागर हो गयी।

परमार्थ निकेतन, पो.
स्वर्गाश्रम पौड़ी-गढ़वाल (उत्तराखण्ड)

साधक को साधना के प्रति सदा सजग तथा जाग्रत रहना चाहिए। तनिक सी भूल साधक की समस्त साधना, उसकी जीवन भर की कमाई पल मात्र में समूल नष्ट कर सकती है।

- स्वामी चिदानन्द

'ज्ञानयोगतपोनिष्ठं, प्रणमामि चिदानन्दम्'

-श्री स्वामी निर्मलानन्द गिरि जी महाराज -

पुण्यात्मा महापुरुष श्री स्वामी चिदानन्द जी महाराज के दर्शन हमने सन् १९६६ में हजारी बाग में श्री श्री माँ आनन्दमयी आश्रम में संयम-सप्ताह में किये थे। महात्मा कभी मरते नहीं। वे मर कर एक नया जीवन हमारे सामने खड़ा कर देते हैं। इस प्रकार वह मर कर अमर हो जाते हैं। इनकी स्मृति, इनका सदाचरण, इनका सच्चरित्र एक विशाल 'लाइट हाउस' की तरह हमारे सामने रहता है। महात्मा का कहीं जाना नहीं, कहीं आना नहीं। नित्य निरन्तर ये हमारे हृदय में रहते हैं। हमें इसी भावना को दृढ़ करना है।

सन् १९६६ से अब तक उनके साथ मेरा सम्पर्क बराबर बना रहा। बड़े प्यारे ढंग से, बड़े सच्चरित्र ढंग से, बड़ी शालीनता से वे आशीर्वाद दिया करते थे। श्री श्री माँ के जन्मोत्सव और संयम-सप्ताह में महाराजश्री को अनेक बार तिलक-चंदन-माला-अर्पण करने का मुझे सौभाग्य प्राप्त हुआ। ऐसे उत्सवों में उनको देखे बिना भक्तों की तृप्ति ही नहीं होती थी।

श्री स्वामी जी महाराज इतने बड़े महात्मा हो कर श्री श्री माँ के सामने साष्टांग दण्डवत् करते थे। ऐसा पवित्र आत्मा कहाँ मिलेगा? आजकल कलियुग में ऐसा सहज, सरल सन्त मिलना बहुत कठिन है। उन्होंने त्याग और तपस्या के आदर्श अपने पुनीत आचरण-व्यवहार से दिखाये। उनका व्यक्तित्व महान् था, दिव्य था। तेजोमय बदन, उज्वल हासयुक्त मुख, ज्ञान-योगनिष्ठ, तपोनिष्ठ स्वामी जी को शतशः प्रणाम। अपने भाव इस श्लोक के माध्यम से व्यक्त करता हूँ-

सदा हासोज्वलमुखं तेजपुंज कलेवरं।
ज्ञानयोगतपोनिष्ठं प्रणमामि चिदानन्दम् ।।

उपाध्यक्ष, श्री श्री माँ आनन्दमयी आश्रम
पो. धौल चीना, अल्मोड़ा-२६३८८१

संन्यास शौर्य पर आधारित है। संन्यास के कुरुक्षेत्र का वास्तविक धनुर्धर वह है जो जीवन को उसके यथार्थ में ग्रहण करता है, जो संसार की अर्थहीनता से सुपरिचित हो कर विषयासक्ति के दृढ़ बन्धनों से ऊपर उठ गया है और जो जीवन के उस मोड़ पर आ

खड़ा हुआ है, जहाँ तीव्रतम संघर्ष से जूझना है। कहना न होगा यह तीव्रतम संघर्ष स्वयं अपने ही निम्नतर आत्मा के विरुद्ध है। 'मैं शरीर हूँ', 'मैं मन हूँ', 'मैं बलवान् हूँ', 'मैं सुन्दर तथा बुद्धिमान् हूँ', सामान्य जन की चेतना को आच्छादित करने वाले इस प्रकार के मन्तव्य तथा अध्यास के अवसादन एवं इनके स्थान पर इस महती चेतना के प्रतिष्ठापन जैसा दुष्कर कर्म इस संसार में अन्य कोई भी नहीं है कि 'मैं यह शरीर नहीं हूँ', 'मैं यह मन नहीं हूँ', 'मैं सच्चिदानन्द आत्मा हूँ' और 'मैं अगणित शक्तियों का स्वामी, जन्म-मरण का अतिक्रमणकारी, असीम और सर्वगत तत्त्व हूँ।' यही है यथार्थ शौर्य।

-स्वामी चिदानन्द

'न भूतो न भविष्यति'

- श्री स्वामी शिवचिदानन्द जी महाराज -

'चिदानन्देन कृष्णेन प्रोक्ता स्वमुखतोऽर्जुनम्'...

श्री चिदानन्द कृष्ण गीता उपदेश के माध्यम से अर्जुन को बोले थे-

मत्कर्मकृत् मत्परमो मद्भक्तः संगवर्जितः
निर्वैरः सर्वभूतेषु यः स मामेति पाण्डव ।।

(भगवद्गीता : 88/64)

सद्गुरुदेव स्वामी शिवानन्द जी महाराज के आदर्शों को सामने रख कर उनके कार्य को, मिशन को अपनाते हुए उनके सामने योग्यतम-महानतम शिष्य स्वामी चिदानन्द जी महाराज ने

दिखा दिया-मत्कर्म क्या है? गुरुदेव को कैसे सर्वोच्च परम सत्ता मानना चाहिए, कैसे भजन करना है? चरितार्थ रूप में 'संगवर्जित' हो कर 'निर्वैर' हो कर दिखाया। एकमात्र अनन्य गुरु-भक्ति का प्रमाण दिखाया, साधक को विश्व-प्रेम का, गुरुदेव का आदर्श दिखाया। उनकी प्रकट लीला पूरी हो गयी, अब अप्रकट लीला का शुभारम्भ हुआ है।

हमारी श्रद्धांजलि यही है- हम उनसे प्रार्थना करते 8-^ 4 3pi ^ 4 कृपा करें जिससे कि हम आप जैसे -भक्ति-योग-पालन करने वाले हों। जैसे आप गुरुदेव के अनन्य, परम प्रिय शिष्य रहे, उस आदर्श पर हम सब चलें। गीता का निचोड़ एकादश अध्याय का उपर्युक्त अन्तिम श्लोक के आदर्श पर चल कर अपने जीवन को दिव्य बनायें। आप जैसे अद्वितीय सर्वोत्तम, परम शिष्य **'न भूतो न भविष्यति।'**

दिव्य जीवन संघ शाखा, उड़ीसा

ॐ

भगवद्गीता व्यावहारिक साधना के उन सभी महत्त्वपूर्ण पक्षों का विवेचन करती है जो कि अपरोक्षानुभूति के औपनिषदिक ज्ञान के साक्षात्कार तक ले जाते हैं। साधक को इनका अनुसरण करना चाहिए और गीता की व्यावहारिक साधना को अपने हृदय में प्रतिष्ठित करना चाहिए। साधक को सद्गुरु के रूप में प्रकट भगवान् के प्रति विनम्र आत्म-समर्पण की स्थिति में निरन्तर रहना है और यदि वह इस प्रकार रहता है और पूर्ण वैराग्य के साथ अपनी साधना करता है तो फिर यदि उसके समक्ष श्रेय और प्रेय का विकल्प प्रस्तुत किया जाता है, तब वह प्रत्येक बार प्रेय को अस्वीकार कर श्रेय को ही चुनता है, तो तभी उसकी साधना फलप्रद होती है; पर अन्तिम सफलता तो भगवान् के ही हाथों में है। आप सभी गीतोपदिष्ट जीवन यापन कर परमानन्द को प्राप्त करें।

-स्वामी चिदानन्द

अहंशून्य सन्त

।। श्री स्वामिनारायणो विजयते ।।

पूज्यवर सन्तचूड़ामणि स्वामी श्री चिदानन्द जी महाराज के ब्रह्मलीन होने का समाचार प्राप्त हुआ। वास्तव में इस धरती पर वे साधुता एवं अध्यात्म का मूर्तिमन्त स्वरूप थे। उनकी अति पवित्र आत्मा के निर्गमन से अध्यात्म जगत् का एक महान् सूर्य अस्त हुआ है। न केवल अनुयायी शिष्यवृन्द को, अपितु पूरे जगत् को उनके दिव्य अस्तित्व की आपूर्ति कभी नहीं हो पायेगी। वे अपने कार्यों द्वारा, अपने सिद्धान्तों द्वारा, अपने पवित्रतम शिष्यमण्डल द्वारा स्वयं को प्रतिभासित करते रहेंगे, यह निर्विवाद सत्य है। अपने जीवन एवं उपदेशों द्वारा उन्होंने जो प्रेरणा दी है, आने वाले युगों तक अनन्त मुमुक्षुओं को अध्यात्म के प्रकाश की ओर गतिशील करती रहेगी।

हमें अनेक बार उनके आशीर्वाद लेने का सौभाग्य प्राप्त हुआ है। उनकी अहंशून्य सन्त-प्रतिभा को निकट से देख कर उनके सन्तत्व एवं दिव्यानन्द का अनुभव हमें प्रसन्नता से भर देता था। वे प्रेम एवं विनम्रता की मूर्ति थे।

अध्यात्म-पथ के एक महारथी की चिर-विदाई ने वास्तव में पूरे भारत को स्तब्ध कर दिया है।

हम भगवान् स्वामिनारायण के चरणों में प्रार्थना करते हैं कि वे अपनी गुरु भक्ति तथा अपनी साधुता द्वारा हमारे बीच चिरकाल तक विद्यमान रहें, ताकि हम प्रतिपल उनके कल्याणकारी व्यक्तित्व के सौरभ का अनुभव करते रहे। स्वामी जी महाराज की स्मृतियों के साथ,

हृदयपूर्वक **जय स्वामिनारायण ।**

स्नेहाधीन, शास्त्री नारायण स्वरूपदास (प्रमुख स्वामी जी महाराज),
बोचासनवासी
श्री अक्षर पुरुषोत्तम स्वामिनारायण संस्था, शाहीबाग रोड, अहमदाबाद-३८०००४ (गुजरात)

सेवाश्रम के सहायक

दिव्य जीवन संघ के परमाध्यक्ष, पूजनीय श्रीमत् स्वामी चिदानन्द जी महाराज के ब्रह्मलीन होने के बारे में जान

कर एकाएक विश्वास नहीं हुआ। परन्तु परम पिता परमेश्वर के द्वारा संचालित इस जीवन-चक्र का यह कटु सत्य **उसकी** इच्छा मान कर-हमें न चाहते हुए भी स्वीकार करना ही पड़ता है।

पूजनीय श्रीमत् स्वामी चिदानन्द जी महाराज का रामकृष्ण मिशन से विशेष अनुराग था एवं मठों के अध्यक्षों से सदैव ही उनका सम्पर्क होता रहता था।

पूजनीय स्वामी जी महाराज का इस सेवाश्रम से सदैव ही विशेष लगाव रहा और समय-समय पर इस सेवाश्रम की आर्थिक सहायता करते रहे; जिससे इस सेवाश्रम को उत्तराखण्ड के ही

नहीं अपितु देश के अन्य प्रान्तों से आने वाले साधु-सन्तों, गरीबों एवं लाचार मरीज़ों को निःशुल्क चिकित्सा सहायता उपलब्ध कराने में बहुत ही बल मिला।

अतः मेरी एवं इस सेवाश्रम के सभी सन्त गणों की उस परमपिता परमेश्वर से यही प्रार्थना है कि 'दिव्य जीवन संघ' को उनके द्वारा प्रदत्त मार्ग-दर्शिता पर अग्रसर होने की शक्ति दें।

स्वामी नित्यशुधानन्द, सचिव, रामकृष्ण मिशन सेवाश्रम, पो. कनखल, हरिद्वार

विद्वत् विभूति

आचार्य स्वामी शिवानन्दो विजयतेतराम्

भारत विभूति सन्तोमहान्तः ब्रह्मणि सुलीनः महर्षिवर्यः
स्वामी चिदानन्द ब्रह्मस्वरूपः तच्चरणयोर्मे श्रद्धांजलिः स्यात् ।

विश्व-विख्यात दिव्य जीवन संघ संस्था के संस्थापक सन्त-शिरोमणि योगिराज पूज्यपाद स्वामी शिवानन्द जी महाराज के कृपा-पात्र सुयोग्य शिष्य, तपस्त्याग-प्रतिमूर्ति, समाजसेवी स्वामी चिदानन्द जी महाराज अपने पंच भौतिक शरीर का परित्याग कर, अपने सच्चिदानन्द स्वरूप ब्रह्म में लीन हो गये हैं। वे महान् गुरुतीर्थ-निष्ठ, परोपकारी महापुरुष थे। वे सरलता, नम्रता की प्रतिमूर्ति, हम सबके प्रेरणास्रोत भी थे। षड्दर्शन भारत साधु समाज के अखाड़ों, आश्रमों के सन्तों-महन्तों, महामण्डलेश्वरों के भी वे प्रतिनिधि गौरव partial i एवं अध्यात्मवाद भारतीय धर्म-संस्कृति के परम प्रचारक, विद्वत् विभूति थे। जिनके अभाव की क्षतिपूर्ति सर्वथा असम्भव है। वे सदा चिर-स्मरणीय रहेंगे।

'नरदेही नारायण ही' के आदर्श को अपना कर उन्होंने कुष्ठ रोगियों की सेवा में भी तन-मन-धन से अपने को समर्पित रखा। उनके पावन चरण-चिह्नों पर हम चल सकें, यही उनके प्रति सच्ची श्रद्धांजलि होगी।

महामण्डलेश्वर डा. स्वामी श्यामसुन्दरदास शास्त्री अध्यक्ष, अखिल भारतीय गरीबदासी साधु महापरिषद्, हरिद्वार, वरिष्ठ सचिव, भारत साधु समाज, शाखा हरिद्वार

अमूल्य सहयोग-प्रदाता

दिनांक २९ अगस्त, २००८ को परम पूज्य श्रद्धेय श्री स्वामी चिदानन्द जी महाराज, परमाध्यक्ष, द डिवाइन लाइफ सोसायटी, शिवानन्दनगर, जो बाबा काली कमली वाला पंचायत क्षेत्र

की प्रबन्धकारिणी समिति के सम्माननीय सदस्य चले आ रहे हैं, उनके महाप्रयाण पर श्री बाबा जी महाराज की गद्दी पर एक शोक-सभा का आयोजन हुआ, जिसमें क्षेत्र के प्रबन्धक वर्ग एवं समस्त कर्मचारी गण के अलावा सन्त-महात्मा गण भी उपस्थित थे। उपस्थित महानुभावों ने पूज्य महाराजश्री के महाप्रस्थान पर गहरा शोक व्यक्त किया।

पूज्य महाराजश्री लम्बे समय से बाबा काली कमली वाला पंचायत क्षेत्र की सेवा करते आ रहे थे। पूज्य महाराजश्री ने इस संस्था को जो अमूल्य सहयोग प्रदान किया वह क्षेत्र के इतिहास में चिरस्मरणीय रहेगा। पूज्य महाराजश्री के कार्यकाल में जो कार्य हुए हैं उनसे उनकी कीर्ति सदैव अमर रहेगी।

कृते बाबा काली कमली वाला पंचायत क्षेत्र के समस्त कर्मचारी एवं उपस्थित सज्जन

धर्मेन्द्र कंसल, प्रबन्धक
बाबा काली कमली वाला
पंचायत क्षेत्र, क्षेत्र रोड, ऋषिकेश

परम शीतल सन्त

परम शीतल सन्त पूज्य स्वामी श्री चिदानन्द जी महाराज ब्रह्मलीन हुए हैं, यह समाचार प्राप्त होते ही एक सम्यगू त्यागी, संन्यास की सच्ची परिभाषा रूप महापुरुष को नतमस्तक हुआ।

शिवानन्द आश्रम, ऋषिकेश में सतत तीन वर्ष क्रम से श्रीमद्भागवत, श्री रामचरित मानस और पूज्य स्वामी शिवानन्द जी महाराज के शताब्दी महोत्सव में पुनः एक बार श्रीमद्भागवत जी के माध्यम से सेवा करने का अवसर प्राप्त हुआ है। उस समय पूज्य स्वामी जी का स्नेह, धैर्य, तप-त्याग, ज्ञान, विरक्ति, व्यवहार की शालीनता आदि अनेक गुणों का दर्शन करके प्रभावित हुआ। वह अनुभव मेरे जीवन की निधि है।

हम समग्र 'सांदीपनि' परिवार-पोरबन्दर, पूज्य स्वामी जी को अपने श्रद्धा सुमन समर्पित करते हुए उस दिव्य चेतना के प्रति नतमस्तक है।

रमेश भाई ओझा
सांदीपनि विद्यानिकेतन, महर्षि सांदीपनि मार्ग
रांधावाव, पोरबन्दर (गुजरात)

हमारे मार्गदर्शक

पूज्यपाद स्वामी श्री चिदानन्द जी महाराज के ब्रह्मलीन होने की सूचना पा कर श्री दर्शन महाविद्यालय ट्रस्ट परिवार को अत्यधिक आत्मिक वेदना हुई है। ब्रह्मलीन स्वामी श्री चिदानन्द जी

महाराज कई वर्षों तक श्री दर्शन महाविद्यालय के अध्यक्ष रहे तथा विद्यालय को उनकी कृपा की छत्रछाया प्राप्त होती रही।

विद्यालय परिवार 'दिव्य जीवन संघ', शिवानन्द आश्रम-परिवार से आशा करता है कि उनका आत्मीय भाव भी विद्यालय के प्रति पूज्य स्वामी जी की ही तरह बना रहेगा। ब्रह्मलीन स्वामी श्री चिदानन्द जी द्वारा स्थापित आदर्श सदैव हमारा मार्गदर्शन करते रहेंगे तथा उनकी कृपापूर्ण छत्रछाया सदैव हम पर बनी रहे।

भावपूर्ण श्रद्धांजलि अर्पित करते हुए-

अध्यक्ष-गोपालाचार्य शास्त्री
प्रबन्धक संजय शास्त्री
एवं श्री दर्शन महाविद्यालय ट्रस्ट और विद्यालय
परिवार मुनि की रेती, पो. शिवानन्दनगर (टिहरी गढ़वाल), ऋषिकेश

आलोकमय जीवन

परम पूज्य श्री स्वामी चिदानन्द जी महाराज की महासमाधि का समाचार भाई श्री श्यामलाल (कलकत्ता) के द्वारा प्राप्त हुआ। पूज्य महाराजश्री जैसा श्रेष्ठ व्यक्तित्व का धरती पर जन्म, ईश्वर की हम सब पर बड़ी अनुकम्पा है।

हम यह सोच कर अपने को धन्य मानते हैं तथा गौरवान्वित हैं कि हमारे पूज्य दादा जी स्वामी श्री हरिशरणानन्द जी महाराज (बरसाना) परम पूज्य श्री महाराजश्री के गुरुभाई एवं परमप्रिय साथी-मित्र थे। इसी कारण उन्हीं के माध्यम से महाराजश्री की कृपा हम सबको भी प्राप्त थी। अनेक बार उनके दर्शन एवं सत्संग का लाभ मिला।

श्री राधा महारानी के बरसाना धाम में निवासित पूज्य स्वामी हरिशरणानन्द जी सरस्वती को भू-समाधि उन्हीं की इच्छा के अनुसार पूज्य महाराज श्री स्वामी चिदानन्द जी द्वारा ही प्रदान की गयी।

महाराजश्री के महाप्रयाण से हम सब अब उनके दर्शन तो नहीं कर सकेंगे परन्तु उनका तप एवं जीवन का प्रकाश हमें सदा आलोकित करता रहेगा।

परम पूज्य श्री स्वामी जी महाराज की स्मृतियों को कोटि-कोटि प्रणाम।

कुंजबिहारी, लाडली प्रसाद, राजेन्द्रकुमार
विजय मेटल इंडस्ट्रीज, १२३/४३२,
फैक्ट्री एरिया, कानपुर

त्रिगुणातीत

महान् विगतस्पृही, जितात्मा, सन्त-शिरोमणि, जीवन्मुक्त, अखण्ड ब्रह्माण्ड नायक, अनन्त श्री विभूषित 'दिव्य जीवन संघ, ऋषिकेश' के परमाध्यक्ष श्री श्री १००८ श्री परम पूज्य सद्गुरुदेव स्वामी चिदानन्द जी महाराज दिनांक २८-८-०८ को अपने नश्वर शरीर से विमुक्त हो अपने शिष्यों, भक्तों और अनुयायियों को विलखते छोड़ कर अपने आत्मतत्त्व को नित्य ब्रह्मतत्त्व में विलीन करके उस शाश्वत परम पद को प्राप्त हो गये जहाँ पहुँच कर फिर संसार में जन्म-मृत्यु के चक्कर में नहीं आना पड़ता। परम पूज्य सद्गुरुदेव स्वामी जी सदैव ब्रह्मानन्द में सराबोर रहते। वे साक्षात् ज्ञानमूर्ति, गगन सदृश, द्वन्द्वातीत, तत्त्वमस्यादि के लक्ष्यों को प्राप्त करने वाले जिज्ञासु, त्रिगुणातीत इत्यादि लक्षणों से विभूषित ऐसे सद्गुरुदेव थे। उनकी अध्यक्षता में आराध्य सद्गुरुदेव परम पूज्य स्वामी शिवानन्द जी महाराज द्वारा स्थापित अन्तर्राष्ट्रीय संस्था "दिव्य जीवन संघ" ने सभी क्षेत्रों के ईश्वरीय कार्यों में उत्तरोत्तर वृद्धि की है।

"दिव्य जीवन संघ खुरजा शाखा" तथा "श्री गोपाल संकीर्तन मण्डल" के सभी सदस्यों की यह शोक सभा प्रार्थना करती है कि हमारे सद्गुरुदेव परम पूज्य स्वामी जी महाराज अपने शिष्यों, भक्तों, सेवकों तथा अनुयायियों पर अपने आशीर्वाद और सत्कृपा की वर्षा सदैव करते रहें।

लक्ष्मीचन्द्र गौतम, अध्यक्ष, दिव्य जीवन संघ खुरजा शाखा मधुवन, खुरजा (उत्तर प्रदेश)

सत्प्रेरक स्वामी जी

दिव्य जीवन संघ, ऋषिकेश (हरिद्वार) के परम पूज्य तपस्वी स्वामी श्री चिदानन्द जी महाराज ब्रह्मलीन हुए, इस समाचार से हमें सन्तों को बड़ा दुःख पहुँचा।

ब्रह्मलीन परम पूज्य स्वामी श्री शिवानन्द जी महाराज ने दिव्य जीवन संघ को साकार किया, विकास किया और आश्रम के माध्यम से लोकोपयोगी कार्य किये।

ब्रह्मलीन परम पूज्य स्वामी श्री चिदानन्द जी महाराज ने उसी परम्परा का निर्वाह किया। भारतीय धर्म, संस्कृति, मानव-शान्ति के लिए आपने विश्व में परिभ्रमण किया।

आपका सन्त-जीवन प्रेरणादायी, निर्मल और सबको मार्गदर्शन कराने वाला रहा। दिव्य जीवन संघ की कई शाखाएँ उपदेश-ध्यान-योग के कार्यक्रम से तथा आध्यात्मिक साहित्य के माध्यम से, जन-जीवन को सत्प्रेरणा दे रही है।

श्री श्री माँ आनन्दमयी का श्री सन्तराम मन्दिर, नडीआद में संयम सप्ताह सम्पन्न हुआ था। उस अवसर पर अनेक विद्वान् सन्त मण्डली में आप यहाँ पधारे थे, आपके सदुपदेश से भक्तवृन्द लाभान्वित हुआ था। उसका स्मरण सदा रहेगा।

ॐ नमो नारायणाय !

रामदास
महंत, श्री सन्तराम मन्दिर
नडीआद (गुजरात)

आशीर्वाद व स्नेह सदा स्मरणीय रहेगा

परम पूज्य स्वामी श्री चिदानन्द जी महाराज (परमाध्यक्ष, दिव्य जीवन संघ, शिवानन्द आश्रम) के ब्रह्मलीन होने पर ज्योति विकलांग विद्यालय परिवार हार्दिक शोक व्यक्त करता है। श्री स्वामी चिदानन्द जी महाराज के ब्रह्मलीन होने से विद्यालय को जो क्षति हुई है उसे पूरा नहीं किया जा सकता है। विद्यालय परिवार उनके आशीर्वाद व स्नेह को हमेशा याद करता रहेगा।

समस्त विद्यालय परिवार ज्योति विशेष विद्यालय ऋषिकेश

अध्यात्म-जगत् के प्रेरक

परम पूज्य स्वामी चिदानन्द जी महाराज की महासमाधि के बारे में जान कर हम सभी चकित रह गये।

परम पूज्य स्वामी जी महाराज ने शिवानन्द आश्श्रम तथा अध्यात्म-जगत् की लम्बे समय तक "मनसा-वाचा-कर्मणा" सेवा की। अध्यात्म-जगत् सदैव उनका ऋणी रहेगा। उनकी बहुत सी पुस्तकें दिव्य जीवन संघ द्वारा प्रकाशित हो चुकी हैं। सभी कृतियाँ प्रेरणा तथा आनन्द की स्रोत हैं। 'BLISS IS WITHIN' उनकी सर्वश्रेष्ठ देन है, जिससे सम्पूर्ण अध्यात्म-जगत् प्रेरणा लेता रहेगा। स्वामी जी "आत्मा की अमरता" के बारे में बार-बार कहा करते थे-

अजो नित्यः शाश्वतोऽयं पुराणो-
न हन्यते हन्यमाने शरीरे ।।

(भगवद्गीता : २/२०)

अर्थात् यह आत्मा अजन्मा, नित्य, शाश्वत तथा पुरातन है, शरीर के नाश होने पर यह नाश नहीं होता है।

परम पूज्य स्वामी जी महाराज आज भौतिक रूप से हमारे बीच नहीं हैं परन्तु उनके दिव्य उपदेशों द्वारा साधकों-भक्तों तथा उनके प्रिय जनों का उनसे "दिव्य गहनतम सम्बन्ध" हमेशा रहेगा क्योंकि सद्गुरु का निवास उनके उपदेशों में है। उन्हीं के शब्दों में-

"जब हम गुरु के उपदेशों के अनुसार जीवन जीते हैं तो हमारा गुरु के साथ गहनतम सम्बन्ध होता है।" परम पूज्य स्वामी चिदानन्द जी महाराज हमेशा हमारे साथ हैं। उनका निवास उनके उपदेशों में, अनुभवों तथा अपरोक्ष-अनुभूति में है।

हमारा सभी का, "तपोनिष्ठ, ब्रह्मनिष्ठ, सत्यनिष्ठ तथा सत्यमूर्ति" परम पूजनीय स्वामी चिदानन्द जी महाराज को, कोटि-कोटि प्रणाम।

उनकी पुण्य स्मृतियों में डूबे -परिवार के सभी सदस्य एवं मित्र गण

डी. सी. मेहरु सीनि. डिवी. एकाउंट्स आफीसर (रिटायर्ड) जमालपुर, लुधियाना

कृपालु सन्त

महायोगी स्वामी चिदानन्द जी महाराज के ब्रह्मलीन होने की खबर मिली। हमारे विद्यालय पर उनकी विशेष कृपा थी। यहाँ अध्यापक गण व विद्यालय के छात्र-छात्राओं ने ईश्वर से मौन रूप में सश्रद्धा प्रार्थना की।

महेश शर्मा-कमला शर्मा
ऋषि वैली एकेडमी, शास्त्री नगर, ऋषिकेश

हमारे इष्टदेव

हमारे प्रातःस्मरणीय इष्टदेव, दिव्य जीवन संघ के परमाध्यक्ष परम सन्त स्वामी चिदानन्द सरस्वती महाराज के अन्तर्धान हो जाने से हम आँखें फाड़-फाड़ कर देख रहे हैं कि हमारे स्वामी जी सदा-सदा के लिए आँखों से ओझल हो गये।

जैसे पानी का बहाव गंगा के बाँधों को तोड़ कर जल में रहने वाले मछली आदि जीवों को वहीं छोड़ कर आगे

चल देता है वैसे ही हमसे नाता तोड़ कर हमारे सब्र का बाँध तोड़ कर श्री स्वामी चिदानन्द सरस्वती जी चल दिये।

हमें इसी बात का शोक है कि प्रातःकाल भोर में ही आप गंगा जी की लहरों में विलीन हो गये; हम अन्तिम दर्शन भी नहीं कर पाये। इसका अफसोस हमें आजीवन सालता रहेगा।

स्वजनों को देखते ही हमारा दुःख उमड़ आता है; जैसे नदियाँ गर्मी में सूर्य की किरणों को अपना जल पिला कर छिछली हो जाती हैं; वर्षा का जल आने पर उन्हीं नदियों में फिर बाढ़ आ जाती है।

आपके वियोग में दिव्य जीवन संघ के उत्तराधिकारी एवं समस्त स्वामी गण, दिव्य जीवन संघ को श्री स्वामी शिवानन्द जी महाराज व स्वामी चिदानन्द जी महाराज के दिव्य कार्यकलापों से हमेशा हरा-भरा रखेंगे। हमारा तन, मन, धन का सहयोग दिव्य जीवन संघ के साथ सदा-सर्वदा सुलभ रहेगा। ॐ शान्तिः ॐ शान्तिः ॐ शान्तिः

डा. लक्ष्मीचन्द शास्त्री वैदिक शोध संस्थान परिवार कण्वाश्रम, ऋषिकेश/कोटद्वार

अध्यात्म-पथ-प्रदर्शक

परम पूजनीय श्री स्वामी चिदानन्द जी महाराज की महासमाधि का समाचार प्राप्त हुआ। यद्यपि उनका भौतिक शरीर आज हमारे मध्य नहीं है, परन्तु उनकी स्मृति हम सभी के हृदय में सदैव बनी रहेगी, और हम सभी उनके द्वारा बताये गये आध्यात्मिक मार्ग का अनुसरण करते रहेंगे। यही हम सबकी उनके प्रति सच्ची अश्रुपूरित श्रद्धांजलि होगी।

आशा विष्ट, प्रधानाचार्या श्री सत्य साई स्कूल तपोवन, जिला टिहरी गढ़वाल (उत्तराखण्ड)

तपोमूर्ति

पूज्यपाद गुरुदेव श्री स्वामी चिदानन्द जी महाराज के अन्तर्धान होने से उनके प्रत्यक्ष दर्शन से हम बंचित हो गये। तपोमूर्ति पूज्यपाद चिदानन्द जी महाराज का नित्य प्रसन्न व्यक्तित्व उनकी प्रभुस्वरूप में लयलीनता को अभिव्यक्त करता था।

शास्रसम्मत जीवन-शैली, सर्व जन के प्रति निःस्वार्थ प्रेम, गुरु-भक्ति, जीवन-साफल्य का बोध देती उनकी प्रेरित परावाणी और उनके द्वारा हुए सेवा कार्यों के माध्यम से हमें उन्नत जीवन के दिशा-निर्देश प्राप्त होते रहेंगे। स्वामी श्री चिदानन्द जी महाराज की दिव्यता का प्रभाव अध्यात्म-मार्ग के साधकों के हृदय पर छाया रहेगा।

पूज्यपाद स्वामी श्री चिदानन्द जी महाराज ने बरसों पूर्व 'हरिधाम, सोखडा' को अपने श्रीचरणों से पावन किया था। ऋषिकेश की यात्राओं के दौरान भी उनके दर्शन का अवसर प्राप्त हुआ था। पूज्यपाद स्वामी जी ने अध्यात्म-मार्ग के साधकों के लिए एक आदर्श का निर्माण किया है। उनके दिव्य आशीर्वाद हम सभी पर बरसते रहें, ऐसी प्रभु से प्रार्थना है।

सेवक साधु हरिप्रसाद स्वामी योगी डिवाइन सोसायटी
हरिधाम, पो. सोखडा, जनपद वडोदरा, गुजरात

अपूरणीय क्षति

परम श्रद्धेय स्वामी चिदानन्द जी महाराज के ब्रह्मलीन होने से आध्यात्मिक एवं सामाजिक जगत् में अपूरणीय क्षति हुई है, जिसकी पूर्ति करना असम्भव है।

गम्भीर सिंह मेवाड़, सचिव एवं जनसम्पर्क अधिकारी

आत्म प्रकाश आश्रम, तारामाता पीठ, मायाकुण्ड, ऋषिकेश

जन-जन के हितैषी

प्रातःस्मरणीय, अनन्त विभूति, परम पूज्य सन्त स्वामी श्री श्री चिदानन्द जी सरस्वती महाराज के महानिर्वाण का समाचार पा कर मन अत्यन्त क्लान्त हुआ।... ईश्वर के इस नियम को प्रत्येक मनुष्य को स्वीकार करना ही पड़ता है।

परम पूज्य के जन-हितैषी कार्यों एवं सदुपदेशों का हम दशांश भी आत्मसात् कर जीवन में उपयोग कर सकें तो यही सबसे बड़ी श्रद्धांजलि उन महापुरुष के प्रति होगी।

जीवन में मात्र एक बार उनसे मिल कर आशीर्वाद लेने का सौभाग्य प्राप्त हुआ था;... सिर पर उनके आशीष - स्पर्श का अलौकिक एहसास आज भी मुझे रोमांचित करता है।

चन्द्रमणि शर्मा, चित्रकार कलांगन, ज्वालापुर (हरिद्वार)

अपार कृपा के स्वरूप

परम पूज्य श्री स्वामी चिदानन्द जी महाराज ब्रह्मलीन हो गये-जान कर मन को अशान्ति हुई। हमारे परिवार पर उनकी अपार कृपा थी। उन्होंने हमारे एक प्रतिष्ठान में "हरिद्वार प्रिंटिंग एण्ड एलाइड इन्डस्ट्रीज" की फाउन्डेशन लगभग ३० वर्षों पूर्व रखी थी जो अब "शिवानन्द पेपर कन्वरटिंग इंडस्ट्रीज" के नाम से चल रही है तथा बड़े स्वामी जी, परम पूज्य श्री स्वामी शिवानन्द जी महाराज के नाम से कापी व स्टेशनरी का उत्पादन कर रही है।

मैं अपने परिवार की ओर से परम पूज्य स्वामी जी को चरणवन्दना व श्रद्धासुमन अर्पित करता हूँ।

अवधेश भार्गव, भार्गव ब्रदर्स, हरिद्वार

सन्तों के प्रिय

पूज्य गुरुदेव स्वामी शिवानन्द जी महाराज एवं सन्तों के प्रिय परम श्रद्धेय सन्त शिरोमणि श्री स्वामी चिदानन्द जी महाराज के महासमाधि का समाचार सुन कर हम सब उनकी अन्तिम विदाई से दुःखी हैं। पूज्य स्वामी जी का, डा. श्री शिवानन्द अध्वर्यु जी (वीर नगर, सौराष्ट्र) जब थे, तब दर्शन-वाणी लाभ मिला था। सन् १९५५ में बड़े स्वामी जी महाराज भी थे। ४० दिन शिवानन्द आश्रम, ऋषिकेश में उस समय की स्वामी चिदानन्द जी के साथ की स्मृति याद आती है। पूज्य स्वामी जी की समाधि पर हमारा ॐ नमो नारायणाय ।

मनसुख भाई स्वामी, धार्मिक पत्रकार

भाटियावाड़-पाटन (उत्तर गुजरात)

श्रीमद्भगवद्गीता में वेदों के ज्ञान का सारतत्त्व पाया जाता है। जिसने गीता को जान लिया, उसने वेदों के सारतत्त्व को भी जान लिया। हमें भगवद्गीता का ज्ञान प्राप्त करना चाहिए; क्योंकि तब हम आत्मज्ञान प्राप्त कर लेंगे तथा यह भी जान लेंगे कि दैवी आदेशों का पालन करने का सङ्कल्प ले कर भगवदिच्छा का आदर करते हुए किस प्रकार आत्मविश्वास समाप्त हो जाने की उदासी और नैराश्य की स्थितियों का सामना किया जा सकता है। तब हम अपनी आसक्तियों, विभ्रमों और निरुत्साह पर विजय प्राप्त करके आत्म-संस्कार तथा आत्म-संयम के कार्यों में रत हो जाने की कला भी सीख लेंगे।

-स्वामी चिदानन्द

दीनबन्धु

विश्वविख्यात सन्त, त्याग व तपस्या के प्रतीक, शिवानन्द आश्रम, ऋषिकेश के परमाध्यक्ष पूज्य स्वामी चिदानन्द जी महाराज का ब्रह्मलीन होना, आध्यात्मिक समाज की अपूरणीय क्षति है। पूज्यवर स्वामी जी सादगी एवं गुरु-समर्पण की मूर्ति, अपने गुरुदेव पूज्यवर श्री स्वामी शिवानन्द जी महाराज के दिव्य सन्देश-सदुपदेश के प्रचारार्थ देश-विदेश में भ्रमण करते रहे। दीनों, गरीबों, कुष्ठ रोगियों की सेवा-सुश्रूषा में निरन्तर लगे रहे। पदलिप्सा से निरन्तर दूर रहे। वे विनम्रता की प्रतिमूर्ति थे।

भारतीय जनता पार्टी, लक्ष्मणझूला, स्वर्गाश्रम मण्डल की ओर से उनके श्री चरणों में विनम्र श्रद्धांजलि।

भानुमित्र शर्मा मण्डल अध्यक्ष लक्ष्मणझूला, स्वर्गाश्रम मण्डल

पीड़ित मानवता के सेवक

परम पूज्य स्वामी चिदानन्द जी महाराज के ब्रह्मलीन होने का समाचार ज्ञात हुआ। परम पूज्य श्री स्वामी शिवानन्द जी महाराज के पश्चात् परम पूज्य स्वामी चिदानन्द जी महाराज दिव्य जीवन संघ के साधक-साधिकाओं का जिस तरह संबल बने तथा उनके द्वारा सौंपे गये दायित्व का निर्वहन किया वह वास्तव में अभूतपूर्व ही था।

पूज्य स्वामी जी महाराज ने आश्रम के अस्पताल में दीन-दुःखी, अनेक वृद्ध जनों, साधु-सन्तों तथा पीड़ित मानवता की जो सेवा की उससे सम्पूर्ण मानव जाति उनकी ऋणी है।

आज सम्पूर्ण विश्व को परम पूज्य स्वामी जी महाराज के विचार दर्शन की नितान्त आवश्यकता है।

अभय उपाध्याय द्वारा. श्री शूरवीर सिंह चौहान निगम रोड, सेलाकुई देहरादून

ॐ नमः चिदानन्दाय गुरवे सच्चिदानन्दमूर्तये ।
निष्प्रपंचाय शान्ताय मिरालम्बाय तेजसे ।।

ॐ

स्वामी चिदानन्द जी महाराज जो कुछ भी कहते थे, उसे पहले अपने जीवन में उतारते थे। एक सज्जन ने स्वामी जी के विषय में ठीक ही कहा था, "यह यति अपनी मान्यताओं का प्रचार करने के बजाय उन्हें अपने जीवन में उतारना अधिक पसन्द करता है।" तभी स्वामी जी की वाणी में इतनी ओजस्विता थी। उनकी वाणी हृदय के अन्तःस्थल को स्पर्श करती थी। उनके अनुभवसिद्ध ओजस्वी उपदेशों से लोगों के जीवन में क्रान्तिकारी परिवर्तन आता था और दिव्य जीवन की प्राप्ति सहजता से होती थी।
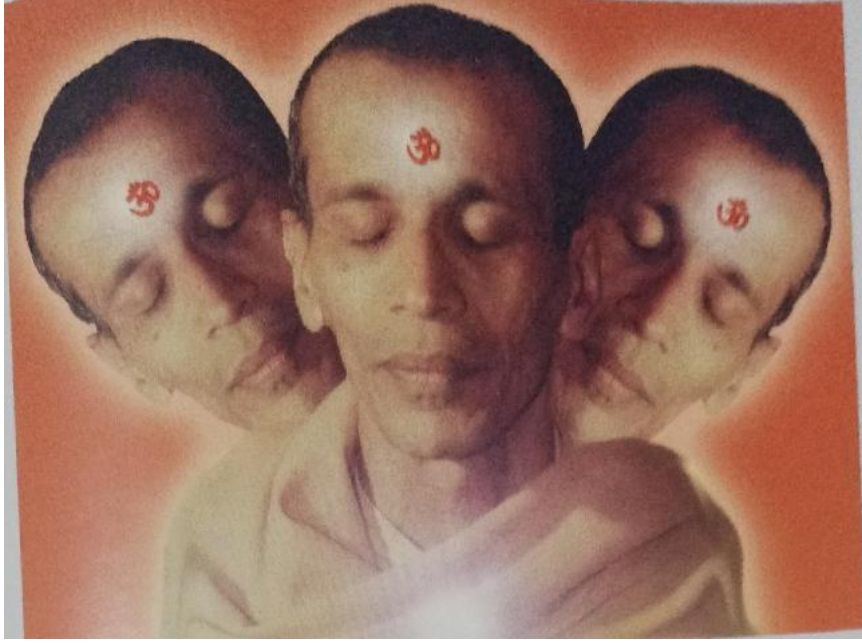
चतुर्थ प्रकाश

ॐ

मेरा सत्-चित्-आनन्द रूप

मेरा सत्-चित्-आनन्द रूप, कोई-कोई जाने रे,
द्वैत वचन का मैं हूँ स्रष्टा, मन-वाणी का मैं हूँ द्रष्टा ।
मैं हूँ साक्षिस्वरूप, कोई-कोई जाने रे... ।।१।।

पंचकोष से मैं हूँ न्यारा, तीन अवस्थाओं से भी न्यारा ।
अनुभव सिद्ध अनूप, कोई-कोई जाने रे... ।।२।।

सूर्य चन्द्र में तेज है मेरा, अग्नि में भी ओज है मेरा ।
मैं अद्वैतस्वरूप, कोई-कोई जाने रे... ।।३।।

जन्म-मरण मेरे धर्म नहीं हैं, पाप-पुण्य मेरे कर्म नहीं हैं।
अज निर्लेप रूप, कोई-कोई जाने रे... ।।४।।

तीन लोक का मैं हूँ स्वामी, घट-घट व्यापी अन्तर्यामी ।
ज्यों माला में सूत, कोई-कोई जाने रे... ।।५।।

सत्संगी निज रूप पहिचानो, जीव-ब्रह्म का भेद न मानो ।
तू है ब्रह्मस्वरूप, कोई-कोई जाने रे... ।।६।।
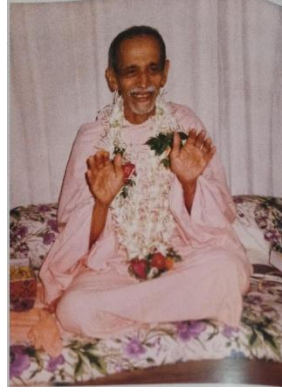
संतों की अनुभूतियाँ और भक्तों के भावोद्गार

ॐ

संतों ने अभिव्यक्त की हैं स्व-अनुभूतियाँ,
यह कहा कि वह है अभिव्यक्ति-अतीत ।

भक्तों के भावोद्गार हिय में उमड़-घुमड़ रहे
पर प्रवाहित होने का पथ नहिं वो पा रहे।

'ब्रह्म ही है एकमेव सत्, सब नाम-रूप हैं मिथ्या, असत् ।
किन्तु पा सकते हैं आप वह अमरता गुरु-अनुकम्पा में, गुरु-आशीर्वाद में ।'

- स्वामी शिवानन्द

मेरी सुखद अनुभूतियाँ

- परम पावन श्री स्वामी विमलानन्द जी महाराज, परमाध्यक्ष -

किसी सन्त या ईश-मानव के सम्बन्ध में कुछ समझ सकते हैं। ईश-मानव को समझने के लिए व्यकि को उसी की ऊँचाई तक पहुँचना पांढ़ेगा, केवल तभी वह उसे समझ सकता है। स्वामी चिदानन्द जी महाराज के विषय में कुछ लिखना सरल नहीं है। गुरुदेव स्वामी शिवानन्द जी महाराज के अपने शब्दों में स्वामी विदानन्द जन्म से ही सिद्ध थे। केवल गुरुदेव उन्हें समन सके थे। मेरा सौभाग्य है कि मुझे लगभग ५० वर्ष उनके साथ, उनके सानिध्य में रहने का सुअवसर प्राप्त हुआ; अत: मेरे उनके सम्बन्ध में जो विचार हैं उन्हें आपके साथ बाँटने का मैं विनम्र प्रयास करूँगा। १९५३ में, जब मेरा उससे परिचय भी नहीं था, मुझे उनकी महानता देखने का अवसर मिला। यहाँ में श्रद्धेय स्वामी चिदानन्द जी महाराज तथा सद्गुरुदेव श्री स्वामी शिवानन्द जी महाराज के प्रथम दर्शन की घटना का वर्णन करना चाहूँगा।

मैं दिसम्बर १९५३ में हरिद्वार पहुँचा। मेरे लिए सब-कुछ नया था। मौसम, भोजन, लोग, भाषा और बातावरण-वास्तव में सबसे ही पूरी तरह अपरिचित था। हिमालय की ओर आने से पहले मैंने सुना हुआ था कि वह ऐसी गुहाओं से भरपूर है जिनमें साधु महात्मा रहते हैं जो गहन तपस्या में लीन रहते हैं, और केवल कन्द-मूल और फलों पर ही जीवन यापन करते हैं। हिमालय पर्वत के सम्बन्ध में मेरी ऐसी ही धारणा थी।

हिमालय में घूमने के बाद मुझे अचानक ही एक मानव-निर्मित गुहा मिल गयी जो आश्रम के निकट ही थी। यह भगवान् से प्राप्त हुआ ऐसा उपहार था जो वर्षा और तीव्र हवाओं से मेरी रक्षा करने वाला था। भगवान् का धन्यवाद करते हुए मैंने इसमें रहना आरम्भ कर दिया। उन दिनों आश्रम में आवास की सुविधा बहुत ही आय एटा।

आश्रम में पहुँचन के श्री आश्रम के महासचिव थे। १९५३ में प्रथम दर्शन के समय ही मुझे आभास हुआ कि वे ईश-मानव है। उसी दिन स्वामी जी कृपापूर्वक आश्रम-कार्यालय में ले गये और वहाँ परम पूज्य सदगुरदेव श्री स्वामी शिवानन्द जी महाराज से परिचय करवाया।

सद्गुरुदेव ने मेरी ओर घूम कर देखा और बोले, यहीं रही और चिदानन्द जी की सेवा करो। आपको सब सब-कुछ प्राप्त हो जायेगा। मैंने उन वचनों को निभाया और उनके जीवन के अन्तिम दिवस तक उनके पास रहा।

लगभग ५० वर्ष तक में पूज्य स्वामी जी महाराज के साथ रहा और इस दीर्घकालीन अवधि के अन्तर्गत मैंने देखा कि उन्होंने न केवल मुझे ही प्रभावित करके परिवर्तित किया है, बल्कि बहुत ही कम समय में समस्त भारतवर्ष के और विश्व भर के लोगों को भी प्रभावित करके रूपान्तरित कर दिया है। इतने दीर्घकाल के निकट सम्पर्क में रहते हुए मैंने हर क्षण ऐसा ही अनुभव किया है।

सद्गुरुदेव ने हमसे यह बात बहुत बार कही है कि स्वामी चिदानन्द जी जन्मजात सिद्ध है। अपनी आरम्भिक अवस्था में ही वे महान् प्रतिभा सम्पन्न थे। क्योंकि वह अत्यधिक विनम्र थे और उनकी जीवन-प्रणाली सरल थी, अतः यह सबको सहज-सुलभ थे। प्रत्येक व्यक्ति के साथ वह अत्यन्त सहजता से और अपनत्व से मिलते थे। उनके लिए कोई भी पराया नहीं था।

गुरुदेव श्री स्वामी शिवानन्द जी महाराज की विशिष्ट शिष्य-मण्डली में से स्वामी जी एक विलक्षण तथा अद्वितीय विभूति हैं। वे वास्तविक अर्थों में एक सन्त थे। सन्तत्व का पूरा मूल्य चुकाये

बिना सन्त बनना सम्भव नहीं है। और वह मूल्य क्या है? मूल्य है कठोर तपस्या! ऐसा भी समय होता था जब खाने को कुछ भी नहीं होता था, गर्म कपड़े नहीं और कड़ाके की सर्दी; और उसके ऊपर कठोर तपस्या। इन सबका स्वामी जी ने आश्रम में अपने आरम्भिक दिनों में सामना किया। वे विद्वान् थे। उनकी यह विद्वत्ता केवल लौकिक विद्या तक सीमित नहीं थी। लौकिक विद्याएँ तो दूसरे स्थान पर थीं; बल्कि लौकिक विद्याओं को भी उन्होंने आध्यात्मिकता में परिवर्तित कर दिया। उनके प्रवचन प्रेरणाप्रद और प्रबोधक थे तथा गहन विद्वत्ता से ओत-प्रोत थे।

स्वामी जी महाराज स्वयं को अत्यधिक व्यस्त रखते थे। अपने जीवन का एक क्षण उन्होंने व्यर्थ नहीं गँवाया। स्वामी जी सदैव दूसरों की सेवा में लगे रहे। गुरुदेव की शिक्षाओं को उन्होंने यथावत् अपने जीवन में उतार लिया था। यही कारण है कि वह गुरुदेव शिवानन्द के ज्ञान के दीपक का प्रकाश विश्व के हर कोने तक ले जा सके। हर स्थान पर उन्होंने सहस्रों को प्रेरित किया। बहुत बार गुरुदेव उन्हें अपने स्थान पर बोलने के लिए भेज देते थे, और हर बार ही लोग उन्हें ऐसा परिपूर्ण प्रतिनिधि भेजने के लिए धन्यवाद के पत्र लिखा करते थे। जहाँ-जहाँ भी वह गये, प्रत्येक स्थान पर लोगों ने एकमत से उन्हें एक सन्त के रूप में ही स्वीकार किया।

उन्होंने अपना सारा जीवन मानवता की, और विशेष रूप से कष्ट-पीड़ित मानवता की सेवा में लगा दिया। जिस समय देश में कुष्ठरोगियों को अत्यधिक घृणित और त्याज्य माना जाता था, उस समय उन्होंने उत्तराखण्ड में अकथनीय सेवा की। बेघरबार कुष्ठरोगियों के लिए आवासीय सुविधा तथा 'शिवानन्द होम' की अवधारणा तथा उसकी संस्थापना का सूत्रपात उन्होंने ही किया। कोई भी रोगग्रस्त, लाचार अथवा पीड़ित व्यक्ति उनकी विशेष दयादृष्टि का पात्र था।

गुरुदेव की 'विश्व-प्रार्थना' की वह जीवन्त प्रतिमूर्ति थे। उन्होंने हर स्थान पर और सबमें भगवान् को ही देखा। दूसरों की सेवा करते समय वह उनमें भगवान् के दर्शन करते थे।

जो श्री रामकृष्ण परमहंस के लिए स्वामी विवेकानन्द जी थे, वही स्वामी जी सद्गुरुदेव स्वामी शिवानन्द जी महाराज के लिए थे।

सद्गुरुदेव श्री स्वामी शिवानन्द जी महाराज तथा स्वामी चिदानन्द जी महाराज के आशीर्वाद आप सभी पाठकों पर हों!

दिव्य जीवन संघ मुख्यालय
शिवानन्द आश्रम, ऋषिकेश (उत्तराखण्ड)

ॐ

श्री स्वामी चिदानन्द जी अपने दिव्य स्वरूप में नित्य निवास करते है तथा सम्पूर्ण विश्व को उसी तत्त्व से आवृत देखते हैं। उनका जीवन इस सत्य पर आधारित है कि यह समस्त जगत् ईश्वर से व्याप्त है। अपने प्रत्येक कर्म द्वारा वह मानव जाति को यह शिक्षा देते हैं कि यह संसार भगवान् का ही प्रकटीकरण है तथा दिव्य तत्त्व से ओतप्रोत है। यही वह रहस्य है जिसे वह अपने आचरण तथा उपदेश द्वारा प्रकट करते हैं।

एक आदर्श गुरु

- परम पावन स्वामी योगस्वरूपानन्द जी महाराज, उपाध्यक्ष/न्यासी-

महाभारत की कहानी पढ़ने के बाद मुझे पता चला कि पाण्डव अपने जीवन के अन्तिम दिनों में हिमालय पर चले गये थे, वहाँ से उन्होंने स्वर्गारोहण किया। मेरे मन में विचार आया कि क्या मैं हिमालय नहीं जा सकता। जा सकता हूँ, वहाँ पहुँचने पर मैं स्वर्ग में जा सकूँगा। उस 'देवभूमि' के दर्शन करूँगा तथा वहाँ देवता, योगी, सन्त और ऋषि-मुनियों-महात्माओं के दर्शन करूँगा! किसी को भी बताये बिना, रास्ते में कुछ भी खाये-पिये बिना, मद्रास से चार दिनों की रेलगाड़ी की यात्रा करके देहली और फिर ऋषिकेश स्टेशन पर पहुँचा। मेरा विचार था कि यहीं से हिमालय पर्वत शुरू हो जाता है। किन्तु जैसी मैंने कल्पना की थी, वैसे न तो हिमाच्छादित पर्वत-शिखर दिखायी दिये न ही वनचरों से भरपूर सघन वनों के कहीं दर्शन हुए! फिर मुझे एक स्वामी शिवानन्द जी का ध्यान आया जो कि हिमालय के एक सुप्रसिद्ध योगी-सन्त हैं और ऋषिकेश में ही रहते हैं, जिनके पास मेरा एक मित्र, सेना की नौकरी छोड़ कर, संन्यास ले कर उन्हीं के पास शिवानन्द आश्रम में रह रहा है। ऋषिकेश के स्टेशन मास्टर से मैंने शिवानन्द आश्रम पहुँचने का मार्ग पूछा।

गुरुदेव कुटीर के एकदम सामने अतिथिगृह था, वहाँ मुझे स्वामी दयानन्द जी मिले, उन्होंने बताया कि मेरे मित्र के नाम वाला कोई व्यक्ति आश्रम में नहीं है; और उन्होंने मुझे इतनी लम्बी दक्षिण भारत से यहाँ तक की यात्रा करके आने के कारण कुछ दिन यहीं रुकने के लिए कहा। अतः मैंने दस दिन रुकने का विचार बना लिया। अपराह्न में मेरा परिचय परम पूज्य श्री स्वामी कृष्णानन्द जी महाराज और परम पूज्य श्री स्वामी चिदानन्द जी महाराज से करवाया गया। स्वामी कृष्णानन्द जी महाराज मेरी स्वर्ग की और हिमालय की कल्पना सुन कर हँसे और उन्होंने मुझे यहीं रुक कर पत्र-व्यवहार के कार्य में उनकी सहायता करने को कहा।

समय शीघ्रता से बीतने लगा। आश्रम में मेरे आवास के सम्बन्ध में कई कठिनाइयाँ आयीं। परम पूज्य श्री स्वामी चिदानन्द जी महाराज ने मेरी अत्यधिक सहायता की, निर्देशन दिये और गंगातट पर ही निवास करने का आदेश दिया; क्योंकि आध्यात्मिक उन्नति के लिए, उनके अनुसार, यह आदर्श स्थान था। सेवा के साथ-साथ, मैंने साधना के एक अंग के रूप में, गुरुदेव की पुस्तकें पढ़नी आरम्भ कर दीं। तब मुझे अपनी योग-साधना में कुछ समस्याओं का अनुभव हुआ और मुझे व्यक्तिगत निर्देशन प्राप्त करने तथा किसी वरिष्ठ स्वामी जी से बात करने की

आवश्यकता अनुभव हुई। श्रद्धेया श्री स्वामी हृदयानन्द माता जी, जो शिवानन्द आश्रम में उन दिनों डाक्टर माता जी के नाम से जानी जाती थी, भगवद्गीता पर प्रवचन दिया करती थीं। मैं भगवद्गीता पढ़ता था तथा उनसे बहुत से प्रश्न पूछा करता था।

मैंने पूज्य माता जी को अपनी शंकाएँ बतायी तथा यह भी बताया कि योग-साधना में कई प्रश्न भी पूछने हैं, अतः मुझे किसी अनुभवी वरिष्ठ स्वामी जी से व्यक्तिगत रूप में निर्देशन लेने की आवश्यकता अनुभव हो रही है। डाक्टर माता जी ने पूज्य स्वामी चिदानन्द जी महाराज से मेरे सम्बन्ध में बात करके मेरे संशयों का समाधान करने के लिए कुछ समय निकालने की प्रार्थना की। पूज्य श्री स्वामी जी महाराज ने कृपापूर्वक प्रत्येक रविवार की सायं ७.३० से ८.३० तक का मुझे समय दे दिया। मैंने गुरुदेव की पुस्तक 'साइंस ऑफ प्राणायाम' (प्राणायाम का विज्ञान) पढ़ी थी और स्वयं ही उसके अनुसार घण्टों तक प्राणायाम और ध्यान के लिए बैठता था; किन्तु ऐसा करने से मुझे कई समस्याओं का सामना करना पड़ रहा था। मैंने अपनी आध्यात्मिक समस्याएँ स्वामी जी महाराज को बतायी तो उन्होंने अत्यन्त धैर्यपूर्वक, ध्यान से, मानो उनकी अपनी ही समस्याएँ हों, ऐसे सुना और एक-एक करके सबके समाधान के लिए निर्देशन दिये। स्वामी जी ने कहा कि मुझे आध्यात्मिक पथ पर शंकारहित उन्नति करने के लिए 'पाँच ग' का पालन अवश्य करते रहना चाहिए, वह हैं-गीता का नियमित अध्ययन, गंगा का दर्शन, प्रातः-सायं नियमपूर्वक गायत्री मन्त्र का जप, गोविन्द पर ध्यान और पाँचवाँ गुरु-सेवा। स्वामी जी ने बल देते हुए कहा कि साधक के जीवन में छठे 'ग' अर्थात् गप्पबाजी के लिए कोई स्थान नहीं है। मैं अत्यन्त नियमपूर्वक स्वामी जी के निर्देशनों का पालन करता था तथा प्रत्येक सप्ताह गत सप्ताह बतायी बातों को दोहराता था।

स्वामी जी महाराज ने कहा कि साधक को अपने जीवन में सदैव राम-भक्त हनुमान् के उदात्त गुणों को आदर्श मान कर चलना चाहिए और उन्हें अपने जीवन में उतारने का प्रयास करते रहना चाहिए। स्वामी जी ने मुझे बाल्मीकि रामायण, महाभारत, भगवद्गीता, विवेकचूडामणि तथा पातंजल योगसूत्रों के थोड़े-थोड़े अंशों का नित्य स्वाध्याय करने तथा उन पर मनन करते हुए सदैव सकारात्मक चिन्तन करने का उपदेश दिया, जिससे कि मन को अन्य किसी भी नकारात्मक विचार का चिन्तन करने का समय ही न मिले। सन् १९६६ में स्वामी जी ने कुछ चयनित अन्तेवासियों के समूह को पढ़ाना आरम्भ किया था और उस कक्षा में भाग लेने की मुझे भी आज्ञा मिल गयी थी। स्वामी जी 'द इम्मीटेशन ऑफ़ क्राइस्ट' (थॉमस ए. कैम्पिस विरचित) पुस्तक पढ़ा करते थे। उसमें से कई अंशों की व्याख्या करते हुए स्वामी जी महाराज ने बताया कि कैसे व्यक्ति इन्हें अपने दैनिक जीवन में लागू कर सकता है।

१९७३ में 'लाल बहादुर शास्त्री नेशनल एकाडेमी ऑफ एडमिनिस्ट्रेशन, गवर्नमेंट ऑफ इंडिया, मसूरी' से एक प्रार्थना-पत्र, वहाँ योग-प्रशिक्षक भेजने के लिए आया। स्वामी कृष्णानन्द जी महाराज ने मुझे वह पत्र पूज्य स्वामी चिदानन्द जी महाराज को देने और उसका उत्तर ले कर आने के लिए भेजा। मुझे पता नहीं था; किन्तु उन्होंने पहले ही कोकणी भाषा में परस्पर बात कर ली थी और मेरे आश्चर्य का ठिकाना नहीं रहा जब पत्र ले कर पहुँचने पर स्वामी जी महाराज ने मुझे मसूरी जाने के लिए कहा।

मैंने प्रथम ग्रेड के पदाधिकारी प्रशिक्षार्थियों को योग प्रशिक्षण देने की अपनी अक्षमता और संकोच जतलाया तो स्वामी जी ने मुझे एक सप्ताह तक स्वयं प्रशिक्षण दिया, योगासनों और प्राणायामों का क्रम सिखाया, स्वयं मुझे साच ले कर मसूरी गये, वहाँ के निर्देशक तथा बाकी

सदस्यों से मेरा परिचय करवाया। उन सबने स्वामी चिदानन्द जी महाराज के निर्देशन में दिव्य जीवन संघ मुख्यालय में अभ्यास में लाये जाने वाली गुरुदेव स्वामी शिवानन्द जी की योगासन और प्राणायाम पद्धति के वैज्ञानिक, सरल और विधिवत् प्रशिक्षण की भूरि-भूरि प्रशंसा की।

स्वामी जी द्वारा निर्देशित मेरी यह एल. बी. एस. एन. ए. ए., मसूरी में योग-प्रशिक्षण की सेवा लगभग तीन दशकों तक चली। सभी पदाधिकारी प्रशिक्षार्थियों के लाभ के लिए किये जाने वाले प्रत्येक इस कोर्स के विदाई समारोह पर नेशनल एकाडेमी हर वर्ष विदाई-भाषण के लिए किसी वरिष्ठ स्वामी जी को बुलाया करती थी। इन अफसर प्रशिक्षार्थियों ने लौटने पर अपने दैनिक जीवन में योगाभ्यास करने के लिए योगासनों पर पुस्तक की माँग की; अतः मैंने स्वामी जी महाराज से उनकी आज्ञा मिलने पर एक पुस्तक मुद्रित करवाने की तथा उस पुस्तक के लिए स्वामी जी महाराज से योगासनों और प्राणायामों की विभिन्न मुद्राओं के चित्रों की प्रार्थना की। स्वामी जी के निर्देशानुसार मैंने 'प्रैक्टिकल गाइड टू योगा' (योग-सन्दर्शिका) शीर्षक से पुस्तक का संकलन किया। यह पुस्तक बहुत से देशों में योग के जिज्ञासुओं के लिए १६ से अधिक भाषाओं में अनूदित हुई। स्वामी जी महाराज ने कहा था कि इस एल. बी. एस. एन. ए. ए., मसूरी में योग के कोर्स का संचालन करना, वास्तव में गुरुदेव के नाम और शिक्षाओं के प्रचार-प्रसार हेतु अखिल भारत की। अनेक यात्राओं के समान है; क्योंकि इसमें भाग लेने वाले अफसर-प्रशिक्षार्थी देश के विभिन्न भागों से आते हैं और सरकारी विभागों में उच्च पदों पर नियुक्त होते हैं। आश्रम में में जब भी होता, तब स्वामी जी महाराज के पास, गुरु निवास में भारतीय पत्र-व्यवहार के कार्य में सहायता करता था।

फरवरी १९७९ में स्वामी जी ने एक दिन निकट आश्रम के एक साधु को अकेले में मिलने के लिए गुरु निवास में समय दिया था। प्रातः जब मैं गुरु निवास गया तो स्वामी जी ने मुझे उस व्यक्ति से बात करके उसका पूरा विवरण जानने के लिए कहा। वह व्यक्ति स्वामी जी से २५ फरवरी, शिवरात्रि को संन्यास-दीक्षा लेना तथा गंगा-तट पर साधना करना बाहता था। जब मैंने स्वामी जी को यह बताया तो उन्होंने कहा- "मैं किसी को भी संन्यास, दीक्षा नहीं दूंगा।" तब मैंने स्वामी को बताया कि गत कई वर्षों से मैं जब नेशनल एकाडेमी जाता हूँ तो मैं रामकृष्ण सांस्कृतिक केन्द्र, हैदराबाद के परमाध्यक्ष परम पूज्य श्री स्वामी रंगनाथानन्द जी महाराज के दर्शन करने भी जाता हूँ। गत वर्ष पूज्य स्वामी रंगनाथानन्द जी ने मुझे पूछा कि मैं कब से शिवानन्द आश्रम में हूँ और मेरी आयु कितनी है, आदि-आदि। मेरा उत्तर सुन कर वह कहने लगे-"आश्चर्य है कि चौदह वर्ष के दीर्घ काल तक शिवानन्द आश्रम में और वरिष्ठ स्वामियों की सेवा में रहने पर भी तुम्हें अभी तक संन्यास आश्रम में दीक्षित नहीं किया गया है। निश्चय ही इसमें तुम्हारी ओर से अथवा अधिकारी-वर्ग की ओर से कुछ-न-कुछ कमी रही होगी। अगली बार जब मैं यहाँ मसूरी आऊँगा तब तक तुम्हें स्वामी हो जाना चाहिए!" यह सुनते ही स्वामी जी ने मेरी ओर देखा और बोले- "हाँ, स्वामी रंगनाथानन्द जी ने ठीक ही कहा है। अब तुम स्वामी कृष्णानन्द जी महाराज के पास जाओ और उन्हें कहो कि इस शिवरात्रि के दिन तुम्हें संन्यास-परम्परा में दीक्षित किया जायेगा। उनसे प्रार्थना करना कि पण्डित जी आदि की व्यवस्था करवा दें।" जब मैंने जा कर पूज्य श्री स्वामी कृष्णानन्द जी महाराज को यह सन्देश दिया तो उन्होंने प्रसन्नतापूर्वक कहा- "आज के दिन का यह बहुत शुभ समाचार है, बधाई हो! मुझे बहुत प्रसन्नता हुई है। श्री स्वामी जी महाराज से कहो कि और भी कुछ प्रार्थना-पत्र आये हुए हैं संन्यास-दीक्षा के लिए।" तब स्वामी जी महाराज उन सभी दसों प्रार्थियों को २५ फरवरी १९७९ को संन्यास-परम्परा में दीक्षित करने को मान गये।

दोनों स्वामी जी महाराज ने नव दीक्षित संन्यासियों को उपदेश देते हुए कहा- "किसी भी प्रकार के 'अभिमान' को त्याग दें।" पावन ग्रन्थ श्रीमद्भगवद्गीता में कहा गया है कि 'मैं' की भ्रान्तिपूर्ण प्रवृत्ति को त्याग दो, 'दृश्य जगत्' और 'परमात्मा' के सम्बन्ध में भ्रान्तिपूर्ण धारणा को त्याग दो। गीता के अठारह अध्यायों को तीन भागों में विभक्त किया गया है, प्रत्येक विभाग में छह-छह अध्याय आते हैं।

प्रथम से छठे अध्याय तक का वर्ग 'मैं' सम्बन्धी भ्रान्तिपूर्ण धारणा को त्यागने की शिक्षा देता है, सातवें से १२ में अध्याय तक का द्वितीय वर्ग 'दृश्य जगत्' सम्बन्धी गलत धारणा को त्यागने की शिक्षा देता है तथा १३ वे से १८ वें अध्याय तक का तृतीय वर्ग 'परमात्मा' सम्बन्धी भ्रान्तिपूर्ण धारणा को त्याग देने का उपदेश देता है। **भगवद्गीता की शिक्षाओं का सारतत्त्व एक शब्द में इस प्रकार है, 'गीता' शब्द का उच्चारण बार-बार करें, इसकी ध्वनि 'त्यागी' शब्द जैसी प्रतीत होगी। इसका अर्थ है- 'त्यागी वास्तव में वही है जिसने सम्पूर्ण जीवन के प्रति भ्रान्तिपूर्ण धारणाओं का त्याग कर दिया है।'** परम पूज्य गुरुदेव श्री स्वामी शिवानन्द जी महाराज त्यागी थे। परम पूज्य श्री स्वामी चिदानन्द जी महाराज ने गुरुदेव के श्रीचरणों का अनुसरण किया और 'त्याग' का आदर्श उदाहरण बन कर जीवन जिया-किसी वस्तु या व्यक्ति से आसक्ति नहीं, रोगी, निर्धन और जरूरतमन्दों की सहायता करने को सदा तत्पर, अपने जीवन के प्रत्येक क्षण में आध्यात्मिक जिज्ञासुओं को मार्ग निर्देशन देने को सदैव तत्पर! अपने गुरुदेव तथा दिव्य जीवन संघ के प्रति पूर्ण समर्पित भाव उनमें प्रत्यक्ष दृष्टिगोचर होता है। हम सब पर उनके आशीर्वाद हो, यही मेरी हार्दिक प्रार्थना है।

दिव्य जीवन संघ मुख्यालय
शिवानन्द आश्रम, ऋषिकेश (उत्तराखण्ड)

साधक को काम, क्रोध, लोभ, मोह, ईर्ष्या, द्वेष आदि आसुरी प्रवृत्तियों का त्याग करके सेवा, त्याग, दान, प्रेम, क्षमा, विनम्रता आदि गुण रूपी दैवी सम्पदा के अर्जन का प्रयत्न करते रहना चाहिए।

-स्वामी चिदानन्द

निःस्वार्थता एवं समर्पण की प्रतिमूर्ति

-परम पावन श्री स्वामी निर्लिप्तानन्द जी महाराज, उपाध्यक्ष-

जो सभी निष्ठावान् और सच्चे भक्तों तथा शिष्यों के हृदयों में आध्यात्मिक रूप से सदैव उपस्थित हैं ऐसे परम आराध्य गुरुमहाराज स्वामी चिदानन्द जी महाराज के पावन चरणों में मेरे विनम्र साष्टांग प्रणाम तथा नमस्कार। हमारे परम पूज्य स्वामी जी महाराज, अर्ध शताब्दी से भी अधिक पथदर्शक-प्रकाश स्तम्भ थे। जब वे, वर्ष १९६३ के, माह अगस्त के दिनांक १८ को न्यासी-मण्डल (बोर्ड ऑफ ट्रस्टीज़) द्वारा परमाध्यक्ष के पद पर चयनित हुए तब उन्होंने स्व-मन्तव्य व्यक्त किया- "दायित्व लिया गया है। उसे सँभालना ही होगा।" और उन्होंने परमाध्यक्ष के पद का उत्तरदायित्व अपने अन्तिम श्वास-२८ अगस्त २००८ पर्यन्त श्रेष्ठ रूप से वहन किया।

अपने गुरु स्वामी शिवानन्द जी के प्रति उनकी भक्ति उदाहरण स्वरूप और सर्वोच्च थी एवं गुरु, गुरु-मिशन तथा गुरु-संस्था के प्रति उनका समर्पण असाधारण और सम्पूर्ण था। वर्ष १९४३ में वे शिवानन्द आश्रम में आये तब से प्रसंगोचित अथवा जब-जब किसी कार्यपूर्ति के लिए उन्हें कहा गया तब-तब उन्होंने गुरु-सेवा सम्पन्न की। उनकी दृष्टि में मिशन की सेवा गुरु-सेवा ही है और उन्होंने उसे सच्ची पूजा के रूप में सम्पन्न किया। वर्ष १९४८ से वे संस्था के वर्षों पर्यन्त महासचिव के रूप में रहे और उन्हें जब परमाध्यक्ष पद सौंपा गया तब उन्होंने कहा- "गुरुदेव की आत्मा के प्रति मेरी एकमात्र प्रार्थना है कि वे मुझे सच्ची सेवा करने का, कर्तव्यपरायणता तथा यथार्थ रूप से जीवन व्यतीत करने हेतु सामर्थ्य दें। उनकी कृपा से इस दास में विनम्रता, स्वभावतः निःस्वार्थता एवं समर्पण भाव टिके रहें।" स्वामी जी के जीवन तथा कार्य इस सत्य की साक्षी देते हैं कि उनकी प्रार्थना स्वीकार हुई।

दिव्य जीवन संघ के न्यास (ट्रस्ट) के और दिव्य जीवन संघ के परमाध्यक्ष के रूप में उन्होंने न्यासियों के मण्डल (बोर्ड ऑफ ट्रस्टीज) की एवं बोर्ड ऑफ मैनेजमेन्ट (प्रबन्धन बोर्ड) की सभाओं की (मिटिंग्स) की अध्यक्षता की और सब गतिविधियों का निरीक्षण करके उनका मार्गदर्शन किया। रोज-बरोज के कामकाज के अतिरिक्त उन्होंने वर्ष १९८७ में स्वामी शिवानन्द जी महाराज के जन्म शताब्दी महोत्सव तथा इस प्रकार के अन्य विशेष और महत्त्वपूर्ण उत्सवों का आरम्भ भी किया एवं अध्यक्षता भी की। उनके आशीर्वाद और सहायता से उड़ीसा राज्य में पूरी के समीप बालिगुआली आश्रम (चिदानन्द हर्मिटेज शान्ति आश्रम) की स्थापना हुई। मुख्यालय का यह प्रथम और एकमेव विभाग है तथा आध्यात्मिक साधना केन्द्र के रूप में सहस्रों भक्तों को प्रेरणा देता है।

उन्हें गुरुदेव ने वर्ष १९५९ में पश्चिम के देशों में भेजा और उसी समय से उनकी मुलाकातें तथा दर्शन हेतु अखिल विश्व में से प्रार्थना और अनुनय विनय की वर्षा प्रवाहित हुई। परमाध्यक्ष होने के पश्चात् स्वामी जी को प्रायः तथा कई बार लम्बी यात्राएँ करनी पड़ीं। इन यात्राओं के कारण उन्हें गुरु-बोध (ज्ञान) प्रसारित करने के तथा अनेक जिज्ञासु और सच्चे भक्तों की सेवा हेतु सुअवसर प्राप्त हुए। स्वामी जी बहुसंख्यक लोगों को आध्यात्मिक पथ में लाये। वे भारतीय तथा विदेशी सहस्रों भक्तों के गुरु, आध्यात्मिक पथप्रदर्शक और उपदेशक थे। उन्होंने अनेकानेक साधना-शिविरों एवं योग-कैम्पों का परिचालन किया। उन्होंने व्यक्तिगत मार्गदर्शन दिया तथा भक्तों की सांसारिक समस्याओं, आवश्यकताओं और कठिनाइयों विषयक विचार-विनिमय करने में हिचकिचाहट का अनुभव नहीं किया। मानव-जाति के सांस्कृतिक और आध्यात्मिक अभ्युदय हेतु उनसे सम्पन्न सेवा अपरिमित है। उन्होंने लोगों को दूसरों की, गुरुदेव के मिशन की और स्वयं की आध्यात्मिक उन्नति हेतु प्रेरित किया।

स्वामी जी का पूर्ण जीवन पथ का प्रकाश था। उनके समकालीन सन्तों में वे महानतम सन्तों में से एक माने जाते हैं। पूज्य स्वामी चिन्मयानन्द जी ने उन्हें श्रीमद्भगवद्गीता में वर्णित 'स्थितप्रज्ञ' व्यक्ति का जीवन्त दृष्टान्त कहा है। उनकी करुणा, असीम दयालुता, अन्य का भला करना, उनकी मदद करने की जन्मजात प्रकृति द्वारा उन्होंने अपने जीवन-व्यवहार के दृष्टान्त से सिखाया। उन्होंने हमें अविराम और निरन्तर स्मृति दिलायी कि जीवन-ध्येय ईश्वरानुभूति है। हमारा जन्मजात स्वभाव परमानन्द और केवल परमानन्द ही है एवं निःस्वार्थ सेवा, साधना तथा मनन द्वारा हम जो पूर्वतः ही हैं, इससे सचेत होना हमारा सर्वप्रथम कर्तव्य है।

अपनी यात्राओं के दौरान स्वामी जी ने भारत के समस्त राज्यों की मुलाकात ली, दिव्य जीवन संघ की सर्वाधिक शाखाओं से सम्पर्क किया तथा सहजता से अबाध मिले। उड़ीसा के भक्तों की पुनः पुनः और सन्निष्ठ प्रार्थनाओं के फलस्वरूप वर्ष १९६६ में अखिल उड़ीसा राज्य की प्रथम दिव्य जीवन संघ की परिषद् के प्रमुख के रूप में उनकी मुलाकात से ले कर स्वामी जी ५८ वक्त-अर्थात् बहुसंख्य बार उड़ीसा में गये। परिणामतः इस राज्य में दिव्य जीवन संघ की नींव शक्तिशाली रूप से डालते हुए शाखा-सदस्यता वृद्धिगत हो कर ५८००० से अधिक हुई। अन्य राज्यों पर भी उनकी यात्राओं का प्रभाव समान हुआ।

स्वामी जी की विदेश यात्राओं में सब खण्ड तथा एशिया, यूरोप, उत्तर तथा दक्षिण अमेरिका, अफ्रीका और दी; आस्ट्रेलिया के अनेक देश आवृत्त हुए और उस प्रक्रिया में दिव्य जीवन संघ का विश्वव्यापी विस्तार हुआ तथा अधिक देशों के अधिक-से-अधिक लोग गुरुदेव स्वामी शिवानन्द जी का दिव्य जीवन का सन्देश और संघ के मूल्यों को समझ पाये।

स्वामी जी ने सम्बन्धित शाखाओं द्वारा आयोजित अखिल भारत दिव्य जीवन परिषदों में तथा राज्य-स्तर की परिषदों में उपस्थिति दी तथा उनकी अध्यक्षता की। मुम्बई और कटक में आयोजित दो वैश्विक अन्तर्राष्ट्रीय परिषदें उनकी संकल्पना-उनका सर्जन थी और उनमें विश्व में से दिव्य जीवन संघ के अनेक सहस्र भक्तों को एकत्रित किया। वे दिव्य जीवन संघ की ओर से अनेक राष्ट्रीय और अन्तर्राष्ट्रीय परिषदों में प्रतिभागी हुए। इन परिषदों के साथ-साथ वे 'पालमिन्टस् ऑफ रीलीजियन्स एण्ड पीस' में प्रतिभागी हुए, जिनमें वर्ष १९९३ में शिकागो में सम्पन्न 'वर्ल्ड पालमिन्ट ऑफ रीलीजियन्स' भी समाविष्ट है। यह पार्लीमेन्ट, वहाँ पर ही वर्ष १८९३ में सम्पन्न प्रथम पालीमेन्ट ऑफ रीलीजियन्स" की शताब्दी का सौमाचिह्न था। उसमें महान् स्वामी विवेकानन्द जी ने इतनी अविस्मरणीय और अमिट छाप लगायी थी कि भारत का सनातन ज्ञान पश्चिम में विस्तरने लगा। वर्ष १९९३ की पालमिन्ट में स्वामी जी ने हिन्दूत्व का प्रतिनिधित्व करने वाले समस्त उपस्थित सदस्यों सह-अध्यक्ष नियुक्त होने का सम्मान पाया।

स्वामी जी के दिव्य जीवन संघ के परमाध्यक्ष के कार्य विभिन्न धार्मिक संस्थाओं के साथ घनिष्ठ सम्पर्क की विकास वृद्धि भी समाविष्ट है। उनमें से कुछ संस्थाओं के उल्लेख में उन्होंने श्री श्री माँ आनन्दमयी के आश्रमों में अनेक संयम-सप्ताहों की अध्यक्षता की तथा मार्गदर्शन दिया; उन्होंने बीस वर्षों पर्यन्त स्वामी ओमकार जी के शान्ति आश्रम के परमाध्यक्ष का पद भी सँभाला तथा स्वामी ओमकार जी की जयन्ती के अवसर पर आश्रम की हर वर्ष भेंट की; पापा रामदास के आनन्दाश्रम के साथ उन्होंने निकट का सम्पर्क रखा और उनके अनेक कार्यक्रमों में उपस्थिति वे स्वामी नारायण जी के संस्था के अनेक उत्सवों-समारोहों में प्रतिभागी हुए। हर जगह स्वामी जी का

एक महान् आध्यात्मिक सन्त के रूप में अभिवादन-स्वागत हुआ तथा विशेष मान्यता मिली। उनके उज्वल और कान्तिमय व्यक्तित्व ने उपस्थित सब लोगों पर कृपा-वर्षा

उनकी प्रत्यक्ष पहल, प्रेरणा और समर्थन के फलस्वरूप जनसेवा हेतु 'स्वामी शिवानन्द' के नाम से कुछ महत्त्वपूर्ण संस्थाओं की स्थापना हुई। इस प्रकार गुरुदेव के पावन जन्म-स्थान, तमिलनाडु के पट्टामडाई में 'स्वामी शिवानन्द सेन्टेनरी चेरिटेबल अस्पताल'; उड़ीसा में भुवनेश्वर में, खण्डगिरि में, 'स्वामी शिवानन्द सेन्टेनरी बॉयज़ स्कूल'; दिल्ली में 'स्वामी शिवानन्द मेमोरियल इन्स्टिट्यूट ऑफ आर्टस् एण्ड क्रॉफ्टस' इत्यादि संस्थाओं की स्थापना हुई। स्वामी जी ने बहुत वर्षों तक इन संस्थाओं के अध्यक्ष के रूप में कार्य किया।

इस प्रकार परम पूज्य श्री स्वामी चिदानन्द जी महाराज के करिश्माई (चमत्कारिक), गतिशील तथा सक्रिय प्रबन्धन ने एक गहरी और शाश्वत छाप छोड़ी है। दिव्य जीवन संघ अनेकविध प्रदेशों की दृष्टि से और शाखाओं, भक्तों और अनुयायियों की संख्या में अत्यधिक विस्तृत हुआ है। गुरुदेव का उपदेश तथा संघ के आदर्श मानव जाति के बहुसंख्य वर्गों तक पहुँचे हैं। संघ का आर्थिक दृष्टि से भी महान् उत्कर्ष हुआ है।

यह सब परम पूज्य श्री स्वामी चिदानन्द जी महाराज के, अपने नाजुक स्वास्थ्य, सुविधा अथवा आराम की बिलकुल भी परवाह न करते हुए, पूर्ण प्रत्यक्ष व्यावहारिक प्रयोग तथा सम्पूर्ण समर्पण से किये गये अविरत और अधक कार्य के कारण ही सम्भव हुआ है।

हमें उनकी कृपा की छत्र-छाया में आने का परम सौभाग्य प्राप्त हुआ है। उन्होंने जो सब किया, वह हमारे हित के लिए किया। उन्होंने इतनी सच्चाई और हृदयपूर्वक कहा है **"मैं केवल तुम्हें राह दिखाने के लिए आया हूँ। वास्तविक ध्येय, परमात्मा की ओर अग्रसर होना और आपका जीवन दिव्य बनाना, यही है।"**

परम पूज्य गुरुमहाराज श्री स्वामी चिदानन्द जी महाराज को मेरे नम्र प्रणाम! सर्वशक्तिमान् प्रभु, गुरुदेव थी स्वामी शिवानन्द जी महाराज तथा परम आराध्य श्री स्वामी चिदानन्द जी महाराज के हम सब पर सदैव कृपाशीष हो।

हरिः ॐ तत् सत्!

दिव्य जीवन संघ मुख्यालय
शिवानन्द आश्रम, ऋषिकेश (उत्तराखण्ड)

करुणावरुणालयम्

श्री स्वामी चिदानन्द जी महाराज

- परम पावन श्री स्वामी पद्मनाभानन्द जी महाराज, महासचिव -

परम पूज्य श्री स्वामी चिदानन्द जी महाराज इस पावन भारतभूमि के श्रेष्ठतम, महानतम सन्तों में से हैं। किसी सन्त को जानना अथवा उसके सम्बन्ध में कुछ कहना सरल नहीं है; क्योंकि शास्त्रों का कथन है '**ब्रह्मविद् ब्रह्मैव भवति**' ब्रह्म को जानना ब्रह्म हो जाना है। शास्त्र यह भी कहते हैं कि ब्रह्म समस्त शास्त्रों से अतीत है, '**यतो वाचो निवर्तन्ते**, **अप्राप्य मनसा सह**-जहाँ मन सहित वाणी, वर्णन करने में असमर्थ हो कर लौट आती है। तो भी सन्तों के जीवन चरित पर असंख्य ग्रन्थ, श्लोक और शास्त्र हैं। एक ओर हम कहते हैं कि भगवान् और साक्षात्कार प्राप्त सन्त वर्णन से अतीत हैं, दूसरी ओर हम उनके सम्बन्ध में इतना अधिक वर्णन करते हैं। इस विरोधाभास की अत्यन्त सुन्दर ढंग से इस प्रकार व्याख्या की गयी है। ब्रह्म और महत् जन मन-बुद्धि और वाणी से परे हैं, तो भी जो मन से उन्हें पकड़ने अर्थात् समझने का प्रयास करते हैं, मन से अतीत चले जायेंगे और जो वाणी से वर्णन करने का प्रयास करते हैं, वह अपने मन और वाणी को पवित्र कर लेते हैं। अतः पूज्य स्वामी जी महाराज के विषय में कुछ भी कहने, लिखने से वक्ता और श्रोता, लेखक और पाठक दोनों ही स्वयं को शुद्ध और उन्नत करेंगे।

वाल्मीकि रामायण में कोई व्यक्ति प्रश्न करता है, "मैं आपके लिए क्या कर सकता हूँ?" दूसरा व्यक्ति उत्तर देता है, "**मैत्रेना चक्षुशः इक्षाश्वा-** मुझे प्रेममयी दृष्टि से देखिए!" हम प्रतिदिन बहुत से लोगों से मिलते हैं। हम उन्हें भय, शंका, उपेक्षा और कई बार प्रसन्नतापूर्वक देखते हैं और हमारी दृष्टि हमारे मन के भाव उन तक पहुँचा देती है। प्रेमपूर्ण दृष्टि से देखना, मैत्री भाव से देखना अत्यन्त कठिन है। मैं जब भी पूज्य स्वामी जी महाराज से मिला, उनकी दृष्टि में मैंने सदैव शुद्ध प्रेम, स्नेह, मैत्री भाव ही देखा है। और वह करुणापूरित दृष्टि हर एक को मन्त्रमुग्ध कर देती थी। केवल करुणा-दृष्टि ही नहीं, अपितु करुणावरुणालयम् करुणा का सागर! और जो भी स्वामी जी के सान्निध्य में होता, एक अभूतपूर्व शान्ति अनुभव करता। उसे ज्ञात हो जाता था कि वह एक असाधारण विभूति के समक्ष है!

मैं एक अन्य घटना भी बताना चाहूँगा। स्वामी जी महाराज का एक गहन भक्त अपनी विदेश यात्रा से वापिस मुम्बई लौट कर स्वामी के दर्शनार्थ मिलने गया। उसने एकान्त में स्वामी जी से भेंट की, उनके चरणों में प्रणाम किया और कुछेक तुलसीदल स्वामी जी को समर्पित किये, जिन्हें स्वामी जी ने अत्यन्त भावपूर्वक ग्रहण किया और अपने शिरोधार्य किया। कुछ समय प्रार्थना करने के उपरान्त स्वामी जी ने शिष्य को इतना उत्तम उपहार लाने के लिए धन्यवाद किया और शिष्य अत्यन्त प्रसन्न हो गया। तब स्वामी जी ने पूछा कि यह दिव्योपहार कहाँ से एकत्रित किया है? शिष्य ने उत्तर दिया, "मैं अमुक व्यक्ति के घर ठहरा हूँ और उन्होंने अपने घर में तुलसी का पौधा लगाया हुआ है, वहीं से मैंने यह सोच कर कुछ पत्ते तोड़ लिए थे ि कि इससे स्वामी जी महाराज को प्रसन्नता होगी।" स्वामी जी ने सिर हिलाया और कुछ क्षण रुक कर बोले, "ओजी, इस देश में धर्मपरायण लोग अपने घरों में तुलसी का पौधा लगाते हैं। उनके धार्मिक और आध्यात्मिक जीवन में इसका विशेष महत्वपूर्ण स्थान होता है। वह इसे केवल जल से सींचते मात्र ही नहीं, बल्कि इसकी पूजा करते हैं, मानो उनका इसके साथ दैवी सम्बन्ध हो। यह पौधा उनके आन्तरिक और बाह्य जीवन से सम्बन्ध रखता है। मैं यह जानना चाहता हूँ कि क्या आपने पत्ते तोड़ने के लिए गृहस्वामी की अनुमति ले ली थी।" शिष्य घबरा गया और उसका चेहरा पीला पड़ गया, "क्षमा कीजिए स्वामी जी, क्षमा कीजिए, मैंने उनसे अनुमति नहीं ली, किन्तु वापिस जाते ही मैं उनसे क्षमायाचना करूँगा।" "ठीक है," स्वामी जी बोले, "देखिए, आप साधक हैं, इसलिए आपको सदैव सावधान रहना चाहिए। आपको अपनी हर एक गतिविधि और कार्य के प्रति

जागरूक होना चाहिए। यह जगत् भगवान् का विराट् स्वरूप है। प्रत्येक वस्तु परमात्मा का अंग है, पौधे भी! इसलिए, पत्ते तोड़ने से पहले केवल गृहस्वामी से ही आज्ञा प्राप्त नहीं करनी होती, बल्कि पौधे से भी अनुमति माँगनी होती है।"

इस छोटी-सी घटना के द्वारा स्वामी जी महाराज ने यह कि यहाँ कुछ भी सीमित और स्वतन्त्र नहीं है। हम बताया सब उस एकमेव परब्रह्म से जुड़े हुए हैं। उस परमात्मा को ॐ विश्वस्मै नमः !

दिव्य जीवन संघ मुख्यालय
शिवानन्द आश्रम, ऋषिकेश (उत्तराखण्ड)

ॐ

श्री स्वामी चिदानन्द जी पद्मपत्र पर जल-बिन्दु की भाँति रहते हैं। वह सबकी सेवा करते हैं, किन्तु किसी से आसक्ति नहीं रखते हैं। उनमें समदृष्टि है, सन्तुलित मन है। वह भगवान् में स्थित हैं, अतः भगवान् उनके लिए सब-कुछ करते हैं। उनकी सभी प्रवृत्तियाँ भगवान् की, उनके विराट् स्वरूप में पूजा ही हैं। वे सूचित करती हैं कि वह न तो दुःख से क्षुब्ध होते हैं और न सुख से हर्षित। वह मानव मात्र पर सुख, शान्ति तथा आनन्द विकीर्ण करते हैं। संक्षेप में कहें तो वह इस हाड़-माँसमय शरीर में देवता हैं।

'विरले महापुरुष'

-श्री स्वामी त्यागवैराग्यानन्द जी महाराज -

परम कृपालु परमात्मा की भारतवर्ष पर सदा अहेतुकी कृपा रही है। अनादि काल से आज पर्यन्त अनेक महापुरुष इस पवित्र भूमि पर अवतरित होते आये हैं और इस लोक के मानव-जीवन को समृद्ध करते गये हैं। ऐसी महापुरुषों की परम्परा की अन्तिम कड़ी तथा भविष्य में आने वाले युगों की प्रथम पंक्ति के आदर्श महापुरुषों में से एक हमारे परम पूजनीय गुरुदेव ब्रह्मलीन स्वामी श्री चिदानन्द जी महाराज थे। शास्त्रों ने जो-कुछ हमको दिया है, उसका सार हमको स्वामी जी महाराज में प्राप्त होता था। भविष्य के आध्यात्मिक जिज्ञासुओं और मुमुक्षुओं को भी अपना श्रेष्ठतम आदर्श श्री स्वामी चिदानन्द जी में अवश्य प्राप्त होता रहेगा। हर एक महापुरुष की अपनी-अपनी विशेषता होती है। परन्तु महापुरुषों में भी प्राचीन परम्परा का फल और अर्वाचीन परम्परा का बीज जिनके जीवन में संलग्न हो गया है ऐसे महापुरुष विरले ही होते हैं। ऐसे ही एक विरले महापुरुष थे दिव्य जीवन संघ के पूर्व परमाध्यक्ष परम पूज्य श्री स्वामी चिदानन्द जी महाराज।

युगपुरुष स्वामी श्री चिदानन्द जी

स्वामी श्री चिदानन्द जी महाराज एक सत् पुरुष थे, यह सभी लोग मानते हैं। यहाँ तक कि बड़े-बड़े दिग्गज पण्डित और महामण्डलेश्वर भी उनका सत् पुरुष के रूप में सम्मान करते थे। सभी सत् पुरुषों के हृदय समान ही होते हैं; परन्तु हर एक की बुद्धि और प्रतिभा भिन्न-भिन्न प्रकार की होती है। जिस काल में जिस प्रकार की प्रतिभा की विशेष आवश्यकता होती है वैसी प्रतिभा सम्पन्न सत् पुरुष उस काल के युगपुरुष हो जाते हैं। सद्गुरुदेव स्वामी श्री शिवानन्द जी महाराज और गुरुदेव स्वामी श्री चिदानन्द जी महाराज अध्यात्म-जगत् के ऐसे युग-प्रवर्तक सत् पुरुष थे। सद्गुरुदेव श्री स्वामी शिवानन्द जी के समान ही स्वामी श्री चिदानन्द जी महाराज का जीवन असाधारण आध्यात्मिक शक्ति, अनन्त प्रेम, असीम करुणा, अथक सेवा और अद्वितीय ब्रह्मविद्या से परिपूर्ण था।

सामान्य धर्म-प्रचार अलग बात है। सामान्य धर्म बोध ऋषि और सत् पुरुष हमेशा देते रहते हैं। परन्तु प्राचीन व अर्वाचीन समय का समुचित समन्वय करके वर्तमान युग की माँग के अनुसार उपदेश और आचरण करना, ये क्रान्तदर्शों ही कर सकते हैं। स्वामी श्री चिदानन्द जी ने अपने जीवन-काल में यह करके दिखाया इतना ही नहीं समस्त विश्व के, पूर्व व पश्चिम के सभी लोगों के लिए एक सच्चा आध्यात्मिक आदर्श स्थापित किया। वैसे वे एक युगपुरुष थे। विश्व के सभी धर्मों और सभी पैगम्बरों का सारभूत सन्देश, श्री स्वामी जी के जीवन और कथन में प्रतिबिम्बित होता रहता था। इसलिए पूर्व के लोग श्री स्वामी जी में भगवान् श्री राम और करुणासागर श्री बुद्ध भगवान् का दर्शन करते थे और पश्चिम के लोग ईसामसीह और सन्त फ्रांसिस का दर्शन करते थे।

स्वामी जी उपदेशक नहीं, सेवक थे

हमारे यहाँ कई महापुरुष हुए हैं। उनमें से बहुतों ने लोगों को बहुत कुछ सिखाया और लोगों के जीवन में परिवर्तन किया; परन्तु ये लोग सूर्यनारायण के समान दूर रह कर प्रकाश देते रहे। भगवान् सूर्य नारायण नजदीक आके हमें कुछ नहीं दे सकते, न तो हम उनके नजदीक जा कर कुछ पा सकते हैं। वह हमारे गुरु बन सकते हैं, सेवक नहीं। मुझे स्वामी आनन्द का एक प्रसंग याद आ रहा है। रामकृष्णमठ से दीक्षित स्वामी आनन्द महात्मा गान्धी जी से प्रभावित हो कर गान्धी जी के पास गये और कहा कि मैं आपके साथ काम करना चाहता हूँ। तब गान्धी जी ने कहा- "आप गेरुआ वस्त्र उतार कर आइए; क्योंकि इस वस्त्र में आप सेवा नहीं कर पाओगे। लोग आपको सेवा नहीं करने देंगे। इसके विपरीत लोग आपकी सेवा करने लगेंगे।" स्वामी आनन्द ने वस्त्र-परिवर्तन किया। परन्तु हमारे गुरुदेव स्वामी श्री शिवानन्द जी महाराज और स्वामी श्री चिदानन्द जी महाराज, आदि गुरु श्री शंकराचार्य जी की दशनामी साधु परम्परा के संन्यासी होते हुए भी सभी के सामने आदर्श कर्मयोगी और मानव-जाति के सच्चे सेवक होने का उत्कृष्ट उदाहरण छोड़ गये हैं।

मैं सूर्यनारायण देव की बात कह रहा था, परन्तु वैसे भी महापुरुष होते हैं जो करुणामय, दयालु और बत्सल होते हैं। उनमें ज्ञान छिपा हुआ रहता है और करुणा प्रकट होती रहती है। स्वामी श्री चिदानन्द जी महाराज ऐसे महापुरुष एवं सन्त थे। करुणा और वात्सल्य से प्रेरित हो कर, सभी में ईश्वर-दर्शन करते हुए जीवन के अन्त तक स्वामी जी महाराज समस्त मानव-जाति की सेवा करते रहे। सभी लोग स्वामी जी को अपना मानते थे। किसी को भी स्वामी जी से अलगाव अनुभव नहीं होता था। सुखी-दुःखी, गरीब-अमीर, ज्ञानी-अज्ञानी, रोगी-निरोगी, छोटा-बड़ा, इतना ही नहीं चाहे व्यक्ति किसी भी धर्म का क्यों न हो, सभी लोग श्री स्वामी जी की

सन्निधि में अपनापन खो कर शान्ति, सुख और आनन्द का अनुभव करते थे। व्यक्ति को स्थल-काल का ध्यान भी नहीं रहता था। श्री स्वामी जी के सान्निध्य में चन्द्रमा की शीतलता का अनुभव होता था, क्योंकि स्वामी जी अपने को गुरु नहीं सेवक मानते थे, वे सदैव कहा करते थे कि मैं सद्गुरुदेव स्वामी शिवानन्द जी महाराज का सेवक हूँ। आप सभी के गुरु भी शिवानन्द जी ही हैं। श्री स्वामी जी सदैव साधारण आदमी की भूमिका में रह कर जगत् में व्यवहार करते थे। सभी को, सभी प्रकार की समस्याओं का व्यावहारिक समाधान बताते थे। अपने सभी निजी कार्यों को छोड़ कर, छोटी-मोटी सभी की बातों में रुचि ले कर उनका समाधान होने तक समय देते थे। कौन नहीं जानता कि उन्होंने साधारण मनुष्यों, कुष्ठरोगियों और पशु-पक्षियों तक सभी जीवों के लिए क्या-क्या सेवाएँ नहीं की हैं!

सत्य के आग्रही श्री स्वामी जी

श्री स्वामी जी अत्यन्त विनम्र, धैर्यशील तथा सहनशील थे; परन्तु जीवन में शिष्टता, संयम और सदाचार के आग्रही थे। विपरीत आचरण करने वालों के लिए वे सूर्य समान थे। ऐसे लोगों को उनका ताप सहना पड़ता था। असत्य और झूठ वे सहन नहीं कर पाते थे। उनका समग्र जीवन मूल्यनिष्ठ रहा।

विनम्रता और निरहंकार की मूर्ति

स्वामी जी ने सम्पूर्ण विश्व का कई बार परिभ्रमण किया था। विश्व के कोने-कोने में उनके अनुयायी, भक्त और प्रेमी थे। सभी लोग उनको गुरु मानते थे और स्वामी शिवानन्द जी महाराज के समान ही आदर करते थे। परन्तु उन्होंने कभी भी गुरुपद स्वीकार नहीं किया। स्वामी शिवानन्द जी के नाम से ही सभी को सभी प्रकार की दीक्षा देते थे और कहते थे कि, "स्वामी शिवानन्द जी आपके गुरु हैं, मैं नहीं।" अपने जीवन-कथन द्वारा आदर्श शिष्य का उदाहरण सबके समक्ष सदैव रखते थे। वे अपने जीवन में यही प्रयत्न करते रहे कि अपने सद्गुरुदेव स्वामी शिवानन्द जी का स्थान व पद सदा अद्वितीय रहे। अपने देह-विलय के बाद, अपना एक भी अवशेष न रहे ताकि उससे कोई समाधि न बना सके इसी अपने को नामशेष करने के विचार से ही श्री स्वामी जी ने संस्था के सभी ट्रस्टी और भक्त एवं शिष्य-समुदाय को पहले से ही सूचना दे रखी थी कि, "मेरे देह-विलय के पश्चात् मेरी देह को श्री शंकराचार्य दशनामी साधु परपम्परा के अनुसार एक साधारण साधु की भाँति नदी में बहा देना। इतना ही नहीं, इस बारे में किसी भी माध्यम से किसी को भी सूचना या जानकारी मत देना। यह मेरी आज्ञा समझो तो आज्ञा है, आदेश समझो तो आदेश है।" और शतशः श्री स्वामी जी की इच्छा के अनुसार ही हुआ। ऐसे थे वे युग प्रवर्तक महापुरुष ! ऐसे थे हमारे परम पूज्य गुरुदेव स्वामी श्री चिदानन्द जी महाराज!

उन्हीं के पतितपावन श्रीचरणों में कोटि-कोटि वन्दन ।

दिव्य जीवन संघ मुख्यालय
शिवानन्द आश्रम, ऋषिकेश
(उत्तराखण्ड)

मेरे दिव्य गुरु

- ब्रिगेडियर (सेवा-निवृत्त) श्री एल. एन. सब्बरवाल -

चाहते हैं दो जहाँ खुदा की रज़ा
खुदा को भी तेरी रज़ा चाहिए!

(स्वामी रामतीर्थ)

ख़ुदा का नूर मुर्शिद में भला मालूम होता है?
ये वो आईना है जिसमें ख़ुदा खुद मालूम होता है।

परम पूज्य श्री स्वामी चिदानन्द जी महाराज जैसी दिव्य विभूति के सम्बन्ध में कुछ लिखना और पूरी तरह से लिख सकना अत्यन्त कठिन ही नहीं असम्भव ही है। इस तथ्य में दृढ़ विश्वास होते हुए भी मैं लिख रहा हूँ, हमारे परमाध्यक्ष श्रद्धेय श्री स्वामी विमलानन्द जी महाराज की आज्ञा पालन करने के लिए। मैं भक्तों की भावनाओं को आनन्द प्रदान करने वाली कुछ घटनाएँ बताने का प्रयास करूँगा।

श्री स्वामी रामदास, कान्हनगढ़, केरल के आनन्द आश्रम से दो युवक श्री स्वामी जी के दर्शन के लिए 'शान्ति निवास, देहरादून' आये। उन्होंने कहा, "हम इतनी दूर से श्री स्वामी जी से आशीर्वाद प्राप्त करने आये हैं, कि हमें भी वह उपलब्धि प्राप्त हो सके जो स्वामी जी ने इस जीवन में कर ली है।" स्वामी जी ने उत्तर दिया कि उन्होंने इस जीवन में कुछ भी प्राप्त नहीं किया है। जब वह युवक चले गये तो स्वामी जी मुझसे बोले, "मैं जानता हूँ, आप क्या सोच रहे हैं। मुझे गुरुदेव ने बताया था कि मैं पिछले जन्म में ही सिद्ध था।"

१९७६ में स्वामी रामतीर्थ आश्रम, देहरादून में श्री श्री आनन्दमयी माँ का जन्म-दिवस मनाया गया। माँ अपने जन्म-दिन पर १० से १४ घण्टे तक की समाधि में चली जाया करती थीं। इस जन्म-दिवस पर भी वह ज्यों ही मंच पर आयीं, उसी समय समाधि में लीन हो गयीं। माँ जब समाधिस्थ थीं, उस समय भव्य महापूजा चलती रही। श्री स्वामी जी, श्री स्वामी माधवानन्द जी महाराज तथा हमारे आश्रम के कुछ अन्य स्वामी जी भी उस समय वहाँ उपस्थित थे। अगले दिन प्रातः स्वामी जी को चाय परोसते समय मैंने कहा, "कल रात बड़ी विचित्र बात देखी कि माँ ज्यों ही मंच पर आ कर बैठीं, उसी समय गहन समाधि में चली गयीं।" स्वामी जी ने मेरे कथन में सुधार करते हुए कहा, "नहीं, नहीं, गहन समाधि में जाने के लिए उन्होंने कम-से-कम २० में ३० मिनट लिये थे।"

श्री स्वामी जी के साथ 'शान्ति निवास' के हाल में घूमते समय एक बार मैंने कहा, "स्वामी जी, मां आध्यात्मिक जगत् की बहुत ऊँची स्थिति में पहुँची हुई थी और बहुत ही कम व्यक्ति उन्हें पूरी तरह से समझ सकेथे। मेरा विचार है कि जो उन्हें पूरी तरह से समझ सके हों, उनमें से एक आप हैं। ठीक है न?" स्वामी जी ने कहा, "हाँ, यह ठीक है। यही नहीं, वह भी मुझे पूरी तरह समझती थीं।"

स्वामी जी का सम्पूर्ण सृष्टि के साथ एकात्मीकरण था। एक बार ग्रीष्म ऋतु में वे तीन दिन की यात्रा पर गये। वापिस लौटने पर उनका ध्यान 'गुरु निवास' में अपने कमरे के सामने पड़े गमलों की ओर गया जो पानी के अभाव में मुरझा गये थे। वे अपने स्नानागार में गये, पानी लाये और सभी पौधों को पानी दिया। स्वामी जी तीन दिनों तक निराहार रहे, क्योंकि पौधे तीन दिन तक जल के बिना रहे थे।

एक दिन मैंने स्वामी जी से कहा, "स्वामी जी, आप जैसे पुत्र को जन्म देने से आपकी माताश्री को मुक्ति प्राप्त हो गयी।" स्वामी जी ने प्रत्युत्तर दिया, "आप यह कैसे जानते हैं?" मैंने श्री स्वामी जी को भृगुसंहिता, होशियार पुर जाने की याद दिलायी। वहाँ पण्डित जी ने जन्मपत्री पढ़ कर सुनायी थी, जो इस प्रकार थी, "चिदानन्द स्वामी, जब आप इस स्थान पर आयेंगे तो नारायण भगवान् और मैं बहुत प्रसन्न होंगे। यहाँ जो भी आपके दर्शन करेंगे, धन्य हो जायेंगे। जब आप दस वर्ष के हो जाओगे, तब आपकी माता को मुक्ति प्राप्त हो जायेगी। आपने अपने पिछले जन्म में ही भगवान् श्री राम के दर्शन प्राप्त कर लिये थे। उन्होंने अपने गुण आपको प्रदान करके अपनी कार्य सिद्धि के लिए यहाँ भेजा है। एक कार्य उन्होंने आप पर छोड़ दिया है, वह है इस संसार से आपके जाने का समय।" यह पक्ष अगस्त २००८ में पर्याप्त रूप से सिद्ध हो गया। महासमाधि से कुछ दिन पूर्व, जब उनके निजी चिकित्सक डा. राकेश गिल्होत्रा, उन्हें चिकित्सालय में स्थानान्तरण करने के लिए उनके पास आये तो उन्होंने कह दिया था, " मेरा शरीर वृद्ध हो चुका है। यह शरीर कितनी देर तक चलेगा! इसकी अपनी सीमाएँ है। डाक्टर, यदि आप मेरी स्थिति में होओ, तो क्या आप ऐसे और रहना चाहोगे? मैं शैया-ग्रस्त है। जो-कुछ मैंने करना था, कर लिया है। पिछली बार जब मैं बीमार पड़ा था, तो आप मुझे अपने अस्पताल में ले गये थे। अब मैं कहीं जाना नहीं चाहता। मुझे जाना होगा तो या तो यहाँ फिर 'गुरु निवास' में। सम्भवतया यहीं, 'शान्ति निवास' में ही यह होगा। (उन्होंने जिस शैया पर लेटे हुए थे, उसकी ओर संकेत करते हुए यह कहा)। मैं यहाँ 'शान्ति निवास' में रहूँगा।" अपने तीनों निजी सेवकों (स्वामी शरणागतानन्द, स्वामी गुरुप्रसादानन्द और स्वामी चित्स्वरूपानन्द) की ओर संकेत करते हुए, बोले, "ये मेरे साथ देहरादून आये थे, ये सब वापिस ऋषिकेश चले जायेंगे।"

जुलाई २००८ में एक बार मेरी धर्मपत्नी ने स्वामी जी से पूछा, आपका स्वास्थ्य कैसा है?" स्वामी जी ने कहा, "मैं कर्म अपने सब प्रारब्ध कर्मों का भुगतान कर रहा हूँ। मेरे संचित भस्म हो चुके हैं। अब मेरा और जा रहा होगा। बत

इतना जज्ब कर लूँ तेरे हुस्न कामिल को
पुकार उठें तुझी को गुज़र जाऊँ जहाँ हो कर।

दिव्य जीवन संघ मुख्यालय
शिवानन्द आश्रम, ऋषिकेश (उत्तराखण्ड)

मेरे प्यारे गुरुदेव, मेरे भगवान्!

-श्री सन्दीप गोस्वामी जी -

किसी महान् विभूति के सम्बन्ध में अपने अनुभव लिखना अत्यन्त कठिन ही नहीं, बल्कि असम्भव सा ही है। अनुभूति तो सदैव हृदय से होती है जिसे वाणी द्वारा अभिव्यक्त नहीं किया जा सकता। और कुछ बातें तो हृदय के इतने भीतर छिपा लेने वाली होती हैं जिनके विषय में किसी अन्य से कहा जाना अत्यन्त कठिन है, यद्यपि हममें से बहुतों के ऐसे ही अनुभव रहे होंगे। मैं आश्रम में प्रथम बार १९७५ में उस समय आया जब कि मैं केवल १२ वर्ष का था, इस अवस्था में मैंने अपने प्यारे गुरुदेव के प्रथम दर्शन किये। उस समय जिस स्नेह और अपनत्व की वर्षा गुरुदेव ने मुझ पर की, उसकी स्मृति मेरे मानसपटल पर अभी तक अंकित है, वही प्रेम उनका अन्त तक बना रहा। उसके एक वर्ष बाद १९७६ में, गुरुदेव की हीरक जयन्ती के अवसर पर मैं आश्रम में तीन मास रहा। मेरे अनुमान से इतने दीर्घ काल के लिए, उसके बाद आश्रम में कभी भी ठहरने का अवसर नहीं मिला। इस अवधि ने हमारे सम्बन्धों को एक प्रकार से दृढ़ता से जोड़ दिया और मुझ पर उनके प्रभाव में तथा उनके प्रति मेरी भक्ति भावना में बहुत वृद्धि हुई।

गुरुदेव ने अत्यन्त कृपालुतापूर्वक मुझे अपनी सेवा के लिए अनेक सुअवसर प्रदान किये। १९८४ में जब मलेशिया के स्वामी प्रणवानन्द जी महाराज की महासमाधि हुई तब मैं प्रथम बार गुरुदेव के साथ यात्रा पर गया। गुरुदेव ने मुझे मलेशिया साथ चलने के लिए कहा। गुरुदेव के साथ प्रथम बार, और वह भी विदेश यात्रा पर! दूसरी बार उड़ीसा में बरहमपुर विश्वविद्यालय के रजत जयन्ती कार्यक्रम में भाग लेने के लिए भारत में ही यात्रा की। १९८६ में श्री सुन्दरम् जी अमेरिकन एक्सप्रेस से सेवानिवृत्त हुए थे। उस समय मैं चौमस कुक के साथ कार्यरत था। उस समय गुरुदेव ने मुझे बहुत ही सम्माननीय सेवा दी-पूज्य गुरुदेव के समस्त यात्रा-क्रम का आयोजन तथा आरक्षण इत्यादि की सेवा। मैंने अत्यन्त हर्ष व आभार सहित यह सेवा अपनाई और इसने हमारे प्रेम-बन्धन को दृढ़तम रूप दे दिया, क्योंकि इससे हमारी फोन पर नियमित बात होने लगी और इसी से मुझे गुरुदेव के बाल सुलभ सरल मधुर स्वभाव का पता चला। छोटी-से-छोटी बात भी अत्यन्त विस्तारपूर्वक बताया करते। परमाध्यक्ष और गुरु होने के नाते वे यात्रा-क्रम निर्धारण के लिए मुझे केवल स्थान और तिथियों की सूचना मात्र ही दे सकते थे; किन्तु नहीं, ऐसा उन्होंने कभी नहीं किया, बल्कि सविस्तार बताते कि किसी विशेष स्थान पर अथवा व्यक्ति के घर पर जाना क्यों आवश्यक है। प्रत्येक सप्ताह गुरुदेव के साथ यात्रा-क्रम निर्धारण अथवा अन्य बातों के लिए आश्रम जाना मेरे कार्यक्रम का एक नियम बन गया था।

१९८७ में हमारे परम पूज्य सद्गुरुदेव श्री स्वामी शिवानन्द जी महाराज की जन्मशताब्दी का महोत्सव आया। इसके साथ ही हमारे गुरुदेव की भारत के प्रत्येक कोने तथा विदेशों की यात्रा आरम्भ हो गयी। उनमें से बहुत सी यात्राओं में मुझे साथ जाने का परम सौभाग्य और आनन्द प्राप्त हुआ। ऐसी ही एक यात्रा के दौरान एक दिन अचानक ही गुरुदेव ने मुझे बुला कर भारत लौट जाने के लिए कहा जब कि हमारी यह यात्रा पूरी नहीं हुई थी, हम बैरूत में थे और अभी बहुत से स्थानों पर जाना शेष रहता था। गुरुदेव ने जीनपीरे से मेरे वापसी टिकट का आरक्षण करवाने को कह दिया। ऐसा क्यों हुआ, इस पर मन-ही-मन आश्चर्य करते हुए प्रभु-इच्छा के सम्मुख सिर झुका कर अत्यन्त दुःखी हृदय से मैं लौट आया। चार दिनों में ही मुझे उत्तर मिल गया, जब मेरे पिताजी को दिल का घातक दौरा पड़ गया। गुरुदेव की यही इच्छा थी कि ऐसे समय में मैं अपने

पिताजी के निकट होऊँ और अपने कर्तव्य को निभाऊँ। इस प्रकार मेरे जीवन के प्रत्येक मोड़ पर गुरुदेव मेरे निकट जिब्राल्टर की चट्टान बन कर खड़े रहे। अतः जब मेरे माता-पिता ने गुरुदेव की आज्ञा और आशीर्वाद ले कर मेरा विवाह निश्चित किया तब भी उस घड़ी को पावन और महान् बनाते हुए गुरुदेव आशीर्वाद देने के लिए पधारे।

फिर दिव्य-दशक का शुभारम्भ हुआ और इसके साथ ही गतिविधियों के सक्रिय रूप से बढ़ जाने के साथ-साथ विश्व-भ्रमण में भी वृद्धि हो गयी। इस समय के दौरान मैं पूरी तरह से आश्रम के कामों में व्यस्त हो गया और मैंने अपने सभी सहयोगियों तथा परिवार के सदस्यों से कह दिया कि किसी भी समय आवश्यकता पड़ने पर मेरा अपने सभी कार्य बीच में ही छोड़ कर आश्रम जाना हो सकता है। मैंने उन्हें यह भी सूचना दे दी कि सम्भवतया में अन्तर्राष्ट्रीय विश्व धर्म सम्मेलनों, एशियाई सम्मेलनों तथा अन्य बहुत से सम्मेलनों में भाग लेने के लिए स्वामी जी के साथ जाऊँ। इसके द्वारा मुझे गुरुदेव को वास्तविक रूप में देख पाने का तथा उनके प्रति गहन प्रेम और अपनत्व को सुदृढ़ करने का अवसर मिला जो कि कभी भी फिर परिवर्तित नहीं हुआ। अन्तिम बार गुरुदेव के साथ १९९८ में पाँच मास के लिए मलेशिया, हाँगकाँग, आस्ट्रेलिया, यूरोप, यू.के., यू.एस.ए., अरजेन- टिना, उरुगुए, लेबनान और दुबई की यात्राओं का था। इस समय मुझे ऐसा उत्तरदायित्व सौंपा गया जिसने मुझे न केवल गुरुदेव से ही बल्कि संस्था से भी अधिक घनिष्ठता से जोड़ दिया। गुरुदेव ने मुझे संस्था का न्यासी बनने के लिए कहा।

समय व्यतीत होता गया और मुझे पता ही नहीं चला कि १९७५ से जुड़ने वाले इस सम्बन्ध के ऊपर व्यतीत होते वर्षों ने किस प्रकार घनिष्ठता की परतों पर परतें चढ़ा दी हैं। अब स्वामी जी ही मेरे लिए सब-कुछ हो चुके थे-गुरु, परामर्शदाता, दार्शनिक और निर्देशक! लोग प्रायः मुझसे पूछते हैं, "गुरुदेव के साथ इतने दीर्घकालीन सम्बन्धों के उनकी कौन-सी विशेषताओं ने आपको सबसे अधिक प्रभावित किया है?" उनमें से बहुत सी ऐसी हैं! उदाहरणार्थ मैं पहले ही उनके बाल-सुलभ सरल स्वभाव के बारे में बता चुका हूँ। अन्य अत्यधिक प्रभावित करने वाली उनकी विनम्रता और सादगी है। गुरुदेव की कृपा से मुझे अन्य अनेकों संस्थाओं के अध्यक्षों को निकट से देखने के अवसर भी मिले हैं। उनके चहुँओर एक विशेष हवा होती है जो उन्हें बड़ा और महत्त्वपूर्ण होने का बोध कराती रहती है। वह इसी प्रयास में रहते हैं कि उन्हें देखने-मिलने वाले भी उन्हें ऐसा ही समझें। और हमारे गुरुदेव इसके ठीक विपरीत, अपनी महानता को छिपाये रखने के प्रयास में रहे, आध्यात्मिक जगत् में भी और संसार में भी, जब कि वह दिव्य जीवन संघ जैसी सुप्रसिद्ध और महत्त्वपूर्ण संस्था के परमाध्यक्ष ही नहीं, इसको अत्यधिक विस्तृत रूप देने वाले भी हैं। हम सबको गुरुदेव और उनकी इस महान् संस्था से सम्बन्धित होने का गर्व है। यह वास्तव में गुरुदेव की ही विस्तृति है और उनकी कर्मभूमि भी है। जिस संस्था को उन्होंने ५० से अधिक वर्षों तक पोषित और विकसित किया है, वास्तव में वे उसी में और ठीक उसी के द्वारा विद्यमान हैं।

दिव्य जीवन संघ मुख्यालय
शिवानन्द आश्रम, ऋषिकेश
(उत्तराखण्ड)

ज्योतिर्ज्योति स्वामी चिदानन्द !

- संन्यासिनी चतुष्टय -

ब्रह्म ज्योति शिवानन्द-आत्म ज्योति हो तुम,
ज्योतिर्ज्योति चिदानन्द स्वयं ज्योति हो तुम,
परम परात्पर, परिपूर्ण ज्योति हो तुम;
बाह्याभ्यन्तर प्रत्यक् ज्योति हो तुम।
ज्योतिज्योति को प्रणाम बारम्बार, प्रणिपात बारम्बार हो।

प्राची प्रतीचि-प्रदीप्त प्रकाश तुम्हारा,
दिदिगन्त ज्योतित आलोक तुम्हारा;
अज्ञानान्धकार-रहित तेजोराशि चहुँ ओर
व्याप्त सबमें सर्वत्र ज्ञानालोक तुम्हारा।
अन्तज्योति बहिज्योतिको प्रणाम बारम्बार, प्रणिपात बारम्बार हो।

तव ज्योति से नित्य नूतन दिव्य कृपा-वर्षण,
प्रेरित करती मनन-मनोमंथन, 'चिदानन्द-चिन्तन',
सदा-सर्वदा हम करें सर्वस्व समर्पण;
तभी हमारा दिव्य जीवन हो सानन्द सम्पन्न।
परात्पर ज्योति को प्रणाम बारम्बार, प्रणिपात बारम्बार हो।

मर्यादा पुरुषोत्तम श्री राम के दीप्तिमान् प्रारूप हो तुम,
गीतोपदेशक श्री कृष्ण के नित्य नूतन लीला स्वरूप हो तुम।
गौतम बुद्ध के करुणैक रूप, औ' संकीर्तन रास में गौरांग हो तुम
विश्ववंद्य सद्गुरुदेव के अपूर्व आदर्श शिष्यत्व के प्रतिरूप हो तुम।
परिपूर्ण ज्योति को प्रणाम बारम्बार, प्रणिपात बारम्बार हो।

प्रस्थानत्रयी (उपनिषद्, गीता, ब्रह्मसूत्र) के उत्तम सार हो तुम,
ब्रह्मतत्त्व, ब्रह्मविद्या, अष्टांग योग साकार हो तुम;
गीता-रामायण-सङ्ग्रन्थों के सारातिसार हो तुम;
सनातन वैदिक धर्माचरण के सुस्थिर आधार हो तुम।
ब्रह्म ज्योति को प्रणाम बारम्बार, प्रणिपात बारम्बार हो।
'आलोक-पुंज' के आलोक, 'ज्योतिपथ की ओर', '
नूतन शुभारम्भ' के प्रेरक हो तुम,
'जीवन स्रोत' के आदि स्रोत, 'गीता तत्त्व दर्शन' के मर्मज्ञ हो तुम,
'मानवता से' 'मोक्ष सम्भव है' , दिखाया 'शोकातीत-पथ', 'मुक्ति पथ',
'मननीय सत्य', 'शाश्वत सन्देश' तुम्हारा- 'जागिए अपने दिव्यत्व को पहचानिए'।
ज्योतिज्योंति को प्रणाम बारम्बार, प्रणिपात बारम्बार हो ।।

'श्रीधाम', दिव्य जीवन संघ मुख्यालय

शिवानन्द आश्रम, ऋषिकेश (उत्तराखण्ड)

वे हमें जाग्रत करते हैं!

- स्वामी तेजोमयानन्द सरस्वती जी महाराज-

(परम पूज्य श्री स्वामी तेजोमयानन्द सरस्वती जी महाराज, परमाध्यक्ष, विश्वव्यापक चिन्मयमिशन द्वारा गुरुदेव के पावन समाधि-मन्दिर में, शिवानन्द आश्रम, ऋषिकेश परम पूज्य श्री स्वामी चिदानन्द जी महाराज को अर्पित श्रद्धा-सुमन)

ॐ श्री गुरुभ्यो नमः ।

सर्वप्रथम मैं ईश्वर से प्रार्थना करता हूँ तथा परम पूजनीय और आराधनीय शिवानन्द जी महाराज और पश्चात् स्वामी चिदानन्द जी महाराज को अपनी श्रद्धांजलि समर्पित करता हूँ। अत्र उपस्थित हर एक को तथा सबको हरिः ॐ एवं ॐ नमो नारायणाय। थोड़े दिन पूर्व, आपने हमारे आदरणीय स्वामी चिदानन्द जी का षोडशी समारोह आयोजित किया था। कुछेक सार्वजनिक कार्यक्रमों के कारण मैं आ नहीं सका, किन्तु, ईश्वरकृपा से आप सबके मध्य इस सायं-सत्संग में उपस्थित रहने का सुअवसर मुझे प्राप्त हुआ है। मुझ पर अपने प्रेम और स्नेह की वर्षा करने के लिए मैं आप सबके आभार मानता हूँ।

सन् १९७० में सान्दीपनि साधनालय में प्रविष्ट हुआ। सन् १९७४ में हम सब ब्रह्मचारी ऋषिकेश आ कर आन्ध्र आश्रम में एक मास से अधिक रहे थे। उस समयावधि में हमें महात्माओं के दर्शन का सुअवसर तथा सौभाग्य प्राप्त हुआ था। हम शिवानन्द आश्रम के दर्शनार्थ भी आये थे। तब मैं परम पूज्य स्वामी चिदानन्द जी का केवल प्रवचन श्रवण कर सका, उनसे व्यक्तिगत मिलन या वैयक्तिक वार्तालाप नहीं हुआ था।

मैं उनका अत्यन्त ऋणी हूँ कारण, जब हमारे परम पूज्य गुरुदेव स्वामी चिन्मयानन्द जी महाराज सान डिआगो में उपचार के लिए भर्ती किये गये थे तब हम सब वहाँ थे। स्वाभाविकतः हम सब उदास और दुःखी थे। उस समयावधि में स्वामी जी महाराज संयोग से वहीं थे और वे अस्पताल में आये और उन्होंने सब मिशन-सदस्यों के साथ बातचीत की, उन सबको सान्त्वना दी। कुछ समय पश्चात् वे उसी वर्ष वाशिंगटन डी. सी. गये।

अचानक हम अपने स्वामी जी को खो बैठे, उनको महासमाधि प्राप्त हुई। उस समय हम सब युवा थे तथा कौन से धार्मिक संस्कार सम्पन्न करने थे, यह नहीं जानते थे। किन्तु स्वामी जी (परम पूज्य स्वामी चिदानन्द जी महाराज) वहाँ थे। वे वाशिंगटन डी. सी. में थे और मैंने उनसे टेलिफोन पर बातचीत की। उन्होंने मुझे सब समझाया कौन से धार्मिक संस्कार हैं, उनका कैसे प्रबन्ध करना, किस प्रकार (स्वामी चिन्मयानन्द जी का) भौतिक शरीर ध्यान मुद्रा में रखना और किस प्रकार भौतिक शरीर भारत ले जाना।

मैं अनुभव करता हूँ कि उनका मार्गदर्शन नहीं होता तो हम कैसे दिशा-शून्य होते, कारण हम पूर्णतया असहाय और विधि-विधान से अज्ञात थे। तबसे मैं उन्हें स्वामी जी (ब्रह्मलीन परम पूज्य श्री स्वामी चिन्मयानन्द जी महाराज) के पद पर देखने लगा।

जो बात मुझे सर्वाधिक प्रिय लगी, वह यह थी कि उन्होंने मुझे अपना आध्यात्मिक भतीजा निर्दिष्ट किया। वे मेरा उस प्रकार से उल्लेख करते थे, क्योंकि हमारे स्वामी चिन्मयानन्द जी महाराज उनके गुरुबन्धु थे। उनका शिष्य होने के नाते मैं उनके पुत्रसमान था। अतः वे मुझे अपना भतीजा कहते थे। उस प्रकार ही मैं उन्हें अपना आध्यात्मिक चाचा कहता रहा।

इसके अतिरिक्त इन महात्माओं से सम्बन्धित रोचक बात यह है कि उनके बाह्य व्यक्तित्व और स्वभाव भिन्न हैं। परन्तु, एक बात में वे समान भूमिका और स्तर पर हैं। अपने स्वामी जी का हवाई अड्डे पर स्वागत करने जाता था, उसका मुझे स्मरण है। उनका सब-कुछ फौजी जैसा था- लगभग जनरल जैसा। वे त्वरा से बाहर आते थे। मुझे याद है, एक बार मैं किसी कार्यक्रम के सम्बन्ध में स्वामी चिदानन्द जी महाराज का स्वागत करने गया था। अत्यन्त प्रशान्त! वे आये और हवाई अड्डे में बैठ गये। कोई उतावलापन नहीं। लोग आते थे और उन्हें प्रणाम करते थे। उन्होंने किसी को भजन गाने को कहा, चारों ओर बहुत से लोग एकत्रित हुए थे ये सब चहल-पहल युक्त हवाई अड्डे पर! ऐसा पूर्णतया भिन्न चित्र! पश्चात् वे प्रस्थान के लिए धीरे से उठे। वे भिन्न-भिन्न भाषाएँ बोल सकते थे। मेरी मातृभाषा मराठी है। इसलिए कभी-कभी वे मेरे साथ मराठी में भी बात करते थे।

इस प्रकार मेरी बहुत कम किन्तु अति सुन्दर, मधुर स्मृतियाँ हैं जो सर्वदा प्रेरक हैं।

मैंने एक सन्देश प्रेषित किया था, जिसमें मैंने कहा था, **"स्वामी जी महात्माओं की उस कक्षा के हैं जिनके दर्शन से और जिनका सत्संग होने से व्यक्ति को ईश्वर के अस्तित्व में विश्वास हो जायेगा तथा तपोमय सन्त सदृश जीवन की सम्भावना का प्रमाण मिल जायेगा।"** नास्तिकों के तथा आध्यात्मिक जीवन के अननुभूत लोगों के मन में सदैव एक प्रश्न रहता है-और वह प्रश्न है कि ये महात्मा लोग क्या करते हैं? समाज तथा राष्ट्र में वे कौन सी भूमिका निभाते हैं? उनका कार्य क्या है? कारण, अनेक लोग मानते हैं कि वे तो कुछ भी कर्म न करके वहाँ मात्र बैठे रहते हैं। किन्तु जो महात्माओं के सम्पर्क में आये हैं, केवल वे ही जानते हैं कि वे क्या हैं! सबसे मुख्य और महत्त्वपूर्ण कार्य जो वे करते हैं, वह यह है कि वे हमें गहन अज्ञान-निद्रा से जाग्रत करते हैं। अपनी आत्मा के विषय में हम गाढ़ निद्रा में रहते हैं। अन्य हर एक विषय में हमारा ज्ञान अत्यधिक है, परन्तु स्व-विषयक (आत्मा-विषयक) हम कुछ भी नहीं जानते। इसी कारण सर्वप्रथम जो कार्य वे करते हैं, वह है-हमें जाग्रति का आह्वान देते हैं। वही सत्य उपनिषद् कहते हैं-

"उत्तिष्ठत जाग्रत प्राप्य वरान्निबोधत ।"

(कठोपनिषद् ३-१-१४)

(अरे अविद्याग्रस्त लोगो! उठो, (अज्ञान-निद्रा से) अनुशासन जागो और श्रेष्ठ पुरुषों के समीप जा कर ज्ञान प्राप्त करो।

वे कहते हैं- उठो और जागो... वही सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण कार्य है जो वे करते हैं।

कभी-कभी कोई हमें जगाता है तो उसके पश्चात् हम नहीं जानते कि हमें आगे क्या करना है। वे हमें न तो मात्र जगाते हैं किन्तु मार्ग भी दिखाते हैं। वही दूसरा कार्य है जो वे करते हैं और उस ध्येय-प्राप्ति पर्यन्त हमारा पथदर्शन करते हैं। यह हमारा परम सौभाग्य है कि दीर्घकाल पर्यन्त यदि हमारे गुरु का सान्निध्य हमें प्राप्त हुआ हो तो वह एक अद्‌भुत बात है कि वे हमें ध्येय-प्राप्ति पर्यन्त पहुँचाते हैं। जो अन्य महत्त्वपूर्ण कार्य वे करते हैं वह यह है कि भगवन्नाम जपने की तथा ईश्वर के प्रति प्रेमभाव रखने की उत्कृष्ट तृषा हमारे मन में उद्दीप्त करते हैं। एक स्थान पर सन्त सूरदास जी कहते हैं-

"सूरदास जाइये बलि ताके,
जो हरिजूं सीं प्रीति बढ़ावै।"

जो हमारी प्रभु से प्रीति को बढ़ाये उसके हम बलिहारी जाएँ अर्थात्

वे कहते हैं आप उस व्यक्ति महात्मा के चरणों में अपना जीवन समर्पित कीजिए जो आपके हृदय में ईश्वर-प्रीति उद्दीप्त करते हैं।

याद रखना, ईश्वर-प्रेम बिना हमारा सम्पूर्ण जीवन शुष्क है। जिस प्रकार भिन्न-भिन्न ऋतुएँ हैं किन्तु यदि वर्षा न हो तो अकाल पड़ेगा, सब स्थानों पर शुष्कता होगी।
गोस्वामी तुलसीदास कहते हैं-ईश्वर-भक्ति वर्षा-ऋतु समान है-

"वर्षा रितु रघुपति भगति तुलसी सालि सुदास
राम नाम बर बरन जुग सावन भादव मास ।।"

-मानस बा. का. दो. १९

रामभक्ति वर्षा ऋतु है, तुलसीदास जी कहते हैं कि उत्तम सेवक गण धान हैं तथा 'राम' नाम के दो सुन्दर अक्षर 'रा' और 'म' (वर्षा ऋतु) सावन-भादो के दो महीने हैं।

भावार्थ यह है कि जब हम राम-नाम गाते हैं और उसका जप करते हैं तब राम-भक्ति का हमारे हृदय में उद्भव होता है और वह भक्ति ही केवल हमें भक्त बनाती है। यही कार्य है जो महात्मा करते हैं।

महात्मा का कार्य केवल वही है- यह प्रेम उत्पन्न करना, इस ज्ञान की शिक्षा देना और यह बात उपनिषदों में भी निर्दिष्ट की गयी है। इन महात्माओं के विषय में उपनिषद् कहता है-

"यं यं लोकं मनसा संविभाति
विशुद्धसत्त्वः कामयते यांश्च कामान् ।
तं तं लोकं जयते तांश्च कामां-
स्तस्मादात्मज्ञं हार्चयेद् भूतिकामः ।।"

(मुण्डकोपनिषद्: ३-१-१०)

"वह विशुद्धचित्त आत्मवेत्ता मन में जिस-जिस लोक की भावना करता है और जिन-जिन भोगों को चाहता है वह उसी-उसी लोक और उन्हीं उन्हीं भोगों को प्राप्त कर लेता है। इसलिए ऐश्वर्य की इच्छा करने वाला पुरुष आत्मज्ञानी की पूजा करे।"

उनका सामर्थ्य ऐसा है, मन इतना शुचिर्भूत है कि किसी के कल्याण-मंगल हेतु वे जिसकी भी मनोकामना करते हैं, उनका वह संकल्प सत्य होता है। अर्थात् वह साकार होता है। इसी कारण कहते हैं कि कोई भी इस संसार में किसी भी प्रकार की सुख-समृद्धि का इच्छुक है तो उसे साक्षात्कारी व्यक्ति की उपासना करनी आवश्यक है। मानो कि कोई कहता है कि मुझे भौतिक समृद्धि नहीं चाहिए तब वह कहता है कि आध्यात्मिक आत्मप्रकाश-प्रज्ञा हेतु भी महात्मा की उपासना करनी चाहिए। उभय हेतु महात्मा को ही भजना चाहिए।

एक और बात, उपनिषद् में कोई एक मन्त्र है जिसमें कहा गया है-इस आत्मा को आप वेद अध्ययन द्वारा और प्रवचन इत्यादि द्वारा नहीं जान सकते।

"यमेवैष वृणुते तेन लभ्य..."

(कठोपनिषद् : १-२-२३)

"यह (साधक) जिस (आत्मा) का वरण करता है, उस (आत्मा) से ही यह प्राप्त किया जा सकता है।"

यह आत्मा उसी के द्वारा प्राप्त हो सकता है जो इस आत्मा की प्राप्ति के लिए इच्छुक है, आत्मा का सम्पूर्ण वरण करता है-उसकी प्राप्ति हेतु प्रार्थना करता है। इसलिए उत्तरदायित्व साधक के कन्धों पर रखा जाता है। किन्तु अन्य अर्थघटन भी है-उसको (जिस साधक को) ईश्वर चयनित करता है, वह व्यक्ति यह परम सत्य जान सकता है। यद्यपि यह मन्त्र मुण्डकोपनिषद् में भी है, जो आत्मसाक्षात्कारी महात्माओं की महत्ता के सन्दर्भ में है। इस कारण तीसरा अर्थघटन भी है। मात्र आत्मसाक्षात्कारी व्यक्ति और गुरु जब शिष्य का चयन करता है तब वह व्यक्ति आत्मानुभूति करता है। इसलिए सभी तीनों अर्थघटन अद्‌भुत हैं।

"यमेवैष वृणुते तेन लभ्यः
तस्यैष आत्मा विवृणुते तनुं स्वाम् ।।"

(कठोपनिषद् : १-२-२३)

ये सब केवल उसी सन्दर्भ में कह रहा हूँ कि मैं स्वामी चिदानन्द जी महाराज जैसे महात्माओं को किस दृष्टिकोण से देखता हूँ। वे महात्माओं के उस वर्ग अथवा श्रेणी में हैं, जिनका कार्य अति अद्‌भुत है और इस कार्य के लिए हम सदैव उनके ऋणी रहेंगे।

हम सन्त-संन्यासी-महात्मा की महासमाधि के अवसर पर 'मृत्यु' शब्द का कदापि प्रयोग नहीं करते, सच है न? कारण वे सदैव ब्रह्मस्वरूप हैं-वह शरीर में भी रहते हैं और महासमाधि के पश्चात् भी रहते हैं। उपनिषद् में इस तरह वर्णित किया गया है कि-

"गताः कलाः पंचदश प्रतिष्ठा

देवाश्च सर्वे प्रतिदेवतासु ।
कर्माणि विज्ञानमयश्च आत्मा
परेऽव्यये सर्व एकीभवन्ति ।।"

(मुण्डकोपनिषद् : ३-२-७)

"(प्राणादि) पन्द्रह कलाएँ (देहारम्भक तत्त्व) अपने आश्रयों में स्थित हो जाती हैं, (चक्षु आदि इन्द्रियों के अधिष्ठाता) समस्त देव गण अपने प्रतिदेवता (इत्यादि) में लीन हो जाते हैं तथा उसके (संचितादि) कर्म और विज्ञानमय आत्मा आदि सबके सब पर, अव्यय देव में एकीभाव को प्राप्त हो जाते हैं।"

एक ही परमात्मा है जिनसे नाम-रूप युक्त सम्पूर्ण विश्व का उद्भव हुआ है और वह सम्पूर्ण विश्व षोडश कलाओं से निर्दिष्ट है जैसे:-प्राण, पंच महाभूत तत्त्व इन्द्रिय, शरीर, अन्न आदि-आदि। अब वे कहते हैं जब आत्मानुभूत व्यक्ति इस देह का त्याग करता है-जिसे महासमाधि कहते हैं, तब क्या घटित होता है? जहाँ तक उस व्यक्ति का सम्बन्ध है, उसकी सब कलाएँ और संचितादि कर्म इत्यादि परमात्मा में विलीन हो जाते हैं। किन्तु अब, देखो, एक उपनिषद् कहता है कि कलाएँ सोलह है किन्तु मुण्डकोपनिषद् में कहा गया है-

"गताः कलाः पंचदश...'

पन्द्रह कलाएँ हैं। पन्द्रह कलाएँ परमात्मा में विलीन होती हैं। यहाँ प्रश्न उठता है कि सोलहवीं कला का क्या होता है? वह सोलहवीं कला, 'नाम' है-नाम का क्या होता है अर्थात् वह सोलहवी कला-नाम-संसार में रहता है। अन्य सब विलीन हो सकती है किन्तु एक कला यहाँ संसार में रहती है और उसे नाम' कहते हैं- 'नाम'। आप जानते हैं कि भक्तिशास्त्र में कहा जाता है- "प्रभु से बड़ा प्रभु का नाम!" महात्मा का नाम स्वयं से भी महत्तम होता है और वह नाम यहाँ रहता है। वह नाम प्रेरणा देता है। वह नाम पावनकारी है। वह नाम प्रेरक, प्रोत्साहक है। वे सब, जो इस ज्ञान के सच्चे-यथार्थ- साधक हैं, वे इस नाम के सामर्थ्य पर परमोच्च शिखर प्राप्त करते हैं।

इस कारण, इन सब महापुरुषों का जीवन अत्यधिक विशिष्ट है। उनका जीवन अनूठा होता है। एक जगह मैंने पढ़ा था कि कोई एक व्यक्ति परमेश्वर को मिला। ईश्वर के साथ मिलन कैसे होता है, यह जानने के लिए मैं उस व्यक्ति को मिलना चाहता हूँ। जो भी हो, किसी भी प्रकार, वह प्रभु को मिला और उसने ईश्वर को कुछ प्रश्न किये। एक प्रश्न था, "मानव जाति में कौन सी बात सर्वाधिक विस्मयजनक है?" फिर उस व्यक्ति ने प्रभु से पूछा, "हे प्रभु, ये मानव कुछ विचित्र हैं। मुझे कोतूहल होता है। उनकी कौन सी बात आपको आश्चर्यनजक लगती है?" वे (प्रभु) कहते हैं, "अनेक बातें मुझे विस्मयपूर्ण लगती है किन्तु एक बात यह है कि लोग जब इस जगत् में रहते हैं तब वे इस प्रकार जीवन व्यतीत करते हैं, जैसे उनकी मृत्यु कदापि नहीं होगी और जब उनकी मृत्यु होती है, वे इस प्रकार मृत्युशरण होते हैं जैसे वे कभी जीवन्त नहीं थे। मानव विषयक यही बात मुझे आश्चर्यपूर्ण लगती है।"

उनका जीवन अर्थहीन होता है, उनकी मृत्यु भी अर्थहीन होती है। परन्तु प्रज्ञावान् लोगों के जीवन अति प्रशंसनीय, अद्भुत होते हैं। एकदा, हमारे स्वामी जी ने कहा- "यदि आपका जन्म

हुआ है तो आपकी मृत्यु अवश्यम्भावी है। किन्तु जीवनावधि में कभी भी मरना नहीं परन्तु अपनी मृत्यु पश्चात् भी जीवन्त रहो।" मृत्यु पश्चात् भी आप जीवित रहते हो।" इसी कारण यह कहा गया है–

"यस्मिन् जीवति जीवन्ति बहवः सोऽत्र जीवति।"

केवल उसी व्यक्ति का जीवन सार्थक है जिसका जीवन लाखों लोगों के लिए प्रेरणास्रोत बनता है। आप त्याग और सेवामय जीवन व्यतीत करो। सब महात्मा इसी प्रकार के हैं। वे अति सुन्दर ढंग से जीवन व्यतीत करते हैं। उनका जीवन सार्थक होता है और वे अन्य को प्रेरित करते हैं। वे दूसरों को जीवन अर्थपूर्ण एवं सफलतापूर्वक व्यतीत करने की प्रेरणा देते हैं। जब हम इस संसार से विदा होंगे तब सार्थकता तथा सुख-सन्तोष से प्रयाण करेंगे। परिपूर्णता की, सन्तुष्टि की भावना से प्रयाण करेंगे। वही और उसी प्रकार का जीवन महात्माओं का होता है। और सभी महात्मा चाहे दुनिया में किसी भी स्थान में हों, वे हमारे पूर्ण आदर-सम्मान और आराधना के अधिकारी हैं। मैं उन सबको नमन करता हूँ। जैसे कि भगवान् शंकराचार्य जी ने कहा है-

या इमे गुरु विपूर्वम् परावाक्यम् प्रमाणतः,
व्याख्याता सर्व वेदान्तः तान्नित्यम् प्रणतोस्म्याहम्।

(आदि शंकराचार्य)

"मैं उन सब महान् गुरुओं-जिन्होंने आत्मज्ञान प्राण किया है तथा उसकी विशद व्याख्या करके उसे प्रतिपादित किया है उन्हें नित्य प्रणाम करता हूँ।"

मैं वही बात यहाँ कह रहा हूँ। परम पूज्य स्वामी शिवानन्द जी महाराज तथा जिन्होंने हाल ही में महासमाधि ली है ऐसे हमारे स्वामी चिदानन्द जी महाराज को मेरी अतिशय सम्मानपूर्वक श्रद्धांजलि। आप सब, जिन्होंने अपने मध्य होने का यह अवसर दिया उन सबका पुनः पुनः आभार मानता हूँ। इन शब्दों के साथ में अपने संक्षिप्त प्रवचन का समापन करता हूँ। प्रभु इससे प्रसन्न हों, सन्तुष्ट हों!

हरिः ॐ।

परमाध्यक्ष
चिन्मय मिशन, उत्तरकाशी
(उत्तराखण्ड)

'साधुनां दर्शनं पुण्यम्'

- महामण्डलेश्वर राजगुरु स्वामी विशोकानन्द भारती जी महाराज

सर्व प्रथम मैं यह उद्‌गार लिखे बिना आरम्भ नहीं कर सकता कि परम श्रद्धेय स्वामी चिदानन्द जी महाराज पूज्यपाद स्वामी शिवानन्द जी महाराज की विभूतियों में से प्रथम विभूति थे। यह इन वचनों से स्पष्ट होता है कि-

"चिदानन्द चिदानन्द चिदानन्द हूँ।"

-स्वामी शिवानन्द

यही संन्यास एवं वेदान्त का प्रतिपादित विषय है। स्वामी शिवानन्द जी महाराज द्वारा संकल्पित तथा संस्कारित दिव्य शब्द बहिरंग अन्तरंग साधनों सहित साध्य के सार को अपने में समाहित किया हुआ है। दिव्य शब्द के सार के साथ अवतरण हुआ है चिदानन्द शब्द का। यह शब्द ब्रह्म स्वरूप, ब्रह्म के साथ अभिन्न है। 'बान्धवाः शिव भक्ताश्च' के सिद्धान्त के अनुसार भौतिक शरीर से हमारा मिलन वर्तमान में हुआ है परन्तु कृतोपासका के सिद्धान्त के अनुसार इस गुरु परम्परा में हम अनेक जन्मों से गुरु चरणों में आश्रय प्राप्त कर दिव्य जीवन की यात्रा करते आ रहे हैं।" "**अनेकजन्म- संसिद्धस्ततो याति परां गतिम्।**' के अनुसार गुरुपरिवार का भी जन्मान्तरीय सम्बन्ध होता है।

सन् १९९४ में जब पुष्पा माता जी से स्वामी जी के बीकानेर आगमन के समाचार मिले तो 'साधुनां दर्शनं पुण्यम्' की अपेक्षा से मैंने बीकानेर से बाहर जाना स्थगित किया। पूज्यपाद स्वामी शिवानन्द जी महाराज का मिलनसार स्वभाव मुझे स्मरण था। स्वामी चिदानन्द जी महाराज से मुझे आशा थी कि पूज्य स्वामी शिवानन्द जी के ज्ञान के समान हो उनका ज्ञान और साधना होगी। वेदान्त सिद्धान्त भी कहता है कि शिष्य गुरु स्वरूप को ही प्राप्त कर लेता है। श्री राम भगवान् भी कहते हैं कि

मम दरसन फल परम अनूपा।
जीव पाव निज सहज स्वरूपा ।।

(अरण्यकाण्ड ३५ दो. ५ चौ. रा. च. मा.)

वेदान्त ग्रन्थों में भी कहा गया है कि कर्म, भक्ति और ज्ञान की प्रतीक गंगा-गंगासागर में मिलने के बाद प्रतिरूप हो जाती है। उसी तरह स्वामी चिदानन्द जी महाराज भी शिवानन्द स्वरूप ही हो चुके थे।

परम श्रद्धेय स्वामी चिदानन्द जी के बीकानेर आगमन से बीकानेर का सत्संगी समाज एवं सन्त समाज मुखर हो उठा। इससे भी अधिक स्वामी शिवानन्द जी महाराज के शिव संकल्प को बीकानेर में पुष्पित पल्लवित करने में मेरे गुरुदेव स्वामी सोमेश्वरानन्द जी महाराज का सहयोग सम्मिलित रहा है। उन्हीं के कर कमलों से बीकानेर दिव्य जीवन संघ का शुभारम्भ १९६२ में हुआ। बीकानेर वासियों के कल्याण के लिए इस कार्य में श्रद्धेय माता जी स्वर्णलता अग्रवाल (ब्रह्मलीन विष्णुशरणानन्द माता जी) का भी भगीरथ सहयोग रहा। मेरे पूज्यपाद गुरुदेव के इस शिव संकल्प के प्रति मैं अपना कर्तव्य आजीवन पालन करता रहूँगा। स्वामी चिदानन्द जी में पूर्व और पश्चिम का सन्तुलित समन्वय देख कर मुझे प्रेरणा मिली। श्री धनीनाथ पंच मन्दिर, बीकानेर परिसर में २४-३-९४ के दिन जब स्वामी जी महाराज ने प्रवचन से पूर्व संकीर्तन किया तो मैं उनकी निष्ठा का परिचय पा गया। "जिस हाल में जिस देश में जिस वेश में रहो, राधा-रमण राधा-रमण राधा-रमण कहो!" प्रकाण्ड पण्डित तथा विदेशों की यात्रा किये हुए स्वामी जी की मौलिकता का इसी कीर्तन से पूर्ण परिचय हो गया। स्वामी जी की सहजता और सरलता से प्रवचन में सनातन धर्म की परम्परा स्पष्ट झलकती थी। बीकानेर के विभिन्न धार्मिक स्थानों पर स्वामी जी के वचनामृत से लाभान्वित होने का श्रेय गंगा सदृश पवित्र हमारी साध्वी बहिन पुष्पा जी को जाता है। "**योजकः तत्र दुर्लभः**" सदैव छाया की तरह पुष्पा बहन जी का अनुसरण करने वाली साध्वी वंदना बहिन की सेवा भी स्वामी जी के प्रसाद को प्रसारित करने में प्रेरणा देने वाली रही है।

"**वन्दे गुरु परम्पराम्**" इस सिद्धान्त के प्रबल उपासक और समर्थक स्वामी जी ने अपनी साधुता से तथा निर्मल प्रेम से हमारा मन आकर्षित किया। महान् सन्त कल्पवृक्ष के समान होता है। गीता में भगवान् ने परम्परा का ध्यान रखने का आग्रह किया है- "**एवं परम्पराप्राप्तमिमं राजर्षयो विदुः।**" (गीता :४-२) कर्म उपासना और ज्ञान के विषय में भारतीयों को कुछ अलग से सोचने, समझने और करने की आवश्यकता नहीं है। आवश्यकता है तो कुछ मानने की। हम जान बहुत लेते हैं, लेकिन हम मानने में पिछड़ जाते हैं। कुछ लोग अपनी बुद्धि का व्यायाम करते हुए कहते फिरते हैं कि नया ज्ञान नयी क्रान्ति। भगवान् श्री कृष्ण गीता में कहते कि "**स एवायं मया तेऽद्य योगः प्रोक्तः पुरातनः ।**" (गीता : ४-३) कृतज्ञता के साथ परम्परा को तथा सत्य को स्वीकार करने वाला ही सही संन्यासी होता है। पूज्यपाद करपात्री जी महाराज कहा करते थे कि वैदिक सनातन धर्म के अनुसार वर्णाश्रम निष्ठा से स्वयं का तथा दूसरों का कल्याण करना चाहिए।

पूरा प्रयत्न करना चाहिए लोगों को सनातन धर्म से जोड़ने का, यदि ऐसा होवे नहीं तो अवैदिक व्यक्तिवाद और व्यक्तिपूजा के प्रवाह में बहने से स्वयं को बचाना चाहिए।

पूज्यपाद शिवानन्द जी महाराज की परम्परा की यह विशेषता रही है कि आपने साधकों को सनातन धर्म में समाहित करते हुए पाश्चात्य साधकों को सनातन धर्म में ज्ञान एवं विज्ञान के द्वारा समाहित किया।

स्वामी चिदानन्द जी महाराज के बीकानेर सत्संग का सर्वाधिक व्यावहारिक और पारमार्थिक लाभ मुझे हुआ है यह मैं सहज स्वीकार करता हूँ। एक बार मैंने एक भिखारी को कहते सुना कि "तू दस पैसा देगा तो वह दस लाख देगा।" यही घटना हमारे साथ भी हुई। हमने स्वामी जी के लिए किया और सुना थोड़ा, लेकिन स्वामी जी ने सदैव के लिए हमें अपने प्रेम में समाहित कर लिया और जो दिया वह अनन्त ।

जयपुर शाखा द्वारा बसही में आयोजित योग शिविर श्रद्धेय स्वामी चिदानन्द जी के सान्निध्य में तथा मेरी अध्यक्षता में सम्पन्न हुआ। जिस प्रकार गंगा, गौमुख से गंगासागर तक अधिक विस्तार एवं सार सहित सार्थक है उसी प्रकार स्वामी जी का सत्संग बीकानेर से ब्रह्मसागर तक हमारे लिए सार्थक हुआ है। जयपुर शाखा से स्वामी जी ने अपने अपरोक्ष संकल्प से मुझे सदा के लिए जोड़ दिया था। सम्पूर्ण शिवानन्द मिशन के दरवाजे अनन्त की प्राप्ति के लिए खोल दिये। जयपुर शाखा के द्वारा आयोजित मेरा चातुर्मास मुझे जयपुर में एक आश्रम प्राप्त करा गया। जयपुर में अलग से आश्रम बनाने की इच्छा को जयपुर शाखा के साधकों की सेवा ने विराम दे दिया। यद्यपि में समय अभाव के कारण मिशन को समय नहीं दे पाता हूँ तथापि मुझे साधकों से और सन्तों से जो सम्मान और प्रेम मिला और मिलता है वह श्रद्धेय स्वामी चिदानन्द जी का कृपा प्रसाद ही है। वैसे ऐसे महान् आत्माओं की कृपा प्राप्त करने के लिए सम्मान एवं अपमान का विचार नहीं होना चाहिए। बीकानेर शाखा को बीकानेर के श्रद्धालुओं के सहयोग से पुष्पित पल्लवित करने के पुरुषार्थ में संलग्न पुष्पाबहिन ने जब यदा कदा अपने श्रद्धा सुमन श्रद्धेय महाराजश्री तक पहुँचाने की सेवा मुझे सौंपी तो मुझे अपने पुण्यपाक का फल अनुभव होते महसूस हुआ।

पूज्यपाद स्वामी शिवानन्द जी महाराज ने दिव्य जीवन के लिए दिव्य दृष्टिदान का अभियान सम्पूर्ण विश्व में चलाया। श्री भगवान् कृष्ण ने इस दान की ही परम्परा का गीता में विशेष उल्लेख किया है- "**दिव्यं ददामि ते चक्षुः पश्य में योगमैश्वरम्।**" (गीता ११-८) दिव्य जीवन संघ की

योजना में भी पूज्यपाद स्वामी शिवानन्द जी महाराज का यह सत्य संकल्प चिदानन्द की प्राप्ति के लिए निदिध्यासन के रूप में सार्थक है। स्वामी चिदानन्द जी महाराज ने तुलसीदास जी की भावना को सार्थक करते हुए साध्य स्वरूप स्वामी शिवानन्द दिव्यानन्द की प्राप्ति के लिए, सफल अनुष्ठान का फल अपने साधकों के लिए सार्वजनिक किया।

श्रीगुरु पद नख मनि गन जोती।
सुमिरत दिव्य दृष्टि हियें होती ।।
(रामचरितमानस, बा.का. दो. नं. ५ की ची, नं.३)

दिव्य जीवन संघ के इस दिव्य अनुष्ठान में हमारे जीवर का समय सफल हो यह भावना सदैव बनी रहे। गत सितम्बा ०८ में वर्तमान अध्यक्ष श्रद्धेय स्वामी श्री विमलानन्द जी को शाल ओढ़ाने पर मुझे गौरव का अनुभव हुआ। श्रद्धेय स्वामी चिदानन्द जी के निवास का दर्शन कर दृष्टि पवित्र हुई। गुस्टेव का निवास सदैव के लिए साधना कक्ष के रूप में निश्चित करना यह भावना दिव्य जीवन संघ की गुरुगरिमा और गुरुभक्ति की प्रतीक है। दिव्य जीवन के माध्यम से पार्वती जी की तरह जय सच्चिदानन्द जगपावन का अनुसन्धान करते हुए, हम विमलानन्द में जीवन मुक्ति का आनन्द प्राप्त करते हुए दिव्य जीवन की यात्रा पूरी करें, इसी शिवसंकल्प के साथ आत्मीयजनों के प्रति आभार।

"सह नौ यशः सह नौ ब्रह्मवर्चसम्"

श्रद्धांजलि सहित!

आचार्य महामण्डलेश्वर राजगुरु
धरनीधर पंच मन्दिर, बीकानेर

दिव्य स्मृति

-श्री स्वामी संवित् सोमगिरि जी महाराज -

"ब्रह्मविद् ब्रह्मैव भवति" ब्रह्म को जानने वाला ब्रह्म ही हो जाता है।

"न तस्य प्राणा उत्क्रामन्ते" - ब्रह्मवित् जीवन्मुक्त महापुरुषों के प्राणों का उत्क्रमण नहीं होता। प्रारब्ध समाप्त होते ही उनका सूक्ष्म शरीर स्थूल शरीर से अलग हो कर शब्दादि पंच-तन्मात्राओं में सदा के लिए विलीन हो जाता है।

भारतीय संस्कृति में ऐसे ही ब्रह्मज्ञानियों की अटूर परम्परा रही है। इसी अद्वैत गुरु-परम्परा में शिवावतार रूप से जगद्गुरु आचार्य श्री शंकर का आविर्भाव हुआ। उन्होंने वैदिक धर्म एवं संस्कृति का उद्धार कर उन्हें नूतन ओज प्रदान किया। उनके द्वारा प्रवर्तित परमहंस संन्यासियों की परम्परा में थे-परम गुरु ब्रह्मलीन श्रीमत् स्वामी शिवानन्द सरस्वती जी महाराज। आपश्री ने संन्यास परम्परा को एक नब समृद्धि प्रदान करते हुए- 'दिव्य जीवन संघ की संस्थापना की। परमगुरु

महाराज जी ने समाज, राष्ट्र व मानवता की सर्वविध सेवा करते हुए जन-जन को ज्ञानामृत का पान करवाया। पूज्य महाराजश्री की 'योगासन और ब्रह्मचर्य' विषयक पुस्तक ने आज से लगभग ५५ वर्ष पूर्व मेरे किशोर चित्त में अनि-बीज का वपन किया। दिव्य जीवन संघ द्वारा प्रकाशित अन्य पुस्तकों को पढ़ कर परिष्कृत हो रहे मेरे युवा-मन को एक दृढ़ सम्बल उस समय मिला जब मुझे पता लगा कि जोधपुर इंजीनियर कॉलेज के प्राचार्य प्रोफेसर गर्ड भी पूज्य महाराजश्री के अनन्य भक्त और शिष्य थे ।

१९७१ में मेरे संन्यास लेने के पश्चात् १९८६ के हरिद्वार कुम्भ मेले में मुझे प्रथम बार पूज्य महाराजश्री के सद्दशिष्य, दिव्य जीवन संघ के परमाध्यक्ष पूज्य श्री चिदानन्द जी महाराज के प्रवचन सुनने का सौभाग्य प्राप्त हुआ। उनके दर्शन और प्रवचन में बरसते ज्ञानामृत से आत्मा गहराई तक सिंचित और आलोकित हुई। "यस्य देवे पराभक्तिः यथा देवे तथा गुरीः" (श्वेताश्वतर उपनिषद्: ६-२३) इस उक्ति के वे जीवन्त रूप थे। उनकी कृश देह-यष्टि में समष्टि सिमट-सिमट कर फिर नव-नव क्षितिजों तक आलोक विकीर्ण करती हुई फैलती थी। उनकी मृदुल वात्सल्यमयी मुस्कान में मानो माँ, नानी, दादी, भारती व ब्रह्मस्वरूपिणी जगदम्बा की मुस्कान झलकती थी। उनके उज्ज्वल नयनों से करुणामय आलोक निरन्तर बरसता रहता था।

सन् १९९४ में बीकानेर के दिव्य जीवन संघ शाखा में पूज्य श्री का कार्यक्रम था। मैं भी उस कार्यक्रम में आमन्त्रित था। मैंने सभा-कक्ष में प्रवेश किया। पूज्य श्री मंच पर विराजित थे। ज्यों ही मैं मंच पर चढ़ा पूज्यश्री ने बैठे-बैठे ही भूमि तक स्वयं को झुका कर मुझे प्रणाम किया। मैंने अविलम्ब वहीं दण्डवत् प्रणाम करते हुए कहा- आपने यह क्या किया! प्रणाम तो हमें करना है। वे आशीर्वादात्मक मुद्रा में किंचित मुस्करा दिये।

कार्यक्रम के पश्चात् पूज्य श्री कार मैं बैठ कर रवाना हो रहे थे। मैंने उनका चरणस्पर्श किया। पूज्य श्री ने कहा- "प्रभु की बड़ी कृपा है "यह सुनकर मैं आलोकित एवं आनन्दित हुआ। मैंने उन्हें बीकानेर में मानव प्रबोधन प्रन्यास आश्श्रम एवं लालेश्वर महादेव मन्दिर, शिव बाड़ी में पधारने की प्रार्थना की। मेरी प्रार्थना को स्वीकारते हुए वे श्री लालेश्वर महादेव मन्दिर शिवबाड़ी बीकानेर भी पधारे। गर्भगृह प्रवेश से पूर्व नन्दी के पास उन्होंने महादेव को दण्डवत प्रणाम किया और फिर अन्दर प्रविष्ट हो कर भावाविष्ट हो कर भगवान् का पूजन किया। इस दिव्य दृश्य को देख कर मैं व अन्य साधक तथा भक्तगण अभिभूत हो गये।

पूज्य श्री का एक बार बीकानेर आगमन हुआ। मैं स्वागतार्थ स्टेशन पर गया। एक भक्त ने उन्हें मिठाई का डिब्बा दिया। उन्होंने डिब्बा खोला और खड़े-खड़े आकाश की ओर उन्मुख हो कर ग्रास मुद्रा द्वारा भगवान् को भोग लगाने लगे इसे देख कर मैं आश्चर्य चकित हुआ और मानस में कौंध गया गीता का यह श्लोक :

"वासुदेवः सर्वमिति स महात्मा सुदुर्लभः"

(गीता : ७-१९)

पूज्य श्री एक बार दक्षिण भारत में प्रवचन कर रहे थे। प्रवचन पूर्व आपने ॐ का उच्चारण किया। वातावरण गम्भीर हो गया तथा आस-पास के वृक्षों से ॐ का नाम निकलते सुनाई देने लगा।

वह दिव्य ज्योति गुरु ज्योति में लीन हुई।

ऐसे सद्गुरु को, सद्विष्य को, गुरु परम्परा को, भगवान् श्री दक्षिणामूर्ति को कोटि-कोटि नमन है।

मानव प्रबोधन प्रन्यास आश्रम
लालेश्वर महादेव मन्दिर, शिवबाड़ी
बीकानेर (राजस्थान)

मन्त्र-ग्रहण की क्रिया अत्यन्त पवित्र कार्य है। इसे मन बहलाव का साधन नहीं मानना चाहिए। दूसरों की देखा-देखी दीक्षा लेना उचित नहीं है। अपना मन स्थिर चाहिए। तथा निश्चय दृढ़ करने के पश्चात् ही गुरु की शरण में जाना

-स्वामी चिदानन्द

चिदानन्द मंगलम्

-श्री स्वामी भक्तिप्रियानन्द माता जी -

चिदानन्दसद्गुरु सर्वाधिक प्रिय क्या मेरे ही?
नहीं, नहीं, वे तो प्रियतम भक्तमात्र के।

केवल चित्रदर्शन से पहचाने मैंने सद्गुरु?
नहीं, नहीं, जन्मोजन्म से अपनायें आपको, हे सद्गुरु!

तस्वीरमात्र में ही आप बसे थे हे, गुरो?
नहीं, नहीं, तत्क्षण हृदय और आत्मा में आपने सदैव वास किया, हे गुरो।

दर्शन के पूर्व ही क्या यह हाल था मेरा?
नहीं, नहीं, प्रत्यक्ष दर्शन से गुरुभक्ति की स्वर्णमुहर-प्राप्ता हुई मैं।

आपके दिव्यातिदिव्य प्रथम दर्शन से ही मैं तृप्त हुई क्या?
नहीं, नहीं, आपके श्रीविग्रह की अधिकाधिक दर्शनतृषार्ता हुई मैं।

वर्ष उन्नीस सौ अस्सी में, पावन स्कन्दषष्ठी को,
मेरी मन्त्रदीक्षा में भवदीय चरणस्पर्श सम्भव था क्या?

नहीं, नहीं, काषायवस्त्रावृत्त आपके नखाग्र भी दृश्यमान न थे।
तथापि, मेरे समान अपात्र, दीन को क्या निराश किया आपने?
नहीं, नहीं, अपार करुणा से आपकी पावन गोद में मस्तक रखने दिया आपने हे कृपानिधे।

तदा, मैं पुलकिता, उल्लासिता मात्र हुई क्या, हे प्रभो ?
नहीं, नहीं, पूर्णतया शरणागता और चिर-आश्वासिता हुई मैं, हे विभो।

अखण्ड नाम-स्मरण, साधनालीनता, ब्रह्मनिष्ठा,
दैवी सम्पद् का आपके सुदृढ़ उपदेश का पालन किया क्या मैंने?
नहीं, नहीं, यत्नतः भी अति अल्प प्रयासी बन पायी मैं, हे नाथा !

मेरी निष्फलता का क्या तिरस्कार किया आपने, दीनानाथा?
नहीं, नहीं, धैर्य दे कर साधनारत और आशावादी रखी, हे क्षमाभूषण!

गुरुदेवरचित विश्वप्रार्थना-पठन में, आप ही मेरे लक्ष्य,
प्रभु हैं, अज्ञात था क्या आपसे?
नहीं, नहीं, मृदुता से, स्वयं की अपेक्षा गुरुदेव को केन्द्रित करने का
अंगुलिनिर्देश किया आपने!

आपकी भौतिक अविद्यमानता से मैं तथा अगणित
भक्तगण विचलित हैं क्या, हे ईश्वर?
नहीं, नहीं, प्रेम-भक्ति-निष्ठा-समर्पण-श्वास-प्राणरूप आपकी
प्रतिक्षण विद्यमानता सेहम अविचलित हैं, हे परमेश्वर।

आप केवल देव, देवाधिदेव, महादेव, ईष्टदेव, उपास्य,
ध्येय हो क्या, हे युगपुरुष?
नहीं, नहीं, आप ही सर्वस्व, नियन्ता, निरंजन, निर्लेप,
गुणांजन, वासुदेव, आदिकारण हो, हे पुरुषोत्तम ।

प्राकट्य, लीला, विसर्जन ही आपका कार्य क्या? नहीं,
नहीं, क्षर-अक्षर, मूर्त-अमूर्त, एक-अनेक रूप का आविष्कार ही आपका कार्य,
हे आदिनारायण।

आपकी अविरत कृपामृतवृष्टि की मैं केवल तृषार्ता और याचिता
हूँ क्या, मम नाथा?
नहीं, नहीं, अद्यपर्यन्त सुप्राप्ति से कृतकृत्य, अधिकाधिक
भक्तिप्रार्थिता और क्षमायाचिता हूँ मैं, हे जगन्नाथा।

गुरुभाव की यह उर्मि ही क्या गुरुभाव-उदधि है, हे देव?

नहीं, नहीं, अन्तरस्थित अपार गुरुभाव-जलधि का यह एक बिन्दु है, देवाधिदेव!

ॐ ॐ ॐ

दिव्य जीवन संघ मुख्यालय, शिवानन्द आश्रम, ऋषिकेश (उत्तराखण्ड)

एक परम प्रिय, अनमोल, पुराना पत्र

-श्री स्वामी आत्मस्वरूपानन्द जी महाराज (बिल स्वामी), सचिव -

लगभग पिछले पचास वर्षों से पूज्य स्वामी चिदानन्द जी महाराज के साथ मेरे सम्बन्धों के समय में, निस्सन्देह बहुत से स्मरणीय सुअवसर हैं। तथापि, उनकी अपेक्षा पूज्य स्वामी जी का एक पत्र आपके सामने रखना चाहूँगा, क्योंकि मेरी किसी भी शब्दाभिव्यक्ति की अपेक्षा उनका यह पत्र उनके बारे में अधिक बता पायेगा। इससे उनकी विनम्रता, उनका गहन आध्यात्मिक ज्ञान तथा आध्यात्मिक साधकों और उनके परिवारों तक के लिए उनका गहरा अपनत्व प्रकट होता है। इससे यह भी स्पष्ट होता है कि हमारी तरह वे भी जानते थे कि कठिन आध्यात्मिक अवधियों में से निकलना कैसा होता है।

यह पत्र १९६२ में, उनके दिव्य जीवन संघ के परमाध्यक्ष पद पर आसीन होने से लगभग एक वर्ष पहले लिखा गया था। प्रथम विश्व यात्रा के पश्चात् उन्होंने गुरुदेव से एक रमता-साधु बन कर केवल भगवान् पर आश्रित हो कर अनिश्चितकालीन अवकाश माँगा था। इसी समय के दौरान यह पत्र लिखा गया था-

'आपको सम्भवतया आश्चर्य हुआ होगा (और फिर आश्चर्य करना भी बन्द कर दिया होगा!) कि इस स्वामी की ओर से दो शब्दों तक का भी पूर्ण मौन क्यों साध लिया गया है। मानवीय व्यवहार के सामान्य स्तर के अनुसार साधारण शब्दों में कहा जाये तो इस 'कठोर मौन' के लिए मुझे आपसे भारी क्षमा याचना करनी चाहिए। कई बातों में मैं बहुत ही विवश हूँ। मुझे स्वयं ही नहीं पता कि वह क्या है जो जिन कामों को मैं एक समय कर लेता हूँ, वही किसी दूसरे समय करने बिल्कुल ही असम्भव हो जाते हैं। जब तक मैं भारत पहुँचा नहीं था, यहाँ तक कि निरन्तर यात्रा के समय में भी, मैं समय निकाल कर आप सब अमरीकी साधक मित्रों से सम्पर्क बनाये रख सका। जैसे ही भारत पहुँचा, सम्पर्क बनाये रखना मेरे लिए एक संघर्ष बन गया और सारे प्रयत्न बेकार सिद्ध हुए।

'मैं २३ जनवरी को आश्रम पहुँच गया था, किन्तु दो मास तक एक भी पत्र को हाथ नहीं लगा सका। अप्रैल में में गुजरात की दिव्य जीवन संघ शाखा के निमन्त्रण पर वहाँ चला गया। मध्य मई तक वहीं के कार्यक्रमों में व्यस्त रहा और १३ मई को दक्षिण भारत की तीर्थयात्रा पर चला गया। उसी दिन से मैंने कुछेक साधकों को बीच-बीच में रुकने वाले स्थानों पर (माँगे हुए टाइप-राइटरों से) पत्र लिखने आरम्भ कर दिये हैं। इसी क्रम में आपकी बारी अब आई है। किन्तु मौन के इस समय में भी मैंने आपको विस्मृत नहीं किया है, बल्कि बहुत बार चिन्तन में और मेरी प्रार्थनाओं में आप मेरे साथ रहे हैं; हाँ, आप, आपका परिवार और आपकी तरह ही परमात्मा की खोज में लगे हुए आपके साथी साधक भी! बारम्बार मैं उस परमात्मा से याचना करता रहा हूँ कि

आपको सदैव 'प्रकाश' में रखें और आपकी अन्तरात्मा की क्षुधा को उनकी कृपा और प्रेम द्वारा प्रत्युत्तर मिले!

'आध्यात्मिक आकांक्षा और खोज से विहीन जीवन भी कोई जीवन है? यह शुष्क, निस्सार और खोखला है। वास्तव में ऐसा जीवन पूरी तरह से अर्थहीन और सारहीन ही है। यह निर्जीव शव की भाँति है। जीवन का बाह्य रूप, घरेलु, सामाजिक तथा अन्य क्रियायें भी हैं किन्तु केवल यह एक ढाँचा मात्र ही हैं। भीतर की आध्यात्मिक प्रगति से रहित यह "ढाँचा" एक ऐसे खाली मकान की भाँति है जिसमें कोई र रहता हो। वास्तव में जीना तो उस परमात्मा की आकांक्षा करना और उसे खोजना है; तथा उस दिव्य सत्ता को, साधना के द्वारा, भक्ति के, सेवा के द्वारा और जीवन के प्रति आध्यात्मिक दृष्टि रखने द्वारा-स्वयं में से प्रकटित करना है।

'मार्च में श्री वासुदेव नारायण जी आश्रम में आये दे और मुझे भी कुछ देर के लिए मिले थे। मैंने उन्हें बताया कि कैसे जब से मैं भारत लौटा हूँ, किसी को भी पत्र नहीं लिख पाया। उन्होंने कहा, "कृपया कम से कम बिल को अवश्य लिख दें। उन्होंने अपने एक पत्र में मुझे आपके इस मौन के बारे में लिखा था, बिल की उपेक्षा न करें। निश्चित रूप से आपको ऐसा उसके साथ नहीं करना चाहिए।" मैंने उन्हें बताया कि उस समय मेरी स्थिति, बल्कि मेरी अवस्था बहुत विचित्र थी और यह भी कहा कि मैं प्रयत्न करूँगा लिखने का। क्या मैं परमात्मा के बालकों की अकारण ही उपेक्षा कर सकता था? उस समय मैंने जो कुछ उनसे कहा था, वह इस समय कर पाया हूँ। भगवान् की इच्छा के आगे हम केवल मस्तक ही झुका सकते हैं। पिछले सप्ताह मैंने श्रीमती कोडा को लिखा है। अभी तक स्वामी विष्णु और स्वामी राधा को भी नहीं लिख सका, न ही आपके मौन्टेवीडियो साथी श्री उलरिच हार्टस्कूह को और न आपके योरपीय साथी, डा. वाल्टर क्लेमेंट को। यह नकारात्मक सूची तो असीम है। मैं अपने लिए ईश्वरेच्छा की प्रतीक्षा में हूँ। आध्यात्मिक जगत् में यह स्थिति कठोरतम में से है। तो भी यह उतनी ही अनिवार्य भी है। जब तक प्रकाश की झलक नहीं दिखाई दे जाती तब तक व्यक्ति को इसमें से गुजरना ही पड़ता है। किन्तु दुःखदायी बात तो यह है कि प्रकाश-दान भी नियन्त्रित सीमित मात्रा में प्राप्त होता है, मात्र केवल एक कदम भर आगे तक देखने के लिए ही। जबकि मानव की धैर्यहीन प्रकृति चाहती है कि एक ही झटके में प्रकाश की पूर्ण प्राप्ति हो जाये जिससे चरम लक्ष्य तक का पूर्ण पथ प्रकाशित हो कर जगमगा उठे! किन्तु 'वह' क्या इसकी चिन्ता करते हैं? 'वह' तो अपने ही ढंग से चलते हैं! अतः व्यक्ति को अन्धकार में ही संघर्ष करना पड़ता है, और अन्धकार ही केवल आगे दिखाई पड़ता है। तो भी (ईश्वर की दया से) व्यक्ति को यह पता होता है उस अन्धेरे में भी वह निश्चित रूप से हैं और वास्तव में अन्धकार भी 'वही' हैं। ऐसा ज्ञात न हो तो अन्धकारपूर्ण यह एक रात्रि व्यतीत करनी भी सम्भव न हो।

'नवम्बर में आपके पास से आते समय जो एक छोटी सी पुरानी पुस्तिका आपके लिए छोड़ कर आया था, उसमें से क्या आपने उन 'फैनलोन के पत्रों' को पढ़ा? उरुगुए के रास्ते में लन्दन से मैंने वह पुस्तिका ली थी और इसे देखते ही मेरे मन में आया था कि मैं यह आपको दूँगा, तभी से इसे साथ-साथ लिये घूमता रहा और जब सामान बहुत अधिक बढ़ना शुरू हो गया तब यह आपको भेज दी।

'मुझे पूर्ण विश्वास है कि आप और आपके सारे परिवार में सब कुशल-मंगल से होंगे, बेवी का स्वास्थ्य और बच्चों की विकास-कालीन समस्याएँ और काम-काज इत्यादि सभी कुछ ठीक

चल रहा होगा। भगवान् आपको सदा सही दिशा दिखाते रहें, और आनन्द, शान्ति और शक्ति प्रदान करें। अब और कुछ मेरे कहने के लिए नहीं है; जो-कुछ कहना था, वह उसी समय सब कह दिया था जब आप मुझे हवाई अड्डे तक गाड़ी में छोड़ने के लिए आये थे। **आध्यात्मिक आकांक्षाओं को दिखावट या घोषणा करके प्रमाणित करने की आवश्यकता नहीं होती। इसको जीना होता है और प्रतिक्षण, निरन्तर अबाधित रूप से जीना होता है। यह सरल है। यह इच्छाओं के जीवन के प्रति मर जाना और केवल मात्र परमात्मा के प्रेम में जीना है।**

'इच्छाओं के प्रति मर जाना ही वास्तव में जीना है। क्योंकि आध्यात्मिक साधक के लिए इच्छाएँ वास्तव में मृत्यु हैं। आत्मा में जीने का अर्थ है, सब इच्छाओं को मार देना। इच्छाओं से रहित होना, यह जीवन के प्रति कर्तव्यों को

नकारना नहीं है। किसी उद्देश्य पूर्ति की इच्छा के बिना आप कर्तव्य समझ कर कार्य करते हैं। व्यक्ति इसमें उच्चतर चेतना के द्वारा कर्म करता है, अर्थात् इस कर्म के द्वारा अपने मोक्ष के लिए कार्यरत रहता है। इच्छा-रहित कर्म बाँधता नहीं है। सम्पूर्ण व्यक्तित्व में केवल एक ही इच्छा व्याप्त रहनी चाहिए- **परमात्मा को प्राप्त करने की इच्छा**! परम तत्त्व को जानने की इच्छा-शुभेच्छा करें ! इस शुभेच्छा का स्वागत करें और इसे सैंजोए रखें। इसे अपने सुरक्षित कोष, अपने अन्तर में रखें। वास्तविक आध्यात्मिक जीवन केवल अभ्यासों या प्रक्रियाओं की दीर्घ श्रृंखला नहीं प्रत्युत 'बनना' या कुछ 'होना' है। किन्तु तो भी कुछ अभ्यास या साधनाएँ हमें इस बनने या होने के स्तर तक पहुँचने के लिए सहायता करती हैं। आकांक्षा करें, बनें और अभ्यास करें- यह तीनों मिल कर एक बनता है।

'पुनः मैं आपको लिख पाऊँगा या नहीं, यह कोई नहीं जानता। मैं स्वयं यह स्वीकार करता हूँ कि इस समय में भी इस विषय में कुछ नहीं जानता। जब भी ऐसा हो सका मैं प्रयास करूँगा। और बिल, यह बात जान लें कि अब पावन गुरुदेव की कृपा आप पर पूर्णरूप से है। मन्त्र भी हर ओर से आपकी देखभाल कर रहा है। यही आपके पथ का प्रकाश है, उस परम सत्य के आन्तरिक ऊर्ध्वगमन में मेरी प्रार्थनाएँ आपके साथ हैं। भगवान् सदैव आपके साथ हैं। गहन प्रेम, शुभ कामनाएँ- आपके लिए और आपके उन प्रियजनों के लिए, जो भगवान् ने इस समय उनके विकास के लिए अस्थाई रूप से आपको सौंपे हुए हैं- भेजते हुए, अब समाप्त करता हूँ। ॐ नमः शिवाय!'

दिव्य जीवन संघ मुख्यालय
शिवानन्द आश्रम
ऋषिकेश
(उत्तराखण्ड)

आनन्दोऽहं आनन्दोऽहं आनन्दं ब्रह्मानन्दम्।
आनन्दोऽहं आनन्दोऽहं आनन्दं ब्रह्मानन्दम् ।।

प्रेम और करुणा के प्रेरक

-श्री स्वामी योगवेदान्तानन्द जी महाराज -

सर्वशक्तिमान् परम पिता परमात्मा इस धरती पर समय-समय पर अपने सन्देश-वाहक दूतों के रूप में महान् सन्त-महात्माओं को भेजा करते हैं, जिससे कि वे सांसारिक आकर्षणों की प्रगाढ़ निद्रा में सोये लोगों को जगा दें और उन्हें मनुष्य-जीवन के वास्तविक लक्ष्य के सम्बन्ध में बता दें जिसके लिए उन्हें यह मानव-शरीर प्रदान किया गया है। ऐसे ही महान् सन्त हैं हमारे परम पूज्य गुरुमहाराजश्री स्वामी चिदानन्द जी महाराज जो कि अपने सन्त-स्वभाव और आध्यात्मिक उपलब्धियों के कारण विश्व विख्यात ही नहीं, विश्व-वन्दनीय भी हैं। स्वामी जी एक ऐसे आदर्श सन्त और योगी हैं, जिनका बचपन से ले कर अन्त तक का सम्पूर्ण जीवन विविध क्षेत्रों में प्राणी मात्र की भलाई के प्रति समर्पित रहा है। परम पूज्य गुरुदेव श्री स्वामी शिवानन्द जी महाराज ने उनके ३९ वें जन्म-दिवस के शुभ अवसर पर उनकी आध्यात्मिक उपलब्धियों को देखते हुए उन्हें 'अध्यात्म ज्ञान ज्योति' की उपाधि से विभूषित करते हुए कहा - "स्वामी जी जीवन-मुक्त सन्त हैं, उनका यह अन्तिम जन्म है।" उन्होंने यह भी कहा - "स्वामी चिदानन्द जी का जन्म-दिन मनाना भगवान् की पूजा है।"

दिव्य जीवन संघ मुख्यालय के महासचिव और फिर परमाध्यक्ष के पद पर रहते हुए स्वामी जी महाराज ने भारत के समस्त राज्यों तथा विभिन्न देशों का भ्रमण किया। उन्होंने महान् गुरुओं की आध्यात्मिक धरोहर को लोगों में बाँटते हुए उन्हें जीवन के परम लक्ष्य - ईश्वर-प्राप्ति के प्रति जागरूक ही नहीं किया, प्रत्युत उसको प्राप्त करने के लिए निर्देश भी दिये। स्वामी जी ने शारीरिक और मानसिक रूप से दुःखों और कष्टों से घिरी मानव जाति को उनके कष्टों से मुक्त होने के लिए प्रेम, शान्ति, सत्य, पवित्रता और परस्पर भ्रातृत्व-भावना का सन्देश दिया।

सौभाग्यवश मेरा दिव्य जीवन संघ (द डिवाइन लाइफ सोसायटी) के साथ १९६६ में उसकी राजा पार्क, जयपुर शाखा के माध्यम से सम्पर्क हो गया। प्रारम्भ में मेरी जिज्ञासा योगासन सीखने की थी। जब मैंने तत्कालीन जयपुर दिव्य जीवन संघ शाखा के सचिव आदरणीय श्री ईश्वरदास मल्होत्रा जी से योगासन सीखने आरम्भ किये, तो मुझे उन्होंने गुरुदेव श्री स्वामी शिवानन्द जी महाराज के अनमोल आध्यात्मिक साहित्य और शाखा के साप्ताहिक सत्संग की भी जानकारी दी तथा सत्संग में आने के लिए आमन्त्रित किया। शाखा द्वारा संचालित पुस्तकालय में से गुरुदेव द्वारा लिखित 'जीवन में सफलता का रहस्य तथा आत्मदर्शन', 'मन-उसका रहस्य व निग्रह' तथा 'साधना' पुस्तकें एक-एक करके लीं। गुरुदेव की पुस्तकें पढ़ कर मैं अत्यधिक प्रभावित हुआ, मुझे बहुत अधिक प्रेरणा मिली और मैंने शाखा के साप्ताहिक सत्संग में जाना आरम्भ कर दिया, शाखा का सक्रिय सदस्य बन गया तथा शिवानन्द आश्रम, ऋषिकेश भी दर्शन करने तथा आध्यात्मिक मार्गदर्शन प्राप्त करने गया। भाग्यवश १९६७ में परम पूज्य श्री स्वामी चिदानन्द जी महाराज जब जयपुर पधारे, तो उनके दर्शन करके कृतार्थ हो गया। बाद में अनेक बार मैंने

साधना-सप्ताह में भाग लिया तथा परम पूज्य श्री स्वामी चिदानन्द जी महाराज, परम पूज्य श्री स्वामी कृष्णानन्द जी महाराज व आश्रम के अन्य वरिष्ठ स्वामीजियों के भी सम्पर्क में आया। १९७३ में जब परम पूज्य स्वामी जी चिदानन्द जी महाराज राजा पार्क, , जयपुर शाखा में पधारे, तब उनके रहने का प्रबन्ध शाखा भवन के बिलकुल सामने एक नव-निर्मित भवन में किया गया था। उस अवसर पर स्वामी जी महाराज ने कुछेक भक्तों को मन्त्र-दीक्षा देने की स्वीकृति दी थी। दुर्भाग्यवश मैं फार्म नहीं भर सका था, अतः मेरा नाम उन भक्तों की सूची में नहीं था, किन्तु दीक्षा के समय मैं वहीं उपस्थित था। श्री जी. एन. बोधा जी, जिन्हें उसी समय मन्त्र-दीक्षा मिली थी और शाखा के भी एक सक्रिय अधिकारी थे, ने मेरे लिए भी प्रार्थना कर दी जिसकी स्वामी जी ने अत्यन्त कृपापूर्वक स्वीकृति दे दी और मेरी भी उसी दिन वहीं मन्त्र-दीक्षा हो गायी। मैं तो उसकी स्वप्न में भी कल्पना नहीं कर सकता था। अतः मेरे आनन्द का पारावार नहीं था तथा स्वामी जी महाराज की दयालुता के समक्ष मैं नतमस्तक था। एक उद्धरण में ठीक ही कहा गया है माँगो! मिलेगा। खोजो! पाओगे।

स्वामी जी महाराज के करुणा और दयापूर्ण हृदय के द्वारा दुःखी प्राणियों के ऊपर विशेष कृपा-वृष्टि के कुछ और उदाहरण हार्दिक कृतज्ञता व्यक्त करने और सदा प्रेरणा प्राप्त करने के लिए वर्णन कर रहा हूँ जिससे परम पूज्य गुरुदेव श्री स्वामी शिवानन्द जी महाराज के अनमोल मन्त्र 'भले बनो, भला करो' को हम अपने जीवन में उतारने का सतत प्रयास करते हुए दीन-दुःखियों की निःस्वार्थ सेवा करते रहें जिससे हमें आत्म-शुद्धि और जीवन के परम लक्ष्य-भगवद्- साक्षात्कार में सहायता मिले।

१. मेरी माता जी, जो कि गुरुमहाराजश्री स्वामी चिदानन्द जी के प्रति गहन भक्ति-भाव रखती थीं, मधुमेह, हृदय रोग तथा नेत्र रोगों से ग्रस्त थीं। यह लगभग मई-जून १९७६ की घटना है कि उन्हें अचानक रक्तचित्तिता (bleeding under the skin) का रोग हो गया जिससे त्वचा के नीचे से रक्त प्रवाहित होने लगा, साथ ही श्वेत रक्त कोषाणु भी बनने बन्द हो गये। आये दिन नया रक्त दिया जाता रहने के बाद भी श्वेत रक्त-कण बढ़ने का नाम नहीं ले रहे थे। हमारे परिवार के सब सदस्यों का रक्त एक ही ब्लड ग्रुप का होने के कारण रक्त-उपलब्धि की कोई समस्या नहीं थी। उत्तम कोटि के डाक्टरों तथा विभाग के डाक्टर-अध्यक्ष की देख-भाल में चिकित्सा होने पर भी हालत बिगड़ती जा रही थी। ऐसी स्थिति में उनके निकट, परिवार के तीन व्यक्तियों के अतिरिक्त और किसी को जाने की आज्ञा नहीं थी, क्योंकि संक्रमण का भी भय था। उनके जीवन का अन्तिम समय आ चुका था, क्योंकि एक दिन दोपहर २ बजे के लगभग डाक्टरों ने हमें अपने नजदीकी सम्बन्धियों को बुला लेने के लिए कह दिया। हम गुरुदेव से प्रार्थना करने के साथ-साथ अपना कर्तव्य निभाते रहे। किन्तु न जाने कैसे वह दिन निकल गया और वह माता जी के प्राण उस दिन नहीं गये, बल्कि उनकी दशा में सुधार होना शुरू हो गया। धीरे-धीरे वह पूर्णतया स्वस्थ हो गई और उसके पश्चात् लगभग सोलह वर्ष तक सुमराकल जीवन जिया। अस्पताल महारण सोलह वर्ष तक सुवफल जिस दिन उनके जीवन का अन्तिम समय में मुझे बताया कि दिन दोपहर को, "जब तुम भोजन करने गये थे तब स्वामी चिदानन्द जी महाराज आये थे और उसी कुसी पर बैठ गये जिस पर तुम बैठते हो। उन्होंने मुझे आशीर्वाद दिया और प्रसाद भी दिया जो मैने उसी समय खा लिया। उन्होंने मेरे माथे पर हाथ रखते हुए कहा कि आप बिलकुल ठीक हो जायेंगी। ऐसा दो दिन लगातार हुआ।" मैंने उन्हें कहा कि आपने सपना देखा होगा, क्योंकि स्वामी जी तो जयपुर में नहीं है; किन्तु उन्होंने उत्तर दिया कि "नहीं, मैं जाग रही थी और मैंने उनका दिया

प्रसाद भी खाया है।" यहाँ यह बताना महत्त्वपूर्ण होगा कि उनके हृदय में स्वामी जी के प्रति अगाध श्रद्धा और पूर्ण विश्वास था और वह जप भी बहुत किया करती थीं। बाद में जब स्वामी जी महाराज जयपुर आबे और मैंने उन्हें सारी बात बताई, तो उन्होंने कहा कि यह सब भगवान् की कृपा है। ठीक कहा गया है श्रद्धावान् के लिए भगवान् दूर नहीं हैं।

स्वामी जी महाराज अत्यन्त कृपापूर्वक हमारे घर आये और हमें आशीर्वाद तथा माता जी को गुरु-मन्त्र भी प्रदान किया।

२. दिव्य जीवन संघ, राजा पार्क शाखा ने १९९० में श्री विष्णु महायज्ञ करने का निर्णय लिया। उस अवसर पर परम पूज्य श्री स्वामी चिदानन्द जी महाराज का भी कार्यक्रम रखा था। विष्णु महायज्ञ के लिए बहुत धनराशि की आवश्यकता थी, अतः धन एकत्रित करने के लिए चार सदस्यों की विशेष समिति बनायी गयी गयी जिसमें श्री ओम प्रकाश बग्गा जी, श्री एन. के. धवन जी, श्री खैराती लाल जी कटियाल तथा श्री वेदप्रकाश ग्रोवर (स्वामी योगवेदान्तानन्द) थे। आवश्यक धन एकत्रित कर लिया गया, परन्तु दुर्भाग्यवश श्री ओम प्रकाश बग्गा जी कार्यक्रम से लगभग दो दिन पूर्व असह्य पीठ दर्द से शैयाग्रस्त हो गये। बह करवट तक बदल पाने में असमर्थ थे। उन्होंने मुझसे कहा कि स्वामी चिदानन्द जी महाराज जैसे महान् सन्त के दर्शन अवश्य करना चाहेंगे। अतः उन्होंने मुझे स्वामी जी महाराज को उनके घर चरण डालने और आशीर्वाद देने की प्रार्थना करने का अनुरोध किया। स्वामी जी महाराज के जयपुर पधारने पर जब मैंने उनसे प्रार्थना की, तो उन्होंने उसी समय स्वीकृति दे दी। अगले दिन प्रातःकाल हम स्वामी जी के साथ बग्गा जी के घर गये। उनकी दशा इतनी खराब थी कि वह उठ पाने और हिलने तक से विवश थे। लेटे हुए ही उन्होंने स्वामी जी को प्रणाम किया और कहा कि उनकी अस्वस्थता के कारण वह सायंकालीन कार्यक्रम में भाग नहीं ले सकेंगे। स्वामी जी ने उत्तर दिया, "जैसी भगवान् की इच्छा होगी, वैसा ही होगा।" बहाँ उस समय उनके घर-परिवार के लोगों, सम्बन्धियों, शाखा-सदस्यों और उनके पड़ोसियों सहित लगभग २५ लोग होंगे। स्वामी जी ने प्रार्थना की और तत्पश्चात् सबको प्रसाद दिया। उस दिन सायंकाल सत्संग में यह देख कर हम सभी आश्चर्यचकित रह गये कि श्री बग्गा जी प्रसन्न मुख से वहाँ श्रोताओं में बैठे हुए थे। जब स्वामी जी सत्संग हाल में प्रविष्ट हुए तो उन्होंने दण्डवत् प्रणाम करते हुए स्वामी जी को धन्यवाद दिया। प्रार्थना से बहुत कुछ सम्भव है! कोई भी सीमा नहीं। 'वो ही सर्वश्रेष्ठ प्रार्थना करता है जिसके हृदय में सर्वश्रेष्ठ प्रेम है।' इस घटना के वर्षों बीत जाने के बाद भी जब कभी हम परस्पर मिलते हैं, तो वह हर बार सबसे पहले इसी अद्‌भुत और चमत्कारपूर्ण घटना का सबके है; सामने वर्णन अवश्य करते हैं और यह वाक्य कहते हैं-"उस दिन तो स्वामी चिदानन्द जी महाराज ने कमाल कर दिया।"

३. एक अन्य घटना उसी समय के दिव्य जीवन संघ शाखा के कोषाध्यक्ष स्वर्गीय श्री एस. एन. महरा जी की है जो मेरे परम मित्रों में थे। श्री महरा जी शुद्ध और दयालु हृदय के, सेवापरायण, भक्त और भद्र पुरुष थे। डाक-तार विभाग में वे वरिष्ठ एकाउंट्स आफिसर थे। उनमें स्वामी जी के प्रति गहन श्रद्धा और विश्वास था। दुर्भाग्यवश उन्हें तम्बाकू खाने का दुर्व्यसन था जिसके फलस्वरूप वे गले के कैंसर रोग से ग्रसित हो गये। कुछ समय तक जयपुर में के सबसे बड़े एस. एम. एस. अस्पताल में उनका उपचार चलता रहा और उन्हें कीमोथैरापी दी जाती थी। १९८७ में जब परम पूज्य श्री स्वामी चिदानन्द जी महाराज जयपुर पधारे तब श्री महरा जी स्वामी जी से उनके निवास-स्थल पर अलग से मिलने गये, अपनी स्थिति बताई और आशीर्वाद की याचना की। स्वामी जी ने उनके लिए प्रार्थना की और वे गुरुदेव के आशीर्वाद से पूर्णतया स्वस्थ हो गये

तथा उन्हें और अधिक कीमोथेरापी आदि की आवश्यकता नहीं पड़ी। स्वामी जी ने उन्हें कहा, "भविष्य में कभी भी तम्बाकू का सेवन मत करना।" कुछ समय पश्चात् उन्हें तम्बाकू खाने की तीव्र इच्छा भड़क उठी जिसे वे रोक न सके और यह सोच कर कि अब तो वह काफी समय से पूरी तरह ठीक हैं, उन्होंने फिर से तम्बाकू खा लिया। बस फिर क्या था, पुनः उसी रोग ने उन्हें ऐसा घेर लिया कि मार्च, १९८८ में उनका देहान्त हो गया। प्रायः कैंसर के रोगियों को अत्यधिक पीड़ा सहनी पड़ती है, किन्तु उनके साथ ऐसी अद्भुत स्थिति देखी गयी कि अन्त समय तक उन्हें ऐसा कष्ट नहीं झेलना पड़ा और उनके शरीर का अन्त शान्त अवस्था में हुआ। लिखने वाले ने लिख दिया लेख! लिख कर आगे बढ़ गया। होनहार हो कर ही रहती है। प्रभु का नाम बड़ा है।

४. जनवरी १९९० में महाविद्यालय से सेवानिवृत्त होने पश्चात् परम पूज्य गुरुमहाराजश्री स्वामी चिदानन्द जी महाराज ने मुझे कहा था कि उनके मन में मेरे लिए कोई सेवा किन्तु जब तक मेरी वृद्धा माता जी जीवित हैं, तब तक मुझे उनकी भली-भाँति देख-भाल करनी चाहिए। जून १९९२ में मेरी माता जी का देहान्त हो गया। उसके पश्चात् मैं विभिन्न तीर्थ स्थलों की यात्रा पर चला गया। मार्च, १९९४ में स्वामी जी महाराज दिव्य जीवन संघ की बीकानेर शाखा में पधारे, तो मैं कुछ अन्य भक्तों के साथ उनके दर्शन-आशीर्वाद पाने के लिए वहाँ चला गया। वहाँ स्वामी जी ने अपने विश्राम स्थल पर बुला कर कहा- "अब आप कॉलेज की सेवा और माता जी की देख-भाल से निवृत्त हो गये हैं, अब आपके लिए आश्रम मुख्यालय में योग-वेदान्त फॉरेस्ट एकाडेमी में सेवा है। वह बन्द पड़ी है। उसे आपने पुनः आरम्भ करना है।" यह सुनते ही मैं भय-ग्रस्त हो गया। इसके दो कारण थे-पहला तो यह कि मुझे योग और वेदान्त के विषय में कोई गहन ज्ञान नहीं था। दूसरा, एकाडेमी चलाने के लिए स्वामीजियों से कैसे परस्पर बातचीत आदि करनी चाहिए। इसके बारे में भी मैं कुछ नहीं जानता था। अपना यह भय मैंने स्वामी जी महाराज को उसी समय बताया। धैर्यपूर्वक मेरी बात सुनने के पश्चात् स्वामी जी ने कहा, "मैं जानता हूँ कि आप यह कर सकते हैं।" स्वामी जी के शब्द सुनते ही मेरे मन से भव तुरन्त रफूचक्कर हो गया और उसका स्थान उत्साह और आत्म-विश्वास ने ले लिया। तत्काल मैंने उत्तर दिया कि "यदि स्वामी जी महाराज सोचते हैं कि मैं यह कर सकता हूँ तो मैं एकाडेमी में सेवा करने को तैयार हूँ।" स्वामी जी महाराज के निर्देशन में मई १९९४ में मैंने एकाडेमी में सेवा आरम्भ कर दी और तभी से अभी तक पिछले लगभग १५ वर्षों से निरन्तर सेवा करने का सौभाग्य प्राप्त हुआ है। सितम्बर-अक्तूबर, १९९४ में हमने १८ वें योग-वेदान्त कोर्स से आरम्भ किया था और अब मार्च-अप्रैल, २००९ में ६१ वाँ कोर्स चल रहा है। यह परम पूज्य गुरुदेव और स्वामी जी महाराज की कृपा और आशीर्वाद है। सच तो यह है कि करने-कराने वाले वे स्वयं हैं, हमें सौभाग्यवश अपने यन्त्र के रूप में चुना है। इसलिए हम सदा-सदा के लिए उनके आभारी हैं।

भगवान् और महान् गुरुओं की कृपा अद्भुत और रहस्यमयी ढंग से बरसा करती है। एकाडेमी की सेवा ने मुझे आध्यात्मिक पथ पर उन्नत होने के स्वर्णिम सुअवसर प्रदान किये हैं, क्योंकि यहाँ मुझे महान् सन्तों के दर्शन करने, उनके प्रवचन सुनने और आध्यात्मिक पथ पर उनके निर्देशन प्राप्त करने का सौभाग्य मिलता रहता है। उदाहरणार्थ, गुरु महाराजश्री स्वामी चिदानन्द जी महाराज ने एकाडेमी में आने के पश्चात् कहा था, "यदि विपरीत परिस्थितियाँ आयें तो उनके सम्मुख चट्टान की तरह खड़े रहना और ईमानदारी तथा समर्पित भाव से गुरुदेव के चरणों में सेवा करते रहना।" उनकी यह आज्ञा मैंने सदा शिरोधार्य रखी। कुछ एक विपरीत परिस्थितियाँ आई और चली गईं; स्वामी जी के निर्देश को मैंने सदा याद रखा तथा अडिग खड़ा रहा, जिससे विपरीत

परिस्थितियाँ अनुकूल बनती गईं और उनकी कृपा मुझ पर भाँति सदा बरसती रही। आश्रम में रहते हुए मुझे गुरुदेव श्री स्वामी शिवानन्द जी महाराज की प्रसिद्ध उक्तियों, "चोट को सहन करो, अपमान को सहन करो-यह सबसे उच्च कोटि की साधना है" "यह भी बीत जायेगा" (This will also passaway) इत्यादि को अभ्यास में लाने के सुअवसर मिलते रहे। अपने दैनिक जीवन में मैं इन पर अभ्यास करने का प्रयत्न करता रहता हूँ और इससे मुझे शान्ति मिलती है। तथापि अभी अध्यात्म-पथ की दीर्घ यात्रा शेष रहती है। गुरुदेव की कृपा से एकाडेमी की सेवा ने मेरे लिए अभ्यास करने के लिए अच्छा क्षेत्र उपलब्ध करवा दिया है।

स्वामी परम पूज्य गुरुदेव की ही भाँति श्रद्धेय गुरु महाराजश्री चिदानन्द जी महाराज अध्यात्म-ज्ञान के प्रचार-प्रसार में गहन रुचि रखते थे। ३ जुलाई १९४८ को जब योग-वेदान्त फारेस्ट युनीवर्सिटी (अब एकाडेमी) की स्थापना हुई तो परम पूज्य गुरुदेव ने स्वामी जी महाराज को इसके उप-कुलपति तथा योग के प्रोफेसर के पद पर नियुक्त किया। दिव्य जीवन संघ के परमाध्यक्ष होने के नाते अत्यधिक व्यस्त दिनचर्या होने पर भी स्वामी जी महाराज जब भी आश्रम मुख्यालय में होते तो इस बात का विशेष ध्यान रखते कि प्रत्येक योग-वेदान्त कोर्स में प्रायः ८-१० दिन विभिन्न विषयों पर प्रवचन देते थे। विद्यार्थी उनके दर्शनों द्वारा और उनके प्रवचनों द्वारा अत्यन्त प्रेरणा प्राप्त करते थे तथा लाभान्वित होते थे, क्योंकि स्वामी जी के प्रवचन सरल अँगरेजी भाषा में होते थे तथा विषय का भूमिका सहित विस्तृत वर्णन करते थे। वे विद्यार्थियों के प्रश्नों का सदा ही स्वागत करते थे तथा उनके संशयों का सहर्ष निवारण करते थे। प्रायः वे अपने बहुमूल्य समय में से एकाडेमी के उद्‌घाटन और समापन समारोहों की शोभा बढ़ाने के लिए तथा विद्यार्थियों का मार्गदर्शन करने के लिए समय निकाल लिया करते थे। तथा एकाडेमी भली-भाँति चलती रहे इसमें भी स्वामी जी गहन रुचि रखते थे।

परम पूज्य गुरुदेव तथा परम पूज्य गुरुमहाराजश्री स्वामी चिदानन्द जी महाराज जैसे महान् सन्त देह त्याग देते हैं, किन्तु वे सदा अमर रहते हैं। वे तो सर्वव्यापक परमात्मा की सच्चे जिज्ञासु साधकों को निर्देशन और आशीर्वाद देने के लिए सदैव तत्पर रहते हैं। इसका मैंने अपने जीवन में अनुभव किया है। इसीलिए मैं इस सुअवसर पर परम पूज्य गुरुमहाराजश्री स्वामी चिदानन्द जी महाराज के चरणों में गहन हार्दिक धन्यवाद अर्पित करने से स्वयं को रोकने में असमर्थ पा रहा हूँ, क्योंकि वे मेरी आध्यात्मिक पथ की साधना और योग-वेदान्त एकाडेमी की सेवा में सदैव ठोस आधार और रक्षक बने रहे हैं। जब कभी एकाडेमी सम्बन्धी किसी प्रस्ताव को ले कर मैं उनके पास जाता था, वे उसी समय उसे स्वीकृति प्रदान कर देते थे, क्योंकि उन्हें यह विश्वास हो गया था कि मैं उनके पास अनुचित प्रस्ताव ले कर नहीं जाऊँगा तथा उनमें व्यक्ति को अन्दर-बाहर से तुरन्त परखने की शक्ति थी। स्वामी जी महाराज की सहायता, निर्देशन, प्रोत्साहन और कृपा के बिना मेरे लिए, वर्तमान स्थिति तक पहुँच पाना सम्भव नहीं था। मुझे पूर्ण विश्वास है कि जीवन के परम लक्ष्य की प्राप्ति के लिए भी यह कृपा सदा-सदा के लिए इस सेवक पर बनी रहेगी।

इस विनम्र भेंट को अर्पण करते हुए आइए हम परम पूज्य श्री स्वामी चिदानन्द जी महाराज की अनमोल शिक्षाओं का स्मरण करें तथा इन शिक्षाओं के प्रति जागरूक रहने का प्रयत्न करें-

"आप उस परम पिता परमात्मा की प्रिय सन्तान हैं, दिव्यता की एक किरण हैं, परिपूर्ण शुद्ध चैतन्य- भगवान् के अनन्त सागर की चैतन्यरूपी एक लहर हैं। आप एक विलक्षण अनमोल रत्न है, एक दिव्य हीरा हैं। अपने जीवन की दिव्यता, पवित्रता, सत्यता, दया, निःस्वार्थता और उत्साहपूर्ण सेवा-भाव, भगवद्-प्रेम, नियमित ध्यान तथा साक्षात्कार से उद्‌भासित होने दें। अपने

देश और समस्त मानवता के लिए आप वरदान सिद्ध हों। गुरुदेव श्री स्वामी शिवानन्द जी महाराज का आशीर्वाद आप सब पर हो।"

हरिः ॐ तत् सत् ।

रजिस्ट्रार, योग-वेदान्त फारेस्ट एकाडेमी
दिव्य जीवन संघ मुख्यालय
शिवानन्द आश्रम, ऋषिकेश (उत्तराखण्ड)

स्वामी चिदानन्द कौन थे?

- श्री स्वामी चित्स्वरूपानन्द जी महाराज, सचिव-

स्वामी चिदानन्द थे नहीं **नित्य दीप्तिमान् हैं**, कारण कि आत्मा अविनाशी है। संसार में असंख्य मनुष्य उत्पन्न हो चुके हैं, उत्पन्न हो रहे हैं और तब तक उत्पन्न होते रहेंगे, जब तक संसार एक दिन स्वयं ही विनष्ट नहीं हो जाता। जो सच्चे अर्थों में जीवन यापन करते हैं और अपने सत्कर्मों के माध्यम से अपना प्रभाव जमा जाते हैं केवल वही इतिहास बन जाते हैं जिससे केवल समकालीन जन ही नहीं बल्कि आने वाली पीढ़ियाँ भी उनके जीवन, व्यक्तित्व और उपदेशों से प्रेरणा पाती हैं। शेष सामान्य लोग जन्म लेते हैं, थोड़े समय तक जीते हैं और अपने पीछे किसी भी प्रकार का स्मृतिचिह्न छोड़े बिना ही अन्ततः इस संसार से चले जाते हैं।

सूर्य प्रतिदिन सन्ध्या के समय दूर क्षितिज में अस्त होता दिखायी देता है, पर वास्तव में ऐसा नहीं है। सूर्य कभी अस्त नहीं होता, जबकि अस्त होता जान पड़ता है। यह अपने परिक्रमा पथ पर प्रकाश विकीर्ण-रत चौबीस घण्टे गतिमान रहता है। अतः प्रकाश सदा ही रहता है। यह प्रकाश कभी गुल (बुझता) नहीं होता। सूर्य जो क्षितिज में अस्त होता जान पड़ता है उसका वही प्रकाश चन्द्रमा में प्रतिबिम्बित होता है। गगन में स्वामी चिदानन्द एक ऐसा नित्य प्रकाशित नक्षत्र है जो सत्यान्वेषी साधकों का पथ-प्रदर्शन कर उनको निश्चयतः शाश्वत आनन्द, शाश्वत शान्ति के उस नित्य जीवन की ओर अग्रसर करता है जिसे प्राप्त करने के उपरान्त और कुछ प्राप्त करना शेष नहीं रह जाता।

व्यक्ति के जन्म से अर्थात् पालने से कब्र तक के जीवन का यदि ध्यानपूर्वक अवलोकन किया जाये तो हम जान पायेंगे कि जो कुछ भी कहा जाता है वह '**था**' और '**होगा**' अर्थात् **भूतकाल** और **भविष्य काल**, इस रूप में सम्बोधित किया जाता है। कोई भी वर्तमान को सम्बोधित नहीं करता, इसकी पूर्णतया उपेक्षा कर देता है। जबकि यही मूलाधार है, और हम इसे ही भूल जाते हैं। मनुष्य यही भूल पीढ़ी दर पीढ़ी, जन्म-जन्मान्तर तक करता चला जाता है। वह नहीं समझ पाता कि 'वर्तमान' ही यहाँ सभी वस्तुओं का, अर्थात् दृश्य (भौतिक) और अदृश्य (आध्यात्मिक) का केन्द्रबिन्दु है। अदृश्य को चर्मचक्षुओं से नहीं देखा जा सकता; किन्तु उसकी अनुभूति की जा सकती है; परन्तु अनुभूति की अभिव्यक्ति किसी भी भाषा में नहीं की जा सकती, क्योंकि अति प्राचीनकाल से ही अनुभूति की अभिव्यक्ति करने में भाषा असमर्थ सिद्ध हुई है। अनुभूतियों का वर्णन सदैव ही अपूर्ण रहा है, जब कभी उनके कथन का प्रयास किया गया तभी

तथाकथित मानदण्ड भाषा विचार सम्प्रेषण में असफल सिद्ध हुई है। केवल वही सत्य है... उसे भाषा के माध्यम से समझना और उसकी अनुभूति स्वयं को होना तथा इसे इसी माध्यम (भाषा) द्वारा वर्णित किया जाना-ये दोनों परस्पर एक-दूसरे से कोसों दूर हैं-अर्थात् इसकी अभिव्यक्ति असम्भव है।

यह भी कहा गया है कि केवल वही भगवान् को सर्वव्यापी देख सकता है जिसने स्वयं भगवद्दर्शन किया हो। केवल वही दिव्य आत्मा के दर्शन कर सकता है, जिसने संसार को संसार के रूप में न देख कर शुद्धात्मा रूप में देखा हो। हम सभी जानते हैं कि आत्मा अमर है। आत्मा सदा-सर्वदा है, नित्य विद्यमान है, और अनन्त है। स्वामी चिदानन्द, ऐसा तथ्य-सत्य हैं, जिसको वही जान सकते हैं जिनका चयन अहेतुकी कृपा द्वारा स्वयं कर उनके समक्ष अपने सत्य स्वरूप को व्यक्त कर उसकी अनुभूति कराते

"सोई जानइ जेहि देहु जनाई।"

-अयोध्या कां. दो. १२६ चौ.२

("वही आपको जानता है जिसे आप जना देते हैं।")

अतः अन्तर्रहस्य न तो भूतकाल में, न ही भविष्य काल में निहित है, यह तो '**यहीं**' और '**अभी**' '**वर्तमान**' में ही निहित है।

स्वामी चिदानन्द जी महाराज का सबको '**उज्ज्वल आत्मन्** सम्बोधन करना, यह उनका स्वानुभूत प्रत्यक्ष बोध है, मात्र शब्दजाल, कथन व उच्चारणमात्र नहीं। दिव्य ही दिव्यता की अनुभूति कर सकता है। आत्मा ही आत्मा की

अनुभूति कर सकता है। '**स्वामी चिदानन्द**' '**थे**','**हैं**, और आगामी अविस्मरणीय समय तक सदा-सर्वदा **रहेंगे**; क्योंकि आकाश में यह नित्य आलोकित नक्षत्र पूर्णता प्राप्ति के आकांक्षी साधकों का सतत मार्ग-दर्शन करता रहेगा। पहले ही कहा जा चुका है कि आत्मा नित्य है। ईसाई धर्म में कहा गया है कि पिता, पुत्र और पवित्र आत्मा एक ही हैं; किन्तु सनातन धर्म इसे भिन्न दृष्टिकोण से वर्णित करता है, यथा-अद्वैत, द्वैत, विशिष्टताद्वैत इत्यादि। इसी प्रकार, भगवान् ने अपनी प्रतिकृति ही मनुष्य रूप में उत्पन्न की है जो पूर्ण है। यह भी कहा गया है कि मनुष्य ने अपना प्रतिरूप भगवान् में उद्‌भुत किया है। यह भी सच है कि केवल मानव-जीवन में ही इस पूर्णता की प्राप्ति की जा सकती है, और मनुष्य भगवान् बन जाता है- **मानव माधव बन जाता है।** केवल शुद्धात्मा ही इस पूर्णता को प्राप्त करते हैं। केबल विनम्र ही उन्नत व प्रोन्नत होते हैं, और उन्हें निश्चयतः ही पूर्णता की प्राप्ति होती है। इस पूर्णता की प्राप्ति के उपरान्त मानव मानव नहीं रहता, वह शुद्ध चैतन्य होता है, और यही शुद्ध चैतन्य ही भगवान् है। अतः मनुष्य यदि इतनी महान् ऊँचाइयों के शिखर तक उठ जाये और भगवान् से एकात्मता की अनुभूति कर ले तो वह स्वयं ही भगवान् हो जाता है अर्थात् **नर से नारायण हो जाता है।** महान् आश्चर्यजनक ऊँचाइयों की प्राप्ति के बाद भी **अतिशय विनम्रता** के कारण यदि उसे लगता है कि उसमें अभी अभाव है; किन्तु अन्ततः यह अभाव की भावना भी तभी तिरोहित हो जाती है जब वह भौतिक कलेवर छोड़ देता है, तब होती है यही पूर्णता की शुद्धावस्था।

यदि स्वामी चिदानन्द का अल्प शब्दों में चित्रण करें तो यह कह सकते हैं- **यह सत् चित् आनन्द (सच्चिदानन्द घन) स्वरूप हैं। गुरुदेव निर्दिष्ट 'दिव्य जीवन' की प्रतिज्ञात्रय, यथा-सत्य, अहिंसा, ब्रह्मचर्य का जीवन्त स्वरूप हैं यह। यदि कोई बच्चा या बड़ा बुजुर्ग उन्हें देखता है तो उसकी यही सहज अभिव्यक्ति है, "यह कितने पवित्र हैं, कितने ज्योतिर्मय हैं!" इस सेवक का कथन है- "वह स्वयं ही पवित्रता हैं।" "वह प्रकाशों के प्रकाश है।"**

स्वामी चिदानन्द सत्य हैं और शुद्ध चैतन्य हैं। जिस क्षण आप इनके वर्णन का प्रयास करेंगे, असफलता ही हाथ लगेगी। क्योंकि अनुभूति की अभिव्यक्ति किसी भी भाषा में नहीं हो सकती। स्वामी चिदानन्द कौन हैं? इसकी व्याख्या करना व्यर्थ ही है। साक्षात्कार प्राप्त सन्त अथवा अनुभूति प्राप्त महात्मा गण (यदि वे चाहें तो) के लिए यह सरल है कि साधक को ऊँचाइयों के सन्निकट अन्तिम छोर तक पहुँचा दें, परन्तु इस चरम सीमा से साधक को अगाध आनन्द-सागर में अन्तिम छलाँग हेतु अपने अन्तस्थ गुरु पर निर्भर होना है। अतः आवश्यक है कि इस अन्तिम छलाँग द्वारा आपको परम आनन्द में निमग्न होना है, और यह परम आनन्द है स्वामी चिदानन्द ।

दिव्य जीवन संघ मुख्यालय
शिवानन्द आश्रम, ऋषिकेश (उत्तराखण्ड)

श्रीगुरु तव स्मरण में

- श्री स्वामी वैकुण्ठानन्द जी महाराज-

ॐ नमः शिवानन्दाय गुरवे चिदानन्दाय मूर्तये ।
निष्प्रपंचाय शान्ताय निरालम्बाय तेजसे ।।
नित्यं शुद्धं निराभासं निराकारं निरंजनम्।
नित्यं बोधं चिदानन्दं गुरुं ब्रह्म नमाम्यहम् ।।

यह सेवक आश्रम में सत्ताइस वर्षों से निवास कर रहा है। मुझे सभी भक्त गण 'समाधि-मन्दिर' के मुख्य पुजारी के रूप में जानते हैं। गुरु महाराज जी के सभी आध्यात्मिक कार्यक्रम, चाहे सायंकालीन सत्संग हो या प्रातःकालीन ध्यान-कक्ष जो कि समाधि-मन्दिर में हुआ करते थे, उनमें मुख्य सेवक होने के कारण इस सेवक को महाराज जी के सम्मुख बैठने का सुअवसर प्राप्त होता था और महाराज जी की सेवा करने का सुअवसर भी प्राप्त होता था।

श्री महाराज जी की समाधि के ठीक एक मास पूर्व यह सेवक उनके दर्शन करने गया था। मेरे साथ परम पूज्य श्री स्वामी विमलानन्द जी (वर्तमान अध्यक्ष), स्वामी योगस्वरूपानन्द जी (उपाध्यक्ष), स्वामी पद्मनाभानन्द जी, स्वामी भक्तिभावानन्द जी, गोपी जी तथा गुरुमहाराज जी के समस्त सेवक गण 'शान्ति आश्रम, देहरादून' में उपस्थित थे। मुझे गुरुमहाराज जी ने उस समय ऐसा आशीर्वाद दिया, जिसको मैं कभी भूल नहीं सकता। श्री गुरुमहाराज ने अपने श्रीमुख से दो बार कहा "वैकुण्ठानन्द और हमारा बहुत पुराना सम्बन्ध है, क्या पता कितने जन्म होंगे? बह जानें।"

बहूनि मे व्यतीतानि जन्मानि तव चार्जुन।
तान्यहं वेद सर्वाणि न त्वं वेत्थ परन्तप ।।

गीता : ४/५

श्री महाराज जी के विषय में अनेक सन्तों ने कहा है कि-"स्वामी चिदानन्द जी जीवन्मुक्त हैं।" श्री गुरुदेव स्वामी शिवानन्द जी महाराज ने स्वयं घोषणा की है कि-"स्वामी चिदानन्द जी जीवन्मुक्त हैं, उनका यह अन्तिम जन्म है।" उनके विषय में इससे अधिक क्या कहा जा सकता है।

श्री महाराज जी साक्षात् भगवान् नारायण महाविष्णु थे। वह अपनी लीला सम्पूर्ण करके पंचभौतिक शरीर को त्याग कर अपने नित्य शाश्वत धाम को चले गये जहाँ से वह पहले आये थे। परन्तु श्री महाराज जी अपने भक्तों के हृदय में आज भी पूर्ववत् विराजमान हैं। साधक, भक्त जब-जब उन्हें पुकारेंगे, वह भक्तों का मार्गदर्शन करते हुए तथा मनोकामनाओं की पूर्ति करते हुए अपना मंगलमय आशीर्वाद प्रदान करेंगे। श्री गुरुमहाराज जी का हृदय इतना पवित्र था कि साधक स्वयं खिंचे चले आते थे।

"**पवित्राणां पवित्र यो मंगलानां च मंगलम्**" की प्रतिमूर्ति श्री महाराज जी थे। उनका दर्शन करने से साधक को कृत्य-कृत्यता का अनुभव होता था। आध्यात्मिक शक्ति प्राप्त होती थी, मन प्रसन्नता से भर जाता था। धैर्य और शान्ति का अनुभव होता था।

यस्य दर्शन मात्रेण मनसः स्यात प्रसन्नता,
स्वयं भूयात् धृति शान्तिः सः भवेत् परम गुरुः ।

श्री महाराज के स्मरण करने मात्र से साधक का हृदय स्वतः पवित्र हो जायेगा तथा मन की चंचलता समाप्त हो जायेगी। ज्ञान स्वयं उत्पन्न हो जायेगा। जीवन का अन्तिम लक्ष्य (भगवत्प्राप्ति) भी प्राप्त हो जायेगा।

यस्य स्मरण मात्रेण ज्ञान उत्पद्यते स्वयं,
स एव सर्व सम्पतिः : तस्मात् पूजयेत् गुरुम् ।।

इस सेवक का मन गुरुमहाराज जी के कुछ चमत्कार देखना चाहता था। समय आने पर कई चमत्कार स्वयं देखने को मिले और जानकारी भी मिली। उन्हीं अनेकों में एक उदाहरण प्रस्तुत करता हूँ कि महाराज जी की बात इन्द्र देवता भी मान जाते थे। जैसे-एक बार श्री महाराज जी ने

समाधि-मन्दिर के सायंकालीन सत्संग में कहा कि कल सबेरे वर्षा समाप्त हो जायेगी, जबकि उस समय वर्षा का बाहुल्य था जो प्रातः आठ बजे तक चलता रहा। आठ बजे वर्षा स्वयं रुक गयी। विश्वनाथ मन्दिर के प्रांगण में आयोजित कार्यक्रम में भक्तों को कोई असुविधा न हो, इसलिए महाराज जी ने सायंकाल ही यह बचन कह दिये थे।

इतने प्रभावशाली व्यक्तित्व के धनी थे हमारे गुरु महाराज जी।

जय शिवानन्द, जय चिदानन्द!
ॐ शान्तिः शान्तिः शान्तिः !

सेवक, समाधि मन्दिर
दिव्य जीवन संघ मुख्यालय
शिवानन्द आश्रम, ऋषिकेश (उत्तराखण्ड)

ॐ

एक बार स्वामी जी गुण्टूर रेलवे स्टेशन पर थे। बहुत बड़ी संख्या में भक्तों ने उन्हें घेर रखा था। जब गाड़ी चलने को हुई तो वह उस डिब्बे में चढ़ गये जहाँ उनके लिए शायिका आरक्षित थी। जब गाड़ी चलने लगी तो उन्होंने प्लेटफार्म पर एक वृद्ध महिला को विलाप करते देखा। वह शोक कर रही थी कि वह अपना सामान बाहर नहीं ला सकी। स्वामी जी ने तुरन्त ही अपनी टोली के एक सदस्य को जंजीर खींचने के लिए कहा। गाड़ी रुक गयी। वृद्ध महिला ने अपना बोरिया-बिस्तर एकत्र कर लिया और प्लेटफार्म से प्रस्थान कर गयी। उसे यह पता न चला कि गाड़ी कैसे रुकी थी। स्वामी जी डिब्बे के द्वार पर खड़े थे और जब गार्ड इस विषय में पूछ-ताछ करने के लिए पहुँचा तो उन्होंने गार्ड को करबद्ध हो बुलाया और कहा- "कृपया मुझे क्षमा करें। उस वृद्ध महिला की विवशता देख कर मैंने ही जंजीर खींचने का आदेश दिया था।" **उस कार्य विशिष्ट से कहीं अधिक शिक्षाप्रद थी उस अल्प समय में उनके व्यवहार की सम्पूर्णता-अकृत्रिमता निष्कपटता, शिष्टता तथा दूसरों के प्रति संवेदनशीलता। स्वामी जी के लिए यह समग्र विश्व एक विशाल परिवार है जहाँ प्रत्येक व्यक्ति अपने परिसर के सभी अन्य व्यक्तियों के लिए उत्तरदायी है।**

गुरु चिदानन्द स्वामी

-श्री स्वामी ब्रह्मस्वरूपानन्द जी महाराज-

द्वयपादपद्म प्रणमामि अहं, हृद प्रेम भावगामी गुरु चिदानन्द स्वामी ।।
गुरु सुनिए विनती, हम कुटिल कुमति, कैसे हों तव अनुगामी ।।
गुरु चिदानन्द स्वामी ।।

कलिकाल कुटिल अंधियारा, मदग्रस्त सकल संसारा ।

तुम आद्य जीव पर करुणा, करि लीन्ह मनुज अवतारा ।।
तुम दिव्य कर्म, और दिव्य धर्म के ज्ञान, दात्र स्वामी ।।
गुरु चिदानन्द स्वामी ।।

ॐ

शत शत सद्ग्रन्थ प्रकाशे, उपनिषद वेद संभाषे।
अति सहज सौम्य मृदु सुन्दर, प्रिय ज्ञान-गंग-उदधि भाषे।
हम जीव अधम, तुम पुरुषोत्तम, तुम ब्रह्म प्रेमधामी ।।
गुरु चिदानन्द स्वामी ।।

ॐ

ऋषिकेश गंगा तटवासी, रवि ज्ञान प्रचण्ड प्रकाशी।
नर वपु लीला सुविलासी, तुम स्वयं ब्रह्म संन्यासी ।।
हम नित मलिन, अति दीन-हीन, नित निम्न मार्गगामी ।।
गुरु चिदानन्द स्वामी ।।

ॐ

अति धन्य धन्य तव चिन्तन, तव कथन स्मरण तव पूजन।
परिपठन श्रवण, सम्भाषण-तव दिव्य वचन परिपालन।
गुरु हे महान्, करो शक्ति दान- हम बनें मोक्षकामी ।।
गुरु चिदानन्द स्वामी ।।

ॐ

गुरुनाथ सुबुद्धि नियन्ता, परब्रह्म शुद्ध भगवन्ता ।
ब्रह्मा विष्णु शिवरूपा, गुरु श्रेष्ठ शिरोमणि सन्ता।
कहे ब्रह्मस्वरूप, गुरुराज, भूप, नित तव पद प्रणमामि ।।
गुरु चिदानन्द स्वामी ।।
ऋषिकेश (उत्तराखण्ड)

श्री जगन्नाथ महाप्रभु का साक्षात् स्वरूप हैं गुरुमहाराज श्री स्वामी चिदानन्द जी

-श्री स्वामी गुरुप्रसादानन्द जी महाराज -

गुरुमहाराजश्री स्वामी चिदानन्द जी महाराज इस सेवक के लिए साक्षात् जगन्नाथ महाप्रभु ही है। जब यह सेवक डेढ़ वर्ष का बालक था तो एक भयंकर रोग से ग्रस्त हो गया। माता-पिता के अनेक उपचार कराने के उपरान्त भी यह बालक रोगमुक्त न हो पाया। अतः निराश हो माता-पिता

ने अन्ततः भगवान् श्री जगन्नाथ महाप्रभु के श्रीचरणों में समर्पित कर दिया तथा प्रार्थना की कि, "इस बालक पर आप कृपा करें। यदि बालक जीवित रहे तो आपकी सेवा में रहे, नहीं तो हमारी सेवा करे। जैसे आपकी कृपा ।" बालक 'महाप्रभु जी' की कृपादृष्टि से शनैः शनैः स्वस्थ हो गया। चौबीस वर्ष की अवस्था हो गयी। इस अवधि में भगवान् की पूजा व साधु-महात्माओं के प्रति श्रद्धा-विश्वास बढ़ता गया। श्री नामाचार्य बाया बाबा के दर्शन किये थे। पूटापर्ती साई बाबा, योगी श्री अरविन्द, ठाकुर श्रीरामकृष्ण परमहंस, माँ शारदादेवी, स्वामी विवेकानन्द की जानकारी थी। परन्तु गुरुमहाराजश्री स्वामी चिदानन्द जी के नाम से अनभिज्ञ था।

सन् १९८४ में कटक, उड़ीसा में पण्डित श्री सदाशिव रथ शर्मा के द्वारा एक 'अखिल भारतीय श्री जगन्नाथ महाप्रभु सम्मेलन' हुआ था। पण्डित जी एक विद्वान् एवं विश्व में 'जगन्नाथ महाप्रभु' की संस्कृति के प्रचारक थे। यह जगन्नाथ महाप्रभु और श्री स्वामी चिदानन्द जी में कोई अन्तर न देख 'दोनों एक ही हैं' ऐसा मानते थे। जब भी वह गुरुमहाराजश्री स्वामी चिदानन्द जी के दर्शन करते, तो भरी सभा में भावविह्वल हो कर 'चिदानन्द महाप्रभु की जय-जयकार करते। मेरे मित्र से मुझे मालूम हुआ कि हमारे वासगृह के सन्निकट ही सम्मेलन है। हम दोनों वहाँ जा कर पीछे बैठ गये। मंच आमन्त्रित आसनासीन सन्त-महात्माओं व गणमान्य व्यक्तियों से सुशोभित हो रहा था, यथा : जगद्गुरु शंकराचार्य जी महाराज, महामण्डलेश्वर महाराज, महन्त महाराज, गजपति महाराज (पुरी नरेश) वशिष्ठ वरेण्य सन्त-महात्मा आदि। अन्त में गुरुमहाराजश्री स्वामी चिदानन्द जी महाराज, विनय, करुणा एवं सरलता की प्रत्यक्ष मूर्ति व तपोमय तेजोमय स्वरूप दिव्य महात्मा मुख्य अतिथि के रूप में सबको प्रणाम करते हुए मंच पर पहुँचे और यथोबित आसन पर विराजमान हुए। सादर, सश्रद्धा माल्यार्पण हुआ।

भक्तजनों ने गुरुमहाराज की आरती उतारी। गुरुमहाराज आदेशानुसार सब महात्माओं की आरती उतारी गयी। गुरुमहाराज से आशीर्वचन हितार्थ सानुरोध प्रार्थना की गयी। गुरुमहाराज ने अपने प्रवचन का शुभारम्भ 'ॐ' (प्रणव) के उच्चारण से किया। गुंजायमान 'ॐ' की ध्वनि पीछे बैठे इस सेवक के अन्तस्तल में प्रविष्ट हो सहज ही प्रस्फुटित हो उठी इस भाव रूप में, 'प्रभु, आप ही मेरे गुरुदेव हैं। आप मुझे अपना चरणाश्रयी बना लेने की अहेतुकी कृपा करिए।' गुरुमहाराज के प्रवचन की समाप्ति तथा वासगृह पहुँचने तक अनुपात निरन्तर होता रहा। गुरुमहाराज अपने स्थान को लौट गये। इधर, रातभर अनिद्रा रही, सोचता रहा-आप कहाँ रहते हैं? क्या नाम है? कैसे पहुँच पाऊँ आपके पास, कुछ जानकारी नहीं। 'श्री जगन्नाथ महाप्रभु जी' ने साक्षात् गुरुमहाराजश्री स्वामी चिदानन्द जी के रूप में दर्शन दे कर अकारण कृपा की इस सेवक पर। **बचपन में 'श्री जगन्नाथ महाप्रभु' के श्रीचरणों में समर्पित** इस जीव को 'श्री जगन्नाथमहाप्रभु सर्वधर्म सम्मेलन' में 'गुरुमहाराजश्री स्वामी चिदानन्द जी' के रूप में दर्शन दे कर मुझे चरणाश्रयी बना लिया। अतः 'गुरु महाराज और श्री जगन्नाथ महाप्रभु एक हैं-अभिन्न हैं। God and Guru is one गोविन्द (भगवान) और गुरु एक हैं।

गुरु सर्वव्यापी हैं :-

दूसरे दिन प्रातः ही 'श्री जगन्नाथ महाप्रभु सम्मेलन' की पवित्र स्थली के दर्शन कर प्रणाम निवेदन किये। पश्चात् 'श्री जगन्नाथ महाप्रभु जी' के इक्कीस या बाईस प्रकार के विलक्षण श्रृंगार दर्शन की छवि निहारी। तत्पश्चात् 'दिव्य जीवन संघ' का पुस्तकालय देख आनन्दित हुआ। पाँच-छह

पुस्तकें खरीदीं; उन पर गुरुमहाराजश्री स्वामी चिदानन्द जी महाराज, श्री स्वामी कृष्णानन्द जी महाराज के नाम पढ़े तथा पत्ता 'शिवानन्द आश्रम, हिमालय' अंकित था, जिसके संस्थापक ब्रह्मलीन सद्गुरु श्री स्वामी शिवानन्द जी महाराज थे। ये सब जान मनमयूर नाच उठा।

पुस्तक पर पढ़ कर सद्गुरु' का अर्थ जानने की इच्छा हुई। अढ़ाई मास पर्यन्त पूछताछ करने पर सबने अपनी विवशता जतलाई। वासगृह के बगल के कमरे में रहने वाले एक सज्जन ने मुझे 'सद्गुरु स्वामी निगमानन्द सरस्वती' की जीवनी विषयक एक पुस्तक दी। जिसके प्रथम भाग में स्वामी निगमानन्द जी की जीवनी का वर्णन है, द्वितीय भाग में सद्गुरु का ही पूर्णरूपेण बोधमय, रोचक व प्रभावी वर्णन था। दूसरे दिन प्रातःकाल बस से १२५ कि. मी. यात्रा करनी थी। सीट खिड़की की ओर मिल गयी। 'सद्गुरु' के स्वाध्याय में मैं तल्लीन हो गया। सब सुधि भूल गया। हालांकि बस में कोलाहल था, कैसेट बज रहे थे। पुस्तक में वर्णित सद्गुरु स्वरूप में मैं निमग्न हो गया-सद्गुरु ही ब्रह्मा-विष्णु-महेश हैं, तैंतीस करोड़ देवता की साक्षात् विभूति हैं, वह सर्वव्यापक हैं, कण-कण में उसकी विद्यमानता है तथा स्थावर-जंगम में उसकी सत्ता विराजमान है। दर्शन, स्पर्श और सम्भाषण द्वारा शरण में ले लेते हैं और लक्ष्य प्राप्ति का मार्ग दर्शाते हैं।

यह सेवक जय गणेश कीर्तन, गुरुस्तोत्र और देवी माँ के स्तोत्र पाठ करता हुआ सद्गुरु स्वरूप का ही हृदय-पटल पर स्वरूप-दर्शन, चिन्तन करता हुआ, सब-कुछ भूल गया। तन्मयता में मैंने अपने को अनन्त आकाश के ऊपर खड़ा देखा। चारों ओर शून्य ही शून्य था। एक दिशा से ज्योतिर्मय आलोक रक्तिम सूर्य की तरह उदीयमान दृष्टिगोचर हुआ। उसके मध्य गुरुमहाराजश्री स्वामी चिदानन्द जी महाराज के श्रीपादयुगल के दर्शन हुए; उसके बाद शनैः शनैः दिव्य सर्वांग देह का आशीर्वाद-मुद्रा में आविर्भाव अवलोकन किया। तत्पश्चात् देखा कि गुरुमहाराज मधुर मन्थर गति से मेरी ओर आ रहे हैं और यह सेवक अनन्त आकाश की ओर उत्सुकता से सानन्द बढ़ रहा है। सम्मिलन हुआ, नतमस्तक हो गुरुमहाराज के दिव्य स्वरूप को प्रणिपात किया तो एक आशीर्वादात्मक ज्योति का सिर पर प्रत्यक्ष अनुभव किया। अद्भुत व अपूर्व अनुभूति हुई सर्वोच्च स्थिति की। जब सिर उठाया तो वे अन्तर्धान... अनन्त आकाश भी तिरोहित। मैं भी आकाश पर नहीं। भाव-समाधि में गुरुभगवान् के दिव्य दर्शन करने के बाद अपने को इस इहलोक में कोलाहलपूर्ण बस में उसी स्थिति में बैठे देखा तो मर्माहत हुआ जो अवर्णनीय है। हृदय तड़पता रहा। आँखों से अविरल प्रेमाश्रु प्रवाहित होते रहे। फिर मन स्वयं ही सन्तुष्ट हुआ कि गुरुभगवान् ने इस प्रकार अनन्त में ज्योतिर्मय मण्डल में अपने 'सत् चित् आनन्द' के प्रत्यक्ष दर्शन दे कर यह सुनिश्चित कर दिया कि मुझे अपना साक्षात् चरणाश्रय देंगे वह भी अपनी अहेतुकी कृपा से ही। यह दिव्य अनुभव 'श्री जगन्नाथ महाप्रभु सम्मेलन' (कटक) के तीन मास पश्चात् हुआ। कृपा-कृपा! मेरा अहोभाग्य। सद्गुरु सर्वत्र विद्यमान है, सर्वव्यापी है यह भी अविलम्ब प्रमाणित कर दिया। धन्य है गुरुमहाराज, धन्य है यह सेवक ।

सद्गुरु अन्तर्यामी हैं-

साधना सप्ताह राउरकेला, उड़ीसा में २९ दिसम्बर १९८६ को मन्त्र-दीक्षा दे कर गुरुमहाराज ने इस सेवक को कृतार्थ किया, मैं गद्गद् हो गया। हृदय में नव-प्रकाश का उदय हुआ। मैं गुरुदेव लिखित पुस्तकों का अध्ययन करता रहता था। एक पुस्तक में निर्देश था कि प्रथमतः माता-पिता को, अनन्तर सम्बन्धियों को, तदनन्तर सबको तुष्ट करो, तब मेरी शरण में आओ। निर्देशानुसार यह सेवक दो वर्ष पर्यन्त माता-पिता की सेवा के साथ-साथ अपनी साधना-

भजन भी सुचारु रूप से करता रहा। इसके बाद कटक शाखा में कुछ मास सेवा दी। उपरान्त 'शिवानन्द शत वार्षिक बालक उच्च विद्यालय, भुवनेश्वर में छह मास सेवा दी। सन् १९८७ में सरुदेव 'स्वामी शिवानन्द जी महाराज की जन्म शताब्दी महोत्सव' में सेवा देने का अलभ्य सौभाग्य प्राप्त हुआ।

कटक के भक्तों की प्रार्थना को स्वीकारते हुए गुरुमहाराज २४ सितम्बर १९८७ को वहाँ पधारे। उड़ीसा के स्वनामधन्य (सामाजिक पत्रिका के सम्पादक) पूज्य श्री राधानाथ रथ ने गुरुमहाराज को माल्यार्पण किया। भक्तों ने आरती उतारी। गुरुमहाराज ने अपना भाषण प्रारम्भ किया। गुरु महाराज ने कहा, "देखो! उड़ीसा के कालाहाण्डि और कोरापुट क्षेत्र में दुर्भिक्ष के कारण वहाँ के वासी अपना घर-बार छोड़ कर बाहर जा रहे हैं और इधर आपने मेरे जन्मोत्सव के उपलक्ष्य में मिठाई, फल के टोकरे भर कर रखे हुए हैं। यदि आप मुझे जन्मदिन की सचमुच भेंट देना चाहते हैं तो एक कमेटी का गठन करिए। फल, मिठाई ले जा कर उधर क्षुधा-पीड़ित जनों को खिलाइए, उनके मुख पर मुस्कराहट लाइए। फूलमाला उन्हें धारण कराइए। उनकी सेवा कीजिए। यही मेरे प्रति जन्मदिन की यथार्थ में सच्ची और बढ़िया भेंट होगी। मैं कल वायुयान से प्रस्थान करने वाला हूँ, इससे पूर्व यदि मुझे उपर्युक्त कार्यक्रम को क्रियान्वित करने की सूचना नहीं मिली तो मैं फिर कभी भी उड़ीसा नहीं आऊँगा। गुरुदेव श्री स्वामी शिवानन्द जी अपने जीवन-काल में सेवा करते रहे। उनकी ३०० पुस्तकों में भी इसी सेवा की महत्ता पर लिखित रूप में भी बारम्बार बल दिया गया। यह सेवक भी २५ वर्ष से यही करता और यही कहता आ रहा है।" परिणामतः दो-चार और भक्तों के साथ यह सेवक (मैं) भी सेवा हेतु वहाँ जाने के लिए तैयार हो गया। गुरुमहाराज को प्रस्थान से पूर्व सूचित कर दिया गया। अनेकानेक असुविधाओं के होते हुए भी सोत्साह, सानन्द सेवा देते रहे। मैं मलेरिया व अन्य दो-तीन बीमारियों से ग्रस्त हो गया। गुरुकृपा से कुछ महसूस नहीं किया। घोर वन में विपरीत स्थितियों में ३ साल सेवा करने के बाद सन् १९९० में गुरुमहाराज वहाँ पधारे। छह पहाड़, तीन नदियाँ पार कर २२/२३ कि. मी. चल कर, सब प्रकार की असुविधा कठिनाइयाँ झेल कर वन में आदिवासी भक्त जनों को दर्शन देने, उनकी दशा देखने, उन पर कृपा करने सोल्लास वहाँ पहुँचे। धन्य हैं गुरुमहाराज।

इस सेवक पर कृपा करके अपने साथ वहाँ से गुरुनिवास' शिवानन्द आश्रम अपने साथ ले आये। 'गुरुमहाराज की दया व करुणा के फलस्वरूप उनकी सेवा का सुअवसर मिला व सौभाग्य प्राप्त हुआ। गुरुमहाराज सवेरे पाँच बजे से रात्रि डेढ़ बजे तक कार्यरत रहते थे। यह सन् १९९० बात है तब गुरुमहाराज शारीरिक रूप से सक्रिय व स्वस्थ थे। उनकी कार्यप्रणाली साधारण सन्त की तरह न हो कर असाधारण थी। वह जीवन्मुक्त व भगवत्साक्षात्कार प्राप्त उच्चकोटि के योगी थे। उनके प्रत्येक कार्य में परिपूर्णता थी (इस सेवक सहित वहाँ कुल आठ सेवक थे)। गुरुमहाराज की निजी सेवा (खाद्य-पेय आदि की) में एक सीनियर ब्रह्मचारी (सेवक) थे। मैं उनके साथ सहकर्मी-सहयोगी रूप में सेवा करता था। सीनियर सेवक प्रातः से सायं तक सेवा करते। रात्रि-सेवा का सौभाग्य मुझे मिला। कभी समय मिलने पर दोनों में विचार-विनिमय होता तो मैं उससे यही कहता, 'गुरुसेवा ही भगवान् की सेवा।' संशय रहित हो कर तुम सेवा करो।

ग्रीष्म ऋतु में गुरुमहाराज, मुम्बई से भक्तों द्वारा भेजे गये अलफानसो आम का रस कैन्डेन्सड मिल्क के साथ दोपहर के समय भोजन में लेते थे। एक दिन दोपहर के भोजन की तैयारी सुढंग से कर दी। एक बड़ी प्लेट में तीन आम के साथ छुरी भी रख दी (आम काटने के लिए)। गुरुमहाराज भोजन-प्रसाद पाने के लिए यथास्थान नियत आसन पर विराजे। सीनियर सेवक

से गुरुमहाराज ने कहा, "ओ जी-आम वाली प्लेट मेरे पास लाओ।" एक आम को उठाया, निर्देश दिया कि इस आम को किचन में ले जा कर ऊपर से गोलाकार थोड़ा सा काट कर बाकी आम के टुकड़े करके गुरुनिवास में सबको एक-एक टुकड़ा दे कर मेरे पास आइए। किचन में आ कर आम का ऊपर का भाग थोड़ा गोलाकार काट कर फेंक दिया। दो टुकड़े काटने पर देखा कि उसमें कीड़े भरे पड़े थे। मैं मदद कर रहा था। हम चकित कि अब क्या करें। सेवक ने आम को डस्टबिन में फेंकने के लिए कहा। **इस सेवक ने सीनियर सेवक से कहा कि गुरुमहाराज अन्तर्यामी हैं।** पूछे तो कहना कि कीड़े थे उसमें, फेंक दिया। गुरुप्रसाद साक्षी है। का गुरुमहाराज के पास पहुँचे। देखते ही बोले, "आपने आम एक-एक टुकड़ा सबको दे दिया क्या?" उसने धीमी आवाज में कहा, "स्वामी जी।" स्वामी जी बोले, "हाँ जी।" फिर वह बोला, "स्वामी जी, आम काटने पर देखा कि उसमें कीड़े भरे थे तो हमने डस्टबिन में फेंक किया।" स्वामी जी थोड़ा उच्च स्वर में बोले कि "आप सच नहीं कह रहे हैं, और किसने देखा यह।" उसने कहा, "गुरुप्रसाद वहाँ थे उस समय।" तब धीमे स्वर में गुरुमहाराज ने कहा, "मेरे सामने पास आ कर बैठो। मैं जो-कुछ पूछूँ, ध्यानपूर्वक सुनो और ध्यान से उत्तर दो।" स्वामी जी ने पूछा,' "प्लेट में कितने आम थे?" उसने उत्तर दिया, "जी तीन।" स्वामी जी ने कहा- "साइज में, रंग में कोई फर्क था क्या या किसी पर भी दाग था क्या?" वह बोला, "नहीं, स्वामी जी।" "तो फिर वहीं एक आम मैंने काटने को क्यों दिया?" वह चुप हो स्वामी जी की ओर देखने लगा। थोड़ी देर के लिए सन्नाटा छा गया। फिर स्वामी जी बोले- "हमने वहीं आम काटने को क्यों दिया?" ऐसे ही तीन-चार बार पूछा, "हमने वही आम काटने को क्यों दिया अभी आप समझ गये क्या?" वह सेवक धीर, स्थिर, गम्भीर, भय-भाव से बोले, "हाँ जी, स्वामी महाराज।" स्वामी जी ने कहा, "अब आप जा सकते

बाहर विजिटर हाल में आ गये। मैंने उससे कहा, "जो समझ में आ गया, वह थोड़ा हमें भी बताइए।" उसने कहा कि, "तीन आम में से जिस एक आम के अन्दर जो कीड़ा देख सकते हैं, जान सकते हैं, वे हम सब लोगों के बारे में भी जानते हैं। वे भूत, वर्तमान, भविष्यत् के बारे में सब जानते हैं। वे समयोचित स्थिति द्वारा, व्यवहार द्वारा, तथा धीरे-धीरे सेवा, प्रेम, दान में प्रवृत्त कर लक्ष्य की ओर पहुँचाने के लिए कृपा करते हैं। वे अन्तर्यामी हैं।" पाँच साल के सान्निध्य के बाद आज गुरुमहाराज की 'दिव्य लीला' के माध्यम से तत्त्व को जानने से मैं धन्य-धन्य हो गया। अतः गुरु अन्तर्यामी हैं।

'या देवी सर्वभूतेषु मातृरूपेण संस्थिता' :-

प्रतिदिन की भाँति गुरुमहाराज एक दिन रात्रि सत्संग समापन करके गुरुनिवास में १०.३० बजे पहुँचे। उसी समय एक ब्रह्मचारी श्री कुंजापुरी माँ के दर्शन करके आये थे। उन्होंने गुरुमहाराज से कहा कि वह माँ के दर्शनार्थ कुंजापुरी गये थे। वहाँ के पुजारी ने आपको प्रणाम निवेदन किये हैं और माँ का विशेष पूजा-प्रसाद, फूलमाला व कुंकुम दिया है। ब्रह्मचारी जी ने गुरुमहाराज के ललाट पर कुंकुम लगाया, फूलहार धारण करवाया और हाथ में प्रसाद दिया और चरण स्पर्श करके चले गये। इस सेवक ने यह सब दृश्य देख कर भावमय जगत् में गुरुमहाराज के साक्षात् देवी माँ के रूप में दर्शन करते हुए स्तुति की, 'या देवि सर्वभूतेषु मातृरूपेण संस्थिता' स्तोत्र पाठ कर दो बार मानसिक दण्डवत् प्रणाम किया। पश्चात् सेवक ने गुरुमहाराज का दुपट्टा तह करके रखा। तत्पश्चात् रात्रि भोजन प्रसाद की तैयारी की। गुरुमहाराज बाथरूम से आ कर आसन पर विराज गये। गुरुमहाराज रात्रि में कॅन्डेन्सड सूप में चीनी, हारलिक्स, मिल्क और कॅन्डेन्सड मिल्क

मिला कर केवल एक गिलास सूप लेते थे। मैं सब चीजें पकड़ाने में सहायता करता था। गुरुमहाराज प्रथमतः भगवान् को अर्पित करते। ब्रह्मार्पणम्, ब्रह्म हवि..., हरिः ॐ तत्सत्, ब्रह्मार्पणमस्तु, ॐ प्राणाय स्वाहा, अपानाय स्वाहा, व्यानाय स्वाहा, उदानाय स्वाहा, समानाय स्वाहा, ॐ श्री कृष्णार्पणमस्तु, सच्चिदानन्द भगवान् की जय, अन्नपूर्णा माता की जय, सद्गुरु श्री स्वामी शिवानन्द महाराज की जय, बोल गंगामाता की जय, भागीरथी-मातेश्वरी-माँ जाह्नवी, नारायण-नारायण- नारायण नारायण, भोजन काले गोविन्द नाम संकीर्तन गोविन्दा, गोविन्दा, गोविन्दा। गुरुमहाराज ने सूपपान करना आरम्भ किया। गुरुमहाराज का प्रत्येक कार्य धीरे-धीरे स्थिर गति से होता था, एक गिलास मात्र लेने में ४५ मिनट लगते थे। सब होने पर मैंने प्लास्टिक कवर तह किया।

पाटा यथा स्थान रख दिया। थाली आदि- फ्लास्क, सब सामान किचन में ले आया। एक गिलास में तीनभाग गरम पानी भर ढक कर वाशबेसिन पर रख दिया। कुल्ले करने का बाद गुरुमहाराज ने गिलास मुझे दिया। मैं किचन में आ गया। देखा, तो बगल में गुरुमहाराज खड़े हैं। कहने लगे, सूप का, दूध का फ्लास्क एवं कॅन्डेन्सड मिल्क दो। एक गिलास में सब वस्तुएँ क्रम से डालते गया, सस्नेह चम्मच से चीनी मिला दी। वह सूप का तैयार गिलास मेरे हाथ में दे कर बोले (माँ की तरह) यह किचन में आपको पीने के लिए दे रहा हूँ। इस प्रकार सेवक ने अपने मन से जो प्रार्थना की थी फलस्वरूप मातृस्वरूप को प्रकाशित कर दिया- 'या देवी सर्वभूतेषु मातृरूपेण संस्थिता।' वे भावग्राही हैं- 'भावग्राही जनार्दन'। कार्य-सेवा माध्यम से भी हृदयस्थ भाव को ग्रहण कर लेते हैं।

ज्योतिषामपि तज्योतिस्तमसः

अश्विनमास के नवरात्र प्रारम्भ होने में दो दिन शेष १४ वर्ष से लगातार नवरात्र व्रत कर रहा था, इस बार धारणा थी कि गुरुमहाराज के आशीर्वाद से उनके ही थे। यह सान्निध्य में नवरात्र करूँ। एक बार गुरुमहाराज बरामदे में (गुरुनिवास के) आये तो करबद्ध प्रार्थना की। नवरात्र प्रारम्भ होने में ही दो दिन शेष हैं अतः नवरात्र व्रत करने के लिए इस सेवक को आशीर्वाद दीजिए। गुरुमहाराज प्रसन्नता से बोले, "हर साधना के लिए मेरा आशीर्वाद हमेशा रहता है। आप नवरात्र जैसे करते आ रहे हैं वैसे ही करिए, मेरा आशीर्वाद है।"

पार्श्व में खड़े ब्रह्मचारी सत्यजित से कहा कि साधना के लिए जो कुछ (फल, दूध आदि) चाहिए, आप इनको गुरुनिवास से ले कर देते रहना। आशीर्वाद से उत्साह द्विगुणित हो गया। व्रत का नियम था-प्रतिदिन ३ बजे (प्रभात) गंगा जी में स्नान करना, कमरे में एकान्त में रहना, मौनधारण करना, प्रतिदिन सविधि सप्तशती का सम्पूर्ण पाठ करना, अखण्डदीप जलाना, आसनप्राणायाम के साथ त्रिसंध्या करना, ३०० माला से ज्यादा जप करना, दूधफल का अल्प सेवन, जमीन पर चटाई बिछा कर शयन करना। इस प्रकार एक रात्रि ढाई बजे से दूसरी रात्रि ९ बजे तक नियमानुसार नित्यनियम करते रहने से व्रत निर्विघ्न सम्पन्न हुआ।

नवरात्रव्रत पूर्ण होने से पूर्व हृदय में एक सात्त्विक इच्छा थी कि नवम दिन गुरुमहाराज के श्रीचरणों में जा कर आरती, पूजा-अर्चना, भोग निवेदित करके ही व्रत को समर्पित करना है। जब तक यह नहीं होगा तब तक अन्नजल ग्रहण (व्रत का पारण) नहीं करूँगा। सत्यजित तो बराबर नौ दिन तक प्रतिदिन फल-दूध देने आते रहे। उसको 'एक कागज पर अपना भाव लिखित रूप में प्रकट कर' दिया कि गुरुमहाराज को देने की कृपा करें। नवम दिन व्रत की समाप्ति उपरान्त एक

थाली में एक सेव, फूलमाला, कुंकुम और आरती सजा कर गुरुनिवास पहुँचा। हाल में गुरुमहाराज के चित्र के सम्मुख मौन बैठा रहा। सबको मालूम था कि पूजा, आरती किये बिना कुछ नहीं खावेगा। एक के बाद एक सेवक गुरुमहाराज को सूचित करते रहे। वे सुन कर भी मौन रहे। सबका मेरे प्रति प्रेमभाव था। ग्यारह, बारह, एक, दो बज गया। जब गुरुमहाराज कार्य समाप्ति करके भोजन-प्रसाद पाने जाने लगे तो एक सेवक ने कहा- स्वामी जी गुरुप्रसाद ने आठ दिन दूध-फल का अल्पाहार लिया है, दो बज गये, बिना कुछ खाये दो।" बैठा है। गुरुमहाराज सुनते ही तुरन्त हाल में आ गये।

आते ही कहा, "हाल में कोई नहीं रहेगा, पर्दा लगा

सेवक गुरुमहाराज को साष्टांग प्रणाम कर घुटनों के बल खड़ा हुआ तो गुरुमहाराज ने कहा- "माँ का व्रत पूर्ण हुआ, अब आप जो करना चाहते हैं सो करिए।"

सेवक ने भय और भक्ति के साथ 'ॐ' का उच्चारण किया। स्तोत्र मन्त्रोचारण करते हुए गुरुमहाराज के ललाट पर कुंकुम का तिलक लगाया। कंठ में फूलमाला पहनायी। लाल फूल शीश पर और श्रीयुगल चरणारविन्द पर अर्पित किये तदनन्तर स्तोत्र के साथ आरती करके शान्तिपाठ किया। साष्टांग दण्डवत् प्रणाम किया।

गुरुमहाराज ने धीरे से पूछा, "कितनी जप-माला प्रतिदिन करते थे।" सेवक ने उत्तर दिया, "३६० माला से ज्यादा।" "और क्या किया?" बताया, "प्रतिदिन पूर्ण सप्तशती का पाठ किया।" गुरुमहाराज बोले, "बहुत अच्छा" (I am satisfied)। इसके उपरान्त स्वामी जी ने निजी सेवकों को बुलाया। सब आये, सब प्रसन्न थे। गुरुमहाराज ने कहा इस सेवक का दिया हुआ यह सेव मेरे भोजन में मुझे देना। गुरुमहाराज अपने कक्ष में चले गये।

सेवक वहीं हाल में ही खड़ा ही था अभी, हठात् सत्यजित ब्रह्मचारी दोनों हाथों से इस सेवक को ऊपर उठा कर नाचने लगा, बोलने लगा, "हमको मिल गया, हमको मिल गया, हमको मिल गया।" दूसरे सेवक भी माँ की और गुरुमहाराज की जय-जय करने लगे। सेवक ने आश्चर्य से पूछा कि, "क्या मिल गया?"

हर्षातिरेक में सत्यजित ब्रह्मचारी ने बताया कि, "जब आप गुरुमहाराज की आरती उतार रहे थे। पर्दे की ओट से एक किनारे पर मैंने देखा एक विराट् ज्योतिर्मय आलोक। आलोक इतना तेजोमय था कि आप और गुरुमहाराज दिखाई नहीं दिये। आलोक ही आलोक दिखायी दिया। यही कारण है कि मैं आनन्दाभिभूत हो नाच रहा हूँ। मिल गया, पा लिया 'गुरुमहाराज ज्योतिर्मय परब्रह्म हैं' जैसा कि शास्त्रों में वर्णित है"-

ज्योतिषामपि तज्योतिस्तमसः परमुच्यते।
ज्ञानं ज्ञेयं ज्ञानगम्यं हदि सर्वस्य विष्ठितम् ।।

गीता : १३/१७

श्री स्वामी जी के जन्मदिन

- एक श्रद्धालु संन्यासिनी साधिका-

"अजो नित्यः शाश्वतोऽयं पुराणो न हन्यते हन्यमाने शरीरे ॥"

"यह (आत्मा) अजन्मा, नित्य, शाश्वत (और) पुरातन है, शरीर के नाश होने पर भी (यह) नाश नहीं होता है।"-श्रीमद्भगवद्गीता : २-२०

जिसने भी श्री स्वामी चिदानन्द जी महाराज के जोशीले प्रवचन कभी भी सुने हैं, उस हर एक के कणों में ये शब्द गूँजेंगे। यही सत्य है जो उन्होंने चरितार्थ करके बताया है और इसलिए वे बहुधा अति सफलतापूर्वक अपने जन्मदिन-समारोह से दूर रहे। सामान्यतया वे आश्रम से दूर ही होते थे; किन्तु सभी भक्त उनकी जन्मतारीख से परिचित थे, इस कारण जन्मदिन एक छोटे दायरे में मनाये गये। उनके चार जन्मदिन आश्रम में विशेष महोत्सव रूप में मनाये गये। ३९ वीं जन्मजयन्ती, ५० वीं जन्मजयन्ती अथवा स्वर्ण (सुवर्ण) जयन्ती, ६० वीं जन्मजयन्ती अथवा हीरक जयन्ती तथा ७५ वीं जन्मजयन्ती अथवा अमृतमहोत्सव ।

३९ वाँ जन्मदिन

गुरुदेव के अद्‌भुत विचारों में से यह एक विचार था कि उनके अति प्रिय शिष्य का जन्मदिन भव्य रूप से मनाया जाये। वह जन्मदिन दिनांक २४ सितम्बर के स्थान पर २४ जून, १९५५ को मनाया जाये, जिससे वह गुरुदेव के स्वयं के जन्मदिन के अति समीप न हो। वह एक असाधारण गुरु द्वारा, असाधारण शिष्य के लिए, असाधारण उत्सव था। वही एक अवसर था कि जब स्वामी जी का जन्मोत्सव यथार्थ में मनाया गया: एक यशस्वी व्यक्ति के रूप में, एक सन्त के रूप में, एक कर्म-ज्ञान-भक्तियोग के योगी के रूप में। उनके सब अगणित गुणों की प्रशंसा की गयी उनके करुणा, प्रेम; नम्रता, निःस्वार्थता, रोगमुक्ति दिलाने वाले उनके हाथ, सदैव सेवा-तत्परता, विश्वव्यापकता, हृदयस्पर्शी प्रवचन, प्रेरक कीर्तन तथा भजन, ज्ञान तथा बोध और सबसे अधिक गुरुप्रति आत्म-समर्पण।

सर्वप्रथम स्वयं गुरुदेव की ओर से सम्मान और भावांजलि अर्पित हुई, तत्पश्चात् उनके गुरुभाइयों द्वारा प्रेमपूर्ण, प्रशंसक, उल्लासपूर्ण तथा कभी-कभी अति विनोदी पद्धति से भावांजलि प्रवाहित हुई। स्वामी जी को अति विनीत भाव से वह सब स्वीकारना पड़ा। अन्त में, उन्होंने अपने विरोधी शब्दों में कहा "आप सबने इस चिदानन्द नाम के व्यक्ति का इतना अद्‌भुत वर्णन किया है कि मैं सोचता हूँ कि किसी दिन उसे मिलना मुझे अच्छा लगेगा।"

५० वाँ जन्मदिन अथवा स्वर्ण जयन्ती महोत्सव

वर्ष १९६६ पर्यंत स्वामी जी ने दिव्य जीवन संघ की भारत की अनेक शाखाओं पंजाब, गुजरात, उड़ीसा, दक्षिण भारत, बिहार, मुंबई, मलेशिया आदि की यात्राएँ कई बार पूर्व ही सम्पन्न की थी तथा सब शाखाओं ने स्वामी जी की स्वर्ण-जयन्ती हेतु, अति प्रेम तथा पूज्य भाव

से, विशेष उत्सव आयोजित किये थे। उन्होंने सहस्रों लोगों के मन जीत लिये थे तथा अपनी दिव्यता द्वारा ईश्वर (परमात्मा) के लिए प्रेम जाग्रत किया था। उन्होंने २४ सितम्बर मुख्यालय में व्यतीत किया और इस प्रकार उनके गुरुभाइयों तथा गुरुबहनों को, शिष्यों और भक्तों को उनका ५० वाँ जन्मदिन मनाने का आनन्द लूटने दिया। सदा की तरह, स्वामी जी की रुचि उत्सव मनाने में नहीं किन्तु सबको निज वास्तविक स्वरूप की स्मृति हेतु जाग्रत करने में थी।

"प्रिय अमर आत्मन्!

जब कि मेरे अनेक आध्यात्मिक साथियों ने मेरा जन्मदिन मनाना निश्चित किया है तब इस प्रसंग पर मैं आपको इस बात की स्मृति दिलाना चाहता हूँ कि वास्तविक रूप से आप अजन्मा और अमर हैं। अपने सच्चे स्वरूप के परम सत्य का आज स्मरण करना चाहिए। अजन्मा को जन्मदिन कैसा? जन्म तो इस शरीर का ही होता है। मैं यह शरीर नहीं हूँ। मैं यह बुद्धि नहीं हूँ। अमर आत्मन् हूँ मैं! गुरुदेव स्वामी शिवानन्द जी यही सिखाते हैं। मैं चिदानन्द हूँ। वास्तव में मैं चैतन्यस्वरूप और आनन्द हूँ। और आप भी यही हैं। आप चिदानन्द हैं। आप सच्चिदानन्द हैं। आप शाश्वत, शुद्ध, परिपूर्ण प्रज्ञ, परमानन्द परम तत्त्व हैं। स्मरण करो, मनन करो, चिन्तन करो, ध्यान करो और साक्षात्कार पाओ। यह आपका सबसे महत्त्वपूर्ण कर्तव्य है। यही वास्तव में सर्वोत्तम और भव्यातिभव्य उत्सव है।"

६० वाँ जन्मदिन अथवा हीरक महोत्सव

यह एक दीर्घकाल से आयोजित उत्सव और आश्रम के इतिहास में महानतम उत्सव था। इस का प्रारम्भ १५ सितम्बर को साधना-शिविर से हुआ, जिसके पश्चात् एक सांस्कृतिक और आध्यात्मिक परिषद् तथा दिनांक २३ और २४ सितम्बर, १९७६ को परमाध्यक्ष स्वामी जी के हीरक महोत्सव से समापन हुआ। इस अवसर के महत्त्व तथा मांगल्य सूचक, समस्त भारत तथा विश्व से, १५०० से अधिक प्रतिभागी एकत्रित हुए थे। हरिद्वार, ऋषिकेश तथा भारत के अन्य आश्रमों में से महान् सन्त, महामण्डलेश्वर, अपने आध्यात्मिक उत्कर्ष प्राप्त कराने वाले प्रवचनों से स्वामी जी को सम्मानित करने आये थे। कैलास-आश्रम के परम पूज्य स्वामी श्री हरिहरतीर्थ जी ने मांगलिक उद्घाटन प्रवचन दिया। मलेशिया से स्वामी प्रणवानन्द जी और साउथ अफ्रीका से स्वामी शंकरानन्द जी आये थे। कवियोगी श्री शुद्धानन्द भारती जी ने गुरुदेव विषयक प्रवचन दिया और रात्रि-सत्संग में, दासाश्रम, बंगलूरु के सन्त पूज्य श्री केशवदास जी ने, इस प्रसंग पर, यु. एस. ए. से विशेष रूप से आये अपने शिष्यों के साथ, अपनी हरिकथाओं से सबको प्रसन्न किया। और सबके लिए बड़े हर्ष का विषय था कि श्री श्री आनन्दमयी माँ ने अपनी पावन उपस्थिति से इस भव्य महोत्सव को धन्य बनाया। हर जगह संगीत गूँज रहा था और भव्य नगर-कीर्तन सम्पन्न हुआ। सब भाषाओं में अनेक पुस्तकों का विमोचन हुआ; एक निःशुल्क नेत्र-यज्ञ हुआ तथा सूचित योग-वेदान्त-फारेस्ट ऐकैडेमी की इमारत हेतु भूमि-पूजा सम्पन्न हुई।

षष्ट्यब्दि-पूर्ति हेतु समस्त वैदिक विधियों से स्वामी चिदानन्द जी महाराज के पावन संस्कार सम्पन्न किये गये तथा उस हेतु विशेष रूप से आये पण्डितों द्वारा वेद-मन्त्रोच्चार सहित सात पवित्र नदियों एवं चार महासागरों के जल से स्नान कराया गया।

७५ वाँ जन्मदिन अथवा अमृत महोत्सव

इस अवसर पर स्वामी जी केवल मात्र कुछ दिवसीय साधना तथा आध्यात्मिक शिक्षाओं के कार्यक्रमों से सन्तुष्ट नहीं थे। उन्होंने, एक पूर्ण दशक की माँग की। "१९९०- १९९९ के इस दशक को एक 'दिव्य दशक' बनाओ।" स्वामी जी महाराज समस्त दिव्य जीवन संघ को ईश्वर-जाग्रति, भाईचारा तथा सुसंवादिता की भावनाओं से नयी सहस्राब्दी में प्रवेश हेतु तैयार करना चाहते थे। इसलिए मुख्यालय, भारत तथा विदेश की समस्त शाखाएँ बीसवीं शताब्दी के इस अन्तिम दशक को एक दिव्य दशक बना कर इक्कीसवीं शताब्दी में एक भव्य प्रवेश के लिए तैयार करने हेतु कार्यरत थे। अनेक परिषदों, योग-शिविरों, साधना- सप्ताहों तथा आध्यात्मिक शिविरों का आयोजन किया गया, बहुसंख्य पुस्तकें प्रकाशित और पुनः प्रकाशित हुई, समाज-सेवा, विशेष रूप से भारत के ग्राम्य-विस्तारों में अधिक सघन की गयी और मेडिकल कैम्प्स में कई गुनी बढ़ोतरी हुई। हरएक को प्रोत्साहित, प्रेरणायुक्त और आशीर्वादित करने हेतु स्वामी जी ने भारत तथा विश्व की यात्राओं का सातत्य रखा। किन्तु, स्वामी जी केवल मात्र शाखाओं को कार्यरत करना नहीं चाहते थे किन्तु प्रत्येक व्यक्तिगत साधक से अपना जीवन दिव्य जीवन बनाने हेतु विशेष प्रयास करना चाहते थे। उन्होंने इन दस वर्षों में जप-अनुष्ठान, अथवा स्वाध्याय-अनुष्ठान, निश्चित समयावधि में लिखित जप और ध्यान करने के लिए एवं लोगों की एक मण्डली को नाम-संकीर्तन, अखण्ड कीर्तन अथवा नाम-सप्ताह की सम्पन्नता के सूचन किये।

सितम्बर १९९१ एक महान् और भव्य अवसर था और इतने सारे समर्पित शिष्यों और भक्तों ने उसकी सफलता के लिए प्रेम तथा नैष्ठिक भक्ति से कार्य किया! इसका शुभारम्भ ६ सितम्बर को भागवत कथा से हुआ, साधना-सप्ताह, एक अन्तर्राष्ट्रीय तथा सांस्कृतिक परिषद् से कार्यरत रहा और दिनांक २४ सितम्बर को प्रिय स्वामी जी के अमृत महोत्सव से समाप्त हुआ। उसके पश्चात् मुख्यत्वे, स्वामी जी को आराम देने हेतु, पूर्ण रूप से कार्यक्रम-शून्य नहीं, किन्तु हलके-फुलके कार्यक्रमों युक्त विदेश से आये हुए भक्तों के लिए 'आध्यात्मिक सहजीवन'-'A Spiritual Live-in' नामक शिविर मसूरी में आयोजित हुआ। स्वामी जी, नन्हें हँनेको का हाथ अपने हाथ में लिये, 'मुझे जन्मदिन मुबारक हो'- 'Happy Birthday to me' -गाते-गाते पैदल ही होटल में आये।

दिव्य जीवन संघ मुख्यालय
शिवानन्द आश्रम, ऋषिकेश
(उत्तराखण्ड)

साक्षात् करुणानिधि परमात्मा

-श्री गुरुचरणाश्रयी संन्यासी सेवक-

दिसम्बर की रात थी। हिमालय की बर्फीली चोटियों से हो कर गंगामैया के ठण्डे जल को छू कर बहने वाली तेज हवा पूरे ऋषिकेश को ठिठुरा रही थी। आदमी तो क्या, पेड़, पौधे, पत्ते तक ठण्डी हवा से काँप रहे थे और उनसे हवा की सूँ-सूँ जैसी आवाज सुनायी दे रही थी। ऐसी रात में परम पूज्य स्वामी चिदानन्द जी निजी सहायक को कुछ डिक्टेशन दे रहे थे। अन्तर्राष्ट्रीय

संस्था के परमाध्यक्ष के नाते स्वामी जी का पूरा दिन अति व्यस्त रहा करता था और डिक्टेशन देने का काम रात १०-१०१/२ बजे के बाद ही हो सकता था। आज भी वैसा ही हुआ था।

-एक महत्त्वपूर्ण विषय पर डिक्टेशन देते-देते अचानक स्वामी जी ने अपने सहायक से पूछा-

'आपको कुछ सुनायी दे रहा है?'

'हाँ स्वामी जी, बहुत तेज हवा की आवाज है।' 'नहीं, नहीं। इसके अलावा और कुछ... शायद कोई कुत्ता रो रहा है....

लेकिन ध्यान से सुनने पर भी जब कुछ सुनावी नहीं पड़ा, तब वे सहायक खुद शाल ओढ़ कर बाहर निकला। गुरु निवास की चारों ओर देखा लेकिन उन्हें कुछ भी नहीं दिखाई दिया। न कुछ सुनने में आया। सिर्फ हवा की आवाज सूँ... सूँ... थरथराते पेड़ और अस्थियों को कंपाने वाली सर्दी..... 'कोई भी तो नहीं है स्वामी जी; मुझे तो कुछ सुनायी नहीं दे रहा 31' अन्दर आ कर उन्होंने कहा।

'ऐसे कैसे हो सकता है?' यह कहते हुए स्वामी जी खुद जल्दी में बाहर निकले। चेहरे पर परेशानी फैली हुई थी और बाहर निकलने की इतनी जल्दी थी, कि न तो स्वामी जी ने जूते पहने, न शाल ओढ़ी... बस... बदन पर सूती वस्त्र पहने हुए उस सर्दी में स्वामी जी गुरु निवास की एक बाजू में आ गये। आपके पीछे वे सहायक जूते और शाल ले कर दौड़ रहे थे। स्वामी जी ने जमीन पर नीचे झुक कर एक सीमेंट की पाइप में झाँक कर कहा-'देखो, यहाँ छोटे कुत्ते के बच्चे और उनकी माँ अटक गये हैं।'

हुआ यह था, कि P W D का एक सिमेंट का पाइप वहाँ पड़ा था। उसमें कुत्ते के चार पिल्ले थे जिन्होंने शायद अभी आँख भी न खोली हो। उनके सामने काँटों से भरे सूखे पौधे, कचरा, मिट्टी ऐसा बहुत कुछ था। और काँटों के दूसरी ओर थी उन कुत्ते के बच्चों की माँ! बीच में बहुत सारे काँटे होने के कारण माँ की समझ में नहीं आ रहा था, कि बच्चों के पास कैसे पहुँचा जाये..। बच्चे भूखे थे। सर्दी से काँप रहे थे। और माँ उनके पास जा नहीं पा रही थी। वह रो रही थी। उसकी आवाज सचमुच इतनी कम थी, कि किसी को भी सुनायी न दे। लेकिन स्वामी जी... आप तक तो गूंगे के दिल की आवाज भी पहुँचती है। आत्मा की आवाज आपको सुनने में आती है। आप तक उस बेबस माँ की आवाज़ पहुँच ही गयी।

बिना सोचे स्वामी जी पाइप में जाने लगे। सहायक ने कहा, 'स्वामी जी आप रुकिये। मैं देखता हूँ।'

'यह समय बहस का नहीं है। आप कैसे जा पायेंगे? मुझे ही जाना होगा।' स्वामी जी ने कहा। क्योंकि आपके सहायक अपने जरा से मोटापे के कारण पाइप में नहीं पहुँच सकते थे।

बदन पर काँटों से होने वाली खैरोच और सर्दी की तरफ बिलकुल ध्यान न दे कर स्वामी जी ने पौधे हटा कर बच्चों को उठाया और माँ के पास रखा।

लेकिन जैसे भगवान् के प्यार की सीमा नहीं होती, स्वामी जी के प्यार की भी कोई सीमा नहीं। आपने उन कुत्ते के पिल्लों की और उनकी माँ की गुरु निवास में ही एक अलग जगह पर रहने की पूरी व्यवस्था की। उन्हें सुबह, दोपहर, शाम तक चार समय पर खाना-दूध मिलने लगा। उनके लिए खास बिस्कुट मँगवाये गये। आश्रम के एक ब्रह्मचारी जी से उन कुत्तों की देखभाल करने के लिए कहा।

वैसे उस ब्रह्मचारी को कुत्तों से खास लगाव नहीं था। (शायद इसीलिए उस पर यह जिम्मेदारी सौंपी होगी, कि वह सब सजीव-निर्जीव प्राणियों में, वस्तुओं में भगवान् को देखे।)

एक दिन जब स्वामी जी ने पूछा, 'कुत्तों को खिलाया?' तो घबरा कर उसने कहा, "हाँ!' सच तो यह था, कि उस दिन वह कुत्तों को खिलाना भूल गया था।

'झूठ!' स्वामी जी गरज कर बोले।

झूठ बोलने के लिए उसे डाँट कर स्वामी जी ने खुद कुत्तों को खिलाया तभी आप खाना खा सके।

भगवान् से की हुई मदद की हर प्रार्थना... चाहे वह बेज़ुबान जानवर के दिल से भी की हुई हो...स्वामी जी तक पहुँचती है।

शिवानन्द होम की शुरुआत

शिवानन्द आश्रम के धर्मार्थ चिकित्सालय के बहुत पास है-मुनि की रेती का पोस्ट ऑफिस। एक दिन पोस्ट ऑफिस के पास एक आदमी मरा हुआ पाया गया। अपनी बीमारी का इलाज न होने के कारण उसकी मौत हुई थी। जब परम पूज्य स्वामी चिदानन्द जी महाराज को यह पता चला, तब आप बहुत दुःखी हुए।

'धर्मार्थ अस्पताल' के पास बीमारी का इलाज न होने के कारण मौत? फिर क्या मतलब है अस्पताल के पूरे इन्तज़ाम का? वह समय तो सोचने का नहीं था। इन्तजाम करना था, उस आदमी के अन्त्यसंस्कार का। उस दिन किसी कारण से वाहन चालकों की हड़ताल थी। दुर्भाग्य से आश्रम की ऐम्ब्यूलैन्स खराब होने के कारण मैकेनिक के पास पड़ी थी। लेकिन समस्या से स्वामी जी का क्या वास्ता? आपने अपनी गाड़ी में उस आदमी के अचेतन शरीर को रखा। अन्नपूर्णागृह की लकड़ियाँ दे दी और अन्त्यसंस्कार का इन्तजाम किया। सिर्फ इन्तज़ाम करके आपने मन से यह बात निकाल नहीं दी। अन्त्यसंस्कार करके लोगों के वापस आने तक स्वामी जी ने मुँह में पानी तक नहीं लिया। उसके बाद दस दिनों तक किसी से भी बिना बताये स्वामी जी ने व्रत रखा था।

फिर एक दिन स्वामी जी ने अस्पताल के डाक्टरों को बुलाया। 'उस आदमी का क्यों नहीं उपचार हो सका?" आपने पूछा।

उस आदमी को अस्पताल में किसी ने दाखिल ही नहीं किया था। यह एक बात थी। दूसरी बात यह भी थी, कि डॉक्टर उस मरीज को रखते भी तो कहाँ? कुछ संसर्गजन्य बीमारियाँ ऐसी होती हैं जिनसे अस्पताल के अन्य मरीजों की हालात पर असर हो सकता है।

स्वामी जी सोच रहे थे। अस्पताल की सेवाओं की कुछ सीमाएँ हैं। दुनिया में बीमारी के अलावा और कई दुःख है। संसर्गजन्य, कभी ठीक न होने वाली बीमारियाँ हैं ही, उनके साथ मानसिक असन्तुलन है। लोग बेसहारा होते हैं। बूढ़े, बालक और औरतों को कई बार छोड़ दिया जाता है। क्या कर सकते हैं हम? परमात्मा के इस लाचार, दयनीय रूप की पूजा कैसे करें हम?

फिर आपने संकल्प किया, शिवानन्द होम का! एक ऐसा स्थान जहाँ बेसहारा लोगों को सहारा मिले। शरीर और मन की जरूरतें पूरी हों। दुःख-दर्द में भी जीने की आस खिल उठे और मौत भी आये, तो पूरे सुकून से। शान्ति के साथ। लेप्रोसी कालोनी के पास ही 'शिवानन्द होम' का निर्माण हुआ।

सत्संग में स्वामी जी आवाहन कर रहे थे, शिवानन्द होम का काम सँभालने कोई जाये। लेकिन आश्रम के प्रसन्न, सुखद वातावरण से थोड़ा दूर, गुरुचरणों से दूर... कौन जाना चाहेगा ?

स्वामी जी के निजी सहायक जी ने देखा, कोई आगे नहीं बढ़ रहा है। तो फिर वे ही तैयार हुए। स्वामी जी ने कहा भी-'देखो, आपको इस काम के लिए कुछ त्याग करना पड़ेगा।'

'जी हाँ, स्वामी जी, मैं तैयार हूँ।'

और गुरुचरण के निकट रहने का सुख त्याग कर उन्होंने अपने-आपको गुरु के कार्य के लिए समर्पित किया।

कुछ बूढ़े... जिनको बच्चों ने कृतघ्नतापूर्वक त्याग दिया है और जो जिन्दगी से थके-हारे हैं... कुछ बच्चे... जिनको माँ-बाप ने बेरहमी से छोड़ दिया है... और कुछ मानसिक बीमारी के मरीज... इनके साथ उनका जीवन शुरू हुआ। पहले तो यह कार्य उन्होंने अकेले ही संभाला था। यही उनकी गुरुसेवा थी; यही था तीर्थ!

फिर कुछ साल बाद वहाँ 'यानि' माता जी आ गयीं। हॉलैंडवासी यानि माता जी मदर टेरेसा के जीवन से प्रभावित थीं और कलकत्ता में रह कर लोगों की सेवा करना चाहती थीं। लेकिन दिल्ली के हवाई अड्डे पर कदम रखते ही यहाँ की भीड़, प्रदूषण से सामना हुआ और कलकत्ता जैसे महानगर में रहना मुमुक्नि नहीं.. ऐसा उन्हें लगा। फिर उनके साथ आये लोग जो शिवानन्द आश्रम के कार्य से परिचित थे, उन्होंने कहा- "यहाँ आप सेवा भी कर सकोगी और शहर से दूर, शान्त वातावरण में रह सकोगी।'

'शिवानन्द होम' देखने के बाद वो यहीं की हो गयीं। गंगा जी के हवाले किये जाने वाले किसी भी उम्र के मरीज या अनाथ अब गंगा जी में खुद को मिटाने से पहले शिवानन्द होम में आसरा ले सकते हैं। यह स्वामी चिदानन्द जी की करुणा का मूर्त रूप है।

सख्त शिक्षक

आश्रम में आत्मज्ञान के लिए आये हुए ब्रह्मचारी पहले तो इन्सान ही होते हैं। गुरुदेव की शिक्षा और खुद का आध्यात्मिक आचरण उन्हें हौले-हौले इन्सान से भगवान् बनाता है। जाहिर है, कि साधना के शुरुआती समय में उनमें भी कुछ कमियाँ रहती होंगी।

ऐसे ही एक ब्रह्मचारी जी को आश्रम में आने वाले याचक बिलकुल भी पसन्द नहीं थे। आश्रम का रिवाज है, कि सुबह और शाम में जो भी खाना बनता है उसमें से बचा हुआ खाना तुरन्त बाहर आने वाले याचकों में बाँट दिया जाये। इसीलिए हररोज दरवाजे पर बहुत सारे याचक कतार में बैठे हुए दिखाई देते हैं।

एक दिन किसी याचक ने स्वामी चिदानन्द जी से कहा-'स्वामी जी, आज कल न जाने कौन से नये ब्रह्मचारी जी आये हैं, वे हमें बहुत गालियाँ देते हैं। हमारा अपमान करते हैं और इतना सा खाना गुस्से में हमारे हाथ में थमा देते हैं। शिवानन्द आश्रम में ऐसा कभी नहीं हुआ गुरुदेव! इस जगह से यह उम्मीद नहीं है।'

स्वामी जी चुपचाप सोचते रहे। फिर आपने कहा, 'चलो मेरे साथ।' अन्नपूर्णागृह में जा कर बहुत सारा खाना अपने हाथों से याचकों में बाँट दिया।

दूसरे दिन वह ब्रह्मचारी रोज की तरह याचकों में खाना बाँटने के लिए आया। हमेशा की तरह वह गुस्से से अनाप-शनाप बोलता रहा।

'न जाने कहाँ-कहाँ से ये भिखमंगे आते हैं। आलसी! कुछ काम किये बिना इन्हें सिर्फ खाना चाहिए ! लो! चलो! फूटो यहाँ से...'

आज तो कतार में एक याचक ज्यादा ही था। उसने अपना वस्त्र पूरे माथे पर ले कर चेहरा भी छुपा लिया था। उसने अपने हाथ याचक की तरह आगे किये हुए थे। उसके हाथ में थोड़ा सा ही खाना गुस्से से थमा कर वह बोला, "ये एक और नया भिखारी! मुँह क्यों ढाँक लिया है औरतों जैसा... शरम नहीं आती... कहाँ-कहाँ से चले आते हैं। जैसे दामन ओढ़ा है माथे पर... हटाओ।" उस याचक ने माथे से अपना वस्त्र हटा लिया और ब्रह्मचारी जी के पैरों तले धरती खिसक गयी। 'आसमान से बिजली गिर कर मैं नष्ट क्यों नहीं होता... यह धरती फट कर मुझे निगलती क्यों नहीं...' ऐसे ही कुछ भाव उसके मन में आ रहे थे और वह पत्थर के बुत जैसा खड़ा था।

जिस याचक को उसने 'एक और नया भिखारी' कहा था-वह थे परम पूज्य स्वामी चिदानन्द सरस्वती जी महाराज!

लौकिक दृष्टि से दिव्य जीवन संघ के परमाध्यक्ष!

अलौकिक दृष्टि से अनन्तकोटि ब्रह्माण्डनायक महाराजाधिराज सद्‌गुरु!'

वह तो स्वामी जी के पैरों पर गिर पड़ा। लेकिन बिलकुल गुस्सा न होते हुए स्वामी जी ने उसे समझाया।

'मुझे देख कर जो अहसास मन में हुआ, वही हर याचक को देख कर होना चाहिए। आपने कहा। फिर उसे परिव्राजक के रूप में तीर्थाटन के लिए भेज दिया।

'कुछ महीने एक याचक बन कर घूमो। फिर इनकी भावनाओं का अहसास तुम्हें होगा। फिर किसी याचक का अपमान नहीं कर पाओगे।'

यही स्वामी जी की शिक्षा थी।

मैं बॉस हूँ

परम पूज्य स्वामी चिदानन्द जी ने अपने अस्तित्व का कण-कण गुरुदेव स्वामी शिवानन्द जी के चरणों में इस तरह समर्पित किया था, जैसे आपका कुछ अलग अस्तित्व ही नहीं। दिव्य जीवन संघ के परमाध्यक्ष बनने पर भी आपने खुद को गुरुदेव का सेवक ही समझा। गुरुदेव के महानिर्वाण के बाद भी इस तरह आप समझते रहे, कि गुरुदेव अपने कमरे में हैं और उनका दिया हुआ कार्य मुझे पूरा तन-मन लगा कर करना है। अपने मन के इस 'सेवक भाव' को आपने जरा भी कम नहीं होने दिया। "**आपके शब्दों में, कृतियों में, प्रवचनों में या लेखन में स्वाभाविक सेवक-भाव की लीनता महकती है।**"

लेकिन कभी-कभी ऐसा व्यवहार करने के लिए व्यक्ति मजबूर होता है, जो उसका स्वभाव नहीं है। स्वामी जी के साथ भी उस दिन ऐसा ही हुआ।

आश्रम के दो संन्यासियों में कुछ बहस चल रही थी। किसी समस्या पर बोलते-बोलते वे स्वामी जी के पास आये और आपके सामने ही बहस करने लगे। देखते ही देखते इस बहस ने झगड़े का रूप ले लिया। अचानक एक महाशय ने पूछा- 'यहाँ बॉस कौन है?' 'मैं हूँ।' दूसरे ने जबाब दिया। 'नहीं, बॉस मैं हूँ।' पहले संन्यासी बोले। अब स्वामी जी ने समझाने की कोशिश की- 'देखो, यहाँ हम सब सेवक हैं। बॉस तो सिर्फ 'ये' हैं।' ऐसा कह कर आपने गुरुदेव की तस्वीर की ओर अँगुली से निर्देश किया। जब दो बार ऐसा समझाने के बाद भी किस्सा खतम नहीं हुआ, तब ऊँची आवाज में स्वामी जी बोले-

"चुप। बॉस न आप हैं, न ही आप हैं। मैं बॉस हूँ।"

यह बात समझना शायद आसान था। झगड़ा खतम हुआ।

मेरा सच्चा नाम

परम पूज्य स्वामी चिदानन्द जी को श्री गुलजारी लाल नन्दा जी ने कुरुक्षेत्र बुलाया। स्वामी जी के प्रवचन का विषय था-'मेसेज ऑफ भगवद्गीता'। स्वामी जी के वहाँ पहुँचने से पहले प्रवचन-स्थल का इन्तजाम देखने स्वामी जी के निजी सहायक और एक-दो लोग कुरुक्षेत्र पहुँचे। और अच्छा हुआ उन्होंने पहले ही देख लिया। क्योंकि प्रवचन का विषय गलती से लिखा था- 'मसाज ऑफ भगवद्गीता ।

वह पूरा कार्यक्रम 'मेसेज' के बदले 'मसाज' ही बना, क्योंकि उस मंच पर बहुत लोगों ने सियासत की चर्चा ही प्रारम्भ की। फिर भी स्वामी जी ने हमेशा की तरह प्यार से प्रवचन में लोगों को सम्बोधित किया। आपके प्रवचन से वहाँ आये हुए विद्यार्थी और युवावर्ग बहुत प्रभावित हुआ।

कार्यक्रम समापन के बाद सब विद्यार्थी आ कर स्वामी जी से ऑटोग्राफ माँगने लगे। स्वामी जी ने पूछा-

क्या मैं अपना नकली नाम लिखूँ? या असली नाम लिखूँ?' बेचारे विद्यार्थी उलझन में पड़े। क्या स्वामी जी का कोई नकली नाम है? स्वामी जी ने कहा, "देखो, 'चिदानन्द' यह मेरा असली नाम भी नहीं है, रूप भी नहीं। उसके नीचे जो मैं 'ॐ' लिखता हूँ, वही मेरा असली नाम है। सिर्फ मेरा ही नहीं, आप सबका असली नाम सिर्फ वही है। एक 'ॐ' के अलावा बाकी सब झूठा है।"

स्वामी जी का सन्देश

स्वामी जी के निजी सहायक ने एक बार आपसे पूछा- 'स्वामी चिदानन्द जी का हमारे लिए मेसेज क्या है? आपके तमाम जीवन से हमें क्या सन्देश लेना चाहिए?'

स्वामी जी ने यह सन्देश दिया-

"Be rooted in the divinity within you. That divinity is a centre of bliss. Be centred in that bliss."

अपनी अन्तर्निहित दिव्यता में दृढ़ता से स्थित रहें। वही दिव्यता आनन्द का केन्द्र है। 'उसी आनन्द में केन्द्रित रहें।'

मददगार

हरिद्वार में जब कुम्भमेला लगता है, तब हरिद्वार, ऋषिकेश, शिवानन्दनगर इस पूरे क्षेत्र में रास्ते मरम्मत के लिए बन्द रहते हैं। कोई वाहन चलाया नहीं जा सकता। लोग पैदल ही आते-जाते रहते हैं।

ऐसे में एक दिन स्वामी जी को IAS ऑफिसर्स के लिए व्याख्यान देने जाना था। स्वामी जी भी अपने निवास से व्याख्यान के स्थल तक पैदल ही जा रहे थे। आपके साथ कुछ और लोग भी थे।

रास्ते में स्वामी जी ने देखा, एक आदमी हाथगाड़ी पर बोरियाँ रख कर गाड़ी हाथ से ढकेलता हुआ आश्रम के बहुत सामने के रास्ते पर से गुजर रहा था। गाड़ी बोझ के कारण बहुत भारी थी। रास्ते में चढ़ाव था और आदमी बेचारा दुबला भी था, शायद अस्वस्थ भी! वह हाँफ रहा था। उसकी साँस फूली हुई थी। स्वामी जी ने यह देखा और झटसे आपने वह गाड़ी पकड़ ली। 'आप जरा रुक कर आराम कीजिए ऐसा उस आदमी से कह कर आप खुद गाड़ी ढकेलने लगे।

आपके साथ जो लोग थे, वो तुरन्त आ कर खुद भी गाड़ी ढकेलने लगे। स्वामी जी ने पूछा- 'कहाँ जा रहा है यह राशन?' उस आदमी ने कहा- 'शिवानन्द आश्रम!'

तब क्या?

खुद स्वामी जी और उनके साथ कुछ लोग-गाड़ी ढकेलते हुए आश्रम पहुँचे। शायद उस आदमी को पता भी नहीं था कि जो यह हाथगाड़ी ढकेल रहे हैं, वही दिव्य जीवन संघ के अध्यक्ष हैं।

स्वामी जी ने उस आदमी को अस्पताल भेज कर उसकी पूरी जाँच करवायी। जरूरी दवाएँ दी। खाने का सामान दिया और घर भेज दिया।

उस दिन बड़े ऑफिसर्स को थोड़ा इन्तजार जरूर करना पड़ा होगा।

क्योंकि एक गरीब आदमी की तकलीफ उनसे ज्यादा मायने रखती थी।

आप परिपूर्ण हैं

हम हमेशा प्रार्थना करते हैं-

'इतना तो करना स्वामी जब प्राण तन से निकले
गोविन्द नाम ले के तब प्राण तन से निकले
उस वक्त जल्दी आना, नहीं श्याम भूल जाना...

वह परम करुणामय परमात्मा हमें कभी नहीं भूलता है; न ही परमात्मा का मूर्तरूप सद्गुरु हमें कभी भूलते हैं। किसी भी हालत में वह हमेशा हमारे साथ रहते हैं। चाहे हमें वो दिखाई नहीं देते।

लेकिन दिल्ली के श्री विरमानी जी एक ऐसे भाग्यवान् शख्स थे, जिनके कठिन समय पर उनके सद्गुरु परम पूज्य स्वामी चिदानन्द सरस्वती जी पूरे बारह घण्टे उनके साथ थे। श्री विरमानी जी कैंसर पेशंट थे और शायद उनके जीवन का यह आखरी दौर था।

स्वामी जी के निजी सहायक जी को यह कुतूहल अवश्य था, कि स्वामी जी ने श्री विरमानी जी से क्या बात की होगी? उनके पूछने के बाद स्वामी जी ने कहा, 'देखो, हर आधे घण्टे बाद मुझे इस बात की याद दिलाते रहना। मैं तुम्हें बताऊँगा।'

दिल्ली से स्वामी जी मुम्बई गये। वहाँ का काम निपट कर फिर विदेश जाने वाले थे। हर आधे घण्टे बाद सहायक स्वामी जी से पूछते रहे और स्वामी जी का काम खत्म ही नहीं हो रहा

था। आखिर मुम्बई के हवाई अड्डे पर जब फिर आपको याद दिलाई, तब स्वामी जी ने एक छोटे कागज़ के टुकड़े पर कुछ लिखा और कहा- "मैंने यह बात की "

स्वामी जी ने यह लिखा था-

ॐ

Radiant Atman,

ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ

Loving pranams and prostrations to the Light within, 'THAT is your own SELF

Chidananda speaks to Chidananda-and what he has to say is 'YOU ARE PARIPURNA -The All Full. You lack nothing-want nothing and have ever been the Ever Full one'. "May you ever abide as yourself as you are now and always the Ever Free Atman.

Thy own Self,
Chidananda.

अहिंसा का मूर्तरूप

मराठी भाषा में श्रीमद्भगवद्गीता पर एक बहुत अच्छा ग्रन्थ सन्त ज्ञानेश्वर जी ने लिखा है, जिसका नाम है- 'ज्ञानेश्वरी।' उसमें कहा है-सन्त भूमि पर चलते समय इस तरह हल्के से कदम रखते हैं, कि कदमों तले कोई सूक्ष्म जीव न आये और हिंसा न हो। सूक्ष्म से सूक्ष्म जीव में भी उन्हें वही चैतन्य प्रतीत होता है, जो मनुष्यों में है। परम पूज्य स्वामी चिदानन्द जी भी ऐसी अहिंसा का मूर्तरूप थे।

गर्मी के दिनों में चींटियाँ बाहर निकलती हैं। आश्रम में भी एक बार एक ब्रह्मचारी जी ने बहुत सारी चीटियाँ देखीं। उन्होंने एक बाल्टी में पानी लिया और उन पर जोर से फेंका। सारी चीटियाँ मर गयीं। यह देख कर स्वामी जी को बहुत दुःख हुआ। आपने उस ब्रह्मचारी जी से कहा- "फिर कभी ऐसा मत करना।' और इतने सारे जीवों की स्मृति में स्वामी जी ने पन्द्रह दिन उपवास किया।

दिव्य जीवन संघ मुख्यालय
शिवानन्द आश्रम, ऋषिकेश (उत्तराखण्ड)

सर्वश्रुतिशिरो-रत्न-विराजित-पदाम्बुजम् ।
वेदान्तार्थप्रवक्तारं तस्मात् सम्पूजयेद्गुरुम् ।।

भगवान् श्री स्वामी चिदानन्द परमहंस

- श्री स्वामी विवेकयुक्तानन्द सरस्वती जी महाराज-

देखा मैंने एक मानव को काषाय वेष में,
ध्यान पूर्वक देखा, और
देखता ही रह गया, उसकी तेजस्वी देह को।
फिर अन्तर्चक्षुओं से देखा,
तब मैं कह उठा-

"वाऽऽह।
यह तो नख-शिख-पर्यन्त है-
दिव्य कान्ति से आभासित,
त्याग-वैराग्य की ज्वाला से विभासित;
ईश्वर की अलौकिक आभा जिसे सहज स्वतः ही प्राप्त है,
भला गेरुआ परिधान की इसे क्या अपेक्षा?"
गौर किया जब चेष्टाओं को, क्रिया-कलाप को,
देखा, हाव-भाव दर्शात इसके हाथों को, सहज मंथर गति को;
तो मैं बोल पड़ा-

"अरे। यह तो साक्षात् परमात्मा ही
मानवीय रूप में विविध लीलाएँ हैं कर रहे;
हम समग्र जग-जीवों को
अपने वरद हस्त से आशीर्वादित करते हुए स्वयं
परमेश्वर ही संसार में विहार कर रहे ।''
तदनन्तर मिला जब सुअवसर
इनके मधुर संलाप-श्रवण का
तब गद्गद् हो मैंने कहा-

"अहा! यह तो साकार परमात्मा की ही
प्रेम वाणी है, जो कर रही
सम्पूर्ण जगत् को गुंजायमान।"
जब इन्हें आत्मविभोर हो भजन-कीर्तन में मस्त देखा,
भाव विह्वल हो मैं बोल उठा-

"है यह ईश्वर का अमर गीत।
परमेश्वर का ही शाश्वत संगीत।"
और पड़ी जब दृष्टि इनकी मनोहारी चितवन पर
तो समझ में आया

"प्रत्यक्षतः प्रभु ही तो कर रहे हैं
सब पर निज कृपा कटाक्ष।"
निहारते निहारते इस मानव-विभूति को,
हुआ दिव्य अनुभव-

"इस प्रापंचिक जगत् में रहते हुए
यह अपने नियत कर्तव्य-कर्मों की पूर्ति में,
दया-परोपकारिता-सेवा में
अनथक रहते हैं संलग्न;
किन्तु नहीं मानव साधारण यह
रोम, प्रतिरोम है इनका
कोटि-कोटि सूर्य-प्रभा से प्रभासित।
सच्चिदानन्दघन स्वयं इस महामानव के रूप में
हुए हैं इस धरा पर अवतरित ।
हैं ये परमहंस भगवान् हैं ये;
ये हैं-**भगवान् श्री स्वामी चिदानन्द परमहंस ।**"

सन् १९६९ में अर्जेन्टाइना, दक्षिण अमेरिका में
इनसे मेरी प्रथम भेंट-दौरान
अद्‌भुत दर्शन से हुई जैसी दिव्यानुभूति,
फिर सन् १९७२ में भारत में तथा
सन् १९८० में वैनेजुला में पुनर्मिलन होने पर, इनके
नयनाभिराम दर्शन से होती रही वैसी ही सुखद अनुभूति;
मातृ भूमि भारत में सन् १९९२ में भी इनके
दुर्लभ दर्शन से अगाध आनन्द पूर्ण
वही स्वानुभूति ।

दोहराता हूँ पुनः पुनः
अपने अन्तरतम के भाव को-
देखा मैंने अन्तर्चुक्षुओं से
मानव वेष में अवतरित
परमात्मा के इस तेजोमय स्वरूप को
जैसा दिव्यातिदिव्य स्वरूप पहले था
वैसा ही है अब भी।
ऐसा मैं भावावेश में नहीं कह रहा
यह तो है मेरी आत्मानुभूति की अभिव्यक्ति।

"ये हैं भगवान् श्री स्वामी चिदानन्द परमहंस।"
मैं इनको भगवान् ही मानता आया हूँ,
अब भी भगवान् मानता हूँ, और
रहेगा यह भाव सदैव ही।

देश में, विदेश में,
भारत ही नहीं, समग्र विश्व में भी
चतुर्दिक् व्याप्त है यह प्रकाश पुंज।
जय हो भगवान् स्वामी चिदानन्द की,
जय जयकार हो मधुरातिमधुर चिदानन्द दिव्य नाम की ।।
हरि ॐ तत्सत्

(अनुवाद)

एक शिष्या के लिए गुरु के दृष्टिकोण से श्री स्वामी जी का व्यक्तित्व

- श्री स्वामी अमृतरूपानन्द माता जी (सूजन माता जी) -

पूज्यपाद श्री स्वामी चिदानन्द जी महाराज से यद्यपि मैं ५० वर्षों से परिचित हूँ तथा वर्ष १९८० के माह दिसम्बर से आश्रम की अन्तेवासी हूँ तथापि स्वामी जी के साथ मेरा न्यूनतम सम्पर्क रहा। फिर भी, गुरु की भूमिका से स्वामी जी का मुझ पर, मेरे पूर्ण जीवन पर जीवन परिवर्तनीय प्रभाव रहा। पाँच अत्यन्त महत्त्वपूर्ण घटनाएँ ऐसी हैं जिनकी अनुभूति में आपको सम्मिलित करने में मुझे हर्ष होगा, **क्योंकि उन घटनाओं से स्वामी जी के गुरुपद का सामर्थ्य तथा सुन्दरता मुझे प्रदर्शित हुई।**

प्रथम : मैंने स्वामी जी के सबसे पहले दर्शन अपनी दस वर्ष की आयु में वैनकुवर, कनेडा में किये, मेरे माता-पिता हम बच्चों को उनके दर्शन के लिए ले गये थे। मुझे उस मुलाकात की बहुत कम स्मृति है किन्तु स्वामी जी वैनकुवर में तीन महीनों पर्यन्त रहे उसी अवधि में स्वामी जी के सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण उपदेशों में से एक, जिसकी मुझे प्रतीति हुई- जिसने मुझे कभी नहीं छोड़ा, वह है- "**ईश्वर ही केवल जीवन को अर्थपूर्ण बनाता है।**"

द्वितीय : हममें से बहुतों का विशेषतः आश्रम- वासियों का-आश्रम के बाहर रहने वाले अनेक भक्तों की अपेक्षा-स्वामी जी के साथ निकट का निजी सम्पर्क कम था। हालाँकि, इसके बावजूद मैं स्वयं को स्वामी जी के बहुत निकट होने का अनुभव करती। यह भाव मैं, स्वामी जी के गुरु विषयक प्राप्त बोध, ज्ञान की एक सीख से ही केवल समझा सकती हूँ। और वह है : गुरु का बोध ही गुरुतत्त्व है। स्वामी जी ने समाधि मन्दिर में प्रातःकालीन ध्यान-सत्र के पश्चात् व्याख्यान देने प्रारम्भ किये। मैंने सोचा कि उनके वक्तव्य इतने प्रेरक हैं कि हर एक को उस ज्ञान-प्राप्ति में सम्मिलित करना चाहिए। इस प्रकार, प्रकाशन हेतु-स्वामी जी के प्रातः- कालीन

वक्तव्यों का प्रतिलेखन करना और मुद्रण हेतु-उन्हें तैयार करना प्रारम्भ किया। जिस समय इस प्रयास का आरम्भ हुआ तब मैंने स्वप्न में भी कभी नहीं सोचा था कि इस सेवा का मेरी साधना पर कितना बड़ा प्रभाव होगा। इस सेवा के कारण ही मैंने अनुभव किया कि स्वामी जी ने जो कहा, वह सत्य था : "**गुरु का बोध ही गुरु-तत्त्व है।**"

तृतीय : स्वामी जी के उपदेशों में निमग्न हो जाने पर भी एक समय साधना में मैंने अवरुद्ध हो जाना अनुभव किया और कैसे आगे बढ़ना है यह मैं नहीं जान पायी। पूज्य स्वामी जी को इस विषयक ज्ञात नहीं किया था, किन्तु अनपेक्षित रूप से स्वामी जी ने मुझे प्रोत्साहित करने के लिए एक पाश्चात्य आध्यात्मिक शिक्षक के पास भेजा। यह बात स्वामी जी ने मुझे बाद में बतायी। आध्यात्मिक उपदेशों को नये तरीके से तथा नयी भाषा में-जो कि मेरी पारिवारिक पृष्ठभूमि की थी-सुन कर मेरी अवरुद्ध राह ही केवल खुलन गयी किन्तु पूर्वतः प्राप्त किये हुए उपदेशों की अति गहरी समझ और बोध भी मुझे दिये। इस घटना से मैंने स्वामी जी के विशाल और उदार हृदय की बहुत प्रशंसा, कद्र की क्योंकि स्वामी जी अपने शिष्य के कल्याण हेतु इतने चिन्तित हैं कि उन्होंने मुझे अन्य उपदेशक के पास भी भेजा।

चतुर्थ : वर्ष १९९६ की पूर्व अवधि में स्वामी जी के साथ सम्पन्न मेरी आध्यात्मिक बातचीत में, एक समय, मैंने उन्हें, गुरु के देहत्याग के पश्चात् अन्य गुरु करने के विषय में पूछा। स्वामी जी ने मुझे कहा, "**आपको अन्य गुरु की आवश्यकता नहीं। आप उपदेश जानती हैं कि, "मैं तब ही मुक्त हूँगी जब मैं, 'मैं' मिट जाऊँगी।**" आधिक्य में स्वामी जी ने कहा कि गुरु का बाह्य रूप, अपने निजी स्वरूप की भव्यता का अस्पष्ट, धुँधला रूप है। और इस बात ने मुझे यह सूचित किया कि स्वामी जी किस कारण आश्श्रमवासियों के साथ व्यक्तिगत समय कम व्यतीत करना चाहते हैं। स्वामी जी कदाचित् हमें अन्तर्मुखी हो कर निज स्वरूप में एकाग्रता द्वारा गुरु-प्राप्ति के लिए कहते हैं और गुरु के बाह्य रूप के प्रबल आकर्षण से विचलित न होने को कहते हैं। अहम् इतना जटिल और चालबाज है कि उसके छिपने के स्थानों की ओर संकेत करने हेतु निश्चित ही गुरु की आवश्यकता है-स्वामी जी को ऐसी दलील देने की पृष्टता मुझमें थी। हालाँकि स्वामी जी ने अपना धैर्य, अपनी सहिष्णुता नहीं खोयी, तथापि उन्होंने मुझे दो बातें कहीं, जिन्हें मैं कदापि नहीं भूली: "जब तक आप सोचेंगी कि सुजन को मोक्ष मिलेगा, तब तक वह सम्भव नहीं होगा।" स्वामी जी ने फिर उस वाक्य को अधिक बल दे कर दुहराया। फिर स्वामी जी ने कहा: "आप ये प्रश्न पूछ रही हैं, इससे ही सिद्ध होता है कि आप निज स्वरूप में विश्वास नहीं करती।'

पंचम: मेरा एक अनुभव जिसे मैं कदापि यथार्थता से समझ नहीं पायी, उसे स्वामी जी को बताने का मुझे वर्ष १९९७ में अवसर मिला। मैं अपने कमरे में कुछ अत्यन्त साधारण सा कार्य कर रही थी। तब एकाएक मेरे मन में शीघ्रता से तीन विचार क्रमशः आये: "मैं मुक्त हूँ। यह कौन है जो मुक्त है? मैं नहीं जानती।" आश्चर्यजनक रूप से स्वामी जी तत्काल बोल उठे, "यह (आत्मा) ही वह (परमात्मा) है।" मेरा प्रतिभाव था, "परन्तु स्वामी जी आप तो सदा कोई महान् अस्तित्व (परमात्मा) के विषय में बात करते हैं।" "वह तो केवल उन लोगों के लिए जिन्होंने वह अनुभूति नहीं की, जो आपने अनुभूति की।"

स्वामी जी का यह प्रतिभाव ऐसा है जिसका मैं आज भी मनन कर रही हूँ। मैं वास्तव में कौन हूँ इस विषयक गहन अभिज्ञता, अज्ञान बुद्धि में आना अति कठिन है। शब्दों की विसंगति के बावजूद भी मैंने सदैव सोचा, कि कोई गूढ़ रहस्यमय रीति से मैं 'अनभिज्ञ' को जानने में समर्थ

हूँगी। जब कि मैंने कहा कि कौन मुक्त है, यह मैं नहीं जानती। फिर भी स्वामी जी ने कहा, "यह ही सत् है-यह (आत्मा) ही वह (परमात्मा) है।"

दिव्य जीवन संघ मुख्यालय
शिवानन्द आश्रम, ऋषिकेश
(उत्तराखण्ड)

गुरुरेको जगत्सर्वं ब्रह्मविष्णुशिवात्मकम् ।
गुरोः परतरं नास्ति तस्मात्संपूजयेद्गुरुम् ।

एक स्मृति

-श्री स्वामी दुर्गाप्रसादानन्द जी महाराज -

वर्ष १९९६, जुलाई का महीना। जमशेदपुर दिव्य जीवन संघ शाखा के भक्तों द्वारा वर्षों से की जा रही प्रार्थना का परम पूज्य गुरु महाराज श्री स्वामी चिदानन्द जी महाराज ने यह कह कर उत्तर दिया कि वे अपनी पावन उपस्थिति द्वारा २६ जनवरी १९९७ को जमशेदपुर दिव्य जीवन संघ शाखा को पुनीत करेंगे तथा भक्तों को आशीर्वचन दे कर कृतार्थ करेंगे। भक्तों के आनन्द की सीमा नहीं रही। शाखा ने तय किया कि गुरु महाराज के आगमन के उपलक्ष्य में २४ जनवरी १९९७ से २६ जनवरी १९९७ तक तीन दिवसीय दिव्य जीवन सम्मेलन का आयोजन किया जायेगा।

गणेश चतुर्थी के दिन शाखा के सदस्यों की पहली बैठक बुलायी गयी। सदस्यों ने कई दृष्टिकोणों से विचार-विनिमय के बाद तय किया कि लगभग साढ़े तीन लाख रुपयों की जरूरत है। कोषाध्यक्ष से शाखा की आर्थिक स्थिति के बारे में पूछा गया। उन्होंने कोई उत्तर नहीं दिया। पुनः उनसे पूछा गया तो वह रो पड़े और बोले, "आप लोग साढ़े तीन लाख रुपयों की बात कर रहे हैं, शाखा के पास तीन सौ रुपये भी नहीं हैं।" चारों ओर सन्नाटा छा गया। सब निःशब्द थे। कोई निर्णय नहीं लिया जा सका। सभा समाप्त हो गयी।

करीब पन्द्रह दिन के बाद स्वामी रामस्वरूप जी ने फोन से सूचना दी कि गुरु महाराज का स्वास्थ्य ठीक नहीं है, अतः उनकी जमशेदपुर यात्रा की व्यवस्था वायुयान द्वारा की जाये। यह एक अविचारित वित्तीय बोझ था। वायुयान के किराये के बारे में पूछताछ करने पर यह ज्ञात हुआ कि लगभग पचास हजार रुपयों का खर्चा आयेगा। मूल खर्च के अतिरिक्त पचास हजार और! परन्तु भक्तों ने अपना हौसला नहीं खोया।

इसी दौरान पता चला कि गुरु महाराज कलकत्ता आये हुए हैं। जमशेदपुर में होने वाले सम्मेलन के लिए गुरु महाराज का आशीर्वाद प्राप्त करने हेतु कुछ भक्त तुरन्त कलकत्ता के लिए चल पड़े। गुरु महाराज का प्रातःकालीन ध्यान सत्र बिड़ला मन्दिर में आयोजित किया गया था।

उसमें उपस्थित रहने के उपरान्त अन्य भक्तों के साथ हम सभी मुख्य द्वार पर स्वामी जी के आगमन की प्रतीक्षा कर रहे थे। द्वार पर गुरु महाराज की दृष्टि हम पर पड़ी। उन्होंने पूछा, "क्या आप सब जमशेदपुर से आये हो?" हमने 'हाँ' भरी। स्वामी जी आगे बढ़े, हम उनके पीछे-पीछे चले। स्वामी जी ने पुनः कहा, "मुझे बताया गया है कि आप लोग मेरी जमशेदपुर यात्रा के लिए वायुयान की व्यवस्था कर रहे हो।" हमने विनम्रतापूर्वक कहा, "जी, स्वामी जी!" स्वामी जी ने आगे प्रश्न करके पूछा, "कितना खर्च पड़ेगा?" हमने कहा, "करीब पचास हजार।" स्वामी जी आगे बढ़ने लगे और एकाएक रुक कर कहने लगे, "मैं आप लोगों को चालीस हजार दान दे रहा हूँ।" हम सब यह सुन कर स्तब्ध रह गये। कुछ कहते नहीं बना। फिर स्वामी जी आगे बढ़े और उनके पीछे हम भी। पुनः स्वामी जी रुक कर ममता-भरी मुस्कान के साथ कहने लगे, "ओ जी! अब मेरा स्वास्थ्य ठीक है। मैं ट्रेन से ही जमशेदपुर जाना चाहूँगा। अतः वायुयान की व्यवस्था न करें।" यह कह कर वह अपनी गाड़ी की ओर बढ़ गये। हम आश्चर्यचकित नजरों से उन्हें देखते रहे। हमें आशीर्वाद दे कर स्वामी जी चल पड़े।

अलौकिक शक्ति ले कर हम जमशेदपुर वापस आये। हमें यह दृढ़ विश्वास हो गया था कि इस दिव्य जीवन सम्मेलन के आयोजन का भार 'हम' नहीं बल्कि गुरु महाराज 'स्वयं' उठा रहे हैं।

चिर-प्रतीक्षित दिन २६ जनवरी १९९७ आ गया। अगणित भक्तों से पण्डाल खचाखच भरा हुआ था। पूज्यपाद प्रातःस्मरणीय श्री स्वामी चिदानन्द जी महाराज मंच पर विराजमान थे। स्वामी जी अपना दिव्य औरा (प्रभामण्डल) चारों ओर बिखेरते हुए उपस्थित-अनुपस्थित जमशेदपुर के सभी भक्तों को अपने आशीर्वचनों से कृतार्थ कर रहे थे। इस प्रकार सातवें अखिल बिहार दिव्य जीवन सम्मेलन का समापन उनके प्रस्थान के साथ हो गया। वे एक-एक अविस्मरणीय घटनाएँ हमारे हृदय-पटल पर आज भी अंकित हैं। सम्मेलन में उन्होंने जो शिक्षाप्रद, अनुकरणीय आशी- वंचन प्रदान किये, वे हमारे जीवन के आध्यात्मिक- पथ पर आलोक-पुंज ही नहीं बल्कि शान्ति के दूत भी बने रहे हैं।

परम पिता परमेश्वर और गुरुदेव के आशीष हम पर सदा ही बने रहें, यही हमारी विनम्र प्रार्थना है।

दिव्य जीवन संघ मुख्यालय
शिवानन्द आश्रम,
ऋषिकेश (उत्तराखण्ड)

तव कथामृतम् :जगन्नाथपुरी की एक घटना

-श्री स्वामी रामभक्तानन्द जी महाराज-

मन्नाथः श्रीजगन्नाथः मद्गुरुः श्रीजगद्गुरुः ।

ममात्मा सर्वभूतात्मा तस्मै श्रीगुरवे नमः ।।

सन् १९९३ की बात है। उन दिनों परम पूज्य श्री स्वामी चिदानन्द जी महाराज जगन्नाथपुरी स्थित चिदानन्द शान्ति आश्रम, बालिगुआली में रह रहे थे।

सत्संग कार्यक्रम के साथ-साथ कुछ गुरुभाई लोगों का उपनयन संस्कार का कार्यक्रम भी चल रहा था। उस कार्यक्रम में स्वामी जी महाराज के दर्शन एवं सत्संग के लिए लगभग पाँच हजार से अधिक भक्त उपस्थित थे।

सुबह के समय अपने निवास स्थान विश्रान्ति कुटीर से गुरु महाराज लगभग दश बजे परिभ्रमण के लिए निकल रहे हैं। चारों तरफ भीड़ ही भीड़। स्वामी जी महाराज के दर्शन करने के लिए बड़े-बड़े भक्त लोग भी आये हैं। उच्च पदस्थ आफीसर और उड़ीसा के बड़े-बड़े गणमान्य लोग भी आये हैं।

उस प्रोग्राम के लिए एवं गुरु महाराज के दर्शन करने के लिए निकटस्थ गाँव के एक वृद्ध आये। उनकी वयस लगभग सत्तर साल की होगी। बाल सफेद हो गये थे। कपड़े उतने अच्छे नहीं थे। शंख फूंकने का काम करते थे। बहुत भीड़ देख कर वह वृद्ध आदमी कुछ दूरी पर एक पेड़ के नीचे बैठ गये और बैठ कर सोचने लगे कि इतनी भीड़ में क्या मुझे सन्त भगवान् का दर्शन मिल सकेगा? एक तो मैं सत्तर साल का वृद्ध, शरीर की दुर्बलता के कारण अन्दर नहीं जा पाऊँगा। सन्त भगवान् क्या मेरी बात सुनेंगे? ना, असम्भव है। क्या करूँ, कौन मेरी बात सुनेगा, कौन ले जायेगा मुझे दर्शन कराने के लिए? दर्शन करने के लिए अन्तर में प्रबल व्याकुलता आ रही है, आँखें छलछला रही हैं।

आश्चर्य होता है उस घटना को याद करने से, जैसे कि उस तीव्र दर्शनोत्सुक वृद्ध आदमी के अन्तर की बात ने अन्तर्यामी के हृदय को विचलित कर दिया। हठात् उस भीड़ को दो भाग करके गुरु महाराज उस अनजान वृद्ध आदमी के पास आ गये, जहाँ पर उनके आने की कोई सम्भावना नहीं थी। आ कर उस वृद्ध के शिर पर अपना वरदहस्त रख दिया।

चकित हो गया वह वृद्ध आदमी उस दिव्य रूप को देख कर। भाषा नहीं बोलने के लिए। कण्ठरोध हो गया। रोम-रोम खड़े हो गये। दोनों आँखों से आँसू बह रहे हैं। सिर्फ शिर नवा कर प्रणाम किया और बोला कि मैं धन्य हो गया, धन्य हो गया। करुणामय गुरुदेव ने उस वृद्ध आदमी को कुछ प्रसाद दे कर विदा किया।

आश्चर्य चकित हो कर देख रहे थे उस दृश्य को उपस्थित भक्त कि अन्तर्यामी को अन्तर की गयी। जय जगन्नाथ! जय गुरुदेव! बात विदित हो

दिव्य जीवन संघ मुख्यालय
शिवानन्द आश्रम,
ऋषिकेश (उत्तराखण्ड)

हरि-कथा कथा और सब व्यथा और वृथा। -स्वामी चिदानन्द

श्री चिदानन्दाष्टोत्तरशतनामावलिः

-डॉ. देवकी कुट्टी माता जी

१. ॐ श्री अनन्तगुणविभूषिताय नमः
२. ॐ श्री अज्ञानहरणाय नमः
३. ॐ श्री अवर्ण्यगुणोज्वलाय नमः
४. ॐ श्री अतीन्द्रियाय नमः
५. ॐ श्री अक्षयप्रतिभाय नमः
६. ॐ श्री आत्मानन्दाय नमः
७. ॐ श्री आश्रितवत्सलाय नमः
८. ॐ श्री आनन्दनिमग्नचित्ताय नमः
९. ॐ श्री उदारकीर्तये नमः
१०. ॐ श्री करुणावासाय नमः
११. ॐ श्री करुणासागराय नमः
१२. ॐ श्री कल्याणप्रकृताय नमः
१३. ॐ श्री कुष्ठरोगीतापविनाशनाय नमः
१४. ॐ श्री कृपापियूषजलाय नमः
१५. ॐ श्री गुरुपादाब्जविहारिणे नमः
१६. ॐ श्री गुणाकाराय नमः
१७. ॐ श्री जितक्रोधाय नमः
१८. ॐ श्रीतत्त्वस्वरूपाय नमः
१९. ॐ श्री दीनत्राणतत्पराय नमः
२०. ॐ श्री दिव्यमूर्तये नमः
२१. ॐ श्री दयावारिधये नमः
२२. ॐ श्री धीरोदाताय नमः
२३. ॐ श्री निर्लेपाय नमः
२४. ॐ श्री नित्यनिर्मलाय नमः
२५. ॐ श्री निरञ्जनाय नमः
२६. ॐ श्री नीतिमते नमः
२७. ॐ श्री नियतकल्याणाय नमः
२८. ॐ श्री निर्विकाराय नमः
२९. ॐ श्री प्रणवस्वरूपाय नमः
३०. ॐ श्री परमसात्त्विकाय नमः

३१. ॐ श्री परात्पराय नमः
३२. ॐ श्री पुण्यवर्धनाय नमः
३३. ॐ श्री पुण्यपुरुषाय नमः
३४. ॐ श्री पावनस्वरूपाय नमः
३५. ॐ श्री पुरुषोत्तमाय नमः
३६. ॐ श्री परमज्योतिषे नमः
३७. ॐ श्री प्रियंवदाय नमः
३८. ॐ श्री प्रीतिवर्धनाय नमः
३९. ॐ श्री परमपूज्याय नमः
(ख) भक्तों के भावोद्गार शुरू।
४०. ॐ श्री ब्रह्मण्याय नमः
४१. ॐ श्री भव्याय नमः
४२. ॐ श्री भवबन्धनविमोचनाय नमः
४३. ॐ श्री भयापहाय नमः
४४. ॐ श्री भक्तशोकविनाशनाय नमः
४५. ॐ श्री भवतारणकारणाय नमः
४६. ॐ श्री मोक्षदाय नमः
४७. ॐ श्री मृदुभाषणाय नमः
४८. ॐ श्री महानिधये नमः
४९. ॐ श्री मिहिराधिककान्तिमते नमः
५०. ॐ श्री महायोगिने नमः
५१. ॐ श्री मान्याय नमः
५२. ॐ श्री महामतये नमः
५३. ॐ श्री महाद्युतये नमः
५४. ॐ श्री यतीन्द्राय नमः
५५. ॐ श्री यज्ञस्वरूपिणे नमः
५६. ॐ श्री योगीश्वराय नमः
५७. ॐ श्री वाग्मिने नमः
५८. ॐ श्री वैद्यवरिष्ठाय नमः
५९. ॐ श्री वीतरागाय नमः
६०. ॐ श्री विनयात्मने नमः
६१. ॐ श्री वाचस्पतये नमः
६२. ॐ श्री वरप्रदाय नमः
६३. ॐ श्री वशीकृताखिलजगते नमः
६४. ॐ श्री विद्याराशये नमः
६५. ॐ श्री वैराग्यविशुद्धचित्ताय नमः
६६. ॐ श्री शान्तस्वरूपिणे नमः
६७. ॐ श्री शिवानन्दवात्सल्यभाजनाय नमः
६८. ॐ श्री शिवानन्दस्वरूपिणे नमः
६९. ॐ श्री शिष्टपूजिताय नमः

७०. ॐ श्री शिवाकाराय नमः
७१. ॐ श्री शरणागतवत्सलाय नमः
७२. ॐ श्री सर्वगुणोपेताय नमः
७३. ॐ श्री सर्वमङ्गलकर्ते नमः
७४. ॐ श्री सर्वकामदाय नमः
७५. ॐ श्री सर्वदुःखशमनाय नमः
७६. ॐ श्री स्मितभाषिणे नमः
७७. ॐ श्री सुमनसे नमः
७८. ॐ श्री सम्पूर्णकामाय नमः
७९. ॐ श्री सुशीलाय नमः
८०. ॐ श्री सर्वदेहिशरण्याय नमः
८१. ॐ श्री सर्वात्मने नमः
८२. ॐ श्री सौम्याय नमः
८३. ॐ श्री सर्व प्राणिसुहृदे नमः
८४. ॐ श्री सर्वभूतानुकम्पिने नमः
८५. ॐ श्री संभृताभीष्टदायकाय नमः
८६. ॐ श्री सनातनाय नमः
८७. ॐ श्री सत्यस्वरूपाय नमः
८८. ॐ श्री सर्वजिते नमः
८९. ॐ श्री सर्वोत्तमाय नमः
९०. ॐ श्री समस्तजनपूजिताय नमः
९१. ॐ श्री सद्‌गुरुचरणरतये नमः
९२. ॐ श्री सत्यकीर्तये नमः
९३. ॐ श्री संन्यासिवर्याय नमः
९४. ॐ श्री स्वयंतेजसे नमः
९५. ॐ श्री सुदीप्तिमते नमः
९६. ॐ श्री सर्वोपाधिविनिर्मुक्ताय नमः
९७. ॐ श्री सच्चिदानन्दविग्रहाय नमः
९८. ॐ श्री संसाररोगभिषजे नमः
९९. ॐ श्री सत्यव्रताय नमः
१००. ॐ श्री सुकीर्तये नमः
१०१. ॐ श्री सर्ववेदविदे नमः
१०२. ॐ श्री सदाचारशीलाय नमः
१०३. ॐ श्री सर्वज्ञाय नमः
१०४. ॐ श्री हंसाय नमः
१०५. ॐ श्री अभिवन्द्याय नमः
१०६. ॐ श्री परमेष्ठिने नमः
१०७. ॐ श्री शिवानन्दहृदयकमलभृङ्गाय नमः
१०८. ॐ श्री सद्‌गुरुचिदानन्दस्वामिने नमः

****

ॐ नमो भगवते जगन्नाथाय: "चिदानन्दं गुरुं ब्रह्म नमाम्यहम्'

ॐ श्री गुरवे नमः

– श्री गजपति महाराज दिव्यसिंहदेव जी (पुरीनरेश) –

"नित्य शुद्धं निराभासं निराकारं निरंजनम्।
नित्य बोधं चिदानन्दं गुरुं ब्रह्म नमाम्यहम् ।।"

(गुरुगीता: २६)

"गुरु नित्य है, शुद्ध है, आभास रहित है, निराकार है, निरंजन है, नित्य बोध (ज्ञान) स्वरूप है, चिदानन्द स्वरूप है, (चिदानन्द ब्रह्म है) उस परब्रह्म गुरुदेव को मैं नमस्कार (प्रणाम) करता हूँ।"

हम वर्णनातीत का वर्णन कैसे कर सकते हैं? अथवा अगाध की गहराई कैसे माप सकते हैं? अथाह की थाह कैसे पा सकते हैं? जो सत्-चित्-आनन्द (सच्चिदानन्द) से एकाकार हो नित्य हो गया; उसके दिव्य गुणों के अल्पांश दर्शन, अवलोकन से नहीं समझा जा सकता अर्थात् सीमित दृष्टि न ही उसे जान सकती है न ही व्यक्त कर सकती है। वस्तुतः यही स्थिति हमारी है जब हम परम आराधनीय, परम प्रिय सद्गुरुदेव श्री स्वामी चिदानन्द जी सरस्वती महाराज की महिमा-गायन का प्रयत्न करते हैं तो।

नौ वर्ष पूर्व पूज्य श्री स्वामी जी महाराज की संन्यासदीक्षा की स्वर्णजयन्ती के शुभावसर पर, मुम्बई में आयोजित अन्तर्राष्ट्रीय दिव्य जीवन संघ सम्मेलन के आयोजकों ने विभिन्न सुअवसरों से सम्बन्धित पूज्य स्वामी जी महाराज के उच्चकोटि के उत्कृष्ट चित्रों एवं प्रबुद्ध ज्ञानमय कथनों युक्त एक विलक्षण संकलन 'चिदानन्द हूँ' का प्रकाशन किया था। 'चिदानन्द हूँ' की प्रस्तावना में पूज्य स्वामी जी ने 'स्वामी चिदानन्द' का परिचय उन्हीं के शब्दों में इस प्रकार दिया है-

"मैं पूज्यपाद एवं प्रियतम परम पावन परम आदरणीय गुरुदेव श्री स्वामी शिवानन्द जी महाराज का शिष्य हूँ। उसी क्षण से (१९ मई १९४३ की अपराह्न बेला में पावन गुरुदेव के प्रथम दर्शन से) आज इस क्षण तक मैं पावन गुरुदेव के श्री चरण-कमलों का ही केवल... सेवक रहा हूँ तथा अपनी पूर्ण सामर्थ्यानुसार उनका ही आज्ञाकारी शिष्य रहा हूँ। जिस प्रकार के जीवन जीने की शिक्षा उन्होंने दी थी, उसी प्रकार का जीवन जीने की पूर्ण चेष्टा करता रहा हूँ। जहाँ तक सम्भव हो सकता है, मैं अनेकविध उनकी सेवा के लिए प्रयत्नशील रहता हूँ। विगत पचपन वर्षों से मैं जैसा हूँ, अब भी इस क्षण तक मैं वैसा ही एकरस हूँ तथा इस इहलौकिक जीवन के अन्तिम दिन तक भी... मैं शिष्य एवं सेवक के रूप में ही रहूँगा।"

पूज्य स्वामी जी महाराज के इन सब शब्दों के ही मूर्त रूप हैं उनके सब क्रिया-कलाप। आराधनीय गुरुदेव परम पूज्य स्वामी शिवानन्द जी महाराज के चरणकमलों में परम पूज्य स्वामी जी की आदर्श दृष्टान्तात्मक भक्ति और सेवा के प्रचुर प्रमाण हैं ये तथा हम सबको सुनिश्चित रूप से गुरु-भक्ति और गुरु-सेवा के उच्चतम आदर्श दर्शाते हैं।

किन्तु क्या पावन गुरुदेव ने स्वामी चिदानन्द को, अपने अनेक शिष्यों में, सर्वोत्तम कहा होगा? बहुत समय पूर्व सन् १९५४ में श्री स्वामी चिदानन्द जी के ३९ वें जन्मदिवस समारोह के शुभावसर पर पावन गुरुदेव ने स्वामी जी (चिदानन्द जी) को परम पावन उपाधि "अध्यात्म- ज्ञान-ज्योति" से विभूषित किया और कहा- "**पूर्वजन्म में ही वह (स्वामी चिदानन्द) एक संन्यासी थे।**"

परम गुरुदेव स्वामी शिवानन्द जी महाराज ने एक अन्य सुअवसर पर और अधिक सुनिश्चित एवं सुस्पष्ट रूप से सुव्यक्त किया कि-

"स्वामी चिदानन्द अपने पूर्व जन्म में ही एक महान् योगी और सन्त थे। यह उनका अन्तिम जन्म है। बिदानन्द एक जीवन्मुक्त, एक महान् सन्त, एक आदर्श योगी, एक पराभक्त और एक महान् मनीषी हैं। स्वामी चिदानन्द ये हैं और हैं इससे कहीं और अधिक। यह मिशन के कोहनूर हैं। चिदानन्द जी के प्रवचन उनके सन्त हृदय के भावोद्गार हैं, अन्तर्ज्ञान की अभिव्यक्तियाँ हैं। उनके प्रवचन स्वर्णाक्षरों में मुद्रित किये जाने चाहिए।"

पावन गुरुदेव जी ने जो आदर-सम्मान अपने शिष्य को प्रदान किया, वह शिवानन्द आश्रम में आश्रमवासियों को दिये गये भाषणों के एक भाषण की निम्नांकित अभिव्यक्ति से सुस्पष्टतया उद्घाटित हो जाता है।

"आप सबको स्वामी चिदानन्द को गुरु मानना चाहिए। मैं भी अपने गुरु रूप में उनका आदर करता हूँ। मैंने उनसे अनेक शिक्षाएँ ग्रहण की हैं। मैं उनसे प्रेम करता हूँ। मैं उनकी पूजा करता हूँ। उनका ज्ञान विपुल है। और उनकी प्रज्ञा ईश्वरप्रेरित सहजानुभूत है। उनका शील स्वभाव अनुपम है। उनका हृदय अति उदार है तथा करुणा अतुल्य हैं। आप सबको उनसे शिक्षा ग्रहण करनी चाहिए। तभी, केवल तभी आप उन्नत होंगे, परिवर्धित होंगे, और होंगे विकसित।"

जैसी उच्चकोटि की प्रशंसात्मक अभिव्यक्ति अपने शिष्य के प्रति महान् गुरु स्वामी शिवानन्द जी ने की है-वस्तुतः ऐसे गुरु विरले ही होते हैं। यह आश्चर्य की बात नहीं है। जब समय आया तब स्वामी शिवानन्द जी ने स्वयं द्वारा संस्थापित इस महान् आध्यात्मिक संस्था (मिशन) के संचालन हेतु स्वामी चिदानन्द का ही चयन किया। उनकी (गुरुदेव की) महासमाधि के कुछ दिन पूर्व स्वामी शिवानन्द जी के बचपन के मित्र श्री कवि-योगी शुद्धानन्द भरतियार उनसे मिलने आये। उन्होंने पुण्यशील गुरुदेव से पूछा-

"स्वामी जी, कृपया मुझे बतलाइये कि अपने ग्रन्थों और भवनों के अतिरिक्त आप मानव-समाज को कौन सी शाश्वत रिक्थ (उत्तराधिकार में दी जाने वाली सम्पदा) अपनी वसीयत में प्रदान करेंगे। क्या यह दिव्य जीवन संघ है? अथवा आपके द्वारा प्रशिक्षित पवित्र संन्यासी वृन्द है?" कुछ क्षणों की गम्भीर विचारणा के उपरान्त, स्वामी जी ने उत्तर दिया, "निश्चित ही, चिदानन्द-वह जीवन्त रिक्थ है, जो मैं अपने पीछे दिव्य जीवन संघ (मिशन) के संचालन हेतु छोड़ कर जाऊँगा।"

वर्षों पहले से ही पूज्य स्वामी चिदानन्द जी की कृपामयी एवं पुण्यमयी उपस्थिति ने, सबमें-भारतदेश के भीतर व बाहरी देशों में तथा वरिष्ठ गुरुभाई से ले कर सामान्य साधक में-उच्चकोटि का मान-सम्मान, श्रद्धा व प्रशंसा के भाव जगा दिये थे। आराधनीय गुरुदेव श्री स्वामी शिवानन्द जी के अतिरिक्त सम्भवतः किसी अन्य ने स्वामी चिदानन्द जी का इतनी सूक्ष्मता, सन्निकटता और गहराई से ध्यानपूर्वक अवलोकन नहीं किया होगा जैसा कि उनके अपने आदरणीय गुरुभाई पूज्य स्वामी कृष्णानन्द सरस्वती महाराज जी-जो शिवानन्द-कोष के एक और चूड़ामणि है-ने किया है। पूज्य स्वामी चिदानन्द जी की मंगलमयी 'हीरक जयन्ती के' शुभावसर पर सन् १९७६ में अपने एक लेख 'प्राची का प्रकाश' में अपने गुरुभाई के प्रति जिन भावोद्गारों की अभिव्यक्ति की है, वे हैं ये

"दिव्य जीवन संघ के परमाध्यक्ष पूज्य श्री स्वामी चिदानन्द जी महाराज की मंगलमयी हीरक जयन्ती के शुभावसर पर कुछ भाव-विचारों को लिखित स्वरूप देने का मुझे सौभाग्य प्राप्त हुआ है। इससे वे सभी जिज्ञासु लाभान्वित होंगे, जो सत्य के उस स्वरूप को जानने के आकांक्षी हैं कि स्वामी जी महाराज एक प्रज्वलित दीप की भाँति दीप्तिमान् (तेजोमय) होते हुए भी किस प्रकार अपने चतुर्दिक् इस सुकोमल, कृश काया से सुधामयी शीतल किरणें विकीर्ण कर रहे हैं।"

"निष्पक्ष, तटस्थ, निरपेक्ष सम्यक् अध्ययन व विश्लेषण के उपरान्त सच्चे और विनीत अभिमत से मुझे इस सत्य का दिग्दर्शन हुआ है कि श्री स्वामी चिदानन्द जी महाराज इस लवणाकर धरती के एक वास्तविक महान् मधुरातिमधुर स्वरूप हैं। किन्तु कैसे? कोई भी पूछ सकता है। विगत तीस वर्षों के सजग व सतत अवलोकन का ही सुखद निष्कर्ष है यह। मुझे पूर्णरूपेण विदित है कि संसार के भिन्न-भिन्न भागों में (देशों में) स्वामी जी के असंख्य भक्त, शिष्य, प्रशंसक और साधक-शिक्षार्थी हैं जिन्होंने अपने-अपने ढंग से प्रेम-सेवाभावमय सुन्दर, सौम्य, प्रबुद्ध आदर्श जो जीवन सबके लिए सुख प्रदायक है के विषय में लिखा और कथन किया है। किन्तु उनको परखने एवं उनसे कुछ सीखने के लिए जितना सुअवसर मुझे प्राप्त हुआ है, उत्तना कदाचित् ही किसी अन्य को प्राप्त हुआ होगा, क्योंकि उनके साथ मेरे जीवन का अधिकांश समय का सम्बन्ध बहुमुखी रहा है। हमारा परस्पर व्यक्तिगत, भ्रात्रीय (भ्रातृ-भाव सम्बन्धी), सामाजिक, औपचारिक (कार्यालय सम्बन्ध) तथा आध्यात्मिक सम्बन्ध सब एक साथ ही रहे हैं।"

"स्वामी चिदानन्द जी महाराज न ही केवल सदा मेरे मित्र, दार्शनिक और पथ-प्रदर्शक रहे हैं प्रत्युत अनेक पहलुओं से वे मेरे गुरु भी हैं। श्रद्धास्पद गुरुदेव स्वामी शिवानन्द जी के पश्चात् मैं इन्हीं को नमन-वन्दन करता हूँ। वस्तुतः अपने जीवन का पूर्ण बोध (ज्ञान) मुझे दो अविस्मरणीय स्रोतों से प्राप्त हुआ है, यथा-गुरुदेव स्वामी शिवानन्द जी महाराज और पूज्य श्री स्वामी चिदानन्द जी महाराज। जीवन के दिव्य लोकोत्तर पथ की शिक्षा मुझे श्री स्वामी शिवानन्द जी महाराज, और उसके अन्तर्निहित पक्षों को मेरे चित्त में बैठाने का श्रेय तो श्री स्वामी जी (चिदानन्द जी) के आत्म-त्यागमय जीवन को ही जाता है।''

पूज्य गुरुदेव स्वामी चिदानन्द जी महाराज के दिव्य व्यक्तित्व सम्बन्धी बहुत कुछ कहा गया है तथा ग्रन्थ लिखे जा सकते हैं; किन्तु अनिर्वचनीय (वर्णनातीत) का वर्णन करने में शब्द अवश्यमेव असफल सिद्ध होंगे। **वे चयनित व्यक्ति वास्तव में धन्य है। जिनको, प्रभुकृपा और अपने पूर्वजन्म के संस्कारों के फलस्वरूप, गुरुदेव स्वामी चिदानन्द जी के पादपद्मों तक पहुँचने का दुर्लभ सौभाग्य प्राप्त हुआ है तथा सहज ही मुक्तहस्त (उदारता) से बँटने वाले दिव्य अमृत के भागी बने हैं। ऐसे साधक के लिए परम लक्ष्य प्राप्ति की आध्यात्मिक यात्रा निस्सन्देह सुरक्षित एवं सुनिश्चित है। एक विदेशी शिष्य ने स्वामी जी से पूछा, "स्वामी जी क्या मैं भगवत्साक्षात्कार प्राप्त कर सकूँगा?" स्वामी जी का उत्तर सुनिश्चित और सुस्पष्ट था। उन्होंने कहा-**

"अपने आकांक्षित गन्तव्य का रेलवे टिकट खरीद कर आप गन्तव्य स्थान की ओर जाने वाली ट्रेन में बैठ जाते हैं। क्या कभी आपने सन्देह किया कि ट्रेन गन्तव्य स्थान तक आपको ले जायेगी या नहीं? उसी प्रकार यदि आपने एक बार चिदानन्द ट्रेन का आश्रय ले लिया है तो विश्वास रखिए..... आप अपने दिव्य लक्ष्य (गन्तव्य) को प्राप्त करेंगे ही।"

वे भाग्यशाली हैं जो 'चिदानन्द-ट्रेन' में बैठ गये हैं अर्थात् शरणागत हो गये हैं। आवश्यक बात यह है कि जब तक हम अपने गन्तव्य (परम लक्ष्य) तक नहीं पहुँचते तब तक हमें बैठे रहना है-शरणागत रहना है। दूसरे शब्दों में-तात्पर्य यह है कि शिष्य को सदा निश्शंक हो कर गुरुदेव के उपदेशों-आदेशों-निर्देशों का अनुपालन पूर्णरूपेण करते रहना है। तभी, केवल तभी, गुरुकृपा की दीप्ति-हमारे हृदय के दिव्य दीप को प्रदीप्त कर-सदा हमें प्रचुरता से दीप्तिमान् करती रहेगी।

श्री श्री जगन्नाथ महाप्रभु और श्री सद्गुरुदेव की कृपा हम सबको दिव्य पथ पर आरूढ़ रहने के लिए उत्प्रेरित तथा हमारा पथ-प्रदर्शित करती रहे।

'लोकाः समस्ताः सुखिनो भवन्तु !'

हरिः ॐ तत् सत्!

केवल सत्य ही हमें मुक्ति दे सकता है। असत्य मोक्ष प्रदान नहीं कर सकता। भ्रान्तिपूर्ण चिन्तन एक बन्धन है। मन गलत चिन्तन का सिंहासन है। हमें यह पता नहीं

चलता; किन्तु वास्तविकता यही है। इसलिए आपके और उस अन्तर्निहित परम सत्ता-प्रभु (जो कि आपके निकटतम से भी निकट विद्यमान है) के बीच में मूल बाधा यह मन ही है। अतः विनम्रता और सरलता पूर्वक, सच्चे विश्वास और पूर्ण श्रद्धा सहित तथा मन द्वारा रचित गलत धारणाओं (जो कि माया जनित हैं) को एक ओर छोड़ कर हमें भगवान् की ओर बढ़ना चाहिए।

-स्वामी चिदानन्द

"गुरुःसाक्षात् परब्रह्म तस्मै श्रीगुरवे नमः"

- डॉ. श्यामसुन्दर पाराशर जी महाराज -

परम पूज्य श्री स्वामी चिदानन्द जी महाराज के चरणों में भाव-पुष्पांजलि

जब-जब धरा पर जीव अकृतार्थ रहने लगते हैं, तब प्रभु अपने अंश से अभिभूत कर सन्तों को कृतार्थ करने हेतु धरा पर भेजते हैं, जो मोह-निशा में सोये जीवों को उत्तिष्ठ-जागृत का सन्देश दे कर सावधान करते हैं। अतः सन्त साक्षात् प्रभु के कृपाविग्रह होते हैं- "गुरुः साक्षात् परब्रह्म तस्मै श्रीगुरवे नमः।"

परम पूज्य श्री स्वामी चिदानन्द जी महाराज उन्हीं भगवत् विभूतियों में से थे जिन्होंने कठोर कलिकाल के कलुषित प्राणियों का कल्याण किया तथा प्रभु मार्ग में प्रेषित कर परलोक मार्ग प्रशस्त किया। वे जीव बड़भागी हैं जिन्हें ऐसी दिव्यतम विभूति का साहचर्य प्राप्त हुआ। ऐसे बहुत कम बड़भागी होते हैं जो सन्तों के पांचभौतिक कलेवर में रहते हुए उनकी दिव्यता का दर्शन कर सकें। शास्त्रों में वर्णित सन्तों की परिभाषा में श्री स्वामी जी महाराज का सम्पूर्ण जीवन परिलक्षित होता है।

मुझ दास को श्री स्वामी जी महाराज के ९० dot a जन्म-दिवस पर बीकानेर आश्रम में कथा कहने का सौभाग्य प्राप्त हुआ था जहाँ उनके द्वारा लिखा हुआ कृपा-संदेश आशीर्वाद रूप में प्राप्त हुआ था तथा द्वितीय अवसर श्री एस. आर. शर्मा जी के माध्यम से उत्तरकाशी में मिला जहाँ श्री स्वामी जी महाराज ने चार फल अर्थ-धर्म-काम-मोक्ष कह कर प्रदान किये। मैं अपना परम सौभाग्य मानता हूँ कि उनकी प्रथम पुण्यतिथि में भी मुझ दास को ऋषिकेश आश्रम में उनके कृपाभाजक भक्तों के बीच में बैठ कर वाणी पवित्र करने का अवसर मिला।

श्री स्वामी जी महाराज अपने चिन्मय देह से सर्वदा कृपा-वृष्टि करते रहें, इस आशा का अभिलाषी ।

३३४ ए, चैतन्य विहार कॉलोनी, फेस १
वृन्दावन-२८११२१
(उत्तर प्रदेश)

कुछ प्रेरक संस्मरण

-डॉ देवकी कुट्टी माता जी, शिवानन्द आश्रम-

आराध्य गुरुदेव श्री स्वामी शिवानन्द जी महाराज के समय की बात है जब श्री स्वामी चिदानन्द जी महाराज लखनऊ आते थे कृपालु गुरुदेव मेरे लिए कुछ पुस्तकों का ज्ञान-प्रसाद भेजते थे। श्री स्वामी जी महाराज जहाँ ठहरते थे वहीं से मुझे ज्ञान-प्रसाद देने के लिए स्वयं साईकिल चला कर आते थे। इतने सरल, निष्कपट, विनम्र और मृदुल स्वभाव के थे श्री स्वामी जी!

परमाध्यक्ष पद पर आसीन होने के पश्चात् भी उनके इस स्वभाव और व्यवहार में कोई अन्तर नहीं आया, यह है उनकी महानता और गुरुता ।

उनकी सरलता और महानता का एक और दृष्टान्त। एक बार लखनऊ में ही श्री स्वामी चिन्मयानन्द जी महाराज के प्रवचन-श्रवण का मुझे सुअवसर मिला। श्रोताओं में से किसी एक श्रोता ने प्रवचन सुनने के उपरान्त स्वामी जी से पूछा, "आज भी भारत में कोई सन्त है जिसने आत्म-साक्षात्कार प्राप्त कर लिया हो?" उन्होंने (स्वामी चिन्मयानन्द जी ने) निःसंकोच तुरन्त निश्चयात्मक रूप से कहा, "हाँ, स्वामी चिदानन्द जी महाराज।" मैं यह सुन कर अतिशय हर्षित, प्रफुल्लित और गौरवान्वित हुई। जब मैं श्री स्वामी चिदानन्द जी महाराज को मिली तो मैंने उन्हें यह सब पूर्वोक्त बात बतलायीं, तो स्वामी जी महाराज मुस्कराये और उन्होंने कहा, "सम्भवतः उनको (स्वामी चिन्मयानन्द जी को) अन्य साक्षात्कार-प्राप्त सन्तों का पता नहीं होगा जैसे-माँ आनन्दमयी।" यह है श्री स्वामी जी महाराज की महानता।

एक बार सन् १९७४ में श्री स्वामी चिदानन्द जी महाराज लखनऊ पधारे। मैं विषाद एवं चिन्ता-ग्रस्त थी। स्वामी जी महाराज ने मेरी चिन्ता का कारण पूछा। मैंने कहा, "स्वामी जी, मेरे पिता जी बहुत वृद्ध हो चुके हैं, यदि इन्हें कुछ हो गया तो मैं अकेली क्या और कैसे करूँगी?" स्वामी जी ने कहा, "तुम चिन्ता मत करो, उनके अन्त समय में मैं तुम्हारे साथ रहूँगा।" दो-तीन महीने के बाद मेरे पिता जी कोमा (पूर्ण मूछों की अवस्था) में चले गये। उनकी तबियत दिन पर दिन बिगड़ती गयी। कोमा अवस्था में ही चार-पाँच महीने बाद में उनको आश्रम ले कर आ गयी। कोई सुधार नहीं हुआ उनकी हालत में। और एक दिन उनकी दशा इतनी बिगड़ गयी कि ऐसा मालूम पड़ा कि अन्तिम समय आ गया है।

उस समय श्री स्वामी जी महाराज दिल्ली में थे, उनको सन्देश भिजवा दिया गया। उन्होंने उत्तर दिया, "अपने पिता से कहो कि भीष्मपितामह की तरह 'शरशय्या' पर ही कुछ देर प्रतीक्षा करें।" उसके पश्चात् पिता जी की हालत में थोड़ा सुधार होने लगा। तीन-चार दिन बाद स्वामी जी

महाराज आश्रम लौटे। आ कर उन्होंने मूर्द्धावस्था में ही पिता जी को कुर्सी पर बिठाया। अपना दिव्य कृपापूर्ण हाथ उनके सिर पर रखा, उनसे बात की और उन्हें पवित्र गंगा मैया का दर्शन करवाया। स्वामी जी ने मुझे पिता जी के सामने, उस अन्त समय में जाने से रोक दिया कि कहीं उनकी मोहासक्ति मेरे प्रति जाग्रत न हो जाये। अन्ततः स्वामी जी ने अपना वरद, अभय हस्त उनके हृदय पर रखा, कुछ मन्त्रोच्चारण और जप किया। इस प्रकार मेरे पिता जी ने बिना किसी कष्ट के अपने पार्थिव शरीर का त्याग किया। स्वामी जी ने उनकी अर्थी को कन्धा भी दिया। जब मैंने कहा, "स्वामी जी, आप तो संन्यासी हैं।" स्वामी जी ने कहा, "आपके पिता जी श्वेत वस्त्रों में भी एक संन्यासी ही थे। अन्त समय में में रहूँगा।" स्वामी जी ने अपने वचन को पूर्णरूपेण निभाया जिसका वर्णन शब्दों से परे है।

'परहित सरिस धरम नहिं भाई'

- श्री ओमप्रकाश जी, हरिद्वार -

१९४३ में 'श्री विश्वनाथ मन्दिर' के 'प्राण-प्रतिष्ठा महोत्सव' की तैयारी में सारे आश्रमवासी दिन-रात कार्य में जुटे हुए थे। इन्हीं दिनों मेरे पूज्य पिता जी एवं चाचा जी आश्रम के मन्दिर में संगमरमर का कार्य पूर्ण करने हेतु कैम्प लगाये हुए थे। जहाँ तक मुझे याद है, मेरी अवस्था लगभग आठ वर्ष की रही होगी। उन्हीं दिनों इस धवल वस्त्रधारी महान् विभूति के दर्शन हुए, जिन्हें लोग सम्मानपूर्वक 'राव जी' कह कर सम्बोधित करते थे। तब से अब तक उनका वरद् हस्त सदैव मुझ पर रहा है और विश्वास है कि सदा बना रहेगा।

मुझ जैसे अनुभवशून्य एवं सांसारिक कार्यों में लिप्त व्यक्ति के लिए ऐसी महान् दिव्यात्मा के प्रति कुछ लिखना या कह पाना असम्भव-सा ही है, परन्तु फिर भी साहस बटोर कर कुछ लिख पाऊँगा, यह उनकी कृपा व आशीर्वाद का ही फल है। सेवक को महाराजश्री के सान्निध्य में निवास करते हुए विद्याध्ययन का गौरव प्राप्त है। इसलिए समीप से सब-कुछ देखने व सुनने का अवसर प्राप्त हुआ है।

'Service of man is Worship of God- मानव-सेवा ही प्रभु आराधना है-गुरुदेव की इस आज्ञा को शिरोधार्य कर महाराजश्री ने ब्रह्मचर्य जीवन से आश्रम के लंगर (रसोईघर) के समीप स्थित एक कक्ष में एक आलमारी में ही 'डिस्पेन्सरी' चला कर सेवा कार्य आरम्भ किया। आपकी सेवा-सुश्रूषा से आश्रमवासियों के अतिरिक्त मुनिकीरेती की जनता एवं ढालवाला के कुष्ठरोगी स्वास्थ्य-लाभ करते रहे। सभी के मन में आपके प्रति श्रद्धा जाग्रत हुई। 'राव जी' भी 'डाक्टर स्वामी' कहलाने लगे।

गुरुदेव के जीवन पर आधारित 'Light Fountain' ने आपको आश्रम के विद्वानों की श्रेणी में अग्रणी बना दिया। योग म्यूजियम आपकी ही देन थी। योग-वेदान्त आरण्य अकादमी में 'राजयोग' के अध्यापन के लिए गुरुदेव ने आपको ही नियुक्त किया। सेवाभावी डाक्टर स्वामी, विद्वान् के रूप में सबके समक्ष अवतरित हुए। इतने पर भी अभिमान पास फटकने का भी

दुस्साहस नहीं कर सका। सदैव प्रसन्नचित्त, दीन-दुखियों को सान्त्वना देते, आश्रम के रोगियों की सेवा-सुश्रूषा करते तथा अपनी साधना में सदैव तल्लीन रहते ।

आश्रम में बर्तन माँजना, पानी भरना, मन्दिर के लिए विल्वपत्र तोड़ कर लाना आदि आश्रम के सभी छोटे-छोटे कार्यों को किया, लेकिन उन्हें कभी छोटा नहीं समझा। सदैव 'नारायण-सेवा' समझ कर पूजा-अर्चना के समान दिल लगा कर इन कार्यों को सम्पन्न किया। एक और यह कार्य, दूसरी ओर आश्रम के 'जनरल सेक्रेटरी' के रूप में राष्ट्रपति महामहिम डा. राजेन्द्रप्रसाद एवं सर्वपल्ली डा. राधाकृष्णन् जैसी महान् विभूतियों का स्वागत करने का गौरव भी आपको प्राप्त हुआ। परन्तु आपने सभी कार्यों को समान समझा।

सड़क पर बैठे, भीख माँगते हुए कुष्ठरोगियों को देख कर सदैव ही आपका सरल हृदय द्रवित हो उठता। इस महान् तपस्वी ने आखिर एक दिन कुष्ठ से पीड़ितों, दुखियों के लिए रहने, खाने व कपड़े की व्यवस्था कर इन्हें अनिवार्य आवश्यकताओं की चिन्ता से मुक्त कर दिया। सेवा-सुश्रूषा व चिकित्सा की स्वयं व्यवस्था की तथा देश-विदेश से आये साधक स्वामी जी की प्रेरणा पर कुष्ठरोगियों के बीच रह कर उन्हें रोग-मुक्त कर पाने में समर्थ हुए। हथकरघा उद्योग का ज्ञान दिला कर इन्हें जीने की राह दिखाई। आज ये कुष्ठ रोगी समाज पर भार नहीं, बल्कि समाज के उपयोगी अंग बन गये हैं।

संक्षेप में-

संक्षेप में मैंने श्री स्वामी चिदानन्द जी महाराज को देखा है मन्दिर में पुजारी बन कर पूजा करते, जंगल से बिल्वपत्र और फूल लाते, डिस्पेंसरी में रोगियों की सेवा करते, घायल व्यक्तियों की मरहम-पट्टी करते, इंजैक्शन लगाते, कुष्ठरोगियों की सेवा करते, और देखा है माँ गंगा को प्रणाम कर जल में कूदते, तैरते, जैसे बालक माँ की गोद में क्रीड़ा कर रहा है, खेल रहा है, निष्काम सेवा का पाठ अपने सामने वालों को (साधकों को) सिखाते जैसे भवन-निर्माण के लिए ईंट ढोते, पाकशाला (किचन) के लिए, गंगा जी से पानी भरते, लंगर के लिए लकड़ी पहुँचाते, 'द डिवाइन लाइफ' मैगजीन को डिस्पैच के लिए तैयार करते, फावड़ा चलाते, आश्रम के सभी प्रकार के निर्माण कार्य में हाथ बटाते, नगर-संकीर्तन करते, नाटक में भाग लेते और नाटकों का दिग्दर्शन करते, जादू के खेल दिखाते और देखा है कुत्ते और बिल्ली को एक ही बर्तन में खाना खिलाते, देखा है बन्दर को उनकी आज्ञा का पालन करते, जिसे ये प्यार से 'ऋषिराम' कह कर पुकारते थे, गऊ माता को प्रणाम करते, उनकी सेवा-सुश्रूषा का ध्यान रखते, विश्वनाथ बाग की देख-रेख और साज-सँवार करते, और देखा है साईकिल चला कर आश्रम की विभिन्न प्रकार की सेवा करते।

अध्यक्ष पद ग्रहण करने के उपरान्त भी साईकिल से नित्य ऋषिकेश विश्वनाथ बाग आते-जाते, गंगा पार स्वर्गाश्रम स्थित जज साहब गौरी शंकर जी महाराज के सान्निध्य में बैठ कर विचार-विमर्श करते, देखा है सन्तों के समीप बैठ कर सन्मार्ग पर चलने की चर्चा करते, मुनिकीरेती में सफाई कर्मचारी से प्रेम से वार्ता करते और देखा है भारत के राष्ट्रपति के साथ वार्ता करते और दोनों को ही सम्मान और आदर प्रदान करते, समान भाव के साथ छोटे-बड़े, अमीर-गरीब से मिलते।

श्री स्वामी चिदानन्द जी महाराज ने सदैव अपने ओठों की बजाय अपने जीवन के कार्यों द्वारा धर्मोपदेश दिया है अर्थात् हमारे कृत्य शब्दों की अपेक्षा अधिक प्रभावी होते हैं, अतएव हम जो कहना चाहते हैं, उसे करके दिखायें।

He only is fitted to command and control who has succeeded in Commanding and Con- trolling himself.

'गुरुणां गुरुः'

- वैद्य अनसूया प्रसाद मैठानी जी, श्यामपुर-

मैं महर्षिकुल ब्रह्मचर्याश्रम संस्कृत विद्यालय, लक्ष्मणझूला में प्रवेशिका का छात्र था। शिवानन्द आश्रम में स्व. सच्चिदानन्द मैठानी जी (मास्टर जी) व महेशानन्द शास्त्री जी गुरुदेव स्वामी शिवानन्द जी द्वारा शिक्षा प्रसार हेतु खोली गयी प्राइमरी पाठशाला में अध्यापन का कार्य करते थे।

स्व. श्रद्धेय मैठानी जी आश्रम में 'मास्टर जी' के नाम से ज्यादा जाने जाते थे। बाद में अन्तर्राष्ट्रीय ख्याति प्राप्त 'शिवानन्द आयुर्वेदिक फार्मेसी' के प्रमुख चिकित्सक व मैनेजर भी रहे। स्व. मैठानी जी रिश्ते में मेरे अग्रज थे, मेरी उनमें अत्यन्त श्रद्धा थी। मैं उन्हें न केवल बड़ा भाई ही मानता था, अपितु ईश्वरीय छवि भी उनमें देखता था। प्रवेशिका का छात्र होने के कारण मेरी आयु उस समय बहुत कम (लगभग १०-११ वर्ष) थी। घर से दूर रहने के कारण घर व घरवालों की याद बहुत सताती थी। इसी के चलते एक दिन मैं लक्ष्मणझूला से जैसे-तैसे शिवानन्द आश्रम में श्रद्धेय भाई साहब (मास्टर जी) से मिलने पहुँचा, किन्तु भाई साहब नहीं मिले। मैं निराश हो कर बड़ा दुःखी हुआ और दुःखी मन से वापस लक्ष्मणडूला जाने हेतु नाव घाट की तरफ जाते हुए पुराने शिवानन्द पोस्ट आफिस व वर्तमान पोस्ट आफिस के बीच की गली के पिछले हिस्से में बने आलमारीनुमा आले में व्याकुल हो कर बैठ गया। इतने में ही "प्रसीद देवेश जगनिवास" को लय के साथ गाते हुए श्वेत परिधान में एक दुबले-पतले युवा साधक वहाँ पर आये, बोले-"कहाँ से आये हो, किसका इन्तजार कर रहे हो व किससे मिलना है?" वह युवा साधक और कोई नहीं **परम पूज्य श्रद्धेय स्वामी चिदानन्द जी महाराज थे।** मैंने अपनी आपबीती और अपना परिचय पूज्य स्वामी जी को ऊँथे गले से बताया। **पूज्य स्वामी जी ने बड़े स्नेह और प्रेम से मेरे आँसू पोंछते हुए गोद में उठाया** और लंगर में ले जा कर कहा कि- "पहले आप भोजन करो, और फिर लक्ष्मणझूला जाना तथा किसी अन्य दिन आ कर मास्टर जी से मिल लेना, क्योंकि वे अभी छुट्टी पर गाँव गये हैं।" **स्वामी जी का वह स्नेह व प्रेम मेरे लिए हमेशा अविस्मरणीय रहा है। ऐसे थे स्नेह व वात्सल्य के धनी महान् समाजसेवी सन्त परम श्रद्धेय स्वामी चिदानन्द जी महाराज।**

******

कुछ समय पश्चात् मुझे यज्ञोपवीत लेना था। मेरी श्रद्धा भाई साहब (मास्टर जी) पर थी। उनके द्वारा शुभ दिन निश्चित किया गया। यज्ञोपवीत से पूर्व जैसे कि सुना था तीन दिन का व्रत (पहले दिन सिर्फ फलाहार, दूसरे दिन जलाहार लेना तथा तीसरे दिन जल भी ग्रहण न करना) धारण कर, तपोवन (लक्ष्मणझुला) के मोक्ष आश्रम में स्थित पीपल के पेड़ की सुखी लकड़ी हवन

हेतु चुन कर व घर से आते वक्त पिताजी द्वारा दी गयी अठन्नी को दक्षिणा हेतु रख कर ब्रतबन्ध (यज्ञोपवीत) व गायत्री मन्त्र लेने शिवानन्द आश्रम में पहुँचा। भाई साहब (मास्टर जी) ने मन्दिर में तब पूर्व की परिक्रमा में स्थित प्राचीन हवन कुण्ड (अब पश्चिमी दिशा में यज्ञशाला बनी है) में मेरा व मेरे अनन्य मित्र व गुरुभाई श्री चिरंजीलाल कोठियाल जी, जो बाद में ठेकेदार भी बने, का यज्ञोपवीत हवन व कर्मकाण्ड किया।

रोचक तथ्य यह है कि इस यज्ञोपवीत संस्कार का पूरा कर्मकाण्ड तो भाई साहब (मास्टर जी) ने किया, किन्तु यज्ञोपवीत (जनेऊ) पूज्य राव जी (स्वामी चिदानन्द जी का संन्यास-पूर्व नाम) ने दिया। यज्ञोपवीत के पश्चात् मैंने दक्षिणा हेतु रखी अठन्नी को यज्ञशाला में चढ़ाना चाहा कि उससे पूर्व ही परम श्रद्धेय राव जी (स्वामी चिदाननन्द जी) ने एक-एक धोती व आठ-आठ आना दक्षिणा हम दोनों बजमानों (श्री कोठियाल व मुझे) देते हुए नमस्कार भी कर कर डाला। ऐसे से थे पूज्य गुरुमहाराज।

******

शिवानन्द आयुर्वेदिक फार्मेसी में औषधि निर्माण शाला इंचार्ज के रूप में कार्यरत रहते हुए एक दिन मुझे स्वामी चिदानन्द जी से विश्वनाथ बाग में सत्यनारायण कथा करने का आदेश प्राप्त हुआ (तब मैं आश्रम में स्वामी जी के आदेश पर पूजन-कार्य भी कर लेता था)। जैसे ही मैंने कथा पूर्व गणेश-पूजा आरम्भ की पूज्य स्वामी चिदानन्द जी महाराज यजमान बन कर मेरे सामने बैठ गये। मेरा पसीना निकलना स्वाभाविक था। कथा पूर्ण हुई, बाद में पूज्य स्वामी जी ने पूछा- "पसीना क्यों आया", और परम श्रद्धेय गुरुदेव स्वामी शिवानन्द जी महाराज की ही भाँति मुझे भविष्य के लिए प्रोत्साहित किया। पूज्य गुरुदेव स्वामी शिवानन्द जी भी बड़ी तारीफ करके प्रोत्साहित किया करते थे। बीजाक्षरों का अर्थ भी कभी-कभी पूछ लिया करते थे। यद्यपि मैं मात्र पुस्तक पढ़ने के अलावा कुछ नहीं जानता था, किन्तु उनकी कृपा से सही उत्तर भी दे बैठता था।

एक बार मुझे आश्रम प्रिंटिंग प्रेस के पीछे स्थित 'सरस्वती कुटीर' के शिलान्यास-पूजन का आदेश प्राप्त हुआ। मिस्त्रियों द्वारा वहाँ जमीन खोद कर गड्ढा बना दिया गया था। मैंने उसमें गणेश आदि बना कर पूजा आरम्भ कर दी, किन्तु शायद भूलवश उसमें दीपक नहीं रखा। स्वामी चिदानन्द जी अन्य वरिष्ठ सन्तों के साथ पास ही खड़े थे। शिलान्यास-पूजन हुआ, 'जै गणेश संकीर्तन' व प्रसाद वितरण हुआ, मिस्त्रियों व मुझे दक्षिणा भी प्रदान की गयी। जाते हुए पूज्य स्वामी जी महाराज निकट आये और **धीरे से बोले-"गणेश के पास दीपक जला कर रख दें।"** मैं सन्न रह गया। भविष्य में मैं जब भी पूजन-कार्य करता, दीपक जलाना जरूर याद रखता। ऐसे थे **'गुरुणां गुरु' स्वामी चिदानन्द जी महाराज।**

******

एक बार मुनिकीरेती टाउन एरिया के चुनाव आये। नगर के कुछ राजनैतिक व्यक्ति चाहते थे कि स्वामी जी उनको समर्थन दें। स्वामी जी ने जब उदासीनता दिखाई तो अगले ही दिन आश्रम व स्वामी जी पर कटाक्ष व अपशब्द भरा पैम्फ्लेट (पत्रक) नगर में वितरित होने लगा। मैंने वह पैम्फ्लेट स्वामी जी तक पहुँचाया, स्वामी जी ने तुरन्त आदमी के भेज कर मुझे बुलाया और उस पत्रक का विरोध न करने की मुझे आज्ञा दे डाली।

अगले चुनाव में एक नवयुवक स्वामी जी से आशीर्वाद ले गया और सफल हो गया। उस चुनाव में नवयुवक पक्ष के लोगों द्वारा मुझे पोलिग ऐजेन्ट बना दिया दिया गया। मैं उन दिनों बहुत

मुखर बातें करता था व सच्ची बातों पर अड़ जाता था। मतदान के दिन जब दूसरे पक्ष के ऐजेन्ट द्वारा गलत वोट डलवाने की कोशिश की जा रही थी तो कड़े विरोध के चलते उसे पोलिंग बूथ छोड़ कर बाहर जाना पड़ा। पूज्य स्वामी जी ने जब सुना तो मुझे बुला कर कुछ न कहने को कहा और अगले दिन जब वह अधिकारी स्वामी जी के दर्शन करने गया तो पूज्य स्वामी जी द्वारा उसे न सिर्फ सान्त्वना दी गयी अपितु अच्छे व कर्तव्यनिष्ठ बनने का आशीर्वाद भी दिया। इतने महान् सन्त थे पूज्य स्वामी चिदानन्द जी महाराज।

******

श्रद्धेय स्वामी चिदानन्द जी महाराज एक महान् कर्मयोगी भी थे। आश्रम में कोयला जलाने हेतु आता था। एक बार कई बोरों में कोयला आया। सभी सेवक नदारद, तब आश्रम में सेवक भी कम होते थे। पूज्य स्वामी जी तब विश्वनाथ मन्दिर के लिए जाने वाली सीढ़ी के दाहिनी तरफ के बरामदे वाले पहले कमरे dot 4 रहा करते थे। उन्होंने देखा सड़क में कई बोरे कोयले के उतरे पड़े हैं। **स्वयं एक खाली बोरी को अपनी पीठ में डाल कर अकेले ही कोयले को गोदाम में ढोने लगे। सेवकों ने जैसे ही देखा, भागते हुए कोयला ढोने पहुँचे और चन्द मिनट में ही सभी कोयला गोदाम पहुँच गया।**

******

पूज्य स्वामी जी एक कुशल प्रबन्धक भी थे। परम श्रद्धेय गुरुदेव स्वामी शिवानन्द जी महाराज की महासमाधि हो रही थी। हजारों भक्त समाधि-स्थल पर जमा थे। गुरुदेव की कृपा से मैं भी समाधि-स्थल पर जहाँ समाधिपूजन-कार्य चल रहा था, उपस्थित था। भीड़ अनियन्त्रित हो गुरुदेव के अन्तिम दर्शन के लिए पूजन-स्थल की ओर बढ़ रही थी, अचानक एक मोटी रस्सी तीव्र वेग से भीड़ के बीच गिरी और उसे जोर से खींच कर अनियन्त्रित भीड़ को समाधिपूजन-स्थल से पीछे कर दिया गया। कितनी कुशलता और तेजी से वह कपड़े की मोटी रस्सी डाली गयी थी, कहा नहीं जा सकता। अगर उस वक्त रस्सी न गिराई गयी होती तो शायद बेकाबू भीड़ में कई लोग दब जाते। उस रस्सी को डालने वाला और कोई नहीं, पूज्य स्वामी चिदानन्द जी महाराज ही थे।

******

आश्रम में जब कोई प्रोग्राम होता तो स्वामी जी बड़े निराले प्रोग्राम देते थे। सवाल-जवाब के प्रोग्राम में जब कोई सवाल पूछता था तो पूछने से पहले ही स्वामी जी सवाल का उत्तर किसी अन्य के पास दे देते थे। स्वामी जी के इस निराले अंदाज से सभी हतप्रभ रह जाते थे।

******

पूज्य स्वामी जी महाराज मानवता व करुणा के पुजारी थे। एक बार मेरा स्वास्थ्य खराब हुआ। स्वामी जी को मालूम हुआ तो तुरन्त आज्ञा हुई "कल लुधियाना जाना है।" उस वक्त स्वामी जी के पास लुधियाना के कोई सहायक मुख्य अभियन्ता (जिनका नाम मुझे विस्मृत हो रहा है) उपस्थित थे। स्वामी जी ने कहा कि आप इनके साथ लुधियाना जायें, वहाँ आपका इलाज करायेंगे। मैं असमंजस में था, घर पर छोटे-छोटे बच्चे स्कूल में पढ़ने वाले व अकेले (क्योंकि मेरी धर्मपत्नी का देहावसान हो चुका था), राशन, सब्जी आदि की भी समस्या। कुछ समझ में नहीं आ रहा था। सायं होते-होते मेरे बिना कुछ कहे स्वामी जी द्वारा महीने भर के राशन आदि की भी व्यवस्था कर दी गयी। मेरी उलझन और बढ़ गयी कि अब कैसे स्वामी जी से लुधियाना जाने के लिए मना करूँ। रात्रि में ही मुझे पेचिश की शिकायत हो गयी। सुबह जब मुझे आदमी बुलाने आया तो मैंने

लुधियाना जाने से ना कह दिया। स्वामी जी ने पूछा 'क्यों' तो मैंने पेचिश का हवाला दे दिया। "तब तो जाना और भी जरूरी है और अभी जाना है," स्वामी जी का आदेश हुआ। तथा दो गोली मँगा कर दी जिससे पेचिश बन्द हो गयी। लुधियाना में स्वामी जी के उन शिष्य महानुभाव व उनकी सहधर्मिणी जी ने मेरी देख-भाल व अच्छे डा. से इलाज व चैकअप (परिक्षण) कराया। जाँच में किडनी में पथरी निकली। मैं कुछ दिन चिकित्सा करा वापस लौट आया। लुधियाना जाते वक्त स्वामी जी द्वारा मुझे १०० रुपये भी दिये गये थे। वापस आने पर मैं ५० रुपये की बर्फी मिठाई ले कर स्वामी जी के दर्शन हेतु पहुँचा। स्वामी जी द्वारा मेरा हाल-चाल पूछा गया। मिठाई भेंट देखते ही स्वामी जी अपने दिये पैसे वापस माँगने लगे। स्वामी जी ने कहा ५० रुपये वापस दो। तभी रामस्वरूप जी ने अपने लिए कोई दवा बाजार से मँगाने हेतु ५० रुपये मुझे दिये जो मैंने स्वामी जी को दिये, तब जा कर स्वामी जी को सन्तुष्टि हुई। शायद स्वामी जी को मेरा मिठाई भेट में पैसे अपव्यय करना उचित न लगा।

******

कुष्ठरोगी तो पूज्य स्वामी जी को अपना ईश्वर ही मानते थे। उनकी सेवा के लिए तो स्वामी जी आश्रम व अपना शरीर तक त्यागने को तैयार रहते। स्वामी जी ने अपना शिष्य बनाने की कसौटी भी यह रखी थी कि पहले निर्लेप, निष्काम बनें, घृणा को त्याग कर कुष्ठसेवा करें, फिर शिष्यत्व ग्रहण करें। उन्होंने कुष्ठरोगियों के लिए स्थापित तपोवन, लक्ष्मणझुला स्थित कुष्ठ कालोनी में दैनिक भगवत् दर्शन हेतु आशुतोष भगवान् शंकर व पार्वती का मन्दिर बनाया जिसका उद्घाटन पूर्व जनरल सेक्रेटरी व उपाध्यक्ष परम पूज्य ब्रह्मलीन माघवानन्द जी द्वारा किया गया था।

पूज्य स्वामी जी गरीब, पीड़ित व उपेक्षित दलितों के प्रति बड़ा स्नेह रखते थे। गान्धी जयन्ती पर प्रातः हरिजन बस्ती में जा कर स्वयं सफाई किया करते व अपराह्न १२ बजे समाधि मन्दिर में पधारे सभी हरिजनों को पाद्य, अर्घ्य, गन्ध, धूप, दीप, भोजन, वस्त्र और दक्षिणा दे, माल्यार्पण व आरती कर उनकी पूजा किया करते। तत् पश्चात् उनकी पत्तल में से अवशेष अन्न को भीख माँग कर (उसका भी उन्हें उचित मूल्य देते) उन्हें अपने नारायण रूप में देख समाधिस्थ हो कर उक्त अवशेष अन्न को भोजन रूप में ग्रहण करते। के के

और अन्त में-

पूज्य स्वामी चिदानन्द जी महाराज परम श्रद्धेय गुरुदेव स्वामी शिवानन्द जी महाराज के न सिर्फ एक महान् शिष्य थे अपितु उनकी प्रतिमूर्ति थे। पूज्य गुरुदेव व स्वामी जी में बड़ी समानता थी कि वे प्रत्येक व्यक्ति को अधिक से अधिक प्रोत्साहित करने का प्रयास करते चाहे वह कितना ही छोटा क्यों न हो। उन्हें छोटों का दब्बूपन व संकोचित रहना बड़ा अखरता था। गुरुदेव स्वामी शिवानन्द जी महाराज से जुड़ा एक वाक्य मुझे हमेशा स्मरण रहता है व समय-समय पर आत्मबल भी प्रदान करता है। एक बार में गंगा स्नान करते हुए, गंगा में तैर रहा था। गुरुदेव स्वामी शिवानन्द जी सत्संग से अपनी कुटिया (वर्तमान गुरुदेव कुटीर) लौट रहे थे। उन्होंने साथ चल रहे शिष्यों से सहभाव से कहा- को बुलाओ" (गुरुदेव शिवानन्द "आचार्य जी जी महाराज स्नेह से मुझे इसी नाम से पुकारते थे)। शिष्यों ने मुझे आवाज लगाई-गुरुदेव बुला रहे हैं।" मैंने सोचा, गुरुदेव ने मुझे तैरते हुए देख लिया है, इसलिए बुलाया है। मैं आपाधापी में किनारे आया और धोती लपेट गुरुदेव के सम्मुख खड़ा हो गया। गुरुदेव ने वहाँ उपस्थित गया-नेपाल की रानी व अन्य

भक्तों को एक तरफ होने को कह स्वामी पुरुषोत्तम जी से कहा कि फोटो खींचनी है। उन्होंने शिष्यों से एक आदमकद माला अपने गले में और एक मेरे गले में डलवा कर दो बड़ी कुर्सियाँ भी मँगाई। एक कुर्सी में गुरुदेव स्वयं बैठ गये व बगल की दूसरी किन्तु में गुरुदेव के साथ बगल चरणों के पास जमीन पर बैठ कुर्सी में मुझे बैठने को कहा, की कुसों में न बैठ कर उनके गया। गुरुदेव का पुनः आदेश हुआ-"मेरे साथ ऊपर कुर्सी पर बैठो।" किन्तु मैंने कहा- यह मेरे लिए सम्भव नहीं है।" गुरुदेव गुस्से से बोले- "यह दब्बूपन है।" खैर, आखिर मेरे जमीन पर बैठे ही फोटो खींची गयी, किन्तु फोटो खिचवाने के बाद गुरुदेव नाराज हो कर अन्दर कमरे में चले गये व फिर गुरुदेव के मुझे दर्शन सम्भव न हुए। कुछ समय पश्चात् गुरुदेव के दिवंगत (ब्रह्मलीन) होने की रात्रि में मुझे स्वप्न में ही पुनः उनकी कृपा से दर्शन हुए। गुरुदेव के साथ खींची गयी वह फोटो आज भी मेरे पास उनकी एक मूल्यवान् स्मृति के रूप में सुरक्षित है जिसे देख कर मुझे हमेशा गुरुदेव का स्मरण बना रहता है।

'जय सद्गुरुदेव!'

'जय गुरुदेव दयानिधे'

-श्री सोमदत्त हरीश शर्मा जी, देहरादून -

'जय गुरुदेव दयानिधे! भक्तन के हितकारी'

प्रातःस्मरणीय श्री सद्गुदेव स्वामी शिवानन्द जी महाराज तथा परम पावन श्री स्वामी चिदानन्द जी महाराज से मेरा सम्पर्क सन् १९४७-१९४८ से लगातार बना रहा है। प्रारम्भिक दिनों में अपने पिता श्री प्रिंसीपल चमन लाल शर्मा (स्वामी अर्पणानन्द जी), माता श्री रामप्यारी शर्मा जी, अनुज चन्द्रप्रकाश जी एवं अपनी बहनों सहित आश्रम में श्री गुरु चरणों में पहुंचने का सुअवसर प्राप्त होता रहा। सन् १९४९ में गुरुदेव की कृपा से ही उत्तर रेलवे विभाग में मेरी नियुक्ति हो गयी। सन् १९५० में अखिल भारत-यात्रा के समय मेरी ड्यूटी शाहजहाँपुर स्टेशन पर थी। मेरी बड़ी तीव्र इच्छा थी कि लखनऊ से पहले गुरुदेव यहाँ पर भी थोड़ी देर रुक कर दर्शन का दुर्लभ लाभ प्रदान करें। यात्रा-योजना में यह सम्भव प्रतीत नहीं हो पा रहा था। आश्चर्य! महान् आश्चर्य ! शाहजहाँपुर में प्रातः गाड़ी रुकने पर गुरुदेव पूछने लगे-"चमन लाल जी के सुपुत्र हरीश जी कहाँ हैं?" सुनते ही मेरी खुशी की सीमा न रही। परम दयालु गुरुदेव व हमारे स्वामी चिदानन्द जी की पवित्र सन्निधि में बीते वे क्षण मेरी घरोहर हैं, अनमोल धन हैं। असीम दयालुता। अहेतुकी कृपा।

पश्चात् अपनी ट्रैवलिग ड्यूटी के दौरान तो अक्सर श्री स्वामी जी महाराज के साथ रहा। जहाँ देखा मैंने उनके 'स्वावलम्बन' गुण का अनूठा उदाहरण। जिसे देख स्टाफ के मेरे अन्य साथी लोग भी चौंक उठते। रेलवे कम्पार्टमेंट में अपना बिस्तर खोलने और प्रातः उसे व्यवस्थित ढंग से बाँधने का काम स्वयं अपने हाथों से ही करते थे। जबकि सेवक जन साथ में रहते थे।

सन् १९८५ में एक बार आश्श्रम में राशिपुरम के श्री चन्द्रशेखर जी (श्री स्वामी गुरुप्रकाशानन्द जी) ने मुझे कहा- "आपके पिता जी पट्टमडाई, राशिपुरम आदि स्थानों पर श्री

स्वामी जी महाराज के साथ गये थे। आप भी कभी प्रोग्राम बनाइए।" बात मन को जँच गयी। मैंने स्वामी जी महाराज के समक्ष अपनी भावना व्यक्त की। उन्होंने सहर्ष अपने टूर (tour) में साथ चलने की स्वीकृति दे दी। मैं, मेरी पत्नी विमला तथा तीन बेटियों का रिजर्वेशन उन्हीं तारीखों में करा लिया। पूरे प्रोग्राम में हम उनके साथ रहे। अनेक आश्चर्यजनक घटनाएँ देखने को मिलीं। उनकी ही कृपा से यह दक्षिण यात्रा अति आनन्दप्रद व अविस्मरणीय रही।

अपनी पुत्री अर्चना की शादी का कार्ड ले कर जब मैं आशीर्वाद हेतु देहरादून से स्वामी जी महाराज के पास पहुँचा तो देख कर बोले-"मेरे आशीर्वाद हमेशा आप सबके साथ हैं। इस तारीख में तो मेरा उड़ीसा का प्रोग्राम है।"

आश्चर्य तब हुआ जब शादी से दो दिन पहले आदरणीय ब्रिगेडियर सब्बरवाल जी के द्वारा सन्देश मिला- होटल का एक कमरा स्वामी जी महाराज के लिए बुक कराना है। तभी मुझे पता चला कि उड़ीसा का प्रोग्राम कैन्सिल कर दिया। विवाह की रात महाराजश्री का शुभागमन हुआ। अपना अमूल्य समय दे कर रातभर बैठ कर सब ध्यानपूर्वक देखा-सुना। उस समय बेटी को १०३ डिग्री बुखार था। श्री स्वामी जी महाराज को प्रणाम करने गयी तो उनके चरणों में गिर गयी। भरपूर आशीर्वाद पाया उसने। आज वह बेटी मेरी तन-मन से सेवा कर रही है। उसका यही अटल विश्वास है कि मैं तो गुरुदेव की कृपा से ही जीवित हूँ। उन्होंने ही मुझे शक्ति दी हुई है।

सन् २००६ की २४ सितम्बर को गुरु महाराज का ९० वाँ जन्मोत्सव था। मन में चिर अभिलाषा थी कि एक बार महाराजश्री के दर्शन का सौभाग्य मिल जाये। सद्गुरु भगवान् से प्रार्थना-याचना करता रहा। हम दीन जनों की पुकार सुन ली गयी। सच कहें तो अहैतुकी कृपा ही थी। शान्ति निवास, देहरादून में उनके दुर्लभ दर्शन सत्संग का सुअवसर-लाभ प्राप्त हुआ। बड़ी अच्छी तरह बातचीत हुई। इसका ध्यान कर मैं अकिंचन गद्गद् हो उठता हूँ। वे हमारी श्वास-प्रश्वास में बसे हैं। उनकी माधुरी मूरत हमारे हृदय में बसी है। उनके विषय में कुछ कहना-लिखना 'सूर्य को दीपक दिखाना' जैसा है। गुरु महाराज के उपदेश सन्देश से भरे इस भजन का ही हमें सहारा रहता है।

सीता राम कहो, राधे श्याम कहो ।
सीता राम कहो, राधे श्याम कहो ।। सीता राम...

सीता राम बिना सुख स्वप्न नहीं।
राधेश्याम बिना कोई अपना नहीं ।। सीता राम...

सीता राम बिना सुख कौन करे।
राधेश्याम बिना दुख कौन हरे ।। सीता राम...

सीता राम बिना उद्धार नहीं।
राधेश्याम बिना बेड़ा पार नहीं। सीता राम...

सब हैं समान सबमें एक प्राण,

त्याग के अभिमान हरि नाम गाओ।
हरि नाम गाओ दया अपनाओ,
अपने हृदय में हरि को बसाओ ।।

मेरे गुरुभय्या जी की दिव्य स्मृतियाँ

१३-१०-१९५३ से २८-८-२००८ तक

- शिवानन्द सुशीला काम्बोज माता जी, देहरादून-

श्री स्वामी चिदानन्द जी महाराज के दर्शन की प्रथम-झलक

प्रबल इच्छा व व्याकुलता के पश्चात् १३ अक्तूबर १९५३ को मुझको प्रथम बार सुश्री पुष्पाआनन्द व मोहिनी आनन्द के साथ शिवानन्द आश्रम में जाने एवं श्री गुरुदेव स्वामी शिवानन्द जी के दर्शन करने का सौभाग्य प्राप्त हुआ। श्री गुरुदेव के आदेशानुसार मुझको एक भजन द्वारा अपने हृदय की व्याकुलता प्रकट करने का सौभाग्य भी प्राप्त हुआ। भजन गाते समय मेरी दृष्टि अपनी दाहिनी ओर पड़ी; मैने देखा एक दुबले, पतले, लम्बे, गौर-वर्ण स्वामी दीवार के सहारे खड़े, ध्यान-मगन हो कर भजन सुन रहे थे। वे थे श्री स्वामी चिदानन्द जी महाराज, इसका ज्ञान मुझको दूसरे दिन हुआ।

दूसरे दिन श्री गुरुदेव के दर्शन करने हम तीनों गुरुबहिनें उनके आफिस में गयीं। आफिस कार्य की समाप्ति पर श्री गुरुदेव ने हम तीनों को अपनी कुटिया में भोजन के लिए आमन्त्रित किया तथा कुछ अन्य भक्तों को भी। अपना सौभाग्य समझते हुए हम लोग गुरुदेव की कुटिया में पहुँच गये। गुरुदेव अपनी कुर्सी पर बैठे हुए थे। उनके सामने मेज पर बड़ी सी थाली व भोजन से सम्बन्धित सभी बर्तन रखे हुए थे। हम सभी भक्त लोग फर्श पर दोनों ओर बैठ गये। भोजन परसना आरम्भ हुआ। सर्वप्रथम एक संन्यासी, लम्बे, दुबले, पतले, गौर-वर्ण शरीर वाले, हाथ में सब्जी का बर्तन लिये आये और परसना आरम्भ किया। उसी समय श्री गुरुदेव जी ने उसी संन्यासी को 'स्वामी चिदानन्द जी' कह कर पुकारा। उस समय मुझको ज्ञात हुआ कि ये संन्यासी श्री स्वामी चिदानन्द जी हैं। श्री स्वामी चिदानन्द जी को गुरु-सेवा के प्रति इतनी अधिक आस्था थी- इसका ज्ञान भी मुझको इसी समय ही हुआ। श्री स्वामी चिदानन्द जी महाराज जी, श्री गुरुदेव के परम विशिष्ट शिष्यों में से थे और हैं।

संगीत के प्रति श्री स्वामी चिदानन्द जी महाराज की रुचि

कुछ समय पश्चात् मुझको पुष्पा आनन्द के साथ आश्रम आने का फिर सौभाग्य प्राप्त हुआ। दिल्ली से सुश्री मनोरमा जी (महाराष्ट्रियन) आई हुई थीं। रात्रि-सत्संग में उन्होंने श्री गुरुदेव को भजन सुनाया। अगले दिन श्री स्वामी चिदानन्द जी महाराज ने हम तीनों को अपनी कुटिया (योग-साधना कुटीर) पर आने के लिए बोला। हम तीनों वहाँ पहुँच गईं। श्री स्वामी चिदानन्द जी आये, मर्यादानुसार देहली के अन्दर की ओर अपने कमरे में बैठ गये और हम तीनों देहली के

बाहर बैठे। श्री स्वामी महाराज जी ने मनोरमा को वो भजन जो उन्होंने रात्रि-सत्संग में गाया था- 'शरणं, शरणं जय शिवानन्दा...' गाने के लिए कहा। साथ में श्री स्वामी जी ने स्वयं भी गाया। इस प्रकार श्री स्वामी जी महाराज ने उस भजन को सीखा। इस घटना से उनकी संगीत-प्रियता का परिचय प्राप्त हुआ।

श्री स्वामी चिदानन्द जी महाराज की सेवा में प्रथम राखी-भेंट

२१ अगस्त १९५६ को प्रथम 'रक्षाबन्धन' के शुभावसर पर श्रद्धेय एवं पूजनीय श्री स्वामी चिदानन्द जी को मैंने अपनी 'राखी' भेजी। उत्तर में श्री स्वामी जी का आशीर्वाद प्राप्त कर मैं धन्य हुई। इसी पत्र में श्री स्वामी जी महाराज ने मुझको 'गुरुबहिन' लिख कर सम्बोधित किया व स्वयं को 'गुरुभय्या' लिखा। यह मेरा परम सौभाग्य है। यह सब श्री गुरुदेव की कृपा का ही फल है। श्री स्वामी जी महाराज जी का यह पत्र (२१- ८ - १९५६) व अन्य पत्र 'सुखद-संस्मरण' पुस्तक में भी दिये गये हैं।

गुरु-निवास में 'राखी' भेंट

श्री स्वामी जी की आज्ञा प्राप्त कर मैं गुरु-निवास पहुँची। साथ में 'राखी', फल-फूल एवं चीनी से बने मखाने (कमल के फूल) भोग लगाने हेतु ले गयी। श्री स्वामी जी महाराज हाल में विराजमान थे। उनकी अनुमति प्राप्त कर मैंने उनकी '**दिव्य-कलाई**' में राखी बाँधी और मखानों का भोग लगाने की प्रार्थना की।

कृपालु स्वामी जी महाराज ने एक मखाना खा कर भोग लगाया; इसके उपरान्त मुझको एक एक मखाना देते गये और "**धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष**" -बोल कर आशीर्वाद देते गये। जब चार आशीर्वाद दे दिये, तब मैं तुरन्त बोली-

"**भक्ति, ज्ञान, वैराग्य और अविरल नाम**" भी- दयालु स्वामी जी "**भक्ति, ज्ञान, वैराग्य और अविरल नाम**" बोल कर एक-एक मखाना देते गये। इस प्रकार मुझको ही नहीं मानो समस्त भक्तों को यह 'दिव्य-सन्देश' दिया।

मेरे गुरुभय्या श्री स्वामी चिदानन्द जी महाराज ज्ञान-मूर्ति, सहृदय, समदर्शी, साधु-रूप, निष्पक्ष, प्रेम-स्वरूप, सद्भावना-रूप और ब्रह्म-स्वरूप थे। श्री सद्गुरु के कथनानुसार श्री स्वामी चिदानन्द जी का यह अन्तिम जन्म था। श्री स्वामी जी महाराज, श्रीरामजी के परम भक्त थे। शान्त-आत्मा एवं धैर्य से युक्त थे। दूसरों के कल्याण के लिए ही मानो श्री स्वामी जी का जन्म हुआ था। श्री स्वामी चिदानन्द जी का आशीर्वाद सदैव पूर्ण हुआ। इनकी महिमा-वर्णन करने के लिए शब्द-कोष भी असमर्थ हो जाता है और वाणी द्वारा वर्णन करना असम्भव है।

ऐसे थे मेरे गुरुभय्या-श्री श्री पूजनीय एवं श्रद्धेय श्री स्वामी चिदानन्द जी महाराज, जिनका स्नेह, कृपा एवं आशीर्वाद प्राप्त कर मैं एक तुच्छ प्राणी धन्य हो गयी। यह सब मेरे सद्गुरुदेव श्री श्री स्वामी शिवानन्द जी महाराज जी की अपार कृपा एवं आशीर्वाद के फल-स्वरूप ही मुझको प्राप्त हुआ है।

जय शिवानन्द ! जय चिदानन्द !

सदा स्मरणीय

-श्रीमती प्रियारतनलाल रैना परिवार, दिल्ली -

परम कृपालु सन्त श्री स्वामी चिदानन्द जी महाराज के प्रथम दिव्य दर्शन का दुर्लभ सौभाग्य, अपने होने वाले समधी परिवार श्री रमेश-प्रेम शौनक (श्रीधाम) के साथ हमें (मैं, मेरे पतिदेव, सुपुत्र विक्रम) शान्ति निवास, देहरादून में दिसम्बर २००२ में प्राप्त हुआ। बड़ा ही अनोखा, अलौकिक आनन्द था। उनके चरण स्पर्श करने का मुझे मौका क्या मिला मानो सब-कुछ मिल गया। चरण छोड़ने का मन ही न करता था। वह विलक्षण दर्शन-सत्संग तो सदा स्मरणीय है। तीन वर्षीय प्रिय पौत्र 'सोहम' (सुपुत्र विक्रम-निवेदिता रैना) तो हमारे स्वामी जी का ही कृपा-प्रसाद है।

इस पवित्र शिवानन्द आश्रम के साथ आजीवन सदस्य रूप में हमें स्वामी जी महाराज जोड़ गये हैं। उनसे हमारी प्रार्थना है कि यह सम्बन्ध अटूट बना रहे। आश्रम में जाने पर पूजा-प्रार्थना-सत्संग आदि से जो शान्ति और आनन्द मिलता है-शब्दों में प्रकट नहीं किया जा सकता। ये सब स्वामी जी महाराज की अनन्य दया है। उनकी मीठी याद हमेशा रहती है। वे तो भगवान् हैं-

उजाले अपनी मधुर यादों के,
सदा हमारे साथ रहने दो।
चलेगी जीवननौका इसी दम पर
तुम ही ने तो पार ले जाना है।

****

सुमधुर स्मृति सौरभ

- प्रेम रमेश शौनक, श्रीधाम, दिल्ली -

प्रणम्य 'शिवानन्द-आत्मरूप' अनूप तुम्हारा,
सत्-चित्-आनन्द-रस-रूप है न्यारा;
दूर सुदूर दिव्य जीवन प्रचारा, शिवानन्द ज्ञानोपदेश-सन्देश प्रसारा;
सत्यस्य सत्यं 'ब्रह्मविद् ब्रह्मैव भवति'; सद्गुरुदेव के
आप सरीखे उत्तमोत्तम शिष्य 'न भूतो न भविष्यति'।
सादर वंदन तव अभिवंदन हे।
नमामि प्रणमामि चिदानन्द हे ।।

हैं आप अद्वितीय, वरणीय, अनुपमेय औ' अवर्णनीय,
आपको पाने का है सोपान, सतत दिव्यचिन्तन,
नित्य निरन्तर श्री चरण-आश्रित रहने में है आनन्द ही आनन्द,
जैसे आप पहले थे हमारे लिए; हैं वैसे ही अब भी;
श्रीधाम परिवार के हृदय को रही हैं झकझोर,
आपकी अद्‌भुत लीलाओं की, अनोखे अलबेले दर्शनों की
मानस पर आतीं उमड़घुमड़ मधुर स्मृतियाँ अपार;
प्रस्तुत हैं भावनानुभूति वर्णित दो चार ।

।। स्मृति १९५६ जून मास की-शिवानन्द-अभिन्नरूप चिदानन्द की ।।

८६ वर्षीय पितामह हमारे श्री गणपत राय जी, अपनी शारीरिक अवस्था में भी
चन्दौसी से पहुँचे परिवार के साथ ग्रीष्मावकाश में ऋषिकेश-
हृदय आराध्य सद्‌गुरुदेव स्वामी शिवानन्द जी के दर्शन की प्रबल इच्छा लिए।
गुरुदेव ने की दिव्य लीला...
भेजा महाराजश्री स्वामी चिदानन्द जी को उन्हें दर्शन देने हेतु,
पितामह अति प्रसन्न, चेहरा चमक उठा दर्शन कर, हुए कृतकृत्य ।
बताया पिताश्री ने "गुरुदेव ने भेजा है इनको, ये हैं स्वामी चिदानन्द जी।"
पुनः-पुनः ऐसा समझाने पर भी पितामह का उत्तर था एक यही-
"हाँ, हाँ, मुझे दर्शन हो रहे हैं स्वामी शिवानन्द जी के, बहुत अच्छे से दर्शन हो रहे हैं।"
प्रार्थना-कीर्तन-पश्चात पूछा महाराजश्री ने- "आपकी इच्छा क्या है?"
पितामह ने विनीत स्वर में कहा- "अपनी देह को यहाँ गंगातट पर छोड़ना चाहता हूँ। और आपके चरण स्पर्श करना चाहता हूँ।" तुरन्त ही दयार्द्र हो श्री स्वामी जी महाराज
ने उनकी प्रसन्नता के लिए अपने चरण आगे कर दिये।
और मिल गया आशीर्वाद ऐसा ही होने का।
स्वास्थ्य में सुधार होने लगा। पर थोड़े ही दिनों बाद
एकादशी तिथि को स्नान किया गंगाजल से।
उस दिन कहा, देखा पंचांग में कौन सी तिथि है आज, सब सुना
संध्या पूर्व अपराह्न में 'राम' 'राम' कह अन्तिम श्वास भी ले लिया अचानक।
उनका शान्त-निश्चल चेहरा बता रहा था- जो माँगा था, मिल गया।'
अगले दिन सूर्योदय होते ही महाराजश्री पुनः पहुँचे।
श्री स्वामी हरिशरणानन्द जी तथा अन्य भक्तों के साथ।
स्वयं कन्धा दे कर शवयात्रा आरम्भ की; दाहक्रियाकर्म हुआ मायाकुण्ड गंगा किनारे।
दिवंगत आत्मा की शान्ति व दिव्य सान्निध्य के लिए प्रार्थना की। पिताश्री को धीरज बंधाया।

॥ जय हो शिवानन्द-महिमा मण्डित चिदानन्द महाराज की ।।

।। स्मृति ८ सितम्बर १९६३ की- 'शिवानन्द-स्वस्वरूप' चिदानन्द की ।।

गुरुदेव की महासमाधि के पश्चात उनके जन्मोत्सव का था पावन दिवस,
दिव्य जीवन संघ के परमाध्यक्ष के रूप में महाराजश्री दिल्ली पधारे,
शिवानन्द सत्संग भवन, लाजपतनगर के शिलान्यास समारोह के उपलक्ष्य में,
जहाँ निमन्त्रित थे- भारत के राष्ट्रपति सर्वपल्ली श्री राधा कृष्णन जी।
अहेतुकी कृपा दयानिधान गुरुदेव की
वहाँ जाने से पूर्व महाराजश्री का शुभागमन हुआ हमारे यहाँ शक्तिनगर में

मानो साक्षात् सद्गुरुदेव ने पूर्व वचनानुसार स्वयं पधार कर सौभाग्य प्रदान किया दुर्लभ दर्शनों का सबको;
हमारे हर्ष की सीमा न रही। आनन्दातिरेक में सब हुए गद्गद् ।
साथ में थे वर्तमान परमाध्यक्ष स्वामी विमलानन्द जी, उस समय थे
निजी सचिव नागराज जी के रूप में।
परिवार द्वारा स्वागत गान और भजन कीर्तन सुनने के पश्चात
महाराज के आशीर्वचन ने कर दिया सबको कृतार्थ-
"I Wonder Whether it is Shaktinagar or Bhaktinagar."
यह शक्तिनगर है कि भक्तिनगर-
भक्तिभाव को सतत बढ़ाये रखने का यह था उनका सदुपदेश ।।

।। जय जय करुणा सिन्धु गुरु महाराज की ।।

।। स्मृति ३१ दिसम्बर १९६७ की-भक्त-मुकुटमणि महाराजश्री की ।।

३१ दिसम्बर को था प्रतिष्ठा दिवस भगवान् विश्वनाथ का,
शीत ऋतु, गंगा का किनारा।
अन्तरतम की प्रबल प्रेरणा से तैयार किया
मनमोहक मुरलीमनोहर का सुन्दर श्रृंगार सहित नव परिधान।
अगाध करुणावश महाराजश्री ने किया सब स्वीकार।
उस समय आश्रम में रहना हमारा हुआ सफल ।।
प्रथम बार नयी पोशाक पहना लेने के बाद
निज कर कमलों से धारण कराया श्रृंगार;
और स्वयं ही आरती उतारी भगवान् की।
विशिष्टता, विलक्षणता उन अविस्मरणीय क्षणों की थी यह कि
महाराजश्री आरती की मुद्रा में खड़े होते जिधर ही जिधर,
कृपाकटाक्ष होता मुरली मनोहर का उधर ही उधर ।।

।। बलिहारी बलिहारी-लीला विहारी की।

।। स्मृति झूलन तीज की-चिदानन्द 'गोपदेवी' स्वरूप की ।।

आश्रम में रानीकुटीर (गुरुप्रसादकुटीर) में वास था माता-पिता सहित सब बहनों का, हरियालीतीज का आया त्योहार
वहीं बाहर के वृक्ष की डाल पर पुष्प सज्जा सहित झूला किया तैयार
श्यामाश्यामस्वरूप प्रतिमा रूप में विराजित हुए सद्गुरुदेव झूले पर;
महाराजश्री हार्दिक प्रार्थना स्वीकार कर हमारी, पधारे योग साधना कुटीर से,
सीढ़ियाँ उतर कर मनमोहिनी मुस्कान सहित, अपने उत्तरीय से घूँघट निकाले हुए,
सबको आह्लादित करते मन्थर गति से पहुँचे झूले के पास।
आपने सम्हाला झूला एक तरफ से और दूसरी तरफ से
हम सबको बारी-बारी से पकड़ कर झुलाने का स्वर्णिम अवसर किया प्रदान ।
झूलन गीत गायन चलता रहा
अचानक आ कर पूछा एक स्वामी जी ने 'यह सब क्या
"आज क्या उत्सव है?' उत्तर मिला उन्हें-
'महाराजश्री गोपी बन कर आये हैं आज के झूलन उत्सव में उसी आनन्द में मग्न सब
सुनते ही महाराजश्री ने प्रकट किये उद्गार-
"गोपी बन कर नहीं जी। गोपी भाव में आये हैं हम तो।"
भजन कीर्तन की पूर्णाहुति पर भोग अर्पण कर आरती उतारी,
और दिया सबको कृपाकटाक्ष सहित प्रसाद निज करकमलों से,
एक-एक को सखी भाव से पुकारते हुए-'ले सखी' 'आ सखी' 'सखी प्रसाद ले' आनन्दपूर्वक

।। बलिहारी बलिहारी चिदानन्द चित्त चोर की।

।। स्मृति १९७१ में आनन्दमय आश्रम वास की-शिवानन्द-प्रतिरूप चिदानन्द की ।।

जननी रामप्यारी माता जी रुग्णावस्था में भर्ती थी, दिल्ली अस्पताल में
मई १९७१ आश्रम में हालत गम्भीर का समाचार प्राप्त कर महाराजश्री ने डा. कुट्टी माता जी की राय ली।
करुणावरुणालय ने औदार्यवश बुला लिया रोगी सहित 'श्रीधाम परिवार' को आश्रम में
सन् १९६८, ६९, ७० में विदेश में रहने के पश्चात दिसम्बर में लौटे थे महाराजश्री ।
आकुल व्याकुल थे प्राण हमारे दर्शन-सान्निध्य के लिए, आश्रमवास के लिए आतुर थे ही सब, पहुँच गये
श्रीचरणों में। वहाँ रहने की व्यवस्था, ऋषिकेश से डाक्टर दम्पति के आते रहने की व्यवस्था आपने ही की।
इलाज शुरू हो गया; यकायक पुनः रोगी की अवस्था चिन्ताजनक हो गयी;
सुन कर आये महाराजश्री हमारी गुरुप्रसाद कुटीर में, प्रार्थना-कीर्तन किया,

माता जी की आँखें खुलीं तो उन्हें आशीर्वादित किया।
"आप अच्छे हो जायेंगे जी। हमें चपाती बनाकर खिलायेंगे जी।"
आश्चर्य! महत् आश्चर्य। दिनों दिन होने लगा सुधार
शीघ्र ही कुछ दिनों में स्वस्थ हो कर महाराज के वास स्थान '
योग साधना कुटीर' के रसोईघर में अपने हाथ से चपाती बना कर
उन्हें खिला पाने का सुअवसर प्राप्त हुआ।
इन्हीं दिनों में महाराजश्री के जन्मोत्सव २४ सितम्बर को उनकी परम भक्ता
श्री सीताबाई माता जी, हम सब बहिनों, 'पंचकन्या' कभी 'शिवानन्द चेरी' कभी
'कन्याकुमारी' भी पुकारते थे, को
माताश्री सहित महाराजश्री की परम पुनीत पादपूजा-अर्चन का दुर्लभातिदुर्लभ परम सौभाग्य
प्राप्त हुआ।

।। जय जय भक्त प्रेमी-प्राण रक्षक की जय ।।

।। स्मृति संन्यास दीक्षा की-वांछा कल्पतरु गुरुमहाराज की ।।

सन् १९८० में पिता श्री चमनलाल शर्मा जी रहे हृदय रोग से पीड़ित,
दो-तीन बार अटैक हो चुका था। स्थिति की गम्भीरता देखते हुए
महाराजश्री को आशीर्वाद-प्रार्थना हेतु सम्पर्क करना चाहा परन्तु
ज्ञात हुआ कि वे दिल्ली में नहीं हैं। निराश हो, प्रार्थना जारी रही
आश्चर्य। दवराजे पर कोई आहट होने पर देखा तो स्तम्भित रह गये,
महाराजश्री गाड़ी से उतर रहे हैं; फिर पहुँचे अन्दर घर में,
सर्वसमर्थ सर्वान्तरयामी के दर्शन कर-सब हतप्रभ! अपार, अहेतुकी कृपा !
मंगलमय दर्शन करते ही पिताश्री बिस्तर पर ही उठ कर बैठ गये,
कुर्सी पर आसन ग्रहण कर महाराजश्री ने अपने दोनों चरण
पिताजी के सन्मुख रखे, उन्होंने हाथ जोड़, नतमस्तक हो
श्री चरणों का स्पर्श किया। महाराजश्री प्रार्थना कीर्तन में मग्न। ॥
अवसर पाते ही चिन्तातुर माता जी ने अपने सुहाग की रक्षा याचना सहित
महाराजश्री की कोमल कलाई में राखी बाँधी (अगले दिन रक्षाबन्धन पर्व था)
आशीर्वाद था उनका, माता जी के लिए-कनिमालाई मध
'आप इनको ले कर आश्रम आयेंगे जी।' और
पिताश्री को देख कर कहा-'You will Come to Ashram for good.
Dr. Shivananda will treat you.' माताश्री पिताश्री सहित आश्रम गये सब।
उनके वचनानुसार ही सब घटित हुआ। १९८१ के नवम्बर में अपने दो मास के
प्रवास से पूर्व माता श्री को अपने दर्शनों से अनुगृहीत किया।
'धर्म-अर्थ-काम-मोक्ष' कह कर चार फल दिये। और कुछ ही दिनों पश्चात् सुमंगली रूप
में
माता जी का दिल्ली में स्वर्गवास हुआ।
तदनन्तर आश्रमवास प्रारम्भ हुआ पिताश्री का। संन्यास दीक्षा अनन्तर योगपट्ट दिया- 'स्वामी
अर्पणानन्द !' और कहा - "आपने तो सर्वस्व अर्पण कर दिया जी।

अपने पूरे परिवार को श्री गुरुदेव-चरणों में लगा दिया।"

।। ११ जुलाई सन् १९८५ को सद्गुरुदेव महाराज के आराधना दिवस की पुण्यतिथि, रात्रि सत्संग समय

महासमाधिस्थ हुए स्वामी अर्पणानन्द जी। गुरु आश्रम, गुरुवार, गेरुआ वेष में गंगा तट पर गुरु प्रसाद कुटीर में ली अन्तिम श्वास गुरु-गोविन्द ध्यान में

महाराजश्री ने रात्रि में दो बार आ कर दर्शन दे अगरबत्ती से आरती की और हम सबको आश्वासित किया।
अगली प्रातः स्वयं उनकी दिव्य उपस्थिति में पुष्पों से
पालकी की सजावट हुई। कन्धे पर उठाते हुए
शोभायात्रा प्रारम्भ की। रास्ते भर पिता जी की पालकी की ओर श्रीमुख कर पुष्प चढ़ाते गंगातट पर पहुँच कर
निज करों से अभिषेक, पूजा, अर्चना आरती उतारी और
सबसे करवाया अभिषेक आदि।
जल विसर्जन की अन्तिम विदाई तक गंगाघाट पर उपस्थित रहे।
'गुरु कृपा ही केवलम्' - 'गुरु कृपा ही मंगलम्'
श्रीधाम-जीवन-सर्वस्व रूप में, सभी सदस्यों को बुला कर
निज वात्सल्य प्रेम से किया सिंचित। और अगले वर्ष की
पुण्यतिथि से पूर्व ही कुम्भ मेला के अवसर पर पूर्णिमा पर श्री हनुमान जयन्ती को
हरिद्वार गंगातट पर मेरी चार बहनों को काषाय वेष दे कर 'ज्ञान संन्यास' की कृपा बरसाई। सन् १९८७ के मकर संक्रान्ति-पुण्य पर्व पर, विरजा होम के पश्चात
महाराजश्री ने परम पूज्य श्री स्वामी कृष्णानन्द जी महाराज की सन्निधि में
चतुर्महावाक्यों का श्रवण कराया, नये योगपट्ट (संन्यास नाम) दिये।
विधिवत् हुई संन्यास दीक्षा सम्पूर्ण। अब करती हैं
'संन्यासिनी चतुष्टय' के रूप में आश्रम में स्थायी वास।

****

जीवन-आराध्य हम शीनक परिवार को, यदा कदा निवास स्थान दिल्ली में
अपने दिव्य दर्शनों से करते रहे अनुगृहीत।
शेषातिविशेष सौभाग्य पतिदेव रमेश शौनक जी का, जिन्हें विवाह से पूर्व
प्रथम भेंट में ही पहनायी महाराजश्री ने स्वर्णिम अंगूठी अपने करकमलों से।
दोनों बच्चों (यमुना) नीतू और (पवन) चीनू को मन्त्र दीक्षा एवं आध्यात्मिक
ज्ञान से लाभान्वित कर हम को किया कृतार्थ।...
शौनक परिवार को सन् २००७ में दीपावली के अगले दिन ही परम
सौभाग्य मिला दुर्लभ दर्शनों का शान्ति निवास देहरादून में
'प्रणत वत्सल' - 'जीवन अवलम्ब' ने पुनः हम अकिंचना
को अनुगृहीत किया मार्च २००८ में किया आध्यात्मिक
अन्तःशक्ति संचरण दिव्य जीवन-सफलता-हेतु।
भरपूर कृपा-वृष्टि! अनुपम अथाह प्रेम-प्यार वर्षण!
किसे मालूम था फिर आगे क्या होने वाला है।...

शरीर की अस्वस्थ क्लेशप्रद स्थिति में आप रहे,
सदा सर्वदा निज दिव्य स्वरूप में अलमस्त ।
किसी प्रकार की चिन्ता या बेचैनी का था नहीं कोई प्रश्न;
मानो दे रहे संकेत हम सबको - "यही है वास्तविक आन्तरिक अमिट प्रसन्नता।
है अडिग धैर्य भी यही, शाश्वत सत्य की आत्म दृष्टि से
है समाराधना भी यही ।।

हे स्थितप्रज्ञ! गुणातीता! अद्वैत वचन के प्यारे वक्ता !
हे गुरु निष्ठ! अनुभव सिद्ध स्वरूप! अवस्था त्रय से रहे अतीता !
आपकी ममतामयी उपस्थिति रहती हर हमेशा हमारे साथ ही
पहले भी रही और अब भी हमारे हितार्थ अकुलाती; उत्सुक रहती।
हे विनम्र-मूर्ति! कृपा-रस-मूर्ति! हे विश्व-विश्रुत शिवानन्द-हृदय रूप!
'प्रेम' सहित सब स्मरण करें; आजीवन दिव्य-पथ-अनुसरण करें।
जय हो सर्वदेवमय सद्गुरु शिवानन्द भगवान् की!
शिवानन्दमय चिदानन्द महाराज की ।।
जय जयकार है कल्पवृक्ष शिवानन्द आश्रम की ।।

श्री स्वामी चिदानन्द जी महाराज दिल्ली स्टेशन पर उपस्थित थे, वहाँ बहुत बड़ी संख्या में भक्त उनके दर्शन तथा आशीर्वाद के लिए एकत्रित हो गये। उमड़ती हुई भीड़ में उनकी दृष्टि एक वृद्ध महिला पर पड़ी जो अपने शिर पर भारी बोझ लिये तथा हाथ में एक सन्दूक पकड़े बड़ी कठिनाई से चल रही थी। स्वामी जी तुरन्त ही भक्तों को एक ओर कर उसके निकट तेजी से गये। उन्होंने उससे कोमल वाणी में कुछ कहा, उसके हाथ से भारी बोझ छीन लिया तथा उसे गन्तव्य स्थान तक ले जाने के लिए उसके साथ-साथ चलने लगे।

पूज्य स्वामी चिदानन्द और हम

- श्री एस. पी. जैन जी, दिल्ली-

समझ में नहीं आता कि कहाँ से शुरू करूँ और कैसे शुरू करूँ, क्योंकि हम सबके पास जो कुछ है और सबका जीवन है, सब उन्हीं की ही देन है। विस्तार में जाने से पहले में बताना चाहूँगा कि आश्रम से मेरा परिचय कैसे हुआ।

सन् १९५७ में जब मैं टाइम्स ऑफ इंडिया में चीफ मैकेनिक था, तब एक दिन मैनेजर ने मुझे अपने ऑफिस में बुलाया। वहाँ देखा कि मैनेजर के सामने एक संन्यासी बैठे हुए हैं। जब मैंने मैनेजर से पूछा कि मुझे किसलिए बुलाया है, तो उन्होंने बताया कि शिवानन्द आश्रम में लाइनो मशीन खराब हो गयी है जिसे कम्पनी के इंजीनियर भी ठीक नहीं कर पा रहे हैं। उसके लिए आपको स्वामी जी के साथ आश्रम जाना होगा। मैंने पूछा- "वहाँ जाना ऑफिशियल है या पर्सनल काम है?" बोले- "हम ऑफिशियली नहीं भेज सकते। आपको अपनी छुट्टी ले कर जाना है।" तब

मेरा उत्तर था कि, "फिर तो स्वामी जी को मुझे सौ रुपये रोज के हिसाब से और आना-जाना, रहना-सबका खर्च देना होगा।" मैनेजर हालाँकि क्रिश्चियन था, फिर भी क्रोध में आ गया और बोला कि तुम एक धार्मिक संस्थान से पैसे माँगते हो? मेरा उत्तर था- "जिस धार्मिक संस्था के पास दुनियादारी की मशीनें हैं और जिसके लिए उन्होंने पैसे दिये हैं, उनसे अपनी मेहनत का पैसा लेना मैं बुरा नहीं समझता।" मैनेजर के सामने जो संन्यासी बैठे थे, वो स्वामी दयानन्द जी थे। मैनेजर के कुछ भी बोलने से पहले वो बोल पड़े कि हमें मंजूर है। यहाँ यह बताना अनुचित नहीं होगा कि मैं पक्का नास्तिक था। खैर, मैं आश्रम आया। तीन दिन लगातार काम करने के बाद मशीन बिलकुल ठीक हो गयी। जाने का समय आया, मैंने पैसों की और फर्स्ट क्लास टिकट की माँग की। तब स्वामी वेंकटेशानन्द मौजूद थे। उन्होंने कहा- "इतनी दूर आये हैं, क्या गुरुदेव के दर्शन भी नहीं करेंगे?"

"क्या करूँगा गुरुदेव के दर्शन करके" मैंने कहा। लेकिन वो मेरे कन्धे पर हाथ रख करके स्वामी दयानन्द जी के साथ गुरुदेव के दर्शन करने के लिए नीचे ले गये। मैं कितना मूर्ख और घमण्डी था कि गुरुदेव के सामने झुका भी नहीं। खड़े-खड़े नमस्ते की। गुरुदेव स्वामी शिवानन्द लगातार कम-से-कम दो या तीन मिनट मेरी आँखों में देखते रहे और बोले- अब तो आपका यहाँ आना-जाना लगा ही रहेगा।" और आशीर्वाद, किताबें और फल दे कर बोले-"आप थोड़ी देर प्रेस में इन्तजार कीजिए, आपके पैसे, टिकट वगैरह सब वहीं भिजवा दूँगा।" प्रेस में आने के थोड़ी देर बाद ही स्वामी वेंकटेशानन्द और स्वामी दयानन्द ने मेरी फीस और टिकट मेरे हाथ में दिये और दोनों ने मेरे पैर छू लिये और बोले कि आपका बहुत-बहुत धन्यवाद कि आपने एक धार्मिक संस्थान की मदद की। खैर, विस्तार में न जा करके मुझे कहना होगा कि इसके बाद मैं लगातार बदलता चला गया। पहले फीस लेनी बन्द की, फिर खर्चा लेना भी बन्द कर दिया। उसके बाद मेरा जो भी सामर्थ्य था, वह मैं डोनेशन देने लग गया। नास्तिक से पक्का आस्तिक बन गया, जैन के साथ-साथ वैष्णव भी बन गया। उसके बाद भी मेरा हर साल दो-तीन बार आना-जाना लगा रहा और अब मेरा सौभाग्य है कि २००५ से मुझे आश्रम में परमानेंट सेवा करने का अवसर मिला।

अब मैं शुरू करता हूँ परम पूज्य स्वामी चिदानन्द जी के सम्पर्क में मुझे क्या-क्या नहीं मिला? इससे पहले एक छोटी-सी घटना है कि जब भी मैं बच्चों को किसी जगह ले जाना चाहता था, उससे पहले एक बार खुद वहाँ चक्कर लगा आता था जिससे ठगी से बच सकूँ। इसी सिलसिले में वृन्दावन-मथुरा दर्शन के लिए मैं गया। साथ में सोलह साल के एक युवक को गाइड के रूप में लिया। वह सब जगह दर्शन कराते-कराते बीच में बार-बार दोहराता था कि यहाँ कुछ नहीं, सिर्फ चमत्कार को नमस्कार है, किसी ने चिड़िया निकाल कर उड़ा दी, किसी ने और कुछ जादू की तरह दिखा दिया, तो महाराज की जय-जय हो गयी, जनता पीछे पड़ गयी और पैसे बरसने लगे। लेकिन जो वास्तव में संन्यासी हैं, वह चमत्कार दिखाते नहीं। उनके सान्निध्य से चमत्कार अपने-आप होते रहते हैं जैसे कि मेरा पूरा जीवन पूज्य स्वामी चिदानन्द जी महाराज के आशीर्वाद से मिले चमत्कारों से भरा हुआ है। उनमें से कुछ के बारे में बताना चाहूँगा।

सन् १९६४ में मेरी पत्नी बहुत बीमार हुई। कोई इलाज काम नहीं कर रहा था और उनकी मानसिक स्थिति भी ठीक नहीं थी। अन्त में मैंने आश्रम में स्वामी जी से प्रार्थना की। उन्होंने कहा कि अपनी पत्नी को ले कर आइए। पत्नी को ले कर आने के बाद स्वामी जी का सन्देश आया कि सुबह ५ बजे तैयार रहिए, हम बुलवायेंगे। रात को किसी ने बताया कि स्वामी जी को बुखार हो गया है। बड़ी दुविधा में पड़ा कि सुबह बुलायेंगे भी या नहीं। फिर भी हम तैयार हो गये और पाँच

बजे के करीब मैं कमरे के बाहर घूमने लगा। इतने में देखा कि स्वामी जी गंगा-स्नान करके एक हाथ में गंगा-जल का लोटा और दूसरे हाथ में लाठी के सहारे धीरे-धीरे चल कर अपने निवास की तरफ जा रहे हैं। उस वक्त स्वामी जी का निवास योग साधना कुटीर में था। पाँच मिनट बाद बुलावा आया। स्वामी जी आसन पर विराजमान थे। सामने के आसन पर मेरी पत्नी को बैठने को कहा और मन्त्र उच्चारण करने शुरू किये। साथ में हर मन्त्र के बाद गंगा-जल का छींटा देते रहे। ये प्रक्रिया आधा घण्टा चलती रही। इस बीच में मेरी पत्नी को जैसे ऐसा लगा कि वह अपने होश में नहीं है। आधे घण्टे के बाद उन्होंने एक छोटे गिलास में गंगा-जल पीने को दिया। गंगा-जल पीते ही वह चौंक गयीं और बिलकुल जाग्रत अवस्था में आ गयीं। आनन्द यह रहा कि मानसिक रूप से और शारीरिक रूप से बिलकुल स्वस्थ हो कर उनके चरणों में गिर गयीं। तब से आज तक मानसिक रूप से कोई परेशानी नहीं रही। हुआ न चमत्कार!

सन् १९६६, अक्तूबर का महीना। स्वामी जी का बुलावा आया। मैं भागा-भागा योग साधना कुटीर में गया। स्वामी जी पूर्व की तरफ जिधर गंगा जी हैं, मुँह करके विराजमान थे। बराबर में एक आसन और लगा हुआ था। दायीं तरफ गुरुदेव की बहुत बड़ी छवि आसन पर विराजमान थी और बायीं तरफ आठ-दश श्रद्धालु बैठे हुए थे। स्वामी जी मुझे देखते ही बोले-"आप हमारे पास आ कर बैठिए।" चरण स्पर्श करने के बाद मैं उनके बराबर वाले आसन पर बैठ गया। स्वामी जी ने कहा कि जैन साहब आज हम आपको अपने हाथ से बना कर चाय पिलायेंगे। अन्दर से कोई साधक टी-सैट और दो कप ले कर आया। स्वामी जी ने दो कप चाय बनायी और बोले- "कितनी चीनी डालें?" मेरे यह कहने पर कि 'सिर्फ आधा चम्मच' मुस्करा कर बोले-"जैन साहब, हम तो अपने कप में ढाई चम्मच डालते हैं।" उसके बाद उन्होंने चीनी मिला कर कप हमारे हाथ में दिया और कहा- "पहले चाय पी लीजिए, फिर बात करेंगे।" तत्पश्चात् हाल-चाल पूछने के बाद बोले- "कितने बच्चे है?" मैंने कहा- "चार।" "लड़के हैं या लड़कियाँ?" मैंने कहा- "सब लड़कियाँ।" बोले-"सब ऊपर वाले का करिश्मा है।" इसके बाद उन्होंने बात बदल दी। लेकिन जो और दर्शनार्थी बैठे हुए थे, उनमें से दो-तीन एक-साथ बोले- "स्वामी जी! आपने बात घुमा दी और लड़के के लिए आशीर्वाद नहीं दिया?" स्वामी जी ने आँखें बन्द कर लीं और कहा- "हम कौन होते हैं ऐसा आशीर्वाद देने बाले!" फिर उच्च स्वर में बोले कि अगर इन्हें गुरुदेव में विश्वास है तो गुरुदेव कृपा करेंगे; लेकिन एक बात का ख्याल रखें कि चाहे लड़का हो या लड़की-नाम गुरुदेव पर रखें। फिर बात बदल दी। आधे घण्टे इस तरह से सत्संग करते रहे कि हमारे दिमाग से आशीर्वाद की बात बिलकुल निकल गयी। बापिस दिल्ली लौटने के बाद टाइम्स ऑफ इण्डिया में हमारे लिए उचित और उच्च पद न होने के कारण और हमारे मैनेजमेंट का कहीं और सर्विस के लिए नो-आब्जैक्शन सार्टिफिकेट न देने के कारण हमने रिजाइन कर दिया इस विचार के साथ कि अब सर्विस करनी ही नहीं है, अपना ही काम करना है। इस सिलसिले में मैंने प्रोग्राम बनाया कि हर अखबार के आफिस को सारे भारत में विजिट किया जाये और उनकी जरूरतों को समझा जाये वो भी इसलिए कि हमारा नाम सारे भारतीय अखबारों में मशहूर था, क्योंकि हम पहले से ही सारे भारत में प्राइवेट काम पर जाते रहे थे। जब मैं कलकत्ता में था तो घर से पत्नी का टेलीफोन आया कि वो गर्भवती है। हमारा जवाब था -"पहले तो हम नहीं जानते कि ऐसा कैसे हो गया और अगर अब हो गया है तो अपने डाक्टर से मिल करके जो कुछ करना हो, करवा लें। हमें तंग मत कीजिए।" बीस दिन के बाद भारत घूम कर जब मैं दिल्ली पहुँचा तो पत्नी बोली- "डाक्टर ने मना कर दिया है।" खैर, हम काम जमाने में जूझते रहे और एक दिन सुबह साढ़े पाँच बजे पुत्र-जन्म हुआ। सात बजे हमारे पड़ोसी अखबार ले कर दौड़े-दौड़े आये और बोले कि

आज आठ सितम्बर स्वामी शिवानन्द जी का जन्म दिन है। ओ हो! तब हमें याद आया स्वामी जी का आशीर्वाद और हमने बालक का नाम आशीर्वाद अनुसार शिवानन्द रख दिया। है न चमत्कार!

१९८३ में हमारी बड़ी बेटी विनीता बहुत सख्त बीमार हुई और कोई दवाई उसकी उलटियाँ बन्द नहीं कर पायी। हमने दिल्ली का कोई अस्पताल नहीं छोड़ा। सबका कहना था कि या तो गर्भ के बालक को साफ करा दीजिए, नहीं तो ये बचेगी नहीं। विनीता बिस्तर से लग गयी, बैठना और चलना भी नामुमकिन हो गया। पता चला कि उन दिनों स्वामी जी महाराज पंचशील में आये हुए हैं। मेरे प्रार्थना करने के बाद उन्होंने आज्ञा दी कि कल सुबह बेटी को ले करके पंचशील आ जाइए। जब हम पहुँचे, स्वामी जी अपनी पूजा में थे। पूजा के फौरन बाद हमें बुलाया। बेटी को अपने सामने बैठने को कहा। बेटी बोली- "मैं बैठ नहीं सकती।" "जरूर बैठ सकोगी" स्वामी जी ने कहा। और वह बैठ भी गयी। स्वामी जी ने गंगा-जल का एक लोटा, जिसमें तुलसी-पत्र पड़े हुए थे, हाथों में ले कर आँखें बन्द कर मन्त्र उच्चारण शुरू किया। दश मिनट के बाद आँखें खोलीं। एक गिलास मैगाया। उसमें जल भरा, तुलसी-पत्र डाला और बेटी को आज्ञा दी कि तुलसी-पत्र के साथ सारा जल पी जाइए। वह डर गयी, sin hat t =in hat t =an hat t , मैं अगर एक चम्मच भी जल पी लूँ, उसकी उलटी हो जाती है और अगर इसे पीयूँगी, तो यहाँ सब गन्दा हो जायेगा।" स्वामी जी बोले-"कोई बात नहीं।" स्वामी जी ने उच्च स्वर में आज्ञा दी "फौरन पी जाओ।" एक गिलास पूरा पी लिया। उसके बाद लोटे का बाकी पानी गिलास में डाला और वह भी पिला दिया। और कुछ नहीं हुआ। बच्ची की उलटियाँ सदा के लिए बन्द हो गीं। है न चमत्कार!

१९९४ में मेरा गाल ब्लैडर का आपरेशन हुआ। उसमें एनेथेस्टिक डाक्टर की वजह से मैं कौमे में चला गया। मुझे हार्ट और लंग मशीन लगा कर आई सी यू में डाल दिया गया। दो दिन बाद जब आश्रम में स्वामी जी महाराज को पता चला, तो शाम के सत्संग में छह दिन तक मेरे स्वास्थ्य के लिए सामूहिक प्रार्थना की गयी। उसके बाद स्वामी जी ने स्वामी दयानन्द जी महाराज और स्वामी विमलानन्द जी महाराज दोनों को विभूति और चन्दन दे कर दिल्ली भेजा और जैसे ही दोनों स्वामियों ने आई सी यू में मेरे ऊपर विभूति छिड़की और माथे पर चन्दन लगाया। मुझे होश आ गया। हालाँकि डाक्टरों ने उम्मीद छोड़ दी थी। है न चमत्कार!

१९९८ में मेरी चारों आर्टरियों के बाईपास के लिए मुझे अपोलो में भरती किया गया। स्वामी जी लन्दन में थे। मेरी पत्नी ने स्वामी जी को लन्दन में टेलीफोन किया। स्वामी जी का उत्तर था- "माता जी, बिलकुल चिन्ता नहीं करना। जैन साहब आपरेशन के बाद ऐसे बाहर आ जायेंगे जैसे मक्खन में से बाल और हम भी जल्दी ही दिल्ली लौटेंगे।" हालाँकि आपरेशन में साढ़े आठ घण्टे लगे, लेकिन आपरेशन कामयाब रहा और जिस दिन मुझे आई सी यू से रूम में ट्रान्सफर किया, उससे पहली रात स्वामी जी दिल्ली लौटे और सुबह श्री सन्दीप गोस्वामी जी के साथ हास्पिटल में आ कर मुझे आशीर्वाद दिया। क्या यह चमत्कार नहीं!

२००४ में सुप्रीम कोर्ट के आर्डर से दिल्ली में किसी भी तरह की फैक्ट्री कामर्शियल जगह में चलाने की मनाही हो गयी। अतः मुझे अपना आफसेट प्रेस और फैक्ट्री दोनों बन्द करनी पड़ गयी। उन दिनों आश्रम के प्रेस के मामले को ले कर स्वामी जी से पत्राचार और फोन पर बातें होती रहती थीं। जब मेरी कमाई का साधन प्रेस और फैक्ट्री बन्द हो गयी, तो विचार आया कि क्यों न एक मकान खरीद लिया जाय जिसके किराये से आगे जीवन यापन होता रहे। उन्हीं दिनों हमारे घर के पास चार बेडरूम का मकान बिक्री के लिए उपलब्ध हुआ, जिसकी कीमत बहुत-

बहुत ज्यादा माँगी गयी। हमारे पास सिर्फ पाँच लाख कैश था, वह दे कर छह महीने का समय ले के बुक कर दिया। पता नहीं किस शक्ति ने ऐसा करने दिया। अगले दिन आफिस में स्वामी जी का टेलीफोन आया। बातचीत के आखिर में मैंने स्वामी जी को बताया कि मकान का एडवान्स दे दिया है। स्वामी जी ने एकदम कहा - "बाकी पैसा कहाँ से आयेगा?" मैंने एकदम कहा- "स्वामी जी, आयेगा कहाँ से, वह तो आप देंगे।" वह बोले-"क्या मतलब?" मेरा उत्तर था आपका आशीर्वाद मिल गया, तो पैसा अपने-आप आ जायेगा।" स्वामी जी महाराज ने दश मिनट तक टेलीफोन पर ही मन्त्रोच्चारण करने के पश्चात् आशीर्वाद दिया। नतीजा, मुझे नहीं मालूम कि बाकी पैसा कैसे और कहाँ से इकट्ठा हो गया, बिना उधार लिये। अब उसी मकान की कमाई से बहुत अच्छा गुजारा चलने के साथ बचत भी हो जाती है, क्योंकि दिल्ली यूनिवर्सिटी के सामने होने से हमने उसे स्टूडेंट होस्टल बना दिया है।

कहने को तो चमत्कार पर चमत्कार अपने-आप होते चले गये जिनकी कोई संख्या नहीं है। अगर सबके बारे में लिखूँ तो पूरी पुस्तक बन जाय। इसके अलावा मेरी नवी फैक्ट्री का १९७४ में उद्घाटन, १९७८ को आफसेट प्रेस का उद्घाटन और १९८९ में गृह प्रवेश सब स्वामी जी की कृपा से उन्हीं के हाथों से हुआ और उन्हीं की कृपा से २००५ से मुझे आश्रम के प्रेस और पब्लिकेशन में सेवा करने का अवसर प्राप्त हुआ जिससे कि मैं अपने तजुर्बे से हर चीज को मार्डन सिस्टम में डाल सकूँ।

मेरा मेरे गुरु पूज्य श्री स्वामी चिदानन्द जी महाराज को शत-शत प्रणाम, जिनकी वजह से मेरा जीवन सुधर गया और बुढ़ापे में कमाई का भी परमानेंट साधन बन गया।

ॐ

जहाँ भी आप स्वयं को एक जीवन के रूप में, जीवन जीने के रूप में अभिव्यक्त कर रहे हैं, उन समस्त स्तरों पर स्वयं से पूछें-"क्या मैं अपना जीवन शारीरिक, मानसिक, सांस्कृतिक, नैतिक और आध्यात्मिक स्तर पर इस ढंग से जी रहा हूँ जो कपोल-कल्पनाओं से, अवास्तविकताओं से वास्तविक दिव्यता के सत्य की ओर ले जाये? इन समस्त स्तरों पर क्या मैं असत्य से सत्य की ओर, अन्धकार से प्रकाश की ओर, जन्म-मरण से अमरत्व की ओर का जीवन जी रहा हूँ? उस ओर चिन्तन कर रहा हूँ, कार्यरत हूँ और आगे बढ़ रहा हूँ? अपने पूर्ण रूप में, समग्रता से और पवित्रतापूर्वक जीवन जीते हुए क्या मैं इस महान् गतिशीलता को बनाये रख रहा हूँ?" यह 'कसौटी' है।

स्वयं से प्रश्न करते रहें। जैसा भी इस प्रश्न का आपका उत्तर होगा, उसी प्रकार की गुणवत्ता आपके जीवन की होगी और वैसा ही आपके जीवन का परिणाम होगा।

-स्वामी चिदानन्द

सतत स्मरणीय एक शिक्षाप्रद प्रसंग

- ब्रह्मचारी श्री पानु जी महाराज -

वर्ष १९६६ की जनवरी का महीना था। पूज्य श्री श्री आनन्दमयी माँ की जन्म शताब्दी के समारोह का समय चल रहा था। मेरी गहन प्रार्थना पर परम पूज्य श्री स्वामी चिदानन्द जी महाराज अत्यन्त कृपापूर्वक श्री माँ के विभिन्न आश्रमों में होने वाले कार्यक्रमों की श्रृंखला में भाग लेने के लिए उन सभी स्थानों पर पधारने के लिए सहर्ष मान गये। उनकी यह अति पावन उपस्थिति समस्त कार्यक्रमों की शोभा को बढ़ाने वाली थी। वास्तव में यह एक अत्यन्त भव्य यात्रा-क्रम था, जिसे पूज्य श्री स्वामी जी ने अत्यन्त सूक्ष्मता से स्वयं ही निर्धारित किया था।

इस प्रकार पूज्य श्री स्वामी जी अपने दो-तीन भक्त सेवकों तथा मेरे सहित वाराणसी, विन्ध्याचल, नैमिषारण्य, लखनऊ, कनखल (हरिद्वार), बेरागढ़ (भोपाल), कोलकाता, अगरतला (त्रिपुरा) और यहाँ तक कि डाका और श्री माँ की जन्मस्थली बांगलादेश में खेओरा भी गये।

कसबा के मन्दिर का श्री माँ के जीवन से अत्यन्त गहन सम्बन्ध रहा है और उनका चित्र अब स्थायी रूप से वहाँ बेदी पर रख लिया गया है जिसकी नित्य पूजाएँ होती हैं। इस पावन मन्दिर के दर्शन के समय पूज्य स्वामी जी वहाँ के वातावरण से अत्यन्त प्रभावित प्रतीत हो रहे थे। उन्होंने

भगवान् के विग्रह के समक्ष साष्टांग दण्डवत् प्रणाम किया और दिव्य भाव से पूर्ण भजन गाने लगे। पुजारी से आज्ञा ले कर वे मन्दिर के गर्भगृह में प्रबिह हुए, प्रभु-विग्रह के पाद स्पर्श किये और भावसमाधि की अवस्था में मौन धारण किये बाहर आ गये।

कुछ ऊँचाई पर स्थित इस मन्दिर से नीचे लौटते समय पूज्य स्वामी जी अत्यन्त धीरे-धीर 'कमला सागर' नामक प्रसिद्ध विशाल झील-जो कि बांगलादेश की सीमा पर है की ओर चलने लगे। तभी अचानक एक विशालकाय कुत्ता कहीं से आ गया और स्वामी जी के एकदम कदमों के आगे आ कर मानो उनका रास्ता ही रोक कर खड़ा हो गया। हम में से ही एक कुत्ते को भगाने के प्रयास में एकदम से लगभग ठोकर मारने जैसा हुआ। स्वामी जी एकदम व्यग्रता से बोल 33,^ -1 7 - 7 ^ 11 > तत्काल कुठे को संकेत से अपनी ओर बुलाया, उसे प्रणाम किया, उसकी पीठ थपभपाई और कुछ मिठाई भी खाने को दी। स्वामी जी मेरी ओर घूमे और कहा, "सबमें भगवान्!"

मैं स्तब्ध रह गया। यह थे पूज्य स्वामी जी, जीव मात्र के प्रेमी! हम सबके लिए यह एक शिक्षा, एक उपदेश था। एक अविस्मरणीय प्रसंग जो सदैव मेरे मन में इसी प्रकार जीवन्त रूप से स्मरण रहेगा, सतत स्मरणीय!

माँ आनन्दमयी आश्रम, वाराणसी

'परोपकाराय सतां विभूतयः'

परम पूज्य स्वामी श्री चिदानन्द जी महाराज

-ब्रह्मचारिणी गीता बनर्जी, वाराणसी-

पिबन्ति नद्यः स्वयमेव नाम्भः
स्वयं न खादन्ति फलानि वृक्षाः।
धाराधरो वर्षति नात्महेतोः
परोपकाराय सतां विभूतयः ।।

जिस प्रकार नदियाँ स्वयं अपना जल पान नहीं करती, वृक्ष स्वयं अपना फल नहीं खाते तथा जलधर अपने लिए नहीं बरसता, उसी प्रकार महापुरुषों का जीवन एवं उनकी सारी विभूतियाँ दूसरों के उपकार के लिए ही होती है। सन्त 'बहुजनसुखाय', 'बहुजनहिताय' ही जीवन धारण करते है।

ऐसे ही वर्तमान युग के महान् पुरुष थे दिव्य जीवन संघ के परमाध्यक्ष त्यागमूर्ति, तपोमूर्ति, सन्तशिरोमणि स्वामी श्री चिदानन्द सरस्वती जी महाराज। आपके जीवन का प्रत्येक क्षण तथा सम्पूर्ण क्रियाएँ प्राणिमात्र के कल्याण के लिए ही पूर्ण रूप से समर्पित थीं।

स्वामी चिदानन्द जी का जन्म २४ सितम्बर, सन् १९१६ को दाक्षिणात्य में 'मंगलोर' नामक शहर में 'मनोहर विलास' नामक भवन में मातामह के पास हुआ था।

संस्कृत साहित्य में कहा गया है-

कुलं पवित्रं जननी कृतार्था
बसुन्धरा पुण्यवती च तेन।
अपारसम्वित् सुखसागरे ऽस्मिन्
लीनं परे ब्रह्मणि वस्य चेतः ।।

अर्थात् जिनका चित्त परमानन्दज्ञान के सुखसागर में परब्रह्म में लीन है, उनके द्वारा ही अपना वंश पवित्र तथा धन्य होता है, उनकी जननी कृतकृत्य हो जाती है। उनसे धरती माता भी पुण्यवती होती है। ऐसे ही चरित्र से सम्पन्न थे स्वामी विदानन्द जी महाराज।

आपके सदृश महान् आत्मा का स्तवन करते हुए ही गोस्वामी तुलसीदास जी ने लिखा है-

मुद मंगलमय संत समाज।
जो जग जंगम तीरथ राजू ।।

मानस बालकाण्ड दो, १ चौ.४

सन्तों का समाज आनन्द और कल्याणमय है, जो जगत् में चलता-फिरता तीर्थराज प्रयाग है। पूज्य महाराजश्री के जीवनरूपी प्रयागराज में प्रवाहित होती हुई ज्ञान-भक्ति-कर्म-सरिता की त्रिधारा में अवगाहन कर हम यथार्थ में धन्य होते हैं।

स्वामी चिदानन्द जी का जीवन ही एक महान् आध्यात्मिक ग्रन्थ है। आपके प्रत्येक सद्गुण ही उस विराट् ग्रन्थ के अमूल्य अध्याय है और आपके दैनन्दिन महत्कार्य, अद्भुत चमत्कार पूर्ण घटनावली ही उस दिव्य ग्रन्थ का एक-एक पृष्ठ है। पूज्य महाराजश्री के जीवन रूपी इस अपूर्व ग्रन्थ के यथाशक्ति अनुशीलन से ही मानव सुगमता से दिल्य जीवन की उपलब्धि कर धन्य हो सकता है।

परम पूज्य महाराजश्री के उस महान् जीवनवेद के पृष्ठों को पलटने पर हम देखते है उसमें स्वर्णाक्षरों में लिखा है-

साधना और साधक

श्री श्री आनन्दमयी माँ ने साधना शब्द का अर्थ करते हुए कहा है-"स्वधन लाभ की चेष्टा ही साधना है। उनका ही सब, उनके ही चरणों में पड़े रहने को छोड़ और कोई उपाय नहीं है। चिन्ता करनी है तो उनकी ही चिन्ता करनी चाहिए।"

साधक को गुरु और ईश्वर के प्रति पूर्ण शरणागति, अटूट श्रद्धा और अपरिमेय विश्वास की आवश्यकता है। साधक को सभी बाधा-विपत्तियों का धीरता के साथ सामना करते हुए अपनी साधना के पथ पर निरन्तर अग्रसर होते रहना चाहिए, जीवनपर्यन्त अभ्यास करते रहना चाहिए। तभी साधक को सफलता मिलती है।

स्वामी चिदानन्द जी महाराजश्री का जीवन एक सच्चे साधक का ज्वलन्त निदर्शन था। **आप स्वयं सिद्ध पुरुष होते हुए भी जनशिक्षा के लिए साधक का जीवन व्यतीत करते थे।** आप नियमों का कभी उल्लंघन नहीं करते थे, दूसरों से भी दृढ़ता से नियम पालन कराने के कठोर पक्षपाती थे। उन्हें श्री रामकृष्ण परमहंस के वेदान्तवादी गुरुदेव श्री तोतापुरी जी का कथन सदा स्मरण रहता था कि पीतल के पात्र को चमकाने के लिए उसे प्रतिदिन रगड़ना आवश्यक है।

पूज्य महाराजश्री के गुरुदेव श्रद्धेय स्वामी श्री शिवानन्द जी भी कहते थे, **"शरीर गधे की तरह है और मन अन्त समय तक कपिसदृश चंचल। अतः इसके लिए आध्यात्मिक चाबुक और तितिक्षा, तपस्या आदि की छड़ी सदैव तैयार रखनी चाहिए।"**

पूज्य महाराजश्री के जीवन में गुरुदेव की आज्ञा का अक्षरशः पालन होते देखा जाता था। आप भी कहते थे," यदि आप जीवन्मुक्त हैं तो भी आपको सावधान रहना है।"

पूज्य महाराजश्री के विषय में उनके गुरुदेव ने कहा था, "स्वामी चिदानन्द जी अपने पूर्व-जन्म में ही एक योगी थे। यह उनका अन्तिम जन्म है। ये जीवन्मुक्त हैं।"

आप जीवन्मुक्ति की उस उच्चावस्था में अवस्थान करते हुए भी अपने को एक साधक तथा गुरुदेव का तुच्छ सेवक मानते थे।

मनस्येकं वचस्येकं कर्मण्येकं महात्मनाम्

संस्कृत में यह नीतिश्लोक अति प्रसिद्ध है-

मनस्येकं वचस्येकं कर्मण्येकं महात्मनाम्।
मनस्यन्यद् वचस्यन्यत्कर्मण्यन्यद् दुरात्मनाम् ।।

दुर्जन मन में कुछ सोचते हैं एवं वाणी से और कुछ दूसरा ही बखानते हैं और करते कुछ और ही हैं। अर्थात् उनकी करनी और कथनी में भिन्नता होती है। परन्तु सज्जनों के मन, वाणी और कर्म में एकता होती है। यहाँ विशेषता परम पूज्य चिदानन्द जी में देखी जाती थी। मधुर मधुर भाषणों के द्वारा लोगों को एकत्रित किया जा सकता है। किन्तु लोगों को प्रेरित तथा प्रभावित करने के लिए भाषण नहीं, आचरण की आवश्यकता होती है।

स्वामी चिदानन्द जी महाराज जो भी कुछ कहते थे, उसे पहले अपने जीवन में उतारते थे। एक सज्जन ने आपके विषय में ठीक की कहा था, "**यह यति अपनी मान्यताओं का प्रचार करने के बजाय उन्हें अपने जीवन में उतारना अधिक पसन्द करता है।**" तभी आपकी वाणी में इतनी ओजस्विता थी। आपकी वाणी हृदय के अन्तःस्थल को स्पर्श करती थी। आपके अनुभवसिद्ध ओजस्वी उपदेशों से लोगों के जीवन में क्रान्तिकारी परिवर्तन आता था और दिव्य जीवन की प्राप्ति सहजता से होती थी।

आप सदाचार का पालन, नैतिकता के आचरण पर अत्यधिक जोर देते थे। एक बार आपने भाषण में कहा था- "मेरे अनन्य मित्रो! आध्यात्मिक तुला द्वारा मानव के क्रिया-कलापों की तौल, न केवल की गयी प्रार्थना या उच्चारित मन्त्रों से ही अथवा न केवल जलायी गयी मोमबत्तियों, उतारी गयी आरतियों, बजायी गयी घण्टियों और शास्त्रों के पारायण से ही होती है अपितु मुझे आपको यह स्पष्ट बतलाना है कि आध्यात्मिक तुलाएँ मनुष्य का तौल करती हैं, उसके हृदय में पालित भावनाओं की गुणवत्ता से, उन शब्दों से जो कि आप बोलते हैं और जैसा आप अपने पड़ोसियों को सम्बोधित करते हैं और आपके व्यवहार के प्रत्येक उस सामान्य क्रिया-कलाप से जो प्रभु द्वारा प्रदत्त जीवन में दूसरों के प्रति व्यवहार में आप अपनाते हैं।"

साधनामय साधक के जीवन में अथवा उस परम करुणामय प्रभु के साथ जिन्होंने अपना सम्बन्ध जोड़ लिया है, उनके चलने में, बोलने में, दूसरों के साथ व्यवहार करने में, जीवन की प्रत्येक क्रिया में एक अपूर्व नैसर्गिक सौन्दर्य की छटा प्रस्फुटित होती है, जो दूसरों को स्वभावतः आकर्षित करती है। तभी तो कहा गया है-

धर्मे तत्परता मुखे मधुरता दाने समुत्साहिता
मित्रेऽवंचकता गुरौ विनयिता चित्ते ऽतिगम्भीरता ।

आचारे शुचिता गुणे रसिकता शाखेऽति विज्ञानिता
रूपे सुन्दरता हरी भजनिता सत्स्वेव संदृश्यते ।।

धर्म में तत्परता, वाणी में मधुरता, दान में उत्साह, मित्रों से निष्कपटता, गुरुजनों के प्रति नम्रता, चित्त में गम्भीरता, आचार में पवित्रता, गुण ग्रहण में रसिकता, शाख में विद्वत्ता, रूप में सुन्दरता और हरिस्मरण में लगन-ये सब गुण सत्पुरुषों में ही देखे जाते हैं।

उपर्युक्त सभी गुण पूज्य चिदानन्द जी में उपलब्ध थे।

तपस्या

"जीवन सन्त-स्वामी चिदानन्द" नामक महाराजश्री के वरिष ग्रन्थ के प्रणेता श्री अखिल विनय जी अपनी पुस्तक में लिखते हैं-"कर तपस्या का दूसरा नाम 'स्वामी चिदानन्द' था। अप्रैल १९६२ से मई १९६३ तक वे अज्ञातवास में रहे, ज्वार, बाजरा उनका भिक्षा-आहार था। अनिकेत की स्थिति रही। नामदेव, तुकाराम, एकनाथ और ज्ञानेश्वर जैसे सन्तों की साधना का वे अनुसरण करते रहे। तुकाराम के अभंगों की धुन में मस्त रहते। कोलापुर के पास गाणगापुर में गये।" **श्री चिदानन्द जी का जीवन ही तपस्यामात्र था। वे तपस्या के मूर्त विग्रह थे।**

त्यागेनैके अमृतत्वमानशुः

'न कर्मणा न प्रजया धनेन
त्यागेनैके अमृतत्वमानशुः ।'
कैवल्योपनिषद् श्लोक नं. ३ महानारायण उपनिषद् ।। १२/१४

कर्म के द्वारा नहीं, सन्तानोत्पत्ति से भी नहीं तथा धन से भी नहीं, केवल त्याग के द्वारा ही प्राचीन काल के ऋषियों ने अमृतत्व की प्राप्ति की।

कैवल्योपनिषद् का यह मन्त्र पूज्य महाराजश्री के जीवन में साकार हो उता था। आप वधार्थ में औपनिषद् पुरुष थे। आप त्याग के प्रतीक थे। आप पुटनों तक वस्त्र पहनते थे। शरीर पर कभी उत्तरीय के रूप में चादर ग्रहण करते वे कभी वह भी नहीं। एक दिन आपके गुरुदेव ने आपसे मजाक में कहा था, **"ओ जी! अब आप दिव्य जीवन संघ के महासचिव हैं। आप सुन्दर लम्बे वख क्यों नहीं धारण करते?"** उनका विनीत उत्तर था, "इन छोटे गमछों से पहाड़ी पर चढ़ने-उत्तरने में सुविधा रहती है।"

आप सादा आहार करते थे। सादगीपूर्ण जीवन यापन करने के पक्षपाती थे। महात्मा गान्धी के साथ आपके कुछ गुणों में समता देखी जाती थी। आपके साथ पैदल चलते हुए एक संन्यासिनी ने कहा था, "इनकी चाल तो गान्धी जैसी है।"

अमानी मानदः

श्री चैतन्य महाप्रभु का एक अति प्रसिद्ध श्लोक है-

तृणादपि सुनीचेन तरोरपि सहिष्णुना।
अमानिना मानदेन कीर्तनीयः सदा हरिः ।।

पूज्य महाराजश्री इस श्लोक के जाज्वल्यमान प्रतीक थे। आप अपनी आयु, पद, प्रतिष्ठा की ओर ध्यान न देते हुए सबको साष्टांग दण्डवत् प्रणाम करते थे। विनम्रता आपका भूषण था।

उन दिनों वाराणसी में श्री श्री माँ आनन्दमयी कन्यापीठ का स्वर्ण-जयन्ती समारोह का आयोजन चल रहा था। इस अवसर पर पूज्य महाराजश्री वाराणसी में उपस्थित थे। एक दिन कार्यक्रम की समाप्ति के पश्चात् आश्रम के हॉल (घर) में पूज्य महाराजश्री ने प्रसन्नतापूर्वक शीघ्रता से जा कर अपने से अपेक्षाकृत कम वयस्क आश्रम के ही एक ब्रह्मचारी के पैर छू कर प्रणाम किया। यह देख कर सब अवाक् रह गये। बहुत दिनों के पश्चात् मिलने पर हार्दिक अभिनन्दन का आपका यह अनुपम उदाहरण था।

भक्तिमय जीवन

आपका जीवन भक्तिमय था। श्रीमद्भागवत में कहा गया है-

वाणी गुणानुकचने श्रवणी कथायां
हस्तौ च कर्मसु मनस्तव पादयोर्नः ।
स्मृत्यां शिरस्तवनिवास जगत्प्रणामे
दृष्टिः सतां दर्शनेऽस्तु भवत्तन्नाम् ।।

- १० - १० -३२

भक्त भगवान् से प्रार्थना करते हैं- हे प्रभो! वाणी आपके गुणानुवाद में, खवण आपके कथा-श्रवण में, हाथ आपकी सेवा में, मन आपके चरण कमलों के स्मरण में, शीष आपके निवासभूत सारे जगत् के प्रणाम करने में तथा नेत्र आपके चैतन्यमय विग्रह सन्तजनों के दर्शन में लगे रहे।

पूज्य महाराजश्री के हृदय की प्रार्थना भी यही थी। श्री अखिल बिनय 'जीवन सन्त-स्वामी चिदानन्द' शीर्षक अपने ग्रन्थ में लिखते हैं कि "गृह त्याग कर जब वे (पूज्य महाराजश्री) वेंकटेश्वर के दरबार में पहुँचे तो वे भगवान् बैंकटेश्वर को भेंट चढ़ाना चाहते थे, परन्तु पास में कुछ न होने से उन्होंने एक ठेकेदार से निवेदन किया कि उन्हें मजदूरी पर रख ले। गौरवर्ण, क्षीणकाय और जैसे कद से युक्त उक्त सौम्य युवक को देख कर उसने इनकार कर दिया। उसने समझा कि उसके साथ हंसी की जा रही है। जब स्वामी जी ने विश्वास दिलाया कि वे अपनी कमाई का धन बेफटेश्वर को अर्पित करना चाहते हैं तो उसने उन्हें मजदूर के रूप में रख लिया। किन्तु इन्होंने

सात दिन की मजदूरी का केवल एक रुपया लिया, उसे भगवान् को अर्पित कर आनन्द प्राप्त किया और आगे की राह ली।" ऐसी ही पूज्य महाराजश्री की भगवान् के प्रति निष्ठा थी।

सेवा ही मूल मन्त्र

आपके जीवन का मूल मन्त्र था सेवा तथा प्राणिमात्र के प्रति प्रेम। आपका सेवाभाव अद्‌भुत था। **रोगियों के प्रति आपकी सहानुभूति विलक्षण थी। कुष्ठ रोगियों की, दरिद्रनारायण की सेवा ही उनके लिए सच्चे अर्थों में प्रभु की सेवा थी।** एक बार पूज्य शिवानन्द जी ने आपके लिए कहा था, "**बे डाक्टरों के भी डाक्टर हैं, वे कोड़ियों के डाक्टर हैं। वे दया के सागर हैं।**" वे किसी की भी अस्वस्थता की खबर पाते ही उसकी सेवा में, उसके उपचार में तुरन्त संलान हो जाते थे।

सन् १९८७, फरवरी के महीने में वाराणसी में आपके सभापत्य में श्री श्री माँ आनन्दमयी कन्यापीठ का वार्षिकोत्सव चल रहा था। **अनुष्ठान की समाप्ति पर भीड़ के भीतर ही आप जमीन पर बैठ कर आश्रम की एक वयोवृद्धा संन्यासिनी से उनकी शारीरिक व्याधि के विषय में पूछताछ करने लगे। वह संन्यासिनी भी विश्वस्त हृदय से उस मानवता के परमबन्धु को अपनी दर्द भरी कथा सुनाने लगी। स्वामी जी ने उन्हें बचन दिया कि वे उनके लिए ऋषिकेश से औषधि भेज देंगे, और कुछ ही दिनों में उन्हें एक औषधि का पार्सल प्राप्त हुआ।** "

वसुधैव कुटुम्बकम्" की उदात्त भावना आप में थी।

करुणामय पुरुष

शान्ता महान्तो निवसन्ति सन्तो
वसन्तवलोकहितं चरन्तः ।
तीर्णाः स्वयं भीमभवार्णवं जनाः
नहेतुनान्यानपि तारयन्तः ।।

जिस प्रकार बसन्तऋतु अपनी बासन्तिक आभा से, नवपल्लक्तस्लता पुष्पों से सबको आह्लादित करता है, उसी प्रकार सन्त महापुरुष भयंकर संसाररूपी सागर को स्वयं पार कर अपनी अहेतुकी कृपा से इस संसार-सागर में दूबी हुई जनता को पार कर शान्ति तथा परमानन्द प्रदान करते हैं। पून्य महाराजश्री की गणना ऐसे ही महापुरुषों में होती थी।

आपके गुरुदेव ने आपके विषय में कहा था, "**स्वामी चिदानन्द में करुणा और विनम्रता का प्राचुर्य है।**"

व्यावहारिक वेदान्ती

पूज्य महाराजश्री ने वेदान्त के सिद्धान्त को अपने जीवन में उतारा था। आप प्राणिमात्र के भीतर उस पर ब्रह्म परमात्मा का ही दर्शन करते थे। तभी तो प्राणिमात्र के प्रति आपकी इतनी श्रद्धा, प्रेम तथा आदर की भावना थी।

श्रीमद्भागवत में कहा गया है-

सर्वभूतेषु यः पश्येद् भगवद्भावमात्मनः ।
भूतानि भगवत्यात्मन्येष भागवतोत्तमः ।।

-११/२/४५

सम्पूर्ण प्राणिमात्र में जो आत्मस्वरूप भगवान् का दर्शन करता है तथा भगवान् में जो प्राणिमात्र का दर्शन करता है, वही उत्तम भक्त है।

श्री श्री आनन्दमयी माँ ने कहा है- "संसार में अश्रद्धा व उपेक्षा की कोई वस्तु नहीं है, वे अनन्त भावों, अनन्त रूपी से अनन्त खेल खेलते हैं। बहु न होने से यह खेल कैसे चले ? देखते नहीं प्रकाश और अन्धकार, सुख और दुःख, अधि और जल किस प्रकार एक ही श्रृंखला में बंधे। बंधे हुए हैं

अतः सर्वत्र भगवद्-दर्शन ही मनुष्य मात्र का कर्तव्य है।

सुन्दरता के प्रति जागरूकता

"**सत्यं शिवं सुन्दरम्**" जो सत्य है, जो कल्याणमय है एवं सुन्दर है वही परमात्मतत्व है। अतः सुन्दरता के भीतर भगवान् का निवास है।

एक विरक्त सन्त होते हुए भी पूज्य महाराजश्री में सौन्दर्य के प्रति अपूर्व चेतनता तथा रुचिसम्पन्न बुद्धि देखी जाती थी। आप अपने चारों ओर स्वच्छ तथा सब कुछ यथास्थान देखना पसन्द करते थे। आपके छोटे से छोटे कार्य में भी एक नैसर्गिक सुन्दरता झलकती थी।

"स्वयं सुन्दर हो कर सुन्दर हृदय आसन में चिर सुन्दर को पदि प्रतिष्ठित कर सको तो सब ही सुन्दर प्रतीत होगा।"

श्री श्री आनन्दमयी माँ की यह वाणी आपने यथार्थतः। फलीभूत होते देखी जाती थी।

जीवन्मुक्त की स्थिति

शान्तसंसारकलनः कलावानपि निष्फलः ।
यः सच्चिनो ऽपि निश्चिन्तः स जीवन्मुक्त इष्यते ।।

जिसकी संसार-वासना शान्त हो गयी है, जो कलावान् हो का भी कलाहीन है अर्थात् व्यवहारदृष्टि ऊपर से विकारवान् प्रतीत होता हुआ भी निरन्तर अपने निर्विकार स्वरूप में ही स्थित रहता है तथा जो चितयुक्त होने पर भी निश्चिन्त है, वह पुरुष जीवन्मुक्त माना जाता है।

पूज्य महाराजश्री की यही वास्तविक स्थिति थी। चाहर से यद्यपि उनको जगत् से व्यवहार करते देखा जाता था, किन्तु बास्तविक रूप से इस जगत् में आपको किसी से किसी बात की अपेक्षा नहीं थी। वे भीतर से सदा भगवान् से अपने को युक्त रखते थे। अतः भगवान् स्वयं कहते हैं-

सन्तोऽनपेक्षाः मच्चित्ताः प्रणताः समदर्शिनः ।
निर्ममा निरहंकारा निर्द्वन्द्वा निष्परिग्रहाः ।।

अर्थात् सन्तजन किसी प्रकार की इच्छा नहीं करते, वे मुझमें ही चित लगाये रहते हैं तथा नम्र, समदर्शों, ममताशून्य, अहंकारहीन, निर्द्वन्द्र एवं संचय न करने वाले होते हैं।

मद्गुरुः श्री जगद्गुरुः

श्री श्री गुरुस्तोत्र में कहा गया है-

मत्राबः श्रीजगन्नाथः मद्गुरुः श्रीजगद्गुरुः ।
ममात्मा सर्वभूतात्मा तस्मै श्रीगुरवे नमः ।।

(गुरु गी. ७-८)

इस श्लोक के सारभूत अर्थ को महाराजश्री ने पूर्णरूप से हृदयंगम किया था। वे अपने गुरुदेव परम पूज्य स्वामी श्री शिवानन्द जी के चरणों में पूर्णतः समर्पित थे।

आप कहते थे-"श्री स्वामी शिवानन्द जी महाराज मेरे गुरु ही नहीं वरन् मेरे माता-पिता भी है। मैं उन्हीं का एक रूप हूँ। मैंने अनुभव किया कि मेरे पीछे उन्हीं की प्रेरणा कार्य कर रही है।"

आप अपने गुरु में जगद्गुरु का दर्शन करते थे। तभी तो आप सभी सम्प्रदाय के किसी भी धर्मावलम्बी सन्त के पास विनीत भाव से निससंकोच रूप से उपस्थित होते थे।

ध्यानमूलं गुरोर्मूर्तिः पूजामूलं गुरोर्पदम् ।
मन्त्रमूलं गुरोर्वाक्यं मोक्षमूलं गुरोकृपा ।।

यह श्लोक आपके जीवन का सर्वस्व था।

श्री श्री आनन्दमयी माँ के सान्निध्य में

कनखल में माँ के आश्रम में पूज्य महाराजश्री ने एक बार स्वयं कहा था कि माँ के साथ आपकी सर्वप्रथम भेट सन् १९४८ में फरवरी के महीने में बाराणसी आश्रम में हुई थी। उन दिनों बाराणसी आश्रम में तीन वर्ष व्यापी सावित्री यह चल रहा था। माँ से मिल कर स्वामी जी अत्यन्त प्रसत्र हुए।

पूज्य महाराजश्री तथा दिव्य जीवन संघ के सभी महात्मागण माँ को विशेष आदर की दृष्टि से देखते थे। माँ भी उन्हें पूर्ण मान्यता देती थीं। स्वामी जी ने माँ को जगन्माता के रूप में स्वीकार किया था।

आज दिव्य जीवन संघ के साथ श्री श्री माँ आनन्दमयी आश्रम का अति घनिष्ठ सम्बन्ध स्थापित हो गया है।

संयम-सप्ताह में पूज्य महाराजश्री

श्री श्री आनन्दमयी संघ द्वारा प्रति वर्ष संयम साह महावत का आयोजन किया जाता है। इस उपलक्ष्य में भारत के सभी विशिष्ट महात्मागण आमन्त्रित होते हैं। पूज्य महाराजश्री प्रायः प्रतिवर्ष संयम-समाह में पधारते बे।

संयम-सप्ताह में पूज्य महाराजश्री का दिव्योपदेश

पूज्य स्वामी श्री चिदानन्द जी ने संयम-सप्ताह के उपलक्ष्य में सन् १९८६ के ११ दिसम्बर को कनखल में यह कथा सुनायी थी-

"एक जज थे। वे सदाचारी, कर्तव्यपरायण तथा सत्यवादी थे। परन्तु अपनी जीविका के अनुसार उन्हें अनेक समय निदर्दोषी मनुष्यों को भी दोषी साबित कर उन्हें सजा देनी पड़ती थी। अन्ततः उन्हें वैराग्य हो गया। वे अपने काम-काळ, घर-बार-परिवार सबका परित्याग कर भगवान् की खोज मे निकल पड़े। परन्तु वे संन्यास लेने के पूर्व छः महीने तक साधु-जीवन के अभ्यास में संला हुए। अच्छा भोजन, अच्छा पानी, अच्छी शय्या पर सपन-इन सबमें अभ्यस्त थे, किन्तु धीरे-धीरे उन्होंने सब छोड़ दिया और साधु-जीवन के अनुकूल खान-पान का अभ्यास करने लगे। किन्तु संन्यास से कर जब वे भिक्षा लेने गये तब उन्हें अभिमान होने लगा कि "मैं तो शिक्षित कुलीन परिवार में जन्मा व्यक्ति हूँ।" बाद में जब वे साधु हो गये, तब श्री हनुमानप्रसाद पोद्दार जी के अनुरोध से उन्होंने अपना अनुभव लिखा था कि जब उनका जज का अभिमान नहीं जा रहा था तब उन्होंने अभिमान त्यागने का दृढ़ निश्चय कर लिया। वे सबेरे रोज गंगाजी में स्नान कर घाट पर एक ओर खड़े हो जाते थे और जो भी स्नान करने आते थे, उन्हें साष्टांग दण्डवत् करते थे। इस प्रकार बीस दिन करने के बाद उनका जज साहब का अभिमान छूट गया।"

पूज्य महाराजश्री कहा करते थे-"**बीच-बीच में मन का निरीक्षण करना साधक का कर्तव्य है। उन्हें मन के हर चिन्तन को नोट करते रहना चाहिए।**"

सन् १९८७ के संयम महाव्रत में पूज्य महाराजश्री ने एकदिन सबके आग्रह करने पर अपने गुरुदेव परम पूज्य स्वामी श्री शिवानन्द जी महाराज के विषय में कहा था। आपने उनके वैराग्य की पराकाष्ठा के सम्बन्ध में बताया कि किस तरह वे चौवीस घण्टे साधना में लगे रहते थे। भिक्षा में प्राप्त रोटियों को एक वृक्ष के गहुर में रख देते थे और ७-८ दिन तक उन सूखी रोटियों को चूर्ण कर गंगाजल में घोल कर पी जाते थे। पुन ७-८ दिन बाद एक दिन भिक्षा माँगने जाते थे। निरन्तर साधना का अभ्यास करते थे। उनकी कठोर तपश्चर्या वधार्थतः अनुकरणीय है।

इस प्रकार संयम-सप्ताह में पूज्य महाराजश्री का दिव्योपदेश श्रवण कर सभी धन्य होते थे।

श्री श्री माँ आनन्दमयी कन्यापीठ के वार्षिकोत्सव में पूज्य महाराजश्री

श्री श्री माँ के दिव्य ख्याल के दिग्दर्शन में प्रस्फुटित यह छोटी सी संस्था 'श्री श्री माँ आनन्दमयी कन्यापीठ' है। सन् १९३८ मे २६ सितम्बर को कन्यापीठ की स्थापना हुई थी। शिवनगरी काशीधाम में यह प्रतिष्ठित है।

इस संस्था का उद्देश्य है जीवनदीप को आदर्श चरित्ररूपी तेज से प्रज्वलित करना, जिससे एक आदर्श जीवन के प्रकाश में आ कर अनेक जीवन प्रकाशित हो सकें।

श्री श्री माँ आनन्दमयी कन्यापीठ के उनचासवे वार्षिकोत्सव का आयोजन किया जा रहा था। सबकी इच्छा थी कि इस बार पूज्य श्री चिदानन्द जी महाराज को इस अवसर पर आमन्त्रित किया जाये। उनसे प्रार्थना की गयी। उन्होंने इस प्रार्थना को अनुग्रहपूर्वक स्वीकार कर लिया। आप दिनांक १३-२-८७ को सायंकाल पूर्णिमा के दिन सत्यनारायण की पूजा के समय काशी आश्रम पधारे। आपके आते ही आश्रम में बारों ओर आनन्द की लहरें छा गई।

दूसरे दिन प्रात काल पूज्य महाराजश्री ने सम्पूर्ण विद्यालय का निरीक्षण किया। वे तीन तल्ले में ठाकुरपर में भी गये।

आश्रम-बालिकाओं के प्रति महाराजश्री का उपदेश

विद्यालय के हॉलपर में कन्यापीठ की छात्राओं को सम्बोधित करते पूज्य महाराजश्री ने कहा- हुए

"विद्यार्थी जीवन के मुख्य तीन उद्देश्य है- (१) विद्यार्जन, (२) सदाचार (पवित्रता), (३) स्वास्थ्य के प्रति ख्याल रखना।

यदि मोक्षमिच्छसि चेत्तात!
विषयान् विषवत् त्यज।
ब्रह्मचर्यमहिंसा च
सत्यं पीयूषवत् पिच ।।

अहिंसा, ब्रह्मचर्य और सत्य-वे तीन विद्यार्थियों के लिए अवश्य पालनीय है।

"विद्यातुराणां न रुचिर्न निद्रा।"

"रामायण के दो पात्र हनुमान् तथा रावण दोनों गुणों से परिपूर्ण थे। किन्तु इनमें से एक अपने सभी सद्गुणों को प्रभु के चरणों में अर्पण कर संसार में यशस्वी तथा पूजनीय बने। यही हमारे हनुमान् जी हैं तथा रावण सभी गुणों के द्वारा अपना ही तर्पण कर संसार

में निन्दनीय बना। उनका दिया हुआ उन्हीं को समर्पण करना चाहिए। मनुष्य को हनुमान्सदृश्य तेजस्वी तथा सदाचार के पथ पर दृढ़ होना चाहिए।

"एक बार कबीरदास जी नदी के किनारे वृक्ष के नीचे ध्यान में मस्त हो कर बैठे थे। उधर से कुछ रईस लोग निकले, जो अपने-आपको बहुत बड़ा आदमी समझते थे। उन लोगों ने कबीरदास जी को देख कर कहा, "अरे देखो, यह निकम्मा साधु बैठा है।" लोग साधु से बहुत चिढ़ते हैं। लोगों का कहना है कि साधु कुछ काम-काज नहीं करते, आलसी होते है। इन लोगों ने भी कबीरदास जी को देख कर उनके पास जा कर कहा, "अरे! तुम यहाँ चुप बैठे क्या कर रहे हो?" कबीरदास जी कुछ बोले नहीं, वैसे ही चुप बैठे रहे। लोगों के पुनः कहने पर भी वे चुप रहे। अन्त में किसी ने उनके शरीर को छू कर पक्का दिया, तब कबीरदास जी उनकी ओर एक बार देख कर चुप बैठ गये। ये इन लोगों के आने का कारण समझ गये थे। पुनः पुनः लोगों के छेड़ने पर कबीरदास जी बोले, "अरे, मुझे छेड़ो नहीं। मैं बहुत व्यस्त हूं। मुझे काम करने दो।" तब उन लोगों ने कहा- "अरे! तुम तो बैठे हो। क्या काम कर रहे हो?" तब कबीरदास जी बोले, "में तोड़ने और जोड़ने में व्यस्त हूँ।" **इसके कई अर्थ हो सकते हैं-नश्वर पदार्थों से आसक्ति तोड़ कर मन को भगवान् से जोड़ना; अवगुणों को तोड़ कर सद्गुणों को जोड़ना।**"

"यदि किसी से या सरकार से कोई ऊसर जमीन प्राप्त हो तो हम उसमें खेती करने के लिए जोतते हैं। जमीन को समतल करते हैं। कंकड़-पत्थर को उठा कर फेंक देते हैं। फिर बीजारोपण करते हैं, उसी प्रकार हव्य में भगवान् को बसाने के लिए आत्मशोधन आवश्यक है। हृदय से अवगुणों को दूर कर सद्गुणों का जपन करना चाहिए। इसके लिए रोज रात्रि में सोते समय आत्मानुसन्धान-आत्मानुध्यान करना चाहिए। आज मैंने कौन से दोष किये, किसी से कटु बचन तो नहीं कहा। क्रोध तो नहीं किया।" ऐसा विचार करना चाहिए। प्रशाम्ध में जो मनुष्य को अभ्यास न होने से कुछ समझ में नहीं आयेगा। परन्तु कुछ दिन ऐसे विचार काने पर बाद में ध्यान आयेगा कि "ओह! मैंने आज दिन में दस बजे किसी से कटु बचन बोल दिया। मैं बहुत जल्दी क्रोध के आवेश में आ जाता हूँ। मुझे धीरज, सहनशीलता तथा शान्ति रखनी चाहिए।" इस प्रकार आत्यानुसन्धार से हमारे हृदय में दुर्गुणों के स्थान पर सद्गुण आ जायेंगे।"

"बारह महीने में से मनुष्य को होक महीने के लिए एक-एक सद्गुण का चयन करना बाहिए तथा उस महीने में उसी का अभ्यास करना चाहिए। जैसे जनवरी में सत्य का, फरवरी में अहिंसा का, मार्च में अक्रोध इत्यादि का। इस प्रकार बारह महीने में बारह गुण आ जायेंगे। मनुष्य प्रशंसनीय बन सकता है। ठीक अभ्यास का पालन न होने पर मनुष्य को अपने आप ही कोई सजा लेनी चाहिए।"

"नीच मनुष्य विघ्न के भय से कोई महान् कार्य का संकल्प ही नहीं करते। मध्यम कोटि के लोग आरम्भ करके विषन के भय से बीच में ही आरम्भ किये हुए कर्म को छोड़ देते हैं। उ**त्तम मनुष्य बाधाएँ आने पर भी अपने महान् प्रारम्भ किये हुए कर्म को कभी नहीं छोड़ते।**"

पूज्य महाराजश्री के उपदेशों को छोटी-छोटी बालिकाएँ बहुत ध्यान से सुन रही थी।

दिनांक १५-२-८७ को पूज्य महाराजथी के सभापतित्व में कन्यापीठ का वार्षिकोत्सव बड़े ही भव्य रूप से सम्पन्न हुआ। आपके ही करकमलों द्वारा छात्राओं को पारितोषिक वितरण किया गया।

कन्यापीठ के वार्षिकोत्सव में सभापति के रूप में महाराजश्री का भाषण

सभापति के भाषण में आपने कहा- "आज के इस आनन्दमय पवित्र परिवेश में ये जो उत्तम कार्यक्रम हुए हैं यह सब आगामी स्वर्णजयन्ती की पूर्व सन्नया है। यहाँ जो आनन्द की लहरें उठ रही हैं, उसी से श्री श्री माँ की दिव्य उपस्थिति प्रत्यक्ष प्रमाणित हो रही है, यह मैं आपको सत्य कह रहा हूँ। श्री श्री माँ के ख्याल से जिस संस्था की स्थापना हुई है, वह कभी छोटी नहीं हो सकती, वह महान् है। यहाँ पर बाल्यावस्था से ही जो बुनियाद तैयार हो रही है, वह भावी जीवन की आधारशिला है। यदि आज यह बुनियाद सुदुद बन जायेगी तो जीवन का अभ्युदय सुलभ हो जायेगा, परोपकार धर्म का जोवन है। **इस विद्यालय में भौतिक विद्या के साथ जो भागवती शिक्षा भी दी जाती है, यह सत्य ही सराहनीय है। यहाँ के विद्यार्थी ही भारत के भविष्य हैं। यह संस्था भावी भारत के पथ-प्रदर्शन के लिए दीपकतुल्य है।**"

कन्यापीठ की स्वर्णजयन्ती में महाराजश्री का योगदान

सन् १९८८ ई. अक्टूबर महीने में शारदीय नवरात्रि के अवसर कन्यापीठ की स्वर्णजयन्ती आयोजित हुई। इस उपलक्ष्य में वाराणसी म में दुर्गापूजा भी अनुष्ठित हुई।

स्वर्णजयन्ती में पूज्य महाराजश्री का सक्रिय योगदान रहा। पूज्य महाराजश्री दुर्गापूजा की अष्टमी के दिन वाराणसी आश्रम पधारे। कन्याओं ने बेदपाठ के द्वारा आपका स्वागत किया।

२१ अक्टूबर को प्रात काल महाराजश्री तथा अन्य महात्माओं की उपस्थिति में आनन्दज्योतिर्मन्दिर में पद्मवेदिका पर माँ की स्वर्णिम तीन मूर्तियों को विराजित किया गया। २१, २२, २३ अक्टूबर में स्वर्णजयन्ती के प्रितिवसीय कार्यक्रम में पूज्य महाराजश्री कभी सभापति तो कभी मुख्य अतिथि हुए। स्वर्णजयन्ती की स्मारिका आनन्द मन्दाकिनी' का विमोचन आपके करकमलों द्वारा ही हुआ।

'कन्यापीठ की पुकार' शीर्षक महाराजश्री का लेख

पूज्य महाराजश्री ने स्वर्णजयन्ती के अवसर पर 'Call of the Kanyapeeth शीर्षक से अंगरेजी भाषा में अतिगरिमामय एक लेख लिख कर उसकी हजार प्रतियाँ छपवा कर भक्तों के बीच वितरित करवाई, जिसका हिन्दी अनुवाद कन्यापीठ की अध्यक्ष सुश्री डाक्टर पद्मा मिश्रा ने किया। हिन्दी में इस लेख का नाम था 'कन्यापीठ की पुकार'। इस लेख के प्रारम्भ में पूज्य महाराजधी ने लिखा है-

"भगवान् काशी विश्वनाथ की कृपा और आशीष का इस पवित्र कन्यापीठ, इसकी छात्राओं, अध्यापिकाओं एवं शुभ स्वर्णजयन्ती समारोह पर प्रभूत वर्षण हो। इस सब सुखद तथा पवित्र अनुष्ठानों पर श्री श्री माँ आनन्दमयी की कृपा दृष्टि है।...."

"...हमारा धर्म, हमारी संस्कृति, हमारे आदर्श तथा लक्ष्य संस्कृत भाषा और साहित्य की अनुपम निधि में निहित है। कन्यापोड यह सिद्ध कर रहा है कि संस्कृत जीवित भाषा है और इसका अध्ययन तथा अधिगम उस ज्ञानप्राप्ति का नहीं अपितु, हमारे उच्च आदर्श एवं संस्कृति के पुनरुत्थान का भी प्रमुख मार्ग है।"

श्री पूज्य महाराजश्री ने स्वर्ण जयन्ती के अवसर पर स्वर्णिम काज से बंधा हुआ एक-एक पैकेट यहाँ की छात्राओं तथा अध्यापिकाओं को उपहार के रूप में प्रदान किया। उन पैकेटों में फल, मेथे आदि थे। पूज्य महाराजश्री के कथनानुसार ही आदरणीया गुरुप्रिया दीदी के चित्र को इस अवसर पर स्वर्णिम कागजों से सजाया गया था।

प्रतिवार्षिकोत्सव में योगदान

पूज्य महाराजश्री सन् १९८७ से २००१ तक प्रत्येक वार्षिकोत्सव में बाराणसी पधारे। उन्हीं के सभापतित्व में कन्यापीठ के वार्षिकोत्सव गरिमामय ढंग से सम्पत्र हुए। उनके करकमलों से पुरस्कार प्रार कर बालिकाएँ धन्य हुई।

श्री श्री माँ के शतवर्ष के अनुष्ठानों में योगदान

१९९५-९६ ई. में श्री श्री माँ के शतवर्ष के अवसर पर बांग्लादेश से ते कर भारत के प्रायः प्रत्येक स्थलों में अनुष्ठित प्रत्येक कार्यक्रमों में स्वामी जी की दिव्य उपस्थित भक्तों की प्रेरणा का मुख्य स्रोत रही।

आनन्दज्योतिर्मन्दिर की रजत जयन्ती

वाराणसी में आनन्दज्योतिर्मन्दिर की रजत जयन्ती के अवसर पर १९९३ ई. में पूज्य महाराजश्री वाराणसी पधारे। आपके ही निर्देश से १०८ बाल-गोपालों की अर्चना की गयी। गोपाल मन्दिर के शिखर को आलोक मालाओं से सुसज्जित किया गया।

आदरणीया गुरुप्रिया दीदी का शतवर्ष तथा कन्यापीठ की हीरक जयन्ती

१९९९ ई. में पूज्य महाराजश्री का सक्रिय योगदान रहा। आदरणीया गुरुप्रिया दीदी के शतवर्षीय अनुष्ठान तथा कन्यापीठ के हीरक जयन्ती समारोह में आपकी दिव्य उपस्थिति में ही ये उत्सव मनाये गये। आपके करकमलों द्वारा 'ब्रह्मचारिणी गुरुप्रिया' शीर्षक स्मारिका ग्रन्थ का विमोचन हुआ।

देहरादून से पूज्य महाराजश्री का कृपा-प्रभाव

२००१ ई. के बाद जब पूज्य महाराजश्री शारीरिक अस्वस्थता के कारण वाराणसी नहीं आ सके, तब भी निरन्तर सहयोगिता के इरा कन्यापीठ के प्रति उनकी कृपादृष्टि बनी रही। पानुदा तथा

कन्याओं के देहरादून जाने पर वे पूर्व की भाँति कीर्तन, उपदेश तथा प्रसाद प्रदान कर कन्याओं को आनन्दित तथा धन्य करते थे।

महानिर्वाण

अन्त में विगत २८ अगस्त, २००८ को रात्रि में देहरादून में 'शान्ति-निवास' में पूज्य महाराजश्री महासमाधि में लीन हुए। किन्तु अमर आत्मा दिव्य आत्मा स्वामी चिदानन्द जी सबके हृदयों में चिर अमर रहेंगे। आज हम पूज्य महाराजश्री के चरणों में यह बद्धासुमन अर्पण करते हैं।

वन्देऽहं श्रीचिदानन्दं यतीन्द्रकुलभूषणम्।
दिव्यजीवनसंघोऽयं येन भुवि प्रसारितः ।।
जयतु श्रीचिदानन्दः शिवानन्दपदानुगः ।
जयतु दिव्यसंघञ्च दिब्यजीवनदायकः ।।

(माँ आनन्दमयी अमृतवार्ता)

पूर्णता के जीवन्त स्वरूप

-श्री गेब्रियल जी -

परम पूज्य श्री स्वामी चिदानन्द जी महाराज का जीवन इस बात का सत्य जीवन्त प्रमाण है कि परम कृपालु परमात्मा का असीम प्रेम समस्त मानव जाति तक किस प्रकार पहुँचता है; तथा उस परमात्मा की उपस्थिति चराचर में नित्य है। अपने जीवन काल में स्वामी जी के संपर्क में आने का जिनका सौभाग्य रहा है, उनके लिए यह एक महानतम बरदान था और उसके झारा वे सांसारिक जीवन के विषाद में से सर्वदा मुक्त हुए तथा उन्हें निर्विवाद प्रमाण मिला कि शास्त्रों के सब वचन मानव जाति के लिए सत्य हैं। यह वचन है, कि हमारा निज स्वरूप परिपूर्ण है तथा हमारे आसपास की हर एक बस्तु में भी परिपूर्णता है। स्वामी जी सदैव "उज्ज्वल अमर आत्मन्" के सम्बोधन से अपना प्रवचन प्रारम्भ करते थे। इसलिए हर बार यह संबोधन सुन कर उस शाश्वत सत्य को तुरन्त स्वीकार करने में अथवा उस स्वीकार को टालने में सचमुच कोई अवकाश ही नहीं रहता। हमारा निर्णय जो भी हो किन्तु ईश्वर की सत्ता अचल है, और यही बात हमारे मन में उन्होंने सुदृढ़ अक्ति की, जिसे हम पुनः पुनः उनके चरणों में बैठ कर सुनते आये हैं।

किसी ने अभी हाल में ही मुझे कहा कि मैंने अपने पूर्व-जन्म में अवश्य ही कुछ बड़ा दुष्कर्म किया है जिसके कारण मैंने पश्चिम के देश में वर्तमान जन्म लिया है। इस क्षतिपूर्ति हेतु परमात्मा ने मेरा जीवन इस प्रकार श्रृंच लिया है कि गुरुदेव स्वामी शिवानन्द जी महाराज और स्वामी जी के साथ मेरा अनुबंध पका बन गया। मेरा जन्म हॉलेन्ड में 'सेन्ट फ्रान्सिस ऑफ असीसी

हॉस्पिटल' में वर्ष १९४३ में जिस वर्ष में स्वामी जी महाराज गुरुदेव के चरणों में आये हुआ तथा मेरे दो इष्ट-'मदर मेरी' और गुरुदेव की जन्मतारीख ही मेरी जन्मतारीख है। मुझे यह सत्य प्रतीत होता है कि अपने जीवन में गुरुदेव और स्वामी जी की उपस्थिति के विना में भगवान् के दिव्य जीवन के आह्वान से सहज ही दूर रहता। किन्तु ऐसा लगता है कि यह नहीं होना था।

वर्ष १९५३ में जब हम देहरादून में रहते थे और एक दिन मेरे पिता जी, जो पत्रकार थे, घर लौटे और उन्होंने हम तीनों लड़कों को कहा- "मुझे गंगातट स्थित एक छोटे शहर में "World Conference On Re ligions" का विवरण देना है। और उस दिन से से कर ५५ वर्षों से भी अधिक समय से मेरा जीवन गुरुदेव और स्वामी जी के साथ सदा-सदा के लिए जुड़ गया है। आश्रम के हमारे निवास के दौरान, एक समय, गुरुदेव ने स्वामी जी को कहा "आप इन तीन बच्चों की देखभाल करना।" यही कार्य स्वामी जी ने अपने जीवन के श्वास पर्यंत किया, ऐसा में अनुभव करता हूँ। वर्ष १९५८ में, हमारे जर्मनी जाते समय स्वामी जी का मुझे विदा के उपहार रूप में दी हुई श्रीमद्भगवद्गीता का एक श्लोक, मेरे लिए मेरे जीवन में मार्गदर्शक-बल के रूप में बना रहा। यह श्लोक इस प्रकार है:

"मूकं करोति वाचालं पंगुं लङ्घयते गिरिम् ।
यत्कृपा तमहं वन्दे परमानन्दमाधवम्।"

(श्रीमद्भगवद्गीताध्यानम्-८)

"जिनकी कृपा मूक को बाचाल करती है तथा पंगु को पर्वत पार करा सकती है, उन परमानन्दस्वरूप माधव को मैं वंदन करता हूँ।"

यद्यपि मुझे उत्तरवर्ती जीवनावधि में अति संघर्ष करना पड़ा, तथापि, किसी भी प्रकार, यह सदैव ईश्वर ही सब-कुछ कर रहा है यह प्रतीत करना मेरे लिए सदा सहजतम रहा है।

मैंने स्वामी जी को अपने गुरुस्वरूप में कभी नहीं समझा। स्वामी जी को लिखे गये मेरे पत्रों में मैंने सदैव लिखा "मेरी आत्मा के प्रिय पिता" और स्वामी चिदानन्द जी के लिए यही भाव, यही रूप, मेरे संपूर्ण जीवन में रहे। हमारी, वर्ष १९५३ से वर्ष १९५८ पर्यंत आश्श्रम में रहने के दौरान, स्वामी जी महाराज मेरे लिए सर्वस्व थे। जब-जब हमने स्वामी जी के सामीप्य की इच्छा की तब-तब ड्राइवर हमें ऋषिकेश ले जाता और फिर सर्वाधिक समय हम आश्रम में स्वामी जी के साथ होते थे। हम सब बच्चे देहरादून और मसूरी में पले और कभी-कभी हम विद्यालय की छुट्टियों में आते और तब दो महीने आश्चम में रहते थे। हमें बहुधा हनुमान्-कुटीर में कमरा मिलता था, जिसे मैं अपना सिर टिकाने हेतु अति उचित स्थान समझता हनुमान जी के चरणों में ।

हम तीन बच्चों के लिए वह परम सुखद अवधि होती थी, क्योंकि हमें स्वामी जी सदैव उपलब्ध थे। हम लड़कों के लिए स्वामी जी चाय बना कर बिस्कुट के साथ हमें देते थे तथा योग के मूलभूत सिद्धान्त तथा सनातनधर्म की प्राचीन पद्धतियाँ सिखाते थे। इन तीन पाश्चात्य अति जिज्ञासु लड़कों के प्रति स्वामी जी की सहिष्णुता असीम थी। मैं सब-कुछ पूर्ण रूप से समझता था ऐसा नहीं था, किन्तु मुझे लगता है कि गुरुदेव और स्वामी जी जैसे महात्माओं की उपस्थिति ने ऐसी छाप छोड़ी जिसने मेरे जीवन-मार्ग को प्रशस्त बनाया। आज मैं अवश्य जानता हूँ कि मेरा संपूर्ण जीवन ईश्वर, गुरुदेव और स्वामी जी ने लिखा है।

स्वामी जी के पावन चरणों में बैठ कर इन वर्षों में मैंने जो आत्मसात् किया है वह यह है कि हनुमान् जी-"मदर मेरी" और गुरुदेव के उपदेश सब सुसंगत हैं। इतने विभिन्न पंथों और संप्रदायों के इस विश्व में लेशमात्र भी विसंगति नहीं है। सब, एकमेव शक्ति-बल द्वारा ही बहन किया जाता है और वह है-प्रेम की शक्ति। वहीं चलाती है, आगे बढ़ाती है तथा पृथ्वी पर जो कुछ जड़-चालन है उनमें उसका अस्तित्व है। ईश्वर के इस प्रेमपूर्ण दयालुता के प्रबल प्रवाह से पृथक कुछ भी नहीं है। प्रत्येक क्षण हमारा ईश्वर से परिवेष्टित हैं तथा हमें ज्ञात हो अथवा नहीं, किन्तु उसकी सर्वव्यापक उपस्थिति से कोई मुक्त नहीं है। यही है यह सत्य जिसकी अमिट छाप मेरी आत्मा के पिता-स्वामी जी ने मेरे जीवन में लगायी है। और आज तथा। भविष्य में मेरे साथ जो शेष रहता है वह, एक पुत्र की अपने प्रेमिल तथा चितित पिता के प्रति कृतज्ञता है।

दिव्य जीवन संघ मुख्यालयः
शिवानन्द आश्रम, ऋषिकेश

स्वामी चिदानन्द ही स्वामी शिवानन्द

-श्री चौधरी गौरहरि मिश्रा जी, आई०एफ०एस०-

परम पूज्य गुरुदेव स्वामी शिवानन्द सरस्वती मेरे जीवन में आए तब मेरी आयु केवल सत्रह वर्ष की थी। वर्ष १९५५ से वर्ष १९६० पर्यंत उनकी कृपा से नियमित पत्रव्यवहार द्वारा, उनका मार्गदर्शन प्राप्त करने का मेरा सौभाग्य रहा। तत्पश्चात् अक्तूबर १९६० से सितंबर १९६२ पर्यंत लगभग सप्ताह में एक बार, इस प्रकार उनके पावन दर्शन भी बारम्बार हुए। उनके अत्यधिक प्रेम और दया ने मुझे पूर्णतया उन पर अवलंबित कर दिया और उनके बिना में अपने जीवन की कल्पना भी नहीं कर सकता था। परिणामतः वर्ष १९६३ में माह जुलाई के दिनांक १४ को गुरुदेव की महासमाधि हुई तब मेरे लिए जीवन असह्य हो गया। वह एक अकथ्य आपात था तथा मेरी व्यक्तिगत साधना पर भी इसका गहरा असर पड़ा। परन्तु स्वभावतः पूर्णतया अंतर्मुखी होने के कारण मेरे परिवार तथा निकट के मित्रों को भी मैंने इस विषय में कुछ भी अभिव्यक्त नहीं किया। अपनी व्यथित मनःस्थिति के बावजूद, किसी भी प्रकार से मैंने अपने सांसारिक कर्तव्य तथा जिम्मेदारियों का पालन करना जारी रखा।

"दिव्य जीवन संघ, उड़ीसा" की तरफ से हमें "दिव्य जीवन संघ" के नये परमाध्यक्ष, आदरणीय श्री स्वामी चिदानन्द जी महाराज के उड़ीसा में कार्यक्रम भी आयोजित करने थे। यद्यपि में पूर्णतया सक्रिय भाग ले रहा था तथापि अपनी व्यक्तिगत हानि के साथ मैं समझौता न कर सका। सच कहूँ तो, स्वामी जी, जो इतने प्रेमिल और दयालु थे, फिर भी, मैं उन्हें अपने गुरुदेव के आसन पर कभी स्थानापन्न नहीं कर सका।

एक बार, उड़ीसा के एक महान् आत्मानुभूत संत, परम पूज्य "बाया बाबा" ने केन्द्रपाड़ा में अपने गुरुदेव के जन्म-शताब्दी समारोह में, स्वामी जी महाराज को मुख्य अतिथि के रूप में आमंत्रित किया था। स्वामी जी इस हेतु केन्द्रपाड़ा में ३-४ दिन रहे। एक दिन अपराह में स्वामी

जी महाराज, पूज्य 'बाया बाबा' को जब सुविधा और समय हो तब उन्हें मिलने जाना चाहते थे और उन्होंने मुझे अपने साथ चलने को कहा। हम पूज्य 'बाबा' की कुटिया पर पहुँचे। दोनों महात्मा बातचीत करने लगे तथा मैं स्वामी जी महाराज के पीछे खड़ा रहा। एकाएक मैंने अपनी गर्दन पर पीछे उनकी कोमल हथेलियों के शांतिदायक स्पर्श का अनुभव किया। मेरी समझ में आया कि वे पूज्य 'बापा बाचा' की पावन गोद में मेरा मस्तक झुका रहे थे और उसका विनीत भाव से पालन करना आवश्यक था। फिर मैंने सुना कि वे लगभग अनुरोध के स्वर में पूज्य 'बाया बाबा' को मेरा परिचय अपने गुरुबंधु कह कर दे रहे थे। मैं अनुभव कर सका कि स्वामी जी महाराज मेरी विकट स्थिति जान गये हैं। आदरणीय 'बाया बाबा' ने मुझे लगभग डाँटते हुए कहा- **"वे (स्वामी जी महाराज की ओर निर्देश करते हुए), स्वामी शिवानन्द जी स्वयं है तथा वे आपके लिए सब कुछ करेंगे।"** यह महान् रहस्य प्रकट होने से मैंने अपने मेरुदण्ड में एक कंपकंपी-सिहरन का अनुभव किया और स्वामी जी के नेत्रों से मातृवत् स्नेह और करुणा की वर्षा मुझ पर हो रही थी, यह देख कर मेरे हर्ष की कोई सीमा न रही। मैंने आदरणीय 'बाया बाबा' को दंडवत प्रणाम किया और परम आराध्य, स्वामी जी महाराज ने, तृप्ति से मैं आकंठ भर जाऊँ, तब तक अपने चरणों में मेरा मन टिकाने दिया।

एक अधिक संशयरहित प्रसंग था। हम वर्ष १९७९ के माह जून के दिनांक २ से दिनांक ४ पर्यंत २९ वीं अखिल भारत दिव्य जीवन संप और १३ वीं अखिल उड़ीसा दिव्य जीवन संघ परिषद आयोजित कर रहे थे। स्वामी जी महाराजा पुरी के 'सर्किट हाउस' में ठहरे थे। उस समय एक और सुप्रसिद्ध नामाचार्य-आदरणीय ठाकुर सीतारामदास ओमकारनाथ जी महाराज' भी पुरी में सागर-तट पर स्थित अपने आश्रम में विराज रहे थे। स्वामी जी महाराज, परिषद् के प्रारम्भ के अगले दिन प्रभात में उनसे मिलना चाहते थे और हममें से ४-५ व्यक्तियों को अपने साथ चलने को कहा। जब हमने आश्रम में प्रवेश किया तब स्वामी जी महाराज ने मुझे सावधान करते हुए कहा कि आसपास न देखते हुए सदैव ब्रह्म में स्थित तथा कृपा-वर्षा करने वाले बाबा में ही एकाग्र होने को कहा। दोनों महान् संतों के परस्पर अलौकिक अभिवादन के पश्चात् बाबा (ठाकुर सीतारामदास ओमकार नाथ) ने कहा- "मैं हर जगह उज्ज्वल प्रकाश की आभा देख रहा हूँ। मैं ॐकार-नाद सुन रहा है जो सागर गर्जन को लगभग विलीन कर रहा है और स्वामी शिवानन्द जी मेरे सम्मुख खड़े हैं।"

ठीक उसी समय उनके युवा शिष्यों में से एक ने बाबा का ध्यान छींचा कि वे स्वामी जी शिवानन्द जी नहीं, स्वामी चिदानन्द जी है।

आनंद की दीप्ति से उल्लसित और उत्साहित बाबा ने शिष्य के सुचन का स्पष्ट रूप से खंडन किया। तब उस युवा शिष्य ने साहस बटोरा और सीधे स्वामी जी महाराज को प्रश्न किया- क्या आप स्वामी शिवानन्द जी है?" स्वामी जी महाराज के विनययुक्त और शीघ्र प्रतिभाव ने संपूर्ण बातावरण जगमगा दिया और चौका दिया और हम सब के लिए वह एक महान् आश्चर्य था! अपनी विशिष्ट सरलता और नम्रता से उन्होंने उत्तर दिपा"जो बाबा इस प्रकार कहते हैं तो अवश्य यह ऐसा ही होगा।" उन्होंने बाबा को अनुनय किया"बाबा इस यथार्थता के कारण मुझमें कदापि अहंकार उत्पन्न न हो।" बाबा ने तत्क्षण उत्तर दिया--"ऐसा होना कदापि सम्भव नहीं है। उन्होंने यह बात तीन बार दहरायो। फिर स्वामी जी, अमीन पर बैठे हुए बाबा के सम्मुख, जमीन पर बैठ गये और बोले- **"यह विनम्र सेवक बाँस के टुकड़े के रूप में वनस्थली में पड़ा था। गुरुदेव ने उसे उठाया, उचित माप के अनुसार उसे तराशा-काटा, उसमें से एक चाँसुरी बनायी और**

स्वर-संगति, धुन अनुप्राणित कर दी। बाँसुरी गुरुदेव की इच्छा अनुसार सुरावली छेड़ रही है।" बाबा स्पष्टत्या द्रवित अभिभूत हो गये और अपने आश्रम में संपन्न हो रहे 'अखण्ड नाम-संकीर्तन स्थली की प्रदक्षिणा समय और भगवान् श्री चैतन्य महाप्रभुजी की स्वर्णमूर्ति की पूजा और आराधना हो रही थी, उस मंदिर में उनके दर्शन के समय स्वामी जी केहाथ अपने हाथों में रखने की अनुमति देने की विनती की। स्वामी जी महाराज ने हर्षपूर्वक अनुमति दी। बाबा के विकलांग होने से उनके एक शिष्य ने उन्हें अपने कंधों पर उठा लिया और बाबा ने पावन अखण्ड नाम संकीर्तन स्थली की प्रदक्षिणा की, पश्चात् श्री चैतन्य महाप्रभु जी के दर्शन किए और उस पूर्ण अवधि में बाबा जी ने अत्यंत आदरपूर्वक स्वामी जी का हाथ अपने हाथ में रखा।

ये दो घटनाएँ मेरे जीवन में परिवर्तन लायी। इन दो घटनाओं के समान ही कुछ अत्यधिक गहन वैयक्तिक घटनाओं ने मेरी आशंकाएँ और हिचकिचाहट विलीन करने में सहायता की तथा स्वामी जी महाराज से मेरा नाता, गुरुदेव से मेरे नाते के समान स्थापित करना अति सरल रहा। आत्मानुभूत गुरु, निःसंदेह, शाश्वत मार्गदर्शक होते हैं इस सत्य को प्रतिपादित करते हुए, निश्चित रूप से मैं आश्वस्त हुआ कि वे गुरुदेव स्वयं हैं। गुरु, महासमाधि के पश्चात् भी मार्गदर्शन का सातत्य बनाए रखते हैं।

सेवा-निवृत्त भूतपूर्व प्रिन्सिपल चोफ
कॉन्झर्वेटर ऑफ फॉरेस्टस्, उड़ीसा

दिव्य सन्निधि

-श्रीमती आभा सूचक माता जी-

मैं, स्वामी जी की अनेक अवसरों तथा प्रसंगों पर सेवा करने के लिए विशेष सौभाग्यशालिनी रही हूँ। एक बार स्वामी जी जब मुंबई में हमारे यहाँ ठहरे थे तब मैं उनकी मनोनीत ड्राइवर (कार चालक) थी; इसलिए उनके साथ अनेक बार अमूल्य समय व्यतीत करने का मेरा सुसयोग रहा। **स्वामी जी ने शब्दों द्वारा नहीं, किन्तु स्व-दृष्टान्त से हमें गहन बोध दिया। वे जीवन्त वेदान्त थे।**

वर्ष १९८७ में, मेरे पतिदेव अनिल की शारीरिक अस्वस्थता का निदान हिपाटाइटस-सी का हुआ और वे अति अस्वस्थ थे। मुझे स्वामी जी के परामर्श की आवश्यकता थी। इस कारण मैंने मुंबई से रात की फ्लाइट ली और दिल्ली पहुँची और दिल्ली से ऋषिकेश। जैसे ही मैं गुरु-निवास पहुँची छप्पनसिंह ने मुझे बुलाया और कहा-"आप मुंबई से आबी हैं, आप आभा माता जी है? स्वामी जी ने आज्ञा दी है कि जैसे ही आप चाय-पान कर लेंगी तब शीघ्र ही वे आप को मिलेगे।" अपने आगमन की जानकारी मैंने किसी को नहीं दी थी तथापि उन्हें कैसे ज्ञात हुआ यह सोच कर मैं असमंजस में पड़ गयी।" तभी स्वामी जी बाहर आये और बोले-"ओह, तो आप आ गयीं।" वे मेरे साथ आधा घंटा बैठे और आराम से बातचीत करते रहे।

मुंबई लौटने के बाद हम अनिल की बायोप्सी (biopsy) के लिए लॉस एंजिलिस-यू. एस. ए. गये। हमें कहा गया कि उन्हें लिवर सिरोसिस (Liver Cirrohsis) यकृत की बीमारी है। स्वामी जी उस समय सान डिआगो में थे। अनिल को कहने के पूर्व ही, शीघ्र बाथरूम में जा कर मैंने अश्रु बहाकर दुःख को कम करने का प्रयास किया। इतने में मेरी मेजबान ने मुझे सूचित किया कि कोई स्वामी जी फोन पर बुला रहे हैं। उन्होंने फोन पर कहा-"हाँ हाँ, मैं सब-कुछ जानता हूँ। निराश मत होना। दो दिनों में में लॉस एंजिलिस पहुँच रहा हूँ तब मुझे मिलने आना।" मैंने उन्हें इस विषयक कुछ भी बताया नहीं था। जब हम उन्हें मिले तब हमारे सम्मुख बैठ कर उन्होंने कहा - "देखिए, आपके गुरु कोई जादूगर नहीं है, किंतु एक बात में विश्वास से कह सकता हूँ कि सर्वशक्तिमान् प्रभु द्वारा आपके जितने श्वास निर्धारित किए गये हैं, आपको उन सबकी प्राप्ति होगी तो एक कम, न ही एक अधिक। इसलिए निराश नहीं होना। आपसे जिस कार्य की अपेक्षा है वह आप अवश्य करो। अपने डॉक्टर की सलाह का पालन करो। किंतु अपने जीवन का अधिकाधिक लाभ उठाओ, अपने जीवन को सुन्दर बनाओ।" उसी क्षण, मैंने अपनी सब समस्याएँ उनके चरणों में धर दी और कदापि उद्विग्न या निराश न होने का संकल्प किया। जीवन के लिए यह अति आवश्यक सीख थी।

एक बार मैं और अनिल, ऋषिकेश अपनी कार द्वारा गये। ऋषिकेश में एक बार स्वामी जी को कार में हरिद्वार ले जाने का सौभाग्य मिला। अनिल ने, जो वे स्वामी जी से पूछना चाहते थे उन प्रश्नों की एक सूची बनायी, और वह कागज अपनी जेब में रखा। ज्यों ही हम ऋषिकेश से निकले, त्यों ही स्वामी जी कार में सो गये और तब ही जाग्रत हुए जथ हम हरिद्वार पहुंचे। उन्होंने अनिल को एक दुकान से एक खास पुस्तक खरीदने को कहा। अनिल पुस्तक की खोज में भीड़-भाड़ भरी गलियों में चल कर गये। अतः वापिस आने में बीस मिनट लगे। कार में प्रतीक्षा करते समय स्वामी जी ने मुझसे पूछा-"आपके पास कागज और पेन है?" मैंने स्वीकृति सूचक सिर हिलाया। उन्होंने कहा- "लिखो।" उन्होंने जो लिखवाया, मैंने लिख लिया। जब अनिल वापस आये तब स्वामी जी ने मुझे वह कागज अनिल को सौंपने को कहा। मैंने अनिल को दे दिया। अनिल उसे पढ़ कर आश्चर्यचकित हो गये। कारण कि उसमें अनिल के सब प्रश्नों के उत्तर थे जिन्हें वह स्वामी जी से पूछना चाहते थे। वे सर्वज्ञ है, यह अनुभूति हुई।

स्वामी जी की हमारे अस्पताल में दो शल्य क्रियाएँ हुईं और उनकी सेवा करने का हमारा विशेष सौभाग्य रहा। जब मैंने उनसे पूछा- "स्वामी जी आप कैसे हैं?" तब वे कहते थे - मैं तो बड़ा अच्छा हूँ, किंतु यदि आप यह जानना चाहती हो कि यह शरीर कैसा है तो... अस्तु...।" उन्होंने अपने शरीर से अपने मन को अलग कर दिया था। उन्होंने हमें जो सिखाया उसी के अनुसार अपना जीवन और आचरण रखा- "मैं यह शरीर नहीं हूँ, मैं यह मन नहीं हूँ....।"

एक बार उनके एक भक्त ने हवाई अड्डे जाने के मार्ग में ही पड़ने बाली उनकी फैक्टरी के स्थान पर ठहरने और इस उद्योग-उद्यम को आशीर्वादित करने की याचना की थी। स्वामी जी ने नम्रतापूर्वक सहमति प्रदान की। वे जब उस स्थान पर पहुँचे तब वहाँ केवल एक छप्पर था। वहाँ भक्त और उनके परिवार के सदस्यों में से कोई कहीं भी दृष्टिगोचर नहीं हो रहा था। स्वामी जी कार में से उतरे, पूजा के लिए उचित स्थान चुना और मनःपूर्वक पूजा सम्पन्न की। उन्होंने सड़क पर से थोड़े मजदूरों को बुला कर अपने छोटे थैले में से बड़े हर्ष और प्रसन्नतापूर्वक उनके लिए प्रसाद निकाल कर बाँटा। जो करना आवश्यक था उसकी पूर्ति की अति संतुष्टि से वे कार में बैठ गये।

उनके सेवक अति परेशान थे कि उनके स्वागत हेतु वहाँ कोई भी उपस्थित नहीं था। "सोचिए तो, उन्होंने स्वामी जी को निमंत्रित किया और वहाँ स्वयं नहीं पहुँचे।" किंतु स्वामी जी ने कहा- "**उनकी आवश्यकता नहीं थी, वह तो मेरा काम था। मुझे उस कारोबार को आशीर्वादित करना था, इसलिए मेरी ही आवश्यकता थी। वे वहाँ उपस्थित थे या नहीं, इससे क्या फर्क पड़ता है?" इससे जो पाठ मैंने सीखा वह था हम अति अहंकारी और स्वार्थी हो सकते हैं, और नगण्य बातों से हम व्याकुल हो सकते हैं; किंतु स्वामी जी की नम्रता, अहंशून्यता और उदारता पूर्ण परिस्थिति पर छा गयी। उनकी विशालहृदयता ने सबको क्षुद्रता की अनुभूति कराके प्रथम लज्जा से और पश्चात् प्रेम से आपूरित कर दिया।**

श्री स्वामी जी महाराज को एक विशाल क्षेत्रीय परिषद् का अध्यक्षपद शोभायमान करने हेतु, एक शाखा द्वारा आमंत्रित किया गया। सब आयोजक अत्यधिक व्यस्त थे और स्वामी जी के निवास तथा रसोईया की आवश्यकताओं की व्यवस्था करने में सब चूक गये थे, तथा कोई खोज खबर लेने नहीं आये, किंतु श्री स्वामी जी महाराज के सेवकों ने सब प्रबंध कर लिया। स्वामी जी के आगमन पर जब मैं स्वामी जी को हवाई आहे से कार में वापिस ला रही थी तब उन्होंने मुझे कहा- "ओ जी, देखिए, यह सारा कितना अद्‌भुत है-किराये पर आपको सब-कुछ मिल सकता है, आपको खरीदने की आवश्यकता नहीं, आप उन चीजों का उपयोग कर सकते हैं और अति अल्प दामों में लौटा सकते हैं। यह अद्‌भुतता नहीं है क्या?" मैं पुनश्च उनके सकारात्मक अभिगम का, कोई भी अप्रसन्नता या द्वेष बिना हर परिस्थिति का सर्वोत्तम लाभ उठाने का, तथा जीवन के हर पल प्रसंग-परिस्थिति का आनंद उठाने का स्वामी जी का कौशल देख कर आश्चर्यचकित हो गयी। एक घंटे के पश्चात् उन्होंने कहा- "**देखिए तो, बादल सदा काले ही होते हैं, परंतु रूपहली रेखा पर विश्वस्त होना आपको सीखना अत्यावश्यक है और तब सब अनुकूल रहेगा।"**

एक बार स्वामी जी के विदेश प्रवास के समय, अत्यंत कठिन परिस्थितियों में पूज्य श्री सत्य साई बाबा के पास जाने पर जब मेरी समस्याओं का समाधान हो गया और मैंने इसके प्रति आश्चर्य प्रकट करते हुए स्वामी जी से चर्चा की तो उन्होंने मुझे समझाया कि **गुरुतत्त्व सर्वव्यापी है, देश और काल से सीमित नहीं है।**

एक बार यात्रा के उपरान्त बाथरूम के तत्कालिक उपयोग की अति आवश्यकता होते हुए भी स्वामी जी को उसकी उपेक्षा करके डायना और प्रिंस (हमारे श्वान-द्वय) के साथ प्रेम पूर्वक खेलते देख में हैरान हो गई। मेरे पूछने पर उन्होंने कहा- "बच्चे लोग तो समझेंगे कि स्वामी जी को बाथरूम में जाना है, किंतु इन श्वान-द्वय को कैसा लगेगा? वे नहीं समझेंगे कि स्वामी जी को बाथरूम में जाना है।" **वे हर एक जीवधारी-चाहे प्राणी हो या मानव की संवेदनाओं का ध्यान रखना महत्त्वपूर्ण समझते थे। उनके लिए सबमें केवल परमात्मा का ही अस्तित्व था।**

एक समय उन्हें एक अति भ्रष्टाचारी और निष्द्य प्रवृत्तियों में लिप्त व्यक्ति मिलने आया जिसके साथ स्वामी जी ने बहुत सारा समय खुशी से व्यतीत किया। उसके जाने के पश्चात् इसका कारण पूछने पर स्वामी जी ने कहा-"आप एक अस्पताल चला रही हैं?" मैंने स्वीकारात्मक प्रतिभाव दिया। "आप किन्हें ICU (सपन देखभाल विभाग) में भर्ती करती है?" मैंने उत्तर दिया" उन लोगों को जो अति बीमार हों और जिनकी विशेष देखभाल करने की आवश्यकता हो।" स्वामी

जी ने कहा-"**आप शारीरिक रूप से अस्वस्थ लोगों की देखभाल करती है, और मुझे आध्यात्मिक रूप से बीमार लोगों की ओर अधिक ध्यान देने की आवश्यकता है।" पूर्व की हुई टिप्पणी के लिए में अति लज्जित हुई। मुझे बोध हुआ कि सज्जन या दुर्जन-हर एक के लिए उनके मन में कितनी करुणा थी।**

वर्ष १९९६ में मेरी पुत्री 'तुई' के डेंग्यु-ज्वर से अति बीमार होने पर जब मैंने बहुत घबराहट में स्वामी जी को इसकी सूचना दी तो उन्होंने कहा, "उचित समय पर उचित निर्णय ले सकने में आपको जो अंतःस्फुरणा हो, वैसा ही करो। इस हेतु प्रभु से तथा गुरु महाराज से प्रार्थना करो। हमने उसे अस्पताल में ले जाने की अपेक्षा घर में ही उसके उपचार कराने का निर्णय लिया। योगानुयोग, मुंबई में केवल मात्र जो दो मरीज जीवित रहे उनमें से तुई (मेरी पुत्री) एक थी। अस्पताल में भर्ती किए गये अन्य सब मरीजों की अस्पताल में संक्रमण के कारण मृत्यु हुई। मुझे बोध हुआ कि परिस्थिति किस प्रका हमारे अनुकूल सिद्ध हुई। **आज पर्यन्त मैंने उचित समय पर सही निर्णय लेने की अंतःस्फुरणा हेतु प्रार्थना करने की वही कार्यप्रणाली धना रखी है। यह प्रणाली सब दृष्टि से सर्वोत्तम सफलता देती आयो**

स्वामी जी की महासमाधि के एक माह। पूर्व हमें देहरादून में उनके दर्शन हुए। शरीर दुर्बल बा तब भी वे प्रफुल्ल और देदीप्यमान दीखते थे तथा कहानियाँ, चुटकुलों और हास्य से भरे हुए थे। उनकी मन स्थिति अति प्रसन्न और वात्साहपूर्ण थी। पुनश्च "**मैं यह शरीर नहीं हूँ; यह मन नहीं हूँ.....।''**

उनके जीवन ने मुझे सर्वाधिक मूल्यवान पाठ सिखाए हैं। में जब भी निराशा में डूबी थी तब मैंने आशावादी रहना सीखा, जब कोई भी परिस्थिति, नियंत्रण से परे हो गयी तब मैंने शरणागत होना सीखा, जब अकेली होती थी तब सबसे प्यार करना सीखा। मेरा जो भी ज्ञान है, वह सब स्वामी जी द्वारा पाया हुआ है और वे मेरे सर्वस्व हैं। मैं उनसे परे कुछ भी देख नहीं सकती। मेरा जीवन उन्हें समर्पित है तथा मैं स्वयं को उस असीम प्रेम - जो उन्होंने मुझ पर बरसाया है की सुपात्र बनना चाहती हूँ।

सूचक अस्पताल, मालाड (पूर्व). मुंबई

मंजुल मूर्ति अन्तर्यामी स्वामी जी

-श्रीमती विमला शर्मा माता जी -

"बिना गुरुदेव-अनुकम्पा के साधक तर नहीं सकता।"

परम आराधनीय हमारे श्री स्वामी चिदानन्द जी महाराज के द्वारा सन् १९९७ में सुपुत्र गोपाल (मधुकर प्रिंगन) का यज्ञोपवीत संस्कार आश्रम में सम्पन्न हुआ। क्या ही अनुपम दृश्य था। परम

पावन सर्वश्री स्वामी कृष्णानन्द जी महाराज, माधवानन्द जी महाराज, स्वामी दयानन्द जी महामाज, स्वामी प्रेमानन्द जी महाराज, स्वामी देवानन्द जी महाराज, स्वामी शिवानन्द इत्यानन्द माता जी एवं श्रीधाम परिवार के समस्त जन पूज्य पिताश्री, माताथी, सब बहिने उपस्थित रहे। मानो टेवलोक से सारे देवी देवतागण आशीर्वाद देने पहुँचे हों। सद्‌गुरुदेव स्वामी शिवानन्द जी महाराज की अनुकम्पा से ही ये सब सभव हो पाया।

सन् १९८७ में श्री स्वामी शिवानन्द जी महाराज के जन्मशताब्दी समारोह के उपलक्ष्य में स्वामी शिवानन्द जी के डाक टिकट निकालने का सारा उत्तरदायित्व पुत्र गोपाल (जो फिलाटेलिक विभाग में कार्यरत है) और पुश्वधू सविता निगन को ही पूज्य श्री स्वामी चिदानन्द जी व पूज्य श्री कृष्णानन्द जी द्वारा सौपा गया। गुरुदेव की कृपा से यह कार्य निर्विघ्न पूरा हुआ। रंगीन डाक टिकट छपा देख सब अति प्रसन्न हुए। उनकी सुपुत्री योगिनी का नामकरण एवं मुण्डन संस्कार श्री गुरु महाराज द्वारा ही सम्पन्न हुए।

अपने जीवन में मैंने इतनी आश्चर्यजनक घटनायें देखीं कि वर्णन करने में असमर्थ हैं। श्री गुरु महाराज की उदारता, सहृदयता, अहेतुकी कृपा-भावों से हृदय भरा हुआ है। कितनी बार स्वामी जी महाराज ने हम सोते हुओं का द्वार खटखटा कर जगाया है।

एक बार मसूरी एक्सप्रेस ट्रेन में दिल्ली का रिजर्वेशन कराया था। टिकट लेने के लिए मसूरी से वापसी पर उनको घर आना था। समयाभाव के कारण घर के अन्दर आना संभव नहीं था। मैंने बोड़ा सा सूप और कस्टर्ड तैयार कर ही लिया। गाड़ी के हार्न की आवाज सुन ये (पतिदेव हरीश शर्मा जी) टिकट ले कर तुरन्त बाहर चले गये। पर आश्चर्य का ठिकाना न रहा जब देखा कि गाड़ी से उतर कर स्वामी जी महाराज "नारायणधाम' घर में अन्दर प्रवेश कर रहे हैं। आते ही कहा- "माता जी' लाइए, आपने क्या बनाया?" बैठे, आसन ग्रहण कर सूप में हालिंक्स डाल कर पीया और बिदा ली। ऐसे थे, अन्तर्यामी हमारे गुरुदेव। हम सबकी आँखों में आँसू थे, उनकी कृपा वृष्टि की खुशी में। हमारे सारे बच्चे तो उनके दीवाने रहे ही अब तो इन सबके बच्चे भी स्वामी जी महाराज के दर्शनों के लिए आतुर रहते। एक झलक दर्शन के लिए सारा-सारा दिन भूख-प्यास रोके बैठे रहते। अब तो श्रीचरणों में यही प्रार्थना है कि उनके दिखाये मार्ग पर हम बल सके। उनके सदुपदेश-

प्राण जावे मगर नाम भूलो नहीं,
दुख में तड़पो नहीं, सुख में फूलो नहीं;
नाम-धन का खजाना बढ़ाते चलो।
कृष्ण गोविंद गोपाल गाते चलो।
मन को विषयों के विष से हटाते चलो।।

-हमारे जीवन के पथ-प्रदर्शक है।

३३/३६ गुरुद्वारा रोड, देहरादून

श्री स्वामी चिदानन्द जी महाराज दिल्ली स्टेशन पर उपस्थित थे, वहाँ बहुत बड़ी संख्या में भक्त उनके दर्शन तथा आशीर्वाद के रिवार एकत्रित हो गये। उमड़ती हुई भीड़ में उनकी दृष्टि एक वृद्ध महिला पर पड़ी जो अपने शिर पर भारी बोझ लिये तथा हाथ में एक सन्दूक पकड़े बड़ी कठिनाई से चल रही थी। स्वामी जी तुरन्त ही भक्तों को एक ओर का उसके निकट तेजी से गये। उन्होंने उससे कोमल वाणी में कुछ कहा, उसके हाथ से भारी बोझ छीन लिया तथा उसे गन्तव्य स्थान तक ले जाने के लिए उसके साथ-साथ चलने लगे।

भजन

- श्री दास उत्तम जी -

(राग : चन्द्रकोष) **(ताल : दादरा-छह मात्रा)**

जय श्री चिदानन्द संत,
पतितन हितकारी।। जय...

कुष्ठिन को काया देत,
माया देत छाया देत,
हरिजन उद्धार करत,
जन-जन हितकारी।। जय...

दुखियन पर तरस खात,
विपदा परे देत साथ
ध्यान धरे विनती करत,
राम को पुकारि।। जय...

जग में नहीं ऐसो संत,
कोई न इनको पायो अंत,
'दास उत्तम' करत गान,
जियो बारम्बारी।। जय...

स्वामी शिवानन्द रमेश संगीत एवं कला विद्यालय सोसायटी, शिवानन्दनगर (मुनिकीरेती)

कहत चिदानन्द

उज्ज्वल आत्मरूप!
अमर आत्मस्वरूप!
करो नित्य अवगाहन
दिव्य ज्ञान-गंगा में।
करो नित्य स्नान
दिव्य सन्निधि सरस्वती में।
करो नित्य निमज्जन
दिव्य कृपा-यमुना में।
गुरुदेव के समाधि हाल में
केन्द्रीभूत दिव्य लहरियों में
त्रिवेणी की तरल तरंगों में।

शिवानन्द (तत्त्व) के करो दर्शन
शिवानन्द आश्रम के कण-कण में
भरो निज हृदय में दिव्य प्रेरणा
करो मूर्त अपने दृढ़ संकल्पों को
जगाओ सुप्त दिव्य संस्कारों को
अपनी शुभ वासनाओं सद् इच्छाओं को।
मुमुक्षुत्व की बुभुक्षा की जिज्ञासा को
अभीप्सा का रूप दे कर
जीवन्मुक्ति का आनन्द उठाना है
मानव-जन्म को सार्थक बनाना है।

परम आदरणीय स्वामी जी महाराज की कृपाधन्य एक संस्था- 'माँ आनन्दमयी कन्यापीठ'

-ब्रह्मचारिणी गीता बनर्जी, वाराणसी -

सात शिरोमणि परम पूज्य श्री स्वामी चिदानन्द जी महाराज ऐसे सतो की श्रेणी में आते हैं जिनकी महिमा मानस की पंक्तियाँ गाती है-

"चंदा संत समान चित हित अनहित नहि कोइ।
अंजलि गत सुभ सुमन जिमि सम सुगंध कर दोइ।।"

विश्ववरेण्या श्री श्री माँ आनन्दमयी के साथ परम आदरणीय परम बदेच श्री स्वामी विदानन्द जी महाराज का सन् १९४८ से ले कर १९८२ तक खुदीर्घ ३४ वयों से भी अधिक समय का अति मधुर आत्मिक सम्बन्ध रहा। यह अब सर्वजनविदित है। परम पूज्य स्वामी जी की थी श्री माँ के प्रति अपार श्रद्धा थी। अतः श्री श्री माँ के ही दिव्य ख्याल से प्रस्फुटित इस संस्था को उत्तरकाल में स्वामी जी का अनमोल स्नेहाशीर्वाद निरन्तर प्राप्त होता रहा। यह भगवत्स्वरूपिणी श्री श्री माँ की अपरिसीम कृपा का ही मूर्त स्वरूप है. यह निसन्देह है।

कन्यापीठ की प्रेरणा थी श्री माँ केही दिव्य ख्याल से प्रस्फुटित हुई थी, जिसको श्री श्री माँ की अनन्य सेविका ब्रह्मचारिणी गुरुप्रिया 'दीदी' के मातृकृपा-वारि से सील कर वर्तमान रूप प्रदान किया। सन् १९३८ में हरिद्वार में गंगातट पर थी श्री माँ के पवित्र सान्निध्य में इस संस्था का बीजारोपण हुआ था। सन् १९४५ में वाराणसी में गंगातट पर श्री श्री माँ के आश्रम के लिए भूमि प्राप्ति के बाद हरिद्वार में अकुरित इस पौधे को ज्ञान की नगरी, संस्कृत वाड्मय की राजधानी काशी में श्री श्री माँ आनन्दमयी कन्यापीठ के नाम से प्रतिष्ठित किया गया। कालांतर में बाराणसेय संस्कृत विश्वविद्यालय (वर्तमान सम्पूर्णानन्द संस्कृत विश्वविद्यालय) से सस्था को आचार्य तक की मान्यता प्राप्त हुई। मान्यता प्रदान कराने का श्रेय देश के मूर्धन्य विद्वान् काशी के चल-विश्वनाथ महामहोपाध्याय पडित गोपीनाथ कविराज जी को जाता है। समय के साथ-साथ संस्था विकसित हुई। यहाँ की छात्रायें दर्शन, बेदान्त, पुराण आदि विविध विषयों में योग्यता के साथ आचार्य की परीक्षा उत्तीर्ण करती रहीं। किसी-किसी ने स्वर्णपदक प्राप्त कर संस्था का गौरव बढ़ाया। आचार्य के उपरान्त शोध-कार्य कर विद्यावारिधि एवं पी-एब०डी० की उपाधि पाने का गौरव भी सस्था की स्नातिकाओं को प्राप्त हुआ। **इस संस्था का उद्देश्य है जीवनदीप को आदर्श चरित्र रूपी तेज से प्रज्वलित करना, जिससे एक आदर्श जीवन के प्रकाश में आ कर अनेक जीवन प्रकाशित हो सके।** संस्था के सम्बन्ध में श्री श्री माँ की दिव्य वाणी-बाहर पढ़ने-लिखने के लिए अनेक स्कूल-कॉलेज है, याद रारा यहाँ का उद्देश्य है-आदर्श चरित्र गठन।"

सन् १९८२, अगस्त महीने में श्री श्री माँ के शरीर के अव्यक्त धाम में प्रवेश के उपरान्त कन्यापीठ के वार्षिक उत्सव का कार्यक्रम कुछ वर्षों तक स्वर्गित रहा। कन्यापीठ के अनुकूल एक वैसे आदर्श पुरुष की आवश्यकता थी जो श्री श्री माँ के दिव्य आदशों को कन्यापीठ की ब्रह्मचारिणियों में अनुप्रेरित करने का सामर्थ्य रख सके।

ऐसी स्थिति में श्री श्री माँ के प्रति अपरिसीम श्रद्धा रखने वाले परम पूज्य स्वामी जी महाराज का नाम ही सबके मानस पटल पर अंकित हुआ।

सन् १९८६ की बात है। श्री श्री माँ के कनखल आश्रम में सथम- सप्ताह का कार्यक्रम चल रहा था। एक दिन प्रातः काल पूज्य स्वामी जी श्री श्री माँ के गंगा-तटवती भवन के बाहर बरामदे में बैठे थे। उस समय संबम-सप्ताह में सम्मिलित होने के लिए कन्यापीठ की कुछ बरिष्ठ अध्यापिकाएँ तथा कतिपय कन्यायें जो कनखल में उपस्थित थी, वे स्वामी जी को प्रणाम करने के लिए उम स्थान पर गई। बद्धेय ब्रह्मचारी श्री पानुटा भी उनके साथ रहे। उसी अवसर पर कन्यापीठ की ओर से सबने सम्मिलित रूप से पूज्य स्वामी जी से बाराणसी में आ कर वार्षिक उत्सव में सम्मिलित होने के लिए हार्दिक प्रार्थना की। इसी अवसर पर श्री पानुदा ने विनम्र भाव से स्वामी जी से निवेदन किया-"माँ के दिव्य आदर्श तथा प्रत्यक्ष निर्देशन से कन्यापीठ इतने वर्षों तक चल रहा था परन्तु आज माँ स्कूल रूप में कन्यापीठ की लड़कियों के सामने उपस्थित नहीं है। इस समय कन्याओं के सामने एक आदर्श पुरुष की विशेष आवश्यकता है, जिनको अपने सामने रख कर कन्याएँ जीवन यापन कर सकती हैं। पूज्य स्वामी जी ने यह बात बहुत गम्भीर भाव से हृदय में ग्रहण कर धीर से कहा- "Yes, you are correct पूज्य स्वामी जी के हृदय में यह बात सम्भवतः गम्भीर रूप से बैठ गई, जिसके फलस्वरूप उसी समय से स्वामी जी के साथ कन्यापीठ का एक गम्भीर सम्बन्ध स्थापित हो गया।

सन् १९८७ के प्रारम्भ में कन्यापीठ के वार्षिकोत्सव का ये रूप से आयोजन किया जा रहा था। पूज्य स्वामी जी को उक्त आशय पर विनम्र निवेदन किया गया, क्योंकि सबकी इच्छा थी कि पूज्य स्वामी जी इम अवसर पर वाराणसी में पथाा कर कन्यापीठ की कन्याओं को आशीर्वाद प्रदान करें तथा कन्यापीठ की बाल ब्रह्मचारिणियाँ स्वामी जी के श्री करकमलों से पुरस्कार प्राप्त कर अपने को धन्य महसूस करें। कन्यापीठ की विशेष प्रार्थना को स्वामी जी ने सहर्ष स्वीकार कर लिया। दिनांक १३ फरवरी, १९८७ को पूर्णमासी के दिन शाम के समय स्वामी जी आश्रम में पधारे। आपके आते ही आश्रम तथा कन्यापीठ के चारों ओर आनन्द की लहरें छा गई। इसी वर्ष से पूज्य स्वामी जी का सुदीर्घ १५ वर्षों तक लगातार कन्यापीठ के बार्षिकोत्सव के समय उपस्थित रह कर सभी को अपने स्नेहाशीर्वाद से धन्य करने का सिलसिला प्रारम्भ हुआ।

१४ फरवरी प्रातःकाल पूज्य स्वामी जी ने सर्वप्रथम कन्यापीठ में प्रवेश कर कन्यापीठ का सब-कुछ अच्छी तरह से निरीक्षण किया। आपने तीसरी मंजिल में कन्यापीठ के पूजा-अर्चना के स्थान को भी देखा। स्वामी जी बहुत ही प्रसन्न मुद्रा में रहे। कन्यापीठ के सभाकक्ष में छात्राओं को बहुत ही प्रेम से सम्बोधित करते हुए उन्होंने कहा- "**विद्यार्थी-जीवन के मुख्य तीन उद्देश्य है- विद्यार्जन, सदाचार तथा स्वास्थ्य के प्रति ख्याल रखना। अहिंसा, ब्रह्मचर्य और सत्य-ये तीन छात्राओं के लिए अवश्य पालनीय हैं। अपने हृदय में भगवान् को बसाने के लिए आत्मशोधन आवश्यक है। हृदय से अवगुणों को दूर कर सद्गुणों का उपन करना चाहिए। रोज रात्रि में आत्मानुसन्धान करें। हरेक महीने के लिए एक-एक गुण का चयन कर अभ्यास करना चाहिए।**" स्वामी जी की मधुर वाणी सुन कर कन्याएँ धन्य हुई। शाम को बार्षिकोत्सव के समय पूज्य स्वामी जी ने कहा "श्री श्री माँ के दिष्य ख्याल से जिस संस्था की स्थापना हुई, वह कभी छोटी नहीं हो सकती, वह महान् है। यहाँ पर बाल्यावस्था से ही जो बुनियाद तैयार हो रही है, वह कन्याओं के भावी जीवन की आधारशिला है। इस विद्यालय में भौतिक विद्या के साथ जो

भागवती शिक्षा दी जाती है, वह सत्य ही सराहनीय है। यहाँ के विद्यार्थी ही भारत के भविष्य है। यह संस्था भावी भारत के पथप्रदर्शन के लिए दीपक सुल्प है।"

सन् १९८८ के २६ सितम्बर को कन्यापीठ की स्थापना का ५० वाँ वर्ष पूर्ण पूर्ण हुआ था। इस उपलक्ष्य में दिनांक २१,२२ ब ३२३ अक्टूबर को तीन दिन व्यापी स्वर्णजयन्ती महोत्सव का कार्यक्रम मनाया गया, जिसमें कृपालु पूज्य स्वामी जी बाराणसी में पुनः पधारे एवं इस उपलक्ष्य में "Call of the Kanyapeeth' नामक छोटी-सी पुस्तिका स्वयं छपवा कर अपने हाथों से परमानन्द के साथ सबको प्रदान की। इसके पश्चात् जब देशों-विदेशों में पूज्य स्वामी जी की ७५ वीं जयन्ती- अमृत महोत्सव मनाया जा रहा था, उस समय भी कन्यापीठ की कन्याओं की हार्दिक प्रार्थना पर पू० स्वामी जी ने मार्च १९९१ के पहले हफ्ते में वाराणसी में पधार कर कन्याओं को धन्य किया। इस अवसर पर छोटी-छोटी कन्याओं ने भी विशेष भाव से अनुप्रेरित हो कर एक विशिष्ट माला बनाई थी, जिसको अपने गले में धारण कर स्वामी जी महाराज आनन्दविभोर हो उठे। उस माला को स्वामी जी विशेष प्रेमपूर्वक साथ ले गये और ऋषिकेश के 'गुरु निवास' में उन्होंने उसे सुरक्षित रखा। इसके उपरान्त कन्यापीठ की ओर से एक विशेष अभिनन्दन-पत्र भी बना कर पूज्य स्वामी जी के पास ऋषिकेश में भेजा गया था जिसको प्राप्त कर स्वामी जी ने विशेष प्रसन्न हो कर अपने हाथ से लिख कर उसकी प्राप्ति की स्वीकृति दी।

वाराणसी आश्श्रम स्थित आनन्दज्योतिमंन्दिर की रजत जयन्ती के अवसर पर भी १९९३ के अप्रैल महीने में पूज्य स्वामी जी वाराणसी पधारे। आनन्दज्योतिर्मन्दिर में संस्थापित श्री श्री गोपाल जी के साथ स्वामी जी का एक विशिष्ट सम्बन्ध रहा। आपके ही निर्देशन से उस समय १०८ बाल गोपाल की विशेष अर्चना की गई, जो एक अपूर्व दृश्य रहा। स्वामी जी स्वयं उपस्थित रह कर निर्देशन देते रहे। इस प्रसंग में यह उल्लेखनीय है कि पूज्य नवामी जी का श्री श्री गोपाल जी के साथ जो एक विशेष आत्मीय सम्बन्ध बहा उसका प्रत्यक्ष प्रमाण यह है कि कालान्तर में जब स्वामी जी देहरादून में कई वर्षों तक अस्वस्थ हो कर रहे उस समय भी श्रद्धेय पानुदा जब-जब स्वामी जी से देहरादून शांति निवास में मिलते थे, स्वामी जी हमेशा प्रसन्न तुद्रा में पूछते थे गोपाल जी कैसे हैं?"

सन् १९९५ के मई महीने से १९९६ मई तक श्री श्री माँ की उतवार्षिकी के अनुष्ठानों के अवसर पर भारत के विभिन्न प्रान्तों में तथा बांग्लादेश में भी अनुष्ठित विभिन्न कार्यक्रमों में पूज्य स्वामी जी की दिव्य "पस्थिति भक्तों की प्रेरणा का मुख्य स्रोत रही।

सन् १९९९ के फरवरी माह में कन्यापीठ की हीरक जयन्ती तथा यापीठ की संस्थापिका दीदी गुरुप्रिया की जन्मशताब्दी का उत्सव भी ज्य स्वामी जी की दिव्य उपस्थिति में विशेष समारोह के साथ मनाया गया।

सन् २००१ के फरवरी माह में स्वामी जी कन्यापीठ में अन्तिम बार पधारे। इस बार भी कन्यापीठ के वार्षिक उत्सव के उपलक्ष्य में उत्तर प्रदेश के तदानीन्तन राज्यपाल डा० विष्णुकान्त शास्त्री जी की उपस्थिति में पूज्य स्वामी जी के करकमलों से कन्याओं को वार्षिक पुरस्कार लेने का अबसा प्राप्त हुआ। परन्तु पूज्य स्वामी जी शारीरिक अस्वस्थता के कारण इसके पश्चात् जब स्वयं और वाराणसी नहीं आ सके, तब भी कन्यापीठ के प्रति उनका विशेष ख्याल तथा कृपा-दृष्टि निरन्तर बनी रही। इस विषय का साक्षात् प्रमाण पूज्य स्वामी जी की स्वहस्तलिखित या स्वहस्ताक्षरित

पत्रावली, जिसे इस लेख के साथ मूल रूप से सभी के अवलोकनार्थ मलय किया जा रहा है। पूज्य स्वामी जी ने दिव्यधाम में प्रवेश के कतीच छः महीना पहले भी ७ फरवरी, २००८ को पत्र भेजा था, वही इसका प्रत्यक्ष प्रमाण है। यह लिखना शायद अतिशयोक्ति नहीं होगी कि श्रद्धेय पानुदा के प्रति पूज्य स्वामी जी की एक अभूतपूर्व स्नेहदृष्टि निरन्तर बनी रही। श्रद्धेय पानुदा का स्वामी जी के पास प्रायः अवारित द्वार रहा, जिसको देख कर सभी लोग आश्चर्यचकित होते थे। पूज्य स्वामी जी ने जब किसी से भी टेलीफोन में वार्तालाप करना बन्द कर दिए थे, तब भी अपने ख्याल से पानुदा से कभी-कभी टेलीफोन के माध्यम से कन्यापीठ की कन्याओं की कुशलता के बारे में पूछते रहे। जब-जब वाराणसी से कन्यापीठ की कुछ कन्यायें तथा बरिष्ट अध्यापिकाएँ कनखल जाती थीं, तब-तब विशेष अस्वस्थता के होते हुए भी पूज्य स्वामी जी पानुदा के माध्यम से उनके कनखल में आगमन की सूचना पा कर विशेष आनन्द के साथ सबको अपने पास शांति निवास, देहरादून में बुला लेते थे। दीर्घ समय तक कन्याओं के साथ भजन, कीर्तन व विभिन्न प्रकार के उपदेश प्रदान कर सभी को आनन्दित तथा धन्य करते थे। पूज्य स्वामी जी अपने श्रीहस्त से उपस्थित सबको परमानन्द के साथ प्रसाद है कर स्वयं विशेष प्रफुल्लित होते थे। यही नहीं कई बार पूज्य स्वामी जी अपने विचित्र ख्याल से देहरादून से वाराणसी में सभी कन्याओं के लिए प्रसाद भेजते थे।

सन् २००७ नवम्बर महीने में भी पूज्य स्वामी जी विशेष अस्वस्थ रहते हुए भी श्री पानुदा के साथ हम लोगों को शांति निवास में अपने कस में बुला कर दीर्घ समय तक हम लोगों से वार्तालाप करते रहे, श्री श्री माँ के साथ स्वामी जी की अति पुरातन घटनाओं का वर्णन करते रहे। जिसे देख कर स्वामी जी के सेवक महात्मावृन्द आश्चर्यचकित रह गये कि उस समय अत्यन्त अस्वस्थता के बीच में भी पूज्य स्वामी जी ने किस तरह कल्यापोत की कन्याओं के साथ आनन्दविभोर हो कर घन्टों भर प्रसन्न मुद्रा में व्यतीत किए। यही है हमारे परम आदरणीय परम श्रद्धेय, आदर्श पुरुष पूज्य स्वामी जी महाराज ।

सन् २००८ के १६ मई को जब पूज्य स्वामी जी विशेष अस्वस्थता के कारण शय्या में सम्पूर्ण शावित रहे, तब भी श्रद्धेय पानुदा से दोपं समय तक श्री श्री माँ की विभिन्न लीलाओं का प्रसंग तथा कब, कहाँ और किम प्रकार से श्री श्री माँ का दर्शन प्राप्त हुआ था एवं कन्यापीठ की कन्याओं के विषय में बारम्बार अपना दिब्य ख्याल व्यक्त कर रहे थे।

आज आदरणीय स्वामी जी के स्नेहशीर्वाद को स्मरण कर हम श्री मां की अपरम्पार करुणाधारा में अभिषिक्त हो रहे हैं। पू० स्वामी जी तथा श्री माँ के चरणों में कोटिशः नमन करते हुए तथा पू० स्वामी जी के चरणों में यह श्रद्धा सुमन अर्पण करते हुए हम यही प्रार्थना करते हैं कि आप हमें परमार्थ-पथ के प्रति अग्रसर होने के लिए यथार्थ शक्ति प्रदान करें।

ॐ शान्तिः ।

स्वामी जी का पत्र

GOD IS TRUTH

Swami Chidananda

Sivananda Ashram.
P.O. Shivanandanagar
Dt. Tehri, U.P.
Dated २५ - ९ - ९२
बुधवार :द्वितिय

श्रीश्री माँ अनन्दमई कन्यापीठ, वाराणसी।

माँ की स्वरूप, समस्त अध्यापिका तथा छात्र कन्यायें ॐ नमो नारायणाय । आप सभी श्री पानूदास द्वारा भेजा संस्कृतभाषा में हस्ताक्षर में बना अभिनन्दन पत्रिका प्राप्त कर अति प्रसन्न हुआ। आपको बहुत धन्यवाद देता हूँ ।। हम सदा आपके सर्व कल्याण वास्ते सदैव प्रार्थना करता हूं।

श्री श्री माँ कि असीम कृपा सदा बनी रहे।

स्वामी चिदानन्द

स्वामी चिदानन्द
ॐ

SWAMI CHIDANANDA **ॐ** The Divine Life Society
(PRESIDENT) **जय माँ।** P.O. -249192, SHIVANANDANAGAR
Distt. Tehri-Garhwal, U.P., Himalayas, India
उत्तरकाशी Darel 8 - 10 - 99

आनन्दमय अमर आत्म स्वरूप !
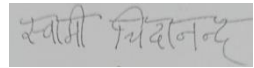
परम आदरणीय परम पूज्यश्री श्री आनन्दमयी माँ के अनुगृह तथा आशीर्वाद प्राप्त वाराणसी कन्यापीठ परिवार की प्रिय कन्या सबको इस माँ चरण सेवक स्वामी चिदानन्द के अनन्त आशीर्वाद, सादर वन्दना तथा स्नेहमय मंगल शुभकामना स्वीकार हो।

पूज्य पानूदा जी के दर्शन कर अती प्रसन्नता हुई । अतः उनसे आप सबोंकी कुशल समाचार प्राप्त कर विषेश तृप्ती है।

सदा सर्वदा श्री श्री माँ की दिव्य स्मरण चिन्तन में रहना जी ॥ जय श्री विश्वनाथ ।

जय माँ ।

आपका मातृ-चरणमे स्वामी में

स्वामी चिदानन्द

स्वामी चिदानन्द
८-१०-९९
ॐ

GOD IS TRUTH
ॐ

SWAMI CHIDANANDA

Sivananda Ashrm
P.O. Shivanandanagar-249 192
Distt. Tehri Garhwal, UA
09 **फरवरी** 2004

श्री श्री आनन्दमयी माँ कन्या पीठ के बार्षिक उत्सव कार्यक्रम के लिए शिवानन्द आश्रम ऋषिकेश के स्वामी चिदानन्द जी महाराज का सन्देश।

ॐ माँ श्री माँ जय जय माँ।

उज्ज्वल अनर आत्म स्वरूप!
परम सौभाग्यशाली मेरी प्रिय शिक्षार्थी कन्याओं,

ॐ नमो नारायणाद! जय श्री माँ!

परम पिता परमात्मा के दिव्य अनुग्रह आप समस्त लोगों पर सदैव बना रहे। प्रत्यक्षतः भगवान् श्री काशी विश्वनाथ श्री विश्वेश्वर अपना कृपा कटाक्ष आप सभी के ऊपर रखते हुए, आप सभी को दीर्घ आयु, आरोग्य, विद्या, बुद्धि तथा आपके जीवन में सम्पूर्ण सफलता प्रदान करें।

आज माप पूर्णिमा है। जिस प्रकार पूर्णिमा के दिवस बन्द्रमा अपने पूर्ण प्रकाश से चमकता है, उसी प्रकार आप सब अपने जीवन में पूर्ण प्रकाश-युक्त होकर श्रीमद् भगवद् गीता में बताये हुये दैवी संपदाओं से प्रकासमय बनें।

पाश्चात्य के एक अंग्रेज कवि ने कहा है "सागर के गहरे तल की गुहाएँ अनेक प्रकार की प्रकाशमय अमूल्य मणियों को अपनी गहराइयों में रखा करती है, इसी प्रकार से आपके भीतर भी अनेक सदगुण, चरित्र सौन्दर्य तथा क्षमताएँ, छिपी हुई है। आप इन समस्त क्षमताओं को बाहर निकालते हुये इन्हें विकसित करते हुये स्वभाव में, व्यवहार में, तथा दैनिक जीवन के क्रिया-कलाप में, काया, वाचा, मनसा द्वारा प्रकट करना चाहिये। यही ऊँ ची सभ्यता तथा शिष्टाचार का सारभूत तत्त्व है और उसका सत्वा स्वरूप है। एतद एवं जीवन में सफलता का रहस्य है।

जैसे धरती पर इस भूमि के नीचे गहरी खनियों में हीरक जैसे अमूल्य रत्न विराजमान है और चाँदी-मोने जैसे अत्यन्त मूल्यवान् धातु भी विद्यमान हैं वैसे ही प्रत्येक के भीतर गुप्त रूप में एवं सुप्त रूप में एक अत्रि आश्रम की सती अनसूया है। जैसे ही सत्यवान की सहधर्मिणी एक सावित्री भी है। तथैव एक मीराबाई भी है, जनाबाई भी है (महाराष्ट्र के पंढरपुर के सन्तों में एक है।) आपके हृदय में झाँसी रानी जैसी शूरता और बीरता, पैर्य और धीरता है। उत्कृष्ट कवयित्री महादेवी वर्मा के जैसी काव्य कला भी है। अव्यक्त रूप में इंदिरा गाँधी है। इसी प्रकार मागरट बेचर, गोल्डा मायर, मेघावती (जकार्ता इन्डोनेशिया बासी) राजनीतिक क्षेत्र की क्रान्तिकारी व्यक्ति विशेष सूक्ष्म तथा गुप्त रूप में है। गायिका लता मंगेशकर जैसी परम श्रेष्ठ कलाकार तथा उनकी बहिन आशा भोसले भी है। उनकी रसभरी, कर्णप्रिय तथा आनन्द दायक मधुरता आपके अन्दर है। भारतवर्ष के केरल प्रदेश की ओलम्पिक प्रतियोगी सुश्री पी. टी. उषा के समान वायु बेग भी आपके व्यक्तित्व में है। इन समस्त गुप्त-सुप्त क्षमताओं एवं अव्यक्त सूक्ष्म शक्तियों की अभिव्यक्ति ही विद्याभ्यास का उद्देश्य है। अपनी आन्तरिक शक्तियों को सक्रिय रूप में बहिरंग क्षेत्र में प्रकट करना विद्यार्थी का कार्य है। उसका कार्यक्षेत्र विद्यालय अथवा विद्यापीठ है। आदर्श विद्यार्थी को इस पूर्वोक्त कार्य में सदैव रत रहना चाहिए।

चिदानन्द के इस सन्देश को सुनो! समझो ! और कार्यरूप में परिणत करो। परम आराधनीय श्री श्री माँ आपको सफलता प्रदान करें।
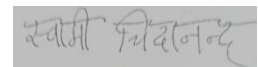
जय श्री माँ!

आपका अपना ही

Swamibhidanandin
9-2-2004

भगवदीय

स्वामी चिदानन्द

(स्वामी चिदानन्द)

GOD IS TRUTH

ॐ

SWAMI CHIDANANDA

"Shanti Niwas
24.Teg Bahadur Road-1
Dhalanwala.
DEHRADUN-248001
(PH.0135-2670539)

दिनोंक 06.11.2006

सेवा में

श्री श्री आनन्दमई मॉ कन्यापीठ,
C/o श्री पानुदा ब्रम्हचारी
शिवाला घाट.
बधैनी, वाराणसी।

अमर अत्मस्वरूप।

मेरे प्यारे आध्यात्मिक पौत्रियों को मेरा प्यार भरा प्रणाम। श्री श्री परमपिता परमात्मा की दिव्य कृपा से और श्री श्री माँ के "ख्याल से मैं यह पत्र लिख रहा हूँ। इस पत्र को आप सभी छोटी ओर बड़ी कन्याएं प्राप्त करें।

आप सब भगवान श्री काशी विश्वनाथ के दिव्य अनुग्रह प्राप्त करें। आप सभी दीर्घायु प्राप्त करें, आपका स्वास्थ्य पूर्णतय ठीक रहे और आप सभी के मन और हृदय में शान्ति और सुख का सदा अनुभव हो।

मैं विश्वास करता हूँ, आप सभी की दिनचर्या ठीक चल रही होगी। आपके सध्यावन्दन तथा देव पूजा प्रतिदिन ठीक चलती होगी तथा आपका संस्कृत अध्ययन भी इसी प्रकार चल रहा होगा! मैं चाहता हूँ कि आप सभी अपनी अध्यापिकाओं की आज्ञाकारी vec ET तथा आप सभी उनके पाठा दत्तचित्त होकर सुनें और उनका आदर व सम्मान करे। पूज्य श्री स्वर्गीय गुरूप्रिया दीदी के आर्शीवाद आप सभी कन्याओं को प्राप्त हो।

मै सदा आप सभी को याद करता हूँ और आपका कल्याण-मंगल चाहता हूँ।

यह पत्र समाप्त करने के पूर्व इस सत्य को बताना चाहता हूँ कि आपका यह शरीर भगवान का मन्दिर है। इस दिव्य मन्दिर में भगवान अपने सिंहासन में आपके हृदय में विराजते हैं। भगवान सभी प्राणियों के हृद-कमल-वासी है. इसलिए आप सभी को भला कार्य करना है। चरित्र मानव जन्म का सबसे उत्तम और श्रेष्ठ अमूल्य धन है। इसी शरीर से आपको निरन्तर भले कार्य तथा परोपकार करना है। परोपकार के लिए ही भगवान ने आपको मानव शरीर दिया है। संस्कृत

भाषा में यह बात इस प्रकार अभिव्यक्त की गयी है, "परोपकारार्थम् इदम शरीरम" । परोपकार से आपके पूण्य का कोश दिन-प्रतिदिन बढ़ता जाएगा।

आप सभी परमपिता परमात्मा के दिव्य आर्शीवाद के भागी बने।

यह उपरोक्त बात कहते हुए मैं इस पत्र को विराम देता हूँ। पुन मेरे प्रेम पूर्ण आर्शीवाद व प्रणाम सहित,

आपका अपना
श्री श्री आनन्दमई मों के
श्री चरणों में

स्वामी चिदानन्द
ॐ
(स्वामी चिदानन्द)

SERVE LOVE MEDITATE REALISE

महामानव के सान्निध्य में

-डॉ० महाराज नारायण रस्तोगी जी-

महामानव (Superman) स्वामी चिदानन्द जी महाराज से मेरा परिचय तथा सम्पर्क सन् १९४९ में हुआ जब मैं १२ वीं कक्षा का छात्र था। गुरुदेव स्वामी शिवानन्द जी महाराज की कुछ पुस्तकें पढ़ कर तथा उनसे पत्र-व्यवहार करने के बाद उनकी प्रेरणा से में शिवानन्दाश्रम आया था। ऊपर पहाड़ी पर जहाँ अब पुस्तकालय है, उसके नीचे मुझे निवास के लिए कमरा मिला था; परन्तु अपने सन्दूक को ऊपर ले जाने में कुछ कठिनाई अनुभव कर रहा था। स्वामी चिदानन्द जी जो मेरे साथ मार्गदर्शक के रूप में चल रहे थे, वे तुरन्त समझ गये और अपनी स्वाभाविक सरलता और दया के साथ सन्दूक मेरे हाथ से ले कर चलने लगे। वे उस समय भी डिवाइन लाइफ सोसायटी के महासचिव थे, परन्तु उनके महान् व्यक्तित्व को मैं बाद में ही समझ पाया। उन दिनों मैं रात्रि के भोजन में दूध और फल ही लेता था। जब मैंने यह बात उनसे उनके कमरे में मिल कर कही तो उन्होंने अपने फल के रस का गिलास मुझे दे दिया तथा दूध-फल की व्यवस्था मेरे लिए कर दी। गुरुदेव की प्रेरणा से मैंने अपना पहला लेक्चर समन्वय योग "Synthetic Yoga" विषय पर शिवानन्द कुटीर में सत्संग के समय दिया था। स्वामी चिदानन्द जी महाराज ने मेरे लिखित लेक्चर को पढ़ कर अपने हाथ से उसे टाइप कर के मुझे दिया।

स्वामी जी जब अपनी प्रथम विदेश यात्रा से वापिस आए तो मैं उनके कमरे में ब्रह्मचर्य और वैवाहिक जीवन से सम्बन्धित कुछ चर्चा के लिए गया था। उन्होंने बताया कि पाश्चात्य देशों में भी दो प्रकार के सन्त है-विवाहित और अविवाहिता महात्मा गांधी के समान उनकी सत्यता और स्पष्टता उनके भावों से झलक रही थी जब उन्होंने कहा कि " nearly impossible to control the sex instinct", सृष्टिकर्ता रे अपनी सृष्टि को चलाने के लिए काम-शक्ति को अत्यन्त प्रबल बना रखा है।

स्वामी जी बरेली में ब्रिगेडियर सब्बरवाल जी के घर पर कुछ दिनों का सत्संग कार्यक्रम करने आये थे जिसकी मुझे सूचना नहीं थी। रास्ते में जाते हुए अचानक मैंने स्वामी जी को आनन्द आश्रम मन्दिर के पास देखा और नतमस्तक हो उनसे मैंने अपने घर पर आने तथा सत्संग-कार्यक्रम के लिए प्रार्थना की। उन्होंने अत्यन्त सरलता और आत्मीयता के साथ अपने छोटे गुरु-भाई की प्रार्थना तुरन्त स्वीकार की और दर्शकों तथा श्रोताओं के अनुकूल ज्ञान और भक्ति की वर्षा की।

महामानव स्वामी चिदानन्द जी के व्यक्तित्व में कर्म, भक्ति, जन, दया, प्रेम, सेवा और व्यावहारिक कुशलता का समन्वय था और उनमें मुझे गुरुदेव स्वामी शिवानन्द जी महाराज-जिनकी कृपा और सम्पर्क भी मुझे प्राप्त हुआ का रूप ही दिखाई देता था।

पूर्व प्रोफेसर एवं अध्यक्ष, दर्शन-शास्त्र
बरेली कालेज, रूहेलखण्ड विश्वविद्यालय

'गुरु-कृपा ही केवलम्'

-श्री गंगाधर बोधा जी -

गुरुदेव श्री स्वामी चिदानन्द जी महाराज के प्रति अपनी स्नेहमयी स्मृतांजलि के रूप में उनकी कृपा के कुछ संस्मरण मैं यहाँ प्रस्तुत कर रहा हूँ:

गुरुदेव श्री स्वामी चिदानन्द जी महाराज का प्रथम दर्शन मुझे सन् १९६५ में हुआ जब वे जयपुर में 'राम नवमी महोत्सव' के अवसर पर राम मन्दिर में पधारे थे। पूज्यपाद श्री स्वामी चिदानन्द जी महाराज का व्यक्तित्व देख कर में बहुत प्रभावित हुआ और नतमस्तक हो कर उनके चरणों में प्रणाम किया। वे मुझे देख कर हल्का-सा मुस्कराए और मैं कृतार्थ हो गया। उन नवरात्रों के नव दिनों में न केवल उनके प्रवचन सुने अपितु प्रातःकाल उनके सान्निध्य में ध्यान भी किया। स्वामी जी महाराज ने अपने ओजस्वी प्रवचन में कहा- "इस मनुष्य-जीवन को सार्थक बनाने के लिए सेवा, समर्पण और साधना की आवश्यकता है-प्राणी मात्र की सेवा करना, पूज्यजनों के प्रति समर्पण भाव रखना और आत्मोन्नति के लिए साधना करना। मैं चाहता हूँ कि आपमें से प्रत्येक व्यक्ति इस संसार को छोड़ने से पहले जीवन के लक्ष्य को प्राप्त कर ले और आप्तकाम हो कर जाए।" इन शब्दों से मेरे मन में विचारों की तरंगें उठने लगीं और अपने जीवन को व्यर्थ व्यतीत होता देख कर एक निश्चयात्मक विचार उठा कि मुझे साधना करके अपने जीवन को सार्थक बनाना है। परन्तु प्रश्न उठा। कि साधन कैसे करूँ? मेरा मार्ग-दर्शन कौन करेगा? मैं इस बारे में सोचता ही रहता था। एक दिन मेरी बहन गंगा ने आ कर कहा- "गुरुपूर्णिमा के अवसर पर शिवानन्द

आश्रम में 'साधना सप्ताह' होने वाला है, आपका उस शिविर में भाग लेने का विचार हो तो दोनों ऋषिकेश चलें।" मैंने इस अवसर का लाभ उठाया।

सन् १९६५ का यह साधना सप्ताह हमारे लिए वरदान सिद्ध हुआ। मेरा तो जीवन ही बदल गया। मैंने प्रातः चार बजे उठना आरम्भ कर दिया और नित्य जप, ध्यान और स्वाध्याय करने लगा। मेरी साधना में नियमितता आई जिससे कुछ प्रगति होने लगी। सन् १९६६ में पुनः साधना सप्ताह में भाग लेने गया। प्रात:काल के सत्संग में स्वामी चिदानन्द जी महाराज ने कहा- "इस वर्ष साधकों के फार्म अधिक आए हैं। सबको साधना शिविर में स्थान नहीं दे पाएँगे, सीमित साधक चुने जाएँगे।" मेरे मन में विचार आया हम इतनी दूर से आए हैं, अगर साधना में बैठने नहीं दिया गया तो हमारा आना व्यर्थ हो जाएगा। में ऐसे सोच ही रहा था कि भ्रमध्य में विद्युत् की करा जैसा चक्र की भांति घूमता हुआ महसूस हुआ और मेरी चेतना लुप्त-सी हो रही थी। मैंने अपने को सचेत किया तो देखा स्वामी चिदानन्द जी महाराज की दृष्टि मेरी ओर थी जो उन्होंने हटा ली और मैं सामान्य हो गया। परन्तु दूसरे ही क्षण मैंने देखा स्वामी जी पुन: मेरी ओर देख रहे हैं और वैसा अनुभव मुझे फिर होने लगा। मैं अचेत हो गया और उसी अचेत अवस्था में मैंने ब्रह्मलीन स्वामी शिवानन्द जी महाराज को देखा। वे कहने लगे "वत्स, चिन्ता मत करो, तुम्हें साधना सप्ताह में बैठने की अनुमति मिल जाएगी।" जब मुझे चेतना हुई तो देखा स्वामी प्रेमानन्द जी महाराज मेरे वक्षः स्थल को दबा रहे थे और मुझे धीरे से कहा- "आज किसी से बात मत करना और हो सके तो मौन रहना।" उस समय मुझे कुछ समझ में नहीं आया-साधना की अनुमति हम सबको मिल गई थी। परन्तु बाद में स्वामी जी के मार्गदर्शन से पता चला कि उस अचेत अवस्था में स्वामी जी महाराज ने मेरे अन्त: करण को पूरा पढ़ लिया था।

सन्न् १९६७ में साधना सप्ताह के बाद जयपुर आ कर मैंने स्वामी जी महाराज को पत्र लिखा कि गोपी को उसके ननिहाल पहुँचा कर हम सकुशल जयपुर पहुँच गये। उस पत्र में मैं लिखना चाहता था कि मेरा ध्यान अभी तक ठीक नहीं लग रहा है, परन्तु मैंने यह बात नहीं लिखी। स्वामी जी ने उस पत्र के उत्तर में लिखा-"मन बड़ा चंचल है, वह इधर-उधर भागता रहता है, उसको वश में करने के लिए साधना की आवश्यकता होती है। साधना में क्रमिक प्रगति होती है अतः उसको दीर्घकाल तक नित्य श्रद्धा और विश्वास के साथ करना चाहिए। ध्यान आरम्भ करने से पहले कुछ स्तोत्रों का पाठ कीजिए, प्रार्थना और मन्त्रों का उच्चारण कीजिए जिससे मन कुछ शान्त हो, तत्पश्चात् जप और ध्यान कीजिए। ऐसा करने से मन ध्यान में लगेगा। कहने का तात्पर्य यह है कि जो बात मैंने केवल सोची, लिखी नहीं उस बात को भी स्वामी जी ने पढ़ लिया और मार्गदर्शन दिया। यह गुरुदेव की कृपा ही थी।

सन् १९७३ में दिव्य जीवन संघ, जयपुर शाखा के शिव मन्दिर में मूर्ति-स्थापना के अवसर पर स्वामी जी जयपुर पधारे थे। मूर्तियों की शोभा-यात्रा निकाली गई थी। शोभा यात्रा के दौरान स्वामी जी महाराज की ऐसी कृपा हुई कि उन्होंने प्रोफेसर ग्रोवर (वर्तमान में स्वामी योगवेदान्तानन्द सरस्वती जी) से कहा-"शोभा यात्रा के तुरन्त बाद मैं गंगाधर बोधा के घर जाऊँगा।" यात्रा समाप्त हुई तब मुझे संदेश मिला कि- 'स्वामी जी आपके घर आ रहे हैं।' मैं यह सुनकर आश्चर्य के साथ गद्गद् हो उठा। स्वामी जी पर पर पधारे और कहा कि पहले आपके परिवार के साथ फोटो खिंचवाऊँगा। सभी सदस्य तुरन्त लॉन में आ गये, परन्तु माता जी पीछे थीं। मैंने आवाज लगाई- 'अम्मां जल्दी आओ।' यह सुन कर स्वामी जी ने आवाज लगाई, 'अम्मां जल्दी आओ। यह सुनकर माता जी प्रसन्नता से रोमांचित हो गईं। फोटो के बाद स्वामी जी ने कीर्तन किया और उस

कमरे में ऐसी आध्यात्मिक तरंगों का संचार हो गया कि बाद में जब हम उस कमरे में जाते थे तो मन एकदम शान्त हो जाता था। इसलिए कई महीनों तक हम परिवार के साथ उस कमरे में रात्रि में सत्संग करते रहे। इसको कहते हैं- 'अहेतुकी कृपा'।

स्वामी जी महाराज मन की बात बिना कहे जान जाते थे। एक बार जब स्वामी जी महाराज जयपुर में आये हुए थे तब बहन गंगा, गोपी और मैंने स्वामी जी की पाद-पूजा करने की अनुमति ली। पाद-पूजा के बाद स्वामी जी ने कहा- 'मन्त्रदीक्षा के लिए सावधान हो जाओ, मेरे मन में विचार आया कि मैं तो अभी मन्त्रदीक्षा के लिए तैयार नहीं हूँ, मुझे बाद में ही दीक्षा लेनी चाहिए। स्वामी जी ने गंगा-गोपी की ओर मुख करके कहा- "मैं मन्त्र बोलूँगा, तुम मेरे साथ इस मन्त्र को दोहराना।" तब गंगा बोल उठी-"स्वामी जी, भाई साहब का इष्ट तो अलग है।" स्वामी जी ने तुरन्त कहा- "इनको अभी दीक्षा नहीं लेनी है, वे बाद में लेंगे।" में आश्चर्य बकित रह गया कि स्वामी जी को मेरे मन की बात का कैसे पता चला। उसके बाद जब गंगा और गोपी को स्वामी जी मन्त्रदीक्षा दे रहे थे तब मेरे शरीर में भी शक्ति का संचार हो रहा था, मेरे रोम खड़े हो गये, कान लाल हो गये, मन पुलकित हो रहा था, और पूरा शरीर जैसे स्पन्दित हो रहा था। यह गुरु-कृपा से एक प्रकार का शक्ति-पात ही था।

स्वामी जी महाराज जब मंच पर आ कर विराजमान हो जाते थे, तब नमस्कार करने के बाद सामने जनता की ओर धीरे-धीर दृष्टि घुमाते थे। उनको पत्ता लग जाता था कि किस व्यक्ति के मन में क्या प्रश्न है और फिर अपने प्रवचन में उन प्रश्नों के विषय को सम्मिलित करते हुए जब उत्तर देते थे तब उनकी दृष्टि उसी व्यक्ति की तरफ होती थी जिसका वह प्रश्न था। मैंने इस बात का कई बार अनुभव किया। ऐसा अनुभव अन्य सदस्यों को भी हुआ था।

सन् १९९२ में शिवानन्द आश्रम में भागवत कथा एवं सम्मेलन का आयोजन था। वहाँ एक दिन मेरी तबीयत खराब हो गई और प्रात:काल ध्यान के समय अचेत हो गया। मुझे आश्रम के अस्पताल में भर्ती किया गया। स्वामी चिदानन्द जी महाराज प्रतिदिन एक ब्रह्मचारी को मेरे पास भेजते थे जिसके हाथ एक दिन हार्लिक्स (Horlicks) की बड़ी बोतल भेजो तथा हर रोज दूध और फल भेजते रहे। एक दिन वह ब्रह्मचारी स्वामी जी के हाथ की लिखी एक पर्ची (Slip) लाया जिसमें लिखा था, "आज तुम स्वस्थ हो जाओगे।" वास्तव में गुरु कृपा से मैं उसी दिन ठीक हो गया।

मेरी बेटी प्रेमलता बचपन से ही मंदबुद्धि थी। वह बड़ी होती जा रही थी और मेरी चिन्ता भी बढ़ती जा रही थी कि अगर यह ऐसी ही रही तो आगे का जीवन उसका कैसे बीतेगा। स्वामी चिदानन्द जी महाराज जब जयपुर पधारे तब मैं अपनी बेटी को उनके पास ले गया और प्रार्थना की कि इस मंदबुद्धि लड़की को आशीर्वाद दे कर उसका कल्याण करें। लड़की को देख कर स्वामी जी ने पूछा कि इसके जन्म के समय प्रसव की समस्या हुई थी क्या और इसको औजारों से निकाला गया था क्या? मैंने कहा "जी हाँ, स्वामी जी। तब स्वामी जी ने कहा- "तुम इतने वर्ष कहाँ थे, पहले क्यों नहीं कहा? छोटी आयु में शीघ्र ठीक हो जाती, अब इसको ठीक होने में कुछ समय लगेगा।" फिर कहा- "कल प्रात:काल इसको यहाँ से आना।" दूसरे दिन स्वामी जी महाराज ने उसको एक मन्त्र जपने के लिए दिया और कुछ दवाइयाँ लिख कर दी। एक दवाई जयपुर में मिल नहीं रही थी। स्वामी जी ने दिल्ली से उस दवाई की एक साथ छः शीशियाँ पार्सल करके भेजीं। स्वामी जी महाराज की असीम कृपा से मेरी बेटी ठीक हो गई।

स्वामी जी महाराज अपने प्रवचनों में कहते रहते थे कि साधकों को अपनी साधना के सम्बन्ध में कुछ भी समस्या हो अथवा प्रश्न पूछना हो तो उसे गुरु से पूछना चाहिए। गुरु उसकी सब बाधाएँ दूर कर सकते हैं। परन्तु आश्रम में उनके ब्रह्मचारी, डाक्टरों के निर्देशानुसार, स्वामी जी के स्वास्थ्य को देखते हुए, लोगों को उनसे मिलने नहीं देते थे। ऐसी हालत में गुरु से मार्गदर्शन प्राप्त करने के लिए क्या किया जाए? यह प्रश्न शिष्यों के मन में उठता रहता था। एक बार आश्रम में बीकानेर की माता जी श्रीमती स्वर्णलता अग्रवाल (ब्रह्मलीन विष्णुशरणानन्द माता जी) ने यहाँ प्रश्न स्वामी जी महाराज के सामने रखा तो गुरुदेव ने उत्तर दिया- "तुम जहाँ भी हो वहाँ मुझे बाद करो तो मैं वहीं तुम्हारा मार्गदर्शन करूँगा।" तब माता जी ने पुनः पूछा- "आपके शिष्य तो हजारों में है, अगर सब आपको याद करने लगे तो कहाँ-कहाँ जाएँगे?" स्वामी जी ने तुरन्त कहा- "वह स्थान बताओ जहाँ चिदानन्द नहीं है।" यह सुन कर सभी स्तब्ध रह गये। मैंने इस बात पर चिन्तन किया तो अन्दर से समाधान मिला कि जो व्यक्ति आयसाक्षात्कार कर लेता है, वह सर्वव्यापक ब्रह्म से एकाकार हो जाता है अर्थात् यह भी सर्वव्यापक हो जाता है। वह अपने को कहीं भी प्रकट कर सकता है। दूसरी चात यह समझ में आई कि शिष्य जब गुरु से मन्त्रदीक्षा लेता है तब शब्द-ब्रा के रूप में गुरु-मंत्र के साथ शिष्य के अन्दर प्रवेश करता है और शिष्य को साधना-पथ पर मार्गदर्शन करता रहता है। यह जान लेने के बाद जब भी कोई कठिनाई आई तो अन्दर झाँका, गुरुदेव का ध्यान किया और समाधान पा लिया। गुरु के मार्गदर्शन के अनुसार चलने पर गुरु कृपा प्राप्त होती है और गुरु-कृपा से शास्त्र भी कृपा करने लगते है जिससे आध्यात्मिक ग्रन्थों का अध्ययन करते समय उनका सही अर्थ समझ में आने लगता है। गुरु और ग्रन्थों के निर्देशानुसार जीवन में परिवर्तन लाने से ईश्वर-कृपा भी सम्भव है। अतः गुरु-कृपा से सब-कुछ सम्भव हो जाता है।

जय गुरुदेव।

२३८-वी, पार्वती मार्ग, राजा पार्क
जयपुर-२०२००४
(राजस्थान)

महान् संत और युगद्रष्टा स्वामी चिदानन्द

- श्री सत्य प्रसाद बडोला (पत्रकार) -

गुरुदेव ब्रह्मलीन स्वामी शिवानन्द सरस्वती ने अपने परम शिष्य "चिदानन्द सरस्वती' के लिए शुरूआती दौर में ही (पचास के दशक में) जो भविष्यवाणी की थी वही अक्षरशः सत्य हुई। गुरु परम्परा का पालन करते हुए स्वामी चिदानन्द ने आध्यात्मिक क्षेत्र में जो स्थान पाया, विरले ही वहाँ तक पहुंच पाते हैं। यहाँ यह कहना अतिशयोक्ति न होगी कि स्वामी चिदानन्द अपने गुरुदेव की उम्मीदों पर एकदम खरे उतरे। जीवन के अन्तिम पड़ाव में उन्होंने दिव्य जीवन संप के जरिये

अध्यात्म और मानव-सेवा को आधार बना कर अपने आराध्य देव स्वामी शिवानन्द के बताये मार्ग पर चल कर मानव-कल्याण को जीवन का प्रथम उद्देश्य बनाया।

सत्य, प्रेम, सेवा व करुणा की साक्षात् मूर्ति स्वामी चिदानन्द जी के निकट जो भी आया, वह उनका प्रिय हो कर रह गया। उनके पास आने वालों में कोई छोटे-बड़े का भेद नहीं रहा। जाति, धर्म व वर्ग का भेद स्वामी चिदानन्द के स्वभाव में नहीं रहा। सामने वाले के। भाव जानने पर र उसी के अनुकूल अपनी बात कहते थे। मेरा तो यह सौभाग्य रहा कि बहुत छोटी १२ साल की उम्र से पूज्यपाद स्वामी चिदानन्द जी के श्रीचरणों में रहने का अवसर मिला। आज स्वयं जो भी हूँ, यह उन्हीं का आशीर्वाद है। स्वामी जी को बहुत ही निकट से देख, उनके सम्बन्ध में कुछ लिखना या बोलना अति कठिन है। वे दया व करुणा के सागर दीन-दुःखियों के मसीहा बन कर प्रत्येक प्राणी में अपने आराध्य देव का दर्शन करते थे। यह एक अटूट सत्य है जो हमने उनके साथ रह कर देखा तथा अनुभव किया, जो कोई भी स्त्री-पुरुष अपनी समस्या को ले कर महाराज के पास गया, समस्या का समाधान ले कर ही लौटा। उन्होंने कभी किसी को निराश नहीं होने दिया। जो भी उनके संपर्क में आया, उसे महाराज जी का भरपूर प्यार व स्नेह मिला।

वे समाज के कमजोर वर्ग के लोगों के लिए अवतार बन कर आये। कई दशकों तक दिव्य जीवन संघ के परमाध्यक्ष पद पर विराजमान रहे, लेकिन लेशमात्र भी उनमें यह भावना नहीं बनी कि में अन्तर्राष्ट्रीय ख्याति प्राप्त दिव्य जीवन संघ, शिवानन्द आश्रम के प्रमुख पद पर हैं। इतने भारी आध्यात्मिक दायित्व को निभाते हुए भी स्वामी चिदानन्द का अपना पूरा जीवन प्राणी मात्र की सेवा के लिए मिसाल बन चुका था। स्वामी चिदानन्द सरस्वती जी का जीवन-दर्शन युगों-युगों तक मानव जीवन के लिए प्रेरणा बन कर रहेगा। वे साधारण मनुष्य नहीं थे, बल्कि उन्हें युगपुरुष के रूप में हमेशा याद किया जायेगा। स्वामी चिदानन्द कुष्ठरोगियों के बीच लम्बे समय तक निवास करते रहे। उन्हें स्वावलम्बी बनाने के लिए ठोस काम हुए, जिसका फायदा आज बड़ी संख्या में कुष्ठरोगियों को मिल रहा है।

जन-स्वास्थ्य के क्षेत्र में जो काम शिवानन्द आश्रम ने किया या अपने स्थापना काल से शुरू किया, उसमें स्वामी चिदानन्द का विशेष योगदान है। कुष्ठ निवारण केन्द्र खोलने की बात हो या फिर शिवानन्द आश्रम में पर्वतीय क्षेत्र के बच्चों को पुरातन व आधुनिक शिक्षा प्राप्त कराने के लिए नये-नये प्रयोग किये। युवा वर्ग के लिए सरल भाषा में धार्मिक साहित्य के प्रचार-प्रसार में स्वामी चिदानंन्द जी को विशेष रुचि रही। हिन्दूधर्म-दर्शन तथा भारतीय संस्कृति शिक्षा के साथ ही हिन्दूधर्म-दर्शन तथा भारतीय संस्कृति और योग को पश्चिमी जग अमेरिका, दक्षिण पूर्व एशिया के साथ ही देश के नौजवानों तक अनुकूल एवं सरल विधि से से पहुँचाने पहुँचा का काम स्वामी जी ने किया। धर्म और सांप्रदायिकता के बीच के फर्क को आम लोगों के बीच सुस्पष्ट करने की कोशिश की। उन्हें ईसामसीह और हजरत मुहम्मद से उतनी ही मोहब्बत थी जितनी राम और कृष्ण से।

चिरस्मरणीय स्वामी चिदानन्द

संत का जीवन समाज के उत्थान और कल्याण के लिए ही होता है, इसका प्रत्यक्ष दर्शन स्वामी चिदानन्द सरस्वती में देखा ! अपने पाम गुरुदेव स्वामी शिवानन्द जी महाराज के बताए हुए आध्यात्मिक मार्ग का अनुकरण करते हुए स्वामी चिदानन्द सरस्वती जी, जीवन पर्यंत दीन-दुखियों

तथा जरूरतमन्द लोगों को अपना प्यार और स्नेह बाँटते रहे। उनके निकट रहते हुए जो खुद देखा या अनुभव किया, कुछ उदाहरण प्रस्तुत करना अपना अहोभाग्य समझता है। बहुत कम उम्र में ही मुझे महाराज जी के सानिध्य में रहने का सौभाग्य मिला।

वर्ष १९७९ की बात है। मैं गम्भीर रूप से बीमार हो गया था, गुरु निवास के पास शत्रुघ्न मन्दिर में एक कमरे में रहता था। सूचना पाते ही स्वामी जी डा. के. पी. सिंह, जो उस वक्त ऋषिकेश स्थित सरकारी चिकित्सालय में सेवारत थे, को ले कर कमरे में पहुँचे, मेरी गम्भीर हालत देख कर महाराजश्री ने डा. के. पी. सिंह को निर्देशित किया कि इलाज में कोई कमी नहीं होनी चाहिए। यदि कहीं बाहर भी ले जाना पड़े तो ऐसी व्यवस्था हो जाएगी। खैर, स्वामी जी के सानिध्य में घर पर ही इलाज होता रहा तथा दिन-प्रतिदिन स्वास्थ्य में सुधार होता देख स्वामी जी भी प्रसन्न दिखते रहे। ७-८ माह तक इलाज चलता रहा। स्वामी जी के अथक प्रयास तथा आशीर्वाद से मैं स्वस्थ हो गया। लेकिन इस बीच एक अद्‌भुत और आश्चर्यजनक बात का पता चला कि जितने दिनों तक में रोगशैया पर पड़ा रहा (करीबन आठ माह तक) स्वामी चिदानन्द जी महाराज मेरे गाँव के पते पर मेरी पत्नी को प्रति माह खर्चा भेजते रहे। यह बात आश्रम में किसी को मालूम नहीं पड़ी। मुझे भी तब इसकी जानकारी मिली जब मैं स्वयं गाँव गया।

ऐसा ही एक अन्य प्रकरण हमारे सम्मुख आया। कैलास गेट स्थित भजनगढ़ आश्रम स्वामी राम सिंह के मकान में नगर पंचायत, मुनिकीरेती में कार्यरत प्रसन्नलाल बड़्वाल अपने परिवार के साथ रहता था। वह काफी बीमार चल रहा था, यहाँ तक कि परिजन उनके बचने की उम्मीद छोड़ चुके थे। रोगों की पत्नी मुझसे मिली तथा स्वामी जी महाराज से सहायता दिलाने की बात कही। अवसर मिलने पर जब मैंने महाराजश्री को उक्त विषय की जानकारी दी, तो उन्होंने डाक्टर को ले जा कर दिखाने की बात कही, लेकिन मैंने अनुरोध किया कि एक बार आप स्वयं बीमार को देख लें। मेरे अनुरोध पर स्वामी जी डाक्टर को ले कर भजनगढ़, कैलासगेट श्री बड़थ्वाल के घर गये। रोगी को देखते ही महाराजश्री ने घोषणा की कि गलत इलाज हो रहा है। पता चला कि रोगी को टी. बी. बता कर इलाज हो रहा था, जिसे उपस्थित डाक्टर ने भी स्वीकार किया। रोगी के इलाज की व्यवस्था के साथ ही परिवार के लिए राशन और स्कूल पढ़ने वाले बच्चों की पढ़ाई का खर्चा अपनी ओर से व्यवस्था की। यह व्यवस्था लम्बे समय तक जारी रही।

महाराजश्री का मानना था कि व्यसन करने वाले व्यक्ति को उसके व्यसन से छुटकारा दिलाना ही व्यक्ति का जीवन सुधारना है। आश्रम की प्रिंटिंग प्रेस में शेर सिंह राणा नाम का एक कर्मचारी था, स्वभाव से बहुत ही मधुर तथा व्यवहार कुशल श्री राणा में शराब पीने की बुरी लत थी। आश्रम में रहने की वजह से अधिकांश लोग उसे अच्छी दृष्टि से नहीं देखते थे। स्वामी जी के संज्ञान में जब यह बात आई तो उन्होंने (स्वामी चिदानन्द जी में) श्री राणा को अपने निवास स्थान पर बुलाया तथा राणा से अपने साथ आध्यात्मिक यात्रा पर चलने को कहा। उस दौरान स्वामी जी महाराज का १५-२० दिनों के लिए दिल्ली, राजस्थान आदि प्रदेशों के विभिन्न स्थानों पर जाने का कार्यक्रम तय था, यात्रा पर जाने की बात सुन कर श्री राणा अति प्रसन्न हुए। निर्धारित तिथि को स्वामी जी महाराज यात्रा-भ्रमण पर निकल पड़े। श्री राजा भी साथ में हो लिए, स्वामी जी का उद्‌देश्य मनोवैज्ञानिक तरीके से श्री राणा को शराब जैसी बुराई से छुटकारा दिलाना था। जब स्वामी जी यात्रा से वापस मुख्यालय आये तो श्री राणा उक्त बुराई से छुटकारा पा चुके थे। ऐसे बहुत से प्रकरण हमारे सम्मुख हैं जिनमें स्वामी जी ने अपने व्यवहार व वाणी के द्वारा जरूरतमन्दों की

सहायता कर इस पर्वतीय क्षेत्र का गौरव बढ़ाया है। ऐसे सन्त को कोटि-कोटि नमन करते हुए श्रद्धा सुमन अर्पित करता हूँ।

शिवानन्द आश्रम,
शिवानन्दनगर (ऋषिकेश)

दिव्यता के उज्वल केन्द्र

-भक्तवृन्द -

हमारे श्रद्धेय गुरु भगवान् श्री स्वामी चिदानन्द जी महाराज, निस्संदेह, इस धरा पर अवतरित होने वाले महान् सन्तों में से एक हैं। वे अपने समस्त शिष्यों, भक्तों और प्रशंसकों के पथ को आलोकित और स्नेह-गरिमा प्रदान करने वाले परिपूर्ण प्रकाश के रूप में सदैव चमकते रहे हैं और रहेंगे भी। उनका जीवन "धर्म" का मूर्त रूप तथा त्याग, करुणा और सेवा के भारत के उदात्त आदर्श बन कर देदीप्यमान रहा है। वे सभी गुरुओं के, शिष्यों के, योगियों, भक्तों, ज्ञानियों, सन्तों, महात्माओं और देव-पुरुषों के लिए एक अनुकरणीय आदर्श रहे हैं। इसीलिए इस धरती पर उन्हें अपने जीवन-काल में और बाद में समान रूप से ही जीवन के सभी क्षेत्रों से सम्बंधित अनेकों महान् विभूतियों, राष्ट्रपतियों, राजनीतिज्ञों, जनरलों और सबसे बड़ कर सभी धर्मो, मतों और संस्थाओं के सर्वोच्च महापुरुषों द्वारा अवर्णनीय प्रशंसाएँ प्राप्त होती रही है।

'मानव मात्र को अपने जीवन को आध्यात्मिक बनाने के प्रति जागरूक करना, जिससे कि वह अपने जीवन का परम लक्ष्य आत्मसाक्षात्कार प्राप्त कर सकें, यह स्वामी जी महाराज का सदा उद्देश्य रहा और उनका अपना जीवन इसी लक्ष्य की एक अत्यन्त सुन्दर और विलक्षण अभिव्यक्ति रहा।

अपनी आध्यात्मिक सन्तानों को वे कृपा पूर्वक आशीर्वाद दें कि हम उनकी महान् धरोहर के योग्य बन सकें, और उन्हीं के अनुसार दिव्यता के उज्ज्वल केन्द्र बन सकें।

दिव्य जीवन संघ, चंडीगढ़ शाखा

गृहस्थी को व्यवहार की दृष्टि से आवश्यक मान कर अपना कर्तव्य करना चाहिए, किन्तु उसे गौण कार्य मानना चाहिए। समस्त परिवार का जीवन आध्यात्मिक बनाने का प्रयत्न करना चाहिए। मन, वचन तथा कर्म से सत्य, अहिंसा और ब्रह्मचर्य का पालन करना चाहिए।

- स्वामी चिदानन्द

प्रकाश-स्तंभ

-शिवानन्द मातृ सत्संग -

धन्य हुआ है शिवानन्द मातृ सत्संग,
सब सदगुरु शिवानन्द-शुभाशीष पा लिए हैं,
हुआ कृतार्थ हम माताओं का जीवन
श्री गुरु चिदानन्द-चरणाश्रित हुए हैं।।

अक्षय तृतीया पावन तिथि, १९८९ की मई ८ सोमवार को
गुरु महाराज ने शिवानन्द मातृ सत्संग का समारंभ कराया,
समय-समय पर सदुपदेशों, निर्देशों द्वारा मार्ग-प्रदर्शन कर
हमारे अध्यात्म पथ प्रशस्त करा रहे हैं।।

उपनिषद्-गीता, शास्त्र-पुराण, रामायण का पठन-पाठन कराया,
दूसरों के अनुकूल बनें (Adapt) समायोजन करें (Adjust) अनुरूप बनें (Accommodate)
अपमान सहें (Bear Insult) आघात सहें (Bear Injury) आदि कई
शिवानन्द आदेशों-अनुदेशों का अनुपालन सिखा रहे हैं।।

आपने शिवानन्द-साहित्य से गहन परिचय कराया,
"सप्त साधना-तत्त्व" - "बीस आध्यात्मिक नियम" का भी पाठ पढ़ाया,
दैनिक जीवन में सत्संग-स्वाध्याय की महत्ता बता कर,
'शिवानन्द समन्वय योग' का अभ्यास करा रहे हैं।।

"नारी और पवित्रता का आदर्श" (हिन्दी + इंगलिश) -"नमः"
"अपनी बहिनों से", "मानसिक शांति के सुनिश्चित साधन" इत्यादि
रचनाओं का प्रकाशन करा कर
आध्यात्मिक ज्ञान प्रसार में योगदान करा रहे हैं।।

सोयी शक्ति मन की जगाई,
जोत दिलों में प्रेम की जलाई,
कर दूर अज्ञान-तम, प्रकाश-स्तंभ रूप में
में दिव्य ज्ञानालोक में चला रहे हैं।।

पूर्ण समर्पण का महत् आदर्श दिखाया
नित नूतन लीलाओं से प्रेमी भक्तों को रिझाया,
अंग-संग-सन्निधि की अनुभूति कराके

शाश्वत आनन्द-पथ सुगम बना रहे हैं।।

'विश्व-प्रार्थना", "पसायदान" के गायन की सत्प्रेरणा देकर
"सर्वभूत हिते रताः"-में रहना सिखा रहे हैं,
"गुरु कृपा हि केवलम्" का मन्त्र पढ़ाकर
हमें दिव्य जीवन नित्य जीना सीखा रहे हैं।

शिवानन्द मातृ सत्संग
शिवानन्द आश्रम, शिवानन्दनगर

"प्रिय गुरु के प्रति हार्दिक भावांजलि"

- कु. गंगा बोधा माता जी -

भारत के महान् सन्त श्रद्धेय श्री स्वामी चिदानन्द जी महाराज को भगवद् कृपा से गुरु के रूप में पाकर उनका जो स्नेह, वात्सल्य और मार्गदर्शन प्राप्त हुआ उसके कुछ संस्मरण अपनी हार्दिक भावांजलि के रूप में गुरुदेव के श्रीचरणों में अर्पित कर रही हूँः

अप्रैल १९६५ में, रामनवमी के अवसर पर जयपुर में गुरुदेव स्वामी चिदानन्द जी एवं अन्य सन्त पधारे थे। उनके प्रवचन आदि के कार्यक्रम श्री राम मन्दिर में रखे गये थे, जो हमारे घर के पास ही था। प्रथम दर्शन से ही मन में प्रसन्नता का अनुभव होने लगा और जब उन्होंने प्रवचन आरम्भ किया- "दिव्य अमर आत्मन् परमपिता परमात्मा की कृपा हम सब पर बनी रहे", तो उस दिव्य वाणी को सुन कर हृदय में दिव्यता का प्रकाश छा गया, मन शान्त सा हो गया। फिर सुनायी दिया- "मानव शरीर की प्राप्ति अति दुर्लभ है। यह मानव शरीर प्रभु की प्राप्ति के लिए मिला है-खाने-पीने और ऐश-आराम के लिए नहीं। आप मनुष्य है, मन के ईश (मालिक) बने। मन और इन्द्रियों के मालिक बन, इस शरीर को साधना में लगाएँ, शुभ कार्यों में लगाएँ तो यह शरीर परमधाम तक पहुँचाने की नौका बन सकता है।" बस मुझे लगा, मेरी गुरु की खोज समाप्त हुई, यही मेरे गुरु हैं। जाते-जाते स्वामी चिदानन्द जी महाराज ने आशीर्वाद दिया, पुस्तकें दी तथा प्रार्थना-मंजरी पर अपनी शुभ-कामना और आशीर्वाद के शब्द लिख कर दिये और कहा कि शिवानन्द आश्रम में जुलाई मास में साधना-सप्ताह मनाया जाता है, उसमें भाग लेने अवश्य आना।

मैंने पहली बार सन् १९६५ में साधना-सप्ताह में भाग लिया। विदाई तेने जब गुरुदेव से मिलने गयी तो उन्होंने सिर पर हाथ रखा, कुछ मन्त्र बोले और आशीर्वाद दिया जिससे मेरे जीवन में परिवर्तन आ गया। मैं श्रद्धा और विश्वास के साथ पूर्ण रूप से गुरुदेव को समर्पित हो गयी। जयपुर आ कर सत्सग को बढ़ाया।

जयपुर में एक बार स्वामी जी महाराज ने रात्रि-सत्सग के बाद मुझे और मेरी सहेली गोपी को कहा- "कल आपको मन्त्रदीक्षा देंगे।" हम दोनों बहुत प्रसन्न हुई। हम दोनों एक ही मन्त्र जपती थीं। मन में सोचा काश हमे वहीं मन्त्र मिले। गुरुदेव ने हमारे मन की बात जान ली और यही मन्त्र दिया जो हम जपती थी।

दूसरे दिन किसी भक्त के यहाँ गुरुदेव की भोजन प्रसादी थी। गुरुदेव ने मुझे और गोपी को हरी सब्जियाँ बनाकर वहाँ लाने को कहा। सब्जी तैयार करके जब बाहर आये तो देखा केवल एक कार थी, वह भी हमें छोड़ कर चली गयी। रास्ते में देखा कि वह कार खड़ी थी, वे लोग बोले-"कार चल ही नहीं रही है।" हम हंसते हुए आगे निकल गये; परन्तु थोड़ी ही दूर गये तो देखा कि पीछे से वह कार आ कर हमारे आगे रुकी। वे लोग बोले"आओ, कार में बैठो, लगता है आपके लिए ही गुरुदेव ने कार रोक दी थी।" इसको गुरुदेव का करिश्मा कहें या कृपा? हम कार में बैठ कर यथासमय गुरुदेव के पास पहुँच गये।

जब हम जयपुर वापिस आते थे तो गुरुदेव से आज्ञा ले कर आते थे। सवेरे की बस से हमें दिल्ली जाना था। हम अपना सामान ले कर आज्ञा लेने गये। स्वामी जी ने कहा-"आज की बजाय कल चली जाना।" हम गुरु-आज्ञा मान का अपने कमरे में वापिस आ गये। शाम को पता चला कि जिस बस में हम जाने बाली थीं, उसका ऐक्सीडेन्ट हो गया था। गुरु-कृपा से हम दुर्घटना से बच गयीं। दूसरे दिन आज्ञा लेने गये तो स्वामी जी ने एक ब्रह्मचारी को कहा "इनको दूध दो, ये चाय नहीं पीती हैं।" गुरुदेव ने एक-एक सफेद तौलिया और रास्ते के लिए कुछ फल आदि दिये तथा आशीर्वाद देकर विदा किया।

एक बार हमने आश्रम में पुस्तकालय, श्री विश्वनाथ मन्दिर और गुरुदेव मन्दिर की सफाई की। जब गुरुदेव को इसका पता चला तो बोले- "अच्छा! यह बहुत अच्छा है। सेवा का बहुत बड़ा महत्व है। सेवा से चित्त की शुद्धि होती है। सेवा निष्काम कर्म है और यही कर्मयोग है। सेवा में सदा प्रेम का समावेश रहता है। अगर प्रेम नहीं तो सेवा नहीं- बह औपचारिकता है, दिखावा है जो अहंकार को उत्पन्न करता है।" फिर हमारी ओर इशारा करते हुए बोले- "इन जयपुर की देवियों की सेवा दिखावा या औपचारिकता नहीं थी, वे तो स्वतः सफाई करने की भावना से सेवा में लगी हुई थीं। इनका यह कर्मयोग हो गया और मन्दिर भी साफ और स्वच्छ हो गया।" प्रवचन के बाद हम सबको बुलाकर आशीर्वाद और प्रसाद दिया।

गुरुदेव जब भी जयपुर आते थे तो हमारे घर में भी चरण घुमाते थे। एक बार गुरुदेव के आने पर घर में मैंने अपने स्कूल के बच्चों का कार्यक्रम रखा। बच्चे दरवाजे के पास दोनों ओर मालाएँ ले कर खड़े थे। दो-दो बच्चे एक माला को गोलाकार हाथ में उठाये खड़े थे। जब स्वामी जी आये तो स्वामी जी उनकी मालाओं के बीच गर्दन डालते हुए सभी मालाएँ पहनते हुए अन्दर आये। स्वामी जी जब बैठ गये, तब एक-एक बच्चे ने स्वामी जी के पास जा कर नमस्कार किया और भेर-स्वरूप अपनी मन्त्र-लिखित पुस्तिका प्रस्तुत की। गुरुदेव बहुत प्रसन्न हुए। उन्होंने बच्चों से उनकी आयु पूछी और फिर पूछा- आपकी जितनी आयु है, उतने वर्षों से पहिले आप कहाँ थे अर्थात् अपने जन्म से पूर्व आप कहाँ थे?" कुछ बच्चे चुप हो गये और कुछ समझदार बच्चों ने कहा- "भगवान् के पास।" गुरुदेव ने कहा- "बिल्कुल ठीक। अभी आप स्कूल के बच्चे है, फिर एक दिन इस संसार को छोड़ कर कहाँ जाओगे?" सबने कहा- "भगवान् के पास।" स्वामी जी महाराज ने कहा कि आप आए भी भगवान् के यहाँ से थे और जायेंगे भी भगवान् के पास, तो

आपका असली घर कौन सा है? सबने कहा-"भगवान् का।" "बच्चो! हम तो यहाँ बोड़े समय के लिए आये हैं, हमारा लक्ष्य भगवान् को जानना और प्राप्त करना है।" ऐसे सरल शब्दों में बच्चों को उपदेश दिया। बाद में जाते समय स्वामी जी ने अपने ब्रह्मचारी को कहा-"ये बच्चों की मन्त्र लेखन की पुस्तिकाएँ साथ ले चलो। ब्रह्मचारी ने कहा- "स्वामी जी, प्लेन में इतना बोझ उठाने नहीं देंगे, " तो स्वामी जी ने उसको कड़ा- "मेरा अन्य सामान तुम कार में ले आना। ये पुस्तिकाएँ तो मेरे साथ ही रहेंगी।" यह सुनकर बच्चे बहुत खुश हुए। वास्तव में स्वामी जी महाराज उन मन्त्र-पुस्तिकाओं को अपने साथ ही ले गये।

जब भी में और गोपी गुरुदेव के आश्रम में स्थायी रूप से रहने या संन्यास लेने के विषय में बात करती थीं तो स्वामी जी यही उत्तर देते थे-"आप परिवार के घेरे में सुरक्षित है। आप अध्यापन का कार्य कर रही है, यह सबसे बड़ा दान है। दान का अर्थ है परस्पर बाँटना। आप स्कूल के बच्चों में अच्छे गुण पैदा कीजिए। उन्हें गीता, रामायण का ज्ञान दीजिए। बच्चों को प्रभु का रूप और विद्यालय को प्रभु का मन्दिर समझिए। अगर इस भाव से आप सेवा करेंगी तो यही आपकी सेवा आराधना बन जाएगी, साधना बन जाएगी।"

साधना-मार्ग में कभी कोई समस्या आती थी तो मैं गुरुदेव को पत्र लिखती थी और मुझे तत्काल उत्तर आ जाता था जिससे मेरा समाधान हो जाता था और आगे बढ़ने का मार्ग प्रशस्त हो जाता था। ये पत्र अब मेरे जीवन की अमूल्य निधि हैं।

आश्रम में एक बार मैं और गोपी गुरुदेव से अपने ध्यान के बारे में मार्गदर्शन लेने गयीं। उन्होंने ध्यान के विषय में कुछ विशेष बातें बताते हुए, वहीं अपने सामने ध्यान करने को कहा। हमारा मन। धीरे-धीर शान्त होता गया और गुरु के ध्यान में खो गया। थोड़ी देर बाद गुरुदेव ने पूछा-"मन लगा?" हमने कहा- "यहाँ के शान्त वातावरण और आपके सान्निध्य में मन शान्त हो गया और ध्यान में खोने लगा, परन्तु अपने घर पर समस्या होती है।" तो गुरुदेव ने कहा- अपने घर पर भी ऐसा ही भाव अपने मन में लाओगी तो मन शान्त होता चला जाएगा और ध्यान लग जाएगा।

मेरे पिता जी गुरुदेव से मिले और अपनी इच्छा प्रकट की कि मेरी मृत्यु के बाद मेरी अस्थियाँ गुरुदेव घाट पर गंगा में विसर्जित हो। गुरुदेव ने कहा अगर मैं उस समय आश्रम में रहा तो आपकी इच्छा अवश्य पूर्ण होगी।" १४ अक्टूबर, १९७५ को (दशहरे के दिन) जब पिता जी गोलोकधाम पधारे तब भैया उनके फूल (अस्थियाँ) आश्रम ले गये और भगवद् कृपा से गुरुदेव ने गुरुपाट पर अपने हाथों से उन्हें गंगा को समर्पित किया।

शिवानन्द आश्रम में शिवानन्द महिला सत्संग मण्डल, जयपुर की ओर से एक कमरा बनवाया था। उद्‌घाटन के दिन गुरुदेव ने कहा "इसी कमरे में मैं शिवानन्द महिला सत्संग मण्डल के साथ फोटो खिंचवाऊँगा" और हँसते हुए गुरुदेव ने सबके साथ फोटो खिंचवाई।

स्वामी जी महाराज जब जयपुर आते थे तो शिवानन्द महिला सत्संग मण्डल गुरुदेव को कुछ भेट देते थे। एक बार गुरुदेव ने पत्र लिखा-"मैंने आपके रुपये उड़ीसा के एक सन्त को भेजे हैं, वह बीमार हैं। उसे भी आपको पत्र लिखने के लिए कहा है।" उस सन्त का भी आभार-युक्त पत्र हमें मिला। जैसे ही मैं आश्रम पहुँची, गुरुदेव ने देखते ही पूछा- "सन्त का पत्र आपके पास

आबा?" 'मैंने कहा-' "हाँ जी, यह पत्र आया था" ऐसा कह कर वह पत्र स्वामी जी को दिखा दिया। वे बहुत प्रसन्न हुए।

मैं समझती हूँ कि मेरे पूर्व-जन्मों के कोई पुण्य उदय हुए थे जो ऐसे महान् सन्त का सान्निध्य मिला एवं उनके चरणों में रहकर साधना में आगे बढ़ने का मार्ग मिला। कहते हैं- "सतां सिद्धि संगः कथमपि पुण्येन भवति।" गुरुदेव से यही प्रार्थना है कि उनकी कृपा दृष्टि सदा बनी रहे!

२३८-बी, पार्वती मार्ग, राजा पार्क

जयपुर (राजस्थान)

हमारे गुरु भगवान्!

श्रीमती सुधा भारद्वाज माता जी

तरह-तरह के भाव मन में आते हैं, कलम में बह शक्ति नहीं कि उनको अभिव्यक्त कर सकूँ। हर शब्द छोटा पड़ जाता है। उनके दिव्य व्यक्तित्व को भाषा में बाँध पाना असंभव कार्य प्रतीत हो रहा है। लिख-लिख कर, मिटा-मिटा कर थकी नहीं, कारण कि अपनी लेखनी को पावन करने का लोभ संवरण नहीं कर सकने के कारण पुनः पुनः कलम उठा कर लिखने बैठ जाती हूँ। सशरीर विद्यमान होने के समय अपने गुरु महाराज-श्री स्वामी चिदानन्द जी महाराज को जितना देखा, सुना, पढ़ा और जाना था, उससे भी कहीं अधिक उनके शरीर छोड़ कर जाने के बाद की इस एक वर्ष की अवधि में और अधिक जान पायी। पहचानना तो उनकी अहेतुकी कृपा से सम्भव होगा। जैसे भगवान् श्रीकृष्ण ने अपने भक्त अर्जुन को अपना विराट् स्वरूप दर्शाया था उसी प्रकार उनके भक्तों, शिष्यों, अनुयायियों, गुरु-बंधुओं, सन्तों, मनीषियों, महामण्डलेश्वरों, उच्च पदाधिकारियों और दार्शनिकों के ही नहीं स्वयं उनके अपने गुरुदेव परम पूज्य श्री स्वामी शिवानन्द जी महाराज के उनके सम्बंध में जो विचार, अनुवाद करते समय पढ़ने को मिले, उससे तो लगा कि अभी तक तो हमने उन्हें जाना-ममझा नहीं था। वे क्या थे, कहाँ पहुँच चुके थे और क्या है? और हम कैसे उनके सम्मुख बैठ कर अपनी छोटी-छोटी समस्याएँ भी बता देते थे। "अपनी सरलता और विनम्रता के सघन पर्दे में इस प्रकार उन्होंने अपनी वास्तविक छबि को छिपाये रखा कि हम उन्हें जान ही न पाये।" अब, जब सारे आवरण छने लगे तो...

......तो अश्रु-पूरित नेत्रों के सम्मुख उन्हीं की अहेतुकी कृपा से उनका विराट्र स्वरूप उद्घाटित होने लगा है। क्या नहीं थे, क्या नहीं हैं हमारे गुरु भगवान्? सरलता, सादगी और विनम्रता की साकार प्रतिमूर्ति, करणा-वरुणालय, सर्व-रोग हारी, सर्वोच्च ज्ञान का भण्डार, तपोमूर्ति, सर्वश्रेष्ठ योगी और हास्य-विनोद के श्रेष्ठ कलाकार ही नहीं, एक अति नियमनिष्ठ गुरु भी, जो दीन-दुःखी, रोगी, पेड़-पौधों, और समस्त प्राणी मात्र के लिए नवनीत से भी अधिक कोमल है वहीं, आवश्यकता पड़ने पर अपने शिष्य के प्रति एक सख्त शिक्षक-गुरु भी बन सकते हैं, वहाँ वे आदर्श-पूर्णता की अपेक्षा रखते हैं।

गुरु भगवान् का जीवन और व्यक्तित्व एक ऐसी खुली पुस्तक है. जिसके किसी भी पृष्ठ की कोई भी पंक्ति पढ़ने से बहुत कुछ सीखने को मिल जाएगा। हमारी ग्रहण करने की शक्ति ही सीमित है, अन्यथा हमारे सामने असीम उदधि के रूप में उनका व्यक्तित्व और कृतित्व है, जिनके अल्प से भी अल्प अंश को ग्रहण करके ही उसके अनुसार अपना जीवन दाल ले तो धन्य हो जाएँगे। गुरु महाराज ने तो सदा यही कहा कि गुरु की आज्ञा पालन करना ही उनके प्रति सच्ची श्रद्धा और भक्ति है। "अपने गुरुदेव में ही अपने नाम को पूर्णतया लीन करके उन्होंने हमारे समक्ष सच्ची गुरु-भक्ति का आदर्श स्थापित किया।"

सरलता, विनम्रता, सादगी और पैर्यशीलता ऐसी, कि ब्रह्मनिष्ठ और जीवन्मुक्त अवस्था में होते हुए भी अपने समक्ष बैठे भक्त, साधक व्यक्ति के स्तर तक उतर कर अति धीरज से उसकी छोटी-से-छोटी समस्या को सुनते और फिर उसकी मंतुष्टि हो जाने तक विस्तार सहित उसका हल बताते। इसमें उनका बहुमूल्य समय और शक्ति व्यय हुई इसकी चिन्ता उनके निजी सेवकों को रहती, उन्होंने इसकी कभी परवाह नहीं की। ऐसे गुरु भगवान् के हम शिष्य हो कर, यदि अपनी ही बात सुनाने में प्रयत्नशील रहे, तो हमने क्या सीखा ?

गुरु महाराज की पर दुःख कातरता का वर्णन नहीं किया जा सकता। उनकी करुणा के पात्र रोगी, पीड़ित, दीन-हीन, अकिंचन ही नहीं, पशु-पक्षी, कीट-पतंग, पेड़-पौधे भी रहे। जो चींटी के माने और पौधे के सूखने पर, बिना किसी से कुछ भी कहे स्वयं निराहार रहे, उनका अनुकरण कर पाना असंभव प्रतीत होने पर भी, उस आदर्श को सामने रख कर चलने का प्रयत्न तो हमें करना ही होगा। तभी तो सच्चे शिष्य होगे।

सर्वरोगहर-सामर्थ्य उनकी ऐसी है कि हमारा निजी अनुभव ही नहीं, समस्त साधक-भक्तों का स्वानुभूत दृढ़ विश्वास है कि कितनी भी गम्भीर स्थिति क्यों न हो, यदि एक बार रोगी की प्रार्थना की पुकार उन तक पहुँच गयीं तो उसका कष्ट दूर हो ही जाएगा। वह पुकार लिख कर हो, बोल कर हो या सच्चे हृदय से की गयी मानसिक हो, इसका कोई अन्तर नहीं। और इस पर भी विशेष बात यह कि इस शक्ति को भले ही सब जानते हो; परन्तु उन्होंने इसका श्रेय स्वयं लेना तो बहुत दूर, इसको अपने गुरुनाम के और भगवकृपा के आवरण में छिपाये रखने का ही पूर्ण प्रयास किया।

गुरु भगवान् के विराट् स्वरूप का अनुभव ही किया जा सकता है। उसका वर्णन तो असंभव ही प्रतीत होता है, जितना कहो, उतना ही लगता है कि कुछ भी नहीं कह पाये। बुद्धि की, अभिव्यक्ति की सीमा है, गुण अनन्त है। सच तो यह है कि हम जैसा सौभाग्यशाली कौन होगा जो ऐसे गुरु के शिष्य कहला पायें, जो उस समय में हुए जब ऐसे महान् सन्त-भगवान् हुए।।

ये सन्त और भगवान् दोनों ही हैं, क्योंकि सन्तों के सभी गुणों के साथ-साथ भगवान् जैसे सर्वसमर्थ और अन्तर्यामी भी है। साधक भक्तों के हृदय में क्या है वह सब जानते हुए उनकी छोटी सी छोटी इच्छा की पूर्ति करके संतुष्ट तो करते ही हैं, उन्हें छोटी इच्छाओं से ऊपर उठ कर 'शुभेच्छा' के लिए प्रेरित भी करते हैं। और फिर कही अनकही सभी शुभेच्छाओं को पूर्ण करते हुए इच्छा रहित हो जाने का पथ भी दशति हैं। ऐसे सर्वोच्च ज्ञान प्रदाता है हमारे गुरु भगवान् कि हमें विवेक-बुद्धि दे कर अपने निजस्वरूप को जानने का ज्ञान देते हैं। उनके ध्यान-सत्र के

उपरान्त दिये गये प्रवचनों को पढ़ने और सुनने से हमे जीवन के वास्तविक 'मननीय सत्यों का बोध होता है। वे हमें अज्ञान की निद्रा से झकझोर कर कहते हैं "जागिये। अपने वास्तविक स्वरूप को पहचानिये।" अरको पहचान कर ही हम 'मोस के पथ पर अग्रसर हो सकते हैं। यही पच 'शोकातीत पथ' है। हमें आह्वान' देते हुए गुरु भगवान् हमें कहते हैं कि आप सौभाग्यशाली है. आपको पुकारा गया है, उस परात्पर की पुकार को सुनें। उस 'परात्पर की खोज करें और उस तक पहुँचे। यही है जीवन का सर्वोच्च लक्ष्य कौन देगा ऐसा ज्ञान? कौन दिखाएगा ऐसा पथ?

ऐसे सर्वोच्च ज्ञान के प्रदाता हमारे गुरु भगवान् हने मिले, इससे बड़ा सौभाग्य और क्या होगा? अब इस पथ पर चलना तो हमें ही है। उनकी सतत कृपा में कमी नहीं है, तो हमारे प्रयास में भी कमी नहीं होनी बाहिए। तभी तो हम उनके सच्चे शिष्य होंगे। सद्गुरु भगवान् की क्या

शिवानन्द आश्रम

'वन्दे गुरुपरम्पराम्'

-भक्तजन -

परम श्रद्धेय ब्रह्मलीन सद्गुरु श्री स्वामी चिदानन्द जी महाराज की दिव्य जीवन संघ, बीकानेर (राजस्थान) शाखा परिवार पर असीम व महती कृपा रही है। गुरुदेव इस शाखा परिवार व बीकानेर की जनता पर ज्ञान, भक्ति के कर्मयोग से परिपूर्ण बाणी के माध्यम से कृपा-वृष्टि करने के निमित्त सन् १९८९ से निरन्तर बीकानेर पधारते रहे और उक्त सभी पात्रा-प्रवास के दौरान न केवल शाखा परिसर में, अपितु भिन्न-भिन्न स्थानों पर भांग आयोजन कर प्रवचनों के माध्यम से वे लिखित ज्ञान-प्रसाद का वितरण कर समस्त बीकानेर-वासियों के हृदय में आध्यात्मिक जाग्रति व जीवन को केवल सैद्धान्तिक ज्ञान तक न सीमित कर व्यावहारिक रूप से दिव्यता के मार्ग पर ले जाने का आह्वान करते रहे। ऐसे में बीकानेर शाखा परिवार एवं बीकानेर-वासी गुरुदेव के प्रति भावनात्मक रूप से एवं व्यावहारिक दिव्य जीवन के प्रणेता के करणायुक्त उपदेशों से गद्गद् एव कृतकृत्य अनुभव करते हैं। उनकी प्यार एवं बालकल्यपूर्ण वाणी के एक-एक शब्द आज भी हमारे दिलो-दिमाग में गूँजते हैं।

सद्गुरु स्वामी चिदानन्द जी की सशरीर बीकानेर की अन्तिम बाडा सन् २००९ में (लगभग एक माह प्रवास) अत्यधिक महत्वपूर्ण करुणामयी एवं "कथनी करनी में भेद न हो" इस दृष्टि से परिपूर्ण रही। शाखा परिसर में बने हुए गुरु निवास में गुरुदेव का प्रयास, सभी से परिवार के मुखिया की तरह अपनत्व, सायंकाल मरुभूमि में सूर्यनारायण भगवान् के पश्चिम में अस्त होने के समय जंगल में जा कर मंगल करने का दृश्य, गांव के भोले-भाले लोगों बच्चों, स्त्रियों एवं पशुओं को प्यार एवं वात्सल्यपूर्ण व्यवहार से प्रसाद-वितरण आदि दृश्य भुलाए नहीं जा सकते "वसुधैव कुटुम्बकम्" को प्रत्यक्ष क्रियान्वित करना हमारे प्रिय गुरुदेव का सहज स्वभाव था। आज भी वह

स्थान, जहाँ गुरुदेव गुरु निवास में रहे, जहाँ-जहाँ गुरुदेव ज्ञान-वर्षा करने गये एवं ग्राम का सायकालीन भ्रमण स्थल गुरुदेव के निर्गुण-निराकार व्यापकता के स्पन्दन अनुभव करवा रहे हैं।

आज भले ही सगुण-साकार रूप से शरीर गुरुदेव का अभाव ह सभी को महसूस होता है, परन्तु निर्गुण निराकार व्यापकता, सूक्ष्म उपस्थिति आज भी गुरु निवास में साक्षात् अनुभव होती है, जो सभी के लिए दिव्य जीवन बनाने की राह प्रशस्त करती रहेगी। ज्ञान, भक्ति एवं करुणामयी वात्सल्य से परिपूर्ण गुरुदेव की वाणी हम अपने जीवन में स्वीकार करें, उनके द्वारा प्रदत्त राह जानने से ज्यादा करने व मानने को बल देना तथा व्यावहारिक रूप से जीवन के प्रत्येक आवरण में दिव्यता लाना तभी हमारे प्यारे गुरुदेव के प्रति हमारी सच्ची व सरलतापूर्ण हृदय से दी गई भावान एवं श्रद्धाजलि होगी।

दिव्य जीवन संघ शाखा बीकानेर (राजस्थान) परिवार एवं बीकानेर की जनता सदैव गुरुदेव के बताए रास्ते पर चल कर जीवन के अन्तिम लक्ष्य को प्राप्त करने में समर्थ हो सके, यही बारम्बार गुरुदेव से प्रार्थना है। उनके एक-एक वचन आशीर्वाद रूप से हमारा मार्गदर्शन करते रहेंगे एवं उनके सशरीर न होने का अभाव उनके उत्तराधिकारी दिव्य जीवन संघ के परमाध्यक्ष श्री स्वामी विमलानन्द जी महाराज भी न महसूस होने देंगे। ऐसी आकांक्षा एवं विश्वास के सहित।

दिव्य जीवन संघ शाखा, बीकानेर राजस्थान

एक चमत्कार जो मेरे जीवन में हुआ

- कु० पुष्पा खतूरिया माता जी-

परमात्मा की खोज में चलने वाले पथिक को जब दिव्य गुरु के असशीर्वाद का परम प्रकाश प्राप्त होता है तब परमात्मा तत्क्षण प्रकट हो जाते हैं। गुरुदेव की प्राप्ति से पहले मैं कस्तूरी मृग की भांति इधर-उधर "उसे" खोजने में लगी थी। प्रभु की अहेतुकी कृपा से मेरी यह खोज पूर्ण हुई।

जून १९७९ में गुरुदेव, स्वर्गाश्रम में बाबा काली कमली वाले श्री स्वामी आत्मप्राकाशानन्द जी के निग्रह का अनावरण करने नाव में षोडशाक्षर महामन्त्र का संकीर्तन करवाते हुए गंगा पार जा रहे थे। सौभाग्य से मुझे भी उसी नाव में बैठने का सुअवसर प्राप्त हुआ। आपकी मनोहारी मूर्ति एवं करुणामयी दृष्टि मेरे तन-मन-नथन में बस गई। आपकी देह से जो दिव्य भाउ-परमाणु विकीर्ण हो रहे थे उन्हीं से मेरा कल्याण हुआ। मैंने हृदय से आपकी शरणागति ली और प्रार्थना की-

"गुरुदेव, मैंने भगवान् को नहीं देखा है, मैं आपकी बालिका हूँ, आपके वात्सल्य पर मेरा अधिकार है, मैं जैसी भी हूँ, आपकी है। मुझे मत छोड़िए अपने में मिला लीजिए।"

"सत की नाव खेवटिया सतगुरु,
भवसागर तरि आयो।"

अभी आपने गंगा पार करवाई उसी प्रकार मुझे भवसागर से पार लगाइए। आपकी करुणापूरित दृष्टि ने तत्क्षण बताया कि यहीं तुम्हारे निकट "बह" है, जिसे तू खोज रही है।

२६ जून १९८३ का वह पावन दिन, जिस दिन गुरुदेव से गुरु निवास, ऋषिकेश में दीक्षा ली, उसी दिन से इष्टदेव व इष्टमन्त्र दोनों ही गुरुस्वरूप में परिवर्तित हो गये हैं।

यह गुरुदेव का असीम वात्सल्य एवं परम अनुग्रह ही था कि बह अपनी इस बालिका की प्रार्थना पर १९८९ से १९९९ तक प्रति वर्ष निन्तर बीकानेर पधारते रहे और अपने दर्शन-सौभाग्य एवं अमृत वचनों से बीकानेर-वासियों को कृतार्थ करते रहे। अक्टूबर २००९ में २७ दिन का बीकानेर प्रवास उनकी कृपा व स्नेह की पराकाष्ठा ही थी।

उन शरणागतवत्सल की अपनी इस लपुतिमा बेटी पर ऐसी अनुकम्पा रही कि शरीर अस्वस्थ होते हुए भी शान्ति-निवास, देहरादून में, प्रति वर्ष अपने पावन दर्शन एवं प्रेमसुधा से अनुगृहित करते रहे।

गुरु भगवान् की कृपा का कहाँ तक वर्णन करूँ? मई २००७ में शारीरिक अस्वस्थता के बावजूद भी अपने पावन दर्शन का सौभाग्य दिया। सेवानिवृत्ति के बाद बीकानेर शाखा का उत्तरदायित्व अन्य किसी को सौंप कर, अन्तेवासी के रूप में आश्रम में ही रहने की आज्ञा दे कर, अपने श्रीचरणों में निवास करने का परम सौभाग्य प्रदान किया।

दिसम्बर २००७ के परम पवित्र दिवस की स्मृतियाँ आज भी मानस पटल पर अंकित है जब परम पूज्य गुरुदेव ने एक वर्ष तक ऋषिकेश-आश्रम से बाहर न जाने का आशीर्वाद रूप आदेश दिया, उस आदेश का अनुपालन करते हुए इस अकिंचन बालिका को अपने "आराध्यदेव" की महासमाधि के उपरान्त उनके अन्तिम पावन दर्शन का सौभाग्य मिला। आज गुरुदेव पंचभौतिक शरीर त्याग चुके हैं किन्तु उनके दिव्य सान्निध्य एवं वरद-हस्त का प्रतिपल अनुभव मुझे निरन्ता आनन्दित, प्रेरित एवं आशीर्वादित करता है।

बीकानेर (राजस्थान)

'एक विलक्षण आध्यात्मिक परिपूर्णता'

हमारे गुरु भगवान् स्वामी चिदानन्द जी महाराज

- श्री राजेन्द्र भारद्वाज जी, शिवानन्द आश्रम -

हमारे आराध्य गुरुमहाराज स्वामी चिदानन्द जी को देख कर व्यक्ति भावविभोर हो कर कह उठता है, "भले ही मैंने ईश्वर को नहीं देखा है, किन्तु ईश्वरीयता को में अपने समक्ष देख रहा हूँ।" ऐसी आध्यात्मिक परिपूर्णता न तो कभी इससे पहले देखी है, न ही अपने जीवन काल में पुन देख पाने की आशा है; ऐसा मानने बालों में मैं अकेला ही नहीं हूँ।

एक समरसता, एक सुमधुरता, एक परिपूर्णता थी, उनके द्वारा होने या न होने वाले प्रत्येक कार्य में उनके हाथों की सरस गति से ले कर उनकी मनोहर चाल के प्रत्येक कदम में, उनके श्रीमुख से नि सूत होने वाली शान्ति प्रदायक, ज्ञानपूर्ण बाणी से ले कर उनके हृदय स्पर्शी गान में, तथा भक्तों की ओर पड़ने वाली करुणा प्लावित और प्रेममयी दृष्टि से ले कर, सुदूर आकाश को चीर कर न जाने कहाँ तक जाती हुई उनकी निर्लिम, अनासक्त दृष्टि में! उनको देख कर ऐसे लगता था मानो वह असीम परम तत्त्व, वह अचिन्तनीय, अवर्णनीय सत्ता मानव-कल्याण के लिए और हम सबके उद्धार के लिए, इस धरा पर सशरीर अवतरित हुई है।

'स्वामी चिदानन्द जन्म से ही सिद्ध हैं, यह परम पूज्य गुरुदेव का कथन है, अतः ऐसा कुछ प्राप्त करने के लिए नहीं था जो उन्होंने पहले ही प्राप्त कर न कर लिया हो। यह तो इसलिए अवतरित हुए कि निजी जीवन के द्वारा एक आदर्श आध्यात्मिक साधक, एक अनुपम आदर्श शिष्य का देदीप्यमान उदाहरण स्थापित कर दें! उनका सम्पूर्ण जीवन ही उनकी शिक्षाएँ हैं। उनका लक्ष्य अपने गुरु तथा उनके द्वारा स्थापित संस्था की सेवा था। और यह करते हुए उन्होंने अन्तिम साँस तक, समस्त विश्व के कोने-कोने तक अतुलनीय, अदम्य उत्साहपूर्वक आध्यात्मिक ज्ञान का प्रसार किया। अपने अहं के मूलतः निर्मूलन करके आदर्श शिष्यत्व का जो उदाहरण उन्होंने हमारे सामने रखा है, उसका अनुकरण कर पाना लगभग असम्भव ही है।

यद्यपि वे आदर्श शिष्य के आवरण में रहे, तथापि वे एक श्रेष्ठतम, परिपूर्ण गुरु थे जिन्होंने अध्यात्म-पथ पर अग्रसर होने के लिए लाखों को जागृत, प्रेरित और निर्देशित किया। वे भारतीय संस्कृति और अध्यात्म को सही अर्थों में अभिव्यक्त करने वाले एक सशक्त पथ-प्रदर्शक के रूप में सुविख्यात हुए। **एक आदर्श साधक, शिष्य, सेवक और तपस्वी साधु के आवरण में अत्यन्त सहज स्वाभाविक रूप में रहते हुए वह एक ऐसे श्रेष्ठतम गुरु और तेजस्वी सम्राटों के सम्राट् थे जिनकी पलभर ही के लिए सेवा करने के सौभाग्य की आकांक्षा छोटे-बड़े सभी करते थे।** शिष्यों और भक्तों पर उनका ऐसा सम्मोहक प्रभाव था कि हल्की सी झलक मिल जाने पर ही वह अथाह शान्ति और सन्तोष का अनुभव करते थे, यदि कृपाकटाक्ष मिल जाता, तब तो उनकी प्रसजता का पारावार न रहता। इसके लिए पष्टों प्रतीक्षा भी करनी पड़े तो चिन्ता नहीं।

गुरु महाराज ने अपने एक प्रबचन में कहा है, **"महान् गुरु कभी भी अतीत में नहीं जाते, वह सदा वर्तमान है और भविष्य में भी रहेंगे। वह सदैव है, गुरु कभी भी 'नहीं' नहीं होते, दूर नहीं होते। सदा सर्वदा निकटतम रहते हैं...।"** अतः इसी में दृढ़ विश्वास रखते हुए आओ हम उनकी अदृश्य उपस्थिति से प्रार्थना करें-

हे परिपूर्ण ईश-मानवों के गगन के देदीप्यमान सितारे! आप सदा ही अपने भक्तों, शिष्यों और प्रशंसकों के सदैव चमकते हुए प्रकाश-पुंज रहे हैं और रहेंगे। भारतीय सांस्कृतिक और आध्यात्मिक सम्पदा के प्रतीक गुरु महाराज, आपका जीवन त्याग और सेवा के भारतीय आदशों का उच्यत उदाहरण रहा है!

हमें आशीर्वाद दें कि आपकी यह आध्यात्मिक सन्तान पर्याप्त धर्म-वीरता और आन्तरिक शक्ति सम्पन्न हो जिससे कि समस्त बाधाओं, प्रलोभनों और सीमाओं का अतिक्रमण करके सर्वोच्च लक्ष्य प्राप्ति के प्रयास में सतत लगी रहे! अपने अपार प्रेम और

करुणा से हमें यह क्षमता प्रदान करें कि प्रकाश स्वरूप आपको हम बास्तव में जान और पहचान पायें।

हरि नाम प्यारा सबका सहारा,
हरि नाम जप के सुख शान्ति पाओ।
कडे निवृत्ति हरि नाम भक्ति,
हरि नाम शक्ति, सबको देवे मुक्ति।

गुरुजी तुझको मेरा प्रणाम

– श्रीमती मोहिनी गुरुबक्श माता जी, मुम्बई –

गुरुजी तुझको मेरा प्रणाम ।
कैसे गाऊँ, महिमा तेरी,
कैसे करूँ मैं बखान,
गुरुजी तुझको मेरा प्रणाम ।

माता-पिता गुरु सखा तुम्हीं हो,
राम कृष्ण और शिव भी तुम हो;
तुम ही हो प्राण आधार;
सद्गुरु तुझको लाखों प्रणाम।

हरि कृपा से गुरु मैं पाया,
जिसने सेवा-सिमरन मार्ग दिखाया;
जीवन सफल बनाया;
सतगुरु तुझको लाखों प्रणाम।

प्रेम ही जीवन, प्रेम ही पूजा
प्रेम ही प्रेम, कुछ और न दूजा
प्रेम से सबको अपनाया,
सतगुरु तुझको लाखों प्रणाम ।

जीवन नैया गुरु हवाले,
सतगुरु उसको पार लगाये।
सेवा से गुरु को रिझाये;
सतगुरु तुझको लाखों प्रणाम।

गुरु चरणों में शीश झुकाऊँ,
महिमा न जानूँ हरि गुण गाऊँ,
हर पल गुरु को ध्याऊँ

सतगुरु तुझको लाखों प्रणाम।

विनती करूँ मैं गुरु के आगे
मिट जाएँ भव-बन्धन सारे
अन्त में तुझमें समाऊँ
गुरु जी तुझको लाखों प्रणाम ।

***

प्रेम तथा मानवता के मूर्तिमान् विग्रह :प्रेम तथा मानवता के मूर्तिमान् विग्रह परम पूज्य श्री स्वामी चिदानन्द जी महाराज

- माँ आनन्दमयी अमृतवार्ता-

त्याग, तपस्या, करुणा, प्रेम तथा मानवता के मूर्तिमान् विग्रह अतिप्रसिद्ध दिव्य जोवन सप के परमाध्यक्ष स्वामी चिदानन्द जी महाराज विगत २८ अगस्त, २००९ को 'शान्ति-रिवास, देहरादून में प्राय ९२ वर्ष की अवस्या में ब्रह्मलीन हुए है। अध्यात्म जगत् का एक उज्ज्वल सितारा, एक टिल्य महाजीवन अन्तर्धान हुआ। उनके निर्वाण से जो स्थान रिक्त हुआ, वह सदा के लिए अपूरणीय ही रहेगा।

स्वामी चिदानन्द जी के गुरुदेव पाम श्रद्धेय श्री श्री स्वामी शिवानन्द सरस्वती जी की अति स्पष्ट उक्ति है "स्वामी चिदानन्द जीवन्मुक्त पुरुष है। पूर्व-जन्म में भी आप आप एक बोगी थे। यह आपका अन्तिम जन्म है।"

प्रचुर वैभवों में स्वामी जी का शैशव व्यतीत होने पर भी स्वामी जी में बाल्यकाल से ही एक स्वभावसिद्ध वैराप्य परिलक्षित होता था। भगवान् को प्राप्त करने की तीव्र लालसा के कारण कम उम्र में ही आपने घर छोड़ दिया था। भगवान् की खोज में अनेक जगह घूमते हुए अन्त में आपको ऋषिकेश में दिव्य जीवन संघ के प्रतिष्ठाता पूज्य स्वामी श्री शिवानन्द जी महाराज का साक्षात्कार प्राप्त हुआ। पोग्य गुरु ने अपने योग्यतम शिष्य को पहचान लिया। वे समन्न गये कि यह युवक ही एक दिन भविष्य में आपका आध्यात्मिक उत्तराधिकारी होगा। शिष्य भी अपने परम प्राश्रय का लाभ प्राप्त कर धन्य हुआ।

अब प्रारम्भ हुआ स्वामी जी के जीवन का एक स्वर्णिम अध्याय। सेवा ही थी उनके जीवन का मूलमन्त्र। जीवों के प्रति करुणा तथा दया के आप अथाह सागर थे। गुरुदेव की सेवा तथा आश्रम के विभिन्न कार्यों को सम्भालते हुए भी आपने स्वेच्छा से रोगियों की सेवा का भार ग्रहण किया। कुष्ठ रोगियों की सेवा को ही आप भगवान् की सेवा मानते थे। आप जो भी काम करते अतिशय निपुणता के साथ करते थे। छोटे-से-छोटे कामों में भी आपकी निपुणता परिलक्षित होती थी। उनमें अपरिसीम सौन्दर्य-बोध था। आपकी संगठन-मूलक कार्यक्षमता, सबके प्रति समभाव तथा सहानुभूति पूर्ण हार्दिक भावना को देख गुरुदेव ने स्वामी जी की इच्छा न रहने पर भी उन्हें दिव्य जीवन संघ के महासचिव के पद पर अधिष्ठित किया। गुरुदेव के ब्रह्मलीन होने पर सर्वसम्मति से

आपने दिव्य जीवन संघ के पाभाध्यक्ष के पद को अलंकृत किया। पृथ्वी के विभित्र स्थलों पर जा कर आपने दिव्य जीवन के दिव्य सन्देशों का प्रचार किया। हजारों की संख्या में लोगों को दिव्य उपदेश प्रदान कर स्वामी जी भगवान् की ओर प्रेरित करते थे। किन्तु उनके सहजात वैराग्य, निरभिमान व्यक्तित्व तथा महानता को इस उच्चतम पद की मर्यादा ने कभी भी किंचित् स्पर्श तक नहीं किया, अपितु उनका व्यक्तित्व और भी उज्वलातर होता गया।

१९४८ ई. में फरवरी के महीने में बाराणसी में माँ के आश्रम में स्वामी जी को सर्वप्रथम श्री श्री माँ का दर्शन प्राम हुआ। उन दिनों आश्रम में 'अखण्ड सावित्री महायज्ञ' चल रहा था। श्री श्री माँ के प्रथम दर्शन से ही स्वामी जी को श्री श्री माँ के यधार्थ स्वरूप का परिचय प्राप्त हुआ तथा माँ को आपने जगन्माता के रूप में ग्रहण किया। अत जब भी उन्हें माँ का दर्शन प्राम होता था, उसी समय तुरन्त में भूमि में लेट कर माँ को माहाण दण्डवत् प्रणाम करते थे। यदि मार्ग में ही माँ का दर्शन प्राम होता, तो मार्ग में ही वे माँ को साष्टांग प्रणाम करते थे। दीर्घ समय तक आश्रम के अनेक उत्सवों में, श्री श्री माँ के जयन्ती महोत्सव तथा संथम सप्ताह में आप विशेष रूप से उपस्थित रहने की कोशिश करते थे। सथम सत्राह के प्रधान आकर्षण का विषय ही था पूज्य स्वामी जी का दिव्य उपदेश श्रवण उनके दिव्य अनुभूतिपूर्ण उपदेशों को श्रवण कर प्रतीगण उद्‌बुद्ध हो कर अनुप्राणित होते थे। संयम के ७ दिन स्वामी जी आश्रम में आ कर रहने की कोशिश करते थे।

श्री श्री माँ के जन्मशती वर्ष (१९९५-१६ ई.) के अनुष्ठानों में स्वाभी जी ने सक्रिय योगदान किया। भारत के विभित्र आश्रमों में कनखत, नैमिषारण्य, विन्ध्याचल, वाराणसी, यहाँ तक कि सुदूर स्पुिरा प्राप्त की राजधानी अगरतला में शतबार्षिकी अनुहार में स्वामी जी आग्रह के सहित पधारे। स्वामी जी की दिव्य उपस्थिति से सभी प्रोत्साहित हुए तथा सर्वत्र सम्पूर्ण उत्सव गरिमापण्डित हो उठे। उसी समय स्वामी जी अतिशय आग्रह के साथ बांग्लादेश भी गये। उन्होंने माँ के पवित्र जन्मस्थान का दर्शन किया एवं ढाका सिद्धेश्वरी आश्रम में भी गये। विशेष रूप के कनखल स्थित आश्वम, वाराणसी आश्रम एवं माँ आनन्दमयी कन्यापीठ के साथ आपका एक घनिष्ठ सम्बन्ध हो गया था। अनेक बार वे इन सब संस्थानों में आये।

विशेष रूप से कन्यापीठ के इतिहास में स्वामी जी का अमूल्य अवदान स्वर्णाक्षरों में लिखित रहेगा, सबके हृदयों में चिरस्मरणीय हो कर रहेगा। सन् १९८७ से २००१ तक वे निरन्तर कन्यापीठ के वार्षिक उत्सवों में पधारे। वार्षिक उत्सवों में उनकी गरिमामय दिव्य उपस्थिति से अपूर्व रूप से सभी अनुप्रेरित होते थे, एक दिव्य चेतना से जागरूक हो उठते थे। एक अनुपम स्वर्गीय आनन्द की सृष्टि होती थी। सन् १९८८ में कन्यापीठ का स्वर्ण जयन्ती महोत्सव तथा १९९९ ई. में आदरणीया गुरुप्रिया दीदी के शतवर्ष का जन्म जयन्ती महोत्सव तथा कन्यापीठ का हीरक जयन्ती महोत्सव स्वामी जी की ही दिव्य उपस्थिति में अनुष्ठित हुआ था। स्वामी जी के हो निर्देश से 'ब्रह्मचारिणी गुरुप्रिया' शीर्षक स्मारिका ग्रन्थ का प्रकाशन हुआ, जिसका विमोचन पूज्य स्वामी जी के ही करकमलों द्वारा हुआ। श्री श्री माँ के प्रति आपकी अटूट श्रद्धा, अपरिसीम भक्ति तथा कन्यापीठ की बालब्रह्मचारिणियों का ब्रह्मचर्य जीवन तथा संस्कृत का अध्ययन देख कर वे अतिशय प्रसत्र हो कर पुनः पुन बाबा विश्वनाथ के दरबार में श्री श्री माँ के बरणों में आ कर उपस्थित होते थे कन्यापीठ के वार्षिक उत्सव के उपलक्ष्य में। १९९३ ई में आनन्दज्योतिर्मन्दिर की रजतजयन्ती के अवसर पर स्वामी जी वाराणसी पधारे। उन्हीं के निर्देशानुसार १०८ बाल-गोपालो की पूजा हुई। गोपाल मन्दिर के शिखर को आलोकमाता से सुसजित किया गया था। २००१ के बाद जब वे

शारीरिक अस्वस्थता के कारण वाराणसी आने में अक्षम हुए, तब भी चे नियमित रूप से ब्रह्मचारिणियों की कुशत्तवार्ता पूछते रहते थे। कनखल में संयम समाह की समाधि के बाद प्रतिवर्ष कन्यापीठ की कुछ कन्याएँ श्रद्धेय पानुदा के साथ शान्ति निवास, देहरादून में जा कर स्वामी जी को प्रणाम कर आती थीं। पूज्य स्वामी जी भी अतिशय आनन्द के साथ विशेष अस्वस्थता में भी कन्याओं को सदुपदेश देते थे, नाम-कीर्तन करते थे तथा दोनों हाथ भर-भर के प्रसाद दे कर कन्याओं को धन्य करते थे। २००७ के नवम्बर महीने में कन्याओं को स्वामी जी का अन्तिम दर्शन प्राप्त हुआ था। स्वामी जी को प्रणाम कर तथा उनका दिव्य उपदेश श्रवण कर कन्याएँ धन्य-धन्य हुई थीं।

आज सम्पूर्ण आश्रमवासी गण परम पूज्य स्वामी जी के चरणों में कोटिशः नमन करते हुए उनके चरणों में यह श्रद्धांजलि अर्पण करते हैं। अमर आत्मा दिव्य आत्मा स्वामी जी सबके हदयों में सदा-सदा के लिए चिर अमर रहेंगे।

ॐ शान्ति।

अन्तर्यामी की चिरस्मृति

-श्रीमती लता आचार्य माता जी, गुजरात-

परम पूज्य श्री स्वामी चिदानन्द जी महाराज की सन् १९७३ में प्रथम दर्शन के समन कृपा-दृष्टि हुई। जब मैंने उनके समक्ष मंगलाचरण के श्लोकों का वाचन किया, तब उनके सानिध्य में मुझे अद्‌भुत अविस्मरणीय अनुभव हुआ। सन् १९७६ में उनकी डायमण्ड जुबली में उनके दिव्य दर्शन करने की दिव्य कृपा मिली। स्वामी जी के आदेश व आशीर्वाद से इसी वर्ष अपने ९० वर्षीय पिता जी के साथ बदरीनाथ यात्रा सफल हुई। उनके आशीर्वाद से मैं कृतकृत्य हो गयी। तभी से गुरु-कृपा आशीर्वाद से आज तक आश्रम में आ रही हूँ।

मुझे १९९४ में शिवानन्द आश्रम में छह मास निवास का सौभाग्य प्राप्त हुआ। उस अवधि में मुझे यह अनुभव हुआ कि स्वामी जी अन्तर्यामी है, सर्वज्ञ है। उनसे प्रसाद लेने की तीव्र इच्छा मन में होते ही, वे तुरन्त नाम से पुकार कर कहते, "प्रसाद ले जाइए, प्रसाद तो माँग कर भी लेना चाहिए।" उस समय अपने लोभ और फिर संकोच पर बड़ी शर्म आती।

अहमदाबाद आश्रम में उनके साथ-साथ चलने तथा उनके दिव्य अमृत वचन श्रवण करने का सौभाग्य प्राप्त होता रहा। शोभा यात्रा के लिए मैंने बैनरों की सजावट की सेवा तथा सद्वाक्य लिखने की सेवा भी की। स्वामी जी इस सेवा कार्य से प्रसत्र हो गये। स्टूडियो में 'कीर्तन प्रसाद' तथा 'कीर्तनामृत' की रिकार्डिंग में मुझे तीन दिन तक तानपुरा बजाने की सेवा भी मिली। स्वामी जी के सानिध्य में दस-बारह मिनट बैठ कर अपार शान्ति का अनुभव हुआ।

भागवत विद्यापीठ में साधना सप्ताह में पण्डाल की सजावट, गुरु जी के आसन की सजावट और बड़ा '33' लिखने की सेवा मिली, स्वामी जी प्रसन्न हो गये। इन्हीं दिनों स्वामी जी ने हमारे घर में अपने श्रीचरण डाले, मैं गद्गद् हो गयी। यह क्षण मेरे लिए अविस्मरणीय है। स्वामी जी किसी और के पर ठहरे थे। एक प्रातः मेरे हृदय की गहराई से निकला कि स्वामी जी तो बड़े

लोगों के घर जायेंगे, हमारे जैसों के पर क्यों आयेंगे? जैसे ही वहाँ पहुँचे उनके सेवक ने कहा, "आज सवेरे ही स्वामी जी ने आपको याद दिया, कहा, 'हम माता जी के घर अवश्य जायेंगे'।" में तो क्षणभर के लिए बेहोश सी हो गयी। इतना ही नहीं, सेवक के यह कहने पर कि समयाभाव के कारण शाखा के लोग रोकेंगे, उन्होंने कहा हम, "हम ताला तोड़। कर भी येंगे।" यह है अन्तर्यामी। स्वामी जी ने घर देख कर कहा, "यह तो आश्रम जैसा ही है।" ४०-४५ मिनट बैठे। मैं तो सब भूल गयी, गले केले थे, वही रख दिये, उन्होंने खाये, जो रखा, कहा, "हाँ, हाँ, सब लेंगे।"

मन्दिर में भूमि पर ही बैठ गये। शिवलिंग की प्राण-प्रतिष्ठा की। मेरे चाँदी का मन्दिर उन्हें उपहार दिया। पहले तो 'ना' कहा, फिर बोले, "लाइए, लिया। और अब यह हमारा हो गया, हम यह आपको देना चाहते हैं" और मेरे हाथ में थमा दिया।

उनके गुजरात आश्रम में निवास के दिनों में मुझे उनके लिए गुजराडी भोजन बनाने की सेवा का सौभाग्य मिला। उन्होंने मेरे बारे में एक बार कहा, 'I know she is very sensitive.' (मैं जानता हूँ, वह बहुत भावुक हैं।) मैंने स्वामी जी के लिए जैन साधुओं जैसा कपड़ा सिल कर दिया। स्वामी जी बोले, "हम जैन मुनि बन गये।" तत्पश्चात् मैंने स्वेटर और मोजे बुन का भेजे, स्वामी जी ने लिखवा कर भेजा, "माता जी, आपका बुना हुआ स्वेटर यहाँ ठंड में पहन कर आपके निःस्वार्थ प्रेम का अनुभव कर रहा हूँ।"

एक अति महत्त्वपूर्ण बात मेरे लिए है कि एक बार गंगोत्री में ब हितैषा और हर्षा बहन को स्वामी जी का प्रत्यक्ष पादुका पूजन करने का सौभाग्य मिला था, तब उनको प्रसाद देते समय स्वामी जी ने कहा था, "यह लो लता माता जी के लिए है।" "कौन?" पूछने पर कहा, "राजल की मदर।" आहा, कितनी कृपा इस अकिंचन पर!

एक बार गुरु निवास (ऋषिकेश) में पुनः उनके दर्शन करने का सौभाग्य मिला। मैंने श्रद्धापूर्वक प्रार्थना की, "यह पादुका राम जी जैसी है। भरत जी राम जी की पादुका ले गये, मैं आपको राम जी मान कर इन्हें मन्दिर में रखूँगी।" स्वामी जी ने पादुका ली, अपने सर व आँखों में स्पर्श करके मुझे दे दी। ये भी अविस्मरणीय! एक बार गुरु निवास में प्रवेश ही कर रहे थे, कि मैंने जप माला देते हुए कहा, "आपके स्वास्थ्य के लिए महामृत्युंजय जाप करना है," तो बोले कि, "विश्व-कल्याण के लिए करो।" अपने हाथों से स्पर्श करके मेरे हाथों में दे दी।

एक और अलौकिक स्मरण! एक बार द्वारिका जाने का प्रोग्राम बना, पर मैं बीमार हो गयी। अतः अपने भाग्य को कोसते हुए मैंने स्वामी जी का स्मरण किया, नींद आ गयी। स्वामी जी ने स्वप्न में स्वर्णिम कान्ति में देदीप्यमान द्वारिकाधीश भगवान् के ज्योतिर्मय प्रकाश से जगमगाती दिव्य मूर्तियों के मेरा हाथ पकड़ा कर दर्शन कराये। बाद में अपने साथ सत्संग-प्रवचन में बैठने को कहा। फिर मेरा स्वप्न टूट गया। नींद से उठी तो बुखार गायब! मेरा हृदय गद्गद् हो गया।

मेरी पुत्री राजल के पिता जी कैंसर से पीड़ित थे। मैंने गुरुमहाराज के श्रीचरणों के सामने उन्हें लिटाया और कहा,

"आपके चरणों में रखती हूँ। आर्थिक-मानसिक निःसहाय हूँ, आपके आधार पर चलती हूँ।"

बस, पूरे पाँच साल आसानी से निकल गये। अन्त में ४-६ महीने थोड़ी तकलीफ सह कर प्रातः चार बजे शरीर त्याग दिया। मुझमें हिम्मत-धैर्य श्री स्वामी जी तथा सब सन्तों की कृपा के कारण ही रहा। गंगा में अस्थि विसर्जन की पूरी सुविधा भी परम पूज्य स्वामी कृष्णानन्द जी ने कर दी थी। अहा! यह है अन्तर्यामी स्वामी जी की कृपा!

दुःख-कष्ट के क्षणों में स्वामी जी मुझे सान्त्वना देते रहे। २००१ में परम पूज्य स्वामी जी के दर्शन हुए। बोलने को मना किया था, अतः दर्शन कर, सेवकों को भेंट पकड़ा कर हम गाड़ी में बैठे ही थे कि स्वामी जी ने प्रसाद की थैली भिजवा दी।

अन्तर्यामी की बात अन्तर्यामी ही समझे, हम क्या समझें।

अस्तु!

'सत्यमेव जयते'

उन्होंने लौकिक आन्दोलन को आध्यात्मिक बना दिया

- श्री सुन्दरलाल बहुगुणा जी, विश्वकर्मापुरम् -

भारतीय संस्कृति की प्रेरणा-स्थली देवभूमि उत्तराखण्ड में शराब-बन्दी हो, यह यहाँ के निवासियों की ही नहीं, सारे देश के आस्तिकों की आकांक्षा थी। आजादी के बाद यहाँ शराब का प्रकोप इस हद तक बढ़ गया था कि भारत के गरीब जिले टिहरी गढ़वाल में शराब की खपत सन् १९५३ और ६८ के बीच साठ गुनी बढ़ गयी थी। शराब के कारण उत्तराखण्ड का जन-जीवन कलहपूर्ण हो गया था। बद्री-केदार और गंगोत्री-यमुनोत्री की मोटर-सड़कों पर आये दिन मोटर दुर्घटनाएँ होने लगी थीं और ये सब देश में 'मौत की सड़क' के नाम से जानी जाने लगी थीं। यह स्थिति यहाँ के सब लोक-सेवकों के तन-मन को बेचैन करती थी। अतः शराब-बन्दी के लिए सन् '६५ से ही जन-आन्दोलन चले और अप्रैल १९७० तक पाँच पर्वतीय जिलों-टिहरी, उत्तरकाशी, चमोली, पौड़ी और पिथौरागढ़ में शराब-बन्दी हो गयी। सरकार के इस निर्णय से शराब के ब्यापारियों ने इलाहाबाद हाईकोर्ट में चुनौती दी और हाईकोर्ट ने शराब-बन्दी को रद्द करने के साथ-साथ सरकार को पुनः शराब की दुकानें खुलवाने का आदेश दिया।

सरला बहिन जी (गान्धी जी की अँगरेज शिष्या और हिमालय की मूक सेविका) के साथ ही हम सब जिलों में शराब के विरुद्ध जन-आन्दोलन खड़ा करने के लिए घूमे, लेकिन लोग मायूस थे। पढ़े-लिखे लोग कहते, 'अब पुनः शराब-बन्दी होना असम्भव है।' दुकानों पर 'पिकेटिंग' करने के लिए जो उत्साह लोगों में पहले था, वह अब दिखाई नहीं देता था। सरकारी फैसले के अनुसार नवम्बर के प्रथम सप्ताह में शराब की दुकानें खुलनी थीं। इनमें से एक दुकान 'मुनिकीरेती' में भी खुलने वाली थी। मैं अक्टूबर के अन्तिम दिनों में अन्यमनस्क हो कर ऋषिकेश क्षेत्र में घूम रहा था। वहाँ के कई आश्रमों में इस निवेदन को ले कर गया कि धर्म के रक्षक होने

के नाते उन्हें कम-से-कम मुनिकीरेती की दुकान के विरुद्ध आवाज उठानी चाहिए, परन्तु सब जगह से एक ही उत्तर मिला, 'इसमें हम क्यों पढ़ें? यह तो राजनीति है?'

मैं इसी क्रम में 'शिवानन्द आश्रम' में गया। पूज्य स्वामी चिदानन्द जी आश्रम से बाहर थे। पुनः शाम को उनके लौटने पर गया। प्रथम दर्शन से ही उनकी आत्मीयता ने मुझे जकड़ लिया। उन्होंने कहा, 'विदेश यात्रा से लौटते ही मैंने मार्च १९७० में टिहरी की माताओं द्वारा शराब की दुकान के सामने किये गए शान्तिमय 'पिकेटिंग' और उनके जेल जाने का समाचार सुना। मैं उन्हें धन्यवाद देता हूँ।' जब मैंने 'हाईकोर्ट' के फैसले और पुनः शराब की दुकाने खुलने का समाचार सुनाया तो स्वामी जी ने पूछा, 'आपकी क्या योजना है?' दुकानें खुलते ही अधिक-से-अधिक प्रदर्शन कर अपनी भावनाएँ प्रकट करने के सिवा हम कर भी क्या सकते हैं? मैंने उनसे निवेदन किया कि मुनिकीरेती में भी इस प्रकार का कार्यक्रम होना चाहिए; परन्तु उन्होंने यहाँ तक वचन दिया कि टिहरी के कार्यक्रम में भी वह स्वयं शामिल होंगे।

***

१ नवम्बर ७१ को टिहरी नगर से तीन किलोमीटर पहले ही दुबाटा में ठीक समय पर स्वामी जी पहुँच गये। हम उनके स्वागत के लिए आये थे, परन्तु हमारे आश्चर्य का ठिकाना न रहा, जब वह ढेर सारी फूल-मालाएँ ते कर एक-एक करके सब कार्यकर्ताओं के गले में डालने लगे। स्वयं संकीर्तन करते हुए जुलूस के आगे-आगे पैदल चले। लगभग चार किलोमीटर तक, टिहरी नगर की कचहरी और गली-कूचों से होता हुआ, पैदल चल कर यह जुलूस आजाद मैदान में एक सार्वजनिक सभा में समाप्त हुआ। स्वामी जी का वह प्रेरक, उत्साह और स्फूर्तिदायक प्रवचन जिन्होंने सुना, उनके सन्देह मिट गये। **शराब-बन्दी का कार्य भगवान् की भक्ति का सर्वोत्तम कार्य है।** उजड़ने वाले परिवारों को बचाने का काम है। मनुष्य को दिव्यता की ओर ले जाने का काम है। उन्होंने कहा - मैं चाहता हूँ, इस आन्दोलन में जितनी संख्या में हमारी माताएँ रुचि लें, इससे दुगुनी संख्या में टिहरी और गढ़वाल के नागरिक कटिबद्ध हो कर भाग लें, तो हमारी उस संगठितः: शक्ति से जिसे असम्भव कह रहे रहे हैं, हैं, वह भी सम्भव हो जायेगा, जो असाध्य कहा जाता है, वह साध्य हो जायेगा।' और अन्त में उन्होंने घोषणा की, '**यह शुभ कार्य है, अच्छा कार्य है, धर्म का कार्य है, सत्य के पक्ष में है। हमारी केन्द्रीय सरकार के शासन का प्रतीक 'सत्यमेव जयते' है। सत्य आपके पास है और आपके लिए विजय निश्चित है।**' उन्होंने मंच से ही सब कार्यकर्ताओं को वह अमोघ मन्त्र दिया जिसका जप करने से हमारा आत्मबल बढ़ा और हम एक असम्भव माने जाने वाले कार्य को सम्भव बनाने में जुट गये।

७ नवम्बर को टिहरी में शराब की दुकान खुलते ही उसके सामने मेरा अनिश्चितकालीन उपवास प्रारम्भ हुआ। उपवास के दौरान स्वामी जी के सन्देश नित्य प्रति मिलते रहे। उपवास स्थल पर कीर्तन, प्रार्थना, श्रीमद्भागवत और रामायण का पारायण होता, सब अनाचारों का केन्द्र शराबखाना एक धार्मिक स्थल में बदल गया। पहले से आन्दोलन में हिचकने वाले स्त्री-पुरुष सैकड़ों की संख्या में यहाँ आने लगे और २० नवम्बर को उनकी संख्या हजारों तक पहुंच गयी। **भगवान् की भक्ति और जनता की शक्ति से एक अद्भुत आन्दोलन का जन्म हुआ जिसमें स्वामी जी के दिए हुए मन्त्र का उच्चारण करते-करते छह वर्ष के प्रदीप से ले कर अस्सरी वर्ष की बुढ़िया तक जेल में गयी।** स्वयं स्वामी जी के साथ तीन महिलाओं का एक शिष्ट-मण्डल, उत्तराखण्ड की शराब बन्दी की पुकार को ले कर दिल्ली के राष्ट्रपति भवन तक गया। शिष्ट-मण्डल राष्ट्रपति बी.बी. गिरी जी से मिला। स्वामी जी राष्ट्रपति की सहधर्मिणी से मिले। उनकी सहर्मिणी

श्रीमती सरस्वती गिरी ने राष्ट्रपति जी से कहा, "मैं तो स्वामी जी के साथ शराब-बन्दी आन्दोलन मेंः जा रही हूँ, तुम राजपाट चलाते रहो।" इसका तत्काल प्रभाव पड़ा और उत्तराखण्ड के पाँच जिलों में देशी शराब की दुकानें बन्द हो गयी।

उत्तर प्रदेश सरकार ने आबकारी कानून में संशोधन किया। पुनः शराब-बन्दी लागू हुई। असम्भव सम्भव हो गया ! सन्त का आशीर्वाद फल गया !! अविश्वासियों का विश्वास अटल हो गया!!!

दो अक्टूबर को उत्तरकाशी में 'चिपको आन्दोलन' का एक कार्यक्रम था। इसके लिए स्वामी जी का आशीर्वाद प्राप्त करने में गया, तो उन्होंने कहा कि "इस दिन में बापू जी के अस्पृश्यता निवारण के मिशन को मूर्त रूप देने के लिए हरिजन पूजा करता हूँ।" मैंने निवेदन किया कि "इसके लिए उत्तरकाशी में प्रबन्ध हो सकता है।" स्वामी जी ने यह स्वीकार किया।

हरिजन पूजा के लिए हरिजन भाइयों को कतार में बिठाया गया। स्वामी जी ने उनके चरण धोये। उसके बाद पत्तलों पर भोजन परोसा। स्वामी जी अपने हाथ में पत्तल ले कर प्रत्येक के सामने प्रसाद माँगने के लिए खड़े हो गये। उत्तरकाशी में संन्यासियों की बस्ती उजेली में है। उत्तरकाशी के संन्यासी और नागरिक सब एक सन्त को हरिजनों की जूठी पत्तल से प्रसाद लेते हुए देख कर स्तब्ध रह गये। स्वामी जी ने कहा, "ये जिन्दा भगवान हैं।" यह बेदान्त के सर्वत्र ईश्वर-दर्शन करने के विचार की चरम अभिव्यक्ति है।

स्वामी जी ने गान्धी जी की तरह शंकराचार्य के सूत्र '**ब्रह्म सत्यम्, जगद् मिथ्या**' को युगानुकूल परिवर्तित कर **सत्यं ब्रह्म जगद् सेव्यम्** रूप दिया। उत्तरकाशी में संन्यासियों ने प्रश्न किया कि "यह तो आप शंकराचार्य के बचन का उल्लंघन कर रहे हैं।" स्वामी जी ने कहा, "जगत् मिथ्या है तो आप क्यों भिक्षापात्र ले कर यहाँ खड़े हैं?"

स्वामी चिदानन्द जी जैसे सन्तों को भगवान् अन्धविश्वास का कुहासा हटाने के लिए इस जगत् में भेजते हैं, जिससे मानवीय मूल्यों की रक्षा होती रहे। हम जिस दुनिया में रहते हैं, उसमें भोगवादी सभ्यता का बोलबाला है। इसमें भोग के अधिक-से-अधिक साधन बटोरना ही विकास लक्ष्य बन गया है। फलतः मनुष्य प्रकृति का पुत्र नहीं कसाई बन गया है। उसने दूसरी अधिकांश प्रजातियों का संहार कर लुप्त कर दिया है, स्वयं एक-दूसरे के खिलाफ युद्ध 1 गरीब से गरीब देश भी हथियारों का जखीरा बढ़ा रहे फ युद्ध में प्रवृत्त है। ग हैं। इस घोर अन्धकार के बीच में स्वामी चिदानन्द जी जैसे सन्तों का जीवन और सन्देश प्रकाश की किरण है। यह किरण जलती रहे और सबको आलोकित करती रहे, यही उनका आशीर्वाद है।

उन्होंने हमारे सभी आन्दोलनों में केबल आशीर्वाद दे कर ही नहीं, प्रत्यक्ष भागीदारी करके सक्रिय भूमिका निभाई। उत्तराखण्ड में १२६ दिन की 'चिपको पदयात्रा' का शुभारम्भ ही नहीं किया, कुछ दूर तक साथ भी चले और कहा कि "मैं हमेशा तुम्हारे साथ हूँ।"

हमें गृहस्थी की जिम्मेदारियों से मुक्त रखा। हमारी बेटी और बेटों की शादी उनके सानिध्य में शिवानन्द आश्रम में सादगी से हुई और उन्हें उनके आशीर्वाद मिले।

सर्वोदय सेवकों के लिए वे शक्ति और प्रेरणा के स्रोत (पावर हाउस) थे। उन्होंने लौकिक कार्य के साथ आध्यात्मिकता जोड़ कर विशेष शक्ति दी। उत्तराखण्ड में उनकी उपस्थिति से लौकिक आन्दोलनों को उन्होंने दिव्यता प्रदान की। शिवानन्द आश्रम हमेशा हिमालय के लिए, शक्ति का केन्द्र बन गया।

सेवा का मेवा

- सौ. राजलक्ष्मी देशपाण्डे, पुणे -

मेरे दादा जी सन् १९५४ में परम पूज्य गुरुदेव स्वामी शिवानन्द जी से सम्बन्धित थे। दादा जी और मेरे पिता जी ने परम पूज्य स्वामी शिवानन्द जी से अनुग्रह (मन्त्र-दीक्षा) तथा आध्यात्मिक दृष्टिकोण ले कर अपना जीवन साधना करते हुए बिताया। मैं, जाहिर है, माँ की कोख से ही स्वामी जी के बारे में सुनती आयी हूँ। भगवान् की असीम कृपा से परम पूज्य श्री स्वामी चिदानन्द जी महाराज से अनुग्रह पाने का सौभाग्य मुझे प्राप्त हो ही गया। आपके बारे में छोटे-मोटे कई संस्मरण हैं, उन्हीं में से प्रस्तुत है एक संस्मरण-

परम पूज्य स्वामी जी की कृपा से उनका चरित्र मराठी भाषा में लिखने का मुझे सौभाग्य मिला। परम पूज्य स्वामी जी ने उसके लिए मुझे प्रेरक आशीर्वाद भी दिये थे। इस चरित्र का कुछ अंश मैंने लोणावला (महाराष्ट्र) में आयोजित एक साधना शिविर में परम पूज्य स्वामी जी महाराज की उपस्थिति में समस्त साधकों, भक्तों व श्रद्धालुजनों को सुनाया। मन ही मन मैं कहती रही "सेवा करने का मौका पाना ही बहुत है। मुझे स्वामी जो महाराज से कुछ नहीं चाहिए।" बहुत लोगों ने मेरी सराहना की। कुछ लोगों ने यहाँ तक कहा, "खुद स्वामी जी भी भाव-विभोर हुए थे, जब आप यह चरित्र सुना रही थीं।" लेकिन स्वामी जी महाराज ने कुछ नहीं कहा। मेरे मन की बातें शायद आपने सुनी थीं- "मुझे स्वामी जी से कुछ नहीं चाहिए।"

इसके कुछ महीनों बाद परम पूज्य स्वामी जी महाराज गुरुदेव स्वामी शिवानन्द जी की श्रेष्ठ शिष्या परम पूज्य ॐ मालती देवी जी के तपोवन में (जो मिरज, महाराष्ट्र में है) पधारे थे। परम पूज्य स्वामी जी महाराज के सभास्थल में आने से पूर्व सब लोगों के साथ बैठी मैं मन ही मन प्रार्थना कर रही थी - "स्वामी जी, अभी तक मेरी वृत्ति इतनी निष्काम नहीं हुई है। स्वामी जी कृपा कीजिए, मुझे आपसे 'खास' आशीर्वाद चाहिए। जो सेवा मुझसे हुई है उसका आपसे पुरस्कार चाहती हूँ, जैसे माँ कुछ काम करने पर बेटी को देती है।"

सत्संग के समाप्त होने पर परम पूज्य स्वामी जी ने हमारे परिवार को अन्दर बुलाया। मेरे माता-पिता, बड़ी बहन और मैं सब एक साथ थे। संकोची स्वभाव होने के कारण मैं थोड़ी दूर थी और स्वामी जी के सामने मेरे माता-पिता थे। फिर भी वार्तालाप शुरू करने से पहले स्वामी जी महाराज ने बहुत सारे फरस हाथ में लिये और मुझे दे कर कहा- "सबसे पहले यह आपको। यह सेवा का मेवा है।"

इस बार भी स्वामी जी ने मेरी प्रार्थना सुनी थी। परम पूज्य स्वामी चिदानन्द जी अन्तर्यामी है (मैं 'थे' कहना उचित नहीं मानती)। ऐसे कई संस्मरण सब शिष्यों के मन में होंगे।

गुरुकृपा

-श्री सूर्यनारायण एवं परिवार, भोपाल -

गुरुर्ब्रह्मा गुरुर्विष्णुः गुरुर्देवो महेश्वरः ।
गुरुः साक्षात् परंब्रह्म तस्मै श्रीगुरवे नमः ।।

गुरु महाराज श्री स्वामी चिदानन्द जी द्वारा कैसे मेरा जीवन प्रकाशित हुआ है, उसका वर्णन करना चाहता हूँ।

सन् १९६९ में 'दिव्य जीवन संघ, शिवानन्द आश्रम' में श्री स्वामी ओमानन्द सरस्वती जी के साथ मुझे आने का अवसर मिला। उस समय परम पूज्य श्री स्वामी चिदानन्द जी महाराज विश्व-भ्रमण पर धर्म-प्रचार हेतु अमेरिका गये हुए थे। श्री स्वामी जी की कृपा एवं आर्थिक सहायता से मैंने एम. ए. संस्कृत ७४.६% से पास किया। इसी बीच मेरे पिताजी मुझे विवाह के लिए बाध्य कर रहे थे। तब मैं दयावती मोती पब्लिक स्कूल, मोदीनगर, गाजियाबाद में शिक्षक पद पर कार्य करने लगा। अचानक गुरु महाराज की कुछ ऐसी कृपा हुई। गुरुदेव श्री स्वामी शिवानन्द जी के भक्त लखनऊ शाखा के सदस्य श्री शिवेश्वर प्रसाद मिश्रा जी ने पूज्य श्री चिदानन्द स्वामी जी से सम्पर्क कर अपनी द्वितीय पुत्री 'अर्चना' के विवाह के बारे में चर्चा की एवं मुझे दामाद के रूप में स्वीकार करने की बात की। तब मुझे स्वामी जी महाराज ने गाजियाबाद से दिल्ली बुलवाया। वहाँ स्वामी जी ने श्री मुकुन्दलाल जी के आवास पर श्री मिश्रा जी की पुत्री अर्चना के साथ विवाह सम्बन्ध के बारे में चर्चा की। श्री स्वामी जी के आदेशानुसार मेरे माता-पिताजी शिवानन्द आश्रम, ऋषिकेश पधारे। उन्होंने अपने एक सप्ताह के निवास के दौरान विवाह के लिए अपनी सहमति प्रदान कर दी। तत्पश्चात् स्वामी जी महाराज भक्तों के आग्रह पर दक्षिण अफ्रीका के प्रवास पर गए।

एक दिन फिर स्वामी जी महाराज ने कृपा की और विवाह मुहूर्त के रूप में ग्रीष्मकाल की तीन तिथियाँ निश्चित कीं। उनमें अन्ततः १९ मई १९८३ को विवाह मुहूर्त निश्चित हुआ।

इस दिन स्वामी चिदानन्द जी की अध्यक्षता में गुरुदेव समाधि मन्दिर के सामने मेरा विवाह रीतिरिवाज के अनुसार सम्पन्न हुआ। आश्रम के वरिष्ठ सन्त स्वामी माधवानन्द जी सरस्वती, स्वामी देवानन्द सरस्वती एवं कोलकाता, दिल्ली, बम्बई से आये भक्त लोग उपस्थित थे। श्री स्वामी जी महाराज ने वर-वधू के भविष्य के जीवन के लिए, सन्देश एवं आशीर्वचन कहे। स्वामी जी महाराज की इस असीम कृपा से आज मानव संसाधन विकास मन्त्रालय, भारत सरकार द्वारा संचालित जवाहर नवोदय विद्यालय, रातीबड़, भोपाल में संगीत शिक्षक के रूप में वर्तमान में कार्यरत हूँ।

श्री चिदानन्द स्वामी जी का आशीर्वाद मेरी पुत्री भवानी एवं पुत्र तरुण को भी प्राप्त हुआ जिसके बल पर वे दोनों आज अपने शिक्षाक्षेत्र में आग बढ़ रहे हैं।

परम पूज्य स्वामी चिदानन्द जी महाराज, गुरुदेव श्री स्वामी शिवानन्द जी की प्रतिमूर्ति हैं। वे शिवस्वरूप चिदानन्द हैं। मुझे पूर्ण विश्वास है कि आज उन्हीं के आशीष से हमारा घर और हम प्रकाशमान है।

"गुरु की महिमा भारी भगतन के हितकारी।"

ॐ

ॐ त्र्यम्बकं यजामहे सुगन्धिं पुष्टिवर्धनम्।
उर्वारुकमिव बन्धनान्मृत्योर्मुक्षीय माऽमृतात् ।।

ॐ मैं त्रिनेत्रधारी भगवान् शिव की उपासना करता हूँ जो सुगन्धिमय है तथा जो सारे प्राणियों को पुष्टि प्रदान करते हैं। वे मुझे अमृतत्व प्रदान करने के लिए मृत्यु से उसी प्रकार मुक्त करें जिस प्रकार ककड़ी का फल अपनी लता के बन्धन से छुटकारा प्राप्त करता है।

शिवानन्द चिदानन्द गुरुवर हमारे

-श्रीमती ऊषा शर्मा माता जी, दिल्ली -

हे दिल दरया करुणा मूर्त हम आए हैं तेरे द्वारे
तुम जानत कछु करनी करी न तुम हो अवगुण हारे
शिवानन्द चिदानन्द हम आये हैं तेरे द्वारे
इस जगत् की गहरी नदिया कौन पार उतारे,

नौका हो गयी बहुत पुरानी पानी बाहर उछाले
यह मनुआ चाहत जाना नदिया पार किनारे
बस एक ही मार्ग है जब तुम बनो पतवारे
भव पार जाने पर मिट जाते मन अंधियारे

जहाँ दूर-दूर से सुनते शिवानन्द चिदानन्द जयकारे
हम जैसे अवगुणियों की गुरु जी लाज हाथ तुम्हारे

हम चाहत रहना गुरुवर तले कृपा तुम्हारे
हे मेरे गुरुवर गुरुदेव जायें कहाँ छोड़ तुम्हारे द्वारे

हमें चित्तशुद्धि और नाम प्रभु का साथ
सद्बुद्धि भी मांगू इस के साथ
भक्ति ज्ञान के भरे तेरे खजाने आये झोली भराने
यह संसार रैन अंधेरी तुम ही हो राह दिखैया

कृपा करो-कर रहे हो, कृपा हस्त रहे सिर पर हमारे
हम हृदय से सश्रद्धा नमन करते चरणारविन्द तुम्हारे
है दिल दरया करूणा मूर्त हम आये तेरे द्वारे
जय शिवानन्द जय जय चिदानन्द जय गुरुदेव हमारे

गुरु कृपा का अथाह सागर, लगी किनारे भीर ।
पता नहीं इस भीर से, जायेगा कौन दूसरे तीर ।।
गुरु कृपा अनन्त, बिन माँगे मोती मिल जाये।
बिन कृपा न जाने, कितनी झोली खाली रह जाय ।।

पास रहें या दूर वो हरदम रखते ध्यान।
करने लगते गलती यहाँ, वहीं रोकते आन ।।
काम करें तुम्हारे पूर्ण, घर किसी का नाम।
पगला मनुआ न समझे, करे व्यर्थ अहं अभिमान ।।
स्वामी चिदानन्द जी के नारी विषयक विचार

***

स्वामी चिदानन्द जी के नारी विषयक विचार

- कु. वन्दना आहूजा, बीकानेर -

दिव्य जीवन संघ संस्थापक, परम पूज्य स्वामी चिदानन्द जी के गुरुदेव महाराज विश्ववंद्य स्वामी शिवानन्द जी महाराज के नारीविषयक विचार

नारी! हो तुम पूर्ण पावन
हो तुम परम आत्मा की पहचान।

गुरुदेव स्वामी शिवानन्द जी महाराज ने नारी को बहुत ऊँचा स्थान दिया है-नारी पवित्रता की तथा परम आत्मा की पहचान है। परम आदर्श गुरुदेव के परम शिष्य निराले आदर्श दिव्य जीवन संघ के परमाध्यक्ष स्वामी चिदानन्द का भी कथन है कि नारी के सभी रूपों में 'पराशक्ति' ही कार्य कर रही है-

"नारी पुत्री रूप में है अथवा भगिनी रूप में, गृहलक्ष्मी रूप में है अथवा सहधर्मिणी, जननी रूप में है अथवा मातृरूप में उसके इन सभी रूपों में माँ! तुम्हारी ही तो अभिव्यक्ति है। अतः नारी की पावनता, पूर्णता निर्भर है तुम्हारी शुभाशीषों पर।"

परम पूज्य स्वामी जी महाराज नारी के सब रूपों में पूर्ण स्वरूप की महानता का स्रोत बतलाते हैं "शक्ति रूपा भगवती माता को।" अतः नारी को चाहिए कि नित्यप्रति इष्ट-गुरु-वंदना करने के उपरान्त सर्वरूपमयी, शक्तिरूपा माँ भगवती से प्रार्थना करे ताकि सब रूपों-पुत्री, कन्याकुमारी, बहिन, पत्नी व माँ-में उसका स्वरूप दिन-प्रतिदिन उज्जवल एवं पूर्ण बने।

श्री स्वामी जी की वाणी है, "जो कुछ भी है वह मातृशक्ति है। माँ वही है जो ज्ञानातीत परम पुरुष है। वह परम शक्ति है। यह दुर्गा अर्थात् क्रियाशक्ति, यह लक्ष्मी अर्थात् इच्छाशक्ति, यह सरस्वती अर्थात् ज्ञानशक्ति है ।''

ऐसी शक्ति सुसम्पन्ना नारी परिवार, समाज, राष्ट्र व विश्व में शोभित होती है। स्वामी जी कहते हैं-

"नारी किसी भी राष्ट्र के भविष्य का, उसके विकास का तथा उत्थान का आधार स्तम्भ है। राष्ट्र की प्रगति की कुंजी नारी के ही हाथ में है, क्योंकि देश की प्रजा की हर पीढ़ी में उसकी बाल्यावस्था में माता ही सर्वप्रथम प्रशिक्षिका रही है। पर ही बाल-राष्ट्र की प्रारम्भिक पाठशाला है, जो राष्ट्र के भावी निर्माण की अमूल्य आधारशिला है। गृहस्थ श्री शिक्षा केन्द्र में सन्तान के इस प्रारम्भिक शिक्षण में सबसे प्रभावशाली तत्त्व माता का व्यक्तिगत आदर्श होता है, जि16 द्वारा भावी नागरिक की सच्चरित्रता का बीजारोपण शुभ संस्कारों के रू। में किया जाता है, क्योंकि जो हाथ पालना झुलाते हैं वही राष्ट्र का निर्माण भी करते हैं।"

"देश की संस्कृति की सम्पोषिका एवं संरक्षिका नारी है। एक जीवात्मा जब घर में जन्म लेता है तो उस पर प्रथम और गम्भीर प्रभाव भर के वातावरण का पड़ता है। इसमें पिता की अपेक्षा माता का प्रभाव अधिक पड़ता है। अतः हमारी संस्कृति की रक्षा पुरुषों के नहीं, नारी के हाथ में है।"

"नारी अपने निज (आत्म) स्वरूप को पहचाने, यह उसका वास्तविक लक्ष्य है।"

स्वामी जी के विचारों का सारांश

कौमार्य-ब्रह्मचारिणी रूप की पवित्रता को बनाये रखने के लिए सदैव प्रयत्नशील रहे। गार्गी, सुलभा आदि महान् नारियों, कुमारियों के चरित्र का स्वाध्याय करें तथा तदनुसार आचरण करने का प्रयत्न करें। नारी में कथनी और करनी में अन्तर नहीं होना चाहिए। नारी अपने हर रूप में परनिन्दा से बचे। राग-द्वेष और ईर्ष्यो की भावना से बचे, हर क्षण सावधान रहे, नहीं तो इससे वह प्रतिष्ठित नारियों को भी अपनी बेरहमी से चोट पहुंचा सकती है और पहुंचाती है यह हिंसा भी है। स्वार्थ का त्याग करे। सत्संग करे, सत्साहित्य का अध्ययन भी सत्संग है-रामचरित मानस तथा महान् नारियों की कथाएँ आदि। गप्पबाजी से बचें।

स्वामी जी इस पर बिरं व जोर देते हैं कि नारी अपने शीत को नहीं छोड़े, वह उसका अलंकार है। गरी के व्यक्तित्व से, बाणी एवं व्यवहार में सुशीलता, मधुरता तथा सौम्यता-चास्ता की अभिव्यक्ति हो। नारी के हर आचरण क्रिया में-जैसे उठने-बैठने, बोलने चलने, वस्त्राभूषण आदि पहनने में सुचारुता और मर्यादा का दिग्दर्शन हो। कृतघ्न नहीं बने, सदैव कृतज्ञ ही रहे। अपने असली आभूषणों, यथा सेवा, त्याग, बात्सल्य, स्नेह तथा निःस्वार्थता आदि को सदैव धारण कर अपने परग लक्ष्य की प्राप्ति हितार्थ सजगता से बढ़ते हुए कर्तव्य कर्मों का पालन भी करती रहे। नारियों का आचरण ही उपदेश बने। उथला ज्ञान अहं का पोषण करता है तथा दूसरों को हानि पहुँचाता है. इससे बचें। गुरुजनों की आज्ञाकारिणी बनें।

सांसारिक सम्बन्ध अनित्य, अशाश्वत तथा अपूर्ण हैं। जब हम उन परिवर्तनशील तथा अस्थिर सम्बन्धों से अपना तादात्म्य जोड़ते हैं, तभी हम दुःखी होते हैं और तभी अशान्ति का अनुभव करते हैं। हमारे ऋषि-मुनि जो कि त्रिकालज्ञ थे, जिन्होंने अपनी समाधि में अनुभव किया, उन्होंने यह घोषणा की कि एकमात्र ईश्वर ही नित्य, शुद्ध, शाश्वत तथा पूर्ण है। उसी का ज्ञान तथा उसी में स्थित होने से ही हमें परम शान्ति तथा परमानन्द की प्राप्ति हो सकती है। यहाँ हमारे जीवन का प्रमुख तथा महत्वपूर्ण कर्तव्य है।

-स्वामी चिदानन्द

श्रद्धा-सुमन

- प्रस्तुतकर्ता: श्री दिनेश 'प्रदीप' जी, खुरजा -

श्रीधर राव (पूर्वाश्श्रम नाम) का जन्म दक्षिण भारत के मंगलौर में धनाढ्य जमींदार श्री श्रीनिवास राव एवं उनकी धर्मपत्नी श्रीमती सरोजिनी की कोख से २४ सितम्बर, १९१६ को हुआ था। कौन जानता था कि अंगरेजी संस्कृति में पढ़े-पले बालक में स्वयं परमात्मा स्वरूप दिव्य आत्मा निवास कर रही है। निष्काम सेवा के धनी, मृदुभाषी, सरल हृदय, अनेकों धर्मशास्त्रों के व्याख्याकर्ता को सद्गुरुदेव स्वामी शिवानन्द जी महाराज (ऋषिकेश) का सानिध्य मिला और वह श्रीधर राव से सन्त-शिरोमणि स्वामी चिदानन्द जी के रूप में परिभाषित हुए तथा विश्व में प्रसिद्धि प्राप्त की।

श्री गोपाल संकीर्तन मण्डल के भक्तों को सन्त के प्रथम दर्शन का सौभाग्य ऋषिकेश आश्रम में आयोजित एवामी शिवानन्द शताब्दी के भव्य समारोह में प्राप्त हुआ। उनके स्नेह-प्रेम व शुभाशीष की सलिल सरिता आज भी मण्डल को पवित्र-निष्काम सेवा की प्रेरणा प्रदान कर रही है। उन्हीं के आशीर्वाद से मण्डल आज २३ वे वर्ष में अपने भक्तों को सद्मार्ग की ओर अग्रसरित करने में प्रयासरत है। स्वामी चिदानन्द जी महाराज की दिव्य प्रेरणा एवं स्वामी देवानन्द जी महाराज के असीम प्रेम से ही खुरजा नगर में दिव्य जीवन संघ की स्थापना सम्भव हुई। वर्ष १९९१ में मण्डल के बार्षिकोत्सव में अध्यक्ष पद स्वीकार कर स्वामी जी ने अपनी सरलता का परिचय दिया। उनके चारित्रिक गुणों की स्मृतियाँ आज भी भक्तों के हृदय-पटल पर स्थायी निवास करती हैं।

सर्वधर्मसमभाव को परिभाषित करते हुए स्वामी चिदानन्द जी ने कहा कि **सारी सृष्टि मानव का घर है, वह परमात्मा की लीलाओं की प्रदर्शनी है। अतः प्रत्येक जीव में परमात्मा का दर्शन करें।**

मण्डल की यात्राएँ जब भी ऋषिकेश आश्रम जातीं, उनके प्रवास की पूर्ण व्यवस्था महाराजश्री स्वयं कराया करते थे। आश्रम के विभिन्न मुख्य स्थलों, जैसे-समाधि स्थल व विश्वनाथ मन्दिर आदि में मण्डल के भक्तों को संकीर्तन करने का सौभाग्य उन्हीं की आज्ञा से प्राप्त होता था। वह अपने हाथों से भक्तों को प्रसाद वितरित किया करते थे। मुख्यालय से बाहर प्रवास के समय महाराजश्री अपने किसी प्रतिनिधि द्वारा अपना आशीर्वाद सन्देश व देरों प्रसाद भक्तों को भेजते थे। ऐसा था मण्डल के प्रति उनका स्नेह।

रोगियों की सेवा करना वह अपना धर्म मानते थे। कुष्ठ रोगियों के क्षीण होते अंगों पर अपने हाथों से वह दवा लगाया करते थे। आश्रम में महाराजश्री कुष्ठ रोगियों, जिन्हें एक साधारण मनुष्य देखना भी शायद पसन्द न करे, के बीच बैठ कर उनकी पत्तल से भोजन उठा कर ग्रहण करते थे। क्या महाराजश्री के इस चारित्रिक राण का कोई उदाहरण विश्व में है? यही थी उनकी सच्ची साधना और ईश्वसना। वह प्रत्येक दुःखी प्राणी का कट हर लेने की क्षमता रखते थे। अटूट ज्ञान का भण्डार उन्हें सद्गुरुदेव स्वामी शिवानन्द जी महाराज के आशीर्वाद से प्राप्त था।

धन्य है वह जन जिन्हें ऐसे परम सन्त के चरण-दर्शन का सौभाग्य मिला है। **स्वदेश-प्रेम उनमें कूट-कूट कर भरा था। अपने उपदेश-प्रवचनों में वह देश भारत को पवित्र भारत भूमि कहा करते थे।** आश्रम में आने वाले सैलानी भक्तों का वह हाथ जोड़ कर स्वयं अभिवादन करते थे। उनके व्यक्तित्व की इस छवि का दर्शन आज भी आश्रम में दृष्टिगोचर होता है, जहाँ संत व ब्रह्मचारी साधक आने वाले भक्तों की सेवा करते हैं।

धन्य है भारत भूमि जिसने इस युग में आदि शंकराचार्य से ले कर स्वामी शिवानन्द व स्वामी चिदानन्द सरीखे सन्तों को जन्म देकर मानव-जाति के कल्याण का मार्ग प्रशस्त किया है। अपने सद्गुरुदेव के उपदेशों व आदर्शों को विश्व में अपने ज्ञान के आधार पर आलोकित करने बाले सन्त-शिरोमणि स्वामी चिदानन्द जी महाराज का प्रत्येक वाक्य एक आदर्श व्याख्या के रूप में सदैव प्रकाशवान् रहेगा।

कान्तिमय, दुर्बल शरीर के मुखर ज्ञानी सन्त सदैव प्रसत्र चित्त मुद्रा में रहते थे। उनका प्रिय संकीर्तन आज भी भक्तों की जिहा पर रहता है-

जिस हाल में, जिस देश में, जिस वेश में रहो।
राधारमण, राधारमण, राधारमण कहो ।।

दिनांक २८ अगस्त, २००८ को १२ वर्ष की आयु मे अनुशासनप्रिय, करुणा व दया की प्रतिमूर्ति सदैव के लिए परमात्मा में लीन होने के लिए (महासमाधि ले कर) महाप्रयाण कर गयी।

ऐसे पवित्र कर्मयोगी सन्त को श्रद्धापूर्वक श्री गोपाल संकीर्तन मण्डल का कोटिशः नमन।

***

गुरु-चरण शरणम्

- श्रीमती आशा गुप्ता माता जी, सिडनी, आस्ट्रेलिया -

अपने गुरु भगवान् की कृपा दृष्टि पाने के लिए मेरे हृदय की कुसुम-कली, ज्ञान-प्राप्ति के लिए अभी खिलना आरम्भ नहीं हुई थी कि अनदेखे, अनजाने गुरु के प्रति श्रद्धा के बीज सन् १९९१ में अंकुरित हुए। ४ फरवरी १९९१ को पति के परमात्म-तत्त्व में लीन होने पर उत्तर भारत से अनेकों परिजन हैदराबाद आये हुए थे। उन्हीं दिनों गुरु भगवान् बहन कामिनी के घर आये हुए थे। उस दिन उनके घर सत्संग था। सभी गये, मैं नहीं था सकती थी। मन में कसक तभी उठी थी यह कौन-सी सामाजिक मर्यादा है? इतने महान् सन्त के दर्शन के लिए सभी जा रहे हैं और में ही घर में हैं।

ऐसा कहा जाता है कि अविवेकियों के मन में ही भांति-भाँति की शकाएँ उदित होती रहती हैं। मैं भी उसी श्रेणी की अज्ञानी शिरोमणि रही। प्रश्न उठा करते थे- (१) चौथेपन में आ कर ही मुझे गुरु के सानिध्य का अवसर क्यों मिला? जब कि किसी को बाल्यकाल, युवावस्था में ही ऐसे सौभाग्य की प्राप्ति हो जाती है। (२) मुझे सामूहिक दीक्षा (सन् १९९९, सिडनी, आस्ट्रेलिया में) के एक अंग के रूप में ही दीक्षा क्यों मिली ? (३) मुझे प्रत्यक्षतः कोई उद्बोधन क्यों नहीं मिल पाया? मुझे कभी उनका चरण-स्पर्श करने का और मेरे सिर पर उनका आशीर्वाद का हाथ रखने का सुअवसर क्यों नहीं मिल पाया?

मेरे अन्दर अधीरता थी। न मैंने कभी कर्म-सिद्धान्त पर विचार किया न अपनी नियति पर सोचा, न ही भविष्य के गर्त में छिपी सम्भावना पर विचार किया।

मेरे परम पावन अद्वितीय गुरुदेव ने अपनी कृपा दृष्टि की वृष्टि मेरे ऊपर प्रत्यक्ष रूप से भरपूर प्रवाहित की। उसका अनुभव मुझे अब हो रहा है।

सन् १९९३ में बहन कामिनी के साथ पहली बार केरल के आनन्दाश्रम जाना हुआ। परम पूज्य श्रद्धेय गुरुदेव वहाँ स्वास्थ्य लाभ के लिए आये थे। आश्रम में सभी को कड़े निर्देश दिये गये थे-'कोई भी स्वामी जी से प्रश्न नहीं पूछेगा।' इसी बीच किसी भक्त ने मुझसे कहा- स्वामी जी बड़े अच्छे वक्ता है।' मन में प्रश्न उठा, तो फिर मैं कैसे उन्हें सुन पाऊँगी? मन ही मन प्रार्थना

की, क्या ही अच्छा हो कि में कुछ सुन पाऊँ। आश्चर्य! स्वामी जी रामभक्ति पर अपना प्रवचन देने लगे। मैं कृतकृत्य हो उठी।

सन् २००० में स्वामी जी केरल आने वाले थे। मैं भी बहन कामिनी के साथ आनन्द आश्रम गयी थी। गुरुदेव प्रतिदिन सन्ध्या समय भूमने (सैर) के लिए एक बहुत बड़ी संख्या में भक्तों के साथ जाते थे। रास्ते में उनकी बातें बड़ी सारगर्भित होती थीं। एक उदाहरण- एक बड़ा-सा ताल है। उसमें पारदर्शक स्वच्छ जल लबालब भरा हुआ है। उसी से रिसकर वह जल एक छोटे ताल में गिरता रहता है। उस छोटे ताल में वायु के प्रवाह से पत्तियाँ और तिनके पड़ कर ताल को गन्दा कर देते हैं। यदि वह पत्तियाँ न हटाई जाएँ जो जल की पारदर्शिता बनी नहीं रह सकती-इसी तरह काम, क्रोध, लोभ, मोह, मद और मात्सर्य की पत्तियाँ भी हमारे हृदय-स्थल को ईश्वर की ओर जाने के पच को अवरुद्ध करती हैं। उनसे बचना चाहिए।

कुछ आगे चल कर गुरुदेव फिर रुक जाते थे। सारा झुंड उनके चारों ओर खड़ा हो जाता था-स्वामी जी नामदेव के कुछ अभंग गाने लगते थे, उनके स्वर और लय बड़े मधुर होते थे।

इस प्रकार पाँच-छह दिन तक अपने गुरुदेव के सान्निध्य में रह कर उनके मृदु स्वभाव, भक्ति, असीम ज्ञानशीलता के आगे नतमस्तक होती रही।

गुरुभगवान् के आशीष प्रदान करने का एक तरीका ऐसा भी था-१९९५ से २००६ तक कम-से-कम चार-पाँच बार वह बहन कामिनी या बहनोई जी से मेरी ओर संकेत करके पूछते रहे-यह कौन है? आज मैं समझ पा रही हूँ कि इस प्रश्न के सहारे वह मुझे अपना आशीर्वाद देते रहे। मैं पगली कभी भी मुँह खोल कर नहीं कह पाई-"आपसे दीक्षा-प्राप्त आपकी शिष्या हूँ।" बस, हाथ जोड़ कर रह जाती थी।

२००४ में गुरुदेव के पुन। दर्शन 'आनन्दाश्रम, केरल में हुए। गुरुदेव के निवास का प्रबन्ध साधु-धाम में हुआ था। वहाँ धाम के आगे रंग-बिरंगे फूलों से सजी एक बड़ी सी-बगिया थी। आश्रम से वहाँ जाने के लिए एक छोटा-सा 'गेट' था। सन्ध्या-समय जब गुरुदेव अपने विग्राम-स्थल पर जाया करते थे तब 'गेट' के अन्दर की ओर गुरुदेव तथा उनके सेवक रहते थे और बाहर की ओर आनन्दाश्रम के श्री स्वामी सच्चिदानन्द जी, श्री राम भाई तथा सारे आश्रमवासी रहते थे। वहाँ नित्य १०-१५ मिनिट तक विनोदपूर्ण बातावरण रहता था। एक दिन में भी धीरे-धीरे सरक कर 'गेट' तक पहुँच गयी। गुरुदेव से बोली- "स्वामी जी, मैं कल जा रही हूँ, कृपया मुझे थोड़ा समय दे दीजिए।" स्वामी जी तुरन्त शरणागत स्वामी जी से बोले-"भाई, यह कल जायेंगी, इन्हें समय दे दो।" मुझे सन्ध्या ७ बजे का समय मिल गया।

मेरी बुद्धि की कमी ही थी-मैने 'श्वेतकेतु' की भाँति सटीक प्रश्न न पूछ कर जो लिख कर ले गयी थी, उनको पढ़ कर बोली- गुरुदेव में इन प्रार्थनाओं का नित्यगान करती हूँ। जब-जब मुझे कोई नया मन्व-प्रार्थना मिलती रही उसको अपनी इन प्रार्थनाओं में जोड़ती चली गयी हूँ। इन प्रार्थनाओं का क्रम क्या होना चाहिए?" फिर घुटनों के बल बैठ कर ढेर सारे गुरु-मन्त्रों का उच्चारण करती रही। गुरुदेव ने क्रम ठीक करवा दिया। इस प्रकार गुरुवर्य के साथ आधे घण्टे का अवसर मिला।

सन् २००५ में 'गुरुवर्य ने स्वप्न में मुझे प्रसाद दिया- जलेबी का। हम सब किसी 'रिट्रीट' में गये हैं, वहीं विशेष प्रसाद दिया। मुझे उस दिन चरण स्पर्श करने का अवसर मिला। मैं भी जी भर कर अपनी दोनों हथेलियाँ उनके कोमल चरणों पर रखे देर तक अश्रुपात करती रही।

सन् २००६ में गुरुदेव ने गुरुप्रसाद देने के लिए स्वप्न में मेरे सिर पर आशीर्वाद का वरदहस्त रखा था।

मैं धन्य हूँ। कितनी बार मन में विचार आता है- इतना तो मैंने कुछ नहीं किया जो मुझे इतने महान् सिद्ध, ब्रह्मनिष्ठ गुरु की प्राप्ति हुई। मैं पुनः पुनः गुरुचरणों में रुचरणों में नतमस्तक हो नमन करती हूँ। । मेरे जैसी अल्हड़ चपल बालिका जो कभी सोच-समझ कर एक शब्द न बोल पाए, जिसे अपनी वाणी पर कोई प्रतिबन्ध न हो, उसके अन्दर उन्होंने धीरे-धीर शुद्धिकरण की प्रक्रिया चालू कर दी। अब भी बहुत सा कलुष बाकी है। गुरु-कृपा से बह भी धीरे-धीरे चला जाएगा, ऐसा विश्वास है। अब तो गुरुदेव हर समय साथ है। उनकी कृपा-अनुकम्पा मुक्त रूप से प्राप्त हो रही है।

गुलाब की पाँखुरी तक को हानि पहुँचाये बिना जीवन यापन करने वाले परदुःख कातर गुरुदेव के पावन चरणों में शतशः प्रणाम ।

अपने पावन गुरुदेव के चरण कमलों में अन्त तक असीम श्रद्धा रखने वाले गुरुभगवान् से प्रेरणा प्राप्त करके उनके चरणों में शिरशः नमन करते हुए उनके दर्शाए पथ पर चल कर अपने-आपको धन्य मानेंगी।

यस्मात्परतरं नास्ति नेति नेतीति वै श्रुतिः ।
मनसा वचसा चैव सत्यमाराधयेद्गुरुम् ।।

आदर्श सन्त स्वामी चिदानन्द

-श्री रवीन्द्रनाथ जी गुरु, वृन्दावन -

श्रीमद्भागवत के लब्धप्रतिष्ठ व्याख्याकार **स्वामी अखण्डानन्द जी महाराज आदर्श सन्त चिदानन्द जी महाराज का विनम्रता के साक्षात् अवतार के रूप में सम्मान करते थे।** हरिद्वार में श्रोताओं को उन्होंने प्रवचन देते हुए कहा था "स्वामी चिदानन्द साक्षात् विनम्रता की मूर्ति हैं। यदि कोई व्यक्ति विनम्रता को मनुष्य के रूप में देखना तथा विनम्र बनने का पाठ सीखना चाहता है, तो उसे चिदानन्द के पास जाना चाहिए। इस युग में ऐसा असाधारण विनयशील सन्त मिलना दुर्लभ है।"

वस्तुतः विनम्रता ही चिदानन्द स्वामी जी के व्यक्तित्व का प्रमाण-चिह था। यह गुण ही सन्त-जगत में इन्हें अमानित्व के अवतार के रूप में अन्य सन्तों से पृथक् करता था। विशिष्ट योगी,

आध्यात्मिक दिग्दर्शक तथा विश्व दिव्य जीवन संपाध्यक्ष स्वामी चिदानन्द सरस्वती महाराज के दिनांक २८-८-०८ को महासमाधि में प्रविष्ट हो ब्रह्मलीन हो जाने पर हार्दिक खेद है। दिनांक २४-९-१९१६ को एक प्रतिष्ठित परिवार में पैदा हुए थे। उनका पूर्वाश्रम नाम श्रीधर राव था। आठ वर्ष की वयः में ही वे धर्मपरायण थे। मद्रास के महाविद्यालय से स्नातक की डिग्री हासिल करने के बाद ही स्वामी अखण्डानन्द जी महाराज के परम मित्र स्वामी शिवानन्द जी सरस्वती जी के आश्रम में १९४३ ई. में सम्मिलित हुए थे। वे दिव्य जीवन संघ के साथ विजड़ित रहे, दिनांक २९-८-०८ शुक्रवार को प्रात सूर्योदय से पूर्व शिवानन्दनगर स्थित विश्वनाथ घाट पर गंगा जी के बीच में जल-समाधि देने के उपरान्त अवर्णनीय शोक छा गया। विदानन्द जी अपने गत जन्म में ही एक महान् योगी तथा सन्त थे। यह उनका अन्तिम जन्म था। स्वामी जी को सम्बलपुर विश्वविद्यालय (उत्कल) के परिसर में स्थित 'ज्योति-विहार' के अपने आवास काल में एक दिन अपने शिर का मुण्डन कराने के लिए एक नापित की आवश्यकता पड़ी। जब नापित आया तो स्वामी जी ३ सौजन्यतापूर्वक नापित के घरों में साष्टांग प्रणाम किया जिसमें वह परमाश्चर्य में पड़ गया। नापित की सेवाएँ प्राप्त करने के पूर्व उन्होंने सर्वप्रथम उसको अपनी हार्दिक प्रार्थना निवेदित की। क्षौर-कर्म समाप्त होने पर स्वामी जी ने उसे भोग के रूप में प्रचुर फल तथा दक्षिणास्वरूप कुछ सिके दिये थे, इससे यह शिक्षा मिलती है कि मानव में माधव दर्शनपूर्वक मनुष्यत्व से देवत्व में उन्नत होना चाहिए।

हमें स्वामी जी के आदर्शवाद की शक्ति का अविस्मरणीय अनुभव हुआ है, उनके शब्दों से असीम बल प्राप्त हुआ है। रोगग्रस्त पिता की आराध मृत्यु से रक्षा करने वाले एक आदर्श गुरु के रूप में स्वामी चिदानन्द जी हमारे चिरस्मरणीय है -

असीम ब्रह्माण्डेश्वर चरणपद्मार्पितमतिः
अखण्डानन्दशः शमितरिपुवाँऽमरयतिः ।
शिवानन्दप्रज्ञामृतदरुचिर श्रेष्ठमुदिरः
चिदानन्द स्वामी यजतु हितकामी भुवि सताम् ।।

'असीम विश्व ब्रह्माण्ड के ईश्वरपादपद्मार्पित बुद्धि वाले, अखण्डानन्द, समस्त रिपुजयी, अमर संन्यासी, शिवानन्द ज्ञानामृतप्रदायक श्रेष्ठ मुदिर चिदानन्द स्वामी इस धरती पर सन्तों के हिताकांक्षी के रूप में जपयुक्त हों।'

***

श्री चरणों में शतशत नमन है

-रचनाकार: सूर्यनारायण -

योगी चिदानन्द नाम है चरणों में शतशत नमन है।
कण-कण में जग में लीन है पावन सदा यह नाम है।।
अवतार हो तुम शान्ति का, करुणा दया की मूर्ति हो।
माता पिता आचार्य हो, संसार में तुम प्रीति हो।
तेरी शरण में आये हम, हमें प्यार दो और तार दो ॥

धन्य-धन्य हुई धरा यह, श्री चिदानन्द जन्म से।
कर्मयोगी भक्तियोगी नम्रता और कर्म से।
हे सन्त पावन श्री चिदानन्द प्यार दो हमें तार दो ।

मेरी यही है कामना पूरी करो गुरु साधना।
आराधन तेरी करूँ आशीर्वचन से तारना।
मेरी यही है याचना मुझे भक्ति दो वरदान दो ।

***

"हम कल भी थे, हम आज भी हैं"

परम श्रद्धेय स्वामी चिदानन्द की अपने भक्तों के प्रति आत्मिक अभिव्यक्ति

- श्री 'निराला राही', फर्रुखाबाद -

सतगुरु तो जीवित रहते हैं।
वह सूक्ष्म रूप से जब चाहें, शिष्यों से आ कर मिलते हैं।

हम कल भी थे, हम आज भी हैं, बस कहने को दिवंगत हुए।
केवल शरीर का अन्त हुआ, सचमुच हम पूरे सन्त हुए ।।
तत्त्वों में तत्त्व विलीन हुए, आत्मा, परमात्मा से मिल कर ।
सच्चिदानन्द सुख भोग रही, भव-रोगों से छुट्टी पा कर ।।

हम लघु से आज विराट हुए, थे रंक मगर सम्राट हुए।
निजसत्कर्मों में हम जीवित सत्कर्म ही सदैव महकते हैं।

अब पृथ्वी तत्त्व से हम ही तो नव-अंकुर बन कर निकलेंगे।
पाती-पाती में हम होंगे, हरफूल में हम ही महकेंगे ।।
जल तत्त्व हम ही वर्षा बन, पृथ्वी की प्यास बुझायेंगे।
नदिया की तरह इठलायेंगे, सागर की तरह लहरायेंगे ।।

जीवन औ मरण किनारे हैं- हम हरदम पास तुम्हारे हैं।
बस हृदय की आँखों से देखो, हम हरपल साथ ही रहते हैं।

हम अग्नि-तत्त्व से हारे हुए लोगों में ऊर्जा भर देंगे।
अरु वायु-तत्त्व से प्राणों में, नवजीवन जागृति भर देंगे।।
आकाश-तत्त्व से दुनियाँ में, अम्बर की तरह छा जायेंगे ।।

वर्षा की बूंदे बन-बन कर, अपनों से मिलने आयेंगे ।।

हर बूँद में देखो हम होंगे, सब दूर तुम्हारे ग़म होंगे।
बस दृष्टि को अपनी विराट करो, हम हर पल साथ ही रहते हैं।।

मेरी शिक्षाओं को केवल, दिल की अल्मारी में रखना।
जब याद अधिक मेरी आये, शिक्षाओं की स्मृति करना ।।
आंसू बन कर मेरी यादें, धरती पर मत गिरने देना।
सत्कर्म हमारे रख जीवित, बस श्रद्धांजलि मुझको देना ।।

आंसू आहें नहीं श्रद्धांजलि, सत्कर्मों की दो पुष्पांजलि।
सन्देश 'निराला राही' यह, 'श्री चिदानन्द जी' कहते हैं।।

***

सन्त-शिरोमणि

- सुश्री मेधा सचदेव, अलीगढ़ -

गुरुपूर्णिमा २००३। हजारों भक्त पंडाल में अपने भगवान, परम श्रद्धेय श्री स्वामी चिदानन्द जी महाराज के शुभागमन की सूचना पा कर, उनके दर्शनार्थ एकत्रित। बाहर अनन्त वर्षा। उस बेला में सभी का ध्यान एक ओर- गुरु महाराज कब पधारेंगे। अनवरत जप एवं कीर्तन का सुन्दर वातावरण! किसी को न कुछ करने की सुध, न भूख, न प्यास। आँखों में एकमात्र अपने गुरु के दिव्य दर्शन की लालसा। अकस्मात् सूचना आती है, गुरु महाराज शान्ति-निवास, देहरादून से ऋषिकेश की ओर प्रस्थान कर चुके हैं। प्रतीक्षा की पड़ियाँ कम हो रही है परन्तु हृदय-तरगे लालायित हो रही हैं।

लगभग चार घण्टे उपरान्त (क्योंकि परम पूज्य स्वामी जी को शिवानन्द आश्रम पहुँच का नव 'शिवानन्द पब्लिकेशन लीग का उद्घाटन करना था) सद्गुरुदेव का दिव्य दर्शन प्राप्त हुआ। सभी ओर जयकार का उदद्घोष- सद्गुरु महाराज की जय!" परन्तु आश्चर्य! गुरु महाराज मंच पर पधारते ही अपने गुरुदेव को नमन करके सभी भक्तों के भीतर विराजमान उस परम सत्ता को नमन करते हैं, कण-कण में नारायण-दर्शन पाते हैं। उसके उपरान्त ही आसन पर विराजते हैं। अद्भुत है यह लीला, यह रहस्य, यह सरल स्वभाव एवं नम्रता!

गुरुपूर्णिमा २००६। नवनिर्मित 'शिवानन्द सत्संग भवन' के उद्घाटन का सुअवसर! अनगिनत भक्तगण आज पुन अपने प्रभु की प्रतीक्षा में। कीर्तन, भजन की अनवरत गूंज। जैसे ही गुरु महाराज का आगमन हुआ अद्भुत आध्यात्मिक तरगों का स्पर्श सभी ने अनुभव किया, मानी कण-कण में वे विराजमान हों। आश्चर्यजनक एवं अविस्मरणीय पल थे बे। हर भक्त की करबद्ध मुद्रा एवं आँखों से अनवरत बहती असुधारा, मानो कितने युग पर्यन्त प्रभु के दर्शन पाये हो। कीर्तन करने वालों के भी गले सँध गये थे तथा अधर शब्दहीन हो रहे थे। उनके आगमन से सम्पूर्ण वातावरण आध्यात्मिक तरंगों से परिपूर्ण हो गया था। ऐसा प्रताप था गुरु महाराज का। वह दिव्य छवि आज भी रोमांचित कर देती है।

अतीव दयालु, नम्र एवं स्नेह की प्रतिमूर्ति थे पूज्य गुरु महाराज। उनके बारे में कुछ लिखना आकाश को कागज, सागर को स्याही एवं वृक्ष को कलम बनाने के समान है। परम श्रद्धेय गुरुदेव श्री स्वामी शिवानन्द जी महाराज ने पहले ही उद्घोषित कर दिया था- श्री स्वामी चिदानन्द जी का यह अन्तिम जन्म है।"

अद्भुत है उस परब्रह्म की लीला! अनन्त सौभाग्यशाली हैं वे, जिन्होंने इन महान् विभूतियों के युग में जन्म लिया तथा उनकी चरण-रज एवं दर्शन का कोटिशः सौभाग्य प्राप्त किया।

आज गुरु महाराराज हमारे मध्य शरीर रूप में यद्यपि नहीं हैं, तथापि उनकी सत्ता एवं आभास निश्चय ही कण-कण में व्याप्त है। गुरु कभी मरता नहीं। वह अमर है। गुरु महाराज एक से अनेक हो गये हैं।

विश्वनाथ मन्दिर में कीर्तन हो रहा था। सभी भक्त निमग्न थे। अचानक देखा, गुरु महाराज पधारे और सबसे पीछे आ कर बैठ गये। कई भक्तगण दौड़ कर गये एवं उनसे आगे पधारने का आग्रह किया, किन्तु गुरु महाराज नहीं माने। विलक्षण था उनका यह अतीव सरल स्वभाव! दिव्य जीवन संघ के परमाध्यक्ष होते हुए भी कभी उन्होंने अपने पद को प्रदर्शित नहीं किया। ये वहीं बैठे रहे तथा कीर्तन चलता रहा।

अन्य अवसरों पर देखा, गुरु महाराज कीर्तन-गायक के गायन के पश्चात् कीर्तन को दोहराते थे, कभी उन्होंने अपने को बड़ा या महत्त्वपूर्ण दिखाने की चेष्टा मात्र भी नहीं की। सभी भक्तों के साथ मिल कर, कीर्तन गा कर कीर्तनामृत की अनवरत धारा को चलायमान रखा। ऐसे सरल स्वभाव तथा निरभिमान व्यक्तित्व के धनी थे गुरु महाराज।

एक बार समाधि मन्दिर में सत्संग समाप्त होने पर स्वामी जी बाहर जाने लगे, तभी एक बालक उनके समक्ष आ कर नतमस्तक हो गया। आश्चर्य! स्वामी जी भी घुटने टेक कर उस बच्चे को नमन करने लगे। बच्चा खिलखिला कर हँसा और पुन स्वामी जी को नमन किया। स्वामी जी पुनः उसके आगे नतमस्तक हो गये। बच्चे का बालपन एवं विनोद स्वामी जी को सर्वदा प्रिय था, परन्तु उससे भी अचरज-भरा था उनका सरलतापूर्ण स्वभाव, जिससे वे अनायास ही दूसरों को शिक्षा दिया करते थे।

बच्चों की ओर उनका स्नेह विशेष रूप से था। बाल्यावस्था में इस शरीर को एक दिन अतीव गम्भीर अवस्था में अपने माता-पिता के साथ बैठे देख कर स्वामी जी पूछ उठे, 'यह इतनी उदास क्यों है? इसे क्या चाहिए." फिर, मुझे हँसाने के लिए उन्होंने मुझे पहले 'चैरी' दी और बोले," "यह लो लाल बत्ती। फिर स्वामी जी ने एक लड्डू के रूप में प्रसाद दिया और बोले, यह लो पीली बत्ती। तदुपरान्त अगूर दिये और बोले, "यह तो हरी बत्ती। स्वामी जी का यह भाव और स्नेहमयी भाषा आज भी मुझे उल्लसित करती है।

मेरी माँ को एक बार स्वामी जी का एक पत्र प्राप्त हुआ तथा आश्चर्य हुआ क्योंकि माँ ने उन्हें कोई पत्र नहीं लिखा था। वस्तुत माँ की अस्वस्थता की सूचना उन्हें एक स्वामी जी से मिली तो स्वामी जी महाराज ने आशीर्वाद-भरा एक लम्बा पत्र भेज दिया। पत्र टाइप किया हुआ था। नीचे स्वामी जी के हस्ताक्षर थे। माँ को पढ़ कर अच्छा तो लगा, परन्तु में शंका आ गयी कि स्वामी जी के पास इतना समय कहाँ कि वे माँ के लिए पत्र लिखने बैठें। किसी से टाइप करा लिया होगा और नीचे हस्ताक्षर कर दिये होगे। समय बीता। एक बार माँ स्वामी जी के दर्शन लाभ के लिए दिल्ली गई। श्री मुकुन्दलाल सचदेव के पर स्वामी जी ठहरे हुए थे।

माँ ने एक स्वामी जी से गुरुदेव के दर्शनों हेतु अनुरोध किया। वे स्वामी जी ऊपर की मंजिल पर गये और वापिस आ कर बोले- 'स्वामी जी कह रहे हैं, दस मिनट के बाद आना।" जब दस मिनट उपरान्त गये तो माँ दृश्य देख कर चकित रह गई। स्वामी जी महाराज टाइप कर रहे थे और टाइप करते-करते ही उन्होंने माँ से बातें की।

माँ नतमस्तक हो गई। माँ के प्रश्न का मौन उत्तर मिल चुका था। उसके बाद माँ ने संकल्प किया कि जीवन में कभी भी किसी के प्रति शंका का भाव मन में नहीं लाएँगी।

एक बार एक सन्त शिवानन्द आश्रम, ऋषिकेश आये और गुरु महाराज से मिलने गये। उस समय स्वामी जी कुछ पत्र टाइप कर रहे थे। आगन्तुक सन्त उनसे बोले- अरे! आपके पास कोई सेवक नहीं है क्या? आप स्वयं क्यों यह कार्य कर रहे हैं? मैंने तो ऐसे कार्यों के लिए सेवक रखे हुए हैं।" अत्यन्त विनीत भाव में स्वामी जी महाराज ने उत्तर दिया- मैं तो अपना सेवक स्वयं ही हूँ।"

समस्त विद्याओं के धनी गुरु महाराज ने कभी जीवन में सकट आने पर अपनी दिव्यता को प्रकट नहीं किया। एक बार अपने को कमरे के भीतर बन्द कर लिया और बाहर स्वामी जी (जो उनकी सेवा में थे) से कह दिया कि दो घण्टे तक उन्हें कोई नहीं बुलाए। एक अन्य शहर में उनके एक शिष्य अस्पताल के बिस्तर पर ऑपरेशन हेतु लेटे हुए थे। उन्होंने बताया कि पूज्य गुरु महाराज ऑपरेशन-पर्यन्त उनके समीप खड़े रहे। इस प्रकार की अनेक घटनाएँ अनेक भक्तों के जीवन में घटित होती रही है। जिसने उन्हें सच्चे हृदय से पुकारा, वे उसी क्षण उसके समक्ष प्रकट हो गये।

श्री गुरु महाराज के पावन पोडशी पर्व पर अनेक सन्तों ने अपनी भावभीनी श्रद्धांजलि परमात्मा में विलीन उस परम-आत्मा को दी। शिवानन्द आश्रम, ऋषिकेश परिसर में यह प्रकाशोत्सव रूप में मनाया गया। हर ओर प्रकाश ही प्रकाश-गुरु महाराज के प्रकाश में विलीन होने का द्योतक' सम्पूर्ण आश्रम में गुरु महाराज की दिव्य बाणी का प्रकाश बिखेरते कई लाउड स्पीकर! सम्पूर्ण वातावरण चिदानन्दमय! पूज्य स्वामी जी की महासमाधि उपरान्त जब २८-०८-०८ को रात्रि-बेला में उनका शरीर पुष्पों द्वारा सुसज्जित अवस्था में समाधि-मन्दिर लाया गया, उन्हें पूज्य गुरुदेव की समाधि के समीप विराजित किया गया, जहाँ वे प्रात कालीन ध्यान-सभा में वक्तव्य दिया करते थे वह स्थान आज भी दिव्य तरंगों से परिपूर्ण है। प्रत्येक भक्त अनायास ही वहाँ प्रतिष्ठित किये गये गुरु महाराज के माल्यार्पित चित्र के समक्ष नतमस्तक हो जाता है, लगता है, जैसे अब भी वहाँ विराजमान हो।

सम्पूर्ण वातावरण इन सोलह दिन पर्यन्त दिव्यता के सागर में गोते लगाता रहा, सभी के मन में पूज्य स्वामी जी के सशरीर न होने के आभास को मानो मिटाने में प्रयासरत हो। प्रत्येक दिवस का शुभारम्भ ध्यान एवं प्रभातफेरी द्वारा होता था जिसमें अनेक भक्त प्रभु नाम-संकीर्तन एवं जयघोष करते हुए जाते थे। सबसे आगे परम पावन सद्गुरुदेव श्री स्वामी शिवानन्द जी महाराज एवं गुरु महाराज का सुसज्जित चित्र हाथों में धारण किये दो सन्यासी। राह में जाने वाले पथिक एवं यात्री अनायास ही रुक कर इन महान् विभूतियों को प्रणाम कर उठते। स्वामी जी का परम प्रताप उनके सेवक एवं भक्तों में परिलक्षित हो रहा था। तन-मन-हृदय से आज भी अपने सद्गुरु के प्रति सम्पूर्ण समर्पण की भावना उनमें दृष्टिगत हो रही थी। प्रतिदिन दोपहर ३ से ४. बजे तक समाधि-मन्दिर में कीर्तन की लहों सभी को आनन्दविभोर कर देतीं। साय ५ से ६ तक शिवानन्द आश्रम में गुरु महाराज के निवास स्थान गुरु निवास पर पूज्य स्वामी जी की गद्दी (जिस पर बैठा करते थे) के समक्ष भक्तों द्वारा कीर्तनामृत का पान अविस्मरणीय रहेगा।

षोडशी दिवस (१२-०९-०८) का वर्णन अकथनीय प्रतीत होता है। विशाल, अनुपम, भव्य सन्त-समागम। १६ सन्त-शिरोमणि, विभिन्न आश्रमों से पधारे महामण्डलेश्वर मंच पर विराजमान तथा लगभग २,५०० से अधिक अन्य महात्मा गण आश्रम में पधारे हुए। बद्धांजलि अर्पित करत समय प्रत्येक सन्त ने परम पूजनीय स्वामी जी के सान्निध्य की पावन स्मृतियाँ व्यक्त की। सबके अधर-पुर पर स्वामी जी के दो गुणों का विशेष रूप से उल्लेख था- उनका सरल स्वभाव एवं सेवा- भाव। कुष्ठ रोगियों की अपने हाथों द्वारा स्वामी जी ने सेवा की यह प्रसंग भक्तों के समक्ष एक प्रेरणा के रूप में प्रस्तुत था।

पूज्य गुरुदेव श्री स्वामी शिवानन्द जी महाराज का सन्देश भी सेवा, प्रेम, दान, पवित्रता, ध्यान, साक्षात्कार भी सेवा द्वारा आरम्भ होता है। प्रेम और त्याग की अनन्य मूर्ति थे स्वामी जी। नि सन्देह उनके गुणों को शब्दों में परिणत करना सूर्य को दीप दिखाने के समान है। स्मरण हो आता है षोडशी' में पधारे श्री स्वामी लक्ष्मणदास जी (जिन्हें गुरु महाराज अपने निकट मित्र मानते थे) का वह वाक्य है

"हे स्वामी चिदानन्द! मुझे अपने जैसा बना दो,
मुझे झुकना सिखा दो, मुझे झुकना सिखा दो।"

परम पूज्य ब्रह्मलीन श्री स्वामी चिदानन्द जी महाराज को सच्ची श्रद्धाजलि करेंगे। तभी अर्पित होगी अथ उनके द्वारा दर्शाए मार्ग का हम अनुसरण अपने गुरु के दिव्य गुणों को धारण करके हम सदा उन्हें जीवन्त रखें, यही शुभेच्छा, प्रयास एवं अभिलाषा।
जय शिवानन्द जय चिदानन्द।

महाराजश्री का जीवन एक अमूल्य जीवन सन्देश

-श्रीमती शान्ति आनन्द माता जी, दिल्ली -

जो स्वामी हो सद्भावों का.
उसको में धनवान कहूंगी,
जिसका मजहब मानवता हो,
उसको मैं इन्सान कहूँगी;
जो विष पी कर स्वयं,
औरों को सुधा पिलाए,
उसको में भगवान् कहूँगी।

विश्वविख्यात परमवन्दनीय श्री स्वामी चिदानन्द जी महाराज से साक्षात्कार एवं परिचय स्वामी श्रीप्रियानन्द के माध्यम से उनके पूर्व- निवासस्थान श्रीधाम, दिल्ली में सन् १९७१ में आयोजित एक सत्संग में हुआ। यद्यपि उस समय केवल दर्शन ही हो सके, तथापि उनके दिव्य व्यक्तित्व एवं आध्यात्मिक उपलब्धि की गहरी छाप मुझ पर पड़ी। उसके बाद जब-जब भी उनके दर्शन का लाभ मुझे मिला, हमेशा ही एक अद्‌भुत अनुभूति का संचार हुआ। 'साधना तत्त्व' पुस्तक में महाराजश्री ने कहा -

आपने कर्म किया और फल पाया
यह समय और स्थान में सीमित है।
परन्तु प्रभु-साक्षात्कार किसी कारण
समय और स्थान से बंधा नहीं है
यह असीम, अनादि और अनन्त है।

सन् १९७६ में श्री स्वामी जी महाराज के दर्शन-सत्संग का सौभाग्य मिला अपने राजकीय उच्चतर माध्यमिक कन्या विद्यालय, ढक्का, दिल्ली में। वहाँ की प्रधानाचार्या पूज्या सुश्री सुशीला सचदेव श्री स्वामी जी महाराज की विशेष भक्त थी। श्री शिवानन्द आश्रम, ऋषिकेश भी जाती रही। उनकी माताश्री तथा परिवार के अन्य सभी सदस्यों का स्वामी जी के प्रति श्रद्धा भक्तिभाव सराहनीय
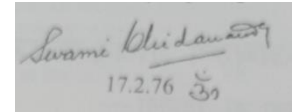
रहा। यदा-कदा प्रेम भेंट के रूप में कुछ अनुदान राशि भी भेजती रहती थीं। उन्होंने विद्यालय में आयोजित एक समभाव सम्मेलन की अध्यक्षता हेतु श्री स्वामी जी महाराज को सादर आमन्त्रित किया। कार्य-व्यस्तता तथा समयाभाव होने पर भी निमन्त्रण स्वीकार कर श्री स्वामी जी महाराज नियत समय पर विद्यालय पधारे। बड़ा ही भव्य समारोह था जिसमें सभी विधाओं के गणमान्य महानुभावों ने अपने विचार प्रस्तुत किये। स्वामी जी महाराज का प्रवचन तो अत्यन्त प्रभावशाली रहा।

इस समारोह में सभी सभी महानुभावों से उनके विचार-टिप्पणियाँ लेने हेतु मेरी ड्यूटी लगी थी। जब मैं पूज्य श्री स्वामी जी महाराज के सन्निकट पहुंची तो अनायास ही अपनी व्यक्तिगत परेशानी की बात भी कह बैठी। उन्होंने उस समय मेरी व्यक्तिगत डायरी में जो लिखा वह यथावत् यह है-

ॐ

You are Divine!

Your life must be divine! The body, mind and intellect are not your real self. Therefore be divine in thought, speech and action! This is your privilege.

Swami Chidananda
17.2.76 ॐ

"आप दिव्यात्मा है। आपका जीवन दिव्य होना चाहिए। आपका शरीर, मन और बुद्धि ही आपका वास्तविक स्वरूप नहीं। अतः आपके विचार, आपकी वाणी, आपके कार्यकलाप दिव्यता से परिपूर्ण हो। दिव्यता आपका सर्वाधिकार है।"

उनके उपरोक्त शब्द मेरे जीवन के मूलमन्त्र बन गये। पहले मुझे अपनी परेशानी का कारण दूसरे लोग लगते थे और उनको अपने दुःख का कारण समझ कर मैं और भी दुःखी रहने लगती। परन्तु जब-जब भी मैं श्री स्वामी जी का सन्देश पढ़ती तो लगता "जितने हम कमजोर बनेंगे और अपने को असहाय समझेंगे उतने ही अधिक दुःखी होंगे। जीवन-पथ की कठिनाइयाँ हमारी परीक्षा लेने आती हैं। अतः हमें उनका स्वागत करना चाहिए और भगवान् के नाम में पूर्ण आस्था रखते हुए प्रसन्नतापूर्वक सन्टेड कि हो कर अपने को समर्पित कर देना चाहिए।" अर्थात्

मुश्किले मुश्किल लगेगी ग़र तवज्जो दी उन्हें
ढील देते जाइए यह खुद सुलझती जाएंगी।

वे जीवन की दिव्यता को मानते थे। "जो सच्चे अर्थों में प्रत्येक क्षण को उज्वल चेतना की दीप्ति से परिपूर्ण जीवन व्यतीत करते हैं-वही परम ब्रा को प्राम करते हैं। धर्म रक्षति रक्षितः। ईश्वर धर्म का मूल है, धर्म का स्रोत है। देह के लिए चित्तशुद्धि परमावश्यक है। साधना में यदि आप मोक्ष अभिलाषी हैं, जो मनसा-वाचा-कर्मणा दिव्य बनें। दिव्य जीवन-यापन आपका जन्मसिद्ध अधिकार है।"

चिराग बन कर रहे तो हवा बुझ्झा देगी
यह मशवरा है कि आफ़ताब बन कर रहो।

वे हमेशा सेवा-भाव का सन्देश देते थे- "आप दूसरों की सेवा करके उन्हें उनत बनाने में जितनी अधिक ऊर्जा व्यय करते हैं, उतनी ही अधिक दिल्य ऊर्जा आपकी ओर प्रवाहित होती है।" (शाश्वत सन्देश)

सेवा का संकल्प कर लो सेवा हो परोपकार है,
हर दुःखी की पीड़ा हर लो ये ही जीवन सार है।

स्वामी जी महाराज ने अपना सारा जीवन देश-समाज के दीन-दु थियो एवं पीड़ितों की सेवा के लिए अर्पित कर दिया। उनकी यही धारणा रही होगी-

औरों के हित जो जीता है,
औरों के हित जो हँसता है,
उसका हर आँसू रामायण
और प्रत्येक कर्म गीता है।

श्री स्वामी जी के विचार हैं- "शरीर की चेतना से ऊपर उठें। इस तथ्य को स्पष्ट अनुभव करें कि आप अनन्त तथा परम आत्मा है। जीवन जैसा भी मिला है, उसे स्वीकार करें। जब आप अपनी सारी कठिनाइयाँ, समस्याएँ परमात्मा को सौंप देते हैं तो ये करुणामूर्ति आपको सब दुःखों से मुक्त कर देते हैं और आप सुख-शान्ति एवं आनन्द को उपलब्ध होते हैं।"

देह की गति सत् कर्म है,
मन की सच्चिन्तन ध्यान।
धन की गति दान है,
जीवन की गति कल्याण ।।

जीवन में अन्धकार की चर्चा करते हुए स्वामी जी महाराज का कहना था-"हम आत्म-विस्मृति के अन्धकार में मत रहें। सर्वोपरि सर्वोच्च मता के प्रकाश में प्रकाशित हों। शेर की भाँति जीवन जिएं, तुच्छ सियार-गोदड की भाँति नहीं। अर्थात् -

यह अन्धेरा इसलिए है,
खुद अंधेरे में हैं लोग,
आप अपने दिल को,
इक दीपक बना कर देखिए।

"सोचो इस पावन धरती पर क्यों आये हो? बिना कारण नहीं लाये गये हो। यह तुम्हारे पुण्य कर्मों का प्रतिफल ही है... बाहर के बदलाव के लिए शुरुआत भीतर से करनी होगी। भीतर बदला तो बाहर भी बदलने लगेगा।"

आज उनकी पावन-स्मृति में उन्हें भावभीनी श्रद्धांजलि अर्पित करते हुए यही कहूंगी कि जो अलौकिक दीप-स्तम्भ हमारे लिए छोड़ गये हैं उसको अपने जीवन का ज्योति-पच बना सके तो हमारे जीवन का अन्यभार तिरोहित हो जायेगा।

जीवन की यात्रा पूरी करके पहुँचे शिवधाम
परमार्थ के सच्चे राही महापुरुष, शत-शत तुम्हें प्रणाम।
****

'ॐ गुरु गुरुभ्यो नमः'

- डॉ. 'जग्गू नौडियाल' जगदीश प्रसाद, रायवाला -

मेरे परम आराध्य ब्रह्मलीन पूज्य श्री स्वामी चिदानन्द जी महाराज का अति दुर्लभ सान्निध्य समय-समय पर मुझे प्राप्त होता रहा, जिसे मैं अपने जीवन की महत्त्वपूर्ण उपलब्धि और अमूल्य निधि मानता हूँ।

अपने इस मनुष्य-जीवन में यदि मैंने कुछ प्राप्त किया है तो वह है स्वामी जी के पवित्र श्रीमुख से मुझे दिया गया गुरुमन्त्र।

मेरे जीवन के मार्गदर्शन में परम पावन स्वामी जी की विशेष कृपा मुझ पर रही है। उनकी दिव्य दृष्टि का आध्यात्मिक प्रकाश सदा मुझे मिलता रहा, और मिल रहा है। मेरी जो भी कृति समाज में आई, प्रकाशित हुई उन प्रत्येक रचनाओं में, परम पूज्य स्वामी जी की दिव्य दृष्टि के गंगाजली छोटे अवश्य पड़े, जिससे प्रत्येक रचना पुस्तकीय आकार ले पायी।

१९८२-८३ में मुझे प्रथम बार परम पवित्र पूज्य स्वामी चिदानन्द जी महाराज के दिव्य दर्शन हुए। प्रथम दर्शन में ही लगा कि मैं किसी महान् आध्यात्मिक दिव्य सन्त के कर कमलों में अपनी काव्य कृति गढ़वाली बोली में 'समलौण' भेंट कर रहा हूँ। १९८० में उत्तर प्रदेश सरकार के आर्थिक सहयोग से यह काव्यकृति प्रकाशित हुई थी। तब शिवानन्द आश्रम के गुरु निवास में मैंने पूज्य स्वामी चिदानन्द जी को पुस्तक भेंट की थी।

१९८४ में सितम्बर में परम पवित्र पूज्य स्वामी जी ने उतरकाशी से मुझे गुरु निवास, शिवानन्दनगर, ऋषिकेश, मुनिकीरेती बुलाया। और मुझसे पूछा कि 'समलौण' के बाद कोई पाण्डुलिपि तैयार है, तो मेरे पास लाओ। मैं प्रकाशित करवा देता हूँ। मैंने पूज्य स्वामी जी से कहा कि स्वामी जी तैयार तो है किन्तु एक माह का समय मुझे दे दीजिए।

पुनः ७ दिसम्बर, ११ बजे रात्रि स्वच्छन्द और शान्त बातावरण में मैंने पूज्य स्वामी जी के दर्शन किये। निःसंकोच दण्डवत् प्रणाम करके चरणस्पर्श से मिलने वाला आध्यात्मिक लाभ मिला। पाण्डुलिपि उनके पास रखी। मेरा परम सौभाग्य रहा है कि पूज्य स्वामी जी के दर्शन जब भी किये, मैंने उनके श्रीचरणों को स्पर्श अवश्य किया। वे मुझे कुछ नहीं कहते। यद्यपि स्वामी जी किसी को भी चरण स्पर्श नहीं करने देते थे।

पूज्य स्वामी जी ने 'मुनाल का पड़ोस की कविता संग्रह की पाण्डुलिपि देखी, मुझे दी और कहा कि अब तुम मुझे इस पाण्डुलिपि की एक-एक कविता सस्वर सुनाओ। तुम ऐसा समझो कि एकान्त में बैठ कर कविता लिख रहे हो और सस्वर गा रहे हो। जिस भावमयी मूड में तुम्हारी

अभिव्यक्ति हुई है, उसी भावभंगिमा में मुझे सुनाओ। मैंने पूज्य स्वामी जी को 'मुनाल का पड़ोस' कविता संग्रह की प्रथम कविता सुनायी कि

शैल के प्रदेश में, गीतिका के भेष में।
विज्ञान सा प्रभात में, भाव में विभोर हूँ।
विजन के इस देश में, हिलांस के सुदेश में।
मुनाल के पड़ोस का में, एक गीतकार हूँ।

फिर इस कविता पर समीक्षात्मक टिप्पणी हुई। फिर अगली कविता और पूज्य स्वामी जी ने आराम से सभी कविताएँ सुनीं।

रात्रि के दो बज चुके थे। पूज्य स्वामी जी ने पूछा "इसमें भूमिका किसकी लिखाना चाहते हो?" गुरु-कृपा से मेरे मुँह से निकला "स्वामी जी, आपका आशीर्वचन और डॉ. महादेवी वर्मा की भूमिका लिखवाना चाहता हूँ, किन्तु..." पूज्य स्वामी जी ने कहा- "किन्तु क्या है। तैयार हो जाओ।" पूज्य स्वामी जी ने अपने सचिव को रात्रि में ही बुलाया, और कहा कि कल ८ तारीख को इनका इलाहाबाद का रिजर्वेशन होना है। और मुझसे कहा- "अब सो जाओ, कल दो बजे इलाहाबाद के लिए प्रस्थान करो।" रात्रि के तीन बज चुके थे।

अगले दिन पूज्य स्वामी जी ने मुजे रिजर्वेशन का टिकट दिया, और उसके साथ एक लिफाफा भी, जिसमें इलाहाबाद में ५-७ दिन रुकने और ठहरने और खाने की व्यवस्था के लिए पैसे थे।

महादेवी जी ने १० दिन रुकने के लिए कहा और २० दिसम्बर १९८४ को उन्होंने 'मुनाल के पड़ोस' की भूमिका लिख कर मुझे दे दी।

मैं ऋषिकेश पहुंचा और पूज्य स्वामी जी के दर्शन करके 'मुनात का पड़ोस' की भूमिका और पाण्डुलिपि दोनों पूज्य स्वामी जी को सौंप दी। अगले दिन में उत्तरकाशी लौट गया। पूज्य स्वामी जी विदेश यात्रा पर चले गये। विदेश-प्रवास में पूज्य स्वामी जी ने मुनाल पक्षी की फोटो प्राप्त कर ऋषिकेश भेजा, जो पुस्तक में दिया गया है।

अप्रैल १९८५ में 'मुनाल का पड़ोस' कविता संग्रह प्रकाशित हुआ। पूज्य स्वामी जी ने ५०० प्रतियाँ अपने भक्तों को बाँटी तथा ५०० प्रतियाँ मुझे दी जो गुरु-कृपा से मैंने विभिन्न पुस्तकालयों को उपलब्ध करवाई।

१९८५ में पूज्य स्वामी जी के उत्तरकाशी में दर्शन हुए। स्वामी जी ने पूछा- "आजकल क्या कर रहो हो?" मैंने अपने शोध-कार्य और उसके विषय यमुना एवं टाँस नदियों की पाटियों के क्षेत्र "स्वाँई क्षेत्र के लोक-साहित्य का सांस्कृतिक अध्ययन बताया" और कुछ रीति-रिवाजों के फोटो लिये थे, वे भी बताये। पूज्य स्वामी जी ने कहा- "साफ-साफ चित्र नहीं हैं।" मैंने पूरी बातें बतायी कि, "स्वामी जी, मैं किराये का कैमरा ले जाता हूँ तथा फोटो भी अभी इतना अच्छा नहीं खींच पाता हूँ।" पून्य स्वामी जी ने मुझे नवम्बर में ऋषिकेश आश्रम में मिलने का समय दिया।

नवम्बर में आश्रम में पूज्य स्वामी जी के दर्शन करने गया। स्वामी जी ने अपने एक भक्त ओमार मन्सूर से मेरा परिचय करवाया। फिर मेरी पी-एच. डी. के बारे में बात की। और इस प्रकार पूज्य स्वामी जी ने उन महाशय को बताया कि इनके पास कैमरा नहीं है जिसकी इन्हें सख्त आवश्यकता है। उन्होंने अगले वर्ष मेरे लिए कैमरा ला दिया। पूज्य स्वामी जी ने उनसे दो-तीन रंगीन रील और पूरा सामान मंगवाया था।

अगले वर्ष अक्तूबर १९८६ में मुझे फिर आश्रम में बुलाया और अपने कमरे में मुझसे कहा कि तुम १०-१२ फोटो खींचो जिससे तुम्हें अभ्यास हो जाये और अच्छा और साफ फोटो खींचना आ जाये। पूज्य स्वामी जी ने अपने ही कमरे में मुझे फोटो खींचने का अभ्यास करवाया। तब की फोटो पूज्य स्वामी जी की जो मैंने सीखने में खींची हैं, मेरे पास सुरक्षित हैं।

मैं कितना सौभाग्यशाली था अब समझ में आ रहा है कि पूज्य स्वामी जी के दर्शन ही दुर्लभ होते थे और मैं उनके कमरे में उन्हीं की तरह-तरह की फोटो खींच रहा हूँ। स्वामी जी कितने महान् दिव्य पुरुष थे जिनके लिए एक बच्चा भी उतना ही अधिकार उन पर समझता जितना कि उनका एक महान् भक्त।

इन्हीं दिनों मैंने परम पूज्य स्वामी जी से मन्त्र प्राप्त करने की विनती की। पूज्य स्वामी जी ने तिथि निश्चित करके मुझे गुरुमन्त्र दिया। साथ में कहा कि अब तो बहुत देर हो गयी है। अधिक-से-अधिक मन्त्र जपना। उनके श्रीमुख से मुझे दिया हुआ मन्त्र, मेरी शायद पूर्व-जन्म की साधना का फल हो सकता है, जिसे मैं अपना परम सौभाग्य समझता हूँ और अपने मनुष्य-जीवन में आने की सार्थकता भी।

सौभाग्य से दो बार मेरे परिवार ने भी परम पूज्य स्वामी जी के दर्शन किये थे। उनके द्वारा रचित पुस्तकों और शिक्षाओं से मेरे परिवार को जीवन-दर्शन प्राप्त होता है। एक बार गंगोत्री में पूज्य स्वामी जी के दर्शन हुए, तब पूज्य स्वामी जी ने २५-३० मिनट तक मुझे जीवन की सफलता, सार्थकता और सतर्कता के प्रति सावधानियों से सम्बन्धित उपदेश दिया।

१९८९ में मैं उत्तरकाशी से ट्रान्सफर हो कर ऋषिकेश के निकट रायवाला गवर्नमेन्ट स्कूल में आया। १९९१-९२ में मेरे मन में स्कूल खोलने का विचार आया। एक दिन ब्राह्ममुहूर्त में मुझे आभास हुआ कि पूज्य स्वामी जी कह रहे हैं कि मैं गंगोत्री जा रहा हूँ। मैंने भी अपना कार्यक्रम बनाया और गंगोत्री धाम के लिए प्रस्थान किया। पूज्य स्वामी जी के आश्रम में गया तो मालूम हुआ कि पूज्य स्वामी जी आश्रम में थे। अगले दिन उनके दर्शन हुए। बिलकुल शान्त और स्वच्छन्द वातावरण था। मैं आराम से पूज्य स्वामी जी की शिक्षाप्रद वाणी से अवगत हो रहा था जिसमें जीवन की गूढ़ रहस्यमयी बातें छिपी हुई थीं।

इसी क्रम मैंने अपनी बात भी उनके सामने रखी कि 'स्वामी जी, मेरे मन में एक छोटा-सा स्कूल खोलने का विचार आया है। मेरा पुत्र एम. ए., बी. एड है। वह अच्छे ढंग से संचालित कर लेगा।' पूज्य स्वामी जी ने अपनी सहमति व्यक्त की और मुझे एक छोटी-रसरी पुढ़िया कागज की दी और कहा कि यह पुड़िया अपने बड़े पुत्र के हाथों में देना। इसमें उसके लिए आशीर्वाद

फिर मैंने रायबाला में किराये पर दो कमरे लिये और स्कूल खोल दिया। पूज्य स्वामी जी के आशीर्वाद से स्कूल बड़े रूप में नहीं, किन्तु छोटे से रूप में पाँचवीं कक्षा तक ठीक ढंग से

चल रहा है। पूज्य स्वामी जी का आशीर्वाद सदा हमारे साथ है। बिना किसी की मदद के हम कुछ निर्धन बच्चों भी को भी पढ़ा रहे हैं। यह सब परम पूज्य स्वामी चिदानन्द जी महाराज की कृपा है। उनकी कृपा हम सब पर सदा बनी रहे।

मई २००३ में पूज्य स्वामी जी ने अपने कुछ प्रिय भक्तों को देहरादून शान्ति निवास में दर्शन दिये, जिनमें उन्होंने मुझे भी बुलाया। पूज्य स्वामी जी के दर्शन करने वालों में विदेशी और कुछ अपने देश के भक्त थे-लगभग २५-३० भक्तों को ही उन्होंने बुलाया था। अब परम पवित्र स्वामी जी ढीलचेयर में थे। एक बड़े से हाल में उनके दिव्य दर्शन हुए।

परम पूज्य स्वामी जी ने पहले मुझे अपने पास बुलाया और कहा- "आजकल क्या कर रहे हो?" मैंने कहा- "स्वामी जी, एक कविता-संग्रह 'कामधेनु की जर्जर काया' प्रकाशित करवा रहा हूँ।" पूज्य स्वामी जी ने कहा- "पाण्डुलिपि मेरे पास लाना, मैं भी उसमें कुछ लिखूँगा।" मैंने स्वामी जी से पुस्तक में आशीर्वाद का फोटो देने की विनय की, जिसे स्वामी जी ने कृपापूर्वक पूर्ण किया। पूज्य स्वामी जी ने 'कामधेनु की जर्जर काया' के लिए अपना आशीर्वचन लिख कर मुझे दिया। उनका आशीर्वचन मेरे जीवन की अमूल्य निधि है।

मेरे गुरु महाराज परम पवित्र पूजनीय स्वामी चिदानन्द जी महाराज स्वयं में एक 'तीर्थ' हैं। मेरा परम सौभाग्य है कि विश्व विश्रुत परम पूजनीय स्वामी श्री चिदानन्द जी महाराज जैसे महानतम परम योगी अध्यात्म-जगत् के महान् साधक के आशीर्वाद के गंगाजली छींटे इस मनुष्य जीवन में मेरे ऊपर पड़े और मुझे गुरुमन्त्र भी स्वयं पूज्य स्वामी जी ने गुरुनिवास में ही दिया। मैं धन्य हुआ। इस मनुष्य जीवन में मुझे इतने पवित्र और महान् सन्त का सानिध्य समय-समय पर मिलता रहा। मैं कभी-कभी कवि के नाते पगडण्डियों में भटक जाया करता हूँ और दिग्भ्रमित-सा हो जाता हूँ, किंकर्तव्यविमूढ़-सी स्थिति-परिस्थितियाँ बन जाया करती हैं; किन्तु परम पवित्र स्वामी चिदानन्द जी महाराज मेरे पथ-प्रदर्शक बन कर मुझे जाग्रत कर जाया करते हैं। यही मेरा परम सौभाग्य है, यही मेरे पुण्यों का फल है।

सांसारिक सम्बन्ध अनित्य, अशाश्वत तथा अपूर्ण हैं। जब हम उन परिवर्तनशील तथा अस्थिर सम्बन्धों से अपना तादात्म्य जोड़ते हैं, तभी हम दुःखी होते हैं और तभी अशान्ति का अनुभव करते हैं। हमारे ऋषि-मुनि जो कि त्रिकालज्ञ थे, जिन्होंने अपनी समाधि में अनुभव किया, उन्होंने यह घोषणा की कि एकमात्र ईश्वर ही नित्य, शुद्ध, शाद्यत तथा पूर्ण है। उसी का ज्ञान तथा उसी में स्थित होने से ही हमें परम शान्ति तथा परमानन्द की प्राप्ति हो सकती है। यही हमारे जीवन का प्रमुख तथा महत्त्वपूर्ण कर्तव्य है।

स्वामी चिदानन्द

उत्तराखण्ड के दिव्य आध्यात्मिक सन्त

पूज्यपाद श्री स्वामी चिदानन्द जी महाराज

-'कवि'-

नत मस्तक हो नमन करूँ मैं,
धन्य हिमालय की धरती।
निर्मल गंगे नमन तुझे,
तू चिदानन्द की तपस्थली।

तेरे तट पर मुनिकीरेती,
सुरम्य धाम की वनस्थली
दो महासन्तों के तप से है,
धन्य हुई यह तपस्थली।

सन्त चिदानन्द जी के गुरुवर,
पूज्य शिवानन्द कहलाये।
हम जैसे अल्पज्ञों को भी,
इनके दर्शन हो पाये।

दो महासन्तों की एक रूपता ने,
जन-जन का कल्याण किया।
आध्यात्मिकता का दीप जला कर,
सम्पूर्ण विश्व का कल्याण किया।

पूज्य चिदानन्द गुरु हमारे,
कृपा उनकी बनी रहे।
उनके ही श्रीचरणों में बस,
ध्यान हमारा लगा रहे।

पूर्व जन्म में सुकृत्यों का,
पुण्य बचा था शेष कभी।
भवसागर से तर गये होंगे,
पुरखे अपने आज सभी।

शीश झुकाता गुरुवर मैं हूँ,
श्रीचरणों में नतमस्क।
ज्ञान-प्रभा की प्यास बुझा दो
दो कविता की एक ललक।

भाव-ग्राही

- श्रीमती पूनमसुभाष जी, देहरादून-

देव देव शिवानन्द! दीन बन्धो पाहिमाम्।
चित्स्वरूप चिदानन्द, शिवानन्द रक्षमाम् ।।

श्री शिवानन्द आश्रम में सन् १९६७ अक्तूबर माह में मेरे भाई गोपाल (मधुकर) के यज्ञोपवीत-संस्कार के समय पूरे परिवार का फोटो खींचा गया। मुझे अपने होश की पहली याद यह है कि मैं परम पावन श्री स्वामी चिदानन्द जी महाराज की गोद में थी; में बहुत खुश हुई। अवस्था ढाई-तीन वर्ष की होगी। बचपन से ही दादा जी (श्री स्वामी अर्पणानन्द जी), दादी जी (श्रीमती रामप्यारी शर्मा आश्रम श्री साथी की सी के साथ आपण आती रही है। समय-समय पर भी समस्या रही उन्हें प्रार्थना स्मरण से समाधान मिलता रहा है। हमारे भावों-भावनाओं को सदा पूर्ण किया। भावग्राही भगवान् चिदानन्द जी महाराज की सदा ही जय हो।

विवाह से कुछ दिन पूर्व मुझे सपना आया कि स्वामी जी हमारे घर आये हैं। मुझे तथा मेरे भावी पतिदेव (सुभाष जी) को आशीर्वाद दे रहे हैं।

विवाहोपरान्त भी स्वामी जी से आशीर्वाद प्राप्त करते रहे। मेरी दोनों बेटियाँ भी उनसे आशीर्वाद प्राप्त कर धन्य हो गयीं। बड़ी बेटी (स्वाति) स्वामी जी की गोद में खेली है। छोटी बेटी श्रुति के प्रथम जन्मदिवस पर अनुग्रह प्रार हुआ। उनकी असीम कृपा से हम चारों प्रसन्न हो सत्लरंग-पूजा आदि करते रहते हैं। 'श्रीधाम परिवार' में जन्म ले कर हम सबका जीवन धन्य-धन्य हो गया जहाँ भक्ति-रस की धारा सदा प्रवाहित होती रहती है। माता-पिता श्री विमला हरीश के सुसंस्कार प्राप्त हुए। स्वामी जी का जब भी 'नारायण धाम' में शुभागमन होता यह भजन जरूर गाते थे। हम भी उनके उपदेश-आदेश को सदा याद रखने का प्रयत्न करते रहते हैं।

ऐसे हैं भक्त मुझे प्यारे,
बतला दिया कृष्ण मुरारी ने।
गीता द्वारा अमृत सबको,
पिलवा दिया कृष्ण मुरारी ने ।।

****

वात्सल्य मूर्ति

-श्रीमती उपासनाप्रवीण शर्मा जी, मेरठ -

हमारे परिवार का सम्बन्ध दिव्य जीवन संघ (आश्रम) ऋषिकेश से मेरे जन्म से पूर्व से है। मेरे दादा जी जो सन् १९३४ से आश्रम में आ रहे थे, सन् १९४७ से सपरिवार अखण्ड रूप से ग्रीष्मावकाश में श्री गुरुदेव के श्रीचरणों में आश्रम में आते रहे- रिटायर्ड प्रधानाचार्य श्री चमनलाल

शर्मा जी ने सन् १९८४ में संन्यास लिया और वे स्वामी अर्पणानन्द जी महाराज के नाम से आश्रम में स्थायी रूप से वास करते थे। आज उनकी बेटियाँ संन्यासिनी चतुष्टय (हमारी बुआ जी) भी संन्यास लेने के बाद १९८६ से आश्रम में सेवा-सौभाग्य प्राप्त कर स्थायी वास कर रही हैं। मेरे पिता जी श्री सोमदत्त हरीश शर्मा जी रेलवे में कार्य करते थे, वह जब भी मसूरी एक्सप्रेस ट्रेन से ड्यूटी पर दिल्ली जाते तो अक्सर हमें बताते कि आज तो स्वामी चिदानन्द जी महाराज के साथ सफर किया। यह सुन कर हम बहनों को भी बड़ी उत्सुकता होती थी, कि एक बार हम भी उनके साथ ट्रेन में यात्रा करें। जबकि स्वामी जी हमारे निवास स्थान करनपुर (देहरादून) अक्सर आया करते थे, उनके आने पर हममें एक होड़ सी लग जाती थी कि हम बस स्वामी जी के लिए क्या न कर दें।

आखिर वह दिन आ ही गया, जब हमें स्वामी जी से साथ दिल्ली से मद्रास तक ट्रेन में यात्रा करने का सौभाग्य प्राप्त हुआ, अब हमारी खुशी की कोई सीमा न थी। मद्रास पहुँचने के बाद भी स्वामी जी ने हमें अपने साथ ही रखा, मद्रास में हम स्वामी जी की बहन पूज्या वत्सला माता जी से भी मिले तथा उनसे भी हमें इतना स्नेह मिला कि वह अवसर हमें हमेशा ऐसा एहसास कराता है मानो हम अब भी स्वामी जी के पास खड़े हो कर फोटो खींचने की इन्तजार कर रहे हों। धीरे-धीरे समय गुजरता रहा, मेरी भी गृहस्थी हो गयी परन्तु फिर भी हम समय निकाल कर हमेशा आश्रम आते हैं उनके आशीर्वाद के लिए, हमने अपने घर के मन्दिर में भी स्वामी जी का फोटो रखा है और पूजा करते हैं। मुझे तो आज तक यह समझ ही नहीं आया कि स्वामी जी और भगवान् में क्या फर्क है। हमारे लिए तो स्वामी जी ही सब-कुछ है चाहे उन्हें भगवान् कहें या कुछ और क्योंकि हमने तो अपना सारा बचपन उन्हीं की गोद में उछल-कूद कर बिताया। मेरे ससुराल परिवार के भी सब सदस्य आश्रम के भक्त हैं। मेरे सुपुत्र वैभव व पतिदेव प्रवीण जी को स्वामी जी महाराज का आशीर्वाद प्राप्त होता रहा।

स्वामी जी वैसे तो सभी से एक समान प्यार करते थे। लेकिन एक प्रसंग ऐसा है जिससे लगता है कि स्वामी जी मेरे पिता जी से कितना प्यार करते थे। सन् २००६ की गुरुपूर्णिमा पर स्वामी जी आश्रम में 'आडिटोरियम का उद्घाटन करने आये थे। देहरादून से पूरा परिवार माता श्री (विमला शर्मा), पिता श्री भाई गोपाल सहित सभी बहिने टैक्सी से रवाना हुए। रास्ते में टैक्सी खराब हो गयी। दूसरी टैक्सी का प्रबन्ध किया। हमें पहुंचने में बहुत विलम्ब हो गया। आश्रम में बहुत भीड़ थी हमें हॉल के अन्दर स्थान प्राप्त नहीं हो सका, तो हम सभी बाहर थे। समापन के बाद कई लोगों ने मेरे पिता जी से कहा-'अरे हरीश जी, आप यहाँ? आपको तो स्वामी जी ने याद किया। मंचासीन हो कर उन्होंने संन्यासिनी चतुष्टय से पूछा- "हरीश जी आ गये?" उन लोगों से यह सुन कर मेरे पिता जी भावुक हो गये और उनकी आँखों से अश्रुधारा रोके नहीं रुक रही थी। इतनी भीड़ में भी स्वामी जी का मेरे पिता जी को नाम से पुकारना हम सबको भी रोमांचित कर रहा था। बाद में हम समझ पाये कि अन्तर्यामी स्वामी जी महाराज को रास्ते में घटित पटना की सब खबर थी; उन्हीं सर्वसमर्थ ने किसी महान् विपत्ति से बचा कर जीवन-रक्षा की और आज तक भी करते आ रहे हैं।

यह बह कुछ स्मरणीय पल थे जो हमने स्वामी जी के साथ बिताये। यादें तो पिछले ३५ वर्षों की अनेक हैं लेकिन सभी को लिखना सम्भव नहीं है।

कैसा समझा दें जमाने को,

कि तू ऐसा है या वैसा।
हमने तो बस चाह की,
गहराई से हम जानें तुझे ।।

****

गुरु-सान्निध्य

- डॉ. श्रीमती प्रेम वाही माता जी, नौएडा -

ध्यानमूलं गुरोर्मूर्तिः पूजामूलं गुरोः पदम्।
मन्त्रमूलं गुरोर्वाक्यं मोक्षमूलं गुरोः कृपा ।।

"जीवात्मा, गुरु के माध्यम से स्वयं को दिव्य चेतना तक उठाती है। इसी माध्यम के द्वारा अपूर्ण पूर्ण बनता है, सीमित अनन्त बनता है और मर्त्य परमानन्द के अन्तरस्थ जीवन में प्रवेश करता है। वास्तव में गुरु जीवात्मा और परमात्मा के मध्य एक डोर है जिसकी दोनों प्रदेशों में मुक्त और निर्वाध पहुँच है।"

-शिवानन्द

मानव-जीवन सभी के लिए एक निरन्तर संघर्ष है। कभी दुःखों से जूझने का, कभी सुखों को पाने को। कभी कुछ पा लेने का अभिमान, कभी खो देने का अवसाद। कभी निराशाएँ तो कभी अनजाने भविष्य का भय। परन्तु गुरु की कृपा, और वह भी स्वामी चिदानन्द जी जैसे सद्गुरु की शिक्षाएँ अगर आपके पास, आपके साथ हैं तो माँ का दुलार, पिता का वरदहस्त, सखा का स्नेह और शिक्षक के निर्देश, जीवन का पूर्ण मार्गदर्शन आपके पास है, आपके सदा-सर्वदा साथ है।

जीवन की विषमताओं में, समस्याओं और पथ की बाधाओं में आपका गुरुसमर्पण एक आश्चर्यजनक प्रभाव दिखाता है। गुरु-समर्पण से आपका यह विश्वास स्थिर हो जाता है कि जो भी है, या नहीं है वह गुरु-कृपा है। गुरु-निर्देशित जीवन जीने का आनन्द अद्‌भुत है। वैज्ञानिक सत्ता से शासित आज का युग एक भ्रम पैदा करता है कि आध्यात्मिक साधना के लिए सामान्य जीवन की सुख-सुविधाओं को त्यागना अथवा संन्यास लेना आवश्यक होता है एवं गुरु-समर्पण एक दास्य भाव है, इसमें व्यक्ति को निजी स्वतन्त्रता खो देनी होती है आदि। परन्तु ऐसा कुछ भी नहीं है। अगर हम कुछ खोते हैं तो वह हमारा अहम्, अहंकार। आध्यात्मिक साधना एवं गुरु-समर्पण एक आन्तरिक प्रक्रिया है। बाह्य जगत् से ऊपर उठ कर यह एक व्यक्तिगत आध्यात्मिक सम्बन्ध है-गुरु-शिष्य का, साध्य और साधक का, भगवान् और भक्त का। यह सम्बन्ध इतना पावन है कि जब इसका आपके जीवन में समावेश हो जाता है तो स्वतः ही आपका जीवन बासनाओं, व्यसनों से मुक्त हो, सुखद और सामान्य होने लगता है। आप निराशाओं को भी सकारात्मक रूप देने लगते हैं।

गुरुदेव स्वामी चिदानन्द जी की शिक्षाओं में अद्‌भुत शक्ति है जो आपके जीवन का रूपान्तरण कर देती है। वह शिष्य की उंगली पकड़ कर धीरे-धीरे उसे चलना सिखाते हैं। मेरा एक अनुभव अविस्मरणीय है। कुछ वर्ष पहले की बात है-जीवन समस्याओं के विषम संघर्ष में था।

दिनचर्या पर निराशाओं का आधिपत्य होने लगा था। अपने पराये सभी अनजाने थे, कोई राह नहीं दिखती थी। मन में एक प्रश्न था, या यो कहिए संशय था-सांसारिक प्रपंच की समस्याओं को ले कर गुरु की शरण जाना, साधना को कितना संकुचित करना होगा। गुरुदेव के शब्द "यह भी बीत जायेगा" को सहारा मान कर जीवन की इन चुनौतियों से संघर्ष चल रहा था। मन से हर दिन यह प्रार्थना अवश्य होती कि गुरुदेव मेरे साथ हरदम बने रहें जिससे जीवन की यह समस्याएँ मुझे दुर्बल न कर सकें। कोई ऐसा उपाय हो कि गुरु-सानिध्य का अनुभव हर पल साथ रहे और गुरुदेव के साथ एक वार्तालाप स्थापित हो सके।

सोचा गुरु अपनी शिक्षाओं में बसते हैं। उनकी एक पुस्तक 'Ponder These Truths' जो उनके प्रातः ध्यान सत्र के प्रवचनों का संकलन है, अपने साथ रखना शुरू किया और जब बहुत उलझन होती, आँखें बन्द कर उसे खोलती, उस पृष्ठ पर दिये गये विचारों से अपने प्रश्नों का उत्तर ढूँढ़ती। इस तरह गुरुदेव से एक संवाद स्थापित हो गया, मुझे मेरी समस्याओं के उत्तर मिलने लगे।

गुरु महाराज स्वामी चिदानन्द जी की 'Ponder These Truths' श्रीमद्भगवद्गीता की तरह है। गीता को आप जब भी पढ़िए, मनन करिए आपको लगता है मानो श्री कृष्ण आपके प्रश्नों के उत्तर दे रहे हैं। उनकी पावन उपस्थिति का अनुभव होता है। ऐसे ही गुरु महाराज की "Ponder These Truths' को जब भी पढ़ो, मनन करो गुरु महाराज के सान्निध्य का अनुभव होता है।

मैं इस प्रक्रिया से इतना उत्साहित हुई की प्रतिदिन मैंने एक अध्याय का अनुबाद अपनी डायरी में लिखना शुरू किया और पूरा दिन उस अध्याय के साथ बिताना शुरू हो गया। रात को उस पर सारे दिन के मनन-चिन्तन को भी लिखने लगी। मेरे लौकिक-पारलौकिक सभी प्रश्नों के उत्तर मिल रहे थे, सभी संशय मिटने लगे। यह एक अनमोल अनुभव था-पूरा दिन गुरुदेव का सानिध्य। वह अकेलापन मेरे चारों ओर एक सुखद मौन में परिवर्तित हो गया। एक समाधिस्थ अवस्था थी जिससे बाहर आने को जी ही नहीं चाहता था। गंगा की शान्त लहरों सा सुख था। समस्याओं का दूभर बोझ सहज होने लगा। धीरे-धीरे उलझने सुलझने लगीं। यह एक लम्बा समय था- कष्टों का, कठिनाइयों का, चुनौतियों का। इस अनुपम सानिध्य-सुख में सब डुविधाएँ गौण हो गयीं। उनकी शिक्षाएँ, उनके विचार इतने सशक्त थे कि विद्युत् तरंगों की तरह मेरी बन्द आँखों में प्रकाश भरने लगा। इनमें एक ऐसा सौन्दर्य था, माधुर्य था, संगीत के स्वरों सी एक ऐसी लय-ताल थी कि अनजाने ही मेरे मन-मस्तिष्क पर कविता बन कर थिरकने लगे। मेरे अन्तस में मन्दिर की पावन पंटियों की तरह बज उठे।

आज पीछे मुड़ कर देखती हूँ तो समझ में आता है नदी के दो किनारों की तरह एक किनारा जीवन की चुनौतियों से जूझ रहा था तो दूसरा आत्म-विकास की ओर बढ़ने का प्रयास कर रहा था। जीवन-साधना के दोनों पक्ष प्रपंच और परमार्थ कैसे एक साथ एक-दूसरे के पूरक होते हैं, स्पष्ट हो रहा था। यह रूपान्तरण इतने सहज रूप से हुआ-मानो चिना प्रयास के सहज, क्योंकि वह गुरुदेव की अद्‌भुत शक्ति थी जो काम कर रही थी। गुरुदेव स्वामी चिदानन्द जी की अंगरेजी प्रवचन-माला 'Ponder These Truths' का हिन्दी काव्य रूपान्तरण गुरु-सान्निध्य के इस अनुभव का परिणाम है। यह आध्यात्मिक साधना के पाँच चरणों के रूप में एक-एक करके पाँच भागों में साधकों के लिए प्रकाशित हुआ। इस लेखन-यात्रा ने कई वर्षों के अरुणोदय के

प्रकाश को आत्मसात् किया और कई संध्याओं की निराशाओं से संघर्ष किया। परन्तु हर पल एक अनुभव स्पष्ट था कि गुरुदेव लिख रहे हैं। उनका दामन पकड़ने वाला शिष्य एक बार चलना शुरू करता है तो फिर रुकता नहीं। कोई भी पड़ाव, कोई भी मोड़ उसकी गति का अवरोध नहीं कर पाता।

तेरे ही उपवन के फूल
बिखरे हैं तेरे अभिनन्दन में
श्रद्धा मकरन्द मिलाया है अपना
स्वागत समर्पण के कुंकुम चन्दन में।
अमृत सागर की हर बूंद अमृत है
भरी अंजलि कुछ बूंदों की, लाई अर्चन में
तेरा हो सब तेरा है
आनन्द बसा मेरा इस पूर्ण समर्पण में ।

****

हमारे जीवन-आधार

- श्रीमती अर्चना शर्मा माता जी, देहरादून-

सन्त! परम हितकारी,
परम कृपालु सकल जीवन पर,
हरि सम सब दुःख हारी।

श्री सद्गुरुदेव स्वामी शिवानन्द जी महाराज और परम सन्त गुरु श्री स्वामी चिदानन्द जी महाराज के सत्संग की सुन्दर, शिक्षाप्रद बातें अपने दादा जी (स्वामी अर्पणानन्द जी), दादी जी एवं माता-पिताश्री से बचपन से सुनते रहे। ऐसे लगता था कि हम सभी आश्रम में, शिवानन्द दरबार में बैठे सत्संग कर रहे हैं। कई बार रात्रि मेरे सपनों में आ कर स्वामी जी महाराज ने आशीर्वादित किया। धीरे-धीरे अनुभूति होने लगी स्वामी जी हमारे जीवन-आधार हैं। बड़े होने पर जब कभी शादी की चर्चा हुई तो मेरी हार्दिक इच्छा यही रही कि आश्रम में स्वामी जी महाराज की दिव्य उपस्थिति में ही यह कार्य सम्पन्न हो, पर संकोचवश किसी से यह बात कह न सकी। समय आया तो आश्चर्य की सीमा न रही जब देहरादून में ही विवाह मण्डप में अपना बहुमूल्य समय दे कर परम कृपालु श्री स्वामी जी महाराज रात भर उपस्थित रहे। सब देखा, सब सुना। मुझ अकिंचन पर अगाध दया! बस यही मेरी आन्तरिक निधि है। इसी कृपा-बल पर मेरा जीवन चल रहा है।

मेरी बेटी मयूरी पर भी इनका भरपूर आशीर्वाद रहा है। आश्रम में हों या शान्ति निवास में हम दोनों ने अपने माता-पिताश्री के साथ दर्शन सत्संग का पूरा लाभ उठाया। सन् २००६ की २४ सितम्बर का आनन्द तो सीमातीत रहा। अविस्मरणीय और अवर्णनीय।

पूज्य स्वामी जी की महाराज कभी सूचित करके और कभी अचानक घर में पधार कर हम सबको अनुगृहीत करते रहे। चलते समय हम आगामी दर्शन के लिए पूछते तो उनका मधुर उत्तर होता "ऐसा है जी! आप हमें यहीं से याद करेंगे तो हम आपके पास ही होंगे जी।" वास्तविकता यह है कि यह कथन सत्य घटित होता रहा। स्वामी जी महाराज के कई चमत्कार हमारे साथ होते रहे हैं। कितनी ही बार उन्होंने कष्टों से हमें बचाया है। आज भी यही भास होता है कि वे हमारे आस-पास ही है।

स्वामी जी प्रेरणाप्रद यह पंक्ति सदैव कानों में गूँजती रहती है-

'सेवा, भक्ति, ध्यान द्वारा साक्षात्कार पाओ।"

हमें वे शक्ति दें हम उनकी सशिक्षाओं का पालन कर सन्मार्ग पर बढ़ते रहे।

लगभग डेढ़ महीने से पिताश्री (हरीश शर्मा जी) बिस्तर पर हैं। गम्भीर अवस्था में अस्पताल भी दाखिल रहे। हमारा हर पल चिन्ता में बीता। आश्रम की पूजा-अर्चना, पूज्य बरिष्ठ स्वामी जी की सतत प्रार्थना एवं श्री श्री स्वामी जी महाराज की अहेतुकी अगाध दयामयता से उन्हें नवजीवन प्राप्त हुआ है। इस दशा में माताश्री, पिताश्री, इस परिवार की बेटियों-दामादों, पुत्र-पुत्रवधू सभी बच्चों को स्वामी जी की असीम कृपा की अद्भुत अवर्णनीय अनुभूति हुई-

तुम रोज-रोज ही नहीं केवल सुनते हो,
तुम हर दिल की, हर पल सुनते हो।
हर जन की, हर क्षण की सुनते हो।
सच्चे मन की तत्क्षण सुनते हो ।।

****

महान् प्रबोधक

- श्री कल्याणभाई एन पटेल जी, अहमदाबाद -

हे करुणा सागर! मैं आपकी कृपा और करुणा का। बहुत आभारी हूँ। यह संस्मरण आपकी मानस-पूजा-अभ्यर्थना के रूप में आपके परम निरंजन, निर्गुण, निराकार, सर्वव्यापी, सर्वज्ञ और सर्वान्तर्वासी स्वरूप को भाव सहित अर्पण करता हूँ।

परम पूज्य स्वामी श्री चिदानन्द जी महाराज के सानिध्य में आयोजित साधना शिविर (दिनांक २, ३, ४ मार्च १९८४) के पूज्य गुरुदेव के श्रीमुख की अमृतवाणी के वक्तव्य की स्मृति अंश रूप में प्रस्तुत है।

दिनांक १-०३-१९८४-

पहली मार्च, सायं छः बजे टाउन हाल में पूज्य श्री का प्रवचन रखा गया, विषय था 'शान्ति की पुनः स्थापना के लिए क्या करना चाहिए।' उसी पर विचार प्रकट करते हुए अवगत

कराया कि "शान्ति के लिए हमें अपने आपसे ही शुरुआत करनी चाहिए। आपने, विश्व कौन-सी स्थिति पे आ खड़ा है इसका हुबहू चित्र सामने रखते हुए दर्शाया कि अभी विश्व विश्वयुद्ध के किनारे पर आ खड़ा है। विश्व के महाराष्ट्रों में इतनी ज्यादा मात्रा में 'एटोमिक अनीं' का सर्जन हुआ कि इस अनर्जी का क्या करना चाहिए यह सोचना भी मुश्किल ही गया है। इस एनर्जी (शक्ति) का नाश करना हो तो कहाँ करना चाहिए यही एक बड़ा प्रश्न उपस्थित हो गया है। क्योंकि इसका सागर में अथवा अन्तरिक्ष में किसी भी जगह पर नाश करना विश्व में सबके लिए खतरा ही है। इसके उपाय में आपश्री ने ईश्वराभिमुख होने का आदेश दिया था। सरकार के लिए भी आपश्री ने कहा था कि वह भी पूरी तरह सभी रूप में खो चुकी है। तो फिर शान्ति के लिए किसको कहने जायें? अन्त में अन्तिम सुझाव देते हुए बताया कि हमें अपने बालकों को ही ऐसा सात्त्विक शिक्षण देना चाहिए जिससे बाद की नई पीढ़ी द्वारा शान्तिमय वातावरण अवश्य पुनः स्थापित किया जा सके।"

२-३-१९४४ को आपश्री ने समझाया आत्मविश्वास का विकास करो और ईश्वर प्राप्ति की तीव्र इच्छा रखो। यह संसार माया का प्रपंच है। अशान्ति बाहर है कि अन्दर, और ये किसके द्वारा उद्भव होती है? हमारे भीतर बिगाड़ कहाँ है? फिर स्पष्ट किया है कि यह सम्पूर्ण प्रपंच हमारा मन ही रचता है।

हमारी देह (शरीर) पाँच कर्मेन्द्रियों सहित बास्तविक रूप में जड़ है जब मन सुषुप्त या निद्रावस्था में होता है तब हमारी यह देह कोई भी क्रिया नहीं कर सकती है और आत्मा, वह तो नित्य शुद्ध, आनन्दस्वरूप, चिन्मय प्रकाशरूप और प्रशान्त है। इसलिए यह तो पहले से ही दोष रहित है। अब जो बिगाड़ है ये तो मन में है। जब भी मन जाग्रत में से निद्रा में जाता है तभी बाहरी जगत् अदृश्य हो जाता है। बाद में मन स्वप्न की भूमिका में विहार करके सुषुप्ति में जा कर वहाँ परम सन्तोष-विश्राम का अनुभव करता है। अब तो यहाँ स्वप्न सृष्टि का भी लोप हो जाता है। जाग्रत होते ही 'हूं' का खेल फिर से शुरु हो जाता है। और देहाध्यास ही घर-ऑफिस, दफ्तर-दुकान, चाचा, मामा, माता, पिता, भाई, पुत्रादि दृश्य जगत् के सम्बन्ध बना लेता है। जाग्रत होते ही जैसे स्वप्न का जगत् नाश होता है वैसे ही आत्म-जाग्रति (आत्मज्ञान) होते ही यह जगत् का दृश्य प्रपंच समाप्त हो जाता है। इसलिए आत्मज्ञान प्राप्ति के ही जिज्ञासु बनें।

आपश्री ने बताया कि मन के तीन दोष हैं-मल, विक्षेप, आवरण। विवेक की जाग्रति के लिए, करने योग्य न करने योग्य कर्म को विवेक से समझ लेना चाहिए। मन को ढीला न छोड़ें। जैसे बन्दर को खम्भे से बांधने से वह खम्भे से ही जुड़ा रहता है। वह इधर-उधर हो नहीं सकता वैसे अपने मन को परमात्मा के साथ बाँध लेना चाहिए, चिन्तन और मनन द्वारा मन को समझा के आत्मा-अनात्मा के विचार से, विवेक से मन को वैराग्य के लिए तैयार करें।

दिनांक ३-३-१९८४-

पूज्य श्री ने आज पुनः पुनः तीव्र मुमुक्षुत्व की भावना के साथ तितिक्षा, विवेकपूर्ण दृष्टिकोण अपना कर मन को वैराग्य सम्पन्न बना कर वैराग्य को दृढ़ करने का बोध दिया। वैराग्य को दुर्ग की उपमा देते हुए समझाया कि जिस तरह दुर्ग में रह कर लड़ना सुरक्षित होता है। इसी तरह षडरिपुओं के साथ लड़ने के लिए वैराग्य दुर्ग के समान है। जैसे एक बार वमन किया अन्न फिर से ग्रहणीय नहीं वैसे ही त्यागे हुए विषयों का चिन्तन नहीं करना चाहिए। यहाँ पर गुरुदेव ने सूकर

और भगवान् विष्णु विष्णु तथा लक्ष्मी जी का दृष्टान्त दे कर बोध दिया कि जिस तरह अपनी परिस्थिति में आनन्द लेने बाला सूकर माता लक्ष्मी जी का बैकुण्ठ में ले जाने के आग्रह को नकार कर अपनी स्थिति में मस्त हो जाता है। तो जो लोग मात्र इस संसार के विषयों और भौतिक पदार्थ तथा ऐन्द्रिय विषयों की तृप्ति में ही आनन्द लेते हैं, जिन्हें उसी में ही सन्तोष होता है उन्हें उन्हीं के ही तरीके से रहने देना चाहिए। किन्तु हमें उन बातों से ऊपर उठ कर अक्षय आनन्द, परम शान्तिमय सत्स्वरूप को प्राप्त करने का लक्ष्य और ध्येय ही अपने सम्मुख रखना चाहिए।

'मन एवं मनुष्याणां कारणं बन्धमोक्षयोः ।'

इस श्रुति वाक्य को समझाने के लिए दृष्टान्त प्रस्तुत किये। पहला है-एक राजा और इसका प्रधानमन्त्री राजा को कुछ परामर्श देता है, जिस पर राजा को गुस्सा आ जाता है। गुस्से में ही मन्त्री को एक ऊँचे मीनार के ऊपर पाँव से ले कर गले तक रस्सी से कस के लपेट कर रख देने की सजा देता है। जिससे उसे कोई भी वस्तु या मदद न मिलने से उसका नाश हो जाये। वहाँ पर मन्त्री बहुत धैर्य के साथ शान्त हो कर अपनी इस स्थिति से छुटकारा पाने का मार्ग सोचता है। मन्त्री कुछ घोड़ी-बहुत यौगिक क्रियाएँ जानता था। वह अपने शरीर को बिलकुल ढीला कर संकुचन आकुंचन क्रिया से रस्सी उतार देता है और बन्धन-मुक्त हो जाता है। बाद में उसी रस्सी को मौनार से बाँध कर उतर जाता है और स्वयं को बचा लेता है। इस तरह जो अपने बन्धन का कारण था वही उसकी मुक्ति का पर्याय बन गया। इसी प्रकार हमें अपने मन को ऊर्ध्वगामी बनाने से हमारा मन भी हमारी मुक्ति का कारण बन जाता है।

दूसरा है-एक पण्डित था जो राज दरबार में भागवत कथा श्रवण करा के अपनी आजीविका चलाता था। एक दिन कथा के अन्त में राजा पण्डित से बोला आप ज्ञानी हो और भागवत की कथा करते हो तो बताओ मेरा मोक्ष कब होगा, मुझे मुक्ति कैसे मिलेगी। जो आप नहीं बताओगे तो प्राणदण्ड की सजा दी जायेगी। पण्डित व्यथित होता घर जाता है। वह बहुत परेशान हो जाता है। किसी में भी उसका मन नहीं लगता क्योंकि यह मात्र कथा वाचक था ऐसा कोई भी ज्ञान उसके पास नहीं था जो राजा की मुक्ति के सन्दर्भ में बता सके। उसकी एक बेटी थी जो बहुत ही चतुर थी, अपने पिता को व्याकुल और उदास देख कर पूछती है क्या बात है पिता जी? बहुत आनाकानी के बाद लड़की की जिद के कारण पण्डित राजा प्रश्न के बारे में बताता है, लड़की बड़ी सहजता से कहती है अरे! इसकी चिन्ता आप मत करो, इसकी जिम्मेदारी मेरी, चिन्ता छोड़ के खा लो। लड़की की दृढ़ता व विस्वास देख पण्डित खा लेता है। जवा देने के दिन पंडित अपनी नन्हीं बेटी को साथ में ले जाता है। समयानुसार कथा शुरू होती है तभी पीछे से जोर से रोने के साथ-साथ मुझे बचाओ, अरे कोई तो मुझे छुड़ाओ, ऐसी चिल्लाने की आवाज आती है। कथा में विक्षेप होने के कारण राजा चिढ़ता है। यह कौन आवाज करता है पता लगाओ। अनुचर पता करके बताता है एक लड़की चिल्ला रही है। राजा वहाँ जा कर पूछता है, क्यों रोती हो? लड़की कोई उत्तर न दे के और भी मजबूती से खम्भे को पकड़ कर रोती है और बिहाती है मुझे बचाओ, मुझे चुड़ाओ। राजा बोला, तुझको किसी ने बाँधा नहीं है तूने खुद ही खम्भे को पकड़ा है तुझे ही खम्भे को छोड़ना है, क्यों अन्य को परेशान करती है और चिल्लाती है, लड़की हंस पड़ती है। स्वस्थ हो कर कहती है। आपको अपने प्रश्न का जवाब मिला? यही है आपके प्रश्न का जवाब। आपने खुद राजा की उपाधि पकड़ रखी है, इन्हें छोड़ देने से आप मुक्त ही हो। राजा सोच में पड़ जाता है। तब राजा को बोध हो जाता है कि सच में हमने मूर्खता से जो पकड़ रखा है उसे हमने ही छोड़ना है। पहला दृष्टान्त से थोड़ा अलग है। यहाँ हम अविद्या माया से भौतिक बस्तुओं से

हम खुद चिपक रहे हैं जिसको हमें खुद ही छोड़ना है। इस प्रकार जो बन्धन का कारण है वही छोड़ देने से हमारी मुक्ति का कारण बन जाता है।

अन्तिम दिन पूज्य श्री ने अपने आशीर्वचनों में बताया कि भगवान् हमें सर्वत्र सब जगह देख रहे हैं। हमारी सभी क्रियाएँ और कर्म अपने इष्ट से छिपे नहीं हैं। दूसरी बात बतायी कि सत्संग में सुनी बात को अपने मन में मनन करके आत्मसात् करना चाहिए। एक कान से सुन कर दूसरे से निकाल मत देना। वैसे ही सुनी बातों को मुँह से बोल कर, वाणी के द्वारा बिखेर मत देना। अपितु जठर में ले जा कर पचाना। अन्त में परम पून्य गुरुमहाराज स्वामी शिवानन्द जी का आदेश सन्देश यह बताया कि, जागतिक भौतिक मायावाद से मन को निकाल कर ईश्वर के स्मरण-चिन्तन में लगा देना, और एक हाथ से भगवान् को पकड़ कर रखना और दूसरे हाथ से जगत् के कार्य को करते रहने का। परमात्मा तथा। प्रार्थना करके शिविर की गुरुदेव को अपनी अहेतुकी कृपा करने की पूर्णाहुति की गयी।

सच ही में सन्तों के सानिध्य में दिन बिताना ये बड़े आनन्द और सौभाग्य की बात है। उनकी उपस्थिति में दो पड़ी भी श्वास लेने का अवसर मिले तो वह आनन्ददायक और शान्तिदायक है। गुरुदेव के अन्तरंग के, निकटवर्ती और शिष्य तथा भक्त पूज्य आदरणीय लक्ष्मीकान्तभाई दवे (बाद में स्वामी श्री पवित्रानन्द जी) तत्कालीन अहमदाबाद शाखा के प्रमुख थे। जिन्होंने टाउन हाल में बताया था। यह भी बताया इस वर्ष की शिवरात्रि को दिन (वर्ष १९८४-२९ फरवरी को) पूज्य श्री कोई एक भाई को बिल्वपत्र लाने को कहते हैं। साथ में शिक्षा देते हैं- आप पेड़ के पास जा के प्रथम बन्दन-प्रणाम करके, बड़े विनय के साथ मृदुता से मात्र एक ही बिल्वदल लाना। किन्तु लाने वाला भाई बिल्व पेड़ की टहनी को मरोड़ते हुए झटके से तोड़ कर लाता है। जिसकी पीड़ा महसूस करते हुए पूज्य श्री ने शिवपूजा में भाग नहीं लिया। ऐसे थे महाराजश्री ।

जय गुरुदेव! जय शिवानन्द! जय चिदानन्द !

....

मेरे आराध्य

- कुमारी शिमला नरूका माता जी, बीकानेर-

हमारे प्रियतम, पूज्यपाद, प्रातःस्मरणीय गुरुमहाराज स्वामी चिदानन्द जी के श्रीचरणों में कोटिशः नमन। गुरुमहाराज हम सभी के लिए एक महान् आदर्श हैं एवं इस आधुनिक जगत् की एक विशिष्ट दिव्य विभूति हैं। बर्तमान जगत् को दिव्य मानव जीवन का मार्ग दिखलाया है। गुरुमहाराज शान्ति के दूत, विश्व प्रेम के प्रतिरूप थे। आपका उत्कृष्ट व्यक्तित्व धार्मिकता का आश्रय है। आपमें हम चारों योगों का सुन्दर समन्वय देख सकते हैं। गुरुमहाराज के दिव्य श्री चरणों में सच्ची श्रद्धांजलि तभी होगी जब हम उनकी शिक्षाओं-उपदेशों को अपने जीवन में अपनायें, दिव्य जीवन पथ पर चलें, सत्यव्रती बनें, सदाचार को अपनायें, दयावान् बनें, सेवा करें, योगी बनें तथा

भक्ति व ज्ञान प्राप्त करें। स्वामी जी महाराज से यही प्रार्थना निरन्तर है कि वे इसी जन्म में हमारे जीवन लक्ष्य, आत्मसाक्षात्कार को हमें प्राप्त करवायें।

स्वामी जी इस नश्वर देह को त्याग कर भले ही चले गये हों लेकिन उनकी निर्गुण निराकार व्यापकता को हम हर क्षण महसूस कर रहे हैं। वे सर्वत्र व्याप्त है तथा आत्मरूप से हममें उपस्थित हैं।

माह नवम्बर २००१ में स्वामी जी जब बीकानेर की अन्तिम यात्रा पर आये तो दिव्य जीवन संघ, बीकानेर (राजस्थान) की शाखा में उनके दर्शन करने का लाभ मिला। मुझ पर उनकी दृष्टि पड़ते ही में रोमांचित हो गयी। ऐसा लगा मानो गुरु स्वयं घर पर आ गये हैं। मेरी आत्मा ने तत्काल ही स्वामी जी को गुरु रूप में स्वीकार लिया। मैंने दिव्य जीवन संघ, बीकानेर की अध्यक्षा पुष्पा खतूरिया माता जी से गुरुमहाराज से दीक्षा दिलवाने की इच्छी प्रकट कर दी। मेरे प्रस्ताव को स्वामी जी के समक्ष रखा गया, जिसे स्वामी जी ने सहज रूप से स्वीकार कर लिया। ५ नवम्बर २००१ को प्रभु कृपा से मुझे इस दिव्य विभूति से दीक्षा मिली। मैं धन्य-धन्य हुई। २००१ के बाद स्वामी जी बीकानेर नहीं पधारे-मानो वे २००१ में मुझे दीक्षा देने ही आये हो। गुरुमहाराज का गुरुत्व मुझे बार-बार ऋषिकेश दिव्य जीवन संप में निरन्तर खींचने लगा और मैं प्रतिवर्ष ऋषिकेश आने लगी। गुरुपूर्णिमा, साधना सप्ताह में शामिल होने लगी। शिवानन्द आश्रम, ऋषिकेश के दैनिक कार्यक्रम एवं गतिविधियों को देख कर मैं और भी अधिक उत्प्रेरित हुई। भारतीय संस्कृति की तथा सनातन वैदिक परम्पराओं तथा आद्य गुरु शंकराचार्य की परम्पराओं और शिक्षाओं को निभाने वाला यह एक अनूठा एवं विशिष्ट आश्रम लगा। प्रातःस्मरणीय स्वामी शिवानन्द जी महाराज के शिव संकल्प को आगे बढ़ाते हुए स्वामी चिदानन्द जी महाराज ने अपना जीवन इस सेवा में समर्पित कर दिया।

हमारे गुरुमहाराज स्वामी चिदानन्द जी स्वामी शिवानन्द जी के प्रतिरूप ही हैं। स्वामी शिवानन्द जी महाराज ने एक बार घोषणा की भी कि- "स्वामी चिदानन्द जी अध्यात्म ज्ञान, ब्रह्मसूत्र एवं गीता के प्रतिरूप ही हैं। इन्हें ही हमें गुरु रूप में मानना चाहिए।" स्वामी शिवानन्द जी महाराज ने इन्हें अपने उत्तराधिकारी के रूप में स्वीकारा।

ऐसे थे हमारे सद्गुरुदेव महाराज। गीता के साक्षात् स्थितप्रज्ञ ब्रह्मवेत्ता तत्त्वज्ञानी महापुरुष, जिनके चरणों में पूरा विश्व नतमस्तक है। आपके चरणों में बारम्बार कोटिशः नमन ।

ॐ तत् सत् परब्रह्मणे नमः।

****

हमको क्यों भूल गये?

- श्री रमणभाई पटेल जी -

स्वामी चिदानन्द जी महाराज का यह मार्मिक प्रश्न था। तारीख ८-९-१९७४ (८ सितम्बर १९७४) के पवित्र दिवस पर स्वामी जी आणंद शाखा का उद्घाटन करने के लिए पधार रहे थे।

अहमदाबाद के संन्यास आश्रम से स्वामी जी आणंद पधार रहे थे। हमें बढ़ोदरा शाखा से मुरब्बी पी. सी. मंकोडी जी ने संदेशा भेजा था कि आणंद में एक ओफिसर है उनको बता देना स्वामी जी पधार रहे हैं। हमने संदेशा भिजवा दिया। मैं स्वामी जी को तेने के लिए हाइ-वे पर आणंद के पास खड़ा रहा। स्वामी जी आये, और वहाँ से मैंने स्वामी जी को अपनी कार में ले लिया। जब हम अमूल डेरी रोड उपर से आ रहे थे तब वो ओफिसर और उनकी धर्मपत्नी दोनों वहीं रास्ते में खड़े थे। मैंने कार रोक दी तब यो ओफिसर स्वामी जी को विनती करने लगा, स्वामी जी मेरा घर यहाँ है आप मेरे पर पधारें। स्वामी जी ने कोई उत्तर नहीं दिया। फिर बिनती की लेकिन स्वामी जी मौन रहे। तीसरी बार विनती की तो स्वामी जी ने मौन तोड़ कर इतना कहा, **'हमको क्यों भूल गये?'**

फिर हम लाइब्रेरी हॉल में चले गये। वहाँ स्वामी जी का प्रवचन था। स्वामी जी सब कार्यक्रम परिपूर्ण करके मेरे साथ मेरे पर आये। जल्दी चाय पीने की इच्छा व्यक्त की। करीब पचास मिनट तक मेरे घर बैठे। लेकिन मेरे मन में स्वामी जी ने जो बोला था वह वाक्य निकला ही नहीं।

दूसरे दिन मैंने अजित भाई सूच को इस वाक्य के बारे में पूछा तो उतर मिला स्वामी जी की बात सही थी। क्योंकि वो ओफिसर एक साल की उमर का था तब उसको स्वामी के पास रख कर उसके माता-पिता बदरीनाच- केदारनाथ की यात्रा पर गये थे और करीब एक महीने बाद यात्रा से लौटे थे। तब तक इस एक साल के बच्चे की स्वामी जी ने देखभाल की थी। आप सोच लीजिए सुबह से रात तक इतने छोटे बच्चे की कितनी संभाल रखनी पड़ती होगी? स्वामी जी ने इसलिए, कहा 'हमको क्यों भूल गये?' कितना मार्मिक उपदेश। इसलिए स्वामी जी को हमें भी कभी नहीं भूलना चाहिए।

मेम्बर, बोर्ड ऑफ मैनेजमेन्ट
दिव्य जीवन संघ ऋषिकेश (उत्तराखण्ड)

अन्तरात्मा की आवाज़

- श्री सचिन गर्ग, सच्चा साधक, देहरादून -

श्री समाधि मन्दिर, शिवानन्द आश्रम, ऋषिकेश में अगस्त २००८ को श्री स्वामी वैकुण्ठानन्द जी के माध्यम से परम पूज्य श्री स्वामी चिदानन्द जी की रिकार्डिड आवाज द्वारा मन्त्र-दीक्षा पा कर धन्य हुआ। मैंने उनके दर्शन नहीं किये हुए थे अर्थात् मैंने उनको शारीरिक रूप से नहीं देखा। इसी बीच २८ अगस्त २००८ को श्री स्वामी जी महाराज ब्रह्मलीन हो गये। मैंने उनके दर्शन दिव्य चेतना में किये। २९ अगस्त २००८ को मैं सवेरे ६ बजे आश्रम पहुँच गया, बिना किसी इस दुःखद समाचार को जाने। यह कैसे सम्भव हुआ? केवल परम श्रद्धेय श्री स्वामी चिदानन्द जी महाराज के अद्‌भुत, विलक्षण पवित्र अहसास से हुआ, जो मुझे २८ अगस्त २००८ शाम ८ बज कर १५ मिनट के लगभग एक Vibration के द्वारा मिला, जिससे मेरा रोम-रोम खिल उठा और मेरी

अन्तरात्मा से आवाज आई कि मुझे शिवानन्द आश्रम पहुँचना है। देखा! कैसे महान् सन्त थे। मुझे मन्त्र-दीक्षा प्राप्ति का सौभाग्य उनके जीवनकाल में ही मिल गया। इस चमत्कार के रूप में मेरे गुरुमहाराजश्री स्वामी चिदानन्द जी महाराज ने अपनी Vibration के माध्यम से दर्शन दिये; जिससे मेरी आत्मा धन्य-धन्य हो गयी।

ॐ हरि नारायण हरि नारायण हरि नारायण हरि नारायण।
हरि नारायण हरि नारायण हरि नारायण हरि नारायण।
हरि नारायण हरि नारायण हरि नारायण हरि नारायण।

सुस्मित मुखारविन्द

-श्री रवीन्द्रनाथ शर्मा जी -

सद्गुरुदेव स्वामी शिवानन्द-समाधि हॉल में,
नित्य प्रति होने वाले रात्रि सत्संग का था समय,
मार्च मास की ६ तारीख को ठीक ९ बजे दृष्टिगत हुआ गजब का एक दृश्य,
दिव्यातिदिव्य मुस्कान लिए पधारे महाराजश्री चिदानन्द जी हमारे।
उस अलौकिक मधुर मुस्कराहट की दिव्य किरणों से
अज्ञान-तिमिर विलीन हो गया मानो।
सत्संग में उपस्थित सभी स्त्री-पुरुष, बाल-वृद्ध, शिक्षित-अशिक्षित,
समस्त वर्ग के भक्तों ने सुस्वागत किया
उस विलक्षण ज्योत्स्नामयी मुस्कान का।

सहज मंथर गति से वे बढ़े आगे अपने नियत व्यवस्थित आसन की ओर,
सबकी नजरें टिक गयीं उनके मधुरातिमधुर सस्मित मुखारविन्द पर,
चेहरे थे सबके चमक उठे, हृदय-स्पन्दन था थम गया;
आसन ग्रहण करते हुए महाराजश्री ने सब ओर विकीर्ण कर दी।
अपनी वही मनमोहक मुस्कान। उनके कृपा कटाक्ष से
सबके प्राणों में हुआ दिव्य शक्ति का संचार
छा गयी निःस्तब्धता चहुँओर।

अचानक मेरी नजर घूम गयी मुख्य द्वार की ओर,
दृश्य था बड़ा अजब! नौ बजे की घण्टी ध्वनि सुनते ही
सभी दौड़ते-भागते प्रवेश कर रहे थे हॉल में, प्रयास किया सबने
वहाँ बैठने का, जहाँ कहीं से भी उस मनोहर मुस्कान के
सुस्पष्ट दर्शन हो सकें। भले ही घुटने या एड़ियों के बल बैठना पड़े।

कई एक ने सम्हाले कैमरे, फ्लैश बल्ब वाले
वीडियो कैमरा वाले अपने अपने ट्रिपोड को स्थिर करने लगे।
एक-प्रत्येक भक्त था मानो
उस मृदु मुस्कान की छटा से परिपूरित-आपूरित।

महाराजश्री के नेत्र मुँद गये, सहज भाव से दोनों हाथ जुड़ गये,
श्रीमुख से समारम्भ हुआ प्रार्थना-श्लोक के सस्वर पाठ का,
तदनन्तर बौद्धिक प्रतिभापूर्ण सुन्दर, सहज प्रबोधक प्रवचन प्रवाह का
आकर्षक एवं रोचक शैली।
श्रीमुख कमल से मानो बिखर रहे हों प्रसन्नता-प्रसून।
मधुर मुस्कान ने सभी ओर बिखेर दी मधुरता।
और सबके हृदय प्रफुल्ल हो कर मुक्त हास कर उठे उनके साथ।
उनके चुम्बकीय आकर्षण ने सबको कर दिया विमोहित;
प्रेम विभोर हो कर सबने सुना मधुर संकीर्तन भी
निःसृत उनके अधर युगल से; मानो सबको सोम रसपान करा रहे हों।

उषाकालीन सूर्य-रश्मियों की भाँति खिल उठा उनका वह दिव्य वदन
मानो गुलाब की पंखुड़ियाँ मुकुलित हो उठीं;
उनके अरुण अधर, मुस्कराते कपोल, मुस्कान भरे नेत्र; मनमोहिनी थी अद्‌भुत छवि।
अपने 'चिदानन्द' नाम को सार्थक करते
सच्चिदानन्द-भावमयी मृदु मुस्कान-कृपा कोर से
उन्होंने सभी को कर दिया भावपूरित और
दिव्य भावसिन्धु में करा दिया अवगाहन।

सत्संग की परिसमाप्ति पर उनके खड़े होने की अदा भी थी चित्ताकर्षक,
काषाय वेष से आविष्ठित सुकोमल गात भी मानो काषाय वर्ण लिए
स्वर्णिम आभा से हुआ शोभित;
कर बद्ध हो कर नमस्कार की मुद्रा में मुस्कान बिखेरते हुए विदाई ली;
फिर चल दिए सहज गति से द्वार की ओर जहाँ उनका वाहन था प्रतीक्षा में;
विदा लेते, मुख पर मुस्कान तो वही थी; सहज मधुर मुस्कान
कोई अन्तर न था, किन्तु झलकता था विदाई का भाव अवश्य ही,
उनके पीठ फेरते ही श्रोताओं-दर्शकों के खिले चेहरे मुरझा गये, मन उदासी से भर गए,
उन सर्वान्तर्यामी ने फिर जब द्वार से बाहर निकलते दृष्टिपात किया सस्मित, सस्नेह
तो मानो, आश्वासन दे रहे हैं 'फिर मिलेंगे जी।'
भक्तों को मिला धीरज, कि कल फिर रात्रि के ९ बजेंगे और
पुनः सुस्मित मुखारविन्द के दर्शन का प्राप्त होगा सौभाग्य ।

विश्वभर में भ्रमण करते वाले एक पर्यटक की है भावानुभूति यही, कि
इस दिव्य, मुधर अलौकिक मुस्कान के सम्मुख फीकी पड़ गईं सब मुस्कान
जगत् प्रसिद्ध, अति लोकप्रिय मुस्कानों को मात कर दिया इस मुस्कान ने।
यह तो सुन्दरातिसुन्दर, प्रियातिप्रिय, मधुरातिमधुर औ

दिव्यातिदिव्य भगवदीय मुस्कान के ही दर्शन का सौभाग्य मिल रहा है हमें,
निःसन्देह, यह है अपूर्व, अनुपमेय औ' अद्वितीय; जो
आज की मानव जाति को दुर्लभ, अति दुर्लभ उपहार रूप में
प्राप्तव्य, यह है शाश्वत शान्ति और आनन्द का स्रोत। (भावानुवाद)

लगा ले प्रेम ईश्वर से, अगर तू मोक्ष चाहता है
नहीं वह पाताल के अन्दर, नहीं बह आकाश में ऊपर
सदा वह पास है तेरे, कहाँ ढूँढन को जाता है। लगा ले...

भक्त वत्सल

- कुमारी रेश्मा पुष्पकान्त वोरा माता जी, भावनगर -

श्री श्री स्वामी चिदानन्द जी महाराज ऐसी दिव्य विभूति थे जिनकी एक झलक पाने के लिए लोग दूर-दूर से आते और घण्टों खड़े हो कर अधक प्रतीक्षा करते थे। उनके श्री चरण इन भक्तों के घर पढ़ें, इसके लिए पूरी निष्ठा से प्रयत्न करते थे।

सन् १९९८ में में महेश भट्ट जी (अब स्वामी त्यागवैराग्यानन्द जी) के मकान में किराये पर रहती थी। वह मुझे स्वामी जी महाराज द्वारा लिखित पुस्तकें पढ़ने को दिया करते और उनके दिव्य गुणों दया, करुणा इत्यादि के बारे में बात-चीत करते थे। मैं बहुत उत्साहपूर्वक श्रवण करती थी। वे कई बार शिवानन्द आश्रम, ऋषिकेश के बारे में भी गौरवपूर्ण वर्णन करते थे-अतः तब से आश्रम देखने की मेरी जिज्ञासा बढ़ती गयी।

सन् २००० में श्री स्वामी चिदानन्द जी महाराज भावनगर पधारे और मेरा सौभाग्य कि वे श्री महेश भट्ट जी के घर में ठहरे। इसी बीच मेरा जन्मदिन आया तो मेरी इच्छा थी कि स्वामी जी के दर्शन भेंट हो और आशीर्वाद प्राप्त हो। किन्तु यह सम्भव न हो पाया, हाँ, उनका प्रसाद अवश्य मिला। भेंट की इच्छा उत्ती वर्ष ही तब पूर्ण हुई जब श्री स्वामी त्यागवैराग्यानन्द जी का, संन्यास से पूर्व होने वाला बिरजाहोम ऋषिकेश, शिवानन्द आश्रम में होना था। हम उनके साथ ही आश्रम पहुंचे। दीपावली का शुभ दिन था; भक्तवृन्द से भरे हुए समाधि हाल में श्री गुरुदेव पधारे। कई लोग उनके निकट दीपावली की भेंट हेतु उपहार इत्यादि लाये थे। मैं तो अनभिज्ञतावश खाली हाथ ही आई थी। अतः मन में अत्यन्त दुःखी थी और सोच रही थी कि मुझे प्रसाद मिलेगा या नहीं। तभी परम पूज्य गुरुमहाराज ने मुझे पास बुला कर अपने कर कमलों से प्रसाद व आशीर्वाद दिया। मनोकामना पूर्ण हुई, में धन्य हुई। तभी से लगता है श्री गुरुदेव सदैव मेरे साथ हैं।

सन् २००१-२००२ में कटक में इन्टरनेशनल डिवाइन लाइक कॉनफरेंस का आयोजन हुआ। उस समय मैंने नया कैमरा लिया था; मन में एक ही संकल्प कि सबसे पहले गुरुमहाराज का ही

चित्र लूँगी। वहाँ पहुंचे तो देखा अथाह भीड़ और कड़ी सुरक्षा-व्यवस्था। सामान्य जनता के लिए एक ही द्वार खुला था, शेष सब बन्द थे। मैं निराश हो गयी, किन्तु साहस करके सुरक्षा गार्ड को जा कर कहा कि कैमरा देने के लिए अन्दर जाना है। उसके 'हाँ' करने पर आगे बैठे एक स्वामी जी को अपनी आन्तरिक इच्छा बताई। उन्होंने अत्यन्त कृपापूर्वक मुझे अपना बैज दे कर वहीं रुकने को कहा। मेरी आँखों में प्रसन्नता के आँसू भर आये। गुरुदेव की अपार कृपा से पूरा समय मैं बहीं रही और मन भर के गुरुमहाराज के चित्र खींचे।

दिव्य जीवन संघ में मेरा प्रवेश होने के थोड़े समय बाद ही श्री गुरुमहाराज निवृत्ति ले एकान्तवास में चले गये। भावनगर में अन्य सन्तों की सेवा का जो अवसर मिला, वह गुरुमहाराज की ही कृपा है। उनसे मन्त्र दीक्षा प्राप्त हुई यह भी मेरा परम सौभाग्य है। उन जैसा सद्‌गुरु प्राप्त होना परमात्मा की अहेतुकी कृपा ही है। सदा सभी पर गुरुकृपा रहे, यही प्रार्थना है।

****

'ठाकुर तुम सा नहिं देखा'

-श्रीमती उमा चतुर्वेदी माता जी, भीममण्डी-

परम श्रद्धेय गुरु जी के सानिध्य में अनेक संस्मरण लिखे जा सकते हैं जिन्होंने मुझे सदा-सदा के लिए श्री गुरु जी के चरणों से जोड़ दिया। यह घटना उस समय की है जब स्वामी जी उड़ीसा अधिवेशन के लिए गये थे। वहाँ से लौटते समय 'भिलायी स्टील प्लांट' के आमन्त्रण पर २८ नवम्बर १९८३ को वे भिलायी पधारे थे। सौभाग्यवश उस समय मैं भी अपने पुत्र के पास, जो वहाँ इंजीनियर था, गधी हुई थी क्योंकि हमारे यहाँ पुत्री का जन्म ३ नवम्बर १९८२ को हुआ था। मैं मन में बहुत प्रसन्न हुई कि इस बालिका को गुरु जी का आशीर्वाद प्राप्त हो जायेगा। अतः सन्ध्या समय जब सभी लोग उनसे मिलने के लिए हॉल में एकत्रित हुए; उस समय सभा समाप्ति पर मैंने अपना अनुरोध उनके सम्मुख रखा कि वे अगले दिन कार्यक्रम के लिए जाते समय कार को मेरे पर की ओर ले जाने की कृपा करें, ताकि मैं उस बालिका को उनका दर्शन करवा सकूँ। स्वामी जी ने वहाँ के जो अध्यक्ष थे उनसे बात की किन्तु उन्होंने इस प्रस्ताव को असंभव कह दिया। अतः स्वामी जी ने मुझे बुला कर कह दिया कि कार्यक्रम के कारण यह सम्भव न हो सकेगा। मैं घर आ गयी, किन्तु मन अति हताश था। रात भर मैं सो न सकी। उस कन्या को भी मैं बाहर नहीं ले जा सकती थी अभी उसको बाहर ले जाने का मुहूर्त नहीं हुआ था। प्रातः ५ बजे मुझको अतिथिगृह जाना था क्योंकि गुरु जी के तथा अन्य स्वामी जी जो साथ थे उनके भोजन की व्यवस्था मुझे सौंपी गयी थी। वहाँ पहुंचने पर अध्यक्ष महोदय आते हुए दिखलायी दिये जो बहुत प्रसत्र थे। वे बोले कि आज उन्हें मेरे ही कारण अभी गुरु जी के दर्शन हुए हैं। गुरु जी ने उनको बुला कर कहा कि, "क्या यह सम्भव नहीं हो सकता कि हम माता जी के घर से हो कर आज चलें?" इतना संकेत पर्याप्त था। कुछ गुंजाइश नहीं रह गयी थी। स्वामी जी ने स्वयं ही आने की बात व्यक्त की थी। मेरी मनोभावनाओं को वाणी के माध्यम से अभिव्यक्त किए बिना ही उन्होंने सुर लिया था।

उनको नाश्ता आदि दे कर मैं घर आई। नौ बजे के करीब गाड़ी आयी। मैं बालिका को गोद में ले कर फाटक पर खड़ी थी। स्वामी जी गाड़ी से उतरे और दोनों हाथ फैला दिए उसको गोद में लेने के लिए। गोद में ले कर घर के अन्दर गये। वे आगे थे और उनकी ही अनुकरण

सभी सदस्य कर रहे थे। यह दृश्य देख कर सभी रोमांचित हो रहे थे। भावविह्वलता से हमारे अनु बह रहे थे। कुछ समय पश्चात् बालिका को उसकी माँ को दे दिया। उठ कर परम पूज्य गुरुदेव (स्वामी जी ने) स्वामी शिवानन्द जी महाराज को भोग लगाया। सभी को प्रसाद प्राप्त हुआ और वे अपनी दया की अमिट छाप छोड़ कर वापस रवाना हो गये; और दर्शक गण तो.....

गुरु जी को स्नेह लखि,
बिसरे सबहि अपान।
बोलिए चिदानन्द जी महाराज की जय।

****

दिव्य ज्योति पुंज

- श्रीमती मीरा गुप्ता माता जी, बीकानेर -

परम पूज्य, दिव्य आत्मा, युगपुरुष श्री स्वामी जी बिदानन्द जी महाराज महान् तपस्वी, बौतरागी एवं तपोनिष्ठ सन्त थे। स्वामी जी का आविर्भाव मानव जीवन के शारीरिक, मानसिक, बौद्धिक, नैतिक एवं आध्यात्मिक उत्थान के उद्देश्य के लिए हुआ थ लिए हुआ था। वे देश की सीमा कर विश्व की मंगल कामना करते थे। उनका दिव्य जीवन, उनका दिव्य दर्शन, दिव्य बाणी और दिव्य उपदेश, भक्तों, साधकों और जिज्ञासुओं की पिपासा को तृप्त करता था। उनके मुख से निःसृत एक-एक शब्द दिव्य पथ की ओर इंगित करता था।

स्वामी जी का दर्शन कल और आज या कहें पुरातन और आधुनिक दृष्टिकोण, विचारों का समन्वय था। उनका दृष्टिकोण प्राचीन एवं अधुनातन पीढ़ी और उसके दृष्टिकोण के मध्य सेतुबन्ध था। उन्होंने विश्रृंखलित मानवता को समाधान की दिशा प्रदान की।

वे सहिष्णु थे। संवेदनशीलता, सदाशयता, लोक सम्मोहन शक्ति से पूर्ण गरिमामय व्यक्तित्व था उनका। उनमें इतना आकर्षण था कि उनसे मिलने के बाद हर साधक का हृदय उनके प्रति नत मस्तक हो उठता था। उनकी वाणी में मन्दाकिनी का कल-कल निनाद था। उनका करुणामिश्रित हृदय कुष्ठ रोगियों की सेवा में सदैव तत्पर रहता था। उनके व्यक्तित्व में एक सहज, सरल, तरल भावमुग्ध, आत्मतृप्त आत्माराम बालक के दर्शन होते थे। उनकी कृपापूर्ण चितवन प्रभातकालीन तुषार सी निर्मलता रससिक्तता से भरी होती थी। प्रथम बार जब मुझे गुरुदेव के दर्शन का सौभाग्य प्राप्त हुआ तो हृदय, मन, मस्तिष्क- सब उनकी वाणी से इतना अधिक अभिभूत हुआ कि उनके मुख से निःसृत यह भजन "सीता राम कहो नापे स्याम कहो एवं वे पंक्तियाँ सीताराम बिना दुःख कौन हरें मेरे अन्तर को भाव-गंगा में भिगो गयीं। उनके बीकानेर प्रवास के सत्संग ने मेरे जीवन को एक नया मार्ग, नई दिशा दी। एक बार उनसे मिलने का सुयोग प्राप्त हुआ उनके प्रवचनों ने मुझे एक नई दृष्टि दी। मैं और मेरे पत्तिदेव दोनों ही उनके कृपा पात्र बने, और उन्होंने कृपा कर हमें एक साथ शिष्यत्व प्रदान कर अनुगृहीत किया। उनकी प्रेरणा से एक पुस्तक लिखी जो गुरुदेव को हो समर्पित थी तथा उनके हो कर करकमलों से उसका विमोचन हुआ।

यह पल मेरी जिन्दगी का सबसे सुनहरा पल था। उनका आशीर्वाद मेरे साथ है- उनके सुवचन मेरे लिए प्रेरणा स्रोत हैं- उनकी उन स्मृतियों को मैंने सहेज रखा है- जिसने मेरी जीवन-धारा को मोड़ा है।

उन परमपूज्य गुरुदेव को कोटिशः नमन।

****

हमारे गुरु जी

-श्रीमती उर्मिला शुक्ल माता जी-

हमारा छोटा काम हो या बड़ा परम पूज्य गुरु जी हर क्षण हमारे साथ हैं।

करीब सन् १९७८ अगस्त की बात है, जब सबसे बड़ी कृपा परम पूज्य गुरु जी की हमारे परिवार पर हुई थी। मेरे पति बीमार हुए थे, तीन महीने तक बुखार हटने का नाम नहीं लेता था। मेरी बहन और जीजा जी डाक्टर थे। इसीलिए हम गान्धीनगर के सिविल अस्पताल में रुके थे।

अहमदाबाद के बड़े-बड़े डाक्टर को मिल चुके थे। सब प्रकार के परीक्षण करवा लिए पर कोई नतीजा नहीं हुआ। मेरे पति बुखार के कारण जमीन पर लेटे रहते थे, तब अपने आपको परम पूज्य शिवानन्द जी की समाधि मन्दिर में लेटे रहने का अनुभव करते थे। मैं और मेरी बहन प्रातः काल में तीन बजे उठ कर भगवान् का स्मरण करते थे। मेरे चार छोटे-छोटे बच्चे थे। मेरी बड़ी लड़की उन सबको बड़ी मुश्किल से संभालती थी।

अन्त में परम पूज्य गुरु जी को आशीर्वाद और लम्बी आयु के लिए पत्र लिखा। कई परीक्षण के बाद पता चला कि उनके लीवर में इनफेक्शन हुआ है। इसके इलाज के लिए मुम्बई जाना पड़ेगा।

हमारी आर्थिक स्थिति सामान्य थी। वहाँ कोई रिश्तेदार भी नहीं था जो मदद कर सके। फिर भी भाई और जीजा जी के सहयोग से हम तैयार हुए। दूसरे दिन मुम्बई की ट्रेन में जाने बाले थे, तभी परम पूज्य गुरु जी के आशिष का तार आया और बुखार गायब। मुम्बई के बदले उनकी कृपा और आशिष से हम अपने घर पहुंचे। तब से बुखार घूमन्तर हो गया। सब इलाज एकाएक बन्द करवा दिए।

आज भी हर क्षण पूज्य चिदानन्द जी गुरु जी हमारी रक्षा करते आ रहे है। उनके चरणों में कोटि-कोटि बन्दन।

अहमदाबाद
(गुजरात)

****

'चिदानन्द तुम्हारी जय होवे'

- श्री जी. एस. नाग जी, बीजापुर -

चिदानन्द चिदानन्द चिदानन्द स्वामी, सदा तुम्हारी जय होवे ।। चिदानन्द..
मानव उद्धारक सबमें उज्वल ज्योति जलाते रहें । चिदानन्द.

प्रकाश-पुंज के दिव्य सितारा, जगमग ज्योति जलती रहे ।। चिदानन्द..
प्रभु के चरणों में लीन रहें, ज्ञान का दीप जलाते रहें ।।॥ चिदानन्द..

विश्व-कल्याण करन स्वामी, चिदानन्द अमृत बरसाते रहें ।। चिदानन्द.
सत्य, अहिंसा के बने पुजारी, सत्यमार्ग दिखलाते रहें ।। चिदानन्द...

ब्रह्मा विष्णु महेश के अवतार, कूट-कूट भरा प्रेम का भण्डार ।। चिदानन्द.
गुरु के चरणों में शीश नवायें, आवो सब मिल आशिष पायें,
हो जाये सबका उद्धार ॥ चिदानन्द.

****

रोगहर्ता

- श्री आकाश मल्होत्रा जी, जालन्धर -

यह घटना करीब १९७६ की है। एक सरकारी कार्यालय में उच्च पद पर विराजमान जालन्धर के अमरनाथ खोसला, जिनको अधरंग हो गया। बहुत इलाज करवाने पर जुबान को छोड़ कर सारा शरीर ठीक हो गया। जुबान बन्द होने के कारण अमरनाथ जी भगवान् का नाम भी नहीं जप पा रहे थे। उन्हीं दिनों में स्वामी चिदानन्द जी लुधियाना में एम. एम. गुप्ता जी के निवास पर आये थे। स्वामी चिदानन्द जी का लुधियाना में सत्संग का कोई कार्यक्रम नहीं था। स्वामी जी से मिलने के लिए किसी को भी कोई समय नहीं दिया गया था। अमरनाथ खोसला जी को मालूम हुआ कि स्वामी जी लुधियाना में आये हुए हैं। अमरनाथ खोसला जी स्वामी जी से मिलने के लिए एम. ए. गुप्ता के निवास स्थान लुधियाना में पहुँच गये।

अमरनाथ जी ने एम. एम. गुप्ता जी को एक कागज पर लिख कर दिया कि मैं स्वामी जी से मिलना चाहता हूँ। एम. एम. गुप्ता ने कहा कि स्वामी जी यहाँ पर आराम करने के लिए आये हैं। किसी से मिलने के लिए नहीं आये हैं इसलिए कृपा करके क्षमा कीजिए। अमरनाथ खोसला जी एम. एम. गुप्ता जी के घर के बाहर खड़े हो गये। अमरनाथ जी बहुत समय तक हाथ जोड़ कर घर के बाहर खड़े रहे। अचानक स्वामी जी घर की बाल्कनी में आये। इशारे से अमरनाथ जी को घर के अन्दर बुलाया। अमरनाथ जी ने प्रणाम किया और एक कागज पर अपने कष्टों के बारे में लिख दिया। स्वामी जी ने अमरनाथ जी को बैठने के लिए कहा और उनके लिखे कागज की पुड़िया बनाई। १५ मिनट स्वामी जी ने कागज की पुड़िया को अपने हाथों में रखा और उस पुड़िया को फूंक मारी। फिर उस पुड़िया को स्वामी जी ने अमरनाथ जी को दिया और र कहा इस पुड़िया को अपने घुटने के पीछे रख दो और भगवान् से प्रार्थना करो। उसी समय दो

मिनट में अमरनाथ जी के घुटने में जोर से दर्द हुआ और अमरनाथ जी चिल्लाने लगे। घुटने की दर्द खत्म हो गयी और अमरनाथ जी की बन्द जुबान बोलने लग गयी।

अमरनाथ जी मृत्यु के आखरी समय तक भगवान् का नाम जपते रहे गुरु जी की कृपा से। दोबारा उनको बोलने में कोई मुश्किल नहीं आई। अमरनाथ जी के आखरी समय में उनकी दोनों किडनियाँ फेल हो गयी, हार्ट की टूबल हो गयी, शूगर हो गयी परन्तु उनके बोलने की शक्ति चलती रही।

हरिः ॐ।

****

यदि किसी इच्छा का उन पर आरोपण किया जा सकता है-यदि आप अपने दृष्टिकोणानुसार इसका स्पष्टीकरण चाहते हैं-तब आप कह सकते हैं कि केवल एक इच्छा, मात्र एक ही इच्छा का होना, वह है कि परमात्मा की कृपा से जिस महान् अवस्था को उन्होंने प्राप्त कर लिया है, उसी अवस्था में सभी स्थित हो जायें, ऐसी परम स्नेह युक्त सद्भावनामयी सहज भावना का उनमें होना।

-स्वामी चिदानन्द

सेवा-मूर्ति

- कु. छवि खतूरिया, बीकानेर -

परमात्मा के पथ का निर्देशक और प्रदर्शक गुरु होता है। गुरु और गोविन्द में गुरु की गुरुता इसलिए मान्य है कि गुरु ही गोविन्द दर्शन कराता है ।

"योग्य गुरु को योग्य शिष्य" यह जोड़ विरल ही मिलता है। रामकृष्ण परमहंस को विवेकानन्द मिले, स्वामी शिवानन्द जी को चिदानन्द सरीखा सेवा परायण करुणा निधान शिष्य मिला।

राष्ट्रीय व अन्तर्राष्ट्रीय दिव्य जीवन संघ ऋषिकेश के संस्थापक स्वामी शिवानन्द जी की कठोर परीक्षा, कसौटी पर खरा उतरना सहज न था पर पूर्व आश्रम नाम धन्य श्रीधर राव ने शिवानन्द आश्रम, ऋषिकेश में दुःखित-पीड़ित मानवों की, पशु-पक्षियों की जिस गहन संवेदना से सेवा शुश्रूषा की उसी करुणा के आलोक में श्रीधर राव गुरु-दीक्षा पा कर स्वामी चिदानन्द सरस्वती लोक विख्यात हुए। स्वामी चिदानन्द के हृदय में कुष्ठ रोगियों की सेवा की लगन लगी रहती थी। स्वामी जी की इस करुणामयी बेदना से द्रवित हो संसार के कई नर-नारी प्रभावित हुए और उनमें से कई भाई-बहनों ने तो अपना सर्वस्व कुष्ठरोगियों के रोगोद्धार में अर्पित कर दिया।

पश्चिम के भौतिक जगत् को भीतर से झकझोर कर जगाने में स्वामी चिदानन्द सरस्वती ने एक अलौकिक प्रभाव उत्पन्न किया।

स्वामी चिदानन्द जी को गुरुदेव स्वामी शिवानन्द जी महाराज ने "चिकित्सकों का चिकित्सक" कहा है। स्वामी जी मनुष्यों में सर्वश्रेष्ठ मनुष्य हैं। कोई भेदभाव नहीं बसता उनके मन में। प्रत्येक वर्ष २ अक्तूबर पर एवं विशेष रूप से अपनी हीरक जयन्ती के दिन भी जो हरिजनों के पाद प्रक्षालन करें, आप उसे असीम श्रद्धा से आकेंगे।

मैंने स्वामी चिदानन्द जी से दीक्षा पा कर परमात्मा की सहज निकटता पायी है। उस दिव्य सानिध्य का अहसास शब्दों में नहीं उतारा जा सकता। स्वामी चिदानन्द एक दिव्य परम उज्वल प्रकाश थे। हम उनके अनन्य शरणागत हो कर ही परमात्मा के दर्शन कर सकते हैं।

मरूधरा नगरी बीकानेर का यह परम सौभाग्य था कि ऐसी दिव्य विभूति के सत्संग लाभ, दर्शन हमें पूर्व पुण्योदय से प्राप्त होते रहे। ब्रह्मा, विष्णु, महेश्वर स्वरूप गुरु महाराज स्वामी चिदानन्द जी का आदर्श सन्मुख रख कर अपने जीवन को दिव्य और भव्य बनायें, यही शुभकामना है।

****

मेरे पथ-प्रदर्शक

- कु. मयूरी शर्मा, देहरादून-

जिस हाल में, जिस देश में, जिस वेष में रहो।
राधारमण राधारमण राधारमण कहो ।।..........
जिस संग में, जिस रंग में, जिस ढंग में रहो-राधारमण..

यह भजन परम पूज्य स्वामी जी महाराज के मुख से कितनी ही बार सुना; बहुत अच्छा लगता था। आज जब सांसारिक माहौल में बाहर निकल नौकरी के लिए जाना पड़ता है तो ये पंक्तियाँ मन ही मन दोहराती रहती हूँ। यही मेरी मार्ग-दर्शिका हैं। द्यपि आज स्वामी जी महाराज शरीर से भले ही हमारे राह साथ नहीं है, मुझे ऐसा लगता है जैसे वह यहीं-कहीं मेरे आस-पास है, दिखा रहे हैं। हमें ऐसी शक्ति दें कि उनके दिखाये मार्ग पर चल सकें। बचपन से से ही ही अपने नाना-नानी एवं मम्मी (अर्थना) के साथ स्वामी जी के जो आशीर्वाद प्राप्त किये, फलीभूत हो सकें। हरिः ॐ।

कण-कण में भगवान्

- कु. ख्याति खतूरिया, बीकानेर -

कण-कण में है झाँकी भगवान की,
किसी सूझ वाली आँख ने पहचान की।

यही दृष्टि श्री स्वामी चिदानन्द जी में थी। उनकी दृष्टि में पशु-पक्षी, कीड़े-मकोड़े ब्रह्म का मूर्त रूप थे। तुलसी सत्संग कुटीर (बीकानेर) से सत्संग करके स्वामी जी बाहर आ रहे थे, दरवाजे पर कुत्ता खड़ा था, एक व्यक्ति ने उसके सिर पर जोर से डण्डा मारा। स्वामी जी का हृदय करुणा से भर आया और कहा कुत्ते ने आपको काटा नहीं, भौका नहीं, आपका कुछ बिगाड़ा नहीं, फिर आपने उस निरीह प्राणी को क्यों दुःख दिया। आप कुते का सृजन नहीं कर सकते तो, मारने का भी आपको अधिकार नहीं। कुत्ते के दुःख से इतने द्रवित हो गये कि सायंकालीन भोजन भी नहीं कर पाये।

स्वामी जी जैसे ही अपने कक्ष से बाहर आते-दो कुने उनके श्रीचरणों के समक्ष प्रणाम मुद्रा में बैठ कर खड़े हो जाते थे। स्वामी जी उन्हें दूध डबलरोटी अपने हाथ से खिलाते थे। कुत्तों की नजर डबलरोटी पर नहीं वरन् स्वामी जी की दृष्टि पर रहती थी। जैसे अपने भीतर वे स्वामी जी को आत्मसात् कर रहे थे। उसी समय ऊपर कौवों की आवाज आई, तुरन्त कहा कि इन्हें पी लगी रोटी-मिठाई खिला कर आओ। जैसा भोजन स्वयं करते हो बैसा ही उन्हें भी खिलाओ।

एक बार शिवानन्द आश्रम, ऋषिकेश में एक बन्दर ने एक कौवे को बुरी तरह घायल कर दिया। स्वामी जी ने सुना तो उसकी मरहम पट्टी करवाई और आश्रम के दत्तात्रेय मन्दिर के नीचे तहखाने में रखवाया, ताकि बह सुरक्षित रहे और अन्य पक्षी उसे न सतायें।

एक बार एक कौवे को, मरहम पट्टी के लिए, उनके पास लाया गया। वह कौवा स्वामी जी के पास बहुत ही सीधा बना बैठा था। एक सज्जन ने उत्सुकतावश उसकी प्रतिक्रिया देखने हेतु उसे छुआ तो कौचे ने उनके हाथ को काटने के लिए चोंच खोल दी। इससे स्पष्ट हुआ कि स्वामी जी के करुणाद्र हृदय के सामने वह कौवा एक सरल शिशु सा था, जबकि अन्य व्यक्तियों के लिए तो वह कौवा ही था।

एक बार मंच पर स्वामी जी प्रवचन कर रहे थे तभी टिड्डे के आकार का एक कीड़ा स्वामी जी की ओर तेजी से बढ़ रहा था। निकट बैठे सज्जन ने उस कीड़े को नाखून से दूर धकेल देना चाहा। इससे पूर्व कि उस सज्जन का नाखून कीड़े को लगता स्वामी जी ने हाथ से उन्हें रोक दिया। उन्होंने अपनी हथेली के नीचे उस कीड़े को ऐसे संरक्षण दे दिया जैसे कोई बत्सला माँ अपने शिशु को। उन सज्जन को इतना आश्चर्य हुआ कि कैसे प्रवाहपूर्ण प्रवचन के बीच स्वामी जी ने अपने निकट आने वाले कीड़े का भी पूरा ध्यान रखा। इतना ही नहीं स्वामी जी की निर्जीव वस्तुओं पर भी पूरी सजगता थी। प्रवचन के दौरान वितरण हेतु 'राष्ट्रीय आचार संहिता' के प्रपत्र लाये गये। एक सजन जल्दी और जोर से बण्डल खोलने लगे। स्वामी जी ने कहा आहिस्ते - आहिस्ते खोलो, इसे फट मत दो। ल

स्वामी जी का बच्चों के प्रति स्नेहिल माँ का व्यवहार रहता था। बीकानेर प्रवास के समय सायंकालीन भ्रमण से लौटने के पश्चात् स्वामी जी सभी भक्तों को प्रसाद वितरण करते थे। शिवानन्द नाम का दो वर्ष का बालक, रोज प्रसाद लेता, मुस्कराता, शरमाता, ओठ हिलाता। स्वामी जी सन्तानवत्लाला माँ की तरह उसको अपनी गोद में उठा लेते थे। डा. साहब ने स्वामी जी को बनन उठाना वर्जित कर रखा था किन्तु फरुणावरा स्वामी जी यह बात भूल जाते थे। इतना ही नहीं अब

हम शान्ति निवास मिलने के लिए जाते थे तो स्वामी जी बालक शिवानन्द के बारे में जरूर पूछते थे।

स्वामी जी के प्रवचन के दौरान उनका एक वाक्य चा-"अपनी आध्यात्मिक उन्नति की थाह लेने के लिए अपने दरवाजे की सीढ़ियों पर चलती हुई चीटियों के प्रति अपने व्यवहार को देखिए।"

****

'मेरे स्वामी जी'

- कु. योगिनी झिंगन-

मैंने अपने मम्मी (सविता), पापा (मधुकर) व दादा-दादी से सुना कि मैं छोटी थी ३-४ साल की तो जब भी देहरादून आती तो ऋषिकेश चलने के लिए जिद करती कि मैंने अपने स्वामी जी से मिलना है। मुझे बताया गया कि श्री स्वामी जी ने जब मैं सिर्फ २१ दिन की थी, गोदी में ले कर मेरा नाम योगिनी रखा और कहा, "पहचान रहे हैं?" लेकिन मुझे जो घटना अच्छी तरह याद है वह यह है कि एक बार में अपने दादा जी व दादी जी के साथ ऋषिकेश गयी थी। रात के सत्संग में किसी विदेशी महिला का जन्मदिन था और बहाँ केक काटा गया। उसका प्रसाद सबको मिला। मुझे भी मिला। मैं खुश थी कि तभी स्वामी जी ने मुझे आवाज दी 'योगिनी जी!' और जो केक का हिस्सा उनको मिला था वह बड़े प्यार से मुझे दिया। मैं तो खुशी से नाच उठी ऐसा प्यार मिला मुझे स्वामी जी से।

नई दिल्ली

****

आशीर्वादप्रसाद-प्रदाता

- कु. कल्याणी मिश्रा-

पूज्य स्वामी जी हमारे घर 'नारायण धाम' देहरादून में आये मेरे नानी-नाना जी मुझे बड़े प्रेम से सुनाते हैं- स्वामी जी ने मुझे गोदी में लिया और नाम दिया- 'कल्याणी'। मैं सुन-सुन कर बहुत खुश होती हूँ। छोटी बहन को 'देवयानी' नाम दिया। । भाई अंकुर और माता-पिता (राधा अनिरुद्ध मिश्रा) के साथ छुट्टियों में हमेशा आश्रम जाते रहे। स्वामी जी से आशीर्वाद मिलता रहा।

स्वामी जी गाया करते थे-

भले बनो, भला करो, दयालु बनो।

हम कोशिश करते हैं इसको याद रखें, ऐसा बनने की कोशिश करें। मैंने अपनी सहेलियों को भी सिखाया है।

देहरादून

****

जय श्री राधे जय नन्दनन्दन जय जय गोपी जनमन मोहन।
जय श्री राधे जव नन्दनन्दन जय जय गोपी जनमन मोहन ।।

स्वामी चिदानन्द

-श्री मधुकर जी -

स्वार्थ, स्वाद और स्वांग के, रह एकदम विपरीत।
वाणी, मन औ' कर्म से, प्रभु सेवा में लीन।
मीन-वारि सम्बन्ध प्रभु से, प्राणी का "नारायण-भान।"

चिदानन्द शब्द-सार तुम्हीं, और न कोई समान ।
दान, दया और धर्म की, तुम प्रतिमूर्ति साकार।
नंदन वन के "कल्पवृक्ष" हो रखते शरणागत की लाज।
दम्भ, द्वेष-दुःख-दारुण ले, जो आया तेरे द्वार।
यथा नाम साकार बने, हर सारे क्लेश विकार ।।

महान् गुरु जनों के हृदय में क्या रहता है? वह कर्म क्यों करते हैं और क्यों स्वयं को अथक कर्म में संलग्न रखते हैं, जब कि सब-कुछ प्राप्तव्य को प्राप्त कर लेने के पश्चात् अब उनके लिए कुछ भी कर्म करने की आवश्यकता नहीं रह गयी होती ? जो-कुछ भी करणीय है उसे वह पहले ही कर चुके हैं, जो-कुछ प्राप्त करने योग्य है उसे वह पहले ही प्राप्त कर चुके हैं।

स्वामी चिदानन्द मेरे जीवन में कैसे आये?

- श्रीमती प्रीति अग्रवाल माता जी, भिलाई-

यह बात बिल्कुल सच है कि स्वामी चिदानन्द आज भी जीवित है। ये एक ऐसी आत्मा है जो एक शरीर में होते हुए भी अनेकों का कल्याण करने की क्षमता रखती थी। अपने एक अंकल के द्वारा मुझे स्वामी जी की कुछ पुस्तकें उपहार स्वरूप मिर्ती, उनमें स्वामी जी की एक पुस्तक, जो बोग पर थी, मुझे बहुत पसन्द आई। जब मैंने उसमें स्वामी जी द्वारा बताये गए मन्त्र को पढ़ कर सूर्य नमस्कार करना प्रारम्भ किया तो अचानक मुझे लगा कि मेरा पूरा शरीर एकदम हल्का हो गया है। देह का भान एकदम समाप्त हो गया। एक अद्वितीय और अनुपम सुख से मैं भर उठी। मैं कभी भी स्वामी जी को मिली नहीं थी। अपने अनुभव से मैं खुद आश्चर्य चकित हो उठी। एक दिव्य ऊर्जा ने मुझे ओत-प्रोत कर दिया था। उस दिव्य सन्त की असीम अनुकम्पा का अनुभव मैं अपने रोम-रोम में सहज ही कर सकी। इतनी करुणा! इतनी कृपा! उस अनुभव ने एक दिव्य श्रद्धा की पूँजी मुझे प्रदान की जो आज भी मुझे उनके प्रति आकर्षित कर रही है, और मैं निरन्तर उनकी अनेक पुस्तकें पढ़ते हुए अपना जीवन उन्नत कर रही हूँ। उनकी एक-एक शिक्षा मेरे जीवन में प्रेरणा-स्रोत है, जो संसार के भँवर में मेरा मार्गदर्शन कर रही हैं।

****

सादगी-स्वरूप

- श्रीमती संजीवनी मुकुंद लिमये माता जी, पुणे -

मेरे हृदय में ब्रह्मलीन स्वामी चिदानन्द जी महाराज के प्रति अत्यन्त आदर, भक्ति है। देखते ही उनकी प्रगाढ़ शान्ति आनन्द देती थी।

उनकी पूज्य उपस्थिति में लोनावले (महाराष्ट्र) में दो बार, माधवनगर (जि. सांगली) में एक बार शिविर में प्रवेश का सौभाग्य मिला। ब्रह्म बेला में श्रद्धेय स्वामी चिदानन्द जी महाराज द्वारा उच्चरित दिव्य और दीर्घ ओंकार, दश-दिशा में गूँजता था, फिर ध्यान और प्रवचन। आखिरी दिन सब साधक महाप्रसाद ग्रहण कर रहे थे उस समय खुद आ कर हम सबको रोटी परोसी, साक्षात् परब्रह्म के हाथ से प्रसाद मिला। मैं धन्य हो गयी इतना छोटा काम प्रेम से, आनन्द से किया। मुख में नाम चल रहा था।

मुझे सपने में भी उनके दिव्य दर्शन हुए। मोटर जा रही थी। आवाज आयी श्री स्वामी चिदानन्द जी महाराज ने यह पैकेट भेजा है। पाँच, छहः मालायें थी जप के लिए। मिरज तपोवन (महाराष्ट्र) में महाराजश्री दो बार पधारे थे। सेवा का सुअवसर मिला। भोजन के समय जमीन पर ही आसन बिछा कर बैठे। सब सुविधाओं के होते हुए भी इतनी सादगी। उनसे दीक्षा भी मैंने नहीं ली है। पूज्यवर स्वामी शिवानन्द जी महाराज की कृपा से ही मेरे जैसे खुद्र जीव को दर्शन का सौभाग्य एवं सेवा का सुअवसर मिला।

आश्रम में मैं प्रायः आती रहती हूँ। सत्संग चैतन्य से भरा हुआ होता है।

****

'एक पेड़ की बात'

- कु. धर्मदेवी माता जी, उत्तरकाशी-

परम पूज्य गुरुदेव श्री स्वामी चिदानन्द जी महाराज ने एक बार मुझे बताया कि एक जंगल में अनेक पेड़ हैं, पर कोई एक पेड़ इतना बड़ा होता है कि बिना जानकारी के आसानी से हर कोई व्यक्ति उसे नहीं काट सकता। उसके लिए एक खास व्यक्ति जो इस कला का जानकार हो, वह अगर मिल गया तो थोड़ी ही देर में बड़ी आसानी से पेड़ काट कर गिरा दिया जाता है। हाँ, पेड़ की ढूँठ रह जाती है। कभी क्या होता है कि उस ढूँठ पर कॉपल निकलती नजर आती है। इसे निकालने के लिए किसी खास व्यक्ति की जरूरत नहीं पड़ती, उसको एक बच्चा भी हाथ से खींच कर निकाल देता है। इसके लिए किसी अस्त्र-शत्र की जरूरत नहीं। कोंपल देखते ही नोच लेना; बस इतना ही करना; फिर पेड़ का रूप नहीं बन पायेगा। बड़ा वृक्ष एक बार कट कर फिर दुबारा नहीं पनपता। उसकी कॉपलों को शुरू में ही निकाल देना होता है।

अहंकार-अविद्या का विशाल पेड़, जिसकी जड़े बड़ी गहरी होती हैं, उसे ब्रह्मनिष्ठ सद्गुरु ही काट सकते हैं। साधक को सतत सजग और सतर्क रहना चाहिए।

हमारे स्वामी जी अनेक बार इस तरह समझाते थे। वह मेरे माँ-बाप, भाई, ईश्वर और गुरु हैं। मेरे जीवन में उनके अनेक चमत्कार हुए हैं। मुझ पर उनकी अनन्त कृपा है।

पितु-मातु, सहायक, स्वामी-सखा, तुम ही एक नाथ हमारे हो।

'गुरुदेव अनन्त, गुरुमहिमा अनन्त!'

-श्रीमती निर्मला माता जी, झुमरी तिलैया -

परम पूज्य गुरुदेव श्री स्वामी चिदानन्द जी महाराज के साथ दीर्घकाल से मेरा सम्पर्क रहा है। सन् १९६५ में पाँच सन्तों के साथ स्वामी जी महाराज हमारे पर झुमरी तिलैया में आ कर दर्शन दिये थे। मानो मेरे इष्टदेव प्रभु राम ही पधारे थे, उसी समय मेरी मन्त्रदीक्षा हुई। अन्तःस्थित गुरुदेव सर्वान्तर्यामी और सर्वज्ञ हैं, यह मुझे दृढ़ विश्वास है।

आश्रम के फार्यालय से अँगरेजी में पत्र आता था, जो मैं पढ़ नहीं पाती थी, मैंने करुणा सागर गुरुदेव से प्रार्थना की कि मुझे अपने हाथ से हिन्दी में पत्र लिखें, मेरे मन की बात जान कर, कुछ ही देर में उन्होंने अपने हाथों का हिन्दी में लिखा पत्र भेजा। मेरी खुशी का ठिकाना न रहा।

मेरे सारे परिवार और पतिदेव ने भी गुरुदेव से ही मन्त्रदीक्षा ली हुई है। मेरे मन में आया कि मेरे पतिदेव का नाम भी पत्र में रहे तो कितना अच्छा हो। मन की बात जान कर अगले पत्र में मेरे पतिदेव का नाम भी लिख कर भेजने लगे। हम दोनों को ही इससे बहुत खुशी हुई।

पूज्य गुरुदेव मुझे अपनी बेटी जैसा मानते थे, किन्तु पत्र में मुझे निर्मला माता जी सम्बोधित करके लिखते थे। मैंने अन्तर्वासी प्रभु से मन में ही प्रार्थना की कि मुझे माता जी की जगह बेटी लिख कर पत्र लिखें। अगले पत्र में गुरुदेव ने निर्मला बेटी लिखा था, यह पत्र पा कर मैं आनन्दमग्न हो गयी।

हरिद्वार कुम्भ मेले पर गुरुदेव के दर्शन गयी। मेरे मन में उनके पाद-पूजन की तीव्र इच्छा थी, मैं गंगाजल साथ ले कर गयी-किन्तु सेवकों ने मुझे भीतर जाने से रोक दिया। मैं बहुत दुःखी थी। गुरुदेव ने मेरा नाम ले कर पुकारा, कुटिया में बुलाया, पाद-पूजा के लिए बाली, रोली, कर्पूर सेवकों से मंगवाया और मुन्ने पाद-पूजा की आज्ञा दी। मैंने अभिषेक, टीका, आरती सब किया, मुझे रोमांच होने लगा, आनन्द मन हो गयी। मेरी इच्छा सर्वान्तर्यामी ने पूर्ण की। सब उपस्थित भक्तों ने चरणामृत पाया।

सन् २००७ में गुरुदेव के दर्शन अत्यन्त दुर्लभ हो गये। मेरी हार्दिक प्रार्थना अब भी उन्होंने सुनी। परिवार सहित मुझे शान्ति निवास, देहरादून में केवल दर्शन ही नहीं, अपने कमरे में अपने साथ बैठाया, कीर्तन किया, चित्र खिचवावे, पलंग पर पास बैठा कर। जब-जब मैंने पुकारा, उन्होंने सूक्ष्म रूप में आ कर हर कष्ट दूर दिया। मेरी हर पुकार सुनते हैं। मेरे स्वामी जी भगवान् रूप हैं, कण-कण में निवास कर रहे हैं। वास्तव में गुरुदेव अनन्त हैं, इनकी महिमा अनन्त है!

'कृपासिन्धु' का आश्वासन !

-श्रीमती सुभद्रा सूद माता जी, दिल्ली-

अपने प्रिय गुरुदेव को शब्दों में बाँधना सूरज को दीपक दिखाने जैसा है उनका ध्यान करते ही गला गद्गद् हो उठता है। गत जन्मों के पुण्यों से मेरा सम्बन्ध ऐसे परिबार से जुड़ा कि नयी देहली (ससुराल की) पर पाँव रखते ही पुण्यात्मा गुरुदेव के दर्शन-आशीर्वाद प्राप्त हुए।

उन दिनों गुरुदेव दिल्ली अक्सर आते और हमारे ही पर ठहरते, दिन-रात दर्शन होते, कितना आनन्द, क्या दिन थे वह भी! सूद परिवार पर अन्त तक उन कृपा-सिन्धु की कृपा बनी रही।

स्वामी जी की ८० वीं वर्षगांठ पर पट्टामडई में एक शिविर के आयोजन में भाग लेने का सौभाग्य प्राप्त हुआ। प्रातः सायं गुरुदेव के दर्शन-प्रवचन, कीर्तन-भजन का आनन्द मिला। वे प्रत्येक सत्र के अन्त में 'श्री राम जय राम जय जय राम' कीर्तन करते। एक दिन इसी कीर्तन के समय स्वामी जी की आँखों में एक अद्भुत चमक, एक विलक्षण विशालता दिखाई दी। बार-बार आँखें खोलने, बन्द करने पर भी ऐसा ही प्रतीत हो रहा था। मानो सारे विश्व का प्रकाश उनमें समाया हो। घर लौट आने पर भी यह दृश्य आँखों से ओझल ही नहीं हो रहा था। मन में संकल्प उठा-

अन्तिम समय में मुझे यही कीर्तन की ध्वनि स्वामी जी के मुखारविन्द से सुनायी दे। अपना यह अटपटा सा आग्रह स्वामी जी से कैसे कहूं? बहुत कठिन था-समय बीतता गया।

एक बार प्रयत्न भी किया, पर उनका स्वास्थ्य ठीक न होने के कारण सम्भव न हो सका। उनके सेवक से प्रार्थना करने पर उन्होंने कहा, "आपके मन में जो इच्छा हो, आप लिख कर स्वामी जी की चरणपादुकाओं के नीचे रख दिया करें-वह अन्तर्यामी है।'

मैंने ऐसा ही किया, कुछ ही दिनों बाद 'शान्ति-निवास, देहरादून' से बहाँ आने का आमन्त्रण आ गया। मेरे आनन्द की सीमा नहीं थी। दर्शन हुए उन्हें अपनी चिर-संचित इच्छा अभिव्यक्त करने बाली छोटी सी पत्रिका दी। उन्होंने उसी समय पढ़ा और अपना हाथ ऊपर उठाते हुए कहा-'DONE' (कर दिया)। और मुस्करा दिये। मुझे जीवन का सर्वस्व मिल गया। जिसे अन्त समय में सद्‌गुरु का आश्वासन मिला हो, उसे और क्या चाहिए। ऐसे कृपा-सिन्धु के लिए जितना कहा जाए कम है। वह आज भी हमारे साथ है, सदैव रहेंगे ऐसा आश्वासन है।

जय जय जय श्री राधे जय जय जय राधे।
जय जय जय श्री राधे बरसाने वाली राधे ।

गुरुदेव-हृदय-वाटिका का एक पुष्प

- डा. रानी भसीन माता जी, दिल्ली -

प्रातः स्मरणीय पूज्यपाद श्री स्वामी चिदानन्द जी महाराज सन्त शिरोमणि सद्‌गुरुदेव अनन्त श्री विभूषित स्वामी शिवानन्द जी महाराज की हृदय-वाटिका के एक पुष्प थे। उनके श्री चरणों में अपनी प्रज्ञा के सुमन चढ़ाती हुई आज मैं आनन्द एवं दुःख का एक साथ अनुभव कर रही हूँ।

वे जीवन्मुक्त परमहंस थे, ब्रह्मलीन हो गये तो भी उनका वियोग उनके सभी प्रेमियों को एक बेदना की अनुभूति कराता है।

मेरा उनसे परिचय १९६३ में शिवानन्द आश्रम, ऋषिकेश में हुआ था। मैंने उन्हें एक सरल, प्रेमाभक्ति से ओत-प्रोत सरस भक्त के रूप में पाया। उनकी गुरुभक्तिनिष्ठा, सत्संगनिष्ठा, धर्मनिष्ठा और उनको शान-वैराग्य सभी मुझे अत्यधिक विलक्षण लगे।

ये मेरे आदर्श हैं। उनके स्वभाव में बात्सल्य की पराकाष्ठा का अनुभव मुझे सदैव हुआ।

आज उनकी स्मृति के सौरभ से मैं अपने को चिरा पा रही हूँ। और अपने श्रद्धा सुमन की पुष्पांजलि उनके चरणों में भेंट करती हूँ।

****

शिवानन्द के कथन महान्,

कहत चिदानन्द-सुनो हो सावधान।

दिव्य आत्मस्वरुप !
योगी, भक्त, साधक व जिज्ञासु !
आध्यात्मिक-पथ-पथिक व मुमुक्षु ! आप सब हैं पूर्ण।

अन्तर्निहित है सबमें पूर्णता,
पूर्णता-प्राकट्य के लिए ही है;
दिव्य जीवन-साधना ।

दिव्य विचार, वाणी से बनेगा दिव्य आचार।
अतएव ब्राह्ममुहूर्त में रहें-
ईश्वर-सन्निधि में।
नित्यप्रति, हर घड़ी रहें-
पूर्ण दिव्य सन्निधि में।

विगत समय का करें पुनरवलोकन
नववर्ष का करें 'नूतन शुभारम्भ'
रहें सर्वदा सचेत, सजग व तत्पर,
चलते रहें पूर्णता की ओर सत्वर ।

"जय गंगे महारानी की"

- डॉ. राम आसरे दीक्षित 'निराला राही', फर्रुखाबाद -

गुरु कृपा से शरण में आये, हम सब आज भवानी की।
एक बार सब प्रेम से बोलो, जय गंगे महारानी की ॥

ईश्वर अगर निरामय है तो, मैया भी नीरामय है।
इनकी शरण में रहने वाले, सदा सुखी और निर्भय हैं।

पल-पल बीते शरण में उनकी, जय हो जग कल्याणी की। एक बार...

तट पर रेणुका में भी, शिव शिव की ध्वनि गूँज रही।
धारा नमः शिवाय कहती, प्रियतम का पथ खोज रही ।।

सब कुछ गोद में मिलता, जय हो पाप नसानी की। एक बार...

डुबकी मारो डूब जायेंगे, सारे पाप तुम्हारे जी।
उछरोगे तो मिल जायेगी, शान्ति हाथ पसारे जी ।।

सगर पुत्र की तारनहारी-भगीरथ-वरदानी की। एक बार...

यही हैं शक्ति, यही हैं भक्ति, यही हैं मुक्ति की दाता।
जिसकी रही भावना जैसी, वैसा ही फल मिल जाता ।।

कितनी करूँ प्रशंसा मैया, अमृत जैसे पानी की । एक बार...

तट पर होता सन्त-समागम और उनके पावन दर्शन।
जिनकी पावन पद-रज पा कर, कट जाते हैं भव-बन्धन ।।

सकल जगत की तारनहारी, निर्मल भाव प्रदानी की। एक बार...

छोटे बड़े व ऊँच नीच का, भेद नहीं गंगा तट पर।
परम तत्त्व को अर्जित करते, वैरागी तट पर डट कर ।।

गंगा मैया सदा विराजें, जटा में औढर दानी की। एक बार...

त्र्यतापों की मेटन हारी, मन निर्मल करने वाली।
अमृत के अनुरूप सभी को, गंगाजल देने वाली ।।

अन्तिम शरण 'निराला राही' तुम्हीं जगत के प्राणी की।
एक बार सब प्रेम से बोलो-जय गंगे महारानी की ।।

****

श्री स्वामी चिदानन्द जी महाराज के प्रिय भजन-कीर्तन

जय श्री राधे जयनन्दनन्दन,
जय जय गोपी जन मन रंजन ।
गोविन्द जय जय गोपाल जय,
जय राधारमण हरि गोविन्द जय जय ।।

****

बोल शंकर बोल शंकर शंकर शंकर बोल।
हर हर हर हर महादेव शम्भु शंकर बोल ।।
****

शरवणभव शरवणभव शरवणभव पाहि माम्।
कार्तिकेय कार्तिकेय कार्तिकेय रक्ष माम् ।।
हरहरोहरा हरहरोहरा हरहरोहरा। हरहरोहरा हरहरोहरा हरहरोहरा ।।
****

यमुनातीर विहारी वृन्दावन संचारी।
गोवर्धन गिरिधारी गोपाल कृष्णमुरारी ॥
दशरथनन्दन राम राम दशमुखमर्दन राम राम।
पशुपति रंजन राम राम पापविमोचन राम राम ।।
****
राम जी की जय जय, लक्ष्मण जी की जय जय।
दशरथ कुमार चारों भाइयों की जय जय ।।

****

दत्तगुरु जय दत्तगुरु पूर्ण गुरु अवधूत गुरु।
दत्तात्रेय तवशरणं सद्गुरुनाथ भवहरणम्।
गुरु महाराज गुरु जय जय परब्रह्म सद्गुरु जय जय ।।

****

गौरी गौरी गंगे राजेश्वरी,
गौरी गौरी गंगे भुवनेश्वरी।
गौरी गौरी गंगे माहेश्वरी,
गौरी गौरी गंगे मातेश्वरी ।।
ॐ शक्ति ॐ शक्ति ॐ शक्ति ॐ,
ब्रह्मशक्ति विष्णुशक्ति शिवशक्ति ॐ ।।
आदिशक्ति महाशक्ति पराशक्ति ॐ,
इच्छाशक्ति क्रियाशक्ति ज्ञानशक्ति ॐ ।।

****

आंजनेय वीरा हनुमन्तशूरा
वायुकुमारा वानरधीरा ।
श्रीरामदूत जय हनुमन्ता ।।
जय जय सीता राम की
जय बोलो हनुमान् की ।।
राम लक्ष्मण जानकी,
जय बोलो हनुमान् की।

श्री राम जय राम जय जय राम,
श्री राम जय राम जय जय राम ।।
****

आदित्य नारायण भास्कर नारायण सूर्य नारायण ज्योति नारायण।

****

उठ जाग मुसाफिर भोर भई,
अब रैन कहाँ जो सोवत है।
जो सोवत है सो खोवत है,
जो जागत है सो पावत है।।
टुक नींद से अखियाँ खोल जरा
और अपने प्रभु से ध्यान लगा।
यहाँ प्रीत करन की रीत नहीं,
प्रभु जागत है तू सोवत है ।।
जो कल करना सो अज कर ले,
जो अज करना सो अब कर ले।
जब चिड़ियन ने चुग खेत लिया,
तब पछताये क्या होवत है ।।
नादान भुगत करनी अपनी,
ऐ पापी पाप में चैन कहाँ।
जब पाप की गठरी शीश धरी,
फिर शीश पकड़ क्यों रोवत है ।।

****

कृष्ण गोविन्द गोपाल गाते चलो।
मन को विषयों के विष से हटाते चलो ।। कृष्ण...

देखना इन्द्रियों के न घोड़े भगें,
रातदिन इनको संयम के कोड़े लगें।
अपने रथ को सुमार्ग बढ़ाते चलो ॥ कृष्ण...

नाम जपते चलो काम करते चलो,
नाम धन का खजाना बढ़ाते चलो ।। कृष्ण...

सुख में सोना नहीं, दुःख में रोना नहीं,
प्रेम भक्ति के आँसु बहाते चलो । कृष्ण...
****

आदि दिव्य ज्योति महाकाली माँ नमः
मधुशुम्भ महिष मर्दिनि महाशक्त्ये नमः

ब्रह्मा विष्णु शिव स्वरूप त्वं न अन्यथा,
चराचरस्य पालिका नमो नमो सदा

****

सब हैं समान सबमें एक प्राण,
त्याग के अभिमान हरि नाम गाओ।
हरि नाम गावो दया अपनावो,
अपने हृदय में हरि को बसाओ ।।
हरि नाम प्यारा सबका सहारा,
हरि नाम जप के सुख शान्ति पाओ।
हे निवृत्ति हरि नाम भक्ति,
हरि नाम शक्ति, सबको देवे मुक्ति ।।
****
लगा ले प्रेम ईश्वर से,
अगर तू मोक्ष चाहता है
नहीं वह पाताल के अन्दर,
नहीं वह आकाश में ऊपर
सदा वह पास है तेरे,
कहाँ ढूँढन को जाता है। लगा ले...
****
हरि के प्यारे हरि हरि बोल, आओ प्यारे मिल कर गाओ।
नारायण नारायण नारायण हरि के प्यारे हरि हरि बोल ।।
आओ प्यारे मिल कर गाओ सीताराम राधेश्याम ।
हरि चरण में ध्यान लगाओ प्यारे गुरु के शरण में आओ।
नारायण नारायण नारायण अभिमान त्यागो सेवा करो।
नारायण नारायण नारायण ।।
****

राम गीत

पढ़ो पोथी में राम देखो कलम में राम।
लिखो तख्ती में राम हरे राम राम राम ।।
देखो आँखों से राम सुनो कानों से राम ।
बोलो वाणी से राम हरे राम राम राम ।।
बोलो जाग्रत में राम देखो स्वप्न में राम।
पाओ सुप्ति में राम हरे राम राम राम ।।
बालावस्था में राम युवावस्था में राम ।
वृद्धावस्था में राम हरे राम राम राम ।।
जीते-जीते राम कहो मरते-मरते राम कहो ।
सर्वकाल राम कहो राम राम राम हरे राम राम राम ।
राम राम राम राम राम राम राम श्री राम राम राम ।।
****

चिदानन्द चिदानन्द चिदानन्द हूँ
हर हाल में अलमस्त सच्चिदानन्द हूँ
अजरानन्द अमरानन्द अचलानन्द हूँ
हर हाल में अलमस्त सच्चिदानन्द हूँ
निर्भय और निश्चिंत चिद्घनानन्द हूँ
कैवल्य केवल कूटस्थ आनन्द हूँ
नित्य शुद्ध नित्य बुद्ध चिदानन्द हूँ
चिदानन्द चिदानन्द चिदानन्द हूँ
हर हाल में अलमस्त सच्चिदानन्द हूँ

****

आरती

(शिवानन्दाश्रम)

जय-जय आरती विघ्नविनायक,
विघ्नविनायक श्रीगणेश ॥१॥

जय-जय आरती सुब्रह्मण्य,
सुब्रह्मण्य कार्तिकेय ॥२॥

जय-जय आरती वेणु गोपाल,
वेणु गोपाल, वेणु लोल,
पापविदूर नवनीत-चोर ॥३॥

जय-जय आरती वेंकट रमण,
वेंकट रमण संकट हरण,
सीता राम राधे श्याम ॥४॥

जय-जय आरती गौरि मनोहर,
गौरि मनोहर भवानि शंकर,
साम्ब सदाशिव उमा महेश्वर ॥५ ॥

जय-जय आरती राजराजेश्वरि,
राजराजेश्वरि त्रिपुरसुन्दरि, महाकाली महालक्ष्मी,
महासरस्वति महाशक्ति ॥ ६ ॥

जय-जय आरती आंजनेय,
आंजनेय हनुमन्त ॥७॥

जय-जय आरती दत्तात्रेय,
दत्तात्रेय त्रिमूर्त्यवतार ॥८ ॥

जय-जय आरती सद्गुरुनाथ,
सद्गुरुनाथ शिवानन्द ।।९ ॥
जय-जय आरती वेणु गोपाल ॥१० ॥

ॐ

नाह कर्ता हरिः कर्ता त्वत्पूजा कर्म चाखिलम्।
यद्यत् कर्म करोमि तत्तदखिलं शम्भोतवाराधनम् ।।

ॐ

कायेन वाचा मनसेन्द्रियैर्वा बुद्ध्यात्मना वा प्रकृतेः स्वभावात्।
करोमि यद्यत् सकलं परस्मै नारायणायेति समर्पयामि ।।

ॐ श्रीः

हम तो हैं केवल तुम्हारे चयनित निमित्त मात्र ही,
'**चिदानन्दम्**' अपने समर्पित आदर्श प्रिय शिष्य का रचवाया तुम्हीं ने।
क्षमा करना कृपालु दयालु तुम स्वभावतः ही हो क्षमाशील,
जो भूलें '**चिदानन्दम्**' में **अनजाने में हुई हों हम सॉ जी** ।।

ॐ

शिवानन्दार्पणमस्तु

ॐ

विश्वप्रार्थना

हे स्नेह और करुणा के आराध्य देव!
तुम्हें नमस्कार है, नमस्कार है।
तुम सर्वव्यापक, सर्वशक्तिमान् और सर्वज्ञ हो।
तुम सच्चिदानन्दघन हो।

तुम सबके अन्तर्वासी हो।
हमें उदारता, समदर्शिता और मन का समत्व प्रदान करो।
श्रद्धा, भक्ति और प्रज्ञा से कृतार्थ करो।
हमें आध्यात्मिक अन्तःशक्ति का वर दो,
जिससे हम वासनाओं का दमन कर मनोजय को प्राप्त हों।
हम अहंकार, काम, लोभ, घृणा, क्रोध और द्वेष से रहित हों।
हमारा हृदय दिव्य गुणों से परिपूरित करो।
हम सब नाम-रूपों में तुम्हारा दर्शन करें।
तुम्हारी अर्चना के ही रूप में इन नाम-रूपों की सेवा करें।
सदा तुम्हारा ही स्मरण करें।
सदा तुम्हारी ही महिमा का गान करें।
तुम्हारा ही कलिकल्मषहारी नाम हमारे अधर पुट पर हो।
सदा हम तुममें ही निवास करें।

-स्वामी शिवानन्द